

* टीकाकार के श्री गुरुदेव जी *

श्री श्री१०८ श्रीसियाशरण जी (श्रीमधुकरजी) महाराज

श्री चारुशीला मन्दिर, श्री चारुशीला बाग

श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी



श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट-बड़ास्थान, श्री अयोध्याजी

Scanned by CamScanner

❋ श्रीअमर रामायण ❋

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

सीताराम श्रृङ्गार रसाचार्य अनन्त श्रीस्वामी श्रीरामचरणदास (करुणा सिन्धु) हैं
आपके कृपापात्र शिष्य नर्म सख्य रसाचार्य श्रीराजरघोदास (कृपा सिन्धु) जी महाराज
पात्र शिष्य ग्रन्थकार श्रीस्वामी जनकराज किशोरीशरण (रसिकअली) (दयासिन्धु जी
कीर्तिका यह प्रथम पुष्प है ।

❋ टीकाकार ❋

सीताराम श्रृङ्गार रसाचार्य अनन्त श्रीस्वामी श्रीरामचरणदास (करुणा सिन्धु) जी
कृपापात्र शिष्य श्री लक्ष्मणशरण (महाविरक्त) जी महाराज के कृपापात्र शिष्य श्री
... समुद्र) जी महाराज । आपके कृपापात्र शिष्य सिद्ध शिरोमणि श्रीकिशोरीशरण
... महाराज । आपके कृपापात्र शिष्य श्री श्री १०८ श्रीस्वामी सियाशरण (मधुकर)
। आपके श्रीचरणरज कृपापात्र शिष्य जानकीशरण मधुकरिया ।

...मर रामायण नामक यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्रकाशित था, हस्तलिखित यह ग्रन्थ की
...से महात्माओं के पास वर्तमान हैं परन्तु अप्रकाशित होनेसे बहुतों को बड़ा असन्तोष भी
...ा बहुत ही व्याकुलता थी परन्तु श्रीमिथिलारसिक निवास स्थान के महाराज श्रीस्वामी
...रण ... महाराज ने यह ग्रन्थ मुझे दिया और यह कह करके दिया कि इस ग्रन्थ में
...तन्त्र अधिकार है हम इस ग्रन्थ को आपको देते हैं आप इस ग्रन्थ को छपावें और
... में रजिस्टर्ड कराकर रक्खें ताकि आपके सिवाय कोई दूसरा इस ग्रन्थको हम लोगोंकी
... छपावे क्योंकि यह ग्रन्थ हमारे आचार्यकी कीर्ति है। अतःमैंने इस ग्रन्थको पाकर स्वयं
...चार्य ...ीर्ति स्वरूप इस ग्रन्थ को श्रीसीताराम उपासक भावुकों के सेवा के लिए
...थ व्यय ... तथा परिश्रम से श्रीआचार्य चरण कृपाबल से प्रकाशित किया ।

...राज जी के चौबीस ग्रन्थ एक से एक सुन्दर हैं आपकी वाणी शास्त्र सम्मत तथा
... ...त्य तथा भाषा भी सुन्दर और शुद्ध अनुराग की सीमा से निकली है अतः
... ...कार भगवत अनुरागी विद्वान कवियों को दिव्य पड़ा ...ढ़ता से देनेवाली है ...

आपने रसचन्द्रोदय तथा रघुवर करुणाभरण के द्वारा पिंगल अलंकारों की सीमा को
को सीमा श्रीसीतारामजी के दिव्य धाम में अनन्त पार्षदों के साथ जो २ लीला संस
अतिशय अगम था वह आपके द्वारा प्रगट हुआ, आपके जीवन चरित्रभी दिव्यधामके
है जन्म से वैराग बहुत शीघ्र विद्वान आजोवन दृढ़ साधुताकी एकरस रहन दूरद
अद्भुत चमत्कारयुक्त परधाम यात्रा तथा आपके जोवन प्रसंगमें जोर साहित्य प्रगट
जो सुख भगवत रसिकों को हुआ। वह सुख अन्य सभी आचार्योंके द्वारा पूर्ण नहीं हो
सभी आचार्यों ने लोक गुरुता की मर्यादा सम्हाल कर थोड़ा २ भगवत अनुराग रस
परन्तु आपने तो दिव्य धाम के अनुराग रस का समुद्र बहा दिया संसार मर्यादा
कभी याद भी आतो तो अग्नि की सी ज्वाला में पाना सरीखा अनुराग रस बहा
आशक्तों की याद भो न रह जाय। आपका जीवन चरित्र दिव्य अवतरित है अत
लिखकर के स्वतन्त्र आपका जोवन चरित्र लिख रहा हूँ सो पाठ[illegible]
रसिकअली जी के जीवन चरित्र की प्रकाशित प्रति के लिए कुछ दिन
यद्यपि आपका जीवन चरित्र पुराने सन्तों में प्रसिद्ध है और पुराने साहि
लोग पुराने सन्तों का तथा साहित्यों का सतसंग सेवा किये होंगे उनके लिए छिपा
के मुमुक्षु जीवों के लिये मैं संग्रह करके सबके सामने प्रगट करने की सेवा अवश्य

यह ग्रन्थ छपाने में जो परिश्रम पड़ा यह अकथ्य है क्योंकि अकेले मेरे
सहायता किसी की कुछ भी न मिली बाधकता की कमी भी नहीं थी प्रथम मैंने यह
प्रेस में दी थी १७२ पृष्ठ तक छापने में ही ६-७ महीना लग गया कागज खरीदने
छपाई बहुत खराब होगई फिर देखा कि अभी ग्रन्थ चौथाई भी नहीं छपा है स
अर्द्धं त्यजति पण्डितः' की नीति अपनाई तब विरक्त प्रेसमें छापनेको दिया। तो तब
मिले फिर शुद्धाशुद्धी व सूची सहित यह ग्रन्थ तैयार हुआ। परन्तु हिन्दीके अक्षरोंमें
गुणग्राही सज्जनों के सद्भावना के भरोसे छोड़ दिया है क्योंकि परिश्रम बहुत था
बात का अधिक हुआ कि मैं अखण्ड भगवतधाम बांस (क्षेत्रन्यास) वृत्ति से रहा
देश तो मैंने आजन्म देखा ही नहीं है केवल मेरे मन की भावना में आचार्य की
की इच्छा थी तो श्रीकिशोरी जी ने अद्भुत तरह से पूर्ण कर दिया। यह ग्रन्थ श्री
(रसिक सन्तों) का जीवन है। अतः यह सेवा मेरा धन्यभाग्य है कि मुझे मिली,
लोग क्षमा करेंगे ही।

❀ श्रीसीताराम चन्द्राभ्यां नमः ❀
॥ श्रीमती सर्वेश्वरी श्रीचारुशीलायै नमः ॥
❀ श्रीमते रामानन्दाय नमः श्रीसद्गुरवे नमः ❀

❀ अमर रामायण ❀

—०: जोकि :०—

श्रीअमर नाथ गुफा में श्रीशंकरजी ने श्रीसुकदेवजीको सुनाया था जैसा कि सर्वसन्त सम्मत है कि एक बार जब श्रीपार्वती जी पर्वत द्वारा श्रीशंकर जी से विवाही गई तो उसके बाद में प्रेरणा से श्रीनारद जी कैलाश में गये श्रीशंकर जी ने नारद जी का सुन्दर स्वागत सत्कार बाद में श्रीनारद जी एकान्त में बैठी हुई विष्णुसहस्रनाम का पाठ करती हुई श्रीपार्वती जी का किया। श्रीपार्वती जी ने भी शंकर जी से स्वागत किये गये नारद जी का स्वागत किया तथा आसनादि दिया आतिथ्य किया। बाद में श्रीपार्वतीजी ने जब नारदजी का मुख दर्शन किया ...ध श्रीनारदजीका मुख उदास सरीखा देख पड़ा तो जगज्जननी श्रीपार्वतीजीने प्रश्न किया बताइये तो आप एक महान लोक गुरू महाविरक्त हैं ऐसी स्थिति में आपमें सदा भगवत का अनुरागमय गुणगान का उत्साह भरा रहता था आज यह उदासीनता क्यों ? क्या कोई भक्त ... तो नहीं दीख पड़ा है? तब श्रीनारदजी बोले कि आपसे बढ़कर भगवत भक्त और कौन होगा ...के लिए मुझे और भगवत भक्त की चिन्ता करनी पड़े ?

तब पार्वती जी बोली कि मेरी आपको क्यों चिन्ता करनी पड़ी मैं तो देवों में महादेव भक्तों भक्त गुरुवों में महागुरू विद्वानों को विद्यादाता जीवों को मोक्षदाता लोक पूज्य श्रीशंकर (राम स्वरूप) की अर्द्धांगिनी पत्नी हूँ। तब नारदजी बोले कि इसीलिए तो ? मुझे आपके विषय ...ता हुई, तब पार्वती जी ने प्रश्न किया कि मेरी चिन्ता क्यों ?

नारद जी बोले कि मैं क्या बताऊँ आप श्रीशंकर जी से पूछ लीजिये कि आप इस तरह से ... की माला क्यों पहिनते हैं तब श्रीशंकर जी क्या उत्तर देते हैं ? तब पार्वती जी बोली कि मैंने ...र पूछा था तो शंकर जी ने उत्तर दिया कि हे प्रिये तुम जब २ शरीर त्याग करती हो तो मुझे ... वियोग सहन नहीं होता है अतः मैं तुम्हारे शरीर को कन्धा में लेकर वन २ में दौड़ता हूँ अतः ... हूँ अतः यह आपका शरीर जब गल जाता है तब मैं मुण्डोंकी माला बनाकर पहिनलेता ... आपके अनुरागका ही चिन्ह मेरे गलेमें पड़ा रहताहै ऐसा कहकर मेरेसे बहुत अनुराग

आपने रसच

को सीमा ।तुकनिधि नारद जी पार्वती जी से कहे कि हे पर्वतकन्यके ! आप बहुत भोल
अतिशय एक ऐसी बूटी खाते हैं कि सब दिन अमर बने रहते हैं कभी नहीं मरते हैं औ
है गले की मुण्डमाला को गिनिये तो कितने मुण्ड हैं और कितनी बार आप जन्म लि
जी को आप पर दया नहीं आई कि उस बूटी को अकेले खाते हैं आपको नही देते हैं

तब पार्वती जी बोली कि हे नारद जी आप ही बताइये कि वे कौन सी बूटी ख
धतूरा भाँग घोट कर हमेशा पिलाती हूँ तो प्रसादी मैं भी लेती हूं इसके अतिरिक्त और तो
मेरी समझ से नहीं खाते हैं।

तब नारद जी बोले कि यह मर्म बात उन्हीं से पूछना यदि मैं बता दूं तो शंकर जी
नाराज हो जायेंगे ऐसा कहकर श्रीनारद जी पार्वती जी को प्रणाम करके चल पड़े।

श्रीपार्वतीजी श्रीशंकरजीके पास हँसकर गई और शंकर जी ने पार्वती जी का स्व
हुये प्रश्न किया कि प्रिये कौन सी विनोदकी कथा कौतुकनिधि नारदजी ने सुनाई कि आप हँ
तब पार्वतीजी पूछीं कि यह मुण्डमाला आप क्यों पहिनते हैं? तब शंकरजी बोले कि कहा तोकि
के प्रेम का चिन्ह है मैं एक बार यह सब कथा सुना चुका हूँ आप भूल गयीं क्या ?। तब
बोलीं कि मैं भूल नहीं गई हूँ कुछ पूछने में गलती हुई है अतः आज अब पूछती हूं कि आ
बूटी खाते हैं कि आप कभी मरते नहीं हैं मैं बार २ मरती जन्मती रहती हूँ हमको वह बूटी
देते हैं ?

तब शंकर जी बोले कि हाँ जरूर नारद जी घरफोड़ी बात बता गये, अच्छा अब
देऊँगा तब पार्वती जी बोली कि अभी बताने में क्या हर्जा है। तब शंकर जी बोले कि वह गूढ़
उस तत्व के लिये देशकाल अवस्था का बिचार करना पड़ता है अत: कभी समय पर बता
पार्वती जी बहुत उपाय करने पर भी जब उस तत्व को नही पायीं तो एक बार मान (प्रण
कर गयीं तब शंकर जी ने अमरनाथ गुफा में जाकर एकान्त में उस तत्वमई अमर कथा
बिचार से पार्वती जी को सावधान किया कि अब यह देश भी अनुकूल है और आपका पंच
का भी अनुकूलता है अतः अब देशकाल अवस्था अनुकूल होने से अब कथा कहूँगा परन्तु
होकर सुनना। यदि कथा सुनते हुए आप सोगयीं तो तब फिर मैं नहीं सुनाऊँगा अतः हाँ कह
कहकर शंकर जी कथा आरम्भ किये और पार्वती जी हाँ हाँ कहती जाती थी। बहुत काल
होने पर पार्वती जी को नींद आगई और शंकर जी कथा के रंग में माते कथा कहते जारहे
अमर नाथ की गुफा में एक पक्षी सुक नाम का अपने अण्डे को एक घोंसला बनाकर वहा
रक्खा हुआ था। शंकरजी के अमर कथा के प्रभाव से वह सुक पक्षी का अण्डा चैतन्य
कथा से आनन्द ले रहा था अतः उस पक्षी के मन में बिचार आया कि श्रीपार्वती जी ने हाँ

बन्द कर दिया है तो अब शंकर जी कथा बन्द कर देंगे अतः मै ही श्रीपार्वती के सदृश स्वर में हाँ हाँ कहा करूं तो कथा बन्द नहीं होगी। ऐसा विचार कर वह पक्षी हाँ हाँ भर रहा था बहुत काल तक कथा हुई फिर श्रीपार्वतीजी की नींद खुली तो श्रीशंकरजी से बोली कि महाराज मैं तो सो गई थी अतः आपने क्या २ कहा मुझे नहीं सुन पड़ा फिर से कहिये तो। यह सुनकर शिव जी बोले कि हाँ हाँ कौन कह रहा था, तब श्रीपार्वती जी बोलीं कि मैं नहीं जानती हूँ अतः आप निश्चय मानिये। तब श्रीशंकर जी उस गुफा में चारों तरफ दृष्टि फैलाकर देखे तो एक सुक नाम का पक्षी आखों में आँसू भर कर गदगद हो रहा था। श्रीशंकर जी विचार किये कि यदि इस पक्षी को मैं नहीं मारता हूँ तो यह अमर हो जायगा, जैसे मैं अमर हूँ उसी तरह से यह भी मेरी स्पर्द्धा करने लगेगा।

अतः इसको मैं ही मार देऊँ क्योंकि इसने मेरे दिव्य धन की चोरी की है मैंने तो सब गुफा के चेतनों को भगा दिया था यह कहाँ से चोरी करने आया यह तो पक्का चोर मालूम पड़ता है ऐसा कहकर हाथ में त्रिशूल लेकर मारने के वास्ते श्रीशंकर जी दौड़े तो वह सुक पक्षी भी दिव्य ज्ञान को पाकर सर्वज्ञ होगया था अतः जान गया कि श्रीशंकर जी मेरे गुरू हैं यदि गुरू जी से बच गया तब फिर मैं अमर तो हो ही जाऊँगा अतः इस वक्त भागना ही उचित है ऐसा निश्चय करके वह सुकपक्षी भागा तो श्रीशंकरजी पीछे पड़े तब शुक भागते २ घबड़ाया कि अब मैं कैसे बच सकताहूँ अतः भगवान को याद किया तो उरप्रेरक परमात्मा ने स्मरण दिला दिया कि भगवान का अवतार श्रीदेवव्यास भगवान हैं अतः मैं उन भगवान के ही द्वारा गुरु महाराज के निरपराध क्रोध से बच जाऊँगा ऐसा मन में आते ही वह सुकपक्षी श्रीव्यास पत्नी श्रीवटिका अम्बा के पेट में पैठ गये तब शंकर जी व्यास पत्नी वटिका अम्बा को मारना निश्चय किये तो व्यास जी शंकर जी से बोले कि यह अन्याय आप क्यों करने लगे, तब शंकर जी बोले कि तुम्हारी पत्नी के गर्भ में मेरा शत्रु प्रवेश कर गया है अतः मैं मारूँगा। तब व्यास जी बोले कि मैं आपको श्राप देकर भस्म कर देऊँगा। तब श्रीशंकर जी देखे कि ये भगवान के अवतार हैं अतः इनसे लड़ना अनुचित होगा। इनसे विरोध ठीक नहीं है ऐसा निश्चय क के व्यास जी को प्रसन्न करके कैलास चले गये। फिर श्रीसुकदेव जी माता के गर्भ से बाहर नहीं निकल रहे थे कि भगवान की माया मुझे कहीं भ्रमित न कर देवें। अतः बारह वर्ष बीतने पर भी गर्भ से बाहर नहीं आने पर माता को बड़ा कष्ट हुआ तब व्यास जी ने कहा कि हे वत्स अब गर्भ से बाहर आओ तुम्हारी माँ बड़े कष्ट में है। तब गर्भ का बालक अपने दिव्य ज्ञान का आनन्द लेता गर्भ में से ही अपने पिता का उत्तर दिया कि पिता जी मैं गर्भ से बाहर तब आऊँगा कि जब आप भगवान को प्रत्यक्ष करके माया के चक्र प्रवाह को रुकवा देवें। तब व्यास जी ने भगवान के प्रगट होने का अनुध्यान किया तो तब भगवान प्रगट हुये, व्यासजी से बोले कि कहो व्यास जी क्यों मेरे को बुलाये ? तब व्यास जी बोले कि प्रभो ! मेरे पुत्र अपनी माँ के गर्भ से बाहर नहीं निकलते हैं अतः आप कृपा करके उस गर्भ के बालक का मनोरथ पूर्ण कर दीजिये। तब भगवान उस गर्भ के बालक से कहे कि वत्स

बाहर निकलो तुम्हारी मां कष्ट में है। तब गर्भ का बालक बोला कि प्रभो आप अपनी माया का चक्र प्रवाह रोकिये तो मैं निकलूंगा अन्यथा मुझे माया भूलभुलैया में डाल देगी इसलिये मैं नहीं निकलूंगा तब भगवान बोले कि अच्छा मैं इतना ही देर माया प्रवाह को रोकूंगा कि जितना देर एक सरसों का दाना बैल के सींग में पटकने पर वह सरसों का दाना बैल के सींग को छूता रहेगा।

तब सुक बालक बोले कि अच्छा जब मैं कहूँ तभी रोकियेगा। इस करार पर गर्भ का बालक अपना गर्भ बन्धन अपने हाथ से छुड़ा कर तैयार हुये तो तब माया चक्र प्रवाह रुकते ही बालक बन में भाग गये। व्यास जी हा पुत्र हा पुत्र कहते रोते रह गये। सुकदेव जी अमर कथा के प्रभाव से बन में विचरते हुए परमहंसोंके आचार्य होगये। यही यह अमरकथा अमर रामायण है। जिसको श्रीजनकराज किशोरीशरण जी ने महावैराग वृत्ति से बुन्देलखण्ड-जालवन जिला के एक जंगल में बेतवा नदी नाम की नदी तट पर १२ वर्ष का अनुष्ठान करके श्रीसुकदेव जी का प्रत्यक्ष दर्शन पाया और अमर कथा के साथ २ आपका सुक नाम पड़नेका भी परिचय तथा परमहंसोतत्व प्राप्त किया और श्रीसुकदेव जी की प्रेरणा से आपने यह अमर रामायण लिखा है।

श्री श्री १००८ रसिकाचार्य श्रीजनकराज किंशोरी शरण (श्रीरसिकअली) जी का संक्षिप्त जीवन

श्रीस्वामी जनकराजकिशोरी शरण जी का जन्मस्थान श्रीद्वारिकाजी के पास सुदामा नगरीके आपके पिता नागरजातीय एक ब्राह्मण थे। आप बाल्य अवस्थामें ही संसारसे वैराग लेकर भगवानके भरोसे अपने घरसे चल पड़े कुछ थोड़ासा खर्च अवश्य लिये होंगे, इस प्रकार श्रीअयोध्याजी आपहुंचे। आपके पास का खर्च भी समाप्त होगया और विदेश की भाषा भी नही समझ पाये अतः आपको कई दिन भूखे ही बीत गये। भूख से तथा बालपने की घबड़ाहट से व्याकुल चित्त आप श्रीहनुमान जी, श्रीराम जन्मभूमि, श्रीकनकभवन आदि स्थानों में दर्शन करने पर भी भाषा की अज्ञानता से भोजन न मांग सके। श्रीजानकी घाट सरयू तट पर बालू में पड़े २ आधी रात में आप बड़ी जोर से चिल्ला कर रोये। आपके रुदन आवाज को श्रीस्वामी रामचरणदास (करुणा सिन्धु) जी ने सुना, क्योंकि श्री करुणासिन्धु जी सैकड़ों सन्तों के साथ घास फूस की कुटिया बना करके श्रीजानकीघाट सरयू तट पर रहते हुये भजन करते थे अतः आपको रुदन की आवाज किसी की भी सहन नहीं होती थी इसी लिए आपका नाम प्रसिद्ध श्रीकरुणासिन्धु जी था। इस अरक्षित बालक के रुदन पर व्यथित होकर श्रीकरुणासिन्धु जी ने अपने शिष्य श्री राजराघोदास जी को बुलाकर कहा कि रोने वाले व्यक्ति का पता लगाओ। श्रीगुरू महाराज की आज्ञा पाकर श्री राजराघोदास जी महाराज दोड़कर उस स्थान पर आये कि जहाँ बालक रो रहा था। आपने बालक से रोने का कारण पूछा तो वह बालक काठिया

वाड़ा की भाषा में बोला कि मुझे चौदह आवरण श्री कनक महल का तथा अनन्त पार्षदों के साथ सभाकुञ्ज में श्रीसीताराम जी का दर्शन हुआ मैं भूख से व्याकुल होनेके नाते बेहोश पड़ा था श्री जानकी जी ने मुझे देखा तो अपनी मुख्य सखी द्वारा मुझे बुलाया मैं कनकभवन दिव्य मार्ग से उस सखी द्वारा सभाकुञ्ज में गया श्री जानकी जी को प्रणाम किया, श्री जानकी जी ने मुझे श्रीरामचन्द्र जी के हाथ समर्पण किया श्रीरामचन्द्र जी ने मुझे एक चारुशीला जी नाम की सब सखियों की स्वामिनी जी के हाथ दिया और यह कहा कि यह मेरी धरोहर को तुम अपने समाज में रक्खो कहा तो तब श्रीसर्वेश्वरी श्रीचारुशीला जी मुझे अपने हृदय से लगाई तो मेरा दिव्य स्वरूप हो गया था जब मेरी नींद खुली तो तब मुझे इस शरीर की पीड़ा फिर दर्द करने लगी इसी लिए मैं रो रहा हूँ कि मेरा वह दिव्य दर्शन दृश्य कहाँ गया। रोते २ बालक ने इतनी कथा सुनाई तो श्री राजराघोदास जी का भी जन्म गुजरात देशका ही था अतः वे उनकी भाषा को जानते थे। अत्यन्त करुणामें भींजकर महाराज राज राघोदास जी ने उस बालक को और भी बहुत सी बात पूछकर हृदय से लगाकर श्रीकरुणासिन्धु जी महाराज के पास में लाकर सब समाचार सुनाये तब श्रीकरुणासिन्धु जी ने ब्राह्मण कुमार अर-चित उस बालक के जीवन पर विचार करके अत्यन्त प्रसन्न हुये और जैसे अपने ऊपर कृपा हुई थी उसी प्रकार की इस बालक पर हुई है ऐसा जानकर जैसे श्रीगुरु महाराज ने मेरा पंच संस्कार अपने शिष्य श्री रघुनाथप्रसाद जी से श्री हनुमान जी की प्रेरणा जानकर कराया था वही प्रकार यह भी घटना है अतः श्रीयुगल सरकार की प्रेरणा जानकर श्रीकरुणासिन्धु जी ने भी उस बालक का पंच संस्कार अपने शिष्य राजराघो दास जी से करवाया।

पंच संस्कार करके साधू समाज में रखकर पढ़ाने का इन्तजाम कर दिया अब बालक बड़ी शीघ्रता से हिन्दी भी समझ गये। आसपास के पढ़ाने वाले सबसे अधिक पाठ हो जाने पर तब श्रीगुरू महाराज की आज्ञा से काशी गये, थोड़े ही समय में भारी विद्वान हो गये। श्रीगुरू महाराज के पास आकर उपासना का प्रश्न किये तो श्रीराजराघो दास जी महाराज ने अपने शिष्यता के नाते बड़े प्रेम से अपनी उपासना भाव का ही उपदेश करने लगे।

श्रीमहाराज राजराघोदासजी पहले गुजरात देश में आचारी वैष्णव थे घर में वैराग होते पर विरक्त होने की इच्छा से श्रीअयोध्या जी आये और श्रीकरुणासिन्धु जी से श्रीसीताराम उपासना का सतसंग पाकर श्री सीताराम युगल मन्त्रराज लिए सतसंग से उपासना भावों को जानकर अपने श्री गुरू महाराज श्रीं करुणासिन्धु जी से उपासना सम्बन्ध माँगे तो श्रीकरुणासिन्धु जी ने पूछा कि आप के मन में श्रीसीताराम जी की कौन सी सेवा अच्छी लगती है तब श्रीराजराघो दास जी बोले कि मैं श्रीजानकी जी का छोटा भाई रहूँ और श्रीरघुनाथ जी को दहेज में दासभाव से दिया जाऊँ अपनी बड़ी बहिन के दुलार पूर्वक सरकार श्रीरघुनाथ जी का दास बना रहूँ। तब आपकी ऐसी रुचि जान-कर श्रीकरुणासिन्धु जी महाराज ने आपको नर्म सख्य सम्बन्ध दिया है। इस सम्बन्ध का स्वरूप

५ वर्षकी उमर से सखी होकर श्रीयुगल सरकारकी एकान्तिकी सेवा में भी रह सकते हैं और ६ वर्षकी अवस्था से सख्य भाव भी बना रहता है किशोरावस्था में दास भाव में सब जगह बाहरी टहल कर सकते हैं। यही भावना श्रीराजराघो दास जी महाराज को श्रीकरुणासिन्धु जीं दिये थे तो आप भी अपने शिष्य श्री जनकराज किशोरी शरण जी को यही भाव उपदेश करने पर श्री जनकराज किशोरी शरण जी महाराज तो अब पूरे पण्डित होगये थे अतः आपने अपने गुरु महाराज से प्रार्थना करके कहा कि मुझे शृङ्गार रस का ही उपदेश दिया जावे तब श्रीराजराघोदास जी आपको श्री करुणासिन्धु जी के पास लाकर के बोले कि महाराज जी यह जनकराज किशोरीशरण को मैं आपके श्रीचरणों में भेट चढ़ाता हूं कहकर दोनों गुरु चेला साष्टांग दण्डवत किये तो तब श्रीकरुणासिन्धु जी बोले कि यह मेरा ही है भेट कैसा? इस प्रकार पूछा तो तब श्रीराजराघोदासजी बोले कि मैं अपनी भावना का उपदेश देने लगा तो ये शृँङ्गार भाव माँगने लगे तब मेरा तो दासभाव है मैं कैसे शृँङ्गार भाव देसकता हूं सरकार ही इस पर कृपा कर दिया जावै ऐसा कहा तो तब श्रीकरुणासिन्धु महाराज ने सम्बन्ध पत्र देकर शृँङ्गार भावना दिया तबसे अष्टयाम भावमें विलीन हुये महाराज श्रीजनकराजकिशोरीशरण जी का यह श्रीसीतारामजी का दिव्य धाम रूप लीला नाम प्रभाव प्रत्यक्ष हुआ, आप भजनके प्रभाव से उच्चकोटि के सन्त प्रत्यक्ष हुए कि आपकी दिव्य धाम यात्रा में भी देवताओं द्वारा फूल वर्षा हुई, दिव्य बाजा बजे, सं० १९०६ मार्गशीर्ष पूर्णिमा को सारे मिथिला नगर भर में दिव्य पुष्प दर्शन दिये सब लोग आश्चर्य किये। तथा आपकी रचना कृत्य पर आपके साहित्य से आज भी आश्चर्य ही होता है आपने जिस प्रकार साहित्य प्रगट किया यह दिव्य पार्षदत्व का ही सूचक है।

श्री करुणासिन्धु जी महाराज के कृपा पात्र अशख्य एक से एक महान पुरुष हुये। जिनमें श्रीराजराघोदास जी तथा श्रीरसिकअली जी और श्रीयुगलप्रियाजी इन तीन महापुरुषों की परम्परा आज भी वर्तमान है, प्रसिद्ध है। परन्तु दिव्य साहित्य रचना में तो श्रीरसिकअली जी के सदृश दिव्य रस भाव में प्रवेश कराने वाला साहित्य और किसी भी आचार्यों का साहित्य नहीं मिला है। श्री अग्रस्वामी जी ने साहित्य प्रगट तो बहुत किया था परन्तु अतिकाल होने की वजह से सब साहित्य बिखर कर लुप्त होगया। जो बचा भी है तो वह मनमुखी लोगों द्वारा बिगाड़ा गया है जिसमें एक आचार्यों के साहित्य भक्षक समाज उत्पन्न हुआ हैं। जो समाज अपने पूर्वजों का तो कोई साहित्य नहीं पाया परन्तु हमारे पूर्वजों श्रीअग्रस्वामीजी श्रीकल्ह स्वाम जी के परम्परागत आचार्योंके ग्रन्थोंको अपने मनमुखी मत पुष्टि कर्नेके पुरुषार्थमें सफलताके लिये कटौतीका सगर कुमारोंका सरीखा परिश्रम कर रहे हैं। परन्तु भले श्रीकलियुग महाराज उनके द्वारा संसार के जीवों को भ्रम में डाल कर अपना पेट पोषैं, परन्तु सतपुरुषों के दृष्टि में यह कभी नहीं आ सकता है कि श्रीसीताराम मन्त्रदाता श्रीहनुमान जी (सर्वेश्वरी श्रीचारुशीलाजी) के सिवाय और आचार्यया श्री चन्द्रकला सर्वेश्वरी हों। यद्यपि श्रीरसिकअली जी का और श्रीयुगलप्रिया जी का आपस में गुरुभाई गुरुभाई के नाते घनिष्ट प्रेम था

और श्री युगलप्रिया जी को भावनावस्थाके स्वप्नमें मृदंग बजाना सिखाने के नाते श्रीचन्द्रकलाजी को मृदंगाचार्य श्रीयुगलप्रियाजी ने मान लिया था तो आपकी भावनाको पुष्टि करने वाला कुछ आधार भी चाहिये था इसलिए श्री अग्रस्वामी जो ही श्रीचन्द्रकला हैं ऐसा आपने रसिक प्रकाश भक्तमाल में लिख दिया जिससे आपके भाव में सन्तोष हो परन्तु यह लेख सर्वेश्वरी श्रीचारुशीला जी को नीचा दिखा कर चन्द्रकला स्वयं सर्वेश्वरी बनें इस प्रकार का तो नहीं था परन्तु कली महाराज को मौका मिल गया अस्तु श्रीसीताराम मन्त्रदाता श्री हनुमान जी ही श्री सम्प्रदाय आचार्य हैं तथा श्री हनुमान जी सर्वेश्वरी श्री चारुशीला जी हैं यह बात वेद शास्त्र तथा पूर्वाचार्य सब प्रमाण बहुत होने पर भी केवल दो एक वेद मन्त्र व शास्त्र श्लोक प्रमाण दे रहा हूँ। ऋग्वेद ५-३-३ वेद में—

तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त रुद्र यत्ते जनिम चारु चित्रम्।
पदं यद्विष्णो रूपपं निधायि तेन पासि गुह्यं नाम गो नाम॥ इति मन्त्रस्यभाष्यं
एतस्य श्रीरामस्य मुख्य मुपासकं रुद्रं (हनुमन्तं) स्तुवन्ति देवाः—

श्रीसीताराम जी के मुख्य उपासक श्रीहनुमानजी को देवता लोग स्तुति करते है—

हेरुद्र हेहनुमन् तवश्रिये त्वदधिगत संम्पत्प्राप्त्यर्थं—
रामविद्या वाप्त्यर्थं मरुतो देवाः मर्जयन्त शोधयन्ति,
तपोध्यानादिनात्मानं यत् यतस्ते तव जनिम जन्म—
चारु रम्यं यत् यतस्त्वया चित्रं पदं रेफांरूपेणाग्निना युक्तं॥

अर्थ—हे रौद्र भयानक रूप धारण करने वाले श्री हनुमान जी! आपके हृदय कमल में विराजमान दिव्य सम्पत्ति श्री सीताराम नाम रूप लीला धाम को प्राप्त करने के लिये देवता (ऋषि मुनि महर्षि देवर्षि ब्रह्मर्षि) सब आपकी स्तुति करते हैं क्योंकि आपका माधुर्यमय जन्म का नाम श्री चारुशीला जी है और आपके हो आधीन श्री सीताराम जी हैं। यह अर्थ महाभारत के नीलकण्ठी टीका कार श्री गोविन्द सूरी पुत्र श्री नीलकण्ठ जी ने किया है—

बम्बई से छपा मन्त्र रामायण में देख लीजिये इसके अलावा भी इस वेद मन्त्र के अर्थ अन्य विद्वानों द्वारा किया गया—

श्रीचारुशीला रूपेण अवतीर्णं श्रीहनुमन्तं स्तुवन्ति देवाः-हे रुद्र-रुद्रावतार हनुमन मरुतः देवाः मर्जयन्त-मार्जयन्ति तप आदिभिः स्वात्मानं सोधयन्ति इत्यर्थः॥ किमर्थं तत्-त्वदधिगत श्री-सीताराम विद्या वाप्त्यर्थम्। सुद्धान्त स्कर्णाः श्रीसीताराम तत्वं श्रीयुगल मन्त्रार्थादि न्प्राप्त्यर्थम। कुत इति चेत्-यत् यतः ते तव चारु (चारुशीला रूपेण) जनिमजन्म चित्रं आश्चर्य जनकं अभूत्। पूर्वं वायुपुत्रो हनुमान। हनुमान रूपेण लंका दाहकः। ततो रुद्रः रुद्रावतारः संहार कर्ता। अधुना चारु-

शीला सर्वेश्वरीश्रीसाकेते सम्प्रदाय प्रवर्तिकासखी वा श्रीसाकेता दवतीर्णा एवम्भूता सर्वेश्वरी श्रीचारुशीला शास्त्र मान्यापि तथा अधुनापि सम्प्रदाय मान्या सर्वेश्वरी श्रीचारुशीला इत्यपि आश्चर्यं चित्र पदस्याभिप्रायः ॥ चारु नाम सुन्दरं ते जजिम जन्म अमूत-इति चारु पदे श्लेषात् । चारु शब्दस्य चारुशीला इत्यर्थ करणं कथमिति शंका शास्त्र विद्भिः भावुकैः रसिकैः न कार्यः ॥ यतः शास्त्रमेव तथार्थ करणे प्रमाणम् तच्च-शब्द साधुत्वे प्रधानं व्याकरणं तथाहि--सिद्धान्त कौमुद्यां तद्धितेप्राग्दिवीये ठा जादा वूर्ध्वं द्वितीया दचइति सूत्रे--चतुर्थो दनजादौ वा लोपः पूर्व पदस्य च । अप्रत्यये तथैवेष्टइवर्णाल्लइलस्य च--इति श्लोक वार्तिकस्थस्य अप्रत्यये तथैवेष्ट इति खण्डस्य व्याख्यान भूतेन विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तर पदयो र्वालोपो वक्तव्य इति वार्तिकेन सिध्यति । यथा-देवदत्तः-देवः दत्त इत्यत्र प्रत्यये अविधीयमानेऽपि पूर्वस्य देव पदस्य लोपे दत्त पदेन--उत्तर पदस्य लोपे सति देव पदेन देवदत्तस्य ग्रहणंभवति तथैवात्रापि-चारुशीलेति समुदायस्य उत्तरस्य शीलेति पदस्य लोपे सति चारु पदेन चारुशीलेत्यर्थस्य पदस्य च ग्रहणं बोधः, यः शिष्यते स लुप्यमानार्थाभिधायीति न्याय न् ॥ अपरञ्च-नामैक देशेन नाम मात्रस्यापिग्रहणम् इत्यपि न्यायः । पातञ्जले महाभाष्ये सिद्धे शब्दार्थ सम्बन्धे-इति वार्तिक व्याख्यान प्रसंगे--उपलभ्यते--सत्या भामा सत्यभामा इतिउदाहरणं । तथैव प्रकृत्येपि सङ्ग--मनीयम ॥

चारु शब्द का चारुशीला अर्थ कैसे हुआ ऐसी शंका विद्वान भावुक (रसिक) जन नहीं कर सकते हैं, क्योंकि साधुत्वका विधान करनेवाला शास्त्र व्याकरण है, वह प्रमाण सर्वमान्य है। जैसेकि-

सि० कौ० त० प्राग्दिवीय प्र: में ठा जादा वूर्द्धं द्वितीया दचः,

इस सूत्र के ऊपर श्लोक वार्तिक है—

चतुर्थो दनजादौ लोपः पूर्व पदस्य च । अ प्रत्यये तथै वेष्ट इवर्णाल्ल इलस्य च ॥

इसके तृतीय चरण के व्याख्यान में--विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तर पदयोः र्वालोपो वक्तव्यः, ऐसा है, उसका अर्थ है—

प्रत्यय न हो तो भी पूर्व पद या उत्तर पद लोप विकल्प से होता है ।

उदाहरण—देवदत्तः । दत्तः--देवः, यहाँ कोई प्रत्यय नहीं होता है, परन्तु देवदत्त शब्द में पूर्व पद लोप हुआ तो दत्तः । उत्तर पद लोप हुआ तो देवः । जो देवदत्त शब्द से बोध होता है, वहां केवल दत्त अथवा देव से भी अर्थ बोध होता है, ऐसे यहां भी उत्तर पद शीला का लोप हुआ है, केवल चारु शब्द से चारुशीला रूप अर्थ का बोध होता है और--सिध्दे शब्दार्थ सम्बन्धे, इस भाष्य वार्तिक के व्याख्यान में--पातञ्जल महाभाष्य ने भी लिखा है—नामैक देशेन नाम मात्रस्य ग्रहणम्, भवतीति—नाम के एक भाग से भी सम्पूर्ण नाम का ग्रहण होता है जैसे--सत्या-भामा-सत्यभामा, केवल सत्या शब्द से या केवल भामा शब्द से भी सत्यभामा का ज्ञान होता है । ऐसे ही यहां पर भी चारु शब्द से भी चारुशीला अर्थ का बोध होता है । श्रीहनुमत संहिता के प्रथमाध्याय में लिखा है—

त्वं साक्षा च्चारुशीला च नित्या मध्ये प्रपूजिता ।।८।।

श्री अगस्त्य जी श्री हनुमान जी से कहते हैं कि हे हनुमान जी आप श्रीसीताराम जी के माधुर्यमय विलास स्थान में श्रीसीताराम जी के सखि समाज में अग्र पूज्या श्री चारुशीला जी हैं अतः हमको श्रीसीताराम जी के माधुर्य लीला का उपदेश कीजिये ।

हनुमत संहिता के इस श्लोक का अर्थ श्रीस्वामी युगलानन्दशरण जी ने इस प्रकार किया है -

नित्य सु परिकर बृन्द बीच राजत हौ सन्तत । नाम ललित मुद मिलित चारुशीला सतसम्मत । यूथेश्वरी प्रधान निकर परिकर पद पूजित । युगल विलास विचित्र विमल बानी कल कूजित ॥ श्रीयुगल विनोद विलास पृष्ठ६ पं०६। श्रीयुगलानन्यशरणजींने तो अपनी वाणीसे कहीं भी अपने पूर्वजोंके विरुद्ध चन्द्रकला जी को सर्वेश्वरी नहीं लिखें पुराना प्रमाण कुछ भी नहीं मिलेगा परन्तु अब नये भगत सभी महात्माओं के नामों को बदनाम करने के लिए नये २ पद व ग्रन्थादि रचना करके प्रकाशित कर रहे है जैसे हनुतवाटिका वालो लोमस संहिता यह कलि महाराज की लीला में अभागे लोग फसेंगे ।

श्रीराम जी के वहु पत्नित्व का प्रमाण

सर्वलोक कर्ता भर्ता संहर्ता भोक्ता आदि कारण परात्पर ब्रह्म परमात्मा श्रीराम जी के लिए वहुपत्नीत्व में शंका होना ही अनुचित है । फिर भी संसार तो संसार (शंसरण शील अथवा शंसय समूह) ही है ऐसी स्थित में जीव (चेतन आत्मा) अज्ञान अन्धकार दुःख का स्वरूप संसार में फँसा है इसीलिए ईश्वर नेअपनी कृपाडोरी वेद शास्त्र प्रकाशक आचार्य परम्पराको किया. परन्तु बीचमें कुछ माया प्रपंची विद्वान अपनी मायाको ईश्वरकी इच्छासे उत्पन्न हुई ईश्वरीय माया को सहायता देनेवाले उत्पन्न हो जाते हैं कि जिसमें जीव कुछ भ्रम में भी पड़ जाते हैं, ऐसी स्थिति में जीवों का संसय दूर करके दृढ़निश्चय द्वारा ईश्वर आराधना प्रचार आचार्यों ने किया है, वह प्रचार दो प्रकार का है एक तो संसार में फँसे जीवों को धम मार्ग में लाने के लिए संसार से वैराज्ञ उत्पन्नार्थ तथा दूसरा भगवत अनुरागी विद्वान परमहंसों को शास्त्र सम्मत अनुसन्धान दृष्टि देने के लिए। अतः जो लोग एक पत्नी व्रत का अर्थ केवल श्रीसीता जी के सिवाय और को श्रीराम जी बिवाह नही किये हैं ऐसा मानते हैं उनका मानना तथा प्रचार करना बहुत अच्छा है कि संसार के जीव ज्यादा विवाह न करें जिस एक पत्नी को वेद बिधि से अपनाते हैं उसके सिवाय और संसार से वैराज्ञ प्राप्त करें कठिन तपस्या द्वारा धर्म शुद्धता को प्राप्त करें । परन्तु जो लोग भगवत भक्तों के भाव में क्षोभ पैदा करने के लिए कमर कस करके श्रीराम जी के वहुपत्नीत्व का खण्डन करते हैं उनके लिये यह प्रमाण दिया जाता है कि श्री राम जी का बहुत स्त्री होना अधर्म नहीं है क्योंकि सभी जीव चेतन शक्ति स्वरूप होने से परात्पर पुरुष परमात्मा के भोग्य हैं अवतार काल में भी आपका चरित्र बहुपत्नीत्व से खाली नहीं हैं । जब श्री

श्री राम जी के पिता जी श्री दशरथजी महाराज के सात सौ अथवा ३५० रानी थी तो वे भी धर्मात्मा ही थे जैसा कि श्रीदशरथजी महाराज के बहुत स्त्रीत्व का श्रीबाल्मीकीय रामायण में लिखा है—

पतत्रिणा तदा सार्धं सुस्थिेन च चेतसा। अबस द्रजनीमेकां कौशल्या धर्म काम्यया॥३४॥बा० बा० सर्ग १४

महिष्या परिवृत्या च वावातामपरां तथा॥ पतत्रिणस्तस्य (दशरथस्य ३५)

तथा अयोध्या काण्डे—अर्द्ध सप्त शता स्तत्र प्रमदा स्ताम्र लोचनाः।

कौशल्यंपरि वार्याथ शनैर्जग्मुधृत व्रताः॥१३॥ सर्ग–३४॥

आदि बहुत प्रमाण हैं। इस प्रकार उन धर्मात्मा महाराज श्री दशरथ जी के सभी पुत्रों के बहुत स्त्री थी जैसा कि श्रीमद्बाल्मीकीय रामायण में अयोध्या काण्ड सर्ग ८ श्लोक १२ में—

हृष्टाः खलु भविष्यन्ति रामस्य परमाः स्त्रियः॥

अप्रहृष्टा भविष्यन्ति स्नुषास्ते भरतक्षये॥१२॥

अर्थात् मन्थरा ने श्री कैकेई माता से कहा कि हे कैकेई यदि श्रीरामजी राजा हो गए तो श्रीराम जी की परम सुन्दरी सब स्त्रियायें अत्यन्त हर्षित होंगी और तुम्हारे पुत्र श्री भरत जी की सब स्त्रियायें अत्यन्त दुखी होवेंगी। अतः यह बोली बहु पत्नीत्व की सूचक है तथा और भी—

बहूनां स्त्री सहस्त्राणां बहूनां चोप जीविनाम॥

परिवादोऽपवादोवा राघवे नोप पद्यते॥२७॥

श्री महाराज दशरथ जी कहते हैं कि हे कैकेई श्री राम जी तो अद्भुत गुणबान हैं कि जिनके बहुत हजार स्त्रियायें हैं और उन स्त्रियों की सेवा में एक एक स्त्री के साथ बहुत हजार उपजीवी वाली स्त्रियायें हैं इस प्रकार बहुत स्त्रियों के पति होने पर भी श्री राम जी के पास उन स्त्रियों का कोई प्रकार का झगड़ा (कलह) या सिकायत (चुगली) नहीं आती है, क्योंकि श्री राम जी ने अपने अद्भुत गुण प्रभाव तथा नीति से सबको सम्यक् प्रकार तृप्त कर रक्खा है अतः सब सबसे अतिशय प्रेम करती है यह गुण जैसा श्री राम जी में है ऐसा गुण मेरे में नहीं है क्योंकि मेरे रहते तुमने श्री कौशल्यादि सबको दुख दिया।

तथा इसी प्रकार महाराज श्री दशरथ जी ने आगे भी अध्याय ४२ में कहा है कि—

यः सुखे नोपधानेषु शेते चन्दन रूषितः॥

बीज्य, मानो महार्हाभिः स्त्रीभिः मम सुतोत्तमः॥१५॥

जो मेरे उत्तम कुमार श्री राम जी उत्तम कुल उत्तम गुण रूप वती महान उत्तमा बहुत सी स्त्रियों के द्वारा बीजित होते हुए उत्तम पलंगों में उत्तम तकियादि लगा कर लाल चन्दन परिलिप्त होकर शयन करते थे वे आज बन में वृक्ष तले कैसे सोवेंगे।

इसी प्रकार श्री सुमित्रा माता ने भी श्री कौशल्या माता से कहा कि जब श्रीराम बन से लौटेंगे तो पितृ ऋण से उरिण होकर राजगद्दी में बैठेंगे उस वक्त श्रीराम जी के साथ श्रीसीता जी भी अपनी

श्री भूलीलादि सखियों के साथ अभिशिक्त होवेंगी।

पृथिव्यासह वैदेह्या श्रिया च पुरुषर्षभः ॥
क्षिप्रं तिसृभिरेताभिः सह रामोऽभिषेक्ष्यति ॥१७॥ बा० अ० स० ४४॥

इसी प्रकार श्री जानकी जी ने भी श्री राम जी से कहा है बाल्मीकीय आरण्य० सर्ग ६ में स्व दार निरत श्चैव नित्यमेव नृपात्मज। धर्मिष्ठः सत्य सन्धश्च पितुर्निर्देश कारकः ॥६॥ हे प्रीतम आप अपनी समस्त स्त्रियों में हमेशा आशक्त रहते हैं तथा धर्म को इष्ट मानते हैं सत्यवादी हैं पिता के आज्ञा का पूर्ण पालक हैं। ऐसा कहा है अतः –दार शब्दो नित्यं बहु वचनान्तः—इस व्याकरण दृष्टी से श्रीरामजी का बहुत स्त्री होना सिद्ध है। इसी प्रकार श्री जानकी जी ने वियोगावस्था में भी विलाप करते हुये कहा है सुन्दर काण्ड सर्ग २८ में—

पितु निर्देशं नियमेन कृत्वा वनान्निवृत्त श्च रित व्रतश्च ॥
स्त्रीभिस्तु मन्ये विपुलेक्षणाभि स्त्वं रंस्यसे वीतभयः कृतार्थः ॥१४॥

हा प्रीतम आप तो नियम पूर्वक पिता के आज्ञा का पालन करके वनवास व्रत से निवृत्त होकर तथा कृतार्थ (पूर्णकाम) होकर निर्भयता से बड़ी २ आँख वाली अपनी मेरे से अन्य स्त्रियों के साथ रमण करेंगे परन्तु मैं क्या करूँ ॥ यह विलाप किया। इसी प्रकार कवि श्रीवाल्मीकि जी ने भी कहा है युद्ध काण्ड सर्ग २१ में जब श्रीरघुनाथजी समुद्र किनारे समुद्र के लिये धारणा देने लगे तो उस वक्त कवि ने कहा—

मणि काञ्चन केयूर मुक्ताप्रवर भूषणैः ॥
भुजैः परम नारीणा मभिमृष्ट मनेकधा ॥३॥

अहा जो श्रीराम जी के भुजा उत्तम स्त्रियों के सुन्दर बहुत हाथों से अनेक प्रकार अभिमर्दित होते थे वे ही उत्तम मणि मुक्तादि रत्नों के केयूरादि भूषणों द्वारा भूषित होने योग्य श्रीराम जी की भुजा आज समुद्र किनारे कुशासन पर सिर से दबे श्रीराम जी के तकिया बने हुये हैं॥

इसी प्रकार उत्तर काण्ड सर्ग ४२ में भी श्रीराम राज्याभिषेक के बाद जब श्री सीताराम जी अशोक बन में बिहार करने गये तो वहाँ पर श्री बाल्मीकी जी ने लिखा है कि—

उपानृत्यंश्च राजानं नृत्य गीत विशारदा॥
बालाश्च रूप वत्यश्च स्त्रियः पान वशा नुगाः ॥२०॥
मनोभिरामा रामा स्ता रामो रमयताम्बरः॥
रमयामास धर्मात्मा नित्यं परम भूषिताः ॥२१॥

अत्यन्त रूपवती नवीन उमर वाली संगीत (नृत्य गान बजान) की भारी विद्वान श्रीरामजी के मन को अत्यन्त प्रिय लगने वाली विलासाशक्त चित्त वाली स्त्रियोंके साथ रमणशीलों में श्रेष्ठ तथा धर्मात्मा श्रीरामजी ने नये २ श्रृङ्गार करके नये २ ढंग से नित्य रमण किया कराया ॥२०-२१॥

अब प्रश्न होता है कि यज्ञ में स्वर्ण प्रतिमा क्यों रक्खी गयी ? जैसा कि श्रीवाल्मीकीय उत्तर काण्ड सर्ग ६१ में लिखा है कि—

काञ्चनीं मम पत्नीं च दीक्षायां ज्ञांश्च कर्मणि ॥ अग्रतो भरतः कृत्वा गच्छत्वग्रे महायशाः ॥२५॥

श्रीरामजी ने कहा कि यज्ञ के समस्त सामग्रियों के साथ मेरी दीक्षित हुई स्वर्ण निर्मित पत्नी को भी श्री भरत जी महायशस्वी यज्ञ कर्म के विद्वानों को आगे करके लेचलें। जबकि पुराणों में लिखा है कि श्री ब्रह्मा जी ने पुष्कर क्षेत्र में यज्ञ किया तो दीक्षा में बैठने के वक्त अर्द्धांगिनी सावित्री को बुलाया तो सावित्री ने आने में देरी कर दिया तब श्री ब्रह्मा जी ने दूसरी स्त्री गायत्री को वाम भाग में बैठा लिया था। इसी प्रकार श्रीराम जी क्यों नहीं कर लिये ?

उत्तर यह है कि एक तो श्रीसीता जी पटरानी थीं जैसे श्री दशरथ जी ने श्री कौशल्या जी को ही यज्ञ में अपने साथ दीक्षित किया था इसी प्रकार श्रीराम जी ने भी अपना कुल धर्म निभाया। दूसरा उत्तर यह है कि श्री मिथिलेश जी को श्री सीता जी अत्यन्त प्रिय थीं इस लिये श्री सीता जी के पाणिग्रहण समय श्री राम जी से प्रतिज्ञा पूर्वक पाणिग्रहण कराया गया कि धर्म कार्यमें आप श्रीसीता जी के सिवाय दूसरे को मत स्वीकार करना, क्योंकि श्री वाल्मीकीय में बालकाण्ड सर्ग ७३ में लिखा है कि—

अब्रवीज्जनको राजा कौशल्या नन्द वर्द्धनम् ॥२३॥ इयं सीता मम सुता सहधर्मचरी तव ॥
प्रतीच्छ चैनां भद्रं ते पाणिं गृह्णीष्व पाणिना ॥२४॥ पतिव्रता महा भागा छायेवा नुगता सदा ॥
इत्युक्त्वा प्राक्षिपद्राजा मन्त्र पूतं जलं तदा ॥२५॥

महाराज श्रीजनक जी ने श्री कौशल्या जी के आनन्द वर्द्धक का कहा कि—हे श्रीराम यह मेरी कन्या सीता है (अथात् सिध धातू से गति अर्थ में--"गतौ ज्ञान गमन प्राप्तौ" इस प्रकार अर्थ होता है गति ज्ञानेसे श्रीरामकी ज्ञान स्वरूपा सीता, इसी प्रकार गमनप्राप्ति आदि अर्थ प्रकारसे समस्त श्रीराम ऐश्वर्य शक्ति स्वरूपा सर्व सिद्धि प्रदा अहलादिनि शक्ति सीता हैं) अतः आपके समस्त धर्म कार्य में येही सीता एकमात्र होवैं। इस प्रकारकी प्रतिज्ञापूर्वक आप इनका अपने हाथ से पाणिग्रहण करें इसीमें आपका कल्याण होगा। और ये सीता भी पतिव्रता होने से महाभाग्यवती होवें आपके छाया की तरह से अनुगमन करें इस प्रतिज्ञा पर मन्त्रपूत जल प्रक्षेपण हुआ, साधु साध्विति देवानां मृषीणां वदतां तदा ॥ देव दुन्दुभि निर्घोषः पुष्प वर्षो महानभूत् ॥२६॥ देवता ऋषियों का साधुवाद इस प्रतिज्ञा के स्वीकृतिमें ही हुआ है क्योंकि विवाह तो धनुष टूटतेही होगया था। टूटतही धनुभयउ बिबाहू–मानस

श्रीवाल्मीकी जी भी लिखते हैं—यथा अयोध्या काण्डे सर्ग ११८—

दीयमानां न तु तदा प्रति जग्राह राघवः ॥ अविज्ञाय पितुश्छन्दमयोध्याधिपतेः प्रभोः ॥५१॥

श्रीसीता जी श्री अनुसूया मातासे कहती है कि धनुष टूटते ही मेरे पिता मेरे हाथका श्रीरामजी के लिये दे रहे थे परन्तु श्रीरामजी ने पिताजी की आज्ञा बिना नहीं लेऊँगा, कहा तो तब श्रीजनकजी ने महाराज दशरथ जी को बुलाया है। अतः इसी से धर्म कार्यों में श्रीसीता जी के सिवाय दूसरी स्त्री को श्रीराम जी नहीं स्वीकार करते थे यही कारण था स्वर्ण मूर्ती बनाने का।

अब एक पत्नीव्रतो रामः का क्या अर्थ होगा इस पर कहा जाता है कि स्वपत्नि रेव व्रतः— केवल अपनी स्त्रियोंके सिवाय परभोग्याओंको क्यों लेंगे, शेरभी दूसरेका मारा शिकार नहीं खाताहै॥ नारि बिलोकहि हरषि हिय निज निज रुचि अनुरूप। जनु सोहत शृंगारधरि मूरति परम अनूप। मानस

—:*:—

विषय सूची

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृ-लोक का दर्शन। द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०१॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम। चतुष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम। पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ ४२६॥

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह। षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ ४५२॥

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६२॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत। अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६६॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति। एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४८२॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना। षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ ४६१॥

माणवक नगरीके राजा उद्धविक्रमकी कन्याओं से विवाह। एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ ५०३॥

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह। द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ५१६॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जी की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये। फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये।

॥ इति शुभम्॥



❀ श्री अमर रामायण ❀

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❀ बन्दना ❀

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, पुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'बागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
वन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❀:—



* श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः *

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

श्री अमर रामायण

श्री कनक भवन विहारिणी विहारिणौ विजयेते तराम् ॥ श्रीमत्यै सर्वेश्वर्यै श्रीचारुशीलायैनमः ॥
श्रीमन्मारुतनन्दाय नमः ॥ श्रीमतेरामानन्दायनमः ॥ श्रीमतेअग्रदेवाचार्यायनमः ॥
श्रीमतेकरुणासिन्धवेनमः॥ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः ॥ श्रीमत् दयासिन्धु चरणकमलेभ्योनमः ॥

श्री भरद्वाज उवाच

नित्यं दाशरथेर्धामाऽयोध्याख्यं वर्णितं त्वया ।
नारदो वाल्मीकिं प्राह ब्रह्मलोकं गमिष्यति ॥ १ ॥

श्री भरद्वाज उवाच :—श्री भरद्वाजजी श्री याज्ञवल्कि जी से बोले कि हे मुने! आपने श्री चक्रवर्ती दशरथ कुमार रामजी के नित्यधाम अयोध्या नाम का वर्णन किया और नारदजी ने बाल्मीकी जी को श्री रामजी का ब्रह्मलोक (दिव्यधाम) जाने का प्रसंग वर्णन किया ॥ १ ॥

अत्र जाता मदीयान्तस्कर्णे शंका गरीयसी ।
त्वन्निवर्तयितुं शक्तो रामतत्व विदाम्वर ॥ २ ॥

इस जगह पर मेरे मन में एक बहुत बड़ी शंका पैदा हो गई है। इस शंका को, श्रीराम तत्व के वेत्ताओं में श्रेष्ठ आप ही दूर कर सकते हैं ॥ २ ॥

याज्ञवल्क्य उवाच

शिवेनात्र कृतो ग्रन्थः पार्वतीं प्रतिबोधितुम् ।
श्रीराम रत्नमञ्जूषा साते शंकां निवारयेत् ॥ ३ ॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि आपकी इस शंका को दूर करने वाला श्री राम रत्न मंजूषा नाम का एक ग्रन्थ श्री शंकरजी ने श्री पार्वती जी को प्रबोधित करने के लिए कहा है, वही आपकी संका को दूर कर देगा ॥ ३ ॥

भरद्वाज उवाच

तदेवकथयस्वामिन्समन्ता त्कारणान्वितम् ।
यथा गिरिजया पृष्टः शङ्करो ज्ञान सागरः ॥ ४ ॥

श्री भरद्वाज जी बोले कि हे स्वामिन जिस कारण से वह ग्रन्थ बना; जैसे श्री पार्वती जी ने ज्ञान-सागर श्री शंकर जी से प्रश्न किया वही प्रसंग को आप सम्यक् प्रकार से कहिये ॥ ४ ॥

यथा ववोधिता तेन रामभक्तोत्तमेन सा ।
निवर्त्तयस्व मे शंकां सर्वशास्त्र विदाम्वरः ॥ ५ ॥

श्री राम भक्तों में श्रेष्ठ श्री शंकर जी ने पार्वती जी को किस प्रकार प्रबोधित किया (जनाया) वह प्रसंग भी, सब शास्त्रों के जानने वाले आप हैं अतः कहिये ॥ ५ ॥

याज्ञवल्क्य उवाच

यथा गिरिजया पृष्ट श्चोक्तवान्शंकरो यथा ।
त्वत्प्रीत्या कथयिष्यामि गोप्या यद्यपि सा कथा ॥ ६ ॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले, "हे भरद्वाज ! जिस प्रकार श्री पार्वतीजीने प्रश्न किया और श्री शंकरजी ने उत्तर दिया, आपकी प्रीति से प्रसन्न हुआ मैं वह प्रसंग गुप्त होने परभी सम्पूर्ण कहूँगा ॥ ६ ॥

पार्वत्यूवाच

मम नाथ लोकनाथ रामतत्व विदाम्वर।
यत्त्वद्वक्त्रादृच्छ्रुतं पूर्वं श्रीरामचरितं द्विधम् ॥ ७ ॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि हे मेरे नाथ! आप सम्पूर्ण रामतत्व के वेत्ताओं में श्रेष्ठ हैं और सम्पूर्ण लोकों के नाथ हैं ऐसे आपसे मैंने श्रीराम चरित्र को दो प्रकार सुना है ॥ ७ ॥

मानुष्य लौकिकाख्यंच ब्रह्मलौकिक नामकम्।
पूर्वंतु कथितं नाथ बहुवारंसयाश्रुतम् ॥ ८ ॥

यह एक तो मनुष्य लोक का चरित्र और दूसरा ब्रह्मलोक (दिव्यधाम) का चरित्र ये दोनों प्रसंगों को मैं कई बार सुन चुकी हूँ ॥ ८ ॥

खरादीनां वधो यत्र ह्यब्रलोक गमान्तकम्।
नेदमद्यापि लोकेश कथितं करुणानिधे ॥ ९ ॥

हे करुणानिधे! खर रावणादि वध चरित्र तो सुन चुकी हूँ इसके बाद ब्रह्मलोक (दिव्यलोक) जाने पर जो चरित्र हुआ वह आपने अभी तक नहीं कहा ॥ ९ ॥

शिवउवाच

श्रूयतां चरितं तत्तु गोप्यं त्रिपाद वैभवम्।
अनाधिकारि स्वैवैतत्कथने दोषभाग्भवेत् ॥ १० ॥

श्री शिवजी बोले, "हे पार्वती! अब आप त्रिपाद विभूती के ऐश्वर्य (वैभव) को प्रकट करनेवाले शुभ चरित्र को सुनिये परन्तु अनाधिकारी से यह चरित्र कहने पर दोष का भागी बनना पड़ता है ॥ १० ॥

पार्वत्यूवाच

अहोस्वाश्चर्यकं नाथाहंते नित्यानुगामिनी।
कथंनमेधिकारोस्ति प्रवदा नुग्रहं कुरु ॥ ११ ॥

श्री पार्वती जी बोलीं—अहोनाथ! बड़े आश्चर्य की बात है मैं आपकी नित्य अनुगामिनी होने पर भी मेरा अधिकार क्यों नहीं है कृपा करके इस बात को भी कहिये ॥ ११ ॥

शिवउवाच

नाधिकारोद्य एवास्ति यद्यपि प्राण वल्लभा।
शृणु तत्कारणं भद्रे वेद वेलास्वलंघ्यका ॥ १२ ॥

श्री शिवजी बोले—हे भद्रे (कल्याणी) यद्यपि तुम मेरी अत्यन्त प्राण वल्लभा हो तथापि आपको अभी इस शुभ चरित्र में अधिकार नहीं है। क्योंकि वेद की मर्यादा उल्लंघन नहीं की जा सकती है ॥ १२ ॥

प्रथमं स्त्री वा पुरुषः श्रीरामायुध संस्कृतः।
जानक्या मुद्रया चैव तन्नाम्ना नामसंस्कृतः ॥ १३ ॥

स्त्री हो अथवा पुरुष हो पहले उसको श्री रामायुध (तप्त धनुष बाण) संस्कार, श्री जानकी मुद्रिका, श्री सीताराम नाम संस्कार होना चाहिये ॥ १३ ॥

सीतापडक्षरोमन्त्रः श्रीरामस्य षडक्षरः ॥
चतुर्विंशाक्षरो द्वाख्य एतैरेवाभिसं स्कृतः ॥१४॥

और श्री सीता षड् अक्षर मंत्र राज श्रीराम षड अक्षर मंत्रराज और चौबीस अक्षर वाला मंत्रद्वय इनका संस्कार होना चाहिए ॥१४।

एते च वाह्य संस्काराः कथितावेद सम्मताः ॥
तथैवान्तश्च संस्काराः वदामि प्राणबल्लभे ॥१५॥

हे प्राणवल्लभे ! इस प्रकार के ये वाह्य (बाहरी) संस्कारों को वेदों ने बताया है और उसी प्रकार आभ्यन्तरिक (भीतरी), संस्कार भी मैं आप से कहता हूँ १५॥

श्रद्धा विश्वास निष्ठाच रुचिस्तेषु गुरुष्वपि ॥
भक्तिमान् विनयी सत्यं वदामि प्राण वल्लभेः ॥१६॥

हे प्राण वल्लभे ? गुरु के वचन में रुचि, विश्वास (परतीति) और निष्ठा होने पर नम्रता पूर्वक प्रश्न करने से तब इस गुप्त चरित्र में रुचि जानकर कहा जाता है ॥१६॥

क्रियामान् शील संन्तुष्टः उदारः परमार्थवित् ॥
भावना भाव संयुक्तो ललितो ललितं हितम् ॥१७॥

और वह प्रश्न करने वाला सदाचार क्रियावान हो शील, संतोष, उदार, और परोपकार इन दिव्य गुणों वाला हो और भगवत् अष्टयाम सेवा भाव वाला जो हो उसको यह अत्यन्त हितकारक सुन्दर चरित्र कहना चाहिए १७

श्रावये चरितं ब्रह्म लौकिकं लोक दुर्ल्लभम् ॥
कदापि न त्वया पृष्टं मयान श्रावितं शुभे ॥१८॥

इस प्रकार के सत्पात्र से यह दिव्य धाम का दुर्लभ चरित्र कहना चाहिए। हे शुभे ? आपने कभी इस प्रकार का प्रश्न ही नहीं किया ॥१८॥

सीताया रामचन्द्रस्य संस्कारा श्चापि, दुर्ल्लभाः ॥
याञ्चां विना न दातव्या नीतिरेव सनातनी ॥१९॥

ये श्रीसीताराम जी के संस्कार अत्यन्त दुर्लभ हैं बिना याञ्चा पूर्वक प्रश्न के ऐसे गुप्त तत्वों को नहीं कहना चाहिए यह सनातन की नीति है ॥१९॥

पार्वत्यूवाच

यांञ्चयामि याञ्चयामि याञ्चयामि पुनः पुनः ॥
प्रणतिश्च प्रणतिश्च प्रणतिश्च पुनः पुनः ॥२०॥

श्री पार्वती जी ने कहा—हे नाथ ? मैं बार २ याञ्चा करती हूँ; याञ्चा करती हूँ; याञ्चा करती हूँ। फिर २ बार २ याञ्चा करती हूँ। मैं प्रणाम करती हूँ; प्रणाम करती हूँ; प्रणाम करती हूँ फिर २ बार २ प्रणाम करती हूँ ॥२०॥

त्वमेव नाथ सर्वस्व गुरूणां हि गुरुः प्रभो ॥
त्वमेव रामभक्तोसि वेद वेत्ता त्वमेवहि ॥२१॥

आप ही मेरे सर्वस्व हैं, आप ही मेरे गुरु हैं। सब गुरु वर्गों के गुरु ? हे प्रभो ? आप ही वेदों के तत्व के जानने वाले श्री राम भक्त हैं।२१॥

सत्वरं कुरु मे नाथ सत्वरं कुरु सत्वरं ॥
येनाहं ब्रह्मलोकाख्ये चरिते स्याम यौगिका ॥२२॥

हे नाथ ! आप अपनी प्रतिज्ञा को सत्य कीजिए; सत्य कीजिए; सत्य कीजिए । जिससे मैं श्री सीता-राम दिव्य धाम के चरित्र को सुनने वाली योग्य पात्र हो सकूँ ॥२२॥

प्रियाया दीन वचनं श्रुत्वा शम्भुः दयानिधिः ॥
साध्वि साध्वीति चाश्वास्य सुत्सवे बुद्धिमादधत् ॥२३॥

दया समुद्र श्री शंकर जी ने अपनी अति प्रिया पार्वती जी के दीन वचन सुन कर बहुत अच्छा; बहुत अच्छा कहा, इस प्रकार कह के अभिनन्दन (आश्वासन दिया) और श्री पार्वती जी के पंच-संस्कार उत्सव का विचार करने लगे ॥२३॥

मण्डपं रचयामास-शीघ्र माहूय सेवकान् ॥
दिव्यध्वज पताकाभि स्तोरणैश्चातिशोभनम् ॥२४॥

अपने सेवकों को शीघ्र बुला कर के श्री पार्वती जी के पंच संस्कार करने का मंडप दिव्य ध्वजा, पताका, तोरणादि शोभा संयुक्त बनवाया ॥२४॥

घण्टां श्च स्थापयामास पूरयामास मण्डलम् ॥
सप्तवर्णान्निकं तत्र कीर्तनं रामसीतयोः ॥२५

उस मंडप में दिव्य घण्टाओं की स्थापन किए (लगवाए) चारों तरफ से सुन्दर मंडल बनवाए भीतर में सात रंग के अन्नों से चौक (सर्वतोभद्र) पुरवाए । इस प्रकार उस मंडप में श्री सीताराम नाम अखन्ड कीर्तन कर वाए ॥२५॥

गाययामास गन्धर्वैरुच्चैः स्वर मनोहरैः ॥
नारीणांमंगलं गानं पणवादि समन्वितम् ॥२६॥

गंधर्वों के द्वारा उच्च स्वर सुन्दर (मनोहर) गान कर वाए । देव-स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं; पणवादि अनेक प्रकार के बाजा बजने लगे ॥२६॥

सादरा नृषिभिर्वेदान्पाठयामास पाठकैः ॥
एवं समाज सहितोहर्षनिर्भर मानसः ॥२७॥

ऋषि लोग आदर पूर्वक वेदध्वनि करने लगे । पाठक लोग अनेक प्रकार के पाठ करने लगे । इस प्रकार समाज सहित महान् हर्षित मन होकर ॥२७॥

आनेतुं रामचन्द्रस्य सीताया मूर्तियुग्मकम् ॥
नित्यंस्वस्यार्चितं शम्भु र्जगाममन्दिरं तदा ॥२८॥

श्री सीताराम जी की दिव्य जुगल मूर्तियों को लाने के लिए श्री शंकर जी अपने नित्य पूजा के मन्दिर में समाज सहित गए ॥४८॥

ततश्च स्वर्ण माणिक्यैः खचिते ध्वज तोरणैः ॥
शोभिते सत्पताकाभिः पुष्प माल्यैश्च मण्डिते ॥२९॥

तब सुन्दर स्वर्ण का और मणियों से खचित (जड़ित) ध्वजा तोरण पताकादि शोभाओं से और पुष्प मालाओं से शोभित ॥२९॥

विमाने स्थापयित्वाथ शंख दुन्दुभि नादिते ॥
सीता युक्तां राम मूर्ति मण्डपे प्रापयद्धरः ॥३०॥

इस प्रकार के विमान में शंख दुंदुभी आदि बाजाओं के महान् मांगलिक नाद पूर्वक श्री सीताराम जुगल मूर्तियों को बैठाकर मंडप में लाए । ३० ।

ततो मण्डप मध्येतु पद्ममेकं सुवर्णकम् ।
कमलं चतुरा वृत्तमधस्ता त्कर्णिकान्तकम् ॥३१॥

मंडप के भीतर एक सुवर्ण का कमल चार आवरण और मध्य में कर्णिका वाला है ॥३१॥

चतु ष्षष्टिक मेकं तु द्वात्रिंश द्दलकं परम् ॥
तत्तः षोडशदलं दलाष्टक चतुष्टकम् ॥३२॥

पहला आवरण चौंसठ दल का, दूसरा आवरण बत्तीस दल का, तीसरा आवरण सोलह दल का, और चौथा आवरण आठ दल का है ॥३२॥

ततस्तस्य कर्णिकायां स्वासने कोमलांशुके ॥
सीताया रामचन्द्रस्य मूर्ती प्रस्थापिते शुभे ॥३३॥

मध्य कर्णिका में कोमल सुन्दर गद्दी बिछी है उस गद्दी में श्री सीताराम जी की जुगल मूर्तियों को सुन्दर प्रकार से स्थापन किया। ३३॥

देदीप्यमाने भूषाभिः स्वर्ण साहित्यसत्कृते ॥
यथा तथ्यं सखीनां च मूर्तयः स्थापिता मुने ॥३४॥

भूषणों से प्रकाशमान स्वर्ण जरी के कपड़ों से शोभित सखियों की मूर्तियों कोभी स्थापित किया॥३४॥

मुख्याः सख्योऽष्ट जानक्याश्चारुशीलाच लक्ष्मणा ॥
तदाद्याश्चाष्टकावृत्तेे पुनः षोडषके वृत्ते ॥३५॥

याज्ञवल्कि जी बोले कि हे ! भरद्वाज ? जानकी जी की उन आठ सखियों में मुख्य श्री चारुशीला जी और श्री लक्ष्मणा जी हैं इनके सहित मुख्य अष्ट सखियों को कमल में अष्ट दल वाले आवरण में स्थापित किया है और। ३५॥

प्रेमा प्रवीणे मुख्ये द्वे तदाद्याः स्थापिता यथा ॥
ततोऽधस्ता त्तु द्वात्रिंश दले वृत्ते सुमालिनी ॥३६॥

प्रेमा प्रवीणा हैं मुख्य जिनमें ऐसी सोलह सखियों को कमल के सोलह दल वाले आवरण में यथा योग्य स्थानों पर स्थापित किया और । ३६।

मधुसाखापि द्वे मुख्ये तदाद्याः सर्वतोदल ॥
प्रेम्णा परमेश्वरेणैवमूर्तयः स्थापिताः पराः ॥॥३७

उसके बाद कमल के बत्तीस दल वाले आवरण में सुमालिनी और मधुसाखा हैं मुख्य जिनमें ऐसी बत्तीस यूथेश्वरी सखियों की मूर्तियों को परमेश्वर श्री शंकर जी ने प्रेम पूर्वक स्थापित किया ॥३७॥

चतुषष्टिदले वृत्ते सन्तोषा शान्तिकादयः ॥
भूषिता मूर्तयस्ता सां भावतः स्थापितास्तथा ॥३८॥

कमल के ६४ दल वाले आवरण में संतोषा और शान्तिका हैं मुख्य जिनमें ऐसी ६४ यूथेश्वरी सखियों की मूर्तियों को सुन्दर वस्त्र भूषणों के शृंगार युत भाव पूर्वक स्थापित किया ॥३८॥

चकार षोडसैः पूजां पार्वती प्रतिशिक्षिता ॥
कृत्वा परिक्रमं शम्भुः प्रेम्णासौ प्रियया सह ॥३९॥

अब इस प्रकार (चौंसठ), (बत्तीस), (सोलह), (आठ), मुख्य यूथेश्वरियों के सहित सर्वेश्वरी श्री चारुशीला जी और श्रीसीताराम जी की युगल मूर्तियों को षोडशोपचार पूजा विधानों की शिक्षा पार्वती जी को देकर श्री शंकर जी भी पत्नी सहित प्रेम विभोर होकर परिक्रमा करने लगे ॥३९॥

जानक्या रामचन्द्रस्य पुनः पादाभिवन्दनम् ॥
परिवार समेतस्य कृत्वा चाज्ञा मया चयत् ॥४०॥

फिर परिवार समेत श्री सीताराम जी को प्रणाम करके श्री पार्वती जी के पंच संस्कार करने की आज्ञा मांगी ॥४०॥

मण्डपाग्रे वितानं स्या तत्र वेदी परिस्कृता ॥
तत्रार्षिमुनि देवैश्च शम्भुः शक्त्या समागतः ॥४१॥

इस पूजी मण्डप के आगे आँगन में एक वेदी है उस पर वितान तना करके, चौक आदि पूर कर सजाया गया। वहाँ पर ऋषि मुनि देवता और श्री पार्वती जी के सहित श्री शंकर जी आकर सुन्दर आसनों पर विराजे ॥४१॥

स्वासने चोप विश्याथ स्वस्याग्रे सापि प्रेरिता ॥
तस्यां भाले विशाले च काश्मीरी तिलकेन च ॥४२॥

जिस आसन पर श्री शंकर जी बैठे उस आसन के आगेमें श्री पार्वती जी को भी बैठाकर काश्मीरी चन्दन से श्री पार्वती जी के भाल पर चन्दन (तिलक) कर दिया ॥४२॥

बिन्द्वर्ध चन्द्र संयुक्तां चन्द्रिकां मन्त्र तो ददौ ॥
शीतलौ च धनुर्वाणौ बाहुमूले तथा विधिम् ॥४३॥

तिलक में श्री अर्धचन्द्र और बिन्दु संयुक्त चन्द्रिका भी मंत्र पूर्वक लगाई और बाँह में शीतल धनुष और बाण की भी चन्दन के ही छाप से लगाए। ४३॥

तुलसी मालिका युग्मश्चैत त्कृत्वासदा शिवः ॥
ददौदे दक्षिणे कर्णे शंख दुन्दुभिभिर्महान् ॥४४॥

तुलसी की दोलर की माला को कन्ठ में पहिराए इस प्रकार बाहरी संस्कार सदाशिव जी ने पार्वती जी के दक्षिण कान में शंख दुन्दुभी नाद पूर्वक श्री युगल मन्त्र राज को दिए ॥४४॥

ध्वनौ याते मन्त्रयुग्मं सीता रामपडक्षरम् ॥
पंचविंशाक्षरश्चैव द्वाख्य संज्ञं ददौ प्रभुः ॥४५॥

ध्वनि के बीच में श्री सीताराम छः छः अक्षर के जुगल मंत्रराज तथा पचीस अक्षर के मंत्र द्वय को भी दिए ॥४५॥

एतत्कृत्वापुनरीशो होमस्थानं समागतः ॥
प्रियया समेत स्तत्रश्चाशने चोप विश्यवै ॥४६॥

इतना करके श्री शंकर जी पार्वती जी के सहित हवन कुण्ड के पास आकर आसन पर बैठ गए॥४६॥

अग्नौ तु हविषा हुत्वा ततो बाणं धनुष् तथा ॥
सीताया मुद्रिका दिव्या प्रेरिता सन्मुखं प्रिया ॥४७॥
शंख दुन्दुभि भेर्य्यादौ नादिते तेन शैल जा ॥
दक्षिणं भुज मूलंतु तप्तबाँणेन चाङ्कितम् ॥४८॥

अग्नि में हविष्य पदार्थों से हवन करके उस हवन की अग्नि में बाण और धनुष को तपाकर तथा श्री सीता जी की मुद्रिका को तपाकर शंख दुन्दुभी, भेरी आदि बाजाओं के अनेक संगीत नाद पूर्वक सन्मुख बैठी हुई पर्वत कन्या श्री पार्वती जी के दक्षिण बाँह (बाहु) मूल में पहले तप्त बाँण से छाप दिए ॥४७॥ ४८

तथातप्तेन धनुषा भुज मूलं हि वामकम् ॥
दक्षिणश्च प्रकोष्टस्तु सीताया मुद्रयांकितः ॥४९॥

फिर वाम भुज मूल में तप्त धनुष का छाप दिए फिर दक्षिण हाथ के प्रकोष्ट में श्री सीता जी के तप्त मुद्रिका की छाप दिए ॥४९॥

सीताया रामचन्द्रस्य चिन्हैर्दिव्यैः सुचिन्हिता ॥
मत्वा स्वस्या श्चभूयिष्टं भाग्यं तुष्टाव शंकरम् ॥५०॥

इस प्रकार श्री सीताराम जी के तप्त धनुष बाणादिक दिव्य चिन्हों से चिन्हित हुई श्री पार्वती जी अपने को महान भाग्यशालिनी, स्मरण कर अति प्रसन्नता से श्री शंकर जी की स्तुति किए ॥५०॥

एतत्काले महाशम्भु र्महाविष्णुश्च सत्सवम् ॥
श्रुत्वा प्रिया समेतौ ता वागतौ शङ्करालये ॥५१॥

उसी समय श्री महा शम्भू जी और श्री महाविष्णु जी अपनी पत्नियों के सहित उन शंकर जी के घर में द्वार पर आ पहुँचे ॥५१॥

तयोर्महात्मनोः शम्भु र्महात्मास्वस्य मन्दिरे ॥
श्रुत्वा च्यागमनं सर्वैः समाजैः सन्मुखं ययौ ॥५२॥

इन दोनों केसपत्नीक आगमन को सुनकर के महात्मा श्री शंकर जी अपने समाज के सहित भीतर मन्दिर से उठकर स्वागत के लिए दूर तक सन्मुख आए। ५२।

ततो महत्प्रभावं श्री रामभक्त्यान्वितंहरम् ॥
महाहरिहरौ दृष्ट्वा वाहना दवतेरतुः ॥५३॥

इस प्रकार महान प्रभावशाली श्री रामभक्ति से भूषित श्री शंकर जी को स्वागत के लिए आगे आए हुए देखकर श्री महाविष्णु और श्री महाशिव अपनी २ सवारियों (वाहनों) से नीचे उतर गए ॥५३॥

हरोपिसविधिं प्राप्य हरहर्योर्महात्मनोः ॥
ननाम दण्डवद्भूमौ ताभ्या मुत्थाय श्लेषित. ॥५४॥

श्री शंकर जी भी स्वागत विधि पूर्वक उन दोनों महात्माओं को पृथ्वी में साष्टांग दण्डवत् पड़कर प्रणाम किए। उन दोनों ने भी श्री शंकर जी को उठाकर कण्ठ से लगाया ॥५४॥

परस्परं मुदाश्लिष्य चानीता मुत्सवे गृहे ॥
मुक्ता काञ्चनमाणिक्यैर्मण्डिते स्मृद्धि भासिते ५५॥

इस प्रकार परस्पर आनन्द पूर्वक आ क-आश्लेषण गलबाहीं-मिलन) के बाद श्री शंकर जी अपने घर जो मुक्ता, स्वर्ण, माणिक्यों से अत्यन्त ऐश्वर्य पूर्वक प्रकाशमान है, उसमें लिवा लाए ॥५५॥

तावेतौ शक्ति संयुक्तौस्वर्ण सिंहासने शुभे ॥
प्रस्थाप्य पार्वती नाथःपादौ प्रक्षाल्य चार्घ्यकम् । ५६॥

और उन दोनों को पत्नियों सहित सुवर्ण सिंहासन पर बैठाकर श्री पार्वती जी के सहित श्री शंकर जी ने पाद्य, अर्घ, आचमन ॥५६॥

ददावाचमनम्पश्चा न्मधुपर्कं ददौप्रभुः ॥
पुन राचमनं ताभ्यां ततः स्नान मकारि वै ॥५७॥

मधुपर्कादि विधियों से फिर (पुनः) आचमन स्नान कराया ॥५७॥

धौत प्रवार के दिव्ये यज्ञ सूत्रे सुवर्ण के ॥
शम्भुना स्वयमेवाभ्यां दत्त सिंहासने पुन: ॥५८॥

धौत वस्त्र, सुवर्ण का यज्ञ सूत्र (यज्ञोपवीत) श्री शंकर जी ने स्वर्ण सिंहासन पर बैठाकर उन दोनों को स्वयं पहिराया ॥५८॥

प्रस्थाप्य गन्ध पुष्पं च धूप दीपं कृतं यथा ॥
चतुर्धा षड्रसैर्दिव्य मकारि भोजनं ततः ॥५९॥

फिर गंध, पुष्प धूप, दीपादि दिया और दिव्य षट रस भोजन करवाया ॥५९॥

पार्वत्यापि तयोर्देव्यौपूजिते भोजनादिभि: ॥
यक्षकर्दम मालाभि र्ताम्बूलैश्च सुगन्धिभिः ॥६०॥

इसी विधि से श्री पार्वती जी ने भी उन दोनों की पत्नियों को कपूर, अगरू, कस्तूरी, कंकोल आदि मिश्रित चन्दन अर्पण करके सुगन्धित पान चबाया। ६०॥

पुनश्च शक्ति सयुक्ता वेतौपरमेश्वरौ ॥
नीरा जितौ शंकरेण दिव्य सिंहासनस्थितौ ॥६१॥

पुनः अपनी शक्तियों सहित उन दोनों को श्री शंकर जी ने और एक दिव्य सिंहासन पर बैठाकर आरती किया ॥६१॥

ऋषयो मुनि देवाश्च गन्धर्व किनरोरगाः ॥
नियन्त्रिता शंकरेण तुष्टुवुस्ते परौ प्रभू ॥६२॥

ऋषि मुनि देवता गन्धर्व किन्नर और नाग आदि जो भी श्री शंकर जी से निमंत्रित होकर आए थे उन सबने भी पर प्रभु महा विष्णु जी और महा शंकर जी की स्तुति की। ६२॥

एतस्यां च शभायां वै महाविष्णु स्तु शंकरम् ॥
उवा च परयाप्रीत्या किमर्थ मागता इमे ॥६३॥

तब महा विष्णु जी ने उस सभा में श्री शंकर जी से प्रेम पूर्वक प्रश्न किया कि ये सब लोग किस कारण से आए हुए हैं ॥६३॥

किंत्वत्तो वरदेशाच्च वरंयाचितु मागताः ॥
एवं प्रियं वदन्तंतं प्रत्यूवाच महेश्वरः ॥६४॥

क्या महाबरदानी जो आप हैं सो आप से बरदान प्राप्त करने को तो नहीं आए हैं ? इस प्रकार प्रेम पूर्वक प्रश्न करते हुए महा विष्णु से श्री शंकर जी बोले ॥६४॥

शिवउवाच

सीतारामांक संस्कारैः संस्कृता पार्वती मया ॥
निमन्त्रिता स्ततः सर्वे स्वागताः मे गृहे प्रभो ॥६५॥

मैंने श्री पार्वती जी को श्रीसीताराम पंच संस्कारों से संस्कृत किया। उसी यज्ञ में निमंत्रित होकर ये सब देवता लोग मेरे घर में आए हुए हैं ॥६५॥

महाविष्णु रुवाचे

धन्योसि पार्वती धन्या सीताराम समाश्रिता ॥
सर्वेषां परदेवौ श्री सीतारामौ परात्परौ ॥६६॥

तब श्री महाबिष्णु जी बोले—आहा ! आप धन्य हैं और यह पार्वती धन्य हैं जो सब देवताओंमें परात्पर देवता श्री सीताराम जी के समाश्रित हो गयी हैं ॥६६

संस्कार वेदिका कुत्र करोमि दर्शनं शुभम् ॥
एवमुक्त्वा महाविष्णु र्महा शम्भुः सनातनः ॥६७॥

इनके शुभ संस्कार की वेदी कहां पर है, हम दर्शन करेंगे ऐसा कह कर सनातन महाबिष्णु और महा शम्भू ॥६७।

शंकरेण समं गत्वा दृष्ट्वा मण्डप मद्भुतं ॥
ययौ प्रसन्नतां मेतौ नेमतू रामसीतयोः ॥६८॥

श्री शंकर जी के साथ जाकर अद्भुत मण्डप का दर्शन किया। श्री सीताराम जी के जुगल मूर्तियों का दर्शन कर प्रसन्न हो प्रणाम किए। ६८॥

अर्च्चां शिवा र्च्चितां दिव्यैरलंकारै रलंकृताम् ॥
स्तुतिं चकार स्तोत्रेण महाविष्णु र्महाशिवः ॥६९॥

और श्री शिव जी व पार्वती जी से पूजित दिव्य अलंकारों से अलंकृत श्री सीताराम जी की महा विष्णु और महा शिव जी ने स्तोत्रों से स्तुति किया ॥६९॥

महा बिष्णु रुवाच

जयति जनकपुत्री रामवामांक संस्था जयति युगविधात्री विश्वधात्री कराब्जा ॥
कनक सदन शोभालोकचित्रां लिखन्तीं रघुवर वरभामा भाविनी मंगलंमे ॥७०॥

श्री महा विष्णु जी बोले—हे जनक पुत्री श्री राम जी के वाम अंग में बैठीं हुईं आपकी जय हो। हे विश्व के विधान करके, युगों का विधान करने वाली ? कर कमल में नील कमल लेकर श्री कनकभवन के खण्ड खण्डों में दीवालों पर सम्पूर्ण लोकों के चित्रों को लिखकर अपने प्रियतम को दिखातीं हुईं हे भामिनी ! आपकी जय हो मेरे मंगलों की आप भावना करें ॥७०॥

कनकभवनखण्डे पादसंचारणाद्वै सितमणिगणभूमिः पद्मरागास्ति यस्याः ॥
जयतु जनकजाया चिन्मयी ब्रह्मरूपा रघुवर मुद दात्री सद्गुणानां धरत्री ॥७१॥

श्री कनक भवन के खण्ड खण्डों से विचरण करने से अपने चरणों की लालिमा द्वारा सफेद मणियों की भूमि को पद्मराग का मणि भूमि के समान बना देती हैं ऐसी चिन्मयी ब्रह्मरूपा, सदगुणों की भूमि स्वरूपा श्री रघुनाथ जी को आनन्द देने वाली जनकजाया जी की जय हो। ७१॥

मुकुरगृह रमन्त्या श्चन्द्र कोटिश्चभित्तौ सतत मुदय मस्या आस्य नेवा करो द्वै ॥
कलित कमल श्रेणी तत्र तत्रैव जाता कर कमल विभावै र्निदिशन्त्याश्च चित्रम् ॥७२॥

करोड़ो चन्द्रमाओं के समान प्रकाशमान भित्ति (दीवाल वाले ऐसे दर्पणों (शीशों) का महल में सतत रमण करतीं हुईं श्री किशोरी जी के मुख कमल की कमल पंक्ति उन दीवालों पर जहाँ २ आप जाती हैं तहाँ २ मुख प्रतिविम्व कमल-पंक्ति प्रकट होती हैं। इस प्रकार अपने कर कमल में कमल लेकर हाव भाव पूर्वक प्रियतम जू को दीवालों के चित्रों को दिखातीं हैं ॥७२॥

जयति जनक पुत्र्याः पादपद्म प्रभावो यदनुगतनखानां पंक्तिश्चन्द्रपंक्तिः ॥
विलसति खलु लोके भिन्न ब्रह्माण्डकेरवे तदभिगत कलैका शंकरस्यापिभाले ॥७३॥

श्री जनक पुत्री जी के चरण कमल प्रभाव की जय हो। जिन चरण कमल के नखों की पंक्ति चन्द्र पंक्ति की तरह शोभित हैं। जो चरण के नख भिन्न २ ब्रह्माण्डों के आकाश में चन्द्रमा होकर सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करते हैं उन्हीं चरण नख की एक कला को श्री शंकर जी अपने मस्तक में रक्खे हुए हैं ॥७३॥

जयति जनकपुत्र्याः पाद संचारण श्री श्चकितमपि विधत्ते याम वीतेन्द्रनागाः ॥
निज हृदि तनु भावं राजहंशा विदध्युः रघुवररस मूर्ति र्वीक्ष मोदाब्धिमग्न ॥७४॥

श्री जनक तनया जी के चरण-संचार शोभा की जय हो ? जिस चरण संचार को देखकर इन्द्र का ऐरावत हाथी भी आश्चर्य चकित हो जाता है, और राज हंस भी अपने २ हृदयों में अपनी २ चालों के भावों का ध्यान करते हैं। रस मूर्ति श्री रघुनाथ जी तो इस चरण-संचार-शोभा को देखकर आनन्द मग्न हो जाते हैं ॥७४॥

जयति जनक जाया नेत्र युग्मं विशालं रघुवर रस वासं सौकुमार्य्यादिभासम् ॥
प्रणत जन दयार्द्रं कोप भावा स्पृशं वै मुकुलित मिव दोषा न्वीक्षितुं सेवकानाम् ॥७५॥

श्री जनक जाया जू के जुगल नेत्रों की विशालता की जय हो। जो नेत्र श्री रघुनाथ जू के सुख रस के निवास-स्थान हैं और अत्यन्त सुकुमारता को प्रकाशित करते हैं प्रणाम करने वाले जनों पर दया से द्रवित होते हैं, क्रोध भाव का स्पर्श भी जिन नेत्रों में नहीं होता; सेवकों के दोषों को देखने के लिए तो मानो वे दोनों नेत्र बन्द ही सरीखे रहते हैं ॥७५॥

जयति जनक पुत्र्या मुद्रिका कंकणाभ्यां विभूषित करयुग्मं कञ्ज मेवाप्तनालम् ॥
निज कृत दुरितेभ्य स्त्राशमेवाप्तकेषु स्वभय वरद मुद्रं स्वाशिषा वत्सुमुद्रम् ॥७६॥

मुद्रिका कंकणों से विभूषित श्री जनकजा जू के जुगल कर कमलों की जय हो। जो कर कमल नाल संयुक्त कमल की तरह शोभित हैं और जो अपने किए पापों से भयभीत होकर आपकी शरण आए हैं उनके लिए अभय मुद्रा से आशीर्वाद देते हैं और वरदान देते हैं ॥७६॥

जयति जनकपुत्र्या रागविद्या समग्रं रघुपतिमति कर्षं मोदवर्षं विचित्रम् ॥
अमितगति सुतालं मूर्छना ग्रम जालं स्वार मुनि मित युक्तं ग्रामयुक्तं त्रिभिर्वै ॥७७॥

श्री जनक पुत्री जी के रागविद्या की सम्यक प्रकार जय हो। जो रागविद्या श्री रघुनाथ जी की मति को खींचकर विचित्र आनन्द के बर्षा में भिजा देती है। जिस रागविद्या में अमित सुन्दर ताल मूर्छना ग्राम गतियों का जाल बना है और जो रागविद्या सातों स्वर और तीन ग्रामों से युक्त है ॥७७॥

जयति जनकजाया भारती भव्य रूपा वसु रस परिपूर्णा शब्द शद्मा मृतासा ॥
ऋजुरचित पदानां संहिता संस्कृता या रघुपति मति दीक्षा लंकृते युग्म शिक्षा ॥७८॥

श्री जनकात्मजा की कल्याण स्वरूपा वाणी की जय हो। जिस वाणी में शृंगार वीर करुणादि आठों रस परिपूर्ण हैं और अमृत मयी शब्दों के साहित्य का तो घर ही है। जो वाणी सरलता पूर्वक रचना किए हुए पदों में संहितादि सम्पूर्ण शास्त्रों के सार से भरी हुई है और श्री रघुनाथ जी की मति को सुन्दर दीक्षा से अलंकृत करके विलास और मर्यादा दोनों की शिक्षा देती है ॥७८॥

जयति जनकपुत्र्या पारमैश्वर्यभावो सुरासुरमुनि सिद्धै र्याश्रया स्तूय मानः ॥
अमित विभवलक्ष्मी लोक ब्रह्माण्ड भिन्नाः प्रभशति खलु यस्या अंशतस्तां निषेवे ॥७९॥

श्री जनक पुत्री जी के परम ऐश्वर्य मयी भाव की जय हो। जिसकी देवता, दानव मुनि सिद्ध सब लोग अपने मनोरथ पूर्ति के लिए स्तुति करते हैं। और जिसमें अनन्त ब्रह्माण्डों की ऐश्वर्य लक्ष्मी अलग अलग ब्रह्माण्डों में लोक लक्ष्मी होकर के जिनके अंश से अलग २ प्रभावित होकर सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करती हैं ॥७९॥

जग दुदय क रैका कालरूपा द्वितीया पुनरपि गत मध्ये पालने यातु दक्षा ॥
तव पद नख दीप्त्या शक्ति रेका समर्था प्रभवति खलु सीते तिसृणां भूतभावा ॥८०॥

कैसे होती है उसको आगे बताते हैं। एक रूप से वह ऐश्वर्य-लक्ष्मी जगत को पैदा करती है दूसरे रूप से काल रूप होकर प्रलय करती है; तीसरे रूप से बीच में होकर सम्पूर्ण लोकों का पालन करने में बड़ी कुशला रहती है। हे सीते! आपके चरण-नख-प्रकाश की शक्ति से समर्थ हुईं ये तीनों शक्तियाँ प्राणियों की भावनाओं को पूर्ण करने में पूर्ण प्रभाव वाली हैं ॥८०॥

तव पति पद स्वङ्का दूब्रह्म विष्णु हरोयमनुभव गत रूपास्तेपि ताभिः समेता ॥
रचयति पुनरेको पालये दूभक्षयेद्वै निवसति निज लोके यावदीक्ष्यास्ति ते वै ॥८१॥

हे सीते! आपके पति के चरण कमल के चिन्ह का स्मरण करने से ये ब्रह्मा विष्णु महेश अनुभव के स्वरूप ही हो गए। आपकी अंशभूता उमा रमा ब्रह्माणियों के सहित ये तीनों में से एक तो सृष्टि को उत्पन्न करते हैं और एक पालन करते हैं और एक भक्षण करते हैं। जब तक आपकी इच्छा रहती है तब तक ये लोग अपने २ लोकों में रहते हैं ॥८१॥

त्वमसिपरतमेशी नैव त्वत्तः परास्या त्तवपति रघुनाथो सौ समस्ता त्परात्मा ॥
ननुभवति तुभेदो लिङ्ग व्याख्यान शास्त्रे भवति न खलु तत्वे राम सीता स्वरूपे ॥८२॥

हे सीते ! आप परात्पर ईश्वरी हैं आप से परे और कोई ईश्वरी नहीं है। इसी प्रकार आपके पति ये श्री रघुनाथ जी भी समस्त ईश्वरों में परात्पर ईश्वर हैं। आप दोनों का आपस में शास्त्रसम्मत से तत्वतः कोई भेद नहीं है केवल सीताराम स्वरूप में स्त्री पुरुषत्व का कहने मात्र भेद है। ८२।

तवगुणगण मूर्तिः स्यामहं रामचन्द्र प्रथम गुरू एवं मे श्री महाशम्भु रास्ते ॥
उररि कुरू ममेदं स्तोत्रकं रामसीते कृतमपि गुरूणामे साहकं सम्वरोक्तम् ॥८३॥

हे रामचन्द्र ! आपके समस्त-गुण-गण स्वरूप-मूर्ति (भाग्य गुण) मैं महा विष्णु हूँ और ये महा-शम्भू (जो आपके तन तेज स्वरूप हैं) मेरे प्रथम गुरू हैं। (राघवस्य गुणो दिव्यो महा विष्णुस्स्वरूप-वान्। वासुदेवो घनी भूतो तनुते जो महाशिवः ॥ वसिष्ठ संहिता) हे राम सीते ! मेरे द्वारा दिया हुआ यह स्तोत्र, पहले मेरे गुरु श्री महाशम्भू ने भी सुन्दर स्वरों से भाव पूर्वक किया था वही आज आप अंगीकार करें ।।८३।।

याज्ञवल्क्य उवाच

एवं कृत्वा स्तवं देवो महाविष्णु र्महाहरः ॥
समूवाचशिवं देवं प्रशंसा पूर्वया गिरा । ८४॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि हे भरद्वाज ! इस प्रकार श्री महाविष्णु और महाशम्भू जी ने दोनों परस्पर देवता श्रीसीताराम जी की स्तुति किया उसके बाद सब देवताओं के देवता श्री शंकर जी से प्रशंसा पूर्वक वाणी से बोले ।।८४।।

महाशम्भु रुवाच

नत्वं चैकदशो रुद्रो मया ज्ञातं हि तत्वतः ॥
रामचन्द्रस्य सीतायाः प्रेमभक्ति स्वरूप कः ॥८५॥

श्री महा शम्भू जी ने कहा कि हे शंकर ? मैंने तत्वतः यह जान लिया है कि तुम केवल एकादश रुद्र ही नहीं हो प्रत्युत श्री रामचन्द्र जी व श्री सीता जी के प्रेम भक्ति स्वरूप ही हो ।८५।।

पराभक्ति स्त्वहं देव महाविष्णुस्तु मेभृणु ॥
सीताया रामचन्द्रस्य गुणा ये निर्गुणात्मकाः ॥८६॥

और मैं भी श्री सीताराम जी की पराभक्ति का स्वरूप हूँ और इन श्री महाविष्णु जी का स्वरूप भी मेरे से सुनिए-श्री सीताराम जी के जो अनन्त गुण निर्गुणात्मक हैं उनका सामूहिक स्वरूप सौभाग्यगुण ये श्री महाविष्णु जी हैं ॥८६॥

ऐश्वर्य्य मण्डल स्थाश्च रूपाज्जाता वयं सखे ॥
ताभ्यां प्रस्थापिता यत्र लोके तत्र वशामहे ॥८७॥

हे सखे ! हम लोग श्री सीताराम जी के ऐश्वर्य मण्डल के अन्दर रहने वाले गुण रूपमान होकर के प्रकट हुए हैं। उन्हीं श्री सीताराम जी के विधानानुसार जहां २ वे सब लोगों को स्थापित करते हैं तहाँ तहाँ हम सब बास करते हैं। ८७॥

तस्यै वं वचनं श्रुत्वा स्वस्वरूपे समाविसत् ॥
मुहूर्तं निर्वचनोस्ति प्रेमवारि प्रवाहितः ॥८८॥

इस प्रकार श्री महाशम्भू जी ने जब कहा तो शंकर जी सुनकर स्व-स्वरूप की समाधि में प्रवेश कर गए। एक मुहूर्त मौन होकर प्रेम की अश्रु धारा बहाने लगे। ८८॥

तस्यां शभायां ये सर्वे प्रभावं जानकी प्रभोः ॥
श्रुत्वा श्चर्यं गतास्तेपि बभूवु र्भाविपूर्वकाः ॥८९॥

इस प्रकार श्री शम्भू श्री महाविष्णु और श्री शंकर जी की बातों को उस सभा में जिस जिसने सुना वे सब श्री जानकी प्रभु के ऐश्वर्य प्रभाव में भाव पूर्वक आश्चर्य चकित हो गए ॥८९॥

मूहूर्तेन शंकरेऽपि सावधान त्व मायथौ ॥
ततो नत्वा महाशम्भु मुवाच प्रेम निर्भरः ॥९०॥

एक मुहूर्त के बाद श्री शंकर जी भी सावधान हो गए और श्री महाशम्भू जी को प्रणाम करके प्रेम गद्गद होकर बोले ॥९०।

देव त्वत्कृपयेदानीं दृष्टुं तत्कथया म्यहम् ॥
इदं रूपं तु विस्मृत्वा स्वप्न मेवात्र दर्शितम् ॥९१॥

शिवउवाच

हेमागारे त्वयोध्यायाः सत्यचैश्वर्य्य भाश्वरे ॥
सीता तथा रामचन्द्रो रत्न पीठे विशालके ॥९२॥

हे देव ! आप की कृपा से इस समय जो कुछ स्वप्न सदृश मैंने देखा है उसको कहता हूँ, आप सुनिए मैंने इस शरीर को भूलकर समाधी में यह स्वप्न देखा है कि श्री अयोध्या जी के अन्दर महान ऐश्वर्य और प्रकाशमान स्वर्ण के महल के अन्दर विशाल रत्न सिंहासन में श्री सीताराम जी को बैठे देखा है ॥९१॥९२॥

सखीनां मण्डले साक्षा दृद्रष्टौ द्वौ तेजसा वृतौ ॥
तत्रा हं चारूशीलाच द्वयोः सेवा परायणा ॥९३॥

सखियों के मण्डल में महान तेज से आवृत हुए दोनों सरकारों की सेवा परायण प्रधानभूता श्री चारुशीला जी के रूप में मैंन अपने को देखा। ९३।

किशोर वयसापूर्णा दिव्यरूपा विचक्षणा ॥
तयोः सख्योऽप्यनन्ताश्च मन्निर्देशा त्प्रवर्तकाः ॥९४॥

वे श्री चारुशीला जी किशोरावस्था सम्पन्ना दिव्य स्वरूपा अति सूक्ष्म बुद्धि वाली हैं। और श्री जुगल सरकार की सेवा में अनन्त सखियों की प्रवर्तिका (प्रेरणा करने वाली) श्री चारुशीला जी के रूप में मैं ही था ऐसा मैं ने अपने को देखा है ॥९४।

काश्चि च्छत्रधराः काश्चि द्राजन्ते कर चामराः ॥
काश्चि त्कन्दुक हस्ताश्च काश्चि त्ताम्बूल सम्पुटम् ॥९५॥

करेधृत्वा स्थिताः काश्चि त्काञ्चनं जलपात्रकम् ॥
काश्चि ज्जल पान पात्रं काश्चिद्ददाति वीठि काम् ॥६६॥

उस सभा में श्री सीताराम जी को कोई सखी छत्र धारण की हुई थी कोई सखी सुन्दर चवर लेकर शोभित हो रही थी कोई हाथ में गेंद लेकर कोई पान डिब्बा लेकर कोई स्वर्ण का जलपात्र हाथ में लेकर कोई जलपान कुछ मिठाई लेकर खड़ी थी। कोई पान की बीड़ा पवा रही थी ॥६५॥६६॥

काश्चित्करे बांण युग्मं काश्चिच्चाप मनोहरम् ॥
काश्चिद्वेत्रासिपुत्रीं च करेधृत्वा परिस्थिताः ॥६७॥

कोई हाथ में दो बाण लिए हुए कोई मनोहर धनुष को लिए हुए कोई बेंत लिए हुए कोई तलवार लिये हुए कोई कटारी लिए हुए चारों तरफ शोभित थीं ॥६७॥

पुष्पमाल्यानि काश्चिच्च रत्नमाल्यानि कापिच ॥
मिष्टं चोपासनं काश्चि त्सम्पुटे निहितं सखी ॥६८॥

कोई फूल माला लिए कोई रत्न माला लिए हुए कोई कलेऊ के लिए डिब्बे में मिठाई लिए हुए खड़ी हैं ॥६८॥

गृही त्वा तिष्ठमानाग्रे काश्चिद्वेत्र धरावराः ॥
स्वर्ण दण्डधराः काश्चि त्पुष्प दण्ड धरा अपि ॥६९॥

कोई रत्न की छड़ी लिए हुए बगल में खड़ी हुई है कोई स्वर्ण कोई पुष्प दण्ड लिए हुए भी खड़ी हैं ॥६९॥

एवं दृष्टं मया नाथ स्वरूपं स्वस्य तत्र च ॥
तदहंनैव जानामि त्वं जानासिति मेपरः ॥१००॥

हे नाथ ! इस प्रकार के उन श्री सीताराम जी के समाज में मैंने अपने स्वरूप को प्रधान रूप में देखा। उस बात को मैं नहीं समझ रहा हूँ आप मेरे से परे हैं अतः आप जानते हैं ॥१००॥

महाशम्भू रुवाच

कथितं तत्तु ते रूपं माधुर्यमण्डलेस्थकम् ॥
पुन रेवं वर्तते य न्मण्डलैश्वर्य भावकम् ॥१०१

श्री महाशम्भू जी बोले कि जिस रूप को आपने कहा यह आपका माधुर्य मण्डल में स्थित रूप है और जिस रूप में आप वर्तमान हैं यह रूप ऐश्वर्य मण्डल का भावुक है ॥१०१॥

सार्वं कर्तविजानासि समाधिस्थोहि निश्चितम् ॥
एवमुक्त्वा प्रसंश्येनं गमनाय प्रचक्रमे ॥१०२।

आप हमेशा समाधिस्थित रहने से इस सार्वकल निश्चित रूप को जानते ही हैं। इतना कहकर श्री शंकर जी की प्रसंशा करके चलने की तैयारी किए ॥१०२।

पुनः पुनः प्रण म्या सौ वंद्यौ श्रीराम सीतयोः ॥
महाशम्भु महाविष्णु मेण्डपा द्वहि राययौ ॥१०३॥

उस मण्डप में श्री सीताराम जी को परिवार सहित जुगल मूर्तियों को बार २ प्रणाम करके श्री महाशम्भू और श्री महाविष्णु मण्डप से बाहर आए ॥१०३।

ततं श्चोत्थाय चोत्थाय प्रणेमु श्च शभासदाः ॥
मुनयो देव गन्धर्वाः गच्छन्तौ द्वौ महाविभू ॥१०४

श्री शंकर जी की सभा के जितने भी देव गन्धर्व मुनि लोग रहे सबके सब जाते हुए उन दोनों हमी विभुओं को बार २ उठ उठ करके प्रणाम किए ॥१०४॥

शक्त्या युक्तौ ननामासौ शक्त्यायुक्तोपि शंकरः ॥
शंकरो शंकरं पश्चा च्छक्त्या युक्तौपि ताविमौ ॥१०५॥

श्री पार्वती जी के सहित श्री शंकर जी ने शक्तियों के सहित उन दोनों महा पुरुषों को प्रणाम किया और उन्होंने भी शक्तियों सहित श्री शिव पार्वती जी को प्रणाम किया इस प्रकार शक्ति सहित महाशम्भु जी आदि के जाने पर श्री पार्वती सहित श्री शंकर जी भी उन दोनों के पीछे २ कुछ दूर तक गए ॥१०५॥

यदन्तौ नभमार्गं तु यंयतुः पार्षदै र्वृतौ ॥
ततोदेवाश्च मुनय स्तुष्टुवुः पार्वतीपतिम् ॥१०६॥

इस प्रकार उन महापुरुषों के आकाश मार्ग से जाने पर पार्षदों से घिरे हुए श्री शंकर पार्वती जी को देवता मुनि गन्धर्वों ने स्तुति किया ॥१०६॥

देवामुनय ऊचुः

सनातनोसि देवेश ननाशो प्रलयेपिते ॥
नजानन्ति प्रभावंते यथार्थं मुनि देवताः ॥१०७॥

देवता मुनि लोग बोले—हे देवेश (देवताओं के ईश्वर) आप सनातन पुरुष हैं; प्रलय में भी आपका नाश नहीं होता। आपके यथार्थ प्रभाव को मुनि देवता कोई नहीं जानते हैं ॥१०७॥

किञ्चित् ज्ञातं शभायांय महाविष्णु प्रभाषितम् ॥
वयं ते दाश भूतास्म कृपया चागता इह ॥१०८॥

इस सभा में श्री महाविष्णु के कहने पर थोड़ा सा आप का ज्ञान हम लोगों को हुआ। हम सब आपके दासभूत् हैं। हम आप की कृपासे इस समय यहाँ आ पहुँचे। हमारा महान् भाग्य है ॥१०८॥

कुरुष्वा नुग्रहं देव रामचन्द्रस्य साकथा ॥
जानकी सहितस्यासौ कथ्यतां कुत्रराजते ॥१०९॥

हे देव! अब आप हम लोगों पर अनुग्रह करके वह कथा कहिए जिस कथा में श्री रामचन्द्र जी और श्री जानकी जी का निवास इस समय कहाँ और कैसे है ॥१०९॥

रावणं चाह वेहत्वाऽयोध्यायां बहुवार्षिकं ॥
राज्यं कृत्वापुनः कुत्र गच्छे चासौ प्रजासमम् ॥११०॥

पहले एक बार अयोध्या जी में अवतार लेकर रावण को मारा फिर बहुत काल तक राज्य किए उसके बाद अपनी प्रजा संजुक्त किधर को गये हैं? ॥११०॥

इति सर्वे न जानन्ति तत्प्रभावं समग्रतः ॥
सीतानाथस्ययत् किञ्चित् शभायां त्वन्मुखा च्छ्रुतम् ॥१११॥

ऋषयो मुनयो देवा गन्धर्वाप्सर सस्तथा ॥
केपाश्चि त्कोपि कुत्रापि रामं जानाति धन्य सः ॥११२॥

श्री सीताराम जी के जिस प्रभाव को इस सभा में आपके मुख से जो कुछ सुना है उस प्रभाव को सम्यक् प्रकार से सब कोई नहीं जानते हैं। ऋषि, मुनि, देवता, गन्धर्व अप्सरा और कोई भी हो जहाँ भी हो जो श्री रामजी को जानते हैं वे धन्य हैं ॥११२॥

सर्वे रामंहि जानन्ति नजानन्ति तथापिच ॥
शास्त्र वाक्यै र्वृतो रामो यथार्थे भ्रम कारकैः ॥११३॥

सब कोई श्री राम जी को जानते भी हैं और नहीं भी जानते हैं क्योंकि श्री राम जी यद्यपि शास्त्रों के वाक्यों से आवृत भी हैं तौ भी शास्त्र के शब्द यथार्थ अर्थ में भ्रम पैदा कर देते हैं ॥११३॥

किञ्चि त्वत्कृपया नाथा थवाते दर्शनस्य च ।'
प्रभावे स्य ज्ञातु मिच्छा स्माकं जाता रघूत्तमे ॥११४॥

हे नाथ ! हम लोगों को आपकी कृपा से अथवा दर्शन से श्री राम जी के प्रभाव को जानने की इच्छा उत्पन्न हुई है ॥११४॥

उदारोसि कृपालश्च सर्वज्ञोसि सनातन ॥
यथार्थं रामतत्वस्य ज्ञाता नैव च त्वां विना ॥११५॥

आप उदार हैं; कृपालु भी हैं; सर्वज्ञ भी हैं। हे सनातनस्वरूप श्री शंकर जी ! आपके बिना श्री राम तत्व का यथार्थ स्वरूप जानने वाला और कोई नहीं है ॥११५॥

त्वमेव सर्वलोकानां गुरुः पार्मार्थिकः स्वयं ॥
यतः काश्यां मर्ण शीले रामनामो पदिश्यसि ।११६॥

आप ही सम्पूर्ण लोकों के पारमार्थिक यथार्थ गुरु स्वयं हैं जो आप काशी में मरने वाले को श्री राम नाम उपदेश देकर मोक्ष देते हैं ॥११६॥

यावद्दा शरथे स्तत्वं न जानन्ति यथार्थकम् ॥
तावत्सर्वे मृत्युशीला देवा देवा नरा अपि ॥११७॥

जीव-जब तक चक्रवर्ति कुमार श्री राम जी को यथार्थ रूप से नहीं जान लेता है तब तक चाहे वह देवता हो चाहे दैत्य दानव राक्षस हो चाहे मनुष्य हो वह सब मरण धर्मा हैं ॥११७॥

कृपां कुरू महादेव वयं ते शरणागताः ॥
संतः सर्वे कृपावन्तस्त्वंतु तेषां शिरोमणिः ॥११८॥

हे महादेव ! हम लोगों पर कृपा कीजिए। हम सब आपके शरणागत हैं। सन्त कृपालु होते हैं आप उन संतों में शिरोमणि हैं ॥११८॥

याग्य वल्क्य उवाच

इति विज्ञापनं श्रुत्वा तेषां साधु शिरोमणिः ॥
किमीच्छितंहि भवतां पृष्टा स्ते शम्भुना तदा ॥११९।

श्री याज्ञवल्कि जी बोले—हे मुने ! उस समय उन सबकी इस प्रकार प्रार्थना सुनकर साधु शिरोमणि श्री शंकर जी ने इन सब लोगों से पूछा कि तुम लोगों की क्या इच्छा है ॥११९॥

देवा मुनय श्चोचुः

आर्योसि रामतत्वस्य शिष्यत्वं याच या महे ॥

तत्वेच्छूणांतु रामस्य त्वंहि दाता दयानिधे ॥१२०॥

देवता मुनि बोले—हे दयानिधे ! आप श्री राम तत्व के ज्ञाताओं में सर्व श्रेष्ट हैं। श्री राम तत्व के चाहने वालों को श्री राम तत्व आपही देते हैं इसलिए हम लोग आप के शिष्यत्व की याञ्चा करते हैं ॥१२०

शिव उवाच

श्रूयतां जानकीशस्य तत्वज्ञाः सन्ति मा दृशाः ॥

प्रथमं पर वैकुण्ठे विरजायाः परे तटे ॥१२१

श्री शंकर जी बोले—हे देवता मुनियो ! सुनिए। जानकी पति के तत्व को जानने वाले मेरे सरीखे बिरजा के पर तट पर: परात्पर बैकुन्ठ में निवास करने वाले ॥१२१॥

परोनारायणो देवोऽवतारी परकारणं ॥

यथार्थं सोविजानाति तत्वं राघव सीतयोः ॥१२२॥

जो परात्पर नारायण हैं जो सब अवतार के ही पर कारण हैं वे ही पर देवता श्री राघव सीता जी के यथार्थ तत्व को जानते हैं ॥१२२॥

परालक्ष्मी प्रिया तस्य साविजानाति तेन वै ॥

आदौ श्री राममन्त्र न्तु तस्मै श्री जानकीददौ ॥१२३॥

उन्हीं के द्वारा उनकी प्रिया श्री परा लक्ष्मी जी भी जानती हैं। उन्हीं पर नारायण को सबसे पहले श्री जानकी जी ने श्री राममंत्र का उपदेश किया था ॥१२३॥

जानक्या मन्त्रमेवा स्मै स्वयं राम॰ प्रभु र्ददौ ॥

स्वस्या नामाङ्किता मुद्रा चिन्हिताय च विष्णवे ॥१२४॥

और श्री जानकी जी के मंत्र को इन पर नारायण के लिए परात्पर प्रभु श्री राम जी ने स्वयं दिया था और अपने नाम से अंकित मुद्रिका का चिन्ह भी स्वयं दिया ॥१२४॥

धनुर्वाणाङ्क युक्तोयं सीतयातु तदा कृतः ॥

एवं संस्कार तत्वाभ्यां युक्तो देव सनातनः ॥१२५॥

और श्री सीता जी ने धनुष वाण के चिन्ह से युक्त किया था इस प्रकार श्री सीताराम तत्व और संस्कारों से युक्त वे सनातन देव पर विष्णु हुए थे ॥१२५॥

तेनापि पर देवेन विष्णुर्नारायणेन वै ॥

स्वस्या प्रिया परा लक्ष्मी संस्कृता चा नवोधिणा ॥१२६॥

और फिर उन पर देव नारायण विष्णु ने अपनी प्रिया परालक्ष्मी को पंच संस्कार युक्त करके इस श्री सीताराम तत्व का उपदेश किया ॥१२६॥

महाशम्भुस्तु श्रीमत्या जानक्या धनुषाङ्कितः ॥

स्वस्या अपि मुद्रयाच द्वाख्यादि मंत्र संस्कृतः ॥१२७॥

और इसी प्रकार महाशम्भू को भी श्री सती जानकी जी ने श्री राम जी के धनुष और अपनी मुद्रिका का चिन्ह दिया तथा श्री सीताराम जुगल मंत्र और मंत्रद्वयादि सम्पूर्ण पंच संस्कारों को दिया ॥१२७॥

ततो महाशम्भुनैव महाविष्णुः परिस्कृतः ॥
बाह्यान्तरे श्च संस्कारे स्तेनैवाऽहं तथा विधः ॥१२८॥

उसके बाद श्री महाशम्भू जी ने ये ही पंच-संस्कार श्री महाविष्णु जी को दिए और उन्हीं महाशम्भू जी ने मेरे भी उसी प्रकार बाह्य और आन्तरिक संस्कार किए ॥१२८॥

एवं महा विष्णुनैव विष्णु र्यज्ञ तनुस्तथा ॥
विष्णुना चैव श्रीदेवी श्रीदेव्याच ततः परम् ॥१२६॥
विश्वक्सेनादयः सर्वे संस्कृताः रामसीतयोः ॥
मन्त्रैश्च चाप बाणाभ्यां सीताया मुद्रया तथा ॥१३०॥

और उसी प्रकार श्री महाविष्णु ने भी यज्ञतनु नाम के विष्णु का पंच संस्कार किया। उन विष्णु ने अपनी प्रिया श्री देवी का पंच संस्कार किया और फिर श्री देवी ने भी उसके आगे श्री सीताराम पंच संस्कारों को विष्वकसेनादि वैकुन्ठ के पार्षदों का संस्कार किया। श्री सीताराम युगल मंत्र के साथ धनुष बाण और श्री सीता जी की मुद्रिका छाप दिया ॥१२६॥१३०॥

विष्णुना च तथा ब्रम्हा ब्रम्हणा नारदो दया ॥
परन्तु रामतत्वस्य सम्यग्ग्याता कचि त्क्वचिंत ॥१३१॥

और विष्णु ने इन पंच-संस्कारों को ब्रह्मा जी को दिया। ब्रह्मा जी ने नारदादिकों को दिया परन्तु श्री राम तत्व का सम्यक् ज्ञाता कोई २ है ॥१३१॥

देवामुनयं ऊचुः

अस्माकं कुरु संस्कारः संस्कृतापार्वतीयथा ॥
इत्येवं विनयं नाथ विलम्बं माकुरु प्रभो ॥१३२॥

देवता मुनि लोग बोले—हे प्रभो! आपने जिस प्रकार श्री पार्वती जी का संस्कार किया उसी प्रकार हम लोगों का भी पंच-संस्कार कीजिए। हे नाथ? हम लोगों की इस विनय को सुन लीजिए देरी मत कीजिए ॥१३२॥

श्री याज्ञवल्क्य उवाच

तानार्तयुक्ता स्तु स चार्त बन्धु राश्वास्यतन्मराडपं माययौ च ॥
प्रज्वाल्यवेदी हविषाचहूय यत्पूर्व कृत्यं कृत मेवसर्वम् ॥१३३॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि श्री शंकर जी ने आरत हुए उन देवादिकों को आश्वासन देकर आरत बन्धु श्री शंकर जी संस्कार-मण्डप में आए और वेदी को प्रजज्वलित करके हवन किया और पूर्ववत् सब कृत्य करके ॥१३३॥

तप्तेन धनुषा राम नामाङ्कित शरेण च ॥
जानक्या मुद्रया शीघ्रं स्वांकिता मुनि देवताः ॥१३४॥

श्री राम नामाङ्कित धनुष बाण और श्री जानकी जी की मुद्रिका को तपाकर मुनि देवता सबको शीघ्र अंकित किया ॥१३४॥

पुनस्तैः पूज्य मानस्तु प्रसन्नानन शंकरः ॥
उवाच पार्वतीं देवीं शेष संस्कार हेतवे ॥१३५॥

फिर उन देवता मुनियों ने भी श्री शंकर जी की पूजा स्तुति की तब प्रसन्न मन होकर श्री शंकर जी और अधिक संस्कार के लिए श्री पार्वती जी से बोले ॥१३५॥

शिव उवाच

गिरिराजे सुतेऽप्यस्तु कर्णीयो नाम सूत्सवः ॥
मुद्रा पूजनोत्सवश्च धनुरूत्सव नामकः ॥२३६॥

हे गिरिराज सुते ! अब आप का नाम-संस्कार का भी उत्सव होना चाहिए तथा मुद्रिका धनुष बाण का भी पूजन-उत्सव होना चाहिए जो धनुरुत्सव नाम से प्रसिद्ध है ॥१३६॥

पुन रेवात्र तः श्रीमत्सीतारामौ स्वमन्दिरे ॥
गानवाद्यैं विमानेन नेतव्यौ सत्समाजतः ॥२३७॥

उनके बाद इस संस्कार मण्डप से श्रीमत् सीताराम जी की मूर्तियों को बिमान में बैठाकर सत समाज से गानबजानोत्सव पूर्वक अपने मन्दिर में ले जाने चाहिए ॥१३७॥

•गानं कर्तुं प्रेरयस्व सखीःस्वस्याः स्वरावराः ॥
शंकरेणेत्युक्तवति सुस्वरैः शीघ्रनादितम् ॥१३८॥

हे पार्वती जी ! तुम गाने वाली अपनी श्रेष्ठ सखियों को गाने के लिए प्रेरणा करो । इस प्रकार श्री शंकर जी के कहने पर सुन्दर स्वरों से संगीत का शीघ्र नाद उठा ॥१३८॥

प्रोवा च पार्वतीं शम्भुः नामते संस्कृतं प्रिये ॥
जानकी पादशीलेति श्रुत्वा सा मोद मायया ॥१३९॥

इस तरह श्री शंकर जी पार्वती से बोले कि हे प्रिये ! आपका नाम जानकी पाद शीला संस्कार किया। यह सुनकर श्री पार्वती जी महाआनन्द मग्न हो गई ॥१३९॥

कृत्वा नामोत्सवं शम्भुः कृतं वै धनुरुत्सवं ॥
समग्रं सद्विधानेत्र प्रीत्या श्रीशम्भुना मुने ॥१४०॥

इस प्रकार पार्वती जी का नामोत्सव संस्कार करके श्री शंकर जी फिर धनुरुत्सव संस्कार को प्रेम से विधान पूर्वक सम्पूर्ण किया ॥१४०॥

भरद्वाज उवाच

कथं केनोपचारेण कोवाथो धनुरुत्सवः ॥
कथ्यतां मुनिशार्दूलविधिना भाव कौतुकम् ॥१४१॥

श्री भरद्वाज जी बोले कि हे मुने ! वह धनुरुत्सव किस लिए, किन उपचारों से कैसे किया । हे मुनिशार्दूल यह भाव के कौतुक को बढ़ाने वाला विधान और कहिए ॥१४१॥

याज्ञवल्क्य उवाच

चन्द्रिका मुद्रिके द्वे च सीतायाः संस्कृती शुभे ॥
धनुर्बाणौतु रामस्य नाम मुद्रा तु पञ्चमः ॥१४२॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि चन्द्रिका और मुद्रिका ये दो तो श्री सीता जी के शुभ संस्कार कहे जाते हैं। धनुष और बाण श्री राम जी के संस्कार कहे जाते हैं और पाँचवे श्री सीताराम नाम छाप सहित ये पंच-मुद्रा कहे जाते हैं ॥१४२॥

चिन्हितो पञ्चमुद्राभिः सर्वलोकेषु पूजितः॥
तेषांचिन्हं विनैवाय मात्मा पूतो नजायते ॥१४३॥

जो इन पञ्च मुद्राओं से चिन्हित होता है वह सम्पूर्ण लोकों में पूजित होता है। इन पञ्च मुद्राओं के छाप के बिना आत्मा पूर्ण पवित्र नहीं होने पाता है ॥१४३॥

तप्त्वा वेतौ धनुर्वाणौ सीताया मुद्रिका तथा ॥
नतापये नामसुद्रा चन्द्रिका नैव तापयेत् ॥१४४॥

धनुष बाण और श्री सीता जी की मुद्रिका ये तो तपा कर लगाने चाहिए और नामें को न तपावै तथा चन्द्रिका को न तपावै ॥१४४॥

राम क्षेत्रे मृदा तेद्वै धारये त्तिलकं यथा ॥
पञ्च भिश्चिन्हितो योसौ रामभक्तेषु गीयते ।१४५॥

और श्री सीताराम धाम की मिट्टी से जिस प्रकार तिलक लगाया जाता है उसी प्रकार इन पञ्च-मुद्राओं से जो शीतल छाप भी लगाते हैं वे श्री रामभक्तों में अग्रगण्य गिने जाते हैं ॥१४५।

पूर्वं प्रणव मुच्चार्य चतुर्थ्या समयोजयेत् ॥
नामतेषां मन्त्ररूपं पूजनं तेन कारयेत् ।१४६॥

अब पञ्च मुद्राओं को धारण करने के मन्त्रों को बताते हैं। प्रथम ॐ लगाकर फिर इन मुद्राओं के नाम में चतुर्थी लगा देने से अन्त में नमः कह देने पर मुद्राओं के नामही मन्त्र बन जाते हैं इन्हीं मन्त्रों से इन पञ्च मुद्राओं का पूजन करे ॥१४६॥

षोडसैः पूजयि त्वातु संस्कुर्ये च्छिष्य मुत्तमम् ॥
पूजनं कारये त्तेषां तेन पश्चा त्तथा विधैः ।१४७॥

षोडसोपचार पूजन करके सच्छिष्य का शीतल और तप्त संस्कार करे फिर शिष्य से भी उसी प्रकार पूजन करावै ॥१४७॥

नीराजनं गानवाद्यैः पुष्पवृष्ट्या समन्वितम् ॥
धनुरुत्सव मेवं च कथ्यते द्विज सत्तम ॥१४८॥

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! आरती गान, बजान, फूल संयुक्त पूजा को धनुरुत्सव कहा जाता है ॥१४८॥

एवं नीराजनं कृत्वा मुद्राणां रामसीतयोः ॥
उच्चस्वरेण विज्ञप्तीं शम्भुना च तथा कृता ॥१४६॥

श्री शंकर जी ने तथा पार्वती जी न इसी प्रकार श्री सीताराम जी की मुद्राओं की आरती पूजा करके उच्चस्वर से उन मुद्राओं की सभा में स्तुति किया तथा बाद में इस उत्सव के स्वरूप को बताया ॥१४९॥

शिवपार्वत्यानूचतुः

राम ब्रम्ह राजपुत्र हस्तेऽनस्त्रं विराजितौ ॥
सूर्या नन्त प्रभावन्तौ धनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५०॥

श्री शिवजी सहित पार्वती जी बोले कि—हे परात्परब्रह्म श्री रामचन्द्र जी के हस्तकमल में विराजने वाले अनन्त सूर्यों के समान् प्रभाव वाले धनुर्बाण जी आपको हम नमस्कार करते हैं ॥१५०॥

असुराणां घातकौ च सुराणां भय नाशकौ ॥
निहितेभ्यो मोक्षदौ च धनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५१॥

हे असुरों के नाश करने वाले ! देवताओं के भय नाशक ! जो आपको धारण करे उसको मोक्ष देने वाले धनुर्बाण जी हम आपको नमस्कार करते हैं ॥१५१॥

स्वचिन्ह बाहु मूलेभ्यः सीतारामांघ्रि भक्तिदौ ॥
श्रीराममुष्टि सौभाग्यौधनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५२॥

जो आपके चिन्हों को अपने बाहु मूल में धारण करते हैं उनको श्री सीताराम जी के चरणों की भक्ति देने वाले, श्री राम जी की मुष्ठी में रहने का सौभाग्य है जिसका, ऐसे धनुष-बाण जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५२॥

ध्याना नन्द करौ दिव्यौ योगीनांध्यान दुर्लभौ ॥
नित्यं रामा युधारव्यौतौ धनुर्वाणौनमाम्यहम् १५३॥

भक्तों को ध्यान के दिव्य आनन्द को देने वाले, रुद्र योगियों के ध्यान में जो अत्यन्त दुर्लभ हैं; श्री राम जी के नित्य आयुध श्री धनुष-बाणों को प्रणाम करता हूँ ॥१५३॥

ममशूला च्छक्ति शूला द्विष्णुच क्रात्परात्परौ ॥
दिव्यन्तौ राममुष्ठ्या श्रीधनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५४॥

जो मेरे शूल से, शक्ति के शूल से, विष्णु के चक्र से, तथा सभी आयुधों से परात्परतर हैं और सब आयुधों के कारण ईश्वर तथा श्री राम जी के हाथ में रहने वाले दिव्य श्री धनुर्बाण जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५४॥

रासे श्रीरामचन्द्रस्य चावांगाभिनयेंगिते ॥
चलच्चमत्कृता वेतौ धनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५५॥

रास के रंग में नृत्य करते हुए श्री राम जी के श्रेष्ठ अंगों में अभिनय चाल पर चमकने वाले दोनों श्री धनुष बाण जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५५॥

श्रीराम वनिताभिश्च तद्विश्लेषे समर्चितौ ॥
स्पृसन्तीनां मोद करौ धनुर्वाणौ नमाम्यहम् ॥१५६॥

प्रियतम के वियोग में श्री राम जी की पत्नियों ने जिनका सम्यक् प्रकार पूजन किया। स्पर्श करने पर महा आनन्दित हुई इस प्रकार के श्री धनुर्बाण जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५६॥

असुरेभ्यो भीतकेभ्यः सुरेभ्यः शरणं प्रदौ ॥
भूमिभार हरावेतौधनुवाणौ नमाम्यहम् १५७

भयभीत हुए असुर देवतादि सब को शरण देने वाले, भूमि के भार को हरण करने वाले श्री धनुष-बाण जी को नमस्कार करता हूँ ॥१५७॥

इति धनुर्वाणाष्टकम् अथ चन्द्रिकाष्टकम्

यस्या अंशेन रमो मा सावित्र्याद्यादि शक्तयः ॥
सम्भवन्ति सदाहं श्री चन्द्रिका लंकृतीं स्तुमः ॥१५८॥

यहाँ तक श्री धनुर्बाण जी का अष्टक हुआ। अब यहाँ से आगे श्री चन्द्रिका जी का अष्टक कहते हैं जिनके अंश से रमा उमा सावित्री आदि अनन्त शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं इस प्रकार की श्री सीता जी के अलंकारभूता श्री चन्द्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ ॥१५८॥

श्रीरामध्यानगम्यंच मुमुक्षुभ्यो गतिप्रदम् ॥
सीताशिरो भूषण श्री श्रन्द्रिकाख्यं नमाम्यहम ॥१५६॥

श्री राम जी के ध्यान में निवास करने वाली, मुमुक्षुओं को गति देने वाली श्री सीता शिर भूषण स्वरूप श्री चान्द्रिका जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५६

श्रीरामाक्षि भोगरूपं चन्द्रकोटि प्रभाधरम् ॥
सीताशिरोभूषणं श्रीचन्द्रिकाख्यं नमाम्यहम् ॥१६०॥

श्री राम जी के नेत्रों को सुख भोग देने वाली, करोड़ों चन्द्रमाओं के प्रकाश को धारण करने वाली श्री चन्द्रिका नाम से प्रसिद्ध श्री सीता जी के शिरभूषण को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१६०॥

समाप्तिकां भूषणानां बिना न्यूनं करी तुया ॥
ललाटिका परं ध्येया तां सीता लंकृतिं स्तुमः ॥१६१॥

जिनके बिना सब भूषण न्यून ही प्रतीत होते हैं। सब भूषणों की अवधि, श्री सीता जी के ललाट-अलंकृति रूप में जिनका ध्यान होता है ऐसी श्री चन्द्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ १६१॥

सीतारामयो युंगलोपासकानां ललाटको ॥
तिलकेभ्राज माणां तां चन्द्रिकाख्यं नमाम्यहम् ॥१६२॥

श्री सीताराम जुगल उपासकों के भाल तिलक में शोभित होने वाली श्री चन्द्रिका जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१६२॥

स्वरस्मि मण्डले दिव्ये दीप्यन्तीं तरलप्रभे ॥
चन्द्र भानु तिरस्कृत्य तां सीतालंकृतिं स्तुमः ॥१६३॥

अत्यन्त तीक्ष्ण प्रकाश मण्डलके बीच में स्वयं प्रकाशमान होने वाली चन्द्र सूर्यों के प्रकाश का तिरष्कार करने वाली श्री सीता जी के अलंकार स्वरूपा श्री चन्द्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ ॥१६३॥

यस्याश्चिन्हं भालमध्ये विधाय रामसीतयोः ॥
भावुका रसिकत्वंहि यान्ति तां चन्द्रिकां स्तुमः ॥१६४॥

जिनके चिन्ह को भालमध्य तिलक में धारण करने से श्री सीताराम के भावुक रसिकता को प्राप्त करते हैं उन श्री चन्द्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ ।।१६४।।

यस्याश्चिन्हं भाल देशे विधाय तिलके शुभे ।
भवेद्रामस्यातिप्रियस्तां सीता लंकृतिं स्तुमः ।।१६५।।

जिनके चिन्ह को भाल मध्य तिलक पर धारण करने से भक्त श्री राम जी का अत्यन्त प्रिय होता है। इस प्रकार की श्री सीता अलंकृति की मैं स्तुति करता हूँ ।।१६५।।

इति श्रीचन्द्रिकाष्टकम ।। श्रीमुद्रिकाष्टकञ्च ।।

सीता कर सरोजस्य दले किल विराजितम् ।।
स्वङ्गुली भूषणं तस्मा न्मुद्रिकाख्यां नमाम्यहम् ।।१६६।।

(यहाँ तक श्री चन्द्रिका जी का अष्टक कहा। अब आगे श्री मुद्रिका जी के अष्टक को कहते हैं।) श्री सीता जी के करकमल दल में विराजने वाली अँगुली भूषण स्वरूपा श्री मुद्रिका जी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।१६६।।

श्रीरामो योगिभिर्ध्येयः सोपि ध्यायति यांसदा ।।
सीतानामांक संयुक्तां मुद्रिकां प्रणमाम्यहम् ।।१६७।।

सब योगियों से ध्येय, जो श्री राम जी वे भी जिसका हमेशा ध्यान करते हैं ऐसी श्री सीता नाम से अंकित श्री मुद्रिका जी को मैं प्रणाम करता हूँ ।।१६७।।

तेजो मण्डल सन्दर्भे भक्तानां हृदये तमः ।।
हारिणि प्रकुरू श्रेयो जानकीमुद्रिके हि मे ।।१६८।।

महान् तेज मण्डल से भक्तों के हृदय के अंधकार को दूर करने वाली; हे श्री जानकी जी की मुद्रिके ! आप मेरा कल्याण करें ।।१६८।।

कृपापात्रस्य जानक्या जनस्य मस्तकोपरि ।।
वर्तिनीं सर्वलोकेष्वभयदां मुद्रिकां स्तुमः ।।१६९।।

श्री सीता जी के महा कृपा पात्र भक्त के मस्तक पर रहने वाली सम्पूर्ण लोकों को अभय देने वाली श्री मुद्रिका जी की मैं स्तुति करता हूँ ।।१६९।।

आदर्श वर्तुलाकारे कपोले स्यामसुंदरे ।।
स्फुरतीं राजपुत्रस्य दक्षे सीतोर्मिकां स्तुमः ।।१७०।।

शीशा की तरह चमकने वाले राजकुमार श्री श्याम सुन्दर के गोल कपोलों पर चमकने वाली बड़ी चतुरा श्री सीता जी की मुद्रिका की मैं स्तुति करता हूँ ।।१७०।।

यस्या अंशोद्भवा माया जगदुत्पादितुं क्षमा ।।
सीताङ्गुल्योर्मिका सामे श्रेयोदिश्तु सर्वदा ।।१७१।।

जिनके अंश से उत्पन्न होकर माया जगत को उत्पन्न पालन प्रलय करने में कुशल होती है ऐसी श्री सीता जी के अँगुली-भूषण श्री मुद्रिका जी मेरे लिए हमेशा कल्याण देवै ।।१७१।।

अंगुष्टस्यापि तर्जन्यां मध्यमा या मनोहरा ॥
रामस्य राजपुत्रस्य जानक्यामुद्रिकां स्तुमः ॥१७२॥

श्री जानकी जी के अँगुष्ठ तर्जनी मध्यमा उँगलियों में रहकर राजपुत्र श्री राम जी के मन को चुरा लेने वाली श्री मुद्रिका जी को मैं स्तुति करता हूँ ॥१७२॥

कनिष्ठाया उर्मिकां चा नामिकायास्तथैवच ॥
विभ्रन्तीं मण्डलं नौमी जानक्या करयोर्द्वयोः । १७३॥

श्री जानकी जी के दोनों कर कमलों की कनिष्ठिका अनामिका उँगलियों में रहकर प्रकाश का मण्डल बाँधने वाली श्री मुद्रिका जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१७३॥

चंद्रिका मुद्रिका वाण धनुषां च स्तवातिकम् ॥
उमामहेश्वरोक्तं च स्त्रियो वा पुरुषा अपि ॥१७४॥

श्री उमा महेश्वर जी से की हुई श्री चान्द्रिका मुद्रिका धनुष बाण की स्तुति को स्त्री वा पुरुष ॥१७४॥

पठन्ति नियमान्नित्यं सायं प्रातस्तु भक्तितः ॥
सायुज्यं ते प्राप्नुवन्ति सीताया राघवस्य च ॥१७५॥

जो कोई भी सायं प्रातः नियम पूर्वक भक्ति से पाठ करते हैं वे श्री सीता राघव जी की सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करते हैं ॥१७५॥

इति श्री शङ्कर कृते श्री अमर रामायणे सीतारामरत्न मञ्जूषायाँ
पार्वता सँस्कारो नाम प्रथमस्सर्गः ॥१॥

यह श्री शंकर जी के द्वारा रचना किया हुआ "श्री सीताराम रत्न मंजूषा" नामक अमर रामायण में पार्वती संस्कार प्रसंग पहला सर्ग सम्पूर्ण (समाप्त हुआ।

श्री याज्ञ बल्क्य उवाच

इत्थं गिर्य्यात्मजायास्तु कृत्वा संस्कार याज्ञकम् ॥
अर्चा समाजकं सर्वं पार्वत्या सह शम्भुना ॥१॥

श्री याज्ञवल्कि जी बोले कि हे मुने ! श्री शंकर जी ने गिरिजा जी का इस प्रकार अर्चा पूजन समाज जोड़ करके विधान पूर्वक पंच संस्कार यज्ञ किया ॥१॥

विमानेन गानवाद्यै नृत्यद्भिः शिव किंकरैः ॥
वेदान् गृणद्भिः मुनिभिर्नीतं तत्रैव मंदिरे ॥२॥

इसके बाद श्री शंकर जी के गणों द्वारा गान बजाने नृत्य के सहित और मुनियों द्वारा वेदध्वनि सहित विमान से श्री सीताराम अर्चा विग्रह समाज को उसी अपने नित्य पूजा के मन्दिर में लिवा लाए ॥२॥

सिंहासने स्वर्णमये खचिते रत्नजालकैः ॥
मूर्ती दिव्ये रामचंद्र सीतयोः स्थाप्य शङ्करः ॥३॥

और लाकर खचित स्वर्णमय सिंहासन पर श्री सीताराम अर्चा मूर्तियों को श्री शंकर जी ने स्थापित किया ॥३॥

कृत्वा प्रणामंयुगलं तत्र सान्तरमन्दिरे ॥
समाज सहित स्तस्थौ मुनिदेवैः परिवृतः ॥४॥

फिर श्री शंकर जी श्री सीताराम जुगल सरकार को प्रणाम करके विस्तार मैदान वाले उस मन्दिर में देवता मुनियों के समाज से घिरे हुए बैठे ॥४॥

इत्यन्तरे शैलसुतात्मनाथं पवित्रगाथं प्रणयान्वितासौ ॥
हर्षाश्रु रोमोद्गम कायकान्ती परेश्वरं प्राञ्ज लिनावभाषे ॥५॥

तब पर्वत कन्या श्री पार्वती जी पवित्र कीर्ति वाले अपने प्राण नाथ को हर्षाश्रु रोमाञ्चित गद्गद होकर प्रणय पूर्वक हाथ जोड़कर प्रसन्न मन श्री शंकर जी से बोलीं ॥५॥

श्री पार्वत्युवाच

कृतः श्रमस्त्वया नाथ मदर्थे करुणात्मना ॥
सद्भावत्वं सतामेत त्परकार्यसुयोजकम् ॥६॥

हे नाथ ! करुणापूर्ण आपने मेरे लिए बहुत बड़ा परिश्रम किया। दूसरे के लिए सत्कार्यों को सुयोजित करने में परिश्रम करना यह संतों की सद्भावुकता है। ६॥

महात्मानः पर्यटन्ती गृहीणां बद्ध चेतसाम् ॥
श्रेयसे सततं लोके समं कृत्वा दुःखं सुखम् ॥७॥

संत लोग हमेशा दुख सुखों को सहन करते हुए भी गृहस्थी में बद्धचित्त वाले गृहस्थों के घरों में उनके कल्याणों के लिए विचरा करते हैं ॥७॥

निष्कामापि वहत्येव लोके देव सरिद्यथा ॥
निस्काम स्तपतेसूर्य्य स्तमः सीत हरः प्रभुः ॥८॥

यद्यपि वे निष्काम होते हैं तो भी जैसे गंगा और सूर्य संसार के पाप व अन्धकार (तापों) को दूर करने के लिए निष्काम चला करते हैं तैसे वे (सन्त) भी चलते हैं ॥८॥

श्रुत्वेत्युमायाः सुविनीत वाक्यं विश्वास निष्ठा रुचि सूचनंच ॥
प्रसंशयं प्राणप्रियां हरोपि हर्षप्रयुक्तोहि हितं वभाषे ॥९॥

श्रद्धा, विश्वास और निष्ठा की सूचक श्री पार्वती जी की वाणी सुनकर अत्यन्त हर्ष में भरे श्री शंकर जी प्राणप्रिया की प्रसंसा करते हुए हितमय बचन बोले ॥९॥

शिव उवाच

निवर्तितं तुतत्सर्वं मिदानीं सुस्थिराभव ॥
श्रूयतां सततं प्रीत्या पूर्वं पृष्टा हिया कथा ॥१०॥

हे प्रिये आपके संस्कार विधानों को मैंने पूरा किया। अब स्थिरचित्त होकर पहले पूछे हुए प्रश्नों के उत्तरों को अब सतत प्रेम से सुनिए ॥१०॥

उमोवाच

अयमेवाभिलाषोमे न मया प्रेरितः प्रभुः ॥
श्रममाप्तो यज्ञ कार्य्ये क्षणं विश्रम्य चारभ ॥११॥

श्री पार्वती जी बोलीं—हे नाथ ! मेरी भी यही अभिलाषा थी पर मैंने प्रेरणा इसलिए नहीं की कि आप यज्ञ कार्य में परिश्रम पाए हैं अतः थोड़ी देर विश्राम करके तब कथा आरम्भ कीजिए ॥११॥

शिव उवाच

येभावनिर्भराः सीतारामचन्द्र पदाम्बुजे ॥
तेषां तयोः कथैवास्या द्विश्राम श्चापरः श्रमः ॥१२॥

श्री शिव जी बोले कि जो श्री सीताराम चरणकमलों के भाव में निमग्न हैं उनके लिए श्री सीताराम कथा ही विश्राम है और सर्वत्र परिश्रम है ॥१२॥

सीताराम गुणानांहि श्रवणे यत्सुखं परम् ॥
ब्रह्मेन्द्राणां पदे प्राप्ते न वा मोक्षे सुखं तथा ॥१३॥

श्री सीताराम गुणगान सुनने में जो परम सुख प्राप्त होता है वह सुख ब्रह्मा इन्द्र-पद और मोक्ष पद पाने पर भी नहीं होता है ॥१३॥

शुको वाल्मीकि व्यासौ च शेषोपि सनकादयः ॥
महाशम्भुर्महाविष्णुः सर्वे रामकथारताः ॥१४॥

श्री शुकदेव जी, श्री वाल्मीकि जी, श्री व्यास जी, श्री शेष जी, श्री सनकादि जी, श्री महाशम्भु जी और श्री महाविष्णु जी ये सब श्री सीताराम कथा में ही आसक्त चित्त हैं ॥१४॥

पार्वत्यूवाच

कुरुष्व मंगलं नाथ वक्तुं सीतापते र्गुणान् ॥
परन्तु चरितं ब्रह्म लौकिकं कथयप्रभो ॥१५॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि हे नाथ ! यदि ऐसी बात है तो तब श्री सीतापति के गुणगान वर्णन करने का मंगला चरण आरम्भ कीजिए परन्तु कथा दिव्य धाम की ही कहिए ॥१५॥

शिव उवाच

कनकभवनखण्डे मण्डिते मुक्तजालै र्विभूषित वरवेषो नाट्यकेलिप्रयुक्तः॥
कमल वदन कान्ता मण्डले मोहन श्री र्जयति जनक जायाः प्रेमपूर्णाम्बुजाक्षः ॥१६॥

श्री शिव जी बोले कि श्री जनक जाया जी के प्रेम में परिपूर्ण कमल सदृश नेत्र वाले श्री रघुनाथ जी की जय हो जो श्री रघुनाथ जी कनक भवन के मणि मुक्ता जालों से भूषित रासखण्ड में सुन्दर वस्त्राभूषणों से श्रेष्ठ शृङ्गार किए हुए अत्यन्त मन मोहक सौन्दर्य युक्त रास नृत्य करने के लिए तैयार हैं ऐसे कमलवदनी कान्तामण्डल के मोहक सौन्दर्य वाले तथा जानकी जी के अनुराग से भीजे नेत्र वाले श्री प्रीतम की जय हो ॥१६॥

चपल चरण चारै स्तान मान प्रकारै रभिनय करकञ्ज भ्रामितो पाङ्ग दृष्टि: ॥
अधर मधुर बिम्ब स्मेर शोभा विधायी जयति जनकजेशः कोटि कन्दर्प कान्तिः ॥१७॥

जो अपने चरण कमलों की चंचलता से राग तान के मान प्रकार पूर्वक करकमल से अभिनयों को प्रकट (प्रगट) करते हुए चंचल दृष्टि से कटाक्ष करते हुए और मधुर बिम्बाफल के समान लाल अधरों से मंद मुसकराते हुए करोड़ों कामदेवों के दर्प को दमन करने वाले सुन्दरता के विधान करने वाले श्री जनकजा जी के प्राणनाथ की जय हो ॥१७॥

विचलित कच वृन्दै गण्डयुग्मा वृत श्री जित विधुमुख कान्ति वींटिका चर्वणेन ॥
सघन घन वपु. श्री कौशलेशात्मजोसौ जयति जनकजायाः प्राणनाथ: प्रकामम् ॥१८॥

जिनके दोनों गोल कपोलों पर अलकें चंचल हो रही हैं और अपने मुख चन्द्र की कान्ति से पान बीड़ा चर्वण करते हुए चन्द्रमा की शोभा को जीत रहे हैं इस प्रकार सघन मेघ के सदृश श्री श्याम सुन्दर सबके मनोरथों को पूर्ण करते हुए इन श्री कौसलेशात्मज श्री जनकजा जी के प्राणनाथ की जय हो ॥१८॥

ऋषि मुनिभिरूपास्य स्तर्क शास्त्रै रतर्क्यः श्रुति सकल सु गीतः प्रीतिसाध्यो न चान्यैः ॥
ममहृदय नवाब्जे यस्य वासोऽस्यजस्त्रं जयति जनक जाया वल्लभोऽसौ परेशः ॥१९॥

जो ऋषि मुनियों के उपास्य देव हैं; तर्क शास्त्रों से जिन की तर्कना नहीं की जा सकती है; समस्त श्रुतियाँ जिनका सुन्दर गान करती हैं; जो केवल प्रेम से ही प्राप्त हो सकते हैं अन्य साधनों से नहीं; मेरे हृदय के नवीन कमल में जिनका नित्य एक रस बास है ऐसे परात्पर ईश्वर श्री जनकजाया जू के बल्लभ की जय हो ॥१९॥

अहं विधाता विष्णुश्च सोमः सूर्यश्च तारकाः ॥
वाय्वग्न्याकाशमह्यादि दिग्पालादिग्च पर्वताः ॥२०॥

मैं और ब्रह्मा तथा विष्णु, सोम (चन्द्रमा) सूर्य तारागण, वायु अग्नि, आकाश, पृथ्वी, दिक्पाल, दिग्गज पर्वत ॥२०॥

ऋषयो मुनयो देवा असुरा ऋद्धिसिद्धयः ॥
गन्धर्वाप्सरसो नागाः किन्नराः सिद्ध यक्षकाः ॥२१॥

ऋषि, मुनि, देवता, असुर, ऋद्धि-सिद्धि आदि, गन्धर्व, अप्सरा, नाग, किन्नर, सिद्ध यक्ष ॥२१॥

समुद्राः सरितश्चान्ये यावद्ब्रह्माण्ड गोलकाः ॥
भिन्नाश्चापि भिन्नरूपाः प्रति ब्रह्माण्ड वर्तका ॥२२॥

समुद्र, नदियाँ और भी जो ब्रह्माण्ड गोलक के अन्दर हैं वे चाहे भिन्न रूप हों चाहे अभिन्न रूप में हों इसी ब्रह्माण्ड में हों अथवा अन्य जितने ब्रह्माण्डों में हों ॥२२॥

सीतारामाश्रयाः सर्वे कलाश्चांश विभूतयः ॥
चतुर्विंशति मूर्तीनां चतुर्णां चादि कारणम् ॥२३॥

ये सब के सब श्री सीताराम जी के ही कला अंश विभूतियां हैं तथा श्री सीताराम जी के ही आश्रित भी हैं और चौबीसों अवतारों के भी कारण ये ही श्री सीताराम जी हैं ॥२३॥

सीतारामौ विजानीहि सत्यं सत्यं ब्रवीमिते ॥
नृपेयथा ह्यमात्यत्वं तथा रामे निवोध्यतां ॥२४॥

श्री सीताराम जी ही सनातन सत्य परात्पर ब्रह्म हैं यह बात मैं तुम से सत्य कहता हूँ; सत्य कहता हूँ। जितने भी ईश्वर हैं वे सब राजा के पास में मन्त्रियों की तरह श्री राम जी के पास में हैं ऐसा निश्चय जानो ॥२४॥

नारायणत्वं विष्णुत्वं भगवत्तादिकं हि यत् ॥
नाम्नि रूपे च लीला सु धाम्नि यस्य परात्परे ॥२५॥

श्री नारायण में नारायणत्व श्रीविष्णु में विष्णुत्व आदि जितने भी भगवत्तादिक गुण हैं वे सबके सब परात्पर ब्रह्म श्री सीताराम जी के नाम रूप लीला धाम के ही अन्तरगत हैं ॥२५॥

बृहत्त्वं विद्यते तस्मा द्रामे ब्रह्म त्व मागतम् ॥
ब्रम्हेति च पदं यत्तु बृहत्त्वार्थे प्रकीर्तितम् ॥२६॥

जितना भी बृहत्त्व (बड़प्पन) है वह सब श्री सीताराम जी के ही ब्रह्मत्व से ही आया हुआ है। 'ब्रह्म' यह जो पद है बृहत्त्वार्थ वाचक ही कहा जाता है ॥२६॥

बृहद्गुणो चिदानन्दे श्रीरामेघटतिस्वतः ॥
ईश्वर्य्य श्चेश्वराः प्रोक्ताःस्वेस्वे धाम्नि प्रवर्त्तकाः ॥२७॥

बृहद् गुण जितने भी हैं वे सब सच्चिदानन्द श्री सीताराम जी में ही स्वतः सुघटित हैं। जितने भी ईश्वर और ईश्वरी अपने २ धामों के प्रवतेक कहे जाते हैं वे सब ॥२७।

जानक्यारामचन्द्राच्च समुद्भूताः सनातनाः ॥
अप्रमेय बिभवौ श्रीसीतारामौ नमाम्यहम् ॥२८॥

श्री जानकी और श्री राम जी से ही सनातन समुद्भूत (उत्पन्न) हैं। इस प्रकार के अप्रमेय वैभव वाले श्री सीताराम जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥२८॥

सर्वेश्वरौ सर्वाधारौ कार्य कारणतः परौ ॥
माधुर्य्य मण्डल स्थौ श्रीसीतारामौ नमाम्यहम् ॥२९॥

जो कार्य और कारणों से परे हैं; सब के ईश्वर और सब के आधार हैं; ऐसे परात्पर ब्रह्म माधुर्य मण्डल में रहने वाले श्री सीताराम जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥२९॥

माधुर्य रूप सम्पन्नौ सीतारामौ नमाम्यहम् ॥
येचात्मवन्तोः मुनयो हर्निशं रामसीतयोः ॥३०॥

सम्यक् प्रकार माधुर्य रूप से सम्पन्न श्री सीताराम जी को मैं नमस्कार करता हूँ। जो आत्मवान् मुनि लोग अहर्निस (दिन रात) श्री सीताराम जी के ॥३०॥

गानं गुणानां कुर्वन्तो ब्रम्हानन्द मवाप्नुयुः ॥
तेतु धन्य तमा लोके तान्नमामि पुनः पुनः ॥३१॥

गुणों का गान किया करते हैं वेही ब्रह्मानन्द को प्राप्त करते हैं; वे ही इस लोक में धन्यतम हैं, उनको मै बार २ प्रणाम करता हूँ ॥३१॥

सीतारामोपासकानां ध्यानं सर्वफलप्रदम् ॥
कैचित्तयो र्नित्य लीलां ललितां शुद्धमानसः ॥३२॥

श्री सीताराम उपासक भक्तों का ध्यान सब प्रकार के फलों का देने वाला होता है। कोई २ महात्मा शुद्ध मन से श्री सीताराम जी की नित्य ललित लीलाओं का ॥३२॥

ध्यायन्त्यहर्निशं मग्ना स्तान् नमामि पुनः पुनः ॥
सभार्य्या ऋषयः सर्वे सीताया सह राघवम् ॥३३॥

दिन रात ध्यान करते हुए मग्न रहते हैं उनको मैं बार २ प्रणाम करता हूँ। सब ऋषि लोग अपनी पत्नियों के सहित श्री सीता राघव जी का ॥३३॥

प्रीत्या वेदोक्त विधिना पूजयन्तिजपन्तिच ॥
विरजास्थः क्षीरसायी वैकुण्ठाधिपतिः प्रभुः ॥३४॥

वैदोक्त बिधि से अनुराग पूर्वक पूजन करते रहते हैं; श्री जुगल मन्त्र का जप करते रहते हैं और बिरजा के उस पार रहने वाले क्षीर सागर में शयन करने वाले बैकुन्ठ के अधिपति जितने भी प्रभु हैं वे सब ॥३४

एतैः परा वरै श्चिन्त्यौ सीतारामौ हि मे प्रभू ॥
सीतारामेति चत्वारो वर्णा वर्णोत्तमाः पराः ॥३५॥

पर और अपर सब जिनका ध्यान करते हैं वो सर्वोपास्य देवता श्री सीताराम जी ही मेरे प्रभु हैं। सी ता रा म ये चारों वर्ण (अक्षर) सब वर्णों में परात्पर हैं ॥३५॥

आत्मानः सर्व वर्णानां वेदानां सार सम्मताः ॥
आत्मानोमंत्रवीजानां वेद मूलानि कीर्तिताः ॥३६॥

ये ही सी ता रा म चारों वर्ण सब वर्णों की आत्मा हैं; वेदों के सार हैं; सत्पुरुषों के सम्मत हैं; सब मन्त्र-बीजों के आत्मा है; वेदों के मूल हैं; ऐसा वेदों और विद्वानोंने कीर्तन किया है ॥३६॥

मुमुक्षव श्च तैरेव सिद्धिं यान्ति स्ववांछिताम् ॥
नारायणस्यापिमंत्रे रकारः सिद्धिदो भवेत् ॥३७॥

मुमुक्षु जन इन्हीं सीताराम चार वर्णों से मनवाञ्छित समस्त सिद्धियों को प्राप्त करते हैं जैसे कि नारायण मन्त्र से रकार ही सिद्धि देनें वाला होता है ॥३७॥

अन्यथा तद्विश्लेषे नाय नायेत्यसिद्धिदः ॥
वेदास्तुवन्ति चत्वारो वर्णां स्यादींश्च मांतकाम् ॥३८॥

अन्यथा रकार के बिना वह नारायण मन्त्र नायण नायण इस प्रकार अशुद्ध और सिद्धि देने में असमर्थ होता है। सीताराम चारों वर्णों की चारों वेद स्तुति करते हैं और ककारादि मकारान्त अर्थात क से लेकर म पर्यन्त जितने भी वर्ण हैं ॥३८॥

तेभ्योजातास्तु ते सर्वे जानन्ति मुनयस्त्विदम् ॥

सी कारा त्साम वेद श्च ताकारा द्यजु रुच्यते ॥३६॥

ये सब इन चारों वर्णों (अक्षरों) से उत्पन्न होते हैं । इस बात को सब मुनि लोग जानते हैं और सीकार से सामदेव, ताकार से यजुर्वेद उत्पन्न होते हैं ॥३६॥

ऋग्राकारा त्समुद्भूतोऽथर्वणस्तु मकारतः ॥

सीतारामेति चतुर्भ्यो वर्णेभ्यो ग्राममूर्च्छनाः ॥४०॥

राकार से ऋग्वेद और मकार से अथर्वण वेद उत्पन्न होते हैं । सी ता रा म इन चार वर्णों से संगीत के ग्राम और मूर्छनादि ॥४०॥

कण्ठोत्थाश्चस्वराः सप्त जाता रागाः सभार्यकाः ॥

श्रीसीतारामया नाम्नः स्वरास्तेभ्यः स्वरास्तथाः ॥४१॥

कन्ठ से उत्पन्न होने वाले सातों स्वर तथा अपनी पत्नियों के सहित सब राग उत्पन्न होते हैं । श्री सीताराम इस नाम से लगे हुए जो स्वर हैं उनसे सब स्वर उत्पन्न होते हैं ॥४१॥

वर्णास्तेभ्य स्तु वर्णाश्च जाताहिमाद्रिकन्यके ॥

श्रृङ्गारादि रसाश्चाष्ट भोजने षड्रसास्तथा ॥४२॥

श्री सीताराम इस नाम के वर्णों से सब वर्ण उत्पन्न होते हैं । हे हिमाद्रिकन्यके ! श्रृङ्गारादि आठ रस और भोजनादिक षटरस ॥४२॥

तेभ्यश्च चतुर्वर्णेभ्यो जानकी पादशीलिके ॥

प्रवक्ष्यामि पृथक्त्वेन यस्मा द्यस्माद्धि यो भवत् ॥४३॥

इन्हीं चार वर्णों से उत्पन्न होते हैं । हे जानकी पादशीला ! अब मैं तुम से जिस जिससे जो जो उत्पन्न होते हैं उन सबको अलग २ कहता हूँ ॥४३॥

जानकीपादशीले त्वं श्रूयतां सावधानतः ॥

सकारस्यापीकाराच्च श्रृङ्गारो रसराजकः ॥४४॥

हे जानकी पादशीले ! सावधान होकर सुनो—सीकार की ईकार से रसराज श्रृङ्गाररस उत्पन्न हुआ ॥४४॥

तस्मादेव सकाराच्च हास्यो जातः सनातनः ॥

तकारा द्रस कारुण्य मकारादद्भुतोद्भवः ॥४५॥

और सकार से सनातन हास्यरस उत्पन्न हुआ । तकार से करुणारस उत्पन्न हुआ; मकार से अद्भुत रस उत्पन्न हुआ ॥४५॥

रेफा द्वै वीर संजात स्तस्याकारा द्भयानकः ॥

वीभत्सोयं मवर्णाच्च रौद्रो मस्या प्यकारतः ॥४६॥

रेफाकार से वीर रस उत्पन्न हुआ और रेफ के आकार से भयानक रस उत्पन्न हुआ 'म' वर्ण से बिभत्स रस और मकार के अकार से रौद्र रस उत्पन्न हुआ ॥४६॥

सीतायां रामनाम्नश्च ज्ञेय मेवं यथाक्रमम् ॥
सकारा न्मधुरो जात स्तकाराल्लवणोद्भवः ॥४७॥

इस प्रकार श्री सीता जी और श्री राम जी के नाम से क्रमशः षटरस भी उत्पन्न हुए जैसे—सकार से मधुर रस व तकार से लवणरस उत्पन्न हुए ॥४७॥

तयोः स्वराभ्यां संजात श्चाम्लोहिमाद्रिकन्यके ॥
तथा श्रीरामनाम्नश्चरेफात्तिक्तो रसो द्भवः ॥४८॥
मकारा त्कटु रुत्पन्नः काषायोद्विस्वरोद्भवः ॥
पूर्वं सीतेति व्याख्याय वदेद्रामं ततः परम् ॥४९॥

इन दोनों के स्वरों से आम्ल रस उत्पन्न हुआ। उसी प्रकार हे हिमाद्रिकन्यके! श्री राम जी के नाम में जो रेफ उससे तिक्त रस उत्पन्न होता है। इन दोनों के स्वरों से काषाय रस उत्पन्न होता है। पहले सीता कह करके पीछे राम-नाम उच्चारण करना चाहिए ॥४८॥४९॥

द्वयो रैक्यं वियुज्याथ जपतां नैव सिद्धिदम् ॥
पुनर्भक्ते रसाः पञ्च शृणु तेषां समुद्भवम् ॥५०॥

इन दोनों नामों को अलग करके जपने वाला सम्यक्प्रकार सिद्धि को नहीं प्राप्त होता है। फिर भक्ति के पाँचों रसों की भी इन्हीं चारों वर्णों से उत्पत्ति है सो सुनो ॥५०॥

वात्सल्यो जानकी नेत्रा त्सख्यो राघव नेत्रतः ॥
द्वयोश्चैपाद पद्माभ्यां दास्यो जातः शुभानने ॥५१॥
श्रीरामपादपद्मस्य नखेभ्यः शान्त स्वेतकः ॥
शृङ्गारस्तु मयापूर्वं कथितो यद्यथा भवत् ॥५२॥

श्री जानकी जी के नेत्रों से वात्सल्य और श्री राघव जी के नेत्रों से सख्य रस की उत्पत्ति है और इन दोनों के पाद पद्मों से दास्यरस की उत्पत्ति है। हे शुभानने! श्री राम पाद पद्मों के नखों स श्वेत रंग का शान्तरस उत्पन्न होता है और शृङ्गार रस जिस प्रकार स उत्पन्न होता है उसको मैंने पूर्व से ही कह दिया है ॥५१॥५२॥

तेषां षष्ठो मिश्र रसः नील पीताम्बरोद्भवः ॥
श्रीरामसीतयो र्नाम रूपं लीला च धाम च ॥५३॥
येषां विभूतिरंशाश्च कलाया बरसमस्तकम् ॥
श्रीरामसीतयोर्नाम सर्व स्वं मे शुभानने ॥५४

इन सब में एक और छटवाँ मिश्र रस है जो इन सरकारों के नील पीत बस्त्रों से उत्पन्न हुआ है। श्री सीताराम जी के नाम रूप लीलाधाम की बिभूतियों की अंश-कला से समस्त रस और विश्व सब की उत्पत्ति है। हे शुभानने! श्री सीताराम जी का नाम ही मेरा सर्वस्व है ॥५३॥५४॥

तस्यै वच प्रभावेन शङ्करोहं सनातनः ॥
जानक्या राम चन्द्रस्य वर्णरत्नं चतुर्मुखः ॥५५॥

इन्हीं श्री सीताराम नाम के प्रभाव से मैं सनातन शंकर हो गया। श्री जानकी राम चन्द्र जी के नाम में जो चार वर्णरत्न हैं उन्हीं के जप से ब्रह्मा जी चार मुख वाले होकर जगत को उत्पन्न करने में कुशल हुए हैं ॥५५॥

जपेद्वै तत्प्रभावेन जगदुत्पादितुं क्षमः ॥
विष्णुरेव जपे त्प्रीत्या तेनैव पालने क्षमः ॥५६॥

और विष्णु भी उन्हीं चार वर्णरत्नों के प्रेम पूर्वक जप से विश्व के पालन करने में कुशल हुए हैं उसी प्रभाव से मैं भी कल्प के अन्त में विश्व विनाश के लिए समर्थ हुआ हूँ ॥५६॥

तथा तेन प्रभावेन कल्पान्तेऽहं विनाशकः ॥
तथैव तस्य तद्धामा योध्याख्यंहि सनातनम् ॥५७॥

उसी प्रकार श्री सीताराम जी का धाम अयोध्या जी भी सनातन ब्रह्म हैं जिनके वैभव-अंश से भू लोक स्वर्ग लोक और वैकुण्ठ अखन्ड हो गए। ५७।

यस्यांशेनैव भूस्वर्ग वैकुण्ठास्ते प्यखण्डिताः ॥
निर्विकल्पं निराकारं निराधारं भुविस्थितम् ॥५८॥

वह श्री अयोध्या जी इन्द्रियातीत, निराकार (प्राकृतिक आकार से रहित) व निराधार होकर पृथ्वी में स्थित हैं। जो महान्‌तेज से आवृत हुई, मायिक गुणों से रहित; दिव्य गुणों की खानि है ॥५८॥

तेजोवृत्तं गुणातीत ममायकं गुणै र्युतम् ॥
अयोध्या विमला सत्या प्रमोदारण्य मालिनी ॥५९॥

श्री अयोध्या-विमला, सत्या, प्रमोदारण्य, मालिनी ब्रह्म पदा, लोक भिन्ना, सज्जनों से सेव्या, शुक्लवर्णा, ॥५९॥

ब्रह्मपदा लोक भिन्ना सद्भिः सेव्या च शुक्लभा ॥
सप्तदुर्गासप्त ख्याता ध्वजा शिखर मालिनी ॥६०॥

सात आवरण वाली सातों ऊपर के लोकों में प्रसिद्ध, सुन्दर ध्वजा पताका कलश तोरणादि से शोभिता, सुन्दर चित्रवती, मेघालम्बिनी, अनन्ता, ब्रह्म की सत्ताभूता ॥६०॥

चित्रपदा घनालम्बि न्यनन्ता ब्रह्मसंस्तिता ॥
अष्टापदा केलिपूर्णा महाघोषा सुगन्धिनी ॥६१॥

अष्टापदा, विनोद पूर्णा, महान संगीत-नाद व सुगन्ध से भरी सूर्यवंशी वीर पुरुषों से सुरक्षिता, सूर्य सदृश प्रकाशवती, रथ, हाथी, घोड़े आदि सवारियों से परिपूर्णा ॥६१॥

वीरसेव्या भानुमन्ती स्यन्दनेभास्वका कुला ॥
अनाद्यन्ता गुप्तरूपा भावगम्या त्रिमण्डला ॥६२॥

आदि अंत रहिता, गुप्त रूपा, भाव से प्राप्त होने वाली, तीन मण्डल वाली, ब्रह्मा, विष्णु, महेश त्रिदेवों से पूजिता, हवन के धुँआ से भरी, असंख्य वैभववाली ॥६२॥

त्रिदेवार्च्या होम धूम पूरिता संख्य वैभवा ॥
कृत्तमारण्य संविद्धा सर्वालौकिक वैभवा ॥६३॥

कृत्रिम सजे हुए बगीचाओं से और बनों से परिपूर्णा, सर्व लोकों के वैभव वाली इत्यादि नामों वाली, नित्य मुक्त पार्षदों के अधिकार वाली ॥६३॥

इत्यादि नामकं नित्य मुक्तजीवाधिकारकम् ॥
सखण्डैः सप्तद्वीपैश्च नगै नद्यब्धिभिर्युतम् ॥६४॥

नौसातादि खन्डों के सहित सातों द्वीप, पर्वत, नदी और समुद्रों सहित त्रिपाद विभूति के वैभव को धारण करने वाली, परात्परधाम और लीला विभूति का धाम इन दोनों की एक स्वरूपा ॥६४॥

त्रिपाद्वि भूतिकं ब्रह्मलौकिकाख्यं द्वि भूतिकम् ॥
मिथिलायां द्विधाभूतं यथारामस्तु सीतया ॥६५॥

और दूसरे रूप से मिथिला हुई जैसे श्री राम जी का धाम उसी प्रकार श्री सीता जी का धाम, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष स्वरूपा, पूर्ण माधुर्य और पूर्ण ऐश्वर्य से मिश्रिता ॥६५॥

लक्ष्या लक्ष्य स्वरूपं च माधुर्यैश्वर्य मिश्रितम् ॥
वेदो पनिषत्पुराण संहिता स्मृत्ति तंत्रकैः ॥६६॥

वेद, उपनिषद पुराण, संहिता, स्मृति, तन्त्र, काव्य, शास्त्रों से नित्य जिनकी स्तुति की जाती है; श्री सरजू सरिता जी से चारों तरफ घिरी हुई ॥६६॥

काव्यैः शास्त्रै स्तूयमानं समन्ता त्सरितावृतन् ॥
चिन्तामणि कल्पवृक्ष कामगोभी रसैर्युतम् ॥६७॥

चिन्तामणिमय भूमि वाली, कल्पवृक्षों के वनों से शोभिता, कामधेनु गौवों से और सब रसों से पूर्ण इस प्रकार की श्री अयोध्या और श्री मिथिला जी में श्री सीता राम जी का नित्य चरित्र होता है ॥६७॥

एवम्भूत द्वयोर्धाम्नो श्चरितं रामसीतयोः ॥
तद्ब्रह्म लौकिकाख्यंहि त न्नामार्थं वदाम्यहम् ॥६८॥

'ब्रह्मलौकिका' यह जो नाम है इसके अर्थ को मैं कहता हूँ—जिसको वेद भी नहीं जानते केवल भगवत् कृपा पात्र भावुक जन जानते हैं ॥६८॥

वेदा अपि नजानन्ति जानन्ति भावुकाजनाः ॥
महाशया महाभागा रसिकानन्य वृत्तयः ॥६९॥

क्योंकि भगवद्गीता में लिखा है—त्रैगुण्य विषया वेदा: निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन। वेद तीनगुणों तक ही बोलते हैं तुम पर होजाओ। जो रसिक जन महान् आशय वाले, महाभाग शाली, रसिक अनन्य वृत्ति से भजन करने वाले ऐसे भक्तों का हृदय (श्री सीताराम जी के नाम रूप लीला धाम के चरित्रों का घर है।) ॥६६॥

तेषां तु हृदयं तस्य निधानं चरितस्यच ॥
व्यावृतं चाव्यावृतं च द्विविधंधनिनां धनम् ॥७०॥
व्यावृतं लोकाविख्यातं भूमिस्थं नैव कोपिच ॥
लोकाविभूर्य श्रीराम श्चरत्यत्र च व्यावृतम् ॥७१॥

जिस प्रकार धनिकों का धन घर में रक्खा हुआ और बाहर फैलाया हुआ दो प्रकार का होता है उसी प्रकार भक्तों का धन जो श्री रामचरित्र है वह एक तो दिव्य धाम त्रिपाद विभूति में है जिसको इस लोक में कोई नहीं जानता और एक लोक में श्री राम जी के अवतार लेने पर सब भक्तों के सामने किया गया है (जो वेदों और रामायणों में मुमुक्षुओं की सिद्धि के लिए लिखा हुआ प्रसिद्ध है) ॥७०॥७१॥

वेदे रामायणे ख्यातं मुमुक्षूणांच सिद्धये ॥
तद्भिन्नं नित्य सिद्धंचा व्यावृतं ज्ञायतां शिवे ॥७२॥

और दूसरा नित्य पार्षदों की सम्पत्ति त्रिपाद विभूति का चरित्र है जो इस आवतारिक चरित्र से भिन्न है (हे शिवे! श्री राम रसिकाचार्यों के गम्भीर हृदय समुद्र में उस चरित्रा मृतको तुम समझो) ॥७२॥

तद्राम रसिकाचार्य्य हृद्भू गाम्भीर्य्यगर्त्तके ॥
तत्प्रसिद्धाय लोकेस्मिन्नित्यास्त्वा विर्भवन्तिहि ॥७३॥

उसी दिव्य धाम के चरित्र को प्रसिद्ध करने के लिए लोक में नित्य अवतार हुआ करते हैं। (कभी परात्पर पुरुष स्वयं आते हैं और कभी अपने मुमुक्षुओं के उपकार के लिये अपने अंशों से अवतार लेते हैं) ॥७३॥

स्वयंवा स्वस्य चांशेन ह्युपकर्त्तुं मुमुक्षुकान् ॥
तत्प्रभावं नजानन्ति बद्धा बुद्धय विरोधकाः ॥७४॥

बुद्धि से विरोध किए हुए बद्ध-जीव इन अवतारों के चरित्र-प्रभाव को नहीं जानते हैं। (जो भगवान् के आश्रित हुए कृपा पात्र मुमुक्षु जन हैं वे जानते हैं) ॥७४॥

मुमुक्षवो विजानन्ति कृपायुक्ता स्तदाश्रिताः ॥
एवं चाहं सखीवस्या जानक्यानिमिवन्शजा ॥७५॥

हे पार्वती मैं भी इसी प्रकार नित्यधाम में निमिवंशी कन्या श्री जानकी जी की सखी होकर नित्य पार्षदों के मण्डल में अग्रगण्या श्री चारुशीला नाम से हूँ और इस लोक में भी सम्पूर्ण लोकों का गुरू होकर श्री सीताराम जी की उपासना करता हूँ ॥७५॥

नित्यानां मण्डले गन्या अत्राचार्य्योप्युपासकः ॥
मया सह त्वं देवेशि कल्पान्ते मुक्तमण्डले ॥७६॥

इसी प्रकार हे देवेशी ! मेरे साथ तुमभी कल्प के अन्त में प्रेमभक्ति पूर्वक (श्री सीता जी की किंकरी होकर के मुक्त मण्डल में निवास को प्राप्त करोगी) ॥७६॥

सीताया किंकरी भूत्वा प्राप्स्यसे प्रेमभक्तितः ॥
यत्प्रभावस्य चाज्ञानं तदेवाभाव करणम् ॥७७॥

श्री जुगल सरकार के चरित्र प्रभाव को न जानना ही जीवके अभाव का कारण है और प्रभाव को जान लेना ही सद्भावना का कारण है ॥७७॥

यत्प्रभावस्य विज्ञानं तद्धै भावाति कारणम् ॥
तस्माच्छैलात्मजे किञ्चित्त्वां विज्ञापयितुं यथा ॥७८॥

इसलिए हे शैलात्मजे श्री राम जी और श्री जानकी जी के प्रभाव को तुम्हें जनाने के लिए मैंने कुछ थोड़ा कहा ॥७८॥

जानक्या रामचन्द्रस्य प्रभावः कथितोमया ॥
अद्य त्वयाहि यत्पृष्टं तदेव कथयाम्यहम् ॥७६॥

आज तुमने जो कुछ पूछा है वही मैं कहता हूँ। यह बड़ी रसीली दुर्लभ कथा है सावधान होकर सुनो ॥७६॥

श्रूयतां सावधानेन दुर्लभा रसवत्कथा ॥
इति श्री शङ्करकृते श्री अमररामायणे श्री सीतारामरत्नमंजूषायां
श्री सीताराम प्रभाव स्वल्पवर्णनं नाम द्वितीयस्सर्गः ॥२॥

इस प्रकार श्री शंकर जी से रचित श्री राम रत्न मंजूसा नामक अमर रामायण में श्री सीताराम जी का प्रभाव थोड़ा सा वर्णन रूप दूसरा सर्ग पूरा (समाप्त) हुआ ॥२॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां द्वितीयस्सर्गः ॥

शिव उवाच

कैवल्यो नित्यमुक्तश्च मुमुक्षु बद्ध एवच ॥
इत्थं पञ्चविधा जीवाः प्रोक्तावेद विदाम्वरैः ॥१॥

श्री शिव जी बोले—वेद वेत्ता विद्वानों ने कैवल्य, नित्य, मुक्त, मुमुक्षु और बद्ध इन पाँच प्रकार के जीवों का वर्णन किया है ॥१॥

वदामि लक्षणान्येषां प्रोक्तानि मुनिभिर्यथा ॥
लोकाना मुपकाराय त्यागायग्रहणायच ॥२॥

इन पाँचों प्रकार के जीवों में जिनका जैसा लक्षण मुनियोंने कहा है वैसा लोक उपकारार्थ ग्रहण त्याग के लिए मैं वर्णन करता हूँ ॥२॥

नाहं किमप्यकर्तृत्वा त्तदन्यन्नैव किञ्चन ॥
एवं बुध्वा तु कैवल्याः श्रीरामेद्वैत भावकाः ॥३॥

मैं कर्तृत्व (कर्त्तापन) से अतिरिक्त कुछ नहीं हूँ और कर्त्ता से अतिरिक्त भी और कुछ नहीं है इस प्रकार श्री राम जी में अद्वैत भाव रखने वालों को कैवल्य-जीव जानना चाहिए ॥३॥

केचि न्मन्वन्त्युपादानं जगतां ब्रह्मकारणं ।
कैवल्या स्तेपिसंज्ञेया ब्रह्मण्युपाधिवादकाः ॥४॥

कोई लोग ब्रह्म को जगत का उपादान कारण मानते हैं उनको भी कैवल्य-जीव ही जानना चाहिए। वे लोग, ब्रह्म में उपाधि आई है, ऐसा कहते हैं ॥४।

कालत्रयेपि मायाया नसंसर्गो कदाचन ॥
सुग्रीव हनुमन्मुख्यो ण्यनन्ता नित्य सूरयः ॥५ ।

और जिनमें माया का संसर्ग तीन काल में कभी भी नहीं आया है ऐसे हनुमान सुग्रीवादिक अनन्त नित्य पार्षद हैं उनको नित्य-जीव कहते हैं ॥५॥

शरीर त्रयतो मुक्तः श्रीमद्गुरु प्रसाद भाक् ॥
नित्यानां मण्डलेवापि समुक्तो देहवान्नपि ॥६॥

जो स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीरों से मुक्त हो गए हैं, श्री गुरु महाराज के प्रसाद का फल प्राप्त कर गए हैं अथवा नित्य पार्षदों के मण्डल में पहुंच चुके हैं वे शरीर के रहते हुए भी मुक्त-जीव कहे जाते हैं ॥६॥

रहस्यं ब्रह्म लोकानां ज्ञातं गुरू प्रसादतः ॥
स्वस्वरूपे तदाकारः प्राप्तुं वा विरहातुरः ॥७॥

श्री गुरु महाराज की कृपा से भगवान के दिव्य धाम का रहस्य जिनको ज्ञात हो गया है इस प्रकार अपने स्व-स्वरूप में तदाकार हो गए हैं अथवा भगवान के मिलने के लिए विरह से बेचैन हो गए हैं ॥७॥

इह लोकेपि सोमुक्तो जीवं लोकानुकम्पया ॥
स्वस्या चरणानु बोधैर्मु मुक्षू नाप्तु मावसत् ॥८॥

जो लोग इस लोक में भी मुक्त जीवन हैं केवल संसार के जीवों में दया करके अपने आचरणों से मुमुक्षु जीवों को ज्ञान देकर भगवान को प्राप्त कराने के लिए रहते हैं। ८।

सीतारामानुरक्तानांपदं प्राप्तुश्चश्रद्धयेत् ॥
ज्ञात्वा चा चरति प्रीत्या तद्धर्मं समुमुक्षुकः ॥९॥

और जो श्री सीताराम जी के अनुरागियों के दिव्य पद को प्राप्त करने के लिए श्रद्धा रखते हैं और अनुराग पूर्वक उन्हीं के धर्म को जानकर आचरण करते हैं वो मुमुक्षु-जीव कहे जाते हैं ॥९॥

यस्य किञ्चि द्विवेक श्च नात्मनः परमात्मनः ॥
सुखंजीवितु मात्रश्च स बद्धः कथ्यते बुधैः ॥१०॥

जिसको आत्मा व परमात्मा का कुछ भी विवेक नहीं है केवल सुख से जीवित रहना मात्र चाहते हैं उसको विद्वान लोग बद्ध-जीव कहते हैं ॥१०॥

श्रीरामभक्तेष्वरतिः कुटुम्बाशक्तमानसः ॥
विश स्नेही कर्म परः सबद्धः कथ्यते बुधैः ॥११॥

और जो श्री रामभक्तों से द्वेष रखकर संसार कुटुम्ब में आसक्त मन वाले केवल धन से प्रेम करते हैं। विविध प्रकार के धन-उपार्जन-कर्म में लगे रहते हैं उनको भी विद्वान लोग बद्ध-जीव करते हैं ॥११॥

बद्धानाञ्च मुमुक्षूणां समूहो यत्र वर्तते ॥
तन्मानुष्यं लोक इति कथ्यते वेद विज्जनैः ॥१२॥

बद्ध और मुमुक्षु जीवों का समूह जहाँ निवास करता उसको वेद वेत्ता विद्वान मनुष्य लोक कहते हैं ॥१२॥

नित्याना मपिमुक्तानां मण्डलं यत्र वर्तते ॥
तदेव ब्रह्मलोकश्च ते च ब्रह्म स्वरूपकाः ॥१३॥

नित्य और मुक्त जीवों का मण्डल जहाँ निवास करता है उसको दिव्य धाम कहा जाता है और उन्हीं जीवों को ब्रह्म-स्वरूप भी कहा जाता है ॥१३॥

तेषां चरति यद्रामो रसिको जानकी वरः ॥
तदेव चरितं ब्रह्म लौकिकं कथ्यते शिवे ॥१४॥

उन्हीं में श्री रसिकवर श्री जानकी वर श्री राम जी रमण करते हैं। इसी चरित्र को दिव्य धाम का चरित्र कहा जाता है ॥१४॥

रहस्यं स्थान समयो यत्साहित्यं समाजकम् ॥
भजने भावनायां तु ह्येतन्मूल प्रयोजनम् ॥१५॥

भावुकों की भावना में रहस्य, स्थान, समय, साहित्य व समाज इन सबका भजन में मूल प्रयोजन रहता है ॥१५॥

यदुक्तं सूक्ष्म भावेन वर्णयामिसविस्तरम् ॥
वेदानामप्यगम्यं हि तत्कृपा मेहृदिस्थितम् ॥१६॥

भगवान की कृपा से मेरे हृदय में स्थित हुआ वेदों से भी अगम्य जो रहस्य सूक्ष्मभाव कहा जाता है उसको मैं विस्तार सहित वर्णन करता हूँ ॥१६॥

प्रथमं ज्योतिषां वृत्ति यान्ध्यायन्ति सुयोगिनः ॥
तद्बहिः प्रकृति र्ज्ञेया तामावृत मप्राकृतम् ॥१७॥

सबसे पहले योगसाधन में ऊँचे पहुँचे हुए योगी लोग अपनी चित्तवृत्ति से जिस ज्योति का ध्यान करते हैं उस ज्योति के अन्दर ब्रह्म का अप्राकृतिक धाम है और उस ज्योति से बाहर अविद्यामाया प्रकृति है ॥१७॥

ततश्च विरजा नाम्नी नदी चावृत्य शोभते ॥
यस्या स्नानेन जीवानां लिङ्गं देहं विनश्यति ॥१८॥

ब्रह्म ज्योति के भीतर, भगवत धाम से बाहर बीच में एक विरजा नाम की नदी है जो भगवत् धाम को घेरकर शोभित है जिनके स्नान से जीवों का प्राकृतिक स्थूल, सूक्ष्म, कारण ये तीनों लिङ्ग शरीर नाश हो जाते हैं ॥१८॥

सम्यग्भगवतो नित्य धामानि तत्र चोत्तरे ॥
संक्षेपेण प्रवक्ष्यामि यथा यो यत्र चावसत् ॥१६॥

उस बिरजा नदी के उस पार भगवान के जो नित्य धाम हैं उनको संक्षेप से जो जहाँ पर है उन सब को मैं वर्णन करूँगा ॥१६॥

गिरि नारायणाख्योवै पुरी नारायणाव्हयका ॥
वनं नारायणाख्यं च जीवा मुक्ताश्च नित्यदा ॥२०॥

सबसे पहले बिरजा के उस पार एक नारायण नाम के पर्वत से घिरी हुई नारायण नाम की नगरी है जो नारायण नामक बन से घिरी हुई है जिस नगरी में नित्य और मुक्त पार्षद ॥२०॥

असंख्या दिव्यरूपाश्च दिव्याम्बर विभूषिताः ॥
स्वशक्ति सहिता भक्ताश्चतुर्भुज स्वरूपकाः ॥२१॥

जो असंख्य हैं और दिव्य रूप हैं वे दिव्य वस्त्र भूषणों से शोभित हैं वे सब अपनी शक्तियों के सहित चतुर्भुज स्वरूप हैं और श्री नारायण भगवान के भक्त हैं ॥२१॥

तैरेव निवसत्यत्र श्रीमन्नारायणः प्रभुः ॥
पार्षदैर्बहुभिसेव्यो दिव्याभूषण भूषितः ॥२२॥

इन बहुत से पार्षदों से सुसेवित श्री मन्नारायण दिव्य वस्त्राभूषणों से शोभित इस नगरी में निवास करते हैं ॥२२॥

शङ्ख चक्रायुधो दिव्य रत्नमन्दिर मण्डपे ॥
सतयोजन विस्तीर्णे देव्यासह विराजते ॥२३॥

नगर के मध्य में सौ योजन विस्तार वाले मण्डप के भीतर दिव्य रत्न मन्दिर में संख चक्रादि आयुधों को धारण किए अपनी पत्नी श्री महालक्ष्मी जी के साथ विराजे हुए हैं ॥२३॥

ततोदूरं गिरिस्त्वेको ज्योतिर्धामा विराजते ॥
भास्वरा च पुरी तत्र वनश्चैवात्र भास्वरम् ॥२४॥

वहाँ से कुछ दूर और आगे एक ज्योतिर्धामा नामक पर्वत से घिरी हुई भास्वरा नाम की नगरी के बाहर में चारों तरफ भास्वर नाम का बन है ॥२४॥

सहस्र शिरसो देवा तत्र रश्मिभिरावृते ॥
मण्डपे राजते कान्ता लावण्या वामभागके ॥२५॥

उस पुरी में सहस्र सिर के विष्णु विराजते हैं जो कि महाप्रकाशमान मण्डप के अन्दर लावन्यो नाम की अपनी पत्नी को बाम भाग में लेकर विराजे हुए हैं ॥२५॥

अनन्त शक्तिभिः सेव्या दिव्याभूषण भूषिता ॥
सिंहासने महापद्मे प्रभाकोट्यर्क बृङ्हिते ॥२६॥

जो दिव्य वस्त्राभूषणों से भूषित, अनन्त शक्तियों से सेवित हैं। इस प्रकार के सहस्त्रशीर्षा विष्णु करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशमान सिंहासन के मध्य कमल के ऊपर विराजे हैं ॥२६॥

अनन्ता नुचरा दिव्या स्तुवन्ति दिव्य स्तोत्रकैः ॥
शङ्ख नाद मनन्ताश्च कुर्वन्ति तस्य पार्षदाः ॥२७॥

दिव्य स्तोत्रों से अनन्त अनुचर आपकी स्तुति कर रहे हैं। अनन्त पार्षद संख आदि बाजाओं को बजा रहे हैं ॥२७॥

नत्यं कुर्वन्त्यनन्ताश्चो वादयन्ति ततं घनम् ॥
चानद्धं सुषिरश्चैव पुष्पाणि वर्षयन्ति च ॥२८॥

अनन्त पार्षद नृत्य कर रहे हैं इस प्रकार वीणा, मृदंग, झाँझ और आगे वंशी आदिक अनन्त बाजे बज रहे हैं और पुष्पों की बर्षा हो रहा है ॥२८॥

तस्माद्दूरं प्रभा युक्तो प्रभानामा शिलोच्चयः ॥
प्रभावती पुरी तत्र प्रभविष्णु र्महाद्युतिः ॥२९॥

इस भास्वरा नामक नगर से कुछ और आगे महान् प्रकाशमान प्रभा नामक पर्वत से घिरी हुई प्रभावती नाम की नगरी है। वहाँ पर महान् प्रकाशमान् प्रभविष्णु नाम के भगवान विराजते हैं ॥२९॥

सतयोजन विस्तीर्णे मुक्ता रत्न विभूषिते ॥
रत्नतोरण सन्दर्भे मण्डपे राजते स्वयम् ॥३०॥

उस प्रभावती नाम की नगरी में सौ योजन का विस्तार वाला मुक्ता, रत्नों से भूषित; रत्नों के तोरण ध्वजादि से सजा हुआ एक मण्डप है जिसमें वे प्रभविष्णु स्वयं प्रकाशमान हो रहे हैं ॥३०॥

सुप्रभा वाम भागे च शक्तिस्तस्य विराजते ॥
सख्य स्तस्या अशंख्या श्च छत्र चामर हस्तकाः ॥३१॥

वाम भाग में सुप्रभा नाम की शक्ति विराजमान है। अनन्त सखियों से छत्र चवरादिक द्वारा सेवित हैं ॥६१॥

गानं कुर्वन्त्यनन्ताश्च नृत्यन्त्यभिनया न्विताः ॥
काश्चि द्वीणां वादयन्ति काश्चि न्मृदङ्ग वाद्यकाः ॥३२॥

अनन्त सखियाँ गान करतीं हैं। अनन्त सखियाँ हावभाव अभिनय पूर्वक नृत्य करती हैं। अनन्त सखियाँ मृदंग, वीणादि बाजा बजाती हैं ॥३२॥

शङ्ख चक्र गदा पद्म धरा दाशा ह्यशंख्यकाः ॥
छत्र चामरहस्ताश्च ह्यनन्ता स्तं स्तुवन्ति च ॥३३॥

अनन्त दास संख, चक्र, गदा, पद्म को धारण किए हुए छत्र चवरादि से सेवा कर रहे हैं; अनन्त सेवक अस्तुति कर रहे हैं ॥३३॥

अथादूरं गिरिस्त्वेको नाम्ना सोयं महोदयः ॥
महोदया पुरीतत्र स्वर्ण मन्दिर मण्डिता ॥३४॥

इस नगर से कुछ और आगे एक महोदय नामक पर्वत से घिरी हुई, स्वर्ण के महलों से भूषित, महोदया नाम की नगरी है। ३४॥

महोदयं वनं चात्र तेनैव परिवेष्टिता ॥
महाविष्णुः स्वयं चात्र राजते सद्गुणै वृंतः ॥३५॥

जो महोदय नाम के वन से चारो तरफ घिरी हुई है। इस नगर के अधिष्ठात्री देवता भी महाविष्णु अपने सद्गुणों से स्वयं आवृत हैं ॥३५।

दिव्याम्बर धरो दिव्यैभूषणै भूषितः प्रभुः ॥
वामभागे महालक्ष्मी देवी तस्य महाद्युतिः ॥३६॥

जो प्रभु दिव्य वस्त्राभूषणों से भूषित हैं और महा द्युतिमान हैं (प्रकाशमान) महालक्ष्मी वाम भाग में विराजी हैं ॥३६॥

अनन्त शक्तिभिस्सेव्या नानाभूषण भूषिता ॥
द्वौचाष्ट भुज भ्राजन्तौ रत्न सिंहासनेस्थितौ ॥३७॥

जो अनन्त शक्तियों से सेविता, नाना भूषणों से भूषिता हैं। ये दोनों महाविष्णु और महालक्ष्मी आठ २ भुजा वाले हैं और रत्न के सिंहासन पर विराजे हैं ॥३७॥

तस्माद्दूरं विश्वकान्तो नाम्ना रुक्मशिलोच्चयः ॥
पुरं चापि विश्व कान्तं नाम्नाचैववनं तथा ॥३८॥

सर्वत्र काञ्चनीभूमि खचिता राजवेस्मका ॥
सहस्रयोजन प्रान्ता कोटि सूर्य प्रभाधरा ॥३९॥

इस नगरी से आगे और कुछ दूर में विश्वकान्त नामक पर्वत से घिरी हुई विश्वकान्ता नाम की नगरी सर्वत्र स्वर्णमयी भूमि से सुशोभित है जिसमें विविध प्रकार के राजमहल हैं और एक हजार योजन का जिसका घेरा है, ऐसी वह नगरी करोड़ो सूर्यों के समान प्रकाशमान है ॥३८।३९॥

तत्र माणिक्यमुक्ताभि रचितोदिव्य मण्डपः ॥
तोरणैः सत्पताकाभिस्तम्भ श्रेणिभि रचितः ॥४०॥

उस नगर में माणिक्य मुक्तादि से रचित दिव्य मण्डप है जो तोरण पताकादि खम्भ पंक्तियों से सुशोभित है ॥४०॥

तत्र सिंहाशनं मुक्ता नीलरत्न सुनिर्मितम् ॥
योजनैक विशालंच तत्र पद्मासनंपरम् ॥४१॥

इस प्रकार के मण्डप में मुक्ता और नील रत्नों से निर्माण किया हुआ चार कोष का चौड़ा सिंहासन है, जिसके मध्य कमल के आसन पर ॥४१॥

चतुरात्मा वासुदेव स्तेजो राशिर्विराजते ॥
चतुर्भुज श्चिदानन्दो शक्तिश्चापि चतु र्वपुः ॥४२॥

चतुर्व्यूहात्मक वासुदेव दिव्य तेज राशि से घिरे हुए चार भुजा वाले सच्चिदानन्द हैं; इसी प्रकार इनकी चार शरीर वाली चतुर्भुजा शक्ति भी है ॥४२॥

गन्धर्वै र्गायमानश्च दाशीदाश परिवृत्तः ॥
किरीठ कुण्डलोभाति केयूर कङ्कणान्वितः ।४३॥

गंधर्व जिनके गीत गा रहे हैं, दासी दास सेवा कर रहे हैं; कीट, कुण्डल, विजायठ, कंकणादि भूषणों से भूषित हैं ॥४३॥

ततः परं पर्वतैको नाम्ना गोमानकोचकः ॥
गोकुलं मथुरा रुयश्च पुरं वृन्दावनम्वरम् ॥४४॥

इस नगर से आगे एक गोमानक नामक पर्वत से घिरी हुई गोकुल, मथुरा और वृन्दावन नामक श्रेष्ठ नगरी है ॥४४॥

गोप विष्णुर्विभात्यत्र कामुकी कामिनी वृतः ॥
गोपिकानां सहस्त्रेषु रमते स्वेच्छया प्रभुः ॥४५॥

इन तीनों नगरियों में हजारों कामिनी गोपिकाओं से घिरे हुए सदा कामुक गोपविष्णु प्रभु स्वेच्छा पूर्वक रमण करते हुए सुशोभित हैं ॥४५॥

परात्परानन्द रूपः श्रृङ्गार रस दैवतः ॥
सांगीत कुशलो वेणू प्रवीणश्चाद्भुत स्वरः ॥४६॥

जो परात्पर आनन्द स्वरूप श्रृङ्गार रस के देवता हैं। संगीत में बड़े कुशल, अद्भुत स्वर से वेणु (बंशी) बजाने वाले हैं ॥४६॥

प्रमदा प्रेम बद्धश्च रति कोक विशारदः ॥
रासे नट वरोनृत्य न्नारीणांचित्त कर्षकः ॥४७॥

प्रमदाओं के प्रेम से बँधे हुए, कोकशास्त्र में प्रवीण नटवर रासमें नृत्य करते हुए नारियों के चित्त को आकर्षित कर रहे हैं। ४७॥

केकि पक्षा पीड शोभी गुंज्जा भूषण भूषितः ॥
कुञ्जान्तर विहारीच ललना लालितः सखा ।४८॥

मोर-पक्ष धारण किए हुए, गुंजा के भूषणों से भूषित, कुञ्जों के भीतर लालित हुए, ललनाओं के सखा विहार करते हुए शोभित हैं ॥४८॥

आहलादिनी शक्ति राधा भुजारक्त गलोल्लसः ॥
यमुनाग्र तमालाना मन्तरे रमते मुदा ।४९॥

जो अपनी आह्लादिनी शक्ति राधा के गले में भुजा डाल कर यमुना के किनारे तमाल-वृक्षों के वन के अन्दर आनन्द पूर्वक रमण करते हुए आसक्त है ॥४९॥

पेखायो गोप बालास्ते विट चेट विदूषकाः ॥
केचि त्पीठ मर्दका स्च तैः सार्कं वन माविशन् ॥५०॥

और कमी विट, चेटक, विदूषक, पीठमर्दक ये चार भेद के बहुत से सखा गोप बालकों के साथ यमुना तट के बनों में प्रवेश कर विलास करते हैं ॥५०॥

ततः परं पुरी चैका रजता राजते शुभा ॥
रजतं च वनं तत्र बलो विष्णु र्हलायुधः ॥५१॥

इन पुरियों से कुछ और आगे एक रजता नाम की नगरी रजत नामक बन से घिरी हुई है। इस नगरी में बलविष्णु नामक भगवान रहते हैं जिनका हल ही आयुध है ॥५१॥

रेवती राजते तस्य शक्तिः सुन्दर विग्रहा ॥
नाना मणिगणा कीर्णै र्भूषणैर्भूषिता शुभा ॥५२॥

रेवती नाम की शक्ति के साथ सुन्दर विग्रह से विराजते हैं वह शक्ति भी विविध प्रकार के मणि भूषणों से भूषिता अति सुन्दर विग्रहवाली है ॥५२॥

गन्धर्वै र्गायमानो सौ दासी दास परि वृतः ॥
मधुपश्च मधुभोजी अरुणाचैक कुण्डलः ॥५३॥

इस प्रकार वह बलविष्णु भगवान के आगे गंधर्व लोग गा रहे हैं; दासी दास सेवा कर रहे हैं; मधुप और मधु भोजी; अरुनाच व एक कुण्डल ऐसे बहुत से सखा और दासों से सेवित है ॥५३॥

ततो दूरं द्वार वती पुरीरत्न मयी वरा ॥
पञ्च दुर्गै महुर्गै आवृतासद्म समा कुला ॥५४॥

इस नगरी से कुछ दूर और आगे रत्नमयी श्रेष्ठ एक द्वारावती नाम की नगरी है वह पाँच परकोटों और कुछ खाली भूमि से भी घिरी हुई सुन्दर महलों से परिपूर्ण है ॥५४॥

कोटि सूर्य समा कान्तं विस्तरं राज मन्दिरम् ॥
गवाक्ष तोरणा जालैः पताकाध्वज बृंहित तम् ॥५५॥

उस नगर में सूर्य के समान प्रकाशमान झरोखा, तोरण, पताका और ध्वजादि सुन्दर सजावटों से सजा हुआ, बहुत विस्तार वाला एक राज मन्दिर है ॥५५॥

योजनैकं शभागारं रत्नस्तम्भ समाकुलम् ॥
खण्डान्तर विभक्तं च वितानैश्च विराजितम् ॥५६॥

उस राजमन्दिर में चार कोस का चौड़ा एक सभा मण्डप है जो रत्नों की खम्भावली से और विविध खण्ड खन्डान्तर अलग २ वितान, चन्दोवा, परदादिकों से सुशोभित है ॥५६॥

तत्र शङ्ख गदा पद्म चक्रधारी चतुर्भुजः ॥
वासुदेवो वीर विष्णुः राजते राजके गणे ॥५७॥

उस मण्डप में संख, चक्र, पद्म, गदाधारी वासुदेव नामक वीर विष्णु राजकीय गुणों से शोभित विराजे हैं ॥५७॥

रुक्मिणी सत्यभामाद्या देव्यो नन्ता वरोधके ॥
भ्राजन्ते बहुभिर्भोगै भूषणै रत्न मुक्तकैः ॥५८॥

उनके अगल बगल में रुक्मिणी सत्यभामादिक अनन्त स्त्रियाएँ रहती हैं जो अलग २ महलों में निवास करती हैं तथा रत्न मुक्तों के भूषण व वस्त्रों से तथा बहुत से भोगों से सुशोभित हैं ॥५८॥

सदेभै दिग्गजा कारैः स्यन्दनाश्वैः समाकुलम् ॥
राज्ञा राजिभिरावृत्तं राज वर्त्म विराजते ॥५९॥

इस प्रकार की उस द्वारावती नगरी में दिग्गजों के समान सुन्दर बड़े २ हाथी रथ व घोड़े भरे हैं। उस नगर के राजमार्गों में राजाओं की भीड़ लगी है ॥५९॥

नृत्यन्त्यप्सरसोऽनन्ता गायन्ति सुरगायकाः ।
स्तुवन्ति मुनयो देवा नारदो वीण वादकः ॥६०॥

उन वासु देव भगवान के आगे अनन्त अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं; गन्धर्व गा रहे हैं; मुनि, देवता, वीणा बजाने वाले नारदादिक स्तुति कर रहे हैं ॥६०॥

ततः परं भौरकाद्रि स्तत्रवै भौरकापुरी ॥
रत्नमाणिक्य सन्दर्भा भूमिः सर्वत्र शोभना ॥६१॥

इस नगरी के कुछ दूर और आगे भौरक नामक पर्वत से घिरी हुई भौरका नाम की नगरी है जो रत्न माणिक्य मयी सुन्दर भूमि से चारों तरफ अत्यन्त शोभित है ॥६१॥

उच्चकानि विशालानि सद्मानि तैः समाकुला ॥
दुर्गाणि विंशतिस्तस्या भ्राजन्ते सूच्चकानि च ॥६२॥

इस नगर में ऊँचे २ विशाल महल भरे हैं। इस नगर के बीस परकोटा (दुर्ग) हैं जो बड़े २ ऊँचे अत्यन्त प्रकाशमान हैं ॥६२॥

अष्ट योजन विस्तीर्णा नृप वेस्माप्तभूमिका ॥
मण्डप स्तत्र सद्दीप्तः द्वय योजन विस्तरः ॥६३॥

उस नगर में आठ योजन का विस्तार वाला एक राज महल है जिसमें पर्याप्त भूमि के अन्दर दो योजन-विस्तार वाला सुन्दर प्रकाशमान एक मण्डप है ॥६३॥

स्तम्भानां राजयस्तत्र मुक्तास्तोरण संस्कृताः
तिरस्कुर्वन्ति प्रभया स्वस्या सूर्य्य प्रभाशतम् ॥६४॥

उस मण्डप में चारों तरफ खम्भावली है और मुक्ताओं के तोरण लगे हुए हैं जो सैकड़ों सूर्यों के प्रकाश को अपने प्रकाश से तिरस्कृत किए हुए हैं ॥६४॥

तत्र सिंहाशनं तद्व द्रचितं रत्न सञ्चितैः ॥
सिंहासनेतु पद्मैकं सहस्रदलरत्नकम् ॥६५॥

उस मण्डप में विविध प्रकार के रत्नों से रचना किया हुआ एक सिंहासन है। उस सिंहासन के अन्दर रत्नों का बना हुआ एक हजार दलवाला कमल है ॥६५॥

कोमलांशुक विस्तीर्णो राजते नृहरि प्रभुः ॥
स्तुवन्ति बहुशो देवा नरा गन्धर्व राक्षसाः ॥६६॥

उस कमल में कोमल बिछावन के ऊपर नरसिंह नामक प्रभु विराजे हैं जिनकी बहुत से देवता, मुनि, गन्धर्वराक्षस स्तुति कर रहे हैं ॥६६॥

मूर्तिमन्ता स्तु वेदा स्तं स्तुवन्ति भाव पूर्वकाः ॥
नारसिंही शक्ति स्तस्य वाम भागे विराजते ॥६७॥

और चारों वेद मूर्तिमान होकर भाव पूर्वक स्तुति कर रहे हैं। नारसिंही नाम की शक्ति उनके बायें भाग में शोभित है ॥६७॥

दासी दास गणानन्ता नाना साहित्य धारिणः ॥
सेवन्ते भय संयुक्तामरु त्सूर्याग्नि सिद्धयः ॥६८॥

अनन्त दासी दास गण नाना प्रकार के साहित्यों को प्रकट करके सेवा कर रहे हैं तथा वायु सूर्य अग्नि, सिद्ध लोग भी भय से कम्पित होकर सेवा कर रहे हैं ॥६८॥

ततो दूरं गिरिस्त्वेको नाम्ना त्रैविक्रमो वर: ॥
नील रत्न मयो दिव्य फल पुष्प जलै र्वृतः ॥६९॥

इस नगरी से कुछ दूर और आगे एक त्रैविक्रम नामक श्रेष्ठ पर्वत है जो नील रत्न मय दिव्य फले फूले वृक्षों से शोभित है ॥६९॥

मृग पक्षि गणा विष्ट स्तत्र त्रैविक्रमा पुरी ॥
शत योजन विस्तीर्णा मणि सद्म समाकुला ॥७०॥

जिसमें दिव्य मृगपक्षी गण कल्लोल मचाए हुये है। उस पर्वत के शिखर पर सौ योजन विस्तार वाली, मणिमय महलों से भरी हुई त्रैविक्रमा नाम की नगरी है ॥७०॥

राजवेश्म वतीभूमिः सर्व रत्न समाश्रिता ।
योजन द्वय विस्तीर्णं राजमन्दिर मद्भुतम् ॥७१॥

बहुत से राजमहलों से शोभित उस नगरी में सब रत्नों से रचना की हुई भूमि पर दो योजन विस्तार वाला एक अद्भुत राज मन्दिर है ॥७१॥

रत्नस्तंभावलिद्या वृत्त स्त्वर्द्ध योजन मण्डपः ॥
मुक्ता तोरण सं विद्धः पताकाध्वज शोभितः ॥७२॥

जिसमें रत्नों की खम्भावलियों से सुशोभित एक मण्डप है जो दो कोस का विस्तार और मुक्ता तोरण पताका ध्वजादि से सुशोभित है ॥७२॥

तत्रसिंहासनेरत्न खचिते कोमलांशुके ॥
विराजते शक्ति युक्त स्त्रिविक्रमः प्रतापवान् ॥७३॥

उस मण्डप में रत्नों से खचित सिंहासन के अन्दर विराजते हुये, शक्ति से संयुक्त, महान् प्रतापवान त्रिविक्रम भगवान हैं ॥७३॥

द्विभुजो रत्नमाली सत कुण्डल द्वय शोभितः ॥
धृत्वा चामर छत्रादि सेव्य मानो सुसेवकैः ॥७४॥

जो दो भुजा वाले और दोनों कानों में रत्नों के सुन्दर कुण्डल तथा रत्न मालाओं से सुशोभित है। सुन्दर सेवकों के द्वारा छत्रादि से सेव्यमान हैं ॥७४॥

शक्ति स्तस्यापि सद्रूपा वाम भागे समास्थिता ॥
सखीभिः सेव्य मानासा स्वपतेः सेवनेरताः ॥७५॥

उन त्रिविक्रम भगवान के वामभाग में उनकी सद्रूपा नाम की शक्ति विराजी हैं जो अपनी सखियों से सेवित अपने पति की सेवा में रत हैं ॥७५॥

देवै र्वेदैर्मु निभिश्च स्तूयमानः सनातनः ॥
स्वधाम्नि निवसत्येवं त्रिविक्रमो महाप्रभुः ॥७६॥

वे सनातन महाप्रभु त्रिविक्रम भगवान देवता मुनि और वेदों से नित्य स्तुत्य होकर अपने इस धाम में निवास करते हैं ॥७६॥

ततो दूरं पर्वतै को महोच्चो माद्गुरो वरः ॥
पुरश्च माद्गुरं तत्र स्वायतायुतयोजनम् ॥७७॥

इस पुरी से कुछ दूर और आगे एक बहुत ऊँचा माद्गुर नाम का पर्वत है वहाँ पर दस हजार योजन बिस्तार वाली माद्गुर नाम की नगरी में ॥७७॥

नील रत्न कृतै दुर्गै दुर्गमै स्त्रिभिरावृतम् ॥
नीलरत्न कृतागारै श्चतुर्दिक्षु समाकुलम् ॥७८॥

जो नील रत्नों के बने हुए अत्यन्त दुर्गम तीन आवरण दुर्गों (परकोटाओं) से शोभित है जिस नगरी में चार तरफ नील रत्नों के बने हुए महल भरे हैं ॥७८॥

योजनानां पञ्चसतै र्राजते राज मन्दिरम् ॥
निपुणै स्तज्जनैः पूर्णं पताकाध्वज शोभितम् ॥७९॥

उस नगर मे पाँच सौ योजन का बिस्तार वाला एक राजमन्दिर है जो ध्वजा पताकादिकों से सुशोभित है तथा सुन्दर पार्षदों से परिपूर्ण है ॥७९॥

सत योजन विस्तीर्णो मण्डप स्तत्रभूषित. ॥
योजन द्वय विस्तारं सिंहासन मतिप्रभम् ॥८०॥

उस राजमहल के अन्दर सौ योजन बिस्तार वाला सुन्दर भूषित एक मण्डप है। उस मण्डप के भीतर अति प्रकाशमान दो योजन बिस्तार वाला (आठ कोस का) एक सिंहासन है ॥८०॥

कोमले स्वासने तत्र खचिद्रत्न किरीट धृक् ॥
मत्स्यो वै भगवा न्साक्षा द्राजते सत्प्रभाधरः ॥८१॥

उस सिंहासन पर कोमल बिछावन के ऊपर बैठे हुए रत्नों से खचित मुकुट को धारण किए हुए, सुन्दर प्रकाशमान शरीर वाले साक्षात् मत्स्य भगवान विराजे हुए हैं ॥८१॥

चतुर्भुजोऽङ्गदी माली सेव्यमानः सुरासुरैः ॥
गन्धर्वैर्गायमानोऽपि स्वभक्तैः पर्युपासितः ॥८२॥

जो चार भुजा वाले प्रकाशमान बिजायठ और मालाओं को धारण किए हुए, देवतासुर सबसे सेवित हैं; गन्धर्व जिनका गान करते हैं; भक्त जन जिनकी उपासना करते हैं ॥८२॥

श्रृङ्गी साध्वी प्रियातस्य वामे भूषण भूषिता ॥
सिद्धि स्मृद्धि गणैः स्सेव्या दासीभिः परिवारिता ॥८३॥

इस प्रकार के मत्स्य भगवान के वामभाग में सुन्दर भूषणों से भूषित, अत्यन्त प्रिया, साध्वी श्रृङ्गी नाम की शक्ति बिराज मान हैं जो सिद्धि रिद्धि समृद्धि गणों से सेवित तथा दासियों से परिवारिता (घिरी हुई) हैं ॥८३॥

ततोदूरं पर्वतैको कौर्म्यकः कान्तिमान्परः ॥
कौर्म्यः तत्र पुरं चास्ति प्रभाभानु तिरस्कृतम् ॥८४॥

इस नगर से कुछ दूर और आगे एक महान् प्रकाशमान कौर्म्य नामक पर्वत है। वहाँ पर अपने प्रकाश से सूर्य का तिरस्कार करने वाली एक कौर्म्या नाम की नगरी है ॥८४॥

सतानिचाष्ट विस्तारं योजनानां समन्ततः ॥
गांगेया महि सर्वत्र विभक्तागार शोभना ॥८५॥

वह नगरी एक सौ आठ योजन विस्तार वाली तथा चारों तरफ स्वर्णमयी भूमि वाली सर्वत्र अलग अलग विस्तृत महलों से शोभित है। ८५॥

राजमन्दिर प्राविष्टा मणिभिर्बहुवर्णकैः ॥
खचिता भ्राजते भूमि स्तत्र मण्डप मद्भुतम् ॥८६॥

जिस नगर में बहुत रंग की मणियों से रचित राज मन्दिर हैं जिस राजमन्दिर में रत्न खचित भूमि पर एक अद्भुत मण्डप है ॥८६॥

सतयोजन विस्तीर्णं पताकाध्वज शोभितम् ॥
तोरणानां स्तति स्तम्भेष्वनन्तेषु विराजितम् ॥८७॥

जो मण्डप सौ योजन विस्तार वाला ध्वजा पताका तोरणादि से सुशोभित तथा अनन्त खम्भाओं से विराजमान है ॥८७॥

रुक्म वैडूर्य्य मुक्ताभिः खचिते त्रासने वरे ॥
इल्या देव्यापि सहितो राजते कूर्म्मकः प्रभुः ॥८८॥

उस मण्डप में स्वर्ण वैडूर्य्य, मुक्तादि मणियों से खचित श्रेष्ठ सिंहासन पर इल्या देवी के साथ कूर्म भगवान बिराजे हुए है ॥८८॥

सेव्यमानः स्वभक्तानां गणैर्ज्ञेयो गुणैश्च सः ॥
सच्चिदानन्दरूपोसौ भक्तमण्डल रञ्जनः ॥८९॥

जो अपने भक्त गणों से सेवित हैं और दिव्य गुणों से जाने जा सकते हैं। इस प्रकार के वे कूर्म भगवान सच्चिदानन्द स्वरूप हैं और अपने भक्त मण्डल को प्रसन्न रखते हैं ॥८९॥

ततः परं विभात्येको विशदः सौकरो गिरिः ॥
भूषितश्च शिखरैः फलपुष्पैः प्रपूरितः ॥९०॥

इस नगर के आगे कुछ दूर पर एक सफेद रंग का सौकर नामक पर्वत है जो दिव्य शिखरों में फल फूल पूरित दिव्य वृक्षों से सुन्दर भूषित है ॥९०॥

मृगसिंह वराहैश्च संकुलो वारिनिर्झरैः ॥
अधित्यको पत्यका भू श्चतुर्दिक्षुप्रभाधरा ॥९१॥

उस पर्वत में हिरन सिंह वराह आदि जानवर भरे हैं और जल के झरना झर रहे हैं। उस पर्वत के नीचे चारों तरफ की भूमि सुन्दर प्रकाशमान है ॥९१॥

वाराहीश्च पुरी तत्र दुर्गमैः पञ्च दुर्गकैः ॥
आवृता मणि कुड्यैश्च पताकाध्वज शोभिता ॥९२॥

उस भूमि पर वाराही नामकी नगरी है जो पाँच दुर्गम पर कोटाओं (दुर्गों) से आवृत है; मणियों के बने हुए ध्वजा पताकाओं से शोभित है। ९२।

गोपुराणि चतुर्दिक्षु सर्ववर्णेषु सुवृतैः ॥
विराजन्ते रक्षितैश्च दिव्याम्बर विभूषितैः ॥९३॥

उस नगर के परकोटाओं में चारों तरफ के फाटकों पर ऊँचे २ सुन्दर गोपुर बने हुए हैं जिन फाटकों पर रक्षा करने वाले दिव्य वस्त्राभूषणधारी द्वारपाल खड़े हुए पहरा करते हैं। ९३॥

भगवान्वराह स्सा...त्तां पुरी शास्ति च सास्वतीम् ॥
नित्यां प्रीत्या प्रजानां तु भक्तानां सुख वर्द्धनः । ९४

इस प्रकार की उस सनातन पुरी का साक्षात वाराह भगवान शासन करते हैं। जो भगवान नित्य प्रिय प्रजा जनों का और भक्त जनों का सुख बढ़ाने हैं ॥९४ .

वाराही वैष्णवी योगे त्येवं शक्ति त्रयान्वितः ॥
चतुर्भुज श्चिदानन्दः किरीट कुण्डलाञ्चितः ॥९५॥

उन चतुर्भुज सच्चिदानन्द क्रीट कुण्डलादि भूषणों से भूषित भगवान की तीन शक्तियाँ हैं जिनका नाम-वाराही वैष्णवी योगा-इस प्रकार है। ९५।

गन्धर्वाप्सरसो नागास्स्तुवन्ति किन्नराश्रपि ॥
प्रवन्धैर्गान वाद्यै श्च सामसाङ्गित कोद्धतैः ॥९६॥

जिन भगवान के आगे अप्सरा नृत्य करती हैं; गन्धर्व गाते है; नाग और किन्नर अनेक प्रकार के प्रबन्ध गान बाद्यों से अत्यन्त बढ़े हुए सामवेदी संगीत द्वारा स्तुति करते हैं ॥९६॥

एतस्याग्रे दूरगेको भद्रकल्याण नामकः ॥
राजते गिरि रारण्येः संसिद्धो फल वारिभिः ॥९७॥

इस नगर से आगे और कुछ दूर में एक भद्र कल्याण नामक पर्वत है जो चारों तरफ बनों से शोभित; सिद्ध, फल, फूल, वृक्ष तथा झरनाओं से सुन्दर शोभित है ॥९७॥

भद्र कल्याणिका तत्र पुरी तस्यास्ति विस्तरः ॥
योजनानां सप्त शतैः समन्ताच्च परिस्कृतः ॥९८॥

वहाँ पर एक भद्र कल्याणिका नाम की विस्तृत नगरी है जो सात सौ योजन की चारों तरफ विस्तार वाली है ॥९८॥

राजस्थानं तुत्रिशतं विस्तारेण विभक्तकम् ॥
एतस्यैव चतुर्थांशो मण्डपः प्रभयान्वितः ॥९९॥

उस नगरी में तीन सौ योजन विस्तार वाला, सुन्दर विभागों से युक्त, राजस्थान (महल) है। उस राजस्थान के अन्दर पचहत्तर २ योजन का एक प्रकाशमान मण्डप है ॥९९॥

बंशच्छदार्क मणिभिर्निर्मितो रुण रत्नकैः ॥
मुक्ता सुमिश्रितै र्भाति तोरणै खण्डभावितः ॥१००॥

वंशच्छद और सूर्यकान्तादि मणियों से निर्माण किया हुआ और लाल रत्नों तथा मुक्तादिकों से मिश्रित बने हुए तोरणों से जिस मण्डप के प्रत्येक खण्ड सुन्दर भाव पूर्वक रचे गए हैं ॥१००॥

तस्मिन् सिंहासने दिव्ये दीव्यन्तीं भद्रकां पुरीम् ॥
पालयं न्सुखमासीनः कलंकी करुणावरः ॥१०१॥

उस मण्डप में दिव्य सिंहासन के ऊपर विराजे हुए करुणासागर कलंकी भगवान अपने प्रकाश से प्रकाशित करते हुए भद्रकापुरी को पाल रहे हैं ॥१०१

सा तस्य वाम भागेच राजते सद्भिर्भूषिता ॥
किरीट कुण्डल वतः सूर्य्याग्न्यर्क प्रभावतः ॥१०२॥

उन कलंकी भगवान के वाम भाग में सुन्दर भूषणों से भूषित, करुणा नाम की महा लक्ष्मी विराजमान हैं। चन्द्र,सूर्य,अग्नि के समान वालों,कीट कुण्डलादि भूषणोंसे भूषित ऐसे कलंकी भगवान के आगे ॥१०२

गानं कुर्वन्ति गन्धर्वा नृत्यन्त्यप्सरसांगणाः ॥
दासी दास गणा भक्त्या सेवन्ते तौगुणान्वितौ ॥१०३॥

गन्धर्व लोग गान कर रहे हैं; अप्सरागण नृत्य कर रही हैं; दासी दास गण सेवा कर रहे हैं; भक्त गण गुण गा रहे हैं ॥१०३

ततः परं दूरतश्च राजते बौध चिद्गिरिः ॥
बौधकापि पुरी रम्या सर्व सिद्धि समन्विता ॥१०४

इस नगरी से आगे कुछ दूर पर बौद्ध नामक चैतन्य पर्वत है वहाँ पर बौधका नाम की रमणीय पुरी है जो सब प्रकार की सिद्धियों से परिपूर्ण है ॥१०४॥

विस्तारस्तु योजनानां लश त्पश्च शतैर्यथा ॥
योजनानां च तुर्भिश्च राजते राजमन्दिरम् ॥१०५

जिस नगरी का विस्तार पाँच सौ योजन का है। जिस नगर में चार योजन का राजमहल है ॥१०५॥

तस्यार्द्ध योजनं तत्र सभागारं मणि कृतम् ॥
तत्र सिंहासने दिव्ये प्रभुर्बोधः प्रभान्वितः ॥१०६॥

जिस राज महल के अन्दर आधा योजन (दो कोस) का मणिमय सभा मण्डप है जिस मण्डप में दिव्य सिंहासन पर महान प्रकाशमान बोध प्रभु बिराजमान हैं ॥१०६॥

ज्ञाना विज्ञानका द्वे च दक्षिणे वामतः प्रिये ।
बोधकाभि र्बोधकैश्च भक्त्या सेवित पादुकः ॥१०७॥

उन बोध भगवान की ज्ञाना और विज्ञानका नाम की दो शक्तियाँ दक्षिण और वाम तरफ बिराजी हुई हैं। हे प्रिये पार्वती ! उन बोध भगवान की प्रियाऐं बड़ी भक्ति पूर्वक अपने पति की चरण सेवा करती हैं ॥१०७॥

एतस्याग्रे ब्रह्म सूरो गिरिराजो विराजते ॥
•ब्राह्मी नाम्ना पुरी तत्र चतुर्द्वारोति शोभना ॥१०८॥

इस नगरी से आगे एक ब्रह्मसूर नामक पर्वत शोभित है वहाँ पर ब्रह्मी नाम की नगरी चारों दिशा फाटक वाली अति शोभित है ॥१०८॥

नाना मणि कृतं तत्र राजते राज मन्दिरम् ॥
तत्रमण्डप मध्येतु सिंहासन परिच्छदे ॥१०६॥

उस नगर में बिविध प्रकार के मणियों से शोभित राजमन्दिर है। उसके अन्दर एक मण्डप है जिसके मध्य एक सिंहासन है ॥१०६॥

पारस्वधीः प्रभुस्तत्र राजतेगण सेवितः ॥
वामभागे शक्तिरेका धीरमा शोभते परा ॥११०॥

उस सिंहासन के मध्य सुन्दर बिछावन के ऊपर पारस्वधी नामक भगवान अपने गणों से सुसेवित बिराजे हैं। उनके बाम भाग में धीरमा नाम क एक पराशक्ति शोभित है ॥११०॥

एतस्याग्रे शुक्ल साकं बनं पष्पु फलान्वितम् ॥
नानापक्षिगणै र्युष्टं तत्र चैकं सरोवरम् ॥१११॥

इस नगर से आगे शुक्लसाक नाम का वन फूल फलों से भरे वृक्षों से तथा पक्षी और मृगगणों से सुशोभित है। उस बन में एक सरोवर है ॥१११॥

दशयोजन विस्तीर्णं मणि बद्धचतु स्तटम् ॥
तत्रैका वेदिका शुक्ला योजनैक सुविस्तरा ॥११२॥

जो दश योजन बिस्तार वाला, मणियों से सम्बद्ध चारों तट वाला है। उस सरोवर के मध्य में एक वेदिका है ॥११२॥

तस्योपरितु हंसानां मण्डलेराजतेस्वतः ॥
हंशराजो वरटापि समाश्रित विवेकिका ॥११३॥

उस वेदी के ऊपर सफेद रंग के हंसों का एक मण्डल है जिस मण्डल के मध्य में एक हंसों के राजा बड़ी विवेक वाली बरटा नाम की पत्नी से सुशोभित है ॥११३॥

शान्ती शीला तितिक्षाच सन्तोषा सौरभा मती ॥
मेधाद्या हंशनी रूपा शक्तयोपि विचक्षणाः ॥११४॥

उन हंसराज की पत्नी बरटा शक्ति की शान्ति, शीला, तितिक्षा, संतोषा, सौरभा, मति और मेधा आदि बहुत सी शक्तियाँ हंसिनी रूप में सूक्ष्म बुद्धि वाली सखी हैं ।११४।

ताभिः सेव्या तुबरटा समाश्रित विवेकिका ॥
भगवतो हंशस्यैवं नित्यं धाम विराजते ॥११५॥

उन सखियों से सुसेवित श्री बरटा जी महान् विवेक वाली हैं। इस प्रकार हंस भगवान अपने नित्य धाम में विराजे हैं ॥११५॥

ततः परं पर्वते को नीलकान्तोपि नामतः ॥
नीलकान्ती पुरीतत्र स्वर्णदुर्ग समाश्रिता ॥११६॥

वहाँ से आगे एक नील कान्त नाम का पर्वत है। उस पर्वत पर नील कान्ति नाम की नगरी है जो सुवर्ण के परकोटा से शोभित है ॥११६॥

गन्धर्वैं स्तूयमान स्तु हयतुण्डो स्वयं हरिः ॥
वेदैश्चापि स्तूयमानः मण्डपस्थे महासने ॥११७॥

उस नगर में एक मण्डप में महासिंहासन पर बैठे हुए हयतुण्ड नामक भगवान हैं, जो स्वयं विष्णु हैं, गन्धर्व और वेद जिनकी नित्य स्तुति करते हैं ।११७।

सूर्य्यानन्त प्रभे भव्यो भावितांगस्तुभूषणैः ॥
अलं गुणा च गाम्भीर्य्या तस्य वामे च दक्षिणे ॥११८॥

अनन्त सूर्यों के समान प्रकाशमान मण्डप में प्रकाशमान अंगाबभूषणों से शोभित भव्यस्वरूप (कल्याण स्वरूप) भगवान के दक्षिण और वाम भाग में बैठीं हुईं अलंगुणा और गाम्भीर्य्या नाम की दो शक्तियां बिराजमान हैं ।।११८।

राजते शक्ति सौन्दर्य्यै बहु शक्तिभिरावृते ॥
हय ग्रीवो वसत्येवं स्वांपुरीं स्वजनावृतः ।११९॥

और भी बहुत सी शक्तियाँ तथा सौन्दर्य शक्ति से आवृत हुए हयग्रीव भगवान अपने सेवकों से सुसेवित उस अपनी नगरी में बिराजमान हैं ॥११९।

ततः परं गिरि स्त्वेको योगदालभ्य नामकः ॥
आयुर्लोमापुरिस्तत्र राजते सद्म संकुला ।१२०॥

उस नगर के और आगे कुछ दूर पर योगदालभ्य नामक एक पर्वत है; वहाँ पर आयुर्लोमा नाम की नगरी सुन्दर महलों से पूरित हुई शोभित है ॥१२०

धन्वन्तरिस्तु भगवा न्स्वयं राजा विराजते ॥
सुधामुद्रा महाभागा शक्तिरस्य पतिव्रता ॥१२१

उस नगरी के राजा श्री धन्वन्तरि नाम के भगवान स्वयं विराजे हैं और बाम भाग में महाभाग्य-शालिनी सुधामुद्रा नाम की पतिव्रता शक्ति विराजमान हैं ॥१२१॥

सुधाधाम्नि द्वितीयाच ताभ्यां मण्डप मध्यगे ॥
सिंहासने रत्नमये नित्यं भाति जनैर्वृतः ॥१२२॥

उन धन्वन्तरि भगवान के दूसरी बगल में सुधाधामिनी नाम की दूसरी शक्ति विराजमान हैं। इस प्रकार उन दोनों शक्तियों के मध्य रत्नमय सिंहासन पर मण्डप के अन्दर बैठे हुए नित्य अपने पार्षदों से सेवित हुए सुशोभित हैं ॥१२२॥

एतस्याग्रे विप्रकृष्टो नाम्ना लोकध्वजो गिरिः ॥
भक्ति योगापुरी तत्र प्रवृद्धा लक्ष योजना ॥१२३॥

उस नगरी से आगे एक बहुत बड़ा लोकध्वज नामक पर्वत है वहाँ पर भक्तियोगा नाम की पुरी जो एक लाख योजन विस्तार वाली है ॥१२३॥

राजवेस्माद्वृता भूमि स्त्वयुतैकार्क रत्नका ॥
सप्तदुगा पुरीभाव्या सप्त दुर्गं च मन्दिरम् ॥१२४॥

जिस नगर में बहुत से राजमहल शोभित हैं। दश हजार सूर्यों के समान प्रकाशवाली रत्नमयी भूमि है और चारों तरफ सात आवरण नगरकोट (दुर्ग) हैं। इस प्रकार की पुरी के मध्य सात आवरण पर-कोटा (दुर्ग) से घिरा एक सुन्दर राजमन्दिर है ॥१२४॥

सहस्र योजनं भ्राज त्सभागारं सरत्नकम् ॥
शतयोजन विस्तीर्णो मण्डपोमुक्तजालकः ॥१२५॥

उस राज मन्दिर के अन्दर एक हजार योजन विस्तार वाला रत्नमय प्रकाशमान सभा गार है। उस सभागार के भीतर सौ योजन विस्तार वाला मुक्ताओं के जालों से सुशोभित एक मण्डप है ॥१२५॥

तत्र सिंहासनं रुक्मं खचिद्रत्नं प्रकाशवत् ॥
तस्मिन् सिंहासने सीतारामयोर्मूर्त्ति युग्मकम् । १२६॥

उस मण्डप में रत्नों से खचित स्वर्णमयी प्रकाशमान सिंहासन है। उस सिंहासन पर श्री सीताराम जी की मूर्तियों को पधराए हुए ॥१२६॥

सर्वसाहित्य सहितं छत्र व्यजन चामरैः ॥
सराजा सेवते नित्यं पराभक्ति समाश्रितः ॥१२७॥

छत्र व्यजन (पंखा) चवरादिक सर्व साहित्य से सजे हुए श्री सीताराम जुगल सरकार की नित्य सेवा में आशक्त हुए परा भक्ति से परिपूर्ण श्री ऋभु नाम के महाराज ॥१२७॥

एवं तत्र पुरे राज्यं कूर्वन्राजा पृथुर्महान् ॥
उपास्यति सभायां श्री रामंसीतासमन्वितम् ॥१२८॥

इस प्रकार महाराज पृथूजी उस नगर के मध्य राज्य करते हुए अपने नित्य पार्षदों की सभा के मध्य श्री सीता जी के सहित श्री राम जी की उपासना करते हैं ॥१२८॥

नित्याखण्डोदिव्यरूपोसच्चिदानंद विग्रहः ॥
स्वभार्य्या सहितः श्रीमान्दासी दास गणान्वितः ॥१२९॥

वे पृथु भगवान दिव्य रूप नित्य अखण्ड सच्चिदानन्द विग्रह वाले अपनी पत्नी के सहित तथा दासी दास गणों से सेवित हुए सशोभित हैं ॥१२९॥

ततो दूरं पर्वते को ज्ञानकूटो सुवर्णकः ॥
विज्ञानिका पुरी तत्र विद्वज्जन समाकुला ॥१३०॥

इस नगर से आगे एक ज्ञानकूट नाम का स्वर्णमय पर्वत है वहाँ पर विज्ञानिका नाम की नगरी है जिसमें विद्वान जन निवास करते हैं ॥ ३०॥

तत्र चैकं सभागारं राजते रत्नं मण्डपम् ॥
तस्मिन्ननेक मुनिभिर्भगवा न्सास्त्र कारकः ॥१३१॥

उस नगर के मध्य में एक सभा महल है जिसके भीतर मण्डप में अनेक मुनियों से घिरे हुए भगवान शास्त्रकारक ॥१३१॥

व्यासो विराजते चाग्रं गणेशो लिखति स्वयम् ॥
रचयित्वापुराणानि नाना ब्रह्माण्ड गोलके ॥१३२॥

श्री वेद व्यास जी विराजते हैं। उन व्यास भगवान के आगे शास्त्रों को लिखते हुए श्री गणेश जी स्वयं विराजमान हैं इस प्रकार विविध पुराणों की रचना करके अनन्त ब्रह्माण्डों में ॥१३२॥

प्रेरितानि स्वयंयान्ति संकल्पात्तु महात्मनः ॥
वर्णैः सद्विग्रहा येतु तेभूत्वा दिव्य विग्रहाः ॥१३३॥

महात्मा वेद व्यास जी के संकल्प से वे पुराण स्वयं प्रेरित हो जाते हैं प्रत्येक पुराण अपने वर्णों से सद् विग्रहवान होकर हर एक ब्रह्माण्डों में दिव्य रूप से प्रवेश करते हैं ॥१३३॥

एतस्याग्रे मानवाख्यो गिरिः रत्नमयो महान् ।
मानवाख्यं पुरं तत्र सहस्रयोजना वृतम् ॥१३४॥

इस नगर से आगे एक मानवाख्य नामक रत्नों का महान पर्वत है वहाँ पर मानवाख्य नाम की नगरी एक हजार योजन विस्तार वाली है ॥१३४

रत्नदुर्गं रत्नगृहैश्चतुर्दिक्षु समाकुलम् ॥
नरा नार्य्यो दिव्यरूपा सच्चिदानन्द विग्रहाः ॥१३५॥

यह नगरी चारों तरफ रत्नमय परकोटा और रत्नों के महलों से परिपूर्ण है। उस नगर में दिव्य रूप सच्चिदानन्द विग्रह वाले नर नारी निवास करते हैं ॥१३५॥

श्रीरामभक्ति संयुक्ताधनुर्वाणादि संस्कृताः ॥
श्रीरामचरितं सर्वे गायन्ति प्रेम निर्भरा: ॥१३६॥

वे सब धनुष बाँणादिक चिन्हों से संस्कृत, श्री रामभक्ति से परिपूर्ण, श्री राम चरित्र के गान करने में सबके सब प्रेम निर्भर हुवे ॥१३६॥

अर्चयन्तिसदा सीता रामयो स्थाप्य विग्रहम् ॥
उत्सवं नित्यनैमित्यं कुर्वन्ति मेलकादिच ॥१३७॥

श्री सीताराम जी के विग्रहों को स्थापित करके नित्य पूजा करते हैं और नित्य-नैमित्तिक उत्सवों को बड़े धूम-धाम, मेला, कौतुक पूर्वक किया करते हैं ॥१३७॥

सप्त मूर्ति मनुस्तत्र राजा राज्यं करोति च ॥
मन्दिरं तस्य विस्तारै राजते दश योजनैः ॥१३८॥

उस नगर में सप्तमूर्ति नामक मनु राजा राज्य करते हैं उनका वह राजमहल नगर के मध्य दस योजन विस्तार वाला है ॥१३८॥

राज्ञीनां भिन्न सद्मानि विस्तारेण लसन्ति च ॥
प्रत्यागारं पूजयन्ति राज्ञः सीतापतेः प्रभाम् ॥१३९॥

उस राजमहल में रानियों के अलग २ महल विस्तार पूर्वक शोभित हैं। सभी रानियाँ अपने २ महलों में श्री सीताराम जी के विग्रहों की पूजा करती हैं ॥१३९॥

नृत्यं गानं च कुर्वन्ति प्रेम भक्ति परायणाः ॥
राजापि मन्दिरे स्वस्मि न्नेवं सर्वं करोतिच ॥१४०॥

श्री सीताराम जी के आगे नृत्यगान उत्सव पूर्वक प्रेमभक्ति में परायण रहती हैं राजा सप्तमूर्ति मनु भी इसी प्रकार अपने महल में श्री सीताराम जी की भक्ति करते हैं ॥१४०॥

एतस्याग्रे गिरिस्त्वेको राजते गन्धमादनः ॥
उज्वलाहि पुरी तत्र भगवान्गन्धमादनः ॥१४१॥

इस नगर से आगे एक गन्धमादन नाम का पर्वत है वहाँ पर उज्ज्वला नाम की नगरी है। उस नगर में गन्धमादन नाम के भगवान हैं ॥१४१॥

चतुर्वाहु श्चिदानन्दो दिव्य सिंहासने स्थितः ॥
चिदात्मिका शक्तिरेव आनन्दाख्या महाद्युतिः ॥१४२॥

वे चार भुजा वाले, सच्चिदानन्दस्वरूप भगवान दिव्य सिंहासन पर विराजमान हैं और आनन्दा नाम की महाप्रकाशमान उनकी एक सचिदानन्द शक्ति हैं ॥१४२॥

एतस्याग्रे यज्ञ सानुः पर्वतः परिभ्राजते ॥
हविष्या च पुरी तत्र यज्ञविष्णु सनातनः ॥१४३॥

इस नगर से आगे यज्ञसानु नाम का पर्वत है और प्रकाशमान हविष्या नाम की नगरी है। उस नगर में यज्ञविष्णु नाम के सनातन भगवान हैं ॥१४३॥

एतस्याग्रे वीरभद्रो राजते पर्वतो महान् ॥
पुरी तु बहुला नामा काञ्चनी दुर्ग संयुता ॥१४४॥

इस नगर से आगे वीरभद्र नाम का महान् पर्वत है वहाँ पर बहुला नाम की नगरी है जो स्वर्णमयी परकोटा से युक्त है ॥१४४॥

तत्रैव राजते देवि महाशम्भुः सनातनः ॥
महामाया शक्ति रेव त्वयादृष्टा शुभानने ॥१४५॥

हे पार्वती उस नगर में सनातन देव महाशम्भु विराजते हैं और उनके वामभाग में महामाया नाम की एक शक्ति बिराजती हैं; हे सुभानने ! जिनको तुमने देखा है ॥१४५॥

सर्वाण्येतानि धामानि स्वावर्त्य विरजातटम् ॥
विलसन्ति रामरूपाः शक्तिसीता स्वरूपकाः ॥१४६॥

इस प्रकार जो मैंने जिन बहुत से बैकुण्ठ धामों का वर्णन किया है वे सब विरजा जी के उस पार किनारे मण्डलाकार होकर विराजते हैं। इन सब बैकुण्ठ धामों में जितने भगवान हैं वे सब राम रूप हैं और जितनी शक्तियाँ हैं वे सब सीता स्वरूपा हैं ॥४६॥

इति श्री शंकर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां ईश्वरधाम वर्णनोनाम तृतीयः सर्गः ॥३॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां तृतीयो सर्गः

अतोऽग्रे तु समुद्रः स्यात् ततोभूमिः समुद्रका ॥
सप्तावर्णान्येवं च सप्तद्वीपैः स सागरैः ॥१॥

इन सब धामों के मण्डल के अन्दर सातों समुद्रों का मण्डल और सातों द्वीपों का मण्डल है ॥१॥

तेषां मध्ये चानुषङ्गा मुक्ता जीवा वसन्ति हि ॥
भिन्न प्रकृतिभावास्ते नाना वर्णा विचित्रकाः ॥२॥

उन सब द्वीपों में आनुसाङ्गिक मुक्त हुए जीवात्मा निवास करते हैं। वो सब मुक्त हुए आत्माएँ नाना वरण के विचित्र रूप और भिन्न २ स्वभाव वाले हैं ॥२॥

पार्वत्युवाच

मुक्तानां हि कथं भेदा नोक्तं पूर्वं त्वयाहर ॥
मुक्ताः कतिविधा नाथ श्रोतु मिच्छात्र मे प्रभो ॥३॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि हे हर ! मुक्त हुए जीवों का किस प्रकार भेद होता है यह तो आपने अभी तक कभी नहीं कहा है; हे नाथ ! हे प्रभो ! ये कितने प्रकार के होते हैं इसको सुनने की मेरी इच्छा है ॥३॥

शिव उवाच

ज्ञात्वा सिद्धान्त माराध्य प्राप्नुवन्तिरघूद्वहम् ॥
तेज्ञात्वा मुक्तका देवि भाव्य रूप समीपकाः ॥४॥

श्री शंकर जी बोले जो भक्त ठीक सिद्धान्त को जानकर श्री रघुनाथ जी की आराधना करते हैं उन भावित आत्माओं को तो सामीप्य मुक्ति प्राप्त होती है ॥४॥

अनुषङ्गा स्तु बहुसो नाम धाम कथा यथा ॥
तदीयानां दर्शनम्वा सम्भाषण विवादकम् ॥५॥

और जो लोग नाम, धाम, कथा आदिक और प्रसंगों से संयोग वश मुक्त हो जाते हैं अथवा भगवद्भक्तों का दर्शन, सम्भाषण, विवादादि से मुक्त होते हैं, उनको अनुसङ्गिक मुक्त कहा जाता है ॥५॥

अज्ञात्वाहि प्रसंगीनतत्कृन्मुक्ता नुषङ्गिकाः ॥
तद्बोधाय प्रसंग स्तु संक्षेपेण शृणुप्रिये ॥६॥

अथवा प्रसंग को न जानकर ही जो भक्ति करते हैं वो भी भक्त कहे जाते हैं। इस बात को जानने के लिए मैं संक्षेप से एक प्रसंग कहता हूँ, हे प्रिये ! सुनो ॥६॥

कोप्येको रामभक्तस्तु वने स्नातुं नदी तटे ॥
पन्थानं हि परित्यक्त्वा गतो दूरं विविक्त के ॥७॥

कोई एक श्री राम भक्त वन में नदी के किनारे स्नान के लिए रास्ता को त्याग कर दूर एकान्त स्थान में गया ॥७॥

कृत्वास्नानं पूजनार्थं पुष्पाय वन माविशत् ॥
तस्करो प्यागत स्तत्र दैवयोगा त्ततोवनात् ॥८॥

वहाँ पर उसने स्नान करके पूजा के लिए फूल लाने के हेतु वन में प्रवेश किया। दैव योग से उसी वन से उस स्नान के स्थान पर एक चोर आ पहुँचा ॥८॥

दृष्ट्वा पीत स्तत्र चौरो धौत वस्त्रं प्रसारितम् ॥
तदेवादाय शीघ्रं हि पलायमानो बभूव सः ॥९॥

उसने धो के फैलाए हुए पीत वस्त्र को देखा और उसी को लेकर शीघ्र भाग गया ॥९॥

तद्वने विपिने चौरो दूरं गत्वा तदंशुकम् ॥
प्रसार्य्य च तत्र भूमौ सुष्वापैव यथासुखम् ॥१०॥

उस वस्त्र को लेकर वह चोर उस बन में दूर जब पहुँचा और उस भूमि पर उसी वस्त्र को बिछाकर सुख से सो गया ॥१०॥

सुप्तः सन्नहिना दष्टस्ततो मृत्यू मवाप्नुवान् ॥
तद्वस्त्र स्पर्शयोगेन रामधाम गतोपिच ॥११॥

संयोग वस सोये २ सर्प ने उसको काट लिया और उसकी मृत्यु हो गयी। उस वस्त्र के स्पर्श से वह चोर मुक्त होकर श्री राम धाम को चला गया ॥११॥

शृणुदेविपुनश्चैका नौका जन समाकुला ॥
प्रतिकूलाशुगे नैव वारिमग्ना जनैः सह ॥१२॥

हे देवि ! एक प्रसंग और सुनो। एक नौका बहुत से जनों से भरी हुई नदी से पार हो रही थी। वायु की विपरीतता से जनों के सहित नौका डूब गयी ॥१२॥

सा नौः श्रीरामरामेति वर्णैश्च संस्कृता शिवे ॥
तत्प्रभावेन ते सर्वे मुक्ति मीयू रयौगिकाः ॥१३॥

उस नौका में श्री राम राम ऐसे वर्ण लिखे हुए थे, हे शिवे ! उसी प्रभाव से वो सब सांसारिक जीव मुक्ति को प्राप्त हो गए ॥१३॥

एवश्चा नुपङ्गिकाः स्युः सप्त द्वीप निवासिनः ॥
सच्चिदानन्द रूपास्ते प्रजा भावेन संस्थिताः ॥१४॥

इस प्रकार यह अनुसङ्गिक मुक्त जीवों का सातों-द्वीपों में निवास होता है। वे अनुसङ्गिक मुक्त भी सच्चिदानन्द स्वरूप हैं और "श्री राम जी राजा हैं हम प्रजा हैं" ऐसा भाव अपने मन में रखते हैं ॥१४॥

प्रथमे तु श्यामवर्णा दीर्घकायाष्ट बाहुकाः ॥
चतुर्मुखा दीर्घ केशा अरुणाक्षाः स्त्रियोनराः ॥१५॥

सबसे बाहर के पहले द्वीप में रहने वाले मुक्त जीव लम्बे शरीर वाले, आठ भुजा वाले, श्यामवर्ण हैं। इनके चार मुख हैं; लम्बे केश हैं; लाल नेत्र हैं और स्त्री पुरुष रूप में हैं। ५॥

रक्तवस्त्राः सुनिद्राणा नृत्याशक्ता श्चयोषिताम् ॥
कुर्वन्ति पुष्प शृंगारं नालकेरि फलाशनाः ॥१६॥

लाल वस्त्र वाले निद्रा और नृत्य में आसक्त हुए, स्त्रियों के फूल श्रृङ्गार करने में लगे हुए नारियल का भोजन करते हैं ॥१६॥

असौ द्वीप श्चन्द्र संज्ञ स्तदग्रे भद्र संज्ञकः ॥
तस्मिन्नारी नराः सर्वे चतुरास्ता श्चतुर्भुजाः ॥१७॥

इस द्वीप का चन्द्र नाम है और इसके आगे दूसरा 'भद्र' नामक द्वीप है। उसमें सब नर नारी चार मुख व चार भुजा वाले हैं॥ ७॥

पीतवर्णा नील वस्त्रा हीरका भूषणान्विताः ॥
द्राक्षाऽशनाः गायकाश्च दीर्घ केशाश्च सर्वसः ॥१८॥

उनका अंग वर्ण पीला है; वस्त्राभूषण नील व हरित हैं; दाख (मुनक्का) किशमिस भोजन करने वाले हैं और गान में आसक्त लम्बे केश वाले हैं ॥१८॥

पुंगे तृतीये द्वीपेतु पञ्चास्यास्ते चतुर्भुजाः ॥
रक्तवर्णाः पीतवस्त्राः स्वर्णस्य भूषणेरताः ॥१९॥

तीसरे पुङ्ग नामक द्वीप में पाँच मुख और चार भुजा वाले नर नारी लाल वर्ण के पीत वस्त्र स्वर्ण भूषण वाले रहते हैं ॥१९॥

विद्या युक्ताः स्त्री पुरुषा निद्राल्पा श्चायु भोजनाः ॥
दुग्ध पानं प्रकुर्वन्ति रात्रौकामपरायणाः ॥२०॥

वहाँ के पुरुष बड़े विद्वान, अल्प निद्रा वाले, स्वतः तृप्त, दुग्धभोजी और रात्रि में काम परायण रहते हैं ॥२०॥

प्रभे चतुर्थे द्वीपेतु त्रिमुखाह्रस्व बाहुकाः ॥
दीर्घ पादा कटौ स्थूला गौरा नार्य्यो नराश्च ते ॥२१॥

चौथे 'प्रभ' नामक द्वीप में तीन मुख के छोटी भुजा वाले, दीर्घ पाद, मोटी कमर, गौर वर्ण के नर नारी रहते हैं ॥२१॥

मधुरं भोजनं तेषां कुर्वन्ति जल केलयः ॥
नीलवस्त्रा वेणुवादा गायन्ति मधुर स्वरैः ॥२२॥

वे लोग मधुर भोजन करते हैं; जल विहार करते हैं; नील वस्त्र वाले हैं; बंशी बजाते हुए मधुर स्वर से गाते हैं ॥२२॥

पञ्चमेतु हयोत्पत्तिः हय द्वीपः सचोच्यते ॥
बहुसोगिरय स्तत्र सरितो बहुसस्तथा ॥२३॥

पाँचवे 'हय द्वीप नामक' द्वीप में घोड़े उत्पन्न होते हैं। उस द्वीप में बहुत सी नदियाँ हैं ॥२३॥

सुलक्षणारूप वन्त्यो नार्य्यो भूषण स्वल्पकाः ॥
कुशला कोकसास्त्रेपि रूप वन्तो नरा अपि ॥२४॥

उस द्वीप में सुन्दर लक्षण वाले, रूप वाले, अल्प भूषण वाले नर-नारी रहते हैं जो कोकशास्त्र में बड़े कुशल हैं ॥२४॥

लज्जा शीला नरानार्य्यः काम शीलाश्च तेऽपि ताः ॥
परस्परं स्नेह युक्ताः वने क्रीडन्ति सम्वृताः ॥२५॥

वे नर नारी लज्जा और शीलवान, बिलासासक्त, परस्पर स्नेह युक्त, समाज बद्ध होकर बनों में बिलास करते हैं ॥२५॥

गजोत्पत्तिः षष्टकेतु स हि द्वीपो गजाभिधः ॥
वनानि वहुस स्तत्र पर्वति नगराणि च ॥२६॥
स्त्रियः सुगौर वर्णास्युः पुरुषा श्याम वर्णकाः ॥
फला शना दुग्धपानाः कामकेलि विचक्षणाः ॥२७॥

छटवाँ 'गज द्वीप' है जिसमें हाथियों की बहुत उत्पत्ति है। उस द्वीप में बहुत वन, पर्वत और नगर हैं। उस द्वीप के नर श्याम वर्ण के नारी गौर वर्ण की, बहुत सुन्दर हैं उनका भोजन फल व दूध है। काम कलाओं में बड़ा सूक्ष्म बुद्धि वाले हैं ॥२७॥

भोगानन्दः सप्तमस्तु मध्येऽयोध्या तु कौशले ॥
मैथिले मिथिला ख्याता वहुदेशावृता शिवे ॥२८॥

सातवाँ भोगानन्द नाम का जो द्वीप है उसके मध्य में श्री अयोध्या नाम की कौसल नगरी और मिथिला नाम की मैथिल नगरी बहुत से देशों से घिरी हुई हैं ॥ २८।

द्वयोर्धाम्नो रंग भूता लोकाः पाताल स्वर्गकाः ॥
सर्वे दिव्या लोक भिन्ना नच प्राकृत वैभवाः ॥२९॥

हे शिवे ! इन्हीं दो धामों के अंगभूत स्वर्ग-पाताल के सब लोक हैं। सभी दिव्य हैं; प्राकृतिक लोकों से भिन्न हैं और इन लोकों में मायिक वैभव नहीं है ॥२९॥

परं तु सदृशा लोके रुक्ता माधुर्य मण्डले ॥
एवं ब्रह्माण्डकं दिव्यं नित्यमेव सनातनम् ॥३०॥

परन्तु रूप, आकार, माधुर्य सबका एक सदृश है। इस प्रकार यह मायिक ब्रह्माण्ड के अन्दर की और सनातन दिव्य धाम की एक सदृश वर्णन हुआ ॥३०॥

सीताराम विहाराय नाना रत्न समद्धिकम् ॥
स्वर्ग पातालसम्भोगाः स्थ्यायाद्या राम वियोगिकाः ॥३१॥

स्वर्ग और पातालादिक लोकों में रत्न, सम्पत्ति, ऐश्वर्य, स्त्री, पुरुष आदि नियुक्त किए हैं। ये सभी श्री सीताराम जी के ही नाना प्रकार के विहार के लिए हैं ॥३१॥

मेघ विद्यु द्वायू लोकाः वारि लोक स्तथैव वै ॥
अग्नि लोकर्षिलोकौच मुनि लोक स्तथापरे ॥३२॥

मेघलोक, विद्युत लोक, वायुलोक, जललोक, अग्निलोक, ऋषिलोक, मुनि लोक तथा और ॥३२॥

गन्धर्वाणा मप्सराणां काम लोक स्तथापरे ॥
किन्नराणां च यक्षाणा मिन्द्र लोक स्ततो वरः ॥३३॥

गन्धर्वों के लोक, अप्सराओं के लोक, काम लोक, किन्नरों के लोक, यक्षों के लोक इन्द्रलोक तथा इससे भी बड़ा ॥३३॥

सूर लोकश्च पितृणां सत्य स्तुब्रह्मणः परः ॥
एते स्वर्गे तुपाताले नागः कूर्म वराहकौ ॥३४॥

सूर्य लोक, पितर लोक, ब्रह्म लोक ये सब जो स्वर्ग में लोक गिने जाते हैं तथा पाताल में नाग लोक, कूर्मलोक, वराह लोक ॥३४॥

साम्बरो स्वरो कल्पो मात्स्यक श्चेति सप्त वै ॥
पाताले भोगभिन्नास्ते सर्वे रामायभोगदाः ॥३५॥

साम्बर लोक, अवर लोक, कल्प लोक मात्स्यक लोक-ये सात लोक हैं। इस प्रकार पाताल के और स्वर्ग के जितने भी अलग २ नागलोक छोड़ कर हैं ये सब श्री राम जी को सुखभोग देते हैं ॥३५॥

भोगानन्दो रामलोको महदानन्द वारिधिः ॥
संज्ञा स्यादुदधेरस्य महद्रत्नालयेप्ययं ॥३६॥

ये जो श्री राम लोक हैं वे भोग, आनन्द और महानन्द के समुद्र हैं और महान् रत्नाजय नामक जो समुद्र है वह इस श्री राम लोक का समुद्र है ॥३६॥

महापुर्य श्चपुर्यश्च तस्य तीरे वसन्ति याः ॥
इचासुर्य्या राघवस्यैता स्तन्मात्ते गणयाम्यहम् ॥३७॥

इस महा रत्नालय समुद्र के किनारे बड़े २ महानगरियाँ हैं उनमें बड़े २ महापुरुष लोग रहते हैं। ये सब नगरियाँ श्री राम जी की सम्पत्ति ही हैं। हे पार्वती! अब मैं तुमसे इनका भी वर्णन करूंगा ॥३७॥

इति श्री शंकर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीतारामरत्नमंजूषायां त्रिपादस्याति दिव्य द्वीपे स्वर्ग पाताल कथनो नाम चतुर्थ स्सर्गः ॥४॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिनी कृता टीकायां चतुर्थो सर्गः।

॥ पञ्चम सर्गः ॥

प्रथमं दक्षिणे तीरे धरे बाण वती पुरी ॥
बाण नामा पर्वतोपि सर्व सम्पत्ति दायकः ॥१॥

हे पार्वती ! अब मैं तुमको प्रथम दक्षिण किनारे समुद्र तट का बाणवती नामक नगर और बाण नामक पर्वत का भी वर्णन करता हूँ जो सर्व सम्पत्ति को देने वाला है ॥१॥

तस्यां राजा विष्णु भक्तः क्षत्रियो मण्डलेश्वरः ॥
पुरकान्त महाकान्तौ पुत्रौद्वौ तस्य शोभनौ ॥२॥

उसी बाणवती नगरी में विष्णुभक्त नाम का क्षत्रियों का मण्डलेश्वर राजा रहता है। उन विष्णु भक्त राजा के पुरकान्त और महाकान्त नाम के अति सुन्दर दो पुत्र हैं ॥२॥

भ्रातरौद्वौ महावीर सुधीरौ च निमातृकौ ॥
तयोश्चापि द्वौ द्वौ पुत्रौ शस्त्र विद्या विशारदौ ॥३॥

राजा के दो सौतेले भाई भी हैं जिनका नाम-महावीर और सुधीर-है उनके भी दो २ पुत्र शस्त्र विद्या में महान् विशारद हैं ॥३॥

वीरशक्ति वीरकान्तौ महावीरस्य सुन्दरौ ॥
विद्या कान्त सूर कान्तौ सुधीरस्य महोजसौ ॥४॥

महावीर के वीर शक्ति व वीर कान्त नामक दो सुन्दर पुत्र हैं और सुधीर के विद्या कान्त व सूर्य कान्त ये दो महा पराक्रमी पुत्र हैं ॥४॥

राज्ञस्तु विष्णु भक्तस्य पत्नी चन्द्रकरा शुभा ॥
तस्यां जाता सुन्दराङ्गी पुत्री त्वेका सुरञ्जसा ॥५॥

राजा विष्णुभक्त की श्री चन्द्र करा नाम की सुन्दर पत्नी है उनसे सुन्दर अंग वाली एक सुरंजसा नाम की पुत्री उत्पन्न हुई ॥५॥

अवरजो महावीर स्तस्यभार्य्या सुखावली ॥
तस्यां जाता तस्यपुत्री सुकला नाम तापिसा ॥६॥

छोटे भाई महावीर की पत्नी सुखावली नाम की है उन से सुकला नाम की पुत्री हुई जो नाम से ही सुन्दर कलावती है ॥६॥

द्वितीयस्य सुधीरस्य भार्य्या चन्द्रावली वरा ॥
तस्यां जाता कुमार्य्येका तस्य नाम्ना पिचन्द्रमा ॥७॥

दूसरे भाई सुधीर की पत्नि चन्द्रावली नाम की है उन से एक कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम चन्द्रमा है ॥७॥

परस्परं तु ता स्तिस्रो बभूवुः प्रीति संयुताः ॥
क्रीडन्त्यः स्वङ्गणे सर्वाः मातृणां मोद मादधुः ॥८॥

सुरञ्जसा, सुकला व चन्द्रमा ये तीनों कन्याएं परस्पर अत्यन्त प्रेम रखने वाली; आंगन में खेलती हुईं अपनी माताओं को आनन्द देती हैं ॥८॥

प्राप्ते चैवाष्टमे वर्षे तासां सद्वर प्राप्तये ॥
तदा तासां मातृभिश्च योजिताः शङ्करार्चने ॥९॥
राजभिः पूर्वजै स्तस्यविष्णुभक्तस्य पूजितम् ॥
नाम्ना बाणे श्वरंलिंग मुमा युक्तं वरप्रदम् ॥१०॥

इस प्रकार आठ वर्ष बीतने पर इन तीनों के लिए वर की कामना से इन की माताओंने इन तीनों को श्री शंकर जी की पूजा में नियोजित किया (लगाया)। जो शंकर जी बाणेश्वर नाम से विष्णुभक्त के पूर्वज राजाओंमें से परम्परागत पूजित होते आए हैं, पार्वती जी के सहित वर देने वाले उन श्री शंकर जी के लिङ्ग की पूजा करने के लिए ॥१०॥

मातृभिः प्रेरिता स्तिस्रः सखीगण सहस्रकैः ॥
आगत्य मन्दिरे तत्र कुर्वन्ति शिव पूजनम् ॥११॥
सखीनां शिक्षया कृत्वा सपर्य्यां विधिना हिताः ॥
पुनरुप वने तत्र खेलन्ति मृगपक्षिभिः ॥१२॥

माताओं ने तीनों कन्याओं को हजारों सखियों के साथ भेजा। उन तीनों कन्याओं ने श्री शंकर जी के मन्दिर में आकर पूजन किया। सखियों ने शिक्षा देकर पूजा की सब विधि बतायी उसके बाद बगीचा में मृग पक्षी आदिकों से खेलने के लिए आयीं ॥१२॥

एकदा स्वेच्छया तत्र ह्यागतो मुनिनारदः ॥
तं प्रणेमुश्च ता स्तिस्रः सखीनां शिक्षया पुनः ॥१३॥
दत्वा शिषातु देवर्षि र्दृष्ट्वा सर्वाति शोभनाः ॥
पश्यमाना हस्तरेखां स्तासां सखीश्च ह्युक्तवान् ॥१४॥

इस प्रकार किसी समय स्वेच्छा चारी श्री नारद मुनि वहाँ आ पहुँचे। सखियों की शिक्षासे तीनों कन्याओं ने उनको प्रणाम किया। देवर्षि नारद ने अति सुन्दरी उन कन्याओं को देखकर अशीर्वाद दिया और उनकी हस्त रेखाओं को देखने लगे और उनकी सखियों से बोले ॥१४॥

शिवार्चन प्रभावेन पूर्वमासां वरं शिवम् ॥
रामाख्यंलिखितं हस्ते विधिना तद्भविष्यति ॥१५॥

इन तीनों के शिव-पूजन प्रभाव से श्री शंकर जी ने इन कन्याओं के लिए पहले ही श्री राम नामक इनके पति होंगे ऐसा इनके हाथ में लिख दिया है और विधाता के विधान से यही बात सत्य होगी ॥१५॥

एवं मुने र्वचः श्रुत्वा सख्यः तासां महत्तराः ॥
कथं कुत्र हि को रामः पप्रच्छुर्मुनि सत्तम् ॥१६॥

इस प्रकार मुनि के वचन को सुनकर उन सब सखियों में जो प्रधान सखी है उसने मुनि श्रेष्ठ श्री नारद जी से पूछा-कब विवाह होगा? कौन वे राम जी हैं? कहाँ रहते हैं? ॥१६॥

नारद उवाच

चक्रवर्ति महाराजोऽयोध्यायां राजते प्रभुः ॥
तस्य ज्येष्ठ कुमारो सौ श्याम सुन्दर विग्रहः ॥१७॥

श्री नारद जी बोले कि श्री अयोध्या जी म .क राजा श्री दशरथ जी नाम से चक्रवर्ती हैं, उनके ज्येष्ठ कुमार श्याम शरीर वाले बड़े ही सुन्दर हैं ॥१७॥

काम कोठि तिरस्कृत्य राजते रूप सञ्चयः ॥
नित्यं वय किशोरोस्ति नायकः श्रेष्ठ लक्षणैः ॥१८॥

इतने अधिक सुन्दर हैं कि करोड़ों काम। को भी अपने रूप संचय से तिरस्कृत किए हुए हैं। उनकी नित्य किशोरावस्था है; वे नायक लक्षणों में सर्व श्रेष्ठ लक्षण वाले हैं ॥१८॥

एवं तासां सखी मुक्त्वा आकाशं समुनिर्गतः ॥
तास्तु सर्वाः सखीभिश्च सहर्षं गृह मायपुः ॥१६॥

इस प्रकार उन तीनों कन्याओं की सब सखियों में मुख्य सखी को ऐसा कह करके श्री नारद आकाश मार्ग से चले गए। वे तीनों कन्याएं समाज सहित अत्यन्त हर्षित होकर अपने घर आ गयीं ॥१६॥

तद्वृत्तान्तं सखी तासां गृह मागत्य मातृषु ॥
जगाद मुनिना चोक्तं श्रुतं राज्ञा पितस्तथा ॥२०॥

उन सब की उस मुख्य सखी ने यह सारा वृत्तान्त घर में आकर माताओं से कह दिया। माताओं ने मुनि के कहे इस समाचारको अपने पतियों से कह दिया ॥२०॥

वर्षे व्यतीते राजातु तासा मुद्वाह हेतवे ॥
कृत्वाच मन्त्रिसिर्मन्त्रगुरुणा पण्डितेन च ॥२१॥

कुछ वर्ष बीतने पर महाराज ने इन कन्याओं के विवाह के लिए अपने गुरु, मन्त्री और पण्डितों के समाज म विचार किया ॥२१॥

लिखित्वा च स्वहस्तेन सहस्र सतस स्तुतिः ॥
पत्रोदशरथे राज्ञि प्रेपितो हि स्वयं गुरुः॥२२॥

तब अपने हाथ से हजारों प्रकार की स्तुति लिखकर अपने गुरु के द्वारा महाराज दशरथ जी के लिए पत्र भेजा ॥२२॥

आजगामाशु सविप्रोऽयोध्यायां राज मन्दिरे ॥
तत्तासां पत्रिका तेन हस्तेऽयोध्या पते स्तदा ॥२३॥
वाचयित्वा पत्रिकां तु विप्रस्य पूजनं कृतम् ॥
वशिष्ठं पुनराहूय तस्मैस्सर्वं निवेदितम् ॥२४॥

वे ब्राह्मण भी शीघ्र श्री अयोध्या जी में आकर राजमहल में प्रवेश किये। वह पत्र अयोध्या पति महाराज के हाथ में दिया। श्री महाराज दशरथ जी ने उस पत्र को पढ़वाकर सुना और उस ब्राह्मण का पूजन किया। इसके बाद श्री वशिष्ठ जी को बुलवाया और ये सब समाचार सुनाए (कहे) ॥२३-२४॥

पुनः सुमन्तं म ूय ाज्ञा मन्त्रो दृढी कृतः ॥
स्वहस्त पत्रिकं द ा प्रे तो हर्षवा द्विजः ॥२५॥

फिर श्री सुमंत्र जी को बुलवा कर इस निश्चय ो दृढ़ किया और अपने हाथ से एक स्वीकृति पत्र लिखकर उस ब्राह्मण को वापस किया ॥२५॥

सदिनै बहुभिर्विप्रः प्राप्तोवाणवतीं पुरीं ॥
पत्रिकां कौशलेन्द्रस्य विष्णुभक्त करेददौ ॥२६॥

ब्राह्मण भी बड़े प्रसन्न हुए। बहुत दिनों में वह ब्राह्मण बाणवती नगरी पहुँचे और विष्णुभक्त महाराज के हाथ में कोशलेन्द्र महाराज का पत्र दिया ॥२६॥

भ्रातृभिः सहितो राजा वाचयित्वा तु पत्रिकां ॥
वाचिकं श्रावितं सर्व मवरोधे पुरोधसा ॥२७॥

राजा ने भी उस पत्र को भाइयों सहित पढ़ वाया। फिर उपरोहित जी ने इस समाचार को रनिवास में सुनाया ॥२७॥

अर्चयित्वागणेशंहि नार्य्यो गानं च चक्रिरे ॥
सम्बन्ध सदृशं स्त्रीणां पुरुषाणां हि योगिकम् ॥२८॥

राजा ने गणेश जी का पूजन किया और नारियों ने गान किया; वह गान स्त्री और पुरुषों के संबन्ध योग सदृश हुआ ॥२८॥

ततो निमन्त्रिता राज्ञा विष्णुभक्तेन वान्धवाः ॥
मण्डलं स्थातु राजानः कन्यादानमहोत्सवे ॥२९॥

उसके बाद राजा विष्णुभक्त जी ने अपने बन्धु-बान्धवों को निमन्त्रित किया और विवाह-मण्डप बनवा कर कन्यादान का महोत्सव आरम्भ किया ॥२९॥

गानै र्वाद्यै र्दक्षिणाभि र्ब्राह्मणेभ्यः समन्ततः ॥
प्रदत्तं रामचन्द्राय कन्यारत्नं त्रयं शुभम् ।३०॥

गान, बजान, दक्षिणादि से ब्राह्मणों द्वारा श्री रामचन्द्रजी के लिए कन्यारूपी तीनों रत्नों का सुन्दर विधान से दान किया ॥३०।

तासां सुदाये कन्यानां ह्युत्तमानां महीक्षता ॥
सुधेनूना मेक लक्षं वालधी शृंगभूषितम् ॥३१॥

महाराज विष्णुभक्त ने सुन्दर दमादों (जमाइयों) के लिए उत्तम कन्याओं का उत्तम विधि से दान किया और दहेज में एक लाख गाय जिनके पूँछ और सींग उत्तम तरह से भूषित थे ॥३१॥

ककुद्मानां वृषभाना मेकलक्षश्च भूषितम् ॥
अश्वानां च भूषितानां रथाना मेक लक्षकम् ॥३२॥

तथा एक लाख बैल सुन्दर ककु (जूड़) वाले और सुन्दर भूषणों से भूषित दिए। और एक लाख सुन्दर भूषणों से भूषित घोड़ा, वाले रथ ॥३२॥

रथैस्त्रिगुण मश्वानां समूहं रत्न भूषितम् ॥

तथागज समूहं तु दत्तं स्यन्दन सम्मितम् ॥३३॥

और रथों से तीन गुन अधिक अर्थात् तीन लाख सुन्दर भूषणों से भूषित घोड़े व इसी प्रकार हाथियों के रथ-समूह को भी दिया ॥३३॥

भारवाहो ष्यन श्चोष्ट्रा स्तेषां पुष्टातिका सताः ॥

ददौ स दश लक्षाणिभारयुक्तानि वस्तुनाम् ॥३४॥

बोझा ढोने के लिए खच्चर तथा ऊँटों को भी दिया जो उत्तम पुष्ट और श्रेष्ठ थे । इस प्रकार वस्तुओं के बोझाओं से लदे हुए इनकी संख्या दस लाख है ॥३४॥

सहस्रं तु विद्रु माणां भारा एव मवेष्य काः ॥

मुक्तानां तन्मिता भारा अन्येषां मणि जातिनाम् ॥३५॥

एक हजार भार उत्तम विद्रुम मणियों का है और इतना ही मुक्तामणियों का भार तथा अन्य उत्तम जाति के मणियों के भी बहुत भार हैं ॥३५॥

पुनर्विद्रुम मुक्तानां देवछन्दा श्च गोस्तनाः॥

गुत्साधका गुत्सका श्च ददौ दाये नराधिपः ॥३६॥

और विद्रुम तथा मुक्ताओं के सोलरों वाले हार, ६४ लरों वाले हार और ३२ लरों वाले हार, इस प्रकार के हारों के भी भार अपने प्रिय दमादों (जमाइयों) के लिए महाराज विष्णु भक्त ने दिए॥३६॥

विस्तस्य कुरु विस्तस्य भारा शत सहस्रकम् ॥

सुदाये तेन पुत्रीणां दत्ता मुक्ताभिमानिना ॥३७॥

ये सब हार कोई सोलह मासा के, कोई ६४ मासा के बहुत बड़े हार होने पर भी हल्के हैं । इस प्रकार हल्के भूषणों सौ हजार भार अपने सुन्दर जमाई व पुत्रियों के लिए दिए क्योंकि आप की समुद्रतट की राजधानी होने से आप मुक्ता और मणियों के अधिक अभिमानी हैं ॥३७॥

अक्षौहिण्यो पि तिस्र श्च समन्ता त्सज्जनान्विताः ॥

दासीदास गणा एवं पञ्च लक्षैश्च सम्मिताः ॥३८॥

और तीन अक्षौहिणी सेना सब प्रकार के अस्त्र-शस्त्र, वस्त्राभूषणों से सजी हुई तथा बहुत से दास दासी गण दिए । इस प्रकार पाँच लाख की संख्या में सेवकों को दिया ॥३८॥

एवं सर्वं सज्जयित्वा भ्रातृभिः सहित स्तदा ॥

गुरुणा ब्राह्मणैः सद्भिरमात्यैश्च समावृतः ॥३९॥

इस प्रकार महाराज विष्णुभक्त जी अपने भ्राताओं के सहित इस सब दहेज की सम्पत्ति को सुन्दर सजावट पूर्वक देकर के फिर अपने पुरोहित, ब्राह्मण, सज्जन और मन्त्री आदिकों के समाज से घिरे हुए ॥३९॥

प्राप्तो वर निवासे च तं दृष्ट्वा कौशलेश्वरः ॥

बद्धाञ्जलि मदूरं हि समुत्थितः प्रणम्य च ॥४०॥

महाराज कौशलेश्वर जी के दर्शन हेतु जनवासे में गए । दूर से हाथ जोड़कर महाराज को दर्शन किया, प्रणाम किया । महाराज चक्रवर्ति दशरथ जी ने उठकर स्वागत किया ॥४०॥

विष्णुभक्त उवाच

कृतो ह्यनुग्रहोऽयं मयि त्वया महात्मना ॥
मदर्थं ह्यागतो दूरं निर्हेतुक कृपानिधे ॥४१॥

श्री विष्णुभक्त जी बोले कि हे महाराज ! आप बहुत बड़े महात्मा हैं। हे देव ! आपने मेरे ऊपर बहुत बड़ा अनुग्रह किया। इतने दूर देश से मेरे लिए निर्हेतुकी कृपा करने के लिए आए ॥४१॥

प्रति कर्तुं तु हे देव न शक्तः शतं जन्मसु ॥
तव दासस्य दासस्य दासोऽहं बन्धुभिस्सदा ॥४२॥

हे देव ! आप कृपा के समुद्र हैं मैं सौ जन्म में भी आप की इस कृपा का उपकार पूरा नहीं कर सकता। मैं अपने भाइयों के सहित आपके दासों का दास का दास हूँ ॥४२॥

महर्षिस्तु वशिष्टोऽयं मस्माकं कुल दैवतम् ॥
सुमन्तस्तु यथा त्वं मे नात्रास्ति च प्रसंशनम् ॥४३॥

ये महर्षि श्री बसिष्ठ जी महाराज मेरे कुल के देवता हैं। ये महाराज सुमन्त्र भी आपकी ही तरह से मेरे स्वामी हैं। अब मैं आपकी क्या प्रसंशा कर सकता हूँ ॥४३॥

समुद्राय समुद्रस्य जलेनाञ्जलिकं यथा ॥
दीयते तत्प्रकारेणोरी कर्तु हि तवो चितम् ॥४४॥

समुद्र का ही जल समुद्र में ही अञ्जलि देने की तरह से तारण होने के लिये जो कुछ मैंने आपको भेंट किया उसको स्वीकार करना आपको उचित है ॥४४॥

सर्वस्तु स्विदं महाराज चक्रवर्ति नराधिप ॥
सैवमुक्त्वा विष्णु भक्तो बद्धाञ्जलि मुपस्थितः ॥४५॥

हे महाराज ! आप तो चक्रवर्ती राजा हैं। ये सब सम्पत्ति आप की ही है ऐसा कह कर महाराज विष्णु भक्त हाथ जोड़ कर खड़े हो गए ॥४५॥

कौशलेन्द्रो वशिष्टश्च सुमन्तो स्ये सभासदाः ॥
तस्यैवं वचनं श्रुत्वा ममज्जुः प्रेम वारिधौ ॥४६॥

महाराज विष्णु भक्त जी के इस प्रकार के बचनों को सुनकर महाराज श्री कौसलेन्द्र जी व सुमन्त्र जी आदि सभी सभासद प्रेम के समुद्र में डूब गए ॥४६॥

पुनस्तु विष्णुभक्तेन वशिष्टा द्या महर्षयः ॥
पुजिता भूषणै र्वस्त्रैर्वित्तस्य बहु सञ्चयैः ॥४७॥

फिर महाराज विष्णुभक्त जी ने श्री बसिष्ठादि महर्षियों की वस्त्र भूषण व धन के बहुत संचय (समूह) से पूजा की ॥४७॥

अर्घादि षोडशैः कृत्वा भ्रातृभिः सहितः पुनः ॥
सारथावरजानस्य वृत्तिकाभट्टमागधाः ॥४८॥

तथा अर्घ पाद्यादि षोडशी प्रकार से भाइयों सहित पूजा की। उसके बाद सूत मागध भाटादिकों द्वारा जनवासे में स्तुति-उत्सव पूर्वक महाराज जी दशरथ का स्वागत करने पर रथ पालकी आदि बहुत सी सम्पत्तियों को ॥४८॥

यथाभिवाञ्छितं वस्तु ददौ तेभ्यः परं यशा ॥
यूयं तु कौशलेन्द्रस्य सार्वभौमस्य वृत्तिकाः ॥४६॥

जिसने जो माँगा उसको वही वस्तु देकर भाटादिकों को प्रसन्न किया और यह कहा कि आप लोग सार्वभौम चक्रवर्ति-महाराज श्री दशरथ जी के हाथ से इनामादिक सम्पत्ति पाने वाले हैं ॥४६॥

तेभ्यस्त्वहं किं ददामि गृहस्थो धन दुर्बलः ॥
एवञ्चानुनयं श्रुत्य तं प्रशंशुस्तु याचकाः ॥५०॥

इस प्रकार के आप लोगों को गृहस्थावस्था में रहने वाला, धन से दुर्लभ हुआ मैं आपको क्या दे सकता हूँ। इस प्रकार विष्णुभक्त जी की अनुनय- विनय को सुनकर सभी याचक गण आपकी प्रसंसा करने लगे ॥५०॥

सर्वमेवंच सम्पाद्य नरं यानं वरं यशाः ॥
पुनः कौशल नाथस्य शभायां मायया हि सः ॥५१॥

इस प्रकार सब बरातियों को सम्यक् प्रकार संतुष्ट करके फिर श्री विष्णुभक्त जी महाराज श्री कौसलेश जी की सभा में आ पहुँचे ॥५१॥

एतत्काले वैरोधा च रम्यान निवासके ॥
मिष्ठान्न मुपहाराय राज्ञापि प्रेषितं बहु ॥५२॥

इसी समय रनिवास से जनवासे के लिए विविध प्रकार की मिठाई आदि उपहार-सामग्री विष्णु भक्त की महारानी द्वारा भेजा हुआ आ पहुँचा ॥५२॥

पूपकानि मोदकानि दधिभाण्डानि कोटिशः ॥
गर्भमिष्टत्वमिष्टादि फलानाञ्च समूहकम् ॥५३॥

उस उपहार में पूआ, लड्डू, दही गुझिया, फलों, फल आदि समूहों के करोड़ों भान्डे भर भर के आए ॥५३॥

तयाचोपयोजनाय रामं जामातरं तदा ॥
समानेतुं स्व कुमारो वीरकान्तो हि प्रेषित. ॥५४॥

महारानी जी ने अपने कुमार वीरकान्त को-"जमाता श्री राम जी रनिवास में ही कलेऊ करेंगे; बुलाकर ले आओ"—ऐसा कह करके भेजा ॥५४॥

तेन शाकं लक्ष्मणेन सहितो रघुनन्दनः ॥
आजगाम कौतुकेन वीथ्यां वीथ्यां महद्गृहम् ॥५५॥

वीरकान्त के साथ श्री लक्ष्मण जी के सहित श्री रघुनाथ जी गली गली में दुलहा के योग्य उत्सव कौतुक पूर्वक विशाल रनिवास में आए ॥५५॥

तदा च पुर वाशिन्यः स्त्रियो स्यन्त मनोहराः ॥
इति श्रुत्वा प्रधावन्तियथा तत्था त्वराः ॥५६॥

गलियों में कौसलपुरी नगरी की रहने वाली अत्यन्त मनोहर स्त्रियाएँ इस समाचार को सुनकर अत्यन्त शीघ्रता से जो जैसी थीं वैसे ही उठकर चली आयीं ॥५६॥

अट्टेषु च गवाक्षेषु काश्चि द्वारेष्वनावृताः ॥
शृङ्गारमेव कूर्वन्त्यः स्थिताः कट्यम्बरेण वै ॥५७॥
कर्तुमारभ्यसद्भूषां काश्चि चन्द्र शुभाननाः ॥
श्रुत्वातमागतं वीथ्यां प्रधावन्ति यथा तथा ॥५८॥

कोई छत पर से कोई छज्जाओं पर से, कोई फाटकों पर बिना पर्दा के झाँकने लगीं। कोई शृङ्गार ही करती हुई कटि वस्त्र पहनती हुई, कोई भूषणों को पहनती हुई, कोई सुन्दर मुख वाली शृङ्गार करना आरम्भ ही की हुई थी, गलियों में श्री राम जी आ रहे हैं सुनते ही जैसी की तैसी दौड़ आयी ॥५७-५८॥

कचिद्कूर्वन्त्यंगराग मेकस्मिन्नेत्र अञ्जनम् ॥
सा श्रूय तस्या गमनं नदत्तं द्वय के तदा ॥५९॥

कोई अंग में अंगराज लेपन कर रही थी और कोई एक ही आँख में अंजन लगाई हुई थी श्री राम जी आ रहे हैं ऐसा सुनने पर उसने दूसरी आँख में अञ्जन नहीं लगाया और शृङ्गार नहीं किया ॥५९॥

काचिच्छृङ्गार साहित्यं प्रशार्य दर्पणं करे ॥
गृहीत्वे वागतं श्रूय रामं द्वारे प्रधावति ॥६०॥

कोई शृङ्गार करने के लिए शृङ्गार-शामग्री को फैलायी हुई थी; वह हाथ में दर्पण लेकर श्री राम जी आ गए हैं ऐसा सुनते ही द्वार पर दौड़ आयी ॥६०॥

स्व कण्ठे धारितुं काचिद्बाला वाला म्बुज स्रजम् ॥
हस्ते चादाय ह्याकर्ण्य प्रधावतिसमागतम् ॥६१॥

कोई बाला कमल की माला को अपने कण्ठ में पहनने के लिए अपने हाथ में लिए हुई राम जी आ गए हैं सुनते ही दौड़ पड़ी ॥६१॥

पश्यन्तीनां रामचन्द्र मुखं चन्द्र शतप्रभम् ॥
रथ्यां रथ्यां हि नारीणाँ सर्वतो विस्मृता स्मृतिः ॥६२॥

सैकड़ों चन्द्रमाओं को लज्जित करने वाले प्रकाशमान मुख चन्द्र वाले श्री रामचन्द्र जी गली २ में सबके चित्त को चुरा रहे हैं। सब स्त्रियाँ अपने शरीर की व्यवस्था को भूली हुई होगई ॥६२॥

रथ्यासु दक्षिणे वामे स्वस्य रामो रघूद्वहः ॥
हर्म्येषु शशिनां पंक्तिः पश्य न्गच्छति शंकुलम् ॥६३॥

रघु श्रेष्ठ श्री राम जी अपने दाहिना तरह और बाँए तरफ ऊँचे २ महलों के छज्जाओं, छत, फाटकों पर चन्द्रमुखियों के प्रकाशमान मुख चन्द्र पंक्तियों को अत्यन्त सघन देखते हुए चले जा रहे हैं ॥५३॥

विवाह वेश संशोभी श्यामः साञ्जन लोचनः ॥
लक्ता रक्त पाद हस्तो विवेश श्वासुरंगृहम् ॥६४॥

नेत्रों में अञ्जन लगाए हुए चरणों में महावर लगाए हुए, हाथों में मेंहदी लगाए हुए, विवाह के शृङ्गार से सुन्दर शोभित, श्याम वर्ण श्री राम जी ने अपने ससुर के घर में प्रवेश किया ॥६४॥

गायन्त्यश्च हसन्त्यश्च धावन्त्यश्च शुभाननाः ॥
नीराजितुं वरं रामंसर्वा राज कुलस्त्रियः ॥६५॥

सुन्दर मुख चन्द्र वाली राजकुलाङ्गनायें कोई गान करती हुई कोई हँसती हुई, श्री राम जी को द्वार पर से आरती करके स्वागत करने के लिए दौड़ कर आ रही हैं ॥६५॥

कुंकुमाक्षत पुष्पाणि धृत्वा काञ्चन पात्रके ॥
सुवासिन्योपि वृद्धाश्च शीघ्रं प्राङ्गण मागताः ॥६६॥

उनमें कोई वृद्धा हैं, कोई बाला हैं, कोई युवती हैं हाथों में चन्दन, कुंकुम, अक्षत, पुष्प आदि माङ्गलिक पदार्थों से भरे हुए स्वर्ण पात्रों को लेकर शीघ्रता से प्रांगण में आयीं ॥६६॥

नीराजितस्तु जामाता श्वश्रूभिः प्राङ्गणे तदा ॥
महद्वेश्मान्तरे नीतोभ्रातृभि स्सखिभिश्चसः ॥६७॥

इस प्रकार प्रांगण में सासुओं से स्वागत आरती विधान पूर्वक महान् महल में सखाओं व भ्राताओं सहित श्री राम जी आए ॥६७॥

श्वश्रूभिरादृतः प्रेम्णा मोहनाङ्गो रघूद्वहः ॥
सखिभिर्भ्रातृ मिर्युक्तः श्याले र्हास्य विलासिभिः ॥६८॥

सासुओं ने अत्यन्त मनो हर अंग वाले श्री रघुनाथ जी का महत् अनुराग से स्वागत् किया। सखा भाई और सालादिकों के साथ विविध हास्य-कौतुक हुए। ६८॥

नारीणां रसवद्गानं शृण्वन्कृत्वोपभोजनम् ॥
श्वश्रूदत्तानि वासांसिभूषणानि बहूनि च ॥६९॥

नारियों के सुन्दर रसीले गानों को सुनते हुए कलेऊ करके, सासु के दिए हुए बहुत से वस्त्र भूषणों को ॥६९॥

परिधाय सर्वं श्रीमा न्विहरञ्श्वासुरं गृहम् ॥
वरजान निवासेसौ वर वेषे समागतः ॥७०॥

महान शोभा सम्पन्न श्री राम जी धारण करके ससुर के घर में विहार करके वसी दुल्हा के वेष से जनवासे में आ पहुँचे ॥७०॥

तदा हिविष्णु भक्तेन गुण चातुर्य्य शालिना ॥
विज्ञापितौ प्रश्रयाति वशिष्ट कौशलेश्वरौ ॥७१॥

उस समय श्री विष्णु भक्त जी ने अपने गुणों से व बड़ी नम्रता से श्री वसिष्ठ जी और श्री कोसलेश्वर महाराज को यह जनाया कि ॥७१॥

विष्णु भक्त उवाच

कौशलेन्द्र महाराज मदर्थे ह्यपरिश्रमः ॥
जनानुकम्पिना देव कर्तव्यः सततं त्वया ॥७२॥

हे कोसलेन्द्र महाराज मेरे लिए आपने बहुत परिश्रम किया। आप अपने जनों पर अनुकम्पा करने वाले हैं इसी प्रकार आगे भी हमेशा के लिए करते रहना चाहिए ॥७२॥

अन्तः पुरेपिभवतां दर्शनं याति लालसा ॥
पुनः कुत्र कुतः कस्मा द्भवतां योग दुर्लभः॥७३॥

मेरे अन्तः (रनिवास) में भी आपके दर्शन की बड़ी लालसा लगी हुई है आगे कब ? कहाँ ? कैसे ? यह दुर्लभ योग प्राप्त हो सकेगा ? ॥७३॥

एवमुक्त्वा विष्णु भक्तः प्रशंसा पूर्णया गिरा ॥
आश्वासितो वशिष्ठेन रथेनेगृह मागतः ॥७४॥

इस प्रकार राजा विष्णुभक्त जी के कहने पर श्री वसिष्ठ जी ने प्रसंसा पूर्वक वाणी से आश्वासन दिया और विष्णुभक्त जी रथ में बैठा कर अपने घर में लिवा आए ॥७४॥

पुनः सम्पाद्य सामग्रीं तमानेतु नरेश्वरः ॥
स्वयमेव गतः प्रेम्णा सज्जयित्वा तु वाहिनीम् ॥७५॥

महाराज चक्रवर्ती जी को अपने घर में बुलवाने का इन्तजाम व सब सामग्री तैयार करके फिर सवारियों की सजा कर प्रेम पूर्वक लिवा लाने के लिए जनवासे में स्वयं गए ॥७५॥

अत्युक्ते मोचका भ्राजिदभूषांगाः सद्विमान काः ॥
सान्त्वार्क मण्डलाभ्रास्तु चलन्त इव पर्वताः ॥७६॥

सुन्दर भूषणों से भूषित ऊँचे गद्दी तकिया वाले श्रेष्ठ विमान जो सूर्य के समान प्रकाश करने वाले हैं; चलते हुए पर्वतों की तरह ऊँचे॥ ७६॥

बहूनिसुख यानानि सुयमाश्वानि भूषिताः ॥
दासैस्तु चामरै र्सेव्याः गत्या सांगित ताण्डवा: ॥७७॥

और बहुत से सुखपाल उत्तम भूषणों से सजे घोड़ा वाले रथ जिनमें दास लोग चंवर आदिक से सेवा कर रहे हैं। इस प्रकार की सवारियाँ जिनमें संगीत (नाचना, गाना, बजाना) व तायडवादि नृत्यों का भी इन्तजाम है ॥७७॥

खचिता काञ्चना राजताः सु वरूथिनः ॥
उत्तमैर्व हयैर्युक्ताः मुक्ता रत्नविभूषितैः ॥७८॥

और सवारियों के अगल बगल चाँदी स्वर्णादि भूषणों से सुन्दर सजा हुई पैदल सेना व उत्तम घोड़े मुक्ता रत्न रचित भूषणों से युक्त चल रहे हैं। ७८॥

वास्त्राः कम्बला बहुशः सूत सेवक सम्वृताः ॥
संशिष्टा स्तेजसायुक्ता रथाश्च किङ्किणी क्वणाः ॥७९॥

और विविध प्रकार के वस्त्र व कम्बल तथा सूत, मागधादिक सेवकों से घिरे हुए तथा सुन्दर प्रकाश मान तेज से युक्त रथ जिनमें किंकिणियों का कलजाल मचा है। ७९॥

सुश्रूपकांति चतुरा दूताः सद्रूपभूषिताः ॥
छत्रव्यजनान्येके च चामरा श्चापि केचन ॥८०॥

और सुन्दर रूपवान भूषणों से भूषित दूत लोग जो इधर से उधर समाचार देने वाले चतुर हैं और छत्रव्यंजन चंवरादि लिए हुए बहुत से सेवक ॥८०

आमोदीसम्पुटान्येके सौवर्णानिसुसेवनाः ।।
गृहीत्वाः तत्पराः सर्वे स्वर्ण दण्ड धरा अपि ॥८१॥

पान के डिब्बे और मिठाइयों के स्वर्णथार सेवा के लिए, लिए हुए सावधान हैं और बहुतसे सेवक स्वर्ण दण्ड लिए हुए ॥८१॥

एवं सर्वं समादाय तदा वाणिपुरीश्वरः ॥
प्राप्त शीघ्रं तन्निवाशे विकुर्वाणे वरंयशाः ॥८२॥

इस प्रकार सब सामग्रियों के सहित वाँणिवती पुरी के महाराज श्री विष्णु भक्त श्री अवधेश महाराज के समीप पहुँच कर सुन्दर कीर्तिमान् शब्दों से प्रार्थना करते हुए ॥८२॥

वशिष्टादी न्यथायोग्ये वाहनेस्थाप्य सादरात् ॥
तदाज्ञया विष्णुभक्तः हठा द्वै वाहनेस्थितः ॥८३॥

श्री वसिष्ठ आदि सब को यथा योग्य वाहनों पर आदर पूर्वक बैठा करके तथा उनकी आज्ञा पाकर विष्णु भक्त श्री बड़े हठ पूर्वक सवारी पर बैठे ॥८३॥

निवासाद्विष्णुभक्तस्य नृपस्यावास सन्मुखम् ॥
कौशलेशोपि चलति प्र बभूव कुतूहलम् ॥८४॥

इस प्रकार चक्रवती कोसलेश जी अपने निवास स्थान से विष्णुभक्त जी के घर में जाने के लिए चल पड़े। रास्ते में बड़ा कौतूहल हुआ ॥८४॥

भेरीतूर्य पणवानां मूच्छितं श्च महाध्वनिः ॥
रथानां किङ्किणी क्वाणाः गजानां घण्ट नादकाः ॥८५॥

भेरी नगाड़ा, दुन्दुभी, तूरी पणव आदि बहुत से बाजाओं की महान् आवाज उठी तथा रथों की किंकिणी-क्वाण-कल्लोल, हाथियों के घन्टों का नाद ॥८५॥

अश्वानांभूषणक्वाणा: पूरिता दूरतो दिशः ॥
एतत्सर्वमति क्रान्त्वा श्रूयते वन्दिनां गिरः ॥८६॥

घोड़ों की किंकिणी आदि भूषणों का नाद तमाम दिशाओं में दूर तक छाया हुआ है। इस आवाज का भी अतिक्रमण करके बन्दी, भाट आदिकों का स्तुति-आवाज और ऊँची सुन पड़ रही है ॥८६॥

रथ्यायां दक्षिणे वामे समन्ता च्छ्रेणिशोभिताः ॥
भूषितांगा वरा नार्यो महत्प्रासाद द्वारिषु ॥८७॥
तस्थुष्योऽतीव शोभाढ्या दर्शितुं रघुनन्दनम् ॥
बालवृद्ध युवानोऽपि नरा रथ्यां प्रतिस्थिताः ॥८८॥

गलियों में महाराज की सवारी के दाहिने, बाएं तरफ दूर-तक ये सब पंक्तियाँ अति शोभित हो रही हैं और दोनों के ऊँचे महलों के छत, छज्जा, द्वारों पर श्रेष्ठ भूषणों से भूषिता श्रेष्ठ नारियाँ महाराज दशरथ जी के दर्शन के लिए बड़ी शोभा सजायी हुई खड़ी हैं। बाल; वृद्ध; युवा पुरुष भी गलियों में बगल बगल खड़े देख रहे हैं ॥८८॥

अनावृताइ द्वारीपु सुवाशिन्यः शुभानना: ॥
हस्ताम्बुजे समादायस्थिता नारीजनं विधिम् ॥८९॥

महल गली दरवाजों पर भीड़ से कहीं भी जगह खाली नहीं है। छत, छज्जा, द्वारों पर कुँआरी और सुवासिनी सुन्दर मुखचन्द्र वाली स्त्रियाँ हस्त कमलों में आरती के थाल सजो हुए लिए हुई हैं ॥८९॥

पृष्टे पृष्टे तु विरह आग्रे चाग्रे महोत्सवम् ॥
प्रवर्तय न्वरीरामो जगाम श्वासुरंगृहम् ॥९०॥

इस प्रकार महाराजे चक्रवर्ती जी के पीछे २ तो विरह, बेचैनी उत्पन्न हो रही और आगे २ महान् उत्सव हो रहा है। इस प्रकार दुल्हा भेष में श्री राम जी अपने पिता जी के साथ ससुर के घर में गए ॥९०॥

निरीक्ष्य रामचन्द्रस्य मुखचन्द्र मनोहरम् ॥
नाशा मौक्तिक संयुक्तं न केषां शरीर स्मृतिः ॥९१॥

श्री राम चन्द्र जी का मनोहर मुखचन्द्र नासामणि व घुंघराले केश संयुक्त देख करके स्त्रियाँ शरीर की दशा भूल रही हैं। ९१॥

वर्षन्ति पुष्पमाल्यानि लाजा श्च मौक्तिकानिच ॥
निरीक्ष्यन्त्यो गवाक्षेभ्यो नार्यो नारी ज्यराघवम् ॥९२॥

और फूलों की माला लावा (लाजा) व मणि मोतियों की वर्षा कर रही हैं इस प्रकार छज्जाओं पर से श्री रघुनाथ जी की आरती हो रही है ॥९२॥

एवं पुर जनानन्द वर्द्धयै न्वृहित प्रभम् ॥
काञ्चनाद्रि समाकार मुच्च श्रृङ्गाभ्रश्लेषितम् ॥९३॥

इस प्रकार पुरजनों के आनन्द को बढ़ाते हुए महान् प्रकाश का जहां मण्डप बँधा है और पहाड़ के समान ऊँचे मेघों से आश्लेषित (आलिंगित) शिखर वाले ॥९३॥

मणि तोरण संकीर्णं पताकाध्वजभाषितम् ॥
जनैराकुलितद्वारं मङ्गलार्थ विभूषितम् ॥९४॥

मणियों के तोरणों से सघन सजे हुए ध्वजा पताकादिकों से विभूषित महाराज विष्णुभक्त जी के रनिवास महल का द्वार मांगलिक वस्तुओं से भूषित जनों से भरा हुआ है ॥९४॥

दीपौषध्या इवारण्यं दीपमालयैश्च दर्शितम् ॥
ददर्शविष्णु भक्तस्य मन्दिरम् कौशलेश्वरः ॥९५॥

इस प्रकार द्वार पर दुल्हा को दीपमालाएँ दिखायी गई ऐसा प्रतीत होता कि मानों दीप औषधियों (संजीवनी बूटियों) का वन हो। इस प्रकार विष्णुभक्त के मन्दिर को महाराज कोसलेश ने देखा ॥९५॥

स्वस्यप्रासाद सानिध्यं समासाद्य नरेश्वरः ॥
रथा दवतीर्य्य शीघ्रं चतुरः शुश्रुषा कृतौ ॥९६॥

इस प्रकार अपने दरवाजे के समीप रथ को लाकर के श्री अवधेश महाराज को शीघ्र रथ से उतारा। बड़ी चतुरता पूर्वक सेवा की। ९६॥

हस्तावलम्बनं दत्वा गुरुसम्बन्धिनश्च सः ॥
विस्तार्यास्तरणं भूमौ रथादव ततारह ।९७॥

वसिष्ठ जी आदि को भी हाथ का अवलम्ब देकर विस्तरा से बिछी हुई भूमि पर उतारा ॥९७॥

जनेषु क्षम्यतामेव वदत्सु कौशलेश्वरम् ॥
दत्वा हस्तावलम्बञ्च गजादवततार सः ॥९८॥

"जन समूह को आप लोग क्षमा करके भीड़ को हटादें"—ऐसा कह करके महाराज दशरथ जी को हाथ का अवलम्ब देकर के हाथी पर से उतारा ॥९८॥

यावाञ्जन कंकणाढ्यो विवाहोष्णीष शोभितः ॥
नारीजितो वरो रामो द्वाय्यें वस्त्रीगणैस्तदा ॥९९॥

विवाह की पगड़ी बाँधे हुए अञ्जन कङ्कन महावर आदि वैवाहिक चिन्हों से शोभित दुल्हा श्री राम जी को स्त्री समाज ने दरवाजे पर ही आरती की ॥९९॥

सुगन्धावारिणा सिक्ते मार्गे पुष्पा वकीर्णिते ॥
महार्हे वसने पादौ दधन्स गुरुणा समम् ॥१००॥

पुष्पों के पाँवड़े सुगन्ध जल से सिंचित मार्ग से बिस कीमती बस्त्रों पर पाँव देकर गुरु महाराज के साथ ॥१००॥

सामात्येन पित्रा चैव वाग्णेश्वर पुरः सरः ॥
वर स्तद् भोजन स्थानं विवेशान्तः पुरायनम् ॥१०१॥

तथा मन्त्री पिता जी के साथ व आगे २ विष्णुभक्त महाराज के चलते हुए इस प्रकार श्री राम जी अन्तः पुर के भोजन स्थान में पहुँचे ।१०१॥

तदा च स्वर्ण केपात्रे पूज्यानां स्वयमेवहि ॥
प्रीत्या प्रक्षालितौ पादौ विष्णुभक्तेन धीमता ॥१०२

वहाँ पर पहले स्वर्ण के पात्रों से श्री विष्णुभक्त जी ने स्वयंहि प्रेम पूर्वक पूज्यों के चरण धोये ॥१०२॥

विकुर्वाणो विष्णुभक्तः पीठानि स्वर्णकानि तु ॥
यथोचितं सुविन्यस्ययुक्तानि कोमलांशुकैः ॥१०३॥

क्रमशः चरण धोने पर यथा योग्य स्वर्ण सिंहासनों पर सबको बैठाया जो सिंहासन पर उचित यथा योग्य कोमल बस्त्र बिछे हुए हैं ॥१०३॥

बध्वाञ्जलिं तु हे देव वरद प्रवर प्रभो ॥
इति सम्भास्यासनेतु वशिष्ठः स्थापितो गुरुः ॥१०४॥

इस प्रकार बड़े बुद्धिमान श्री विष्णुभक्त जी ने सबको अलग २ बैठाकर बड़े स्नेह से हाथ जोड़कर सबका सम्मान किया और श्री वसिष्ट जी से बोले कि हे महाराज आप तो महान् बर दान देने वाले हैं। इस प्रकार आदरणीय शब्द बोलकर गुरु वसिष्ठ जी को बैठाया ॥१०४॥

ततः पित्रा समात्येन सहरामो वरो वरः ॥
विनीय विष्णु भक्तेन स्थापितः स्वासनेऽशुके ॥१०५॥

फिर विष्णुभक्त जी ने पिता व मन्त्रियों के सहित श्रेष्ठ दुल्हा को कोमल वस्त्र बिछे हुए सिंहासनों पर बैठाया ॥१०५

इत्यन्तरे चन्द्रकरा राज्ञी वात्सल्य निर्भरा ॥
स्वस्याः सखीमुवाचेति शृणु मे वचनं यथा ॥१०६

इसी बीच में महारानी श्री चन्द्रकरा अम्बा जी वात्सल्य स्नेह से भरी हुई अपनी सखी से बोलीं—हे सखी ! मेरा वचन सुनो तो ? ॥१०६॥

श्रीचन्द्रकरी उवाच

इमौ राज कुमारौ तु मातृ हस्तेन भोजनं ॥
बहुभिर्लालनै रेवं कुर्वाणौ स्वेच्छया यदा १०७॥

ये दोनों राजकुमार माता के हाथ से बहुत प्रकार के लाड़-दुलारों द्वारा इच्छा पूर्वक भोजन करने वाले हैं ॥१०७॥

लज्जया बहूनां मध्ये किमश्नीतो शुभाननौ ॥
अत्रानयस्व केनापि प्रकारेण विचक्षणे ॥१०८॥

इन बड़े लोगों की बहुत भीड़ में ये कुमार लज्जा के मारे क्या भोजन कर सकेंगे ? इस लिए हे बुद्धिमती ? किसी प्रकार से इन दोनों कुमारों को अन्तः पुर रनिवास में ले आओ ॥१०८॥

वात्सल्य हृदयाराज्ञी सखीमुक्तवतीयदा ॥
सख्या तद्ज्ञापितं राज्ञि विष्णुभक्ते समस्तकम् ॥१०९॥

वात्सल्य-स्नेह में भरी हुई महारानी के इतना कहते ही वह सखी महाराज विष्णुभक्त जी से सब कह दिया ॥१०९॥

कर्णे तदुक्त वान्राजा वशिष्ठं सर्व सम्मतम् ॥
गुरुणा प्रेरितो रामो लक्ष्मणेन समंगतः ॥११०॥

श्री विष्णुभक्त जी ने भी महाराज श्री वसिष्ठ जी के कान में सब बात कह दी। गुरु महाराज ने लक्ष्मण जी सहित श्री राम जी को महारानियों के पास भेज दिया ॥११०॥

पुत्र वात्सल्यसंयुक्ता सा रामेपिच लक्ष्मणे ॥
प्रस्थाप्य स्वासने दिव्ये तौ स्वयं चापि सन्निधिम् ॥१११॥

पुत्र वात्सल्य में भीजी हुई महारानी जी दिव्य कोमल सिंहासन बिछे हुए आसनों पर श्री राम जी और लक्ष्मण जी को बैठाकर स्वयं भी समीप में बैठ गयीं ॥१११॥

प्रस्थीय व्यजनं हस्ते गृहीत्वासहितं यथा ॥
अकारिभोजनं रुच्यं षड्रसञ्च चतुर्विधम् ॥११२॥

विविध प्रकार के व्यंजनों का परसवा कर अपने हाथ से षटरस चार प्रकार के ग्रास उठाकर पवाने लगीं ॥११२॥

श्रीचन्द्रकरोवाच

श्रीराम वत्स हेतात धन्यास्ते जननीस्वयम् ॥
धन्या अपि तु सर्वाहि त्वां पुत्रं लक्ष्मणान्वितम् ॥११३॥

और बोलीं कि हे वत्स ? हे तात ? हे राम ? आपकी माता धन्य और सब माताएँ भी धन्य हैं जो आप और इन श्री लक्ष्मण जी को पुत्र-रूप में पा गयीं हैं ॥११३॥

पूर्णचन्द्राननं शीलं मन्दस्मित मनोहरम् ॥
य त्पश्यन्त्यो लालयन्ति तत्पुरा सञ्चितं तपः ११४॥

जो वे आप कि शरद् पूर्ण चन्द्र सदृश मुख चन्द्र को और सुन्दर सुशीलता पूर्वक मनोहर मुसुक्यान को देखतीं हैं तथा लाड़ प्यार करती हैं। अहो ! उन्हों ने पहले जन्म में कोई महान तप किया था ॥११४॥

आसां हि कुल पूज्यानां पुत्रीणां भाग्य तोमया ॥
लब्धमेतत्क्षणं तत्तु पुनरेववियोगजम् ११५॥

मैंने भी इन उत्तम कुल पूजिता कन्याओं के भाग्य से इस सुख को एक क्षण के लिए प्राप्त किया है फिर मैं इस वियोग रूपी अग्नि में जला करूँगी ॥११५॥

यदेत्युक्त्वा चन्द्रकरा अवदश्रु मुखास्थिता ॥
प्रबोधिता च रामेणभाववश्येन मातृवत् ११६॥

इतना कहते ही चन्द्रकरा अम्बा आँखों से आँसुओं की धारा बहाने लगीं। भाव के वश में रहने वाले श्री राम जी ने माता की तरह से सास को भी प्रबोधित किया ॥११६॥

श्रीरामोवाच

मातः कस्मा देतदून मन्यसे हृदये परम् ॥
वारम्वार माग मिष्ये लोकरीत्यापि दूरतः ॥११७॥

श्री राम जी बोले कि हे अम्बा ! आप अपने हृदय में इतनी दीनता को क्यों धारण कर लिये है ? मैं तो लोक रीति से भी दूर होने पर भी बार २ यहाँ आऊँगा ॥११७॥

एवं सुवचनैः श्वश्रू वात्सल्य हृदयापरा ॥
भाववश्येन रामेण वारम्वारं प्रतोषिता ॥११८॥

इस प्रकार के सुन्दर वचनों से वात्सल्य भाव भरे सास के हृदय को भाव के वश में रहने वाले श्री राम जी ने वारम्वार संतुष्ट किया ॥११८॥

तदा वस्त्रैर्भूषणैस्सा भूषयित्वा सुभ्रातरौ ॥
चन्द्रकराम्वहस्तेन प्रेषितौ नृपसन्निधिम् ॥११९॥

उसके बाद दिव्य वस्त्र भूषणों से दोनों भ्राताओं को अपने हाथ से भूषित करके महाराज दशरथ जी (पिता जी) के पास भेज दिया ११९॥

लक्षावधिसूपकाराः काञ्चन पात्रहस्तकाः ॥
गृहाणेदं गृहाणेद मितिसब्द प्रपूरितः ॥१२०॥

लाखों की संख्या में रसोइया लोग स्वर्ण-पात्रों को हाथ में लेकर महाराज चक्रवर्ती जी के समाज में भोजन कराते हुए ये पदार्थ आप लीजिए, ये पदार्थ आप लिजिए इस प्रकार के शब्दों का गूँज मचा रहे हैं ॥१२०॥

आदरेणाति सर्वेषां कारयामास भोजनम् ॥
तुचर्विधं रसैः षड्भिः पात्रे काञ्चके शुभे ॥१२१

इस प्रकार बड़े आदर से सुन्दर स्वर्ण पात्रों में चारों प्रकार के षट रस भोजनों को परस कर बड़े आदर से सबको भोजन कराया ॥१२१॥

असंख्येषु जनेष्वेवं नेदं लब्धं मयेति वाक् ॥
समाजे कौशलेन्द्रस्य मुखे कस्यापि न श्रुतम् ॥१२२॥

भोजन करते हुए असंख्य जनों के होने पर भी किसी ने यह नहीं कहा—"कि मुझे यह चीज नहीं मिली" ऐसा कोई भी शब्द महाराज चक्रवर्ती जी के समाज से कान में नहीं आया ॥१२२॥

भोजनानन्तरं राज्ञा माला सौगन्धि वीटिकाः ॥
दत्ता याव ज्जना तेभ्यो यथायोग्यादरेणवै ॥१२३॥

भोजन के बाद महाराज विष्णुभक्त जी ने सब को फूल माला पहनायीं, अतर (इत्र) लगाया और यथा योग्य आदर से जितने भी जन थे सब को पान दिए । १२३॥

भोजनै भूषणै र्वस्त्रै विष्णुभक्तेन भावत: ॥
पूजितोऽसौ कौशलेन्द्रः पुनरेनं प्रशंशयत् ॥१२४॥

इस प्रकार भोजन वस्त्र भूषणों से भाव पूर्वक श्री विष्णुभक्त जी ने कोसलेन्द्र महाराज की पूजा की तथा महाराज दशरथ जी ने भी राजा विष्णुभक्त की प्रसंसा की ॥१२४॥

पुत्रस्तेनानुव्रजता गुरु मन्त्रि युतेन च ॥
गुरु मन्त्रि समेतोऽपि सुनिवासं समागतः ॥१२५॥

गुरु और मन्त्री के सहित श्री चक्रवर्ती जी जनवास मे आए साथ में श्री राम व लक्ष्मण जी भी आए तथा पहुँचान के लिए गुरु और मन्त्री तथा पुत्र के साथ राजा विष्णुभक्त भी जनवासे में आए ॥१२५॥

कौशलेश उवाच

भो वाणपुर राजेन्द्र कृतवांश्च परंश्रमम् ॥
गमनं क्रियतां शीघ्रं त्वत्कृतैः स्तोषिता वयम् ॥१२६॥

महाराज कोसलेन्द्र जी बोले कि हे बाणपुर राजेन्द्र ! आपने बहुत बड़ा परिश्रम किया; हम सब को अत्यन्त संतुष्ट किया । अब हम लोगों के लिए बिदाई का इन्तजाम शीघ्र कीजिए ॥१२६॥

विष्णुभक्त उवाच

त्वांतोषितुं कथं शक्तः सर्व लोक महेश्वरम् ॥
परन्तु महतां रीतिः तुष्यन्ति भाव केवलात् ॥१२७॥

श्री विष्णुभक्त जी बोले कि आप तो सम्पूर्ण लोक के ईश्वर हैं; आपको संतुष्ट करने की किसमें शक्ति है परन्तु यह रीति है कि महान पुरुष तो केवल भाव मात्र से ही संतुष्ट हो जाते हैं ॥१२७॥

बहुनात्र किमुक्तेन लोके यद्वारि दृश्यते ॥
वाप्यां नद्यां तड़ागादौ तत्समुद्रस्य सर्वथा ॥१२८॥

बहुत कहने से क्या होगा लोक में यह बात प्रसिद्ध ही है कि बावड़ी, तालाब, नदियाँ सब समुद्र से ही तृप्त होते हैं, इनसे समुद्र क्या तृप्त होगा ॥१२८॥

नैतैः पूर्तैः सागरस्य कदापि लोकविश्रुता ॥
आजन्मैवं त्वयि कृत्यमस्माकं लोक विश्रुतम् ॥१२९॥

जिस प्रकार नदियों से समुद्र कभी भी पूर्ण नहीं हो सकता उसी प्रकार हम लोग जन्म भर आपके लिए जो भी करें आपकी इस कृपालुता पर वह कुछ नहीं है तो भी इतना ही हमारा कृत्य सम्पूर्ण लोकों में कीर्ति फैलावेगा ॥१२९॥

स्वस्मिंश्च तद्योग्यता मेवं मुक्तवन्तं नरेश्वरम् ॥
वशिष्ठः कौशलेशोपि स्वादरेण तमुक्तवान् ॥१३०॥

इस प्रकार अपनी और महाराज कौशलेश जी की योग्यता को कहते हुए महाराज श्री विष्णुभक्त जी को श्री बसिष्ठ जी व कौसलेश महाराज भी बड़े आदर पूर्वक इस प्रकार बोले ॥१३०॥

श्री बसिष्ठ उवाच

गच्छ राजे न्गता रात्रिरूर्ध्वं याम द्वया दपि ॥
श्रमितोपि पुनः प्रात रुत्थितव्यं हि शीघ्रतः ॥१३१॥

श्री बसिष्ठ जी बोले कि हे राजन ! रात्रि दो याम से अधिक बीत गयी अब आप अपने घर जाइये। यद्यपि आप श्रमित हैं तो भी प्रातः जल्दी से उठकर के हम लोगों की बिदाई का इन्तजाम कीजिएगा ॥१३१॥

प्रज्ञापितो विष्णुभक्तो वशिष्टेन यदा बहुः ॥
तं नत्वा कौशलेशंच जगाम भवनं स्वकम् ॥१३२॥

इस प्रकार बहुत बार कहने पर श्री विष्णुभक्त जी श्री बसिष्ठ जी और कौसलेश जी को प्रणाम करके अपने घर को गए ॥१३२॥

पुनः प्रभाते स श्रीमान् कृत्वा स्नानादिकां क्रियाम् ॥
आगत्य मुनि पादाब्जं ववन्दे कौशलेश्वरम् ॥१३३॥

पुनः प्रातः काल श्रीमान् विष्णुभक्त जी स्नानादिक नित्य क्रियाओं को करके जनवासे में आए और बसिष्ठ जी तथा कौसलेश जी के चरण कमलों में प्रणाम किया ॥१३३॥

प्रत्युत्थितं विष्णुभक्तः स्थीयतां स्थीयता मिति ॥
उक्त्वा कौशलेशेन सचतेन सन्मानितः ॥१३४॥

स्वागत के लिए उठते हुए महाराज कोशलेश व बसिष्ठ जी को महाराज विष्णुभक्त जी ने आप बैठिए आप बैठिए ऐसा कहा भी है तो भी कौशलेश महाराज ने भी उठकर विष्णुभक्त जी का बहुत बड़ा सम्मान किया ॥१३४॥

पुनः परस्परं प्रीत्या मिलित्वैकाशने स्थितौ ॥
वशिष्ठश्च सुमन्तश्च सर्वे सभ्याः समास्थिताः ॥१३५॥

और परस्पर मिलकर दोनों महाराज एक ही आसन पर बैठ गए। श्री बसिष्ठ जी और श्री सुमन्त आदि सभासद भी अपने २ स्थानों पर बैठ गए ॥१३५॥

ते नेमु स्तं विष्णुभक्तं सोपि सर्वान्ननाम च ॥
तदा मुनि र्वशिष्टस्तु प्रोक्तवा न्द्राक्षिणं नृपम् ॥१३६॥

सब सभासद लोगों ने विष्णुभक्त जी को प्रणाम किया और विष्णुभक्त जी ने भी सब को प्रणाम किया। और मुनि बसिष्ठ जी ने विष्णु भक्त जी से यह कहा ॥१३६॥

श्री बशिष्ट उवाच

सर्वं कृत म्महीपाल विशेषं वर्णयामि किं ॥
पिताहि कीर्तिराज स्ते तस्य त्वं कीर्ति विग्रहः ॥१३७॥

हे राजन ! आपने बहुत किया कहाँ तक आपकी विशेषता का वर्णन करें। आपके पिता ही कीर्तिराज थे उनके कीर्ति रूप साक्षात विग्रह आप हैं ॥१३७॥

तवैव स्नेह रज्वा हि वयं बद्धाः समन्ततः ॥
परन्तु दूर देशित्वा दजाने माज्ञपय त्वरौ ।१३८॥

आपकी स्नेह रूपी रस्सी से हम लोग चारों तरफ से बँध गए हैं परन्तु दूर देश होने की बजह से आप शीघ्र हम सब बरातियों को बिदा होने की आज्ञा दें ॥१३८॥

एवं स वचनं श्रुत्वा वशिष्टस्य महात्मनः ॥
सुख मुद्वेगमुभयं प्राप्योवाच मुनीश्वरम् ॥१३९॥

महात्मा बसिष्ठ जी का वचन इस प्रकार सुनकर हर्ष व वियोग दोनों को प्राप्त होकर मुनीश्वर जी से विष्णुभक्त जी इस प्रकार बोले कि ॥१३९॥

विष्णुभक्त उवाच

अत्राहं किंवदिष्यामि यथायोग्यं तथा कुरु ॥
अनुज्ञा वाहकस्त्वं हि दास्यं सद्भिः समाहितम् ॥१४०॥

हे महाराज इस जगह पर मैं क्या बोलूँ जैसा आप उचित समझें वैसा करें। मैं तो आपकी आज्ञा का पालन करने वाला दास हूँ आप सब सत पुरुषों से पूज्य हैं ॥१४०॥

इत्युक्त्वा विष्णु भक्तेन प्रेम निर्भर मास्थितम् ॥
वशिष्ठेनार्ग्य वचनै रामोऽनुज्ञापित स्तदा ॥१४१॥

श्री विष्णुभक्त जी के इस प्रकार कहने पर प्रेम परिपूर्ण मन होकर श्री बसिष्ठ जी ने श्री राम जी को आज्ञा दी ॥ ४१॥

वशिष्ठ उवाच

याहि शीघ्रं रामभद्र कौशल्यानन्द वर्द्धन ॥
पश्चन्तिस्रो ह्यामयस्व तासां विज्ञाप्य मातरम् ॥१४२॥
एवंमुने र्वशिष्टस्य वचः श्रुत्वारघूद्वहः ॥
विमानं गज मास्थायानीकिन्या विष्टभ्रातृभिः ॥१४३॥

हे कौशल्यानन्द बर्धन रामभद्र जी ? शीघ्र जाकर अपनी माताओं से आज्ञाप्त होकर तीनों बंधुओं के साथ शीघ्र लौट आइए। इस प्रकार मुनि बसिष्ठ जी के वचन सुनकर रघु श्रेष्ठ श्री राम जी हाथी पर ऊँचे विमान में बैठकर सेना भ्राता व सखाओं से घिरे हुए ॥१४२॥१४३॥

तुर्य्यादि वाद्य घोषैश्च रथ्यां कौतुक मादधन् ॥
स्त्रीणां च श्वाशुरं गेहं वरो रामो वरं ययौ ॥१४४॥

गलियों में तुरी आदिक बाजाओं के नाद और विविध प्रकार के कौतुकों को देखते हुए, स्त्रियों से स्वागत् पाते हुए, ससुर के घर में दुल्हा भेष में श्री राम जी जा पहुँचे ॥१४४।

तमागतं हि श्रुत्वातु द्वारं श्वश्रुः समागता ॥
कृत्वानारीजनं गाने रानीतोन्तः पुरं तया ॥१४५॥

दुल्हा द्वार पर आ रहे है ऐसा सुनकर सासुएँ गान आदि कौतुक पूर्वक आरती करने के लिए अन्तः पुर से द्वार पर आ पहुँची ॥१४५॥

तदागानं प्रकुर्वन्त्यः सुवासिन्यः समन्ततः ॥
विभूषितावधूः सर्वाः या मात्रेहि निवेदिताः ॥१४६॥

सुवासिनी स्त्रियाँ झुण्ड की झुण्ड चारो तरफ गान करती हुई आयीं। सुन्दर भूषणों से भूषित स्त्रियाएँ सब स्वागत करके दुल्हा को अन्तः पुर में लिवा ले गयीं ॥१४६॥

तदा श्री रामचन्द्रेण श्रवदश्रु मुखास्थिताः ॥
प्रबोधिताः सुवचनैः श्वश्रूः सर्वाः समन्ततः ॥१४७॥

और श्री राम जी ने विदा होने की बात जैसे ही सुनाइ तैसे हो सबक सब आँखों से अश्रुओं की धारा बहाने लगीं श्री राम जी ने भी अपने सुन्दर वचनों से सासु आदिक सबको समझाकर प्रबोधित किया १४७॥

गमिष्यामि ह्याशु मातः प्रेरितो गुरुणा प्यहम् ॥
वात्सल्येन सर्वदा हि मातः चिन्तय पुत्र वत् ॥१४८॥

और कहा कि हे माता ? गुरु महाराज ने मेरे को विदा होकर शीघ्र आने के लिए आज्ञा दी है। आप मेरा पुत्र की तरह वात्सल्य भाव से हमेशा स्मरण करें ॥१४८।

उत्थाय चासनादेव मुक्त्वा वध्वा कराञ्जलिं ॥
प्रणम्य शिरसा श्वश्रू मश्रुपूर्णा कुलेक्षणाः ॥१४९॥

इस प्रकार कह कर आसन से तुरन्त उठकर हाथ जोड़ करके आंसुओं से व्याकुल नेत्रों वाली सासु को सिर से प्रणाम किया ।१४९।

श्रीरामचन्द्र श्चन्द्रास्यो मधुरो मोहनेक्षणः ॥
आज्ञापयेति वचन मब्रवी त्प्रणया न्वितः ॥१५०॥

मधुर मन मोहन कटाक्ष वाले श्री रामचन्द्र जी अपने मुख चन्द्र से प्रणय पूर्वक-"मुझे आज्ञा दो"-ऐसा वचन बोले ।१५०॥

श्रीचन्द्रकरोवाच

गमिष्यसि सुखं गच्छ त्वमि मे विनयं त्विदम् ॥
इमास्तिस्रोपिमें पुत्र्यो नु मुचर्यास्ते पदस्य वै ।१५१॥

श्री चन्द्रकरा अम्बा जी बोलीं कि हे वत्स ! आप जाते है तो सुख से जाइए परन्तु मैं आपसे यह एक विनय करती हूँ कि मेरी ये तीनों पुत्रियाँ आपके श्री चरणों की अनुचरी हैं ।१५१॥

पुन स्ते मान्य पत्न्याः श्री जानक्याः पादसेवनम् ॥
करिष्यन्ति सदा प्रीत्या दास्यो भूत्वाशुशीलतः ॥१५२॥

और आपकी जो मान्य पत्नी श्री जानकी जी हैं उनके भी चरणों की ये सब बड़े प्रेम से हमेशा सेवा करेंगी और सुन्दर शील पूर्वक दासी बनी रहेंगी ॥१५२॥

एवमुक्त्वा तु सर्वास्ता रामपादं प्रजग्रहुः ॥
समेवम्मेवमित्युक्ता पुन र्वाग्भिः प्रबोधिता ॥१५३॥

इतना कह कर सब माताओं ने श्री राम जी के चरणों को पकड़ लिया। श्री राम जी ने भी "नहीं २ हो गया हो गया"—ऐसा कह कर फिर भी उन माताओं को अपनी वाणी से प्रबोधित किया ॥१५३॥

तदा बहु समाजैश्च गानवाद्यैः समन्ततः ॥
तिसृभिर्वरभूषाभिर्वधूभिर्वरभूषितः ॥१५४॥

उस समय बहुत स्त्रियों के समाज ने गान बजान करके तीनों बधुओं को सुन्दर वस्त्र भूषणों से शृङ्गार करके सुन्दर भूषित वर के साथ में विदा कर दिया। १५४॥

पुर स्त्रीणा म्मनोनेत्रा न्यादाय रूपतोबलात् ॥
स्वनिवास माजगाम श्रीरामोमोहनेक्षणः ॥१५५॥

पुर की समस्त स्त्रियों के मन और नेत्रों को अपने रूप-सुन्दरता के बल पर आकर्षित करके मन-मोहनी कटाक्ष वाले श्री राम जी अपने निवासस्थान जनवास में आए ॥१५५॥

प्रजाभिश्चापि सर्वाभि र्बाणेशः कोलेश्वरम् ॥
प्रत्युज्जगामातिदूरं वशिष्ठेन निवर्त्तितः ॥१५६॥

समस्त प्रजा के साथ महाराज बाणेश्वर विष्णुभक्ति जी विदा होने के समय बरातियों के सहित श्री अवधेश महाराज दशरथ जी को बहुत दूर तक पहुँचाने के लिए गये और जब वसिष्ठ जी ने समझा के विदा किए (निवृत्त किए) तब लौटे ॥१५६॥

इति श्री शङ्कर कृते श्री अमर रामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां श्रीराम लघु विवाहोनाम पञ्चम स्सर्गः ॥५॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां लघु विवाह नाम पञ्चमः सर्गः।

बाणपुर्य्या योजनानां शतं दूरं समाश्रितम् ॥
पुर मेकं नन्दनाख्यं दुर्गं त्रय परिवृत्तम् ॥१॥

बाणावती नगरी से सौ योजन की दूरी पर तीनों कोटाओं से घिरा हुआ नन्दन नाम का एक नगर है ॥१॥

स्वर्णैश्च स्फटिकै र्हर्म्यै र्गोपुरैः समलंकृतम् ॥
उच्चध्वज पताकाभि र्दूरतो दर्शितं जनैः ॥२॥

जो स्वर्णमयी स्फटिक मणियों के महल और ऊँचे २ गोपुरों (फाटकों) से और ऊँचे २ ध्वजा पताकादि से शोभित है जिसको बरातियोंने दूर से ही देखा ॥२॥

विद्या वन्तो ब्राह्मणाश्च वैश्याः धनप्रवर्द्धकाः ॥
सुरपेमाः क्षत्रियाश्च शूद्रा ब्राह्मण सेवकाः ॥३॥

जिस नगर में विद्वान ब्राह्मण, धनवान, वैश्य, महा बलवान क्षत्रीय और ब्राह्मणों के सेवक सूद्र निवास करते है ॥३॥

एत त्प्रजा समायुक्त स्तत्र राजा सुनीतिमान् ॥
नाम्नापि योगधीरोसौ प्रजामोद प्रदो वशौ ॥४॥

इस प्रकार की प्रजा से युक्त बड़े नीतिमान राजा श्री योग धीर नाम के हैं जो प्रजा को बहुत आनन्द देते है ॥४॥

तस्य नाम्ना रत्नकान्ति महिषी गुण वत्तरा ॥
तस्यां तस्यैक पुत्रस्तु गुणधीरोपि नामतः ॥५॥

उन की बड़ी गुणवती रानी श्री रत्नकान्ती नाम की हैं। उन से राजा का गुणधीर नामक एक पुत्र हुआ ॥५॥

जाता कन्यास्तु तिस्रोपि सुषमा गुणभूषिताः ॥
सुकान्ती शीलकान्ती च लावण्यापि जघन्यजा । ६॥

और तीन कन्याऐं हुई जो परमा, सोभा और गुणों से भूषित हैं। उन कन्याओं का नाम सुकान्ती, शीलकान्ति और सब से छोटी का नाम लावण्या है ॥६॥

चिदम्बरोस्य वरजो भ्राता राज्ञो गुणान्विता ॥
पत्नीचास्य सुमेधा स्याद् गुण रूप विभूषितः ॥७॥

उन योगधीर जी के छोटे भ्राता बड़े गुणवान "चिदम्बर" नाम से प्रसिद्ध है। उन की पत्नी सुन्दर गुण और रूप से भूषिता "सुमेधा" नाम से प्रसिद्ध है ॥७॥

एकः पुत्रश्चैक पुत्री रूपलेखापि नामतः ॥
पुत्रस्तु सुविदो नाम्ना सुमेधायाः शुभाः प्रजा ॥८॥

उन की भी रूपलेखा नाम की एक पुत्री और सुबिद नाम का एक सुन्दर पुत्र है ।८॥

परस्परं चतस्रोपि बभूवुः प्रीति संयुताः ॥
सखीनां मण्डले सर्वाः क्रीडन्ति मातृ हर्षदाः । ९॥

ये चारों कन्याऐं परस्पर अत्यन्त प्रेमवाली अपने सब सखी मण्डल के बीच में माताओं को अत्यन्त सुख देन वाले खेलों को खेला करती हैं ॥९।

नाम्ना तु योग मुद्रैका सखी तासां विलक्षणाः ॥
तथा च शिक्षिता सर्वा बहुविद्या प्रवीणया ॥१०॥

उन सब की एक योगमुद्रा नाम की सखी बड़ी बिलक्षण बुद्धि वाली है। बहुत विद्याओं में प्रवीणा उसने उन सब लड़कियों को पढ़ाया ॥१०॥

तासां चतसृणां मध्ये सुकान्ती गुण वत्तरा ॥
ज्येष्ठापिसा चैकदातु संस्थितवैकान्त मन्दिरे ॥११॥
उन चारों कन्याओं में सब से बड़ी सुकान्ती नाम की कन्या बड़ी गुणवती है। वह किसी एक समय एकान्त मन्दिर में बैठी हुई ॥११॥

गुणरूपेणात्म तुल्यं वरं चिन्तति सौख्यदम् ॥
वयस्यायोग मुद्रापि तस्या स्तत्रागता तदा ॥१२।
अपने गुण और रूप के समान उत्तम सुख देने वाले अपने लायक पति की चिन्ता कर रही थी उसी समय उस की सम वयस्का सखी योगमुद्रा वहाँ पर आ पहुँची ॥१२॥

किं विचारयसि भद्रे चिन्तायुक्तापि दृश्यते ॥
तयैवं पृच्छ्य माणा सा सर्वं तस्यैनिवेदितम् ॥१३।
उसने कहा कि हे भद्रे ! तू अत्यन्त चिन्ता युक्त दीख पड़ती है। इस एकान्त में तू क्या विचार कर रही है। इस प्रकार पूछती हुई उस अपनी सखी को शुकान्ती ने अपने मन की सब बात बताई ॥१३॥

श्रुत्वा सर्वं तदुक्तं सा योगमुद्रा विचक्षणा ॥
तां प्रति प्रावद द्वाक्यं मनोज्ञं लोक सम्मतम् ॥१४॥
बड़ी सूक्ष्म बुद्धि वाली योग मुद्रा ने उस की इन सब बातों को सुना तब उस ने अत्यन्त मनो रम-णीय लोक सम्मत बात कही ॥१४॥

योगमुद्रोवाच

श्रूयतां राजकन्ये त्वं गुण रूप विभूषिता ॥
तथापि स्त्रीजनानां तु सर्वस्वं सदृशः पतिः ॥१५॥
हे राज कन्यके ! सुनो। यद्यपि तुम सुन्दर रूप और गुणों से भूषित अति सुन्दरी हो तथा स्त्रियों के लिए तो अपना सर्वस्व अपने सदृश पति ही होता है ॥१५॥

किंरूपेण गुणैः किम्वायदा न्वोप्ति सम्मपतिम् ।
नलभेद् व्यर्थकं तस्याः स्त्रिया जन्म नृपात्मजे ॥१६॥
हे राजकन्यके ? यदि स्त्री को अपने लायक पति न मिला तो उस के रूप और गुणों से कौन लाभ है उसका तो जन्म भी व्यर्थ हो है ॥१६॥

तदहं सखि जानामि लोके यथोत्तमः पतिः ॥
दूरदेशे प्युपायेन महता प्राप्स्यसि हि तम् ॥१७॥
परन्तु हे सखी ! लोक में जो सब से उत्तम पति है उस को मैं जानती हूँ वह यद्यपि दूर देश में है तो भी कोई महान् उपाय से तुम उनको प्राप्त कर लोगी ॥१७।

कदाचिद्गुण हीनास्त्री सुपतिं प्राप्य शोभते ॥
यथा तमो वर्ता रात्री शुक्ल चन्द्रमसा पिसा ॥१८॥
स्त्री कदाचित गुण हीन भी हो तो सुन्दर पति को पाकर के वह अति शोभित होती है जैसे अन्धकार मयी रात्रि पूर्णमासी के चन्द्रमा को पाकर शोभित होती है ॥१८॥

एवं तस्या वचः श्रुत्वा पुन स्तां चिन्तया न्विता ।।
योगमुद्रा मुवाचेति कर्तव्यं वद मे यथा ।।१९।

इस प्रकार योगमुद्रा के वचन को सुन कर चिंतित हुई सुकान्ता ने फिर पूछा कि मुझे कौन उपाय करना चाहिए मुझे इस बात का बता दो ।।१९।।

यन्मां निदशयसि तस्य वद प्रभावं स्थानं च रूप गुण वैभव सत्समाजम् ।।
नाम्नापि केन सखि राजति राजपुत्रो लेभे कथं तमिति देवि कुरु प्रबोधम् ।।२०।।

और जिस पुरुष को आप मेरे लिए दिखा रही हो उसके प्रभाव, स्थान, रूप, गुण, वैभव, सहवासी समाज, और नाम क्या है ? कैसा है ? और वह राज पुत्र मुझे कैसे प्राप्त हो सकता है, हे देवि ! इन सब बातों को बताओ ।।२०।।

एवं तस्या वचः श्रुत्वा योगमुद्रा मुविज्ञका वक्तुं
प्रचक्रमे सर्व वृत्तं तस्या हि पूर्वकम् ।।२१।।

बड़ी पण्डिता योगमुद्रा ने राज कुमारी की इस प्रकार की बातों को जब सुना तब उसके पूर्व जन्म की सब कथा को कहना आरम्भ किया ।।२१।।

योगमुद्रोवाच

राजकन्ये विजानामि सप्त जन्मानि ते च वै ।।
प्राप्तासि भावितं लोकं प्रेम सुक्रम साधितम् ।।२२।।

योगमुद्रा बोली—हे राजकन्यके ! मैं तुम्हारे सात जन्म के हाल (समाचार) जानती हूँ साधन से अगम, प्रेम ही है मूल्य जिसका, भावुक पुरुषों से भावित है जो भगवत धाम उसको तुम अवश्य प्राप्त करोगी ।।२२।।

सर्वं स्मरस्वकीयं यज्जानकी वर हेतवे ।।
मयोपदिष्टं, गुरुणा तत्कृपा भाव साधनम् ।।२३।।

पहले जन्म में गुरु रूप से मैंने जो तुम को श्री जानकी वर जी की प्राप्ति के लिए उपदेश किया था जो भगवत् कृपा प्रसादिक भाव है वही तुम्हारा सर्वस्व भूत भगवत प्राप्ति का साधन है; उसको तुम स्मरण करो ।।२३।।

माधुर्य्यानन्द वा शक्त्या ज्ञानं लोकेपि चाद्य ते ।।
रुद्धं ज्ञानं राजकन्ये कथयामीह सर्वकम् ।।२४।।

पहले मैंने तुम्हारे लिए लोक में भी ज्ञानशक्ति से अथवा माधुर्य आनन्द शक्ति से उपदेश किया था। हे राजकन्यके ! तुम्हारा वह ज्ञान अब रुक गया है इसलिए इस समय ज्ञान को सम्पूर्ण रूप से कहूँगी ।।२४।।

श्रूयतामुत्तमेलोके देशे चोत्तर कौशले ।।
श्रीमद्दशरथो राजा सार्वभौमः सनातनः ।।२५।।

तुम सावधान होकर सुनो सम्पूर्ण लोकों में सब से उत्तम जो उत्तर कौशल देश है उसमें सनातन, सार्वभौम महाराज श्री दशरथ जी राज्य करते हैं ।।२५।।

सुरासुरनमस्कृत्यो वैभवार्णव सत्कृतः ॥
शूरोदारो महातेजा सत्सुखानन्द विग्रहः ॥२६॥

वे महाराज सुर और असुर (दिव्य धाम के पार्षद व प्राकृतिक जीव) सब से नमस्कृत हैं और ऐश्वर्य रूप समुद्र से तो वे महान् सत्कृत हैं और बड़े शूर, महान् उदार, महातेजस्वी और सच्चिदानन्द सुख के साक्षात विग्रह हैं ॥२६॥

पत्न्यस्तु तस्य वै त्रीणि शतानि च शतार्द्ध कम् ॥
उत्तमा गुण रूपैस्तु तिस्र स्तासां समाहिताः ॥२७॥

उन की साढ़े तीन सौ पत्नी हैं जो उत्तम गुण रूप वान हैं। उन में तीन मुख्य हैं जो सावधान होकर महाराज की सेवा करती हैं ॥२७॥

तासा मपि च नामानि शृणु राज सुते यथा ॥
कौशल्याच सुमित्रापि कैकेयी करुणा वृता ॥२८॥

उनके भी नामों को मैं तुमसे कहूँगी हे राजसुते! सुनो। एक का नाम श्री कौसल्या दूसरी श्रीशुमित्रा तीसरी श्री कैकयी जी है। ये तीनों करुणा रस की मूर्ति हैं ॥२८॥

पुरीत्व योध्या तस्या स्ति राजधानी सनातना ॥
प्रमोद विपिना वृता सप्त दुर्गा वृतापि च ॥२९॥

उन महाराज की अयोध्या नाम की नगरी सनातन राज धानी है जो प्रमोद आदिक वनों से घिरी हुई सात पर कोटा वाली है। २९॥

विभक्ताष्टा पदाकरा प्रतिवस्त्वा पणैर्गृहैः ॥
मुक्तामाणिक्य सन्दर्भा प्रोच्च हर्म्य गवाक्षका ॥३०॥

वह अलग २ आठ पदों के आकार वाली स्वर्णमयी अष्ट सिद्धी मयी, अष्ट आवरणमयी कमलाकार चौपड़ यन्त्र शहस नगरी है। उसके प्रत्येक आवरण में प्रत्येक वस्तु के बाजार और महल अलग २ हैं जो महल मुक्ता व मणि माणिक्यों के तो खानि हैं और ऊँचे छज्जे, झरोका व अट्टालिका वाले हैं ॥३०॥

सत्प्रजा संकुला प्रोद्यद् गोपुरै रमणीदका ॥
तडाग वापिका रामैः परमाद्भुत शोभना ॥३१॥

सज्जन प्रजा से भरी हुई; ऊँचे फाटकों वाली; अत्यन्त रमणीय तालाव, बावड़ी बगीचा वाली; परम अद्भुत शोभना वह नगरी है ॥३ ॥

जातीयानां वान्धवानां समाजै राजते हि सा ॥
भ्रातरा वरजौ तस्य द्वौहि विक्रम संयुतौ ॥३२॥

अपनी २ जाति वाले बन्धुवर्ग के अलग २ समाज से शोभित हैं। इस प्रकार की नगरी के अधिपति महाराज दशरथ के दो भाई तो अति पराक्रमी हैं ३२॥

नाम्ना च विक्रमरथो द्वितीयः स्या द्यशोरथः ॥
तयो श्च द्वौ द्वौ पुत्रौहि महावीर्य्यौ गुणा करौ ॥३३॥

जिनका नाम-विक्रम रथ व यशोरथ है। इन दोनों भाइयों के भी दो २ पुत्र हैं जो महान् बलवान और गुण के सागर हैं ॥३३॥

जेष्टोभानुप्रभथास्या वरजः स्याद् गुणप्रभः ॥
विक्रम रथस्यात्मान मैकी कृत्य प्रवर्त्त को ॥३४॥

विक्रम रथ जी के ज्येष्ठ पुत्र का नाम भानुप्रभ और छोटे का गुणप्रभ नाम है जो अपने पिता जी के सदृश हैं ॥३४॥

तथा यशो रथ स्यैवं द्वौ पुत्रौ सुमहाबलौ ॥
तत्र ज्येष्टो भद्र कान्तः कनिष्ठ श्चित्र विक्रमः ॥३५॥

और यशोरथ के भी महान् बलवान दो पुत्र हैं ज्येष्ठ का नाम भद्रकान्ति और कनिष्ठ का नाम चित्र विक्रम है ॥३५॥

विक्रम रथस्य पत्नी विज्ञाना नामतो र्थतः ॥
ज्ञाना यशो रथस्यैकं नृपस्यै कस्य द्वे सुते ॥३६॥

विक्रम रथ की पत्नी का नाम विज्ञाना है जो यथार्थ नामा है। और यशोरथ की पत्नी का नाम ज्ञाना है तथा एक एक राजा की दो दो कन्याएँ हैं ॥३६॥

स्वस्य श्रीकौशलेंद्रस्य राज्ञौ सर्वाः सु सत्प्रजाः ॥
अतुल्य विक्रमा श्चान्यै र्गुणै श्चापि विभूषिताः ॥३७॥

महाराज श्री कोशलेश जी के भी जितने पुत्र हैं वे महान् पराक्रमी व सुन्दर हैं। राजाओं के योग्य समस्त उत्तम सद् गुणों से भूषित हैं ॥३७॥

सुकुमाराः कोमलाङ्गाः काम कोटि मनोहराः ॥
श्रीरामो लक्ष्मण श्चैव भरतः सत्रुसूदनः ॥३८॥

वे बड़े सुकुमार हैं; कोमल अंग वाले हैं; करोड़ों कामों से अधिक सुन्दर सब के मन को हरने वाले हैं सब से बड़े का नाम श्री राम इसी क्रम से लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न नाम है ॥३८॥

एते तु लोक विख्याता श्चत्वारोपि महौजशः ॥
कौशल्या रामभद्रस्य सुमित्रा लक्ष्मणस्य च ॥३९॥

ये चार तो महान पराक्रम वाले लोक प्रसिद्ध हैं। श्री राम जी की माता श्री कौशल्या जी, श्री लक्ष्मण जी की माँ श्री सुमित्रा जी हैं ॥३९॥

सत्रुघ्नस्यापि सामाता कैकेयी भरतस्य च ॥
तिस्रोपि लोके विख्याता राज्ञो मान्या गुणाधिकैः ॥४०॥

शत्रुघ्न जी की भी सुमित्रा जी ही माँ हैं और भरत जी की कैकेयी जी माँ हैं। महाराज चक्रवर्ती जी की अधिक मान्या महा गुणवती ये तीनों माताएँ लोक विख्यात हैं ॥४०॥

सन्तिसर्वे राजपुत्रा लोकोत्तर गुणान्विताः ॥
तथापि भूषिते वंशे रामः स्या त्सद्विभूषणः ॥४१॥

सभी राजकुमार लोकोत्तर गुण वाले अपने वंश के भूषण स्वरूप हैं तो भी सुन्दर सद् गुणों से भूषित वंश में श्री राम जी तो अति ही महान गुणवान भूषण स्वरूप हैं ॥४१॥

काम कोटिं तिरस्कृत्वा स्वात्म रूपेण संस्थितः ॥
इन्द्र नील मणि स्निग्धो नीलेन्दीवर सुन्दरः ॥४२॥

जो अपनी अंग सुन्दरता से करोड़ों कामों का तिरस्कार करते हुए इन्द्र नील मणि के समान श्याम वर्ण वाले, नील कमल के सदृश सुकुमार और अत्यन्त चिकन अंग वाले सदा स्नेही हैं ॥४२॥

विनैव भूषां सद्भूषो यथा भ्राजति केवलम् ॥
महतीसुषमाकिम्वा प्रतीके स्यैव संस्थिताः ॥४३॥

विना ही भूषणों के सुन्दर भूषित सरीख महान् परमा शोभा के ता मानो प्रतीत ही खड़े हैं । इस प्रकार प्रकाशित हो रहे हैं ॥४३॥

विशाले चक्षुषी तस्य विनैव कज्जलाञ्चिते ॥
कज्जलेनांञ्चिते बास्तः कामस्य धनुषी भ्रुवौ ॥४४॥

बिना ही काजल के बड़े २ नेत्र, काजल युक्त शदृस, काम के धनुष शदृस भृकुटी वाले ॥४४॥

तिल पुष्प समा कारा नाशा तस्याति शोभना ॥
भाले सुविशाले तस्य तिलकं रूप विग्रहः ॥४५॥

तिल के पुष्प शदृस नासिका अत्यन्त शोभित है । विशाल भाल में रूप की मानो रेखा खिंची हो इस प्रकार रूप विग्रह तिलक शोभित है ॥४५॥

निस्तलौं दर्पणा कारौ कपोला वति शोभनौ ॥
नील शुक्ति समौ कर्णौ चिबुकञ्चमनोहरम् ॥४६॥

दर्पणाकार गोल कपोल, अत्यन्त शोभित नील सूक्तिका सदृश दोनों कान बराबर हैं । चिबुक तो अति ही मनोहर है ॥४६॥

अधरे रुणिमा तस्य ग्रीवा स्यादुद्दर लक्षणा ॥
वृषस्कन्धो दृढोरस्को दीर्घबाहू महाबलः ॥४७॥

अधरों की लालिमा (अरुणिमा), सुन्दर लक्षण युक्त शंख सदृश कण्ठ, पुष्ट कन्धा, मजबूत छाती, लम्बी भुजा व महान् बलशाली हैं ॥४७॥

रक्तौ करतलौ तस्य तथा पाद तलावपि ॥
वैभवाति सूचिताभिः सुरेखाभिः विराजितौ ॥४८॥

हाथ के तालू और चरणों के तालू लाल रङ्ग के हैं महान् वैभव के सूचित करने वाले उत्तम सुन्दर अंग, रेखाओं से अत्यन्त सुशोभित हैं ॥४८॥

कटौ सूक्ष्मं त्रिरेखाभि र्निम्ननाभ्यायुतोदरम् ॥
वस्त्यावधि स्तथा भाति शोभा वास्तु विधानवत् ॥४९॥

पतली कमर, तीन रेखाओं से शोभित गहरी नाभि युक्त उदर, जानु मूल तक सुन्दर कटि वाले हैं ऐसा लगता है मानो शोभा रूप सम्पत्ति का विधान बना हो ॥४९॥

स्निग्धौ च निस्तलावूरु स्तस्य वाति मनोहरौ ॥
सुषमाया मन्दिरस्य तोरण स्तम्भ भूषितौ ॥५०॥

अत्यन्त चिकन गोल जंघा अति ही मनोहर हैं मानो सुषमा (परमा शोभा) रूपी देवता के मन्दिर के मांगलिक कदलिस्तम्भ कर धनी रूप तोरणों से विभूषित हैं ॥५०॥

बक्षणे लक्षणं तस्य नारीणांसुखदो भवेत् ॥
जंघे तूणीर सदृशे ष्टीवदौ मांसलावुभौ ॥५१॥

घुटनाओं का लक्षण नारियों को अत्यन्त सुखदायी है और घुटनाओं से नीचे की पिंडली तरकस के सदृश है और दोनों गुल्फ (टखने) माँसल (पुष्ट) हैं ॥५१॥

पादौ पद्म हि लक्ष्मीणां प्रपदांगुलि भूषितौ ॥
पुष्टांग मग्न घुटिके पार्ष्णी तस्याति शोभनौ ॥५२।

चरण कमल अनन्त लक्ष्मियों के निवास वाले कमल सदृश हैं। चरणों की अगुलियाँ सुन्दर भूषित हैं। चरण की एड़ी से घुटना पर्यन्त मध्य भाग सुन्दर पुष्ट अति शोभाय मान है ॥५२॥

दलेषु पद्मस्य मयङ्क श्रेणि र्नखावलि स्तस्य तथा विभाति ॥
करा ब्जयोः पाद सरोजयोश्च जालानि किम्वा भवनस्य लक्ष्म्याः ॥५३॥

चरणों की अँगुलियों की नख-पंक्ति मानो कमल के दलों पर चन्द्रमाओं की पंक्ति लगी हो इस प्रकार शोभित होते हैं। कर कमल और चरण कमल ये क्या लक्ष्मी के भवन हैं! अथवा अनन्त लक्ष्मियों को फसाने के जाल हैं ॥५३॥

सरत्न माणिक्य कीरीट शोभी सकुण्डल स्मेर शुभाव भासः ॥
समौक्तिनासो मणिमाल्य वक्षा समुन्द्रिका कङ्कण शोभिबाहुः ॥५४॥

रत्न और माणिक्यों से सुन्दर रचित मुकुट तथा कुण्डल मन्द मुस्कराते हुए मुख चन्द्र के ऊपर अत्यन्त शोभित हैं। सहज मुस्क्यान मानो हृदय के भावों का प्रकाश कर रही है। नाक में नासा मणि, वक्षस्थल में मणियों की माला, उँगलियों में मुद्रिका और कर कमलों में कङ्कणादि धारण किए हुए अति सुन्दर भुजा वाले हैं ॥५४॥

वदने वीटिकां श्चर्वन्हृदयोल्लास शूचयन् ॥
मन्द मन्द हसन् रक्ता दन्त पंक्ति विराजते ॥५५॥

पान का बीरा चबाते हुए मुख चन्द्र की चेष्टाओं से मुख उल्लासों को जनाते हुए मन्द २ मुस्क्यान में दाँतों का लाल पंक्ति अति शोभित हो रही है ॥५५॥

तडिद् गौरीन्दुवदना नीलांशुक विभूषिता ॥
अत्यन्त सुकुमाराङ्गी प्रिया तस्य तु जानकी ॥५६॥

बिजली समान गौर वर्ण वाली, नील वस्त्र और भूषणों से भूषित अत्यन्त सुकुमार अङ्ग वाली, चन्द्र वदनी श्री जानकी जो उन की अत्यन्त प्रिया हैं ॥५६॥

तामात्मतुल्यां वयसा गुणै श्च कुलेन रूपेण कला कलापैः ॥
विनोदय न्नरुक्म गृहे सखीनां गणे गुणाढ्यो रमते मुदा सः ॥५७॥

वे प्रिया अपने प्रियतम की समान अवस्था, समान गुण, समान कुल वाली हैं । अपने रूप और सुन्दर चेष्टा कलाओं से प्रियतम जू को आनन्दित करने वाली, अनन्त सखिगणों से घिरी हुई महान् गुणों की खानि उन प्रिया जू को विनोदित करते हुए प्रीतम जू अत्यन्त आनन्द मग्न रहते हैं ॥५७॥

पूर्व मभ्यासितं यत्तु तयापि वर्णितं तथा ॥
प्रस्फुर त्हृदये तस्याः प्रबुद्धेवा सुनिद्रया ॥५८॥

इस प्रकार योगमुद्रा के वर्णन करने पर पूर्व जन्म में उपासना भाव से सुन्दर भजन का अभ्यास की हुई सुकान्ति के हृदय को योगमुद्रा के शब्दों ने मानों सोये हुए को जगाया ॥५८॥

प्रेमबाष्पाकुलाक्षी सा रोमहर्षाङ्ग सुस्थिता ॥
धैर्यमाधाय स्वासिता योग मुद्रा मुवाचसा ॥५९॥

आँखों से अनुरागमयी आँसुओं की धारा बहाती हुई गद्गद रोमाञ्चित अङ्ग वाली सुकान्ति धैर्य को धारण करके सुन्दर तरह से बैठी हुई योग मुद्रा से बोली ॥५९॥

राजकुमार्युवाच

नाहं जानामि ते रूपं प्रभावं परमाद्भुतम् ॥
सखी न स्वामिनी मेस्ति यदिदं कथितं त्वया ॥६०॥

हे योगमुद्रे मैं तुम्हारे रूप और अद्भुत प्रभाव को नहीं जानती हूँ । तुमने मेरे को यह जो समाचार सुनाया है अतः अब आप मेरी सखी नहीं होकर अब मेरी स्वामिनी हो ॥६०॥

ममापि सर्वं जानासि जन्मान्तर-गत स्मृतेः ॥
किम्वयस्या पि रूपेण गुरुस्त्वम्मे समागता ॥६१॥

जन्मान्तर की स्मृति से भूली हुई मेरे पूर्व जन्म के हाल को भी आप जानती हैं । क्या मेरे समान अवस्था के रूप में आई हुई आप मेरे पूर्व जन्म की गुरु ही प्रकट हुई हैं ॥६१॥

तत्सर्वं त्वं समाचक्ष्व स्वय म्मेव समस्तकम् ॥
स मे नाथः स्वामिनी मे सा सीता जनकात्मजा ॥६२॥

आप स्वयं मेरे लिए उन समस्त समाचारों को कहिए क्योंकि वे राम जो मेरे नाथ हैं; तथा वे जनकात्मजा श्री सीता जी मेरी स्वामिनी हैं ॥६२॥

तयोस्तत्वस्योपदेष्टा त्वम्मे जन्मान्तरीयका ॥
गुरु रसो ति विज्ञातं नमस्ते योग दायिके ॥६३॥

उन दोनों के उस दिव्य धाम में विलास करते हुए इस तत्व का उपदेश करने वाली आप पूर्व जन्म से ही मेरी गुरू हैं । गुरुत्व रस को ठीक से जानने वाली जीवों को युगल सरकार से योग देने वाली हे योगदायके ! आप को नमस्कार है ॥६३॥

योगमुद्रोवाच

ये राम रसिकानन्या भक्ताः श्री गुरु शिक्षिताः ॥
सम्बन्धावेश चित्ताश्च भजन्ति भाव पूर्वकाः ॥६४॥

श्री योगमुद्रा जी बोलीं कि जो श्री राम जी का अनन्य रसिक भक्त श्री गुरु महाराज द्वारा सुन्दर शिक्षित, सम्बन्ध के आवेश में भाव पूर्वक श्री राम जी में चित्त लगाकर भजन करते हैं ॥६४॥

तेषां तद्भाव संयोगं समये कर्त्तुं मुद्यता ॥
सीता रामाज्ञया साहं योगमुद्रा स्वरूपिणा ॥६५॥

उन की भावनाओं का संयोग समय पर श्री सीताराम जी से लगाने के लिए मैं सावधान हूँ। इस प्रकार श्री सीताराम जी की आज्ञा का पालन करती हूँ इसी लिए यह स्वरूपानुरूप मेरा नाम योगमुद्रा है ॥६५॥

चरामि मानुषेलोके मुमुक्षूणां श्च मण्डले ॥
माधुर्य्य मण्डले दिव्ये सर्वत्र गति रस्ति मे ॥६६॥

मैं मनुष्य लोक में मुमुक्षुजीवों के समाज में भी घूमा करती हूँ और दिव्य धाम के माधुर्य मण्डल में भी घूमा करती हूँ। इस प्रकार मेरी गति सर्वत्र है ॥६६॥

अतो यूयं चतस्रोपि भगिन्योभाव सिद्धकाः ॥
माधुर्य्य मण्डले जाताः प्राप्स्यामि योग मुद्रया ॥६७॥

इसी लिए भाव से सिद्ध हुईं आप चारो बहिनो ने माधुर्य मण्डल में जन्म लिया है अतः अपनी योग मुद्रा से आप चारों बहिनों को श्री सीताराम जी को प्राप्त कराऊँगी ॥६७॥

सुकान्ति रुवाच

माधुर्य्यं मण्डलं किञ्च न जानामि किमप्यहम् ॥
अर्थेन कथय स्वैव कृपारूपे यथाविधम् ॥६८॥

सुकान्ती बोली—हे कृपा रूपे मैं माधुर्य मण्डल को कुछ भी नहीं जानती हूँ इसका यथार्थ अर्थ करके कहिए ॥६८॥

योगमुद्रोवाच

प्राकृतं मानुषे लोके देही देह विभागकम् ॥
जन्म मृत्यु जरा धर्म्मं विहारा भोग भावुकम् ॥६९॥

श्री योगमुद्रा जी बोलीं कि प्राकृतिक मनुष्य लोक में जीवों का देही-देह विभाग रहता है। वे जन्म मरण, बुढ़ापादिक धर्म परतंत्र हुए विहार, भोग में आशक्त रहते है ॥६९॥

तद्भावा भाव धर्मस्त्व मैश्वर्य्यं परमंपदम् ॥
नतथा तत्तथा भाति तन्माधुर्य्यं सुखावहम् ॥७०॥

इस प्रकार के भोक्ता भाव से सर्वथा रहित और इन प्राकृतिक धर्मों से रहित जो स्थान है वही ऐश्वर्य मयी परम पद है। यद्यपि वह परम पद प्राकृतिक लोकों के सदृश नहीं है परन्तु वैसा ही प्रतीत होता है। इस प्रकार के महान सुख स्थान को माधुर्य मण्डल कहते हैं। ७०।

माधुर्य्या नन्दया शक्त्या कृतं सर्वं विभाति वै ॥
यत्तु मानुष्यके लोके तद्विद्य विद्यया कृतम् ॥७१॥

माधुर्य आनन्द मयी शक्ति से प्रकाशित हुआ वह माधुर्य मण्डल अति शोभित है और जो प्राकृतिक लोक है वह अविद्या माया के द्वारा उत्पन्न हुआ है ॥७१॥

राजपुत्र्युवाच

अहो कथं विस्मृत मेव सर्वं श्रीराम राजेन्द्र मणौ विभाव्यम् ॥
भर्तु त्व भावं कृतमेव पूर्वं लब्ध्वा स्मृति स्त्वद्य तव प्रसादात् ॥७२॥

राजकन्या बोली कि अहो मैंने पूर्व जन्म में राजेन्द्रमणि कुमार श्री राम जी के साथ कान्त भावना को सिद्ध किया था वह इस समय मुझे कैसे विस्मरण हो गया। हे योगमुद्रे! आप की कृपा से अब मुझे स्मृति आ गयी है ॥७२॥

लक्ष्म्यादिभिस्सेवित पादपद्मा पाथोजहस्ता हृदये सदामे ॥
श्रीराम राजेन्द्र कुमार वामा श्यामा शुभांगी वसतु प्रकामम् ॥७३॥

अनन्त उमा रमा ब्रह्माणियों से सेवित चरण कमल वाली, कमल के सदृश हस्त कमल वाली, राजेन्द्रमणि कुमार श्री राम जी की प्रिया किशोरावस्था सम्पन्न, सुन्दर शुभ लक्षणमयी अङ्ग वाली श्रीकिशोरी जी हमेशा के लिए मेरे हृदय में वास करें, मेरे मनोरथ पूर्ण करें ॥७३॥

प्राप्स्यापि शीघ्रं न च शंशयोत्र समे पति र्भावित एव पूर्वम् ॥
कारुण्य मूर्तें र्जनकात्मजायाः कैंकर्य्य भावं सततं करोमि ॥७४॥

पूर्व जन्म की भजन भावना से सिद्ध किए हुए मेरे पति अब मुझे शीघ्र प्राप्त हो जाँयगे इस में कोई संशय नहीं है। अब मैं करुणामयी मूर्ति श्री जनकात्मजा जी के दासी भाव को हमेशा के लिए प्राप्त होकर सेवा करूँगी। ७४॥

ताव त्कथां तस्य समग्रभाव्यां समास सन्धान विधान वत्तया ॥
प्रारम्भितां श्रावय योगमुद्रे सीता पते र्नित्य विहार धाम्नः ॥७५॥

तब तक के लिए उन दोनों सरकार की भावना करने योग्य कथा को विधान पूर्वक संक्षेप से बिचार कर के हे योगमुद्रे! अब मुझे सुनाओ। जिस कथा को तुमने आरम्भ कर रक्खी है वही सीता पति के नित्य धाम की विहार-लीला का वर्णन करो। ७५

इति श्री शंकर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
राजकन्या प्रबोधोनाम शष्ट तम स्सर्गः ॥६॥

इति श्री मधुकर रसास्वादिना कृता टीकायां
राजकन्या प्रबोधो नाम षष्ठः सर्गः

योगमुद्रोवाच

अपरा कौशलेन्द्रस्य भार्य्याः सर्वाश्च शोभनाः ॥
तासु तस्य च द्वौ द्वौ हि जातौ पुत्रौ गुणा न्वितौ ॥१॥

श्री योगमुद्रा जी बोलीं—महाराज कोशलेश जी के और जो अति श्रेष्ठ सम सुन्दर सब स्त्रियाँ हैं उस से भी महाराज के बड़े गुण वान दो पुत्र हुए। १॥

मातृणां नाम युक्तानि तेषां श्री राम सङ्गिनाम् ॥
नामानि कथयिस्यामि तेषां सम्बन्धभागिनाम् ॥२॥

माताओं के नामों से युक्त श्री राम जी के संगी उन सब का नाम भी तुम से कह के सुनाऊँ जो भावुकों के परम सम्बन्धी है ॥२॥



विषय सूची

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृ-लोक का दर्शन। द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४०१ ॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम। चतुष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम। पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४२६॥

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह। षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४५२॥

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४६२ ॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत। अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६६ ॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति। एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४८२ ॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना। षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४६१॥

माणवक नगरीके राजा उद्धविक्रमकी कन्याओं से विवाह। एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ५०३॥

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह। द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ५१६ ॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जी की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये। फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये।

॥ इति शुभम् ॥





श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी

(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट-बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

❋ श्री अमर रामायण ❋

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❋ वन्दना ❋

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, मुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'वागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
वन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❋:—



* श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः *

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

अथैका कौशलेन्द्रस्य पत्नी सुन्दर विग्रहा ॥
चोल देश पतेः पुत्री नाम्ना सौमानका तु सा ॥३॥

महाराज कौशलेन्द्र जी की एक सुन्दर बिग्रह वाली पत्नी चोल देश के महाराज की कन्या सौमानका नाम की है ॥३॥

तस्यां राज्ञौ द्वौ सुपुत्रौ सुकुमारौ मनोहरौ ॥
ज्येष्ठस्तु जयराजश्च कनिष्ठो विजयस्तथा ॥४॥

उन से महाराज के दो मनोहर सुकुमार पुत्र उत्पन्न हुए उन में ज्येष्ठ का नाम जय राज और कनिष्ठ का नाम बिजय राज है ॥४॥

अपरैका कौन्तदेश पतेः पुत्री मनोहरा ॥
नाम्ना कान्तिवरा तस्यां कुमारौ द्वौ मनोहरौ ॥५॥

दूसरी कौन्त देश के महाराज की मनोहर कन्या कान्तिबरा नाम की है उन से मनोहर दो कुमार उत्पन्न हुए ॥५॥

नाम्नैकस्तु देशराजो नीतिशास्त्र विशारदः ॥
तस्था वरो महीराजो हयज्ञो लोक विश्रुतः ॥६॥

नीति शास्त्र में बिशारद--एक का नाम देशराज दूसरे का नाम मही राज है जो घुड़सवारी विद्या में लोक प्रसिद्ध हैं ॥६॥

पुनरेकः स्सिन्धुराज स्तस्यै कस्य सुता दश ॥
सुदायै स्तेन महता दत्ता दशरथाय च ॥७॥

और एक सिन्धु राज महाराज हैं उन्होने दश कन्याओं को अपने सुन्दर दुसाद श्री दशरथ जी को दे दिया ॥७॥

कान्ति दीप्ति र्मनोज्ञा च साध्वी सत्ता प्रभा शुभा ॥
शान्ति कीर्तिः कला चैता युग्म पुत्रैक मातरः ॥८॥

उन दशों का नाम-कान्ति, दीप्ति, मनोज्ञा, साध्वी, सत्ता, प्रभा, शुभा, शान्ति, कीर्ति, कला है। उन सब माताओं के दो २ पुत्र हुए ॥८॥

नामानि तासां पुत्राणां क्रमेणात्र वदामिते ॥
ज्येष्ट स्त्वा वरजत्वं च पुत्राणामपि सक्रमात् ॥९॥

उन के पुत्रों का नाम भी क्रमशः कहतो हैं छोटा बड़ा का हिसाब इसी प्रकार से ले लेना ॥९॥

मधुराज मानराज्ञौ मौलि राज सुराज कौ ॥
प्रभराज प्रभाराजौ शुभ शौभौ तथैवच ॥१०॥

मधुराज, मानराज, मौली राज, सुराज, प्रभराज, प्रभाराज, शुभराज, शोभराज ॥१०॥

शान्तिराज शीलराजौ कीर्ति मोदौ तथाभिधौ ॥
कलाशील कलाधीरौ कलाविद्य परम्बिदौ ॥११॥

शान्तिराज, शीलराज, कीर्ति, मोद, कला शील, कलाधीर, कला विद, पर विद ॥११॥

राजशील राजरत्नौ रत्नयान सुयान कौ ॥
इमे सर्वे च श्रीरामे प्रीतिमन्तो भवन्ति हि ॥१२॥
राजशील, राजरत्न रत्नयान, सुयानकन्ये बोसो श्री राम जी में महान् अनुराग रखने वाले हैं ॥१२॥

पश्चिमायां दिशि त्वासीद्भल्ल देशो जनान्वितः ॥
प्राण सन्धो महाराज स्तत्रासी द्विप्र सेवकः ॥१३॥
और एक भल्ल नामक देश पश्चिम दिशा में है। उस देश के महाराज ब्राह्मणों की बड़ी सेवा करने वाले प्राणसंध नाम के हैं ॥१३॥

तस्य पुत्री शतं जातं अधिकं पञ्चदिक्तथा ॥
तेनापि कौशलेन्द्रायदत्त दार्थे महाधनैः ॥१४॥
उन की १५० (डेढ़ सौ) कन्याऐं हैं। उन्हों ने भी अपनी सब कन्याओं को महान् दहेजा धन सहित महाराज दशरथ जी के लिए दिया ॥१४॥

तासां नामानि सर्वासां पुत्राणामपि विस्तरात् ॥
राजकन्ये वर्णयामि सावधान तया शृणु ॥१५॥
हे राजकन्यके ! उन सब का तथा उन के पुत्रों का भी नाम कहती हूँ सावधान होकर सुनो ॥१५॥

अर्थ शुद्धिः सुबुद्धिश्च नन्दनी जयसी वला ॥
उरभा प्रासरा प्राची प्रबाला शुभगा शुभा ॥१६॥
अर्थ शुद्धि, सुबुद्धि, नन्दिनी जयसी वला, उर्भा प्रसरा प्राची प्रवाला सुभगा, शुभा ॥१६॥

गुणाभावी गौरवी च लेखा योगा सदावली ॥
मण्डली मण्डनी सम्भा शुभला सञ्जसा सुला ॥१७॥
गुणा, भावी, गौरवी लेखा, योगा, सदावली, मण्डली मण्डनी, सम्बा, सुभला, सञ्जसा, सुला ॥१७॥

प्राञ्चा प्रभा परभा च प्रभी पुण्या प्रतिपका ॥
आवेशा च सुवेषा च निवेसा चापरा परा ॥१८॥
प्राञ्चा, प्रभा, परभा प्रभी; पुण्या प्रति पका, आवेशा सुवेशा, निवेशा अपरा, परा ॥१८॥

राजीवा चैव रेवा च गाङ्गीता पीत पीवरा ॥
यशोभा कुन्दभा रंगी नवसी नवदा सुखा ॥१९॥
राजीवा, रेवा, गांगीता पीतपीवरा, यशोभा, कुन्दभा, रङ्गी नवसी, नवदा, सुखा ॥१९॥

कला लासी सुका गौरी चन्द्रलेखा प्रभावती ॥
लक्ष्या जयन्ती माला च सुलेखा गुणोत्तमा ॥२०॥
कला, लासी सुका, गौरी चन्द्रलेखा प्रभावती, लक्षा, जयन्ती, माला सुलेखा, गुणोत्तमा, ॥२०॥

प्रज्ञा प्रज्ञावली नामा प्रज्ञोदारा प्रभावली ॥
प्रभाराजी प्रभालक्षा प्रभाशीला प्रभालिका ॥२१॥
प्रज्ञा, प्रज्ञावली, प्रज्ञोदारा, प्रभावली, प्रभा राजी, प्रभा लक्षा, प्रभा शीला, प्रभालिका ॥२१॥

तैजोवली च धीमन्ती चूर्ण्या चामीकरा पिच ॥
विन्ध्यावली दीपिका च प्रतीपांङ्गी समालका ॥२२॥

तैजोवली, धीमन्ती माधुर्या, चामाकरा और विंध्यावली दीपिका, प्रात पाङ्गी सामलका ।.२२॥

विद्यावली सुनीतोच मणिमाला मणिप्रभा ॥
जयन्ती प्रजपा विज्ञा सुमत्ता सतभा मती ॥२३॥

विद्यावली, सुनीति, मणिमाला, मणिप्रभा, जयन्ती, प्रजपा विज्ञा, सुमत्ता, सतभा, मति ॥२३॥

चरम्भावी च सम्प्रेषा प्राश्लसा प्रियमा लसा ॥
सकुन्तला सुकान्ती च चन्द्र माला वरांशुका ॥२४॥

चरम्भावी, सम्प्रेषा, प्राश्लसा, प्रियमा, लसा, शकुन्तला, सुकान्ति, चन्द्रमाला, बरांसुका ॥२४॥

साध्वी सीमाच सन्तोषा मानसा पि सुधापि च ॥
पूवरा चातुरी सम्या भूरिलेखा च सौरभा ॥२५॥

साध्वी, सीमा, संतोषा, मानसा, सुधा, पूवरा, और चातुरी, सम्या, भूरिलेखा, सौरभा ॥२५॥

मुदावन्ती मुदा नामा सुनन्दा बृहतालिका ॥
स्वराजी सावली देवी देवदीक्षा च सुन्दरी ॥२६॥

मुदावन्ती, मुदा, सुनन्दा, बृहतालिका, स्वराजी, सावली, देवी, देवदीक्षा, सुन्दरी ॥२६॥

रूपवासा सुराजीवा योगवासा सुविन्दका ॥
अलं विद्या च स्वधरा सुखाङ्गीतिकाभिधा ॥२७॥

रूपवासा, सुराजीवा, योगवासा, सुबिन्दका, अलम्विद्या, स्वधरा, सुखा, गीतिका, ॥२७॥

त्रिवरा कलविन्दा च मञ्जु शाविद्युतावली ॥
रुक्म कान्ती च रुक्माङ्गी सुभद्रा भद्र वेदिका ॥२८॥

त्रिवरा, कलम्विदा मञ्जुसा, विद्युता वली, रुक्मकान्ति, रुक्माङ्गी, सुभद्रा, भद्र वेदिका ॥२८॥

मुदे माला दयोऽप्येता भ्रातु स्तस्य महीपतेः ॥
कन्यास्ता अपि सर्वा वै दत्ता तेन महा धनैः ॥२९॥

मुदे, माला आदि ये सब महाराज आश्वसेन महाराज की कन्याएँ हैं तथा उन के भाई के भी बहुत सी कन्याएँ उन्होंने भी बहुत दहेज के साथ अपनी कन्याओं को महाराज दशरथ जी के लिए दिया ॥२९॥

तासु राज्ञः कुमारा ये तेषां नामानि मे शृणु ॥
क्रमेण कथयिष्यामि यथा पूर्व हिमातृणाम् ॥३०॥

इन सब रानियों से महाराज दशरथ जी के जो पुत्र उत्पन्न हुए हैं उन के भी नाम क्रमशः मैं तुम से कहती हूँ सुनो ॥३०॥

विद्यानिधि श्च सुनिधि स्तथा गुण निधिः परः ॥
तेजोनिधिः सुरानिधिः कलानिधि र्यशोनिधिः ॥३१॥

विद्यानिधि, सुनिधि, पर तेज, तेजानिधि, कलानिध, यशोनिधि, ॥३१॥

पुण्यनिधि र्जय निधिः बलविध श्शेखरः ॥
केलिविधः कलाविधो रत्न चूणो गुणाकरः ॥३२॥

पुण्य निधि, जय निधि, बलविध, शेखर, कालविध, रत्न चूड़, गुणाकर ॥३२॥

शिलाकारो बलाकारो गुणाकारो गुणोदयः ॥
रिपुरेख सुखाकारो रिपुञ्जय परञ्जया ॥३३॥

शिलाकार, बलाकार, गुणाकार, गुणोदय, रिपुरेख, सुखाकार, रिपुञ्जय, परञ्जय ॥३३॥

मणिचूड़ा मणिवक्षा जयबाहुः परान्तकः ॥
विजयी रिपुशल्यश्च सुकर्णा बलजिद्बली ॥३४॥

मणि चूड़, मणि वक्षा, जय बाहु, परान्तक विजयी, रिपु सल्य, सुकर्ण, बलजित, बली ॥३४॥

सुमेधाः सत्यमेधाश्च सुखजान सुजानकौ ॥
वीरसिंहो वीरलक्ष्मा वीरलेखो बलायुधः ॥३५॥

सुमेधा, सत्य मेधा, सुखजान, सुजानक, वीर सिंह वीरलक्ष्मा, वीर लेख, बलायुध ॥३५॥

रणसन्धोरि कर्षश्च जयशाली यशोर्णवः ॥
बलार्णवो विक्रमान्तो रणकीलो रणोद्धतः ॥३६॥

रणसंध, अरिकर्ष, जय शाली, यशोर्णव, बलार्णव, विक्रमान्त, रणकील, रणोद्धत ॥३६॥

रणधीरो युद्ध प्रज्ञोयुद्धशाली बलास्त्रकः ॥
वीरमौलिश्च वीराज्ञौ चलपंक्तिः सितायुधः ॥३७॥

रणधीर, युद्धप्रज्ञ, युद्ध शाली, बलास्त्रक, वीर मौली, वीराज्ञ चलपंक्ति, सिता युध ॥३७॥

रणधुन्धो धराधीशो राजविद्योति विक्रमः ॥
विक्रमा औपतड़ौ दग्यूः परकान्तः सुयोधकः ॥३८॥

रणधुन्ध, धराधीस, राजविद्य, अति विक्रम, विक्रमा, औपतड़, दग्यूः परकान्त, सुयोधक ॥३८॥

अश्वखेलो धर्मयोद्धा धर्मधी जैन पालकः ॥
कृपो मेधो दयोधीरः क्रीड़ाविज्ञः सुविज्ञकः ॥३९॥

अश्व खेल, धर्म योधा, धर्म धीर, जन पालक, कृप, मेध दय, धीर, क्रीड़ाविज्ञ, सुविज्ञक ॥३९॥

लक्ष्म वेधी दूरलक्ष्मा परकण्टक रश्मिकौ ॥
सस्त्र खेलो महीनाथो मणिपूरो मणिप्रभः ॥४०॥

लक्ष्मवेधी, दूरलक्ष्म, परकण्टक, रश्मिक, शस्त्रखेल, महीनाथ, मणीपूर, मणीप्रभ ॥४०॥

खड्गचिद्यो सिचिद्यश्च चापचित्रो विचित्रकः ॥
चक्रखेलो गदाखेलः पङ्कखेलो विशल्यकः ॥४१॥
खंग विद्य, असि विद्य, चापचित्र, विचित्रक, चक्रखेल, गदाखेल, खड्ग खेल विशल्यक ॥४१॥

सुकुण्डलो रत्नमाली मित्रपालः सुधाङ्गदः ॥
अलम्बदो भिजानश्च सुवदो रत्नग्रीवकः ॥४२॥
सुकुण्डल, रत्नमाली, मित्रपाल, सुधाङ्गद, अलम्बद, अभिजान, सुवद, रत्नग्रीव ॥४२॥

दान शीलो दयाशीलो रूपशीलो शुभम्बदः ॥
रत्नकण्ठ श्चित्र तेजा श्चित्रजानो प्यलम्भुजः ॥४३॥
दान शील, दयाशील, रूप शील, सुभम्बद, रत्नकण्ठ, चित्रतेजा, चित्रजान, अलम्भुज ॥४३॥

गुणचन्द्रो यशश्चन्द्रो रूपेदुन्श्च गुणोपकः ॥
वारचन्द्रो वीरचन्द्रो देवचन्द्रो ग्रचन्द्रमा ॥४४॥
गुणचन्द्र, यशचन्द्र, रूपेन्दु, गुणोपक, वार चन्द्र, वीरचन्द्र, देव चन्द्र, उग्र चन्द्रमा ॥४४॥

कुलभानु गुणादीपो रणमार्तण्ड कोविदः ॥
गुणहर्षो देवहर्षो रूपहर्ष सुहर्षिणो ॥४५॥
कुलभानु, गुणदीप, रणमार्तण्ड, कोविद, गुणहर्ष, देव हर्ष, रूप हर्ष, सुहर्षिण ॥४५॥

श्रीहर्षो ज्ञानहर्षश्च जयहर्ष प्रहर्षिणो ॥
अतिहर्षः शुभ्रहर्षः प्रीतिहर्ष सदामुदः ॥४६॥
श्री हर्ष, ज्ञान हर्ष, जय हर्ष, प्रहर्षिण, अति हर्ष, शुभ्र हर्ष, प्रीति हर्ष, सदामुद ॥४६॥

सभ्यश्च देवरूपश्च मनोज्ञश्च सुरोचकः ॥
देवकश्च वराङ्गश्च गुणकः परवेदकः ॥४७॥
सभ्य, देव रूप, मनोज्ञ, सुरोचक, देवक, वरांग, गुणक, परवेदक ॥४७॥

देवाग्रो देवमान्यश्च देवकान्तः परातिगः ॥
सुनामा रोचनो नीतो गुणनाभो विनीतकः ॥४८॥
देवाग्र, देव मान्य, देवकान्त परातिग, सुनामा, रोचन नीत, गुणनाभ, विनीतक ॥४८॥

विलाशकोऽग्रशीलश्च सुवक्ता सुगलो परः ॥
निम्ननाभो महौजाश्च विज्ञो वेदक मानकौ ॥४९॥
बिलासक, अग्रशील, सुवक्ता, सुगल, पर, निम्ननाभ, महोजा, विज्ञ वेदक, मानक ॥४९॥

सुलोको गुणलेखश्च गुणदो दानकोविदः ॥
सुवर्चा नवनः प्रज्ञो गुणविज्ञः सुलाशकः ॥५०॥
सुलोक, गुणलेख, गुणद, दानकोविद, सुवर्चा, नवन, प्रज्ञ, गुण विज्ञ, सुलासक ॥५०॥

अप्रवादः सुधानश्च गुणज्ञो गानकोविदः ॥
बरलीको महोल्लासः सुकलो मोद वैधकौ ॥५१॥

अप्रवाद, सुधान, गुणज्ञ, गान कोविद, बरलोक, महोल्लास, सुकल, मोद, वैधक ॥५१॥

धनरावश्च दाक्षिण्योगदा नद्यो बरालकः ॥
सुबलोवर बेलाश्च मुदधामा मनोविदः ॥५२॥

धनराव, दाक्षिण, योगदा, नद्य, बरालक, सबल, परबेला, मुदधामा, मनोबिद ॥५२॥

अरितेजा रिकम्पौ च रिपूद्वेगन सौविदौ ॥
अमायकः सुधाशीश्चवशकार प्रकारकौ ॥५३॥

अरितेज, अरिकम्प, रिपूद्वेगन, सोविद अमायक, सुधाशी बसकार, प्रकारक ॥५३॥

सुजातो वल्गुक श्चैव वलो वीरो धुरन्धरः ॥
हर्यक्षो बोध गामिस्या वालवः सुखभावनः ॥५४॥

सुजात, बलगुक, बल, बीर, धुरन्धर, हरियक्ष, बोध गामिष्य अबालव, सुखभावन ॥५४॥

कुम्भशिरा महाजान प्रमदः प्रविखेलकः ॥
बिराजकः प्रमालः स्या द्देवनाथो ललामकः ॥५५॥

कुम्भशिरा, महाजान, प्रमद, प्रवी, खेलक, बिराजक प्रमाज, देवनाथ, ललामक ॥५५॥

सुविन्दको योगमेधा परन्तेजा रिपुत्रशः ॥
अरविन्दो रिद्वेषश्च बरगोवरगायकः ॥५६॥

सुबिन्दक, योगमेधा, परन्तेजा, रिपुत्रस, अरविन्द, अरिद्वेष, बरग, बरगायक ॥५६॥

बरीको मधुवाक् शीलो बहुदः शालिकः सुवाक् ॥
अजरो देवनादश्च सून्नत स्तिलको वुक ॥५७॥

बरीक, मधुवाक, शील, बहुध, सालिक, सुवाक, अजर, देवनाद, सूनत, तिलक, वुक ॥५७॥

अमलो देवको मादी नन्दको ललितः स्वदः ॥
लोकावनो विटप्रज्ञ सुधास्तुको नरोत्तमः ॥५८॥

अमल, देवक, मादी, नन्दक, ललित, स्वद, लोकावन, बिट प्रज्ञ, सुधास्तुक, नरोत्तम ॥५८॥

अदोलकः सारलोकः प्रजिष्णु र्वारिमा प्रवा ॥
अमदो मधुवादी च सुप्रगल्भ सुखव्रतः ॥५९॥

अदोलक, सारलोक, प्रजिष्णु, बारिमा, प्रबा, अमद, मधुबादी, सुप्रगल्भ, सुख व्रत ॥५९॥

जित्वरौ गुणविन्दश्च स्वामोदाकल भीषणः ॥
जैत्रात्रको सुनागश्च विद्याशीलो विदामकः ॥६०॥

जित्वर, गुणविन्द, स्वामोद, आकल, भीषण, जयघात्रक, सुनाग, विद्याशील यहाँ तक ये महाराज कोशलेन्द्र जी की १५० (डेढ़ सौ) रानियों के नामों का वर्णन हुआ ॥६०॥

इति श्री शंकर कृते श्रीग्रमररामायणे श्रीसीतारामरत्नगाङ्गपायां
श्रीक्षितीशमौलि कौशलेन्द्रस्य पत्नीनां नामकथना
प्रसङ्गः सप्तमस्सर्गः ।।७।।

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादना कृत टीकायां कोशलेन्द्रस्य पत्नीनां नाम कथनो
प्रसङ्गः सप्तमः सर्गः

अथ रत्नोदधेस्तीरे पूर्वतो दश योजनम् ।।
देशे सौरठके चास्ति पुरा रूपालिका वरा ।।१।।

अब पूर्व समुद्र के किनारे से दस योजन की दूरी पर सोरठ नाम के देश में रूपालिका नाम की एक श्रेष्ठ नगरी है ।।१।।

राजास्या क्षत्रिय स्तत्र नाम्ना पिच महामतिः ।।
राज्ञीनो तस्य पुत्रार्था नुष्ठितस्य व्रतस्यतु । २।।

यहाँ के राजा महामति नाम के क्षत्रिय हैं। उन महाराज की रानियों से पुत्र उत्पन्न हों इस लिए अनुष्ठान किए हुए व्रत से ।।२।।

भग्नता अपि सर्वासु द्वे शते विंशति स्तथा ।।
जाता सुता महाभागा लग्नैके च ग्रहे शुभे ।।३।।

२२० पुत्री जो सब की सब महा भाग्य शालिनी एक ही ग्रह व एक ही लग्न सुन्दर मुहूर्त में ।।३।।

समजाः समरूपाश्च दृष्ट्वा ज्योति विंदो पिताः ।।
योजिता नाम्नि स्वेकस्मि न्दशैवच दशैवच । ४।।

एक साथ समान रूप वालीं उत्पन्न हुईं । ज्योतिष विद्या के जानने वाले पिता ने उन सब को दश २ कर के एक २ नाम से योजित किया ।।४।।

स्वेच्छया भवने तस्य चैकदा मुनि नारदः ।।
आगतो वादय न्वीणां तेन राज्ञा समर्चितः ।।५।।

एक बार अकस्मात् नारद मुनि अपनी स्वेच्छा गति से वीणा बजाते हुए महाराज के घर आ पहुँचे। महाराज ने उनकी पूजा की ।।५।।

पुत्र्या सर्वासमाहूय पातिता मुनि पादयोः ।।
तदा शिर्वाचनै स्तेन मुनिनापि प्रयोजिताः । ६।।

सब कन्याओं को बुला कर के श्री नारद जी के चरणों में प्रणाम कराया। मुनि नारद जी ने सुन्दर आशीर्वाद दिया। ६।

तासां समस्तां रूपेण चाङ्गे नापि विलोक्य सः ।।
नारदो विस्मयं प्राप्य राजानं चाब्रवी त्तदा ।।७।।

उन कन्याओं के रूप गुण अङ्ग, रंग, अवस्था सब समान रूप से देखकर नारद जी को बड़ा आश्चर्य हुआ और महाराज से बोले कि ।।७।।

शृणुराजन्महाभाग महाभागाहि ते सुताः ॥
सर्वेश्वरस्य रामस्य भविष्यन्ति विमातरः ॥८॥

राजन् सुनो ! आप बड़े भाग्यशाली हैं और आप की महाभाग्यशालिनी कन्याएँ सर्वेश्वर श्रीराम जी की बिमाता होवेंगी ॥८॥

आसां प्रदानं पुत्रीणां कर्त्तव्यं तु ममाज्ञया ॥
श्रीमद्दशरथे राज्ञि सार्वभौमे महोजसि ॥९॥

इन कन्याओं का परिग्रहण तुम मेरी आज्ञा से महापराक्रमी, सार्वभौम, चक्रवर्ति महाराज दशरथ जी से कराना ॥९॥

एवं तस्य वचः श्रुत्वा नारदस्य महामतिः ॥
प्रत्यूवाच विकुर्वाणो करिष्ये वचनं तव ॥१०॥

राजा महामति जी नारद जी के इस प्रकार वचन सुनकर आप ही का कहा करूँगा ऐसा कहकर ॥१०॥

परन्त्वस मञ्जसंहि न मे तस्य समानता ॥
स उच्चैः स्थः सर्वथा चाहं हीनः सर्वथा मुने ॥११॥

फिर कहे कि महाराज बड़े असमञ्जस की बात है कि वे सर्वथा ऊँचे हैं, मैं सर्वथा हीन हूँ। ये समान सम्बन्धी बातें कैसे सुघटित होंगी ॥११॥

स दिनेशान्वये भानु रहन्तु मुनि नारद ॥
निशेशा न्वय दीपोस्मि कथं सोङ्गी करोत्यतः ॥१२॥

हे मुने वे सूर्य वंश में सूर्य के समान हैं। मैं चन्द्र वंश में दीपक के समान हूँ अतः कैसे वे मेरी कन्याओं को अङ्गीकार करेंगे ॥१२॥

विनीतं वचनं तस्य राज्ञः श्रुत्वा महामतेः ॥
उवाच नारदः श्रीमान्माकुरु द्वापरं नृप ॥१३॥

महाराज महामति जी के इस प्रकार विनीत वचनों को सुनकर श्रीमान् नारद जी बोले कि राजन् आप द्वापर (शंशय) मत करो ॥१३॥

स सौशील्यो गुणाब्धिस्स्या न्महाशौन्दर्य्य विग्रहः ॥
असंख्य वैभवः श्रीमा न्ननिषेधं करिष्यति ॥१४॥

वे महाराज चक्रवर्ती दशरथ जी महाराज सुन्दरता के विग्रह, सद्गुणों के समुद्र व बड़े सुशील हैं। महान् ऐश्वर्यमान श्रीमान होने से वे आप की प्रार्थना को व्यर्थ नहीं करेंगे ॥१४॥

पूर्वं पितामहेनापि भविष्यज्ञेन ब्रह्मणा ॥
प्रज्ञापितोस्मि वृत्तान्ते पित्राजेन समन्तकम् ॥१५

भविष्य के जानने वाले पितामह ब्रह्मा जी ने भी पहले ही यह वृतान्त मेरे को जना रक्खा है ॥१५॥

श्राभिः कृतं सुताभिस्ते पूर्वं तस्मै तपः परम् ॥
वात्सल्य भाव प्राबल्या च्छ्रीरामे बालविग्रहे ॥१६॥

तुम्हारी इन कन्याओं ने पूर्वजन्म में परम श्रेष्ठ तप श्री राम जी के बाल विग्रह वात्सल-भाव की प्राबल्यता से किया था॥१६॥

राज न्विना श्रमेणैव भविष्यं न्तद्भविष्यति ॥
वारितु न्नक्षमो देवो मनुष्याणां तु का कथा ॥१७॥

इस लिए हे राजन् ये होनहार बातें बिना परिश्रम के ही हो जाँयगी। इस होनहार का विरोध करने के लिए ब्रह्मा भी कुशल नहीं है मनुष्यों की तो क्या कहना है ॥१७॥

इति वचनै तत्तिभि स्तोषयित्वा मुनीशो नरपति मतिकान्तं सौरठेशं सुतानाम् ॥
उपयम वर कार्य्ये कौतुकी कार्य्य दक्षः भगवति परि पक्षो ब्रह्मलोकं जगाम ॥१८॥

इस प्रकार के बहुत से बचनों से नारद जी ने सौरठाधिपति महाराज महामति जी को कन्याओं के वर-कार्य के विषय में संतुष्ट करके भगवान का पक्ष करने वाले कौतुकी कार्यों में बड़े कुशल श्री नारद जी ब्रह्म लोक को चले गए॥१७॥

• समर्घं प्राप्य पुत्रीणां विवाहस्य महामतिः ॥
आहूय सार्वभौमन्तं श्री मन्त मजनन्दनम् ॥१६॥

महाराज महामति जी पुत्रियों के विवाह के विषय में निश्चय पाकर सार्वभौम, श्रीमान्, अजनन्दन दशरथ जी को बुलवा कर ॥१६॥

अत्यादरेण कन्यास्ताः समाकाराः मनोहराः ॥
सुदायेनापि महता ददौ तस्मै शुभेदिने ॥२०॥

अत्यन्त आदर से मनोहर समान सूरत वाली समस्त कन्याओं को सुन्दर दिन लग्न में महान् विधि से सुन्दर दमाद महाराज दशरथ के लिए दे दिया ॥२०॥

सोपि लब्ध्वा शुभाजाया एकत्रैव गुणाधिकाः ॥
धनेन दास दासीभि र्मुमोद मधुराकृतिः ॥२१॥

सुन्दर जन्म, सुन्दर बढ़े हुए समान गुण वाली पत्नियों को दास, दासी, और धन सहित प्राप्त करके मधुर आकृति वाले महाराज दशरथ जी भी अति प्रसन्न हुए ॥२१॥

व्यतीते कुत्रचि त्काले समाकारा सुतासुच ॥
जज्ञाते च द्वौ द्वौ पुत्रौ समाकारौहि मातृवत् ॥२२॥

कुछ काल के बीतने पर उन समान रूप गुण वाली पत्नियों से माताओं की ही तरह समान आकार वाले पुत्र एक २ से दो २ उत्पन्न हुए। २२।

मातृभिर्द्धि गुणी कृत्वा वशिष्टे न महात्मना ॥
नाम्नापि योजिताः सर्वे बसु रुद्र दिनेश वत् ॥२३॥

महात्मा श्री बसिष्ठ जी ने भी जैसे आठ बसुओं का एक नाम, ग्यारह रुद्रों का एक नाम, बारह सूर्यों का एक नाम होता है इसी प्रकार बीस २ पुत्रों का एक २ नाम रक्खा ॥२३॥

तथा च कथयिष्यामि पुत्राणां मातृणा मपि ॥
नामानि नृप कन्ये त्वं शृणु तानि समासतः ॥२४॥

हे राजकन्यके ! अब उन माताओं व पुत्रों का नाम मैं जानती हूं अतः तुम से कहकर सुनाती हूं सुनो ॥२४॥

रूपावल्यः सुखावल्य: गुणावल्यो ब्ज पङ्क्तयः ॥
कला लेखा कञ्जमाला रश्मिमाला ललामकाः ॥२५॥

वरेण्याश्च वराङ्गाश्च शुभाङ्गाश्च मनोरमा: ॥
सुप्रेतिकाः सुरङ्गा श्च नवलाः करभोरुकाः ॥२६॥

रूपावल्य, सुखावल्य, गुणावल्य, अब्जपंक्ति, कला, लेखा, कंजमाला, रश्मि माला, ललामका, वरेन्या वरांगा, शुभाङ्गा, मनोरमा, सुप्रेतिका, सुरङ्गा, नवला, करभोरुका ॥२५॥२६॥

वामाङ्गाः वरवेण्यश्च प्रभावन्त्यो मनोज्वलाः ॥
प्रभाशीला श्चाप्येतास्तु स्वगणे रैक्य संज्ञकाः ॥२७॥

वामाङ्गा, वरवेन्या, प्रभावन्ती, मनोज्ज्वला प्रभाशीला-इस प्रकार अपने अपने गणों में एक एक नाम वाली ॥२७॥

तथैवासां कुमाराणां काम शौन्दर्य्यं शालिनाम् ॥
पित्रा नुहरतां नाम ज्ञेयमेकं तु विंशतेः ॥२८॥

जैसे माता हैं वैसे इन के काम सदृश शौन्दर्य वाले तथा पिता का अनुशरण करने वाले कुमारों का भी बीस २ का एक २ नाम जानना चाहिए ॥२८॥

शार्दूला जृम्भणा नाग कर्षका विश्वदीपकाः ॥
अप्रमेयबला रत्न यूपा अर्गल बाहुकाः ॥२९॥

शार्दूल, जृम्भण, नागकर्षक, विश्व दीपक, अप्रमेयबला, रत्नयूप, अर्गल बाहुका ॥२९॥

सर्वजया जिष्ण वश्च सपत्नकंम्पना स्तथा ॥
देश रूपा देवकल्पा वराङ्गा बलशालिनः ॥३०

सर्वजया, जिष्णव सपत्न, कम्पन, देश रूपा, देव कल्पा, वराङ्गा, बलशालिन ॥३०॥

घननादा घनरवा स्तरङ्ग बाहुका अपि ॥
सुप्रलापा अप्रधृष्या अमुधा रणक्रीडकाः ॥३१॥

घन नादा, घनरवा तरङ्ग बाहुका, सुप्रलापा, अप्रधृष्या, अमुधा, रण क्रीड़का ॥३१॥

महीभूषा बलाग्राश्च स्वगणं न विहीयते ॥
विद्यावन्तो पि नीतिज्ञाः पितुः सेवन तत्पराः ॥३२॥

महिभूषा, बलाग्रा-इस प्रकार एक एक नाम वाले अपने अपने गणों को नहीं त्यागते हैं। सभी लोग विद्वान हैं; नीति को जानने वाले हैं; पिता की सेवा में सावधान हैं ॥३२॥

शास्त्रविद्या विनीताश्च प्रीतिमन्त; परस्परम् ॥
श्रीरामस्य प्रियाः सर्वे आज्ञया प्यनु वर्तिनः ॥३३॥

शस्त्र विद्या में निपुण हैं; नम्र स्वभाव वाले हैं; परस्पर अनुराग रखने वाले हैं; श्री राम जी की भी आज्ञा का पालन करने वाले सब के सब अति प्रिय हैं ॥३३॥

इति श्री शंकर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
श्रीदशरथ पुत्र पत्नीनां नाम कथनो नाम
अष्टमस्सर्गः ॥८॥

इति श्री मधुकर रूपरत्सास्वादिना कृता टीकार्था
श्री दशरथ पुत्र पत्नीनां नाम कथनो नाम अष्टमः सर्गः

अथेदानिं राजकन्ये सुरेशा द्यभिवन्दिताः ॥
राज्ञा श्रीकौशलेन्द्रस्य कौशल्यायाश्च सेवकाः ॥१॥

हे सुकान्ति ! अब मैं इन्द्रादिकों से बन्दित महाराज श्री कोसलेश जी और श्री कौसल्या अम्बा जी के सेवक ॥१॥

दाश्यो मुख्याश्च सचिवा ये चान्ये कार्य्य कारिणः॥
पर्य्याया स्वर्णकाराद्या नामतो वर्णयामिते ॥२॥

दासी आदि मुख्यों का तथा मन्त्रियों का और भी जो कोई कार्य करने वाले अन्यों का जो कि सुनार, मनिहार आदि हैं उन का भी नाम क्रमशः वर्णन कर के सुनाती हूँ ॥२॥

एषां ज्ञानेन ध्यानेन तीर्त्वा संसार सागरम् ॥
त्रिपादे श्रीअयोध्यायां यान्ति येभावसाधकाः ॥३॥

इन सब के ज्ञान व ध्यान से भावना भजन का साधन करने वाले जीव संसार से तर कर त्रिपाद बिभूति वाली श्री अयोध्या जी में पहुँच जाते हैं ॥३॥

अथ नृप सचिवास्तु सुमन्तो धर्मपालकः ॥
धृष्टि जयन्तो विजयी सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्द्धनः ॥४॥

महाराज श्री चक्रवर्ती जी के मन्त्रियों का नाम-श्री सुमन्त्र, धर्मपाल, धृष्टि, जयन्त, विजय, सुराष्ट्र, राष्ट्रवर्धन ॥४॥

अशोकश्च प्रधानाति मुख्याः स्युः सर्वकार्य्यकाः ॥
नन्दकः कुशली जिज्ञः प्रकृष्टा विनयी तथा ॥५॥

अशोक है । ये सब कार्यों में मुख्य प्रधान मन्त्री हैं । नन्दक, कुशली, विज्ञ, प्रकृष्ट, विनयी ॥५॥

सारज्ञः प्रवलो धूर्य्यो धन्यधीः यज्ञवाहकः ॥
वैवधीः सम्प्रदो मुक्तः कल्याणो वरवेलकः ॥६॥

सारज्ञ, प्रबल, धूर्य, धन्यधी, यज्ञवाह, वैवधी सम्प्रद, मुक्त, कल्याण, वर वेलक ॥६॥

शौकप्रज्ञेन सहिताः पूर्वोक्तानां महात्मनां ॥
क्रमेण युग्मतो ज्ञेया ह्यनुकर्तार औपधाः ॥७॥

शौकप्रज्ञ—ये सोलह एक एक प्रधान मन्त्री के दो अनुयायी मन्त्री (सहायक मन्त्री) हैं ॥७॥

मितन्दस्तु महानेको गुणज्ञो नामतोप्यसौ ॥
धनोपचयो व्ययश्च प्रदिश्यन्ति नराधिपे ॥८॥

बड़े गुणवान एक मितन्द नाम के महान् कार्य कर्त्ता हैं जो महाराज के लिए धन-उपचय (आमदनी) और व्यय का विधान सम्हालते हैं ॥८॥

वशिष्ट वामदेवाद्याः प्राग्विवाका महात्मनः ॥
कलाकारेषु यत्कार्य्य मधिकर्ता स्तु तस्यवै ॥९॥

श्री वसिष्ठ वाम देव आदि ये महात्मा प्राचीन की रीति को बताने वाले हैं। और कलाकारों में जो भी प्रधान अधिकर्त्ता होते हैं उन में । ९॥

आवलीको महानेको तस्या नुगामिनो परे ॥
एकैक वस्तु प्रत्येको बहुशोपि तदा हिताः ॥१०॥

आवलिक नाम का एक महान कार्य कर्त्ता है और सब कलाकार उस के अनुगामी हैं । प्रति एक एक वस्तु का अलग २ कलाकार है । ऐसे कलाकार बहुत है ॥१०॥

नाम्नापि गौरवोप्यको यावदन्न मसिद्धकम् ॥
राजभोग्य तस्य चासा वधिकारी समन्ततः ॥११॥

राजभोग के योग्य जितना कच्चा अन्न है उसका चारों तरफ से इन्तजाम कराने वाला "गौरव" नाम का एक मुखिया है ॥११॥

सुशीलको महाने को घृत्तादि रस वस्तुनः ॥
अधिकारी बहुशोप्यन्ये तद्वश्याःप्रतिवस्तुषु ॥१२॥

तथा दिव्यानि वस्त्राणि बहुमौल्यानि यानिवै ॥
तेषां गृहाधिकारी तु प्रवाल कर तीर्य्यते ॥१३॥

इसी प्रकार घृतादिक रस-वस्तुओं का भी सुशीलक नामक एक मुखिया है । उसके अनुयायी बहुत से हैं जो प्रत्येक वस्तुओं के विधान में सुशीलक के अधीन रहते हैं । उसी प्रकार बिस कीमती जितने भी दिव्य वस्त्र हैं उनके कोठार का अधिकारी प्रवालक नाम का है जो सब कार्य कर्त्ताओं में मुखिया है ॥१२॥१३॥

पुष्पादि क्वथितानां तु राजार्हाणां सुगन्धिनाम् ॥
अधिकारी दिदिलः स्या द्वहु शोनुचरै स्सह। १४॥

राजाओं के योग्य सुगन्धित पुष्प आदिकों के गलीचों का अधिकारी बहुत अनुचरों का प्रधान, दिदिल नाम का है ॥१४॥

अधिकारी भूषणानां राजार्हाणां नृपात्मजे ॥
नाम्ना स्या त्प्रेयक स्त्वेको वहुशास्तस्य सेवकाः ॥१५॥

राजकीय भूषणों के कोषाध्यक्ष "श्री प्रेयक जी हैं और बहुत से सेवक सेवा करते हैं ॥१५॥

अनाहतः सुवर्णस्या धिकारी भास्वरस्तथा ॥
रजतस्याधिकारी तु नाम्ना मोद्गलोमहान् ॥१६॥

स्वर्ण के कोषाध्यक्ष श्री अनाहत जी और भास्वर जी हैं। चाँदी के कोषाध्यक्ष "श्री मोद्गलजी हैं ॥१६॥

ताम्रादीना न्तु धातूनां वासरीको गणान्वितः ॥
नील पीतादि रागाना मधिकारी मधूलकः ॥१७॥

ताम्रादि धातुओं के कोषाध्यक्ष बहुत से गणों के ऊपर "श्री बासरीक जी" है नील पीत आदि रंगों के कोषाध्यक्ष "श्री मधुलक जी" हैं ॥१७॥

खड्गं च गवलश्चैव गजदन्तादिकं च यत् ॥
तेसां रास्या धिकारी तु जामको नाम सन्मतिः ॥१८॥

तलवार, शृङ्ग (सींग). गजदन्तादि के खजाने का अधिकारी सुन्दरमति वाले "जामक जी" हैं ॥१८॥

राजो पकरणंयाव च्छत्रसिंहासनादिकम् ॥
यौगकः क्षेमक स्तेषां प्रणीतकः प्रमाणवित् ॥१९॥

छत्र, सिंहासनादिक जितनी भी राजकीय सामग्रियाँ हैं उनका उपचय और रक्षा करने वाले बड़े प्रमाणवेत्ता "श्री प्रणीतक जी हैं ॥१९॥

अप्रोत मणय स्तेषा मधिकारी सुरत्नकः ॥
वहुशोऽप्यनुगास्तस्य प्रभेदेष्वा धिकारिणः ॥२०॥

बिना बेधे हुए मणियों के कोषाध्यक्ष (खजांची) "श्री सुरत्नक जी" हैं जो बहुत से कार्य कर्त्ताओं के द्वारा रत्नों के बेधने (छेदने) का काम कराते हैं ॥२०॥

वालानां क्रीडन व्यूहा आदर्शादि परं हि यत् ॥
मण्डपा लंकृतं बाहू दण्डदीप गृहादिकम् ॥२१॥

बालकों के खिलौने, दर्पण आदि व मण्डल के दीप-दण्ड, खेलने के मकान ॥२१॥

एतेषा मधिकारीस्या न्नाम्ना कौवर को गुणी ॥
परिवश्या अपि तस्य नानागारेष्वधिकृताः ॥२२॥

इस प्रकार की सामग्रियों के खजाने के कोषाध्यक्ष श्री कौवरक जी बड़े गुणवान, कलाकुशल हैं। आप के अधीन बहुत से नौकर विविध प्रकार के महलों में काम करते हैं ॥२२॥

स्वर्ण रौप्य कृतं याव त्स्थालीभृङ्गारकादिकम् ॥
तद्गृहाधिकृत श्चासौ नाम्नौ सावोधकः सुधीः ॥२३॥

स्वर्ण के व चाँदी के थाली, झारी आदिक पात्रों के संरक्षक बड़े बुद्धिमान श्री सोबोधक जी हैं ॥२३॥

वाद्यं चतुर्विधं सर्वं न्नाना भेदाकृति कृतम् ॥
तदाधिकारी नाम्नातु सुजीवक उदारधी: ॥२४॥

तंत्, घन, सुशिर, आनद्ध-इन चार भेदों के नाना प्रकार के आकृति वाले जितने भी बाजे हैं उन सब के अधिकारी बड़े उदार बुद्धि वाले श्री सुजीवक जी हैं ॥२४॥

शस्त्राणां कवचादीना मधिकारी सुलोलकः ॥
तेनाप्यधिकृता श्चान्ये तत् कुर्वन्ति तदाहितम् ॥२५॥

शस्त्र व कवचादिकों के अधिकारी श्री सुलोलक जी हैं। आप के अधीन बहुत से नौकर आज्ञा पालन करते हैं ॥२५॥

हस्तीनां सज्जनाथावद् भूषणानि नृपात्मजे ॥
सुभालकोपि नाम्ना स्या त्स्वानुगैर्बहुभिः सहः ॥२६॥

हाथियों के सजाने के जितने भी भूषण हैं उन के कोसाध्यक्ष श्री शुभालक जी हैं जो बहुत से सेवकों के साथ में हैं। २६॥

एवञ्च राजार्हाणांतु हयानां हेमनिर्मिता: ॥
खचिता रत्नमुक्ताभिः कल्पनाभूषणान्यपि ॥२७।

इसी प्रकार घोड़ों की स्वर्ण निर्मित राजकीय भूषण और रत्न मुक्तादिक खचित विविध रचना के भूषणों के ॥२७॥

अधिकार्य्या हि तत्रस्था द्वर वाहुक नामकः ॥
सान्वयी सर्व विद्यासु परिचारक प्रेरकः ॥२८॥

अधिकारी श्री बरवाहुक जी हैं जो बहुत से समाज के ऊपर मालिक और सर्व विद्याओं के प्रचारकों के प्रेरक हैं ।२८।

कश्मीर जन्म कस्तुरी कङ्कोल घन सारकम् ॥
जाति फलंजायकञ्च लवङ्गलादि पूगकम्। २९।

केशर, कस्तूरी, कणकोल, कपूर, जायफल, पीला चन्दन, लौंग, सुपारी आदि ॥२९॥

यच्च कर्दम मिश्राकं ताम्बूलं वेप वारकम ॥
अपरं वेषवारादि सर्वमेकत्र केगृहे ॥३०।

तथा कपूर, अगर, कस्तूरी, कणकोल इन सबको पीसकर बनाया हुआ अंग लेप, सौंप, पान, पान का मसाला ये सब वस्तुएं जिस घर में रहता हैं ॥३०॥

एतद्व स्तुसमूहानामधिकर्ता विदालकः ॥
अन्ये तद्वस्तु रक्षार्था स्तस्य सृष्टि परायणाः ॥३१॥

उस घर के अध्यक्ष (मालिक) श्री विदालक जी है। आपकी इन वस्तुओं की पैदाइश व रक्षा करने के लिए बहुत से नौकर हैं ॥३१॥

लक्षावधि सूपकारा स्तत्र मुख्या स्त्रय इमे ॥
मधुशालक सौधाकौ सुधाकर अपिप्रभ: ॥३२॥

लाखों की संख्या में रसोइयाँ हैं। उनमें मुख्य तीन हैं उनके नाम मधुशालक, सौधक, सुधाकर हैं ये सब अति प्रभाशाली हैं ॥३२॥

अन्ये प्रयोजिता स्तैश्च प्रवीणा विंज्जनादि के ॥
सुकुण्डलाः सुमाल्याश्च केयूरभूषिता अपि ॥३३॥

इन तीनों ने और भी बहुत से प्रवीण रसोइयाओं को भोजन बनाने के लिए नियुक्त कर रक्खा है जो भोजन बनाने में बड़े प्रवीण हैं सुन्दर कुण्डल मणियों माला व विजायट आदि भूषणों से भूषित हैं ॥३३॥

सहस्रेण गणा स्त्वेक एवम्मुख्या गणेहि ये ॥
कोटिश स्सूपकारास्युर्भक्तकाराश्च पायसाः ॥३४॥

एक हजार रसोइयों का एक गण होता है उसका जो मुखिया है उसको गणमुख्य कहते हैं। ऐसे गणमुख्य रसोइया करोड़ों की संख्या में हैं जो भक्ष, भोज्य, लेह्य, पेय ऐसे पदार्थ केवल दूध का ही बनाने वाले हैं ॥३४॥

आदाय चानुदानादि वस्तूनां कार्य्य व्यापृताः ॥
बहुशो नुचरा स्तेषु मुख्यो प्येको विधायकः ॥३५॥

वस्तुओं को लेकर इधर उधर देन लेन व्यवहार करने वाले ऐसे नौकर बहुत हैं उनमें विधान कर्त्ता मुख्य एक है। ३५॥

सोयं नाम्नातुमभ्यः स्यात्सर्व कार्य्येषु तत्परः ॥
अथस्यु द्वारपालानां नृपते मन्दिरस्यतु ॥३६।

उनका नाम सभ्य है जो सब कार्यों में सावधान है। अब महाराज के मन्दिर के द्वारपाल बहुत हैं। ३६॥

चत्वारो प्यधिकर्तारो युक्तादिक्षु चतुर्ष्वपि ॥
प्रवरो मानलीको भीमाकः मालीक एव च ॥३७॥

उनमें चार मुख्य कर्त्ता हैं जो महल के चारों दिशाओं के फाटकों पर निवास करने वाले हैं उनका नाम:—प्रवर, मानलीक, भिमाक, मालीक है ॥३७॥

सौविदल्ला अप्यनन्ता मुख्यास्तेष्वपि षोडशः ॥
तेषां नामानि प्रवरः प्रवारक प्रधावकौ ॥३८॥

श्री चक्रवर्ती जी महाराज के समीप में वेद को हाथ में धारण करके रहने वाले अनन्त नौकर हैं। उनमें मुख्य १६ हैं उनका नाम—प्रवर, प्रवारक प्रधावक और ॥३८॥

सौमनस्यः सुनारीको हास्यकः सुक सारकौ ॥
वामको वल्गुवादी च नवलीका प्यजहुरः ॥३९॥

सौमनस्य, सुनारीक, हास्यक, सुक, सारक, वामक, वल्गुवादी, नवलीक, अजहुर तथा ॥३९॥

रम्भास्योऽपिमादुर्लेयो बरीका रासिका पि च ॥
सर्वे च ते वराङ्गा श्च वराम्वर विभूषणाः ॥४०॥

रम्भास्य, मादुर्लेय, बरीक, रासिक-है । ये सब के सब श्रेष्ठ अङ्ग वाले और श्रेष्ठ वस्त्र भूषणों को धारण किए हुए हैं ॥४०॥

मन्दिराणिच राज्ञीनां यावन्ति सन्ति सान्तरैः ॥
तत्रागमनागमने शिविका श्चैव स्यन्दनाः ॥४१॥

महाराज चक्रवर्ती जी के रनिवास में महारानियों के जितने भी मन्दिर हैं उनमें अन्दर और बाहर आने वाली महारानियों की जितनी भी शिविका पालकियाँ व रथ हैं वे सब पर्दा आदिकों से सुन्दर सजे हुए हैं ॥४१॥

सूताश्चापि वाहकास्तु नरवेष वराननाः ॥
अनन्ता दाशिका दिव्य भूषणांशुक भूषिताः ॥४२॥

उन सवारियों के वाहक सूत आदि भी नर भेष को धारण की हुई अनन्त दासीयाँ हैं जो दिव्य वस्त्र भूषणों से अति सुन्दर भूषिता हैं ॥४२॥

तासांप्रयोजका मुख्याः श्रीकौशल्यादि तिसृणाम् ॥
तासां षोडशकानां तु नामानि नृपजे सृणु ॥४३॥

उन सब में से केवल श्री कौसल्यादिक तीन महारानियों की जो अनन्त दासी हैं उनमें मुख्य जो सोलह हैं उनका नाम हे राज कन्ये ? मुझ से सुनो ॥४३॥

चन्द्रालिका चन्द्रजाया चन्द्रभा चन्द्रमालिकाः ॥
मयङ्का च मयङ्कास्या मृदुला मादुर्ला पि च ॥४४॥

चन्द्रालिका, चन्द्रजाया चन्द्रभा, चन्द्रमालिका, मयंका, मयंकास्या, मृदुला, मादुर्ला ॥४४॥

सुदोला लासिनी चित्रा विचित्रा वन्धुरा विदा ॥
कौमुदी केतकी चैताः स्वकार्येतत्पराः सदा ॥४५॥

सुदोला, लासिनी, चित्रा, विचित्रा बन्धुराविदा, कौमुदी, केतकी हैं । ये सब अपने कार्यों में सदा सावधान है ॥४५॥

रक्षिका भूषणा गारे तासां मुख्य श्चतकाः ॥
माना प्रमणा विदगा विस्रम्भाचेति ज्ञायताम् ॥४६।

श्री महारानी कौसल्या जी के भूषणागार की रक्षिका अनन्त दासियों में चार मुख्य है उनका नाम माना, प्रमणा, विदगा, विस्रम्भा है ॥४६।

तथांशुक गृहे तासां चतस्रो मुख्यका यथा ॥
सुरसा सुरमाने मी प्रांशिका चेति ज्ञायताम् ॥४७॥

और वस्त्रागार की रक्षिका अनन्त दासियों में से मुख्य ४ का नाम सुरसा, सुरमा, नेमी प्रांशिका है ॥४७॥

स्त्रीणांतु मण्डले रागाः सिन्दूरा ञ्जनका दयः ॥
एतस्यैव गृहे मुख्या सुविज्ञा चेति नामका: ॥४८॥

और स्त्रियों के मण्डल में सिन्दूर अञ्जन आदिक रङ्ग के जितने पदार्थ हैं उनके महल की रक्षिका जितनी भी दासियाँ हैं उनमें मुख्य श्री सुविज्ञा जी हैं ॥४८॥

अथान्तरङ्गाः सेवक्या याः सानिध्यं निरन्तराः ॥
कौसल्या श्च सुमित्रा श्च कैकेयीं सेवितुं सदा ॥४६॥

श्री कौशल्या जी, श्री सुमित्रा जी, श्री कैकयी जी इन तीनों माताओं की अंत रङ्ग सेवा में निरन्तर समीप रहने वाली ।४६॥

तस्यास्तस्याः पितुर्गेहा त्सुदाये साकमागताः ॥
श्वश्रू नियोजिता या श्चो भयोरपि विभागतः ॥५०॥

जो उन महारानियों के पिताओं के घर से दहेजे में साथ आयी हुई हैं तथा और भी जो सासुओं की दी हुई दासियाँ हैं, ये दोनों पक्षों के विभागों का नाम मेरे से सुन लो ॥५०॥

नामानि शृणु मत्तस्त्वं भाविन्यस्ते पि लालने ॥
कौशल्यायाः पितुर्गेहा दागताया स्तया समम् ॥५१॥

हे राजकन्ये ? ये सब तुम्हारे लाड़ प्यार करने वाली भावना करने योग्या हैं जो श्री कौसल्या जी के साथ पिता जी के घर से आयी हुईं हैं ॥५१॥

सख्य श्चेत्यो प्यसंख्याश्च तासां मुख्यासु मुख्यकाः ॥
तासां मुख्यानि नामानि कथयामि शुभानने ॥५२॥

वे सखी और दासियाँ असंख्य हैं उन सब में जो मुख्य में उनके पवित्र (पुण्य मयी) नाम क हे शुभानने ! मैं कहती हूँ, सुनो ।५२।

सखी विन्दा सुविन्दा च मन्थरङ्गा प्रवालिका ॥
भूषायां कुशला श्चैताः सर्वा स्सुन्दर विग्रहाः ॥

सखियों का नाम-विन्दा सुविन्दा मन्थरङ्गा प्रवालिका है। ये भूषणों के सजने में बड़ी कुशला सब सर्वाङ्ग सुन्दर विग्रह वाली हैं ॥५३॥

रूपिणी राग मालाच स्वधग वासिनी तथा ॥
चतस्रोगान कुशलाः प्रसादयन्ति तेन ताम् ॥५४॥

श्री रूपिणी रागमाला स्वधग वासिनी ये चारों गाने में बड़ी कुशला हैं। इसी संगीत विद्या से महारानी जी को प्रसन्न रखती हैं ॥५४॥

सुमना वादिका विज्ञा तथा वासन्तिका परा ॥
पुष्प शय्यादि रचना प्रवीणाः सेवयन्ति ताम् ॥५५॥

सुमना, वादिका विज्ञा, वासन्तिका-ये पुष्प शय्यादिक रचना की प्रवीणता से श्री महारानी जी की सेवा करती हैं ॥५५॥

चार्वङ्गी चारुला मेया सारङ्गा चेति सर्वदा ॥
यत्नेनरचयन्ति ता स्तस्यै ताम्बूल विटिका ॥५६॥

चारबङ्गी, चारुला, मेया, सारङ्गा--ये चारों महारानी जी के लिए बड़ी युक्ति से पान के बीड़ा की रचना करती हैं ॥५६॥

अथवेला समञ्जाच मन्तरा मधुका शुभा ॥
अष्टापदादि क्रीडासु कुशला सेवयन्ति तैः ॥५७॥

बेला, समञ्जा, मन्तरा, मधुका—ये चारो चोपड़ादिक खेलों से बड़ी कुशलता पूर्वक सेवा करती हैं ॥५७॥

इत्येता षोडशो ध्येवं पितृ गेहा त्समागताः॥
श्वश्रू नियोजिता स्त्वत्र तासां मुख्या स्सुमुख्यकाः ॥५८॥

इस प्रकार ये सोलह तो श्री कौशल्या जी के पिता के घर से आयी हुई हैं और सासु के द्वारा मिली हुई अनन्त सखियों में मुख्य, उनमें भी मुख्या ॥५८॥

नामानि सेवनं चापि शृणु राजसुते शुभे ॥
शुभा जानी दया देवी चेति वेद मिता इमाः ॥५९॥

उनका नाम व सेवा विधि को भी हे शुभे ! मुझ से सुनो। शुभा, जानी, दया, देवी—ये चार तो ॥५९॥

उद्वर्तनश्च स्नानश्च तथा स्याः स्वधिवाशनम् ॥
प्रीत्या नित्यं प्रकुर्वन्ति यद्यथा समयोचितम् ॥६०॥

उबटन स्नान की विधि पूर्वक कराने वाली और गन्ध माल्य करके प्रेम पूर्वक नित्य जिस समय जैसा श्रृङ्गार चाहिए वैसा समयानुसार नित्य श्रृङ्गार कराने वाली हैं ॥६०॥

रासा रसा पिरेवा चानुगा वेद गणा इमाः ॥
पुष्प सन्दर्भ कुशला स्तेन सा अभिः प्रसाद्य ते । ६१॥

रासा, रसा, रेवा, अनुगा--ये चार पुष्पों की ढेरी लगाकर अनेक प्रकार के शृंगार इन्तजामों से श्री महारानी जी को प्रसन्न रखती हैं ॥६१॥

विद्या बन्द्या प्यमल्लाच साकल्या स्त्रीगणै रिमाः ॥
गान वाद्ये पि कुशला स्तयो स्ताभिः प्रसाध्यते ॥६२॥

विद्या, बन्द्या, अमल्ला साकल्या ये चार बहुत सखियों के गणों में मुख्या हैं इन सबसे श्रीकौशल्या अम्बा जी गान वाद्यों में भी कुशलता पूर्वक सेवित होती हैं ॥६२॥

सुरागारञ्जनी सिद्धा मेधा सर्वांग शोभनाः॥
नाना पुराण वार्ताभि र्रचयित्वा प्रहेलिकाः ॥६३॥

सुरागा, रञ्जनी सिद्धा मेधा—ये सर्वांग से सुन्दरी, नाना प्रकार के पुराणों की बातों से तथा प्रहेलिका आदि रचना करके श्री महारानी जी को प्रसन्न रखती हैं ॥६३॥

पत्नीं श्री कौशलेन्द्रस्य शुभाङ्गा राममातरम् ॥
सख्य श्चतस्रो प्येवञ्च मुदयन्ति मुदान्विताः ॥६४॥

महाराज श्री कोशलेन्द्र जी की प्रधान पटरानी सुन्दर श्री विग्रह वाली श्री राम जी की माता हैं आप को इस प्रकार चार २ करके बहुत सखियाँ अनेक प्रकार की सेवा से आप को आनन्दित रखत हैं। ६४।

अथैवञ्च सुमित्रायाः पितृ गेहा त्समागताः ॥
सख्य स्तासाञ्च नामानि वक्ष्ये प्यासा श्च सेवनम् ॥६५॥

इसी प्रकार श्री सुमित्रा जी के पिता के घर से आई सखियों का नाम भी और उन की सेवा का भी मैं वर्णन करती हूँ ॥६५।

मधुका मधुरा माला सुधा वेद मिता इमाः ॥
भूषासु कुशलाः सर्वास्तेन तां शीलयन्ति ताः ।६६॥

मधुका, मधुरा, माला, सुधा,—ये चार भूषण सजाने में बड़ी कुशला श्री सुमित्रा जी की सेवा करती हैं ॥६६।

एला लवङ्गा सुकना कुसुमा कान्तिका निभा ॥
सम्फली वासिका चैताः स्नानोद्वर्त्तन कारिकाः ॥६७॥

ऐला, लवङ्गा, सवना, कुसुमा, कान्तिका, निभा सम फली, बासिक—ये आठ सखी स्नान और उबटन कराने वाली हैं। ६७।

अथ मोदा च मञ्जूषा लासी लीला गुणाधिका ॥
चतस्रो वसनं शय्या शीलयन्ति सुगन्धिभिः ।६८॥

मोदा, मंजूसा, लासी लीला—ये चार गुणों में अत्यन्त चढ़ी, बढ़ी, वस्त्र पहनाना, शय्या बिछाना, सुगन्धि अतरादि लेपना—इस प्रकार सेवा करती हैं ।६८॥

श्वश्रू नियोजिता यास्तु चतस्रो प्रथमम्विरा ॥
व्यङ्गा विलेखिनी प्रस्था कुर्वन्त्येवाधिवासनम् । ६९॥

अब सासु की दी हुई सखियों का वर्णन करता हूं विरा, व्यङ्गा, विलेखिनी, प्रस्था—ये सब गन्ध माल्य आदि करके शृङ्गार करने वाली हैं ॥६९॥

अथानुकाका केली च केका कैरव कापिच ॥
कुशला गान वाद्ये पि तेन साभिः प्रसाद्यते ॥७०॥

अनुकाका, केलि, केका, कैरव, कापि—ये सब गाने बजाने में कुशला संगीत से सेवा करती हैं ।७०॥

अथ राजी गुणा लिप्सा माध्या वेद मिता इमा ॥
पुष्प सन्दर्भ कुशला तेन तां शीलयस्ति ताः ॥७१॥

राजी, गुणा, लिप्सा, माध्या—ये चार पुष्पों की ढेरीं लगाकर फूल शृङ्गार से सेवा करती है ॥७१॥

अथाटवी देशाच मगदा मल्लिका तथा ॥
सख्य श्रुता श्चतस्त्रोपि पुष्पादेर्गन्ध कर्पकाः ॥७२॥

अटवी, देशा, मगदा, मल्लिका—ये चार पुष्पों की सुगन्धि निकाल कर इत्र से सेवा करने वाली हैं ॥७२॥

सौगन्ध्यं क्वाथ तैलश्च कुर्वन्त्येव मनोहरम् ॥
अनया कलया साभिः सर्वदा सेव्यते सुखम् ॥७३॥

सुगन्धित मनोहर क्वाथ तेल फूलेल आदि बनाने की कला से हमेशा श्री सुमित्रा जी की सुख से सेवा करती हैं ।७३॥

एवं याः सन्ति कैकय्यारुभयोः पक्षयो रपि ॥
नानागुणैर्भूषिताश्च सर्वाः सुन्दर विग्रहाः ॥७४॥

इसी प्रकार श्री कैकयी अम्बा के भी मातृ पक्ष व सासु पक्ष दोनों पक्षों से सुन्दर भूषिता गुणवती सर्वाङ्ग सुन्दर विग्रह वाली ।७४॥

नामानि मातृदत्तानां सखीनां प्रथमं शृणु ॥
फुल्ला प्रफुल्ला सौख्या च पारा वीति श्रुते मिताः ॥७५॥

सखियाँ हैं। अब माता की दी हुई सखियों का नाम पहले सुनो—फुल्ला, प्रफुल्ला, सौख्या, परा—ये चार सखी ॥७५॥

उत्सादनश्च स्नानश्च कारयन्ति यथोचितम् ॥
चार्चिक्यं चापि कुर्वन्ति कर्पूर मलयादिभिः ॥७६॥
एणी वीणा सुवेणी च प्रगल्भाः श्रुति सम्मिताः ॥
इमा भूषासु चतुरां स्तस्याः सेवन तत्पराः ॥७७॥

उत्थापन, स्नानादि समयोचित सेवा करती है और समय पर कपूर मलयादि चन्दनों का अंग लेपन भी करती हैं। ऐणी, वीणा सुवेणी, प्रगल्भा—ये चार भूषण शृंगार करने में बड़ी चतुरा समय पर सेवा में सावधान रहती हैं ॥७६, ७७॥

आशा त्रया त्रिवेणी च मंजुगाथा श्रुतेर्मिताः ॥
इमास्तु पुष्पा भरणं रचन्ति शयनं शुभम् ॥७८॥

आशा, त्रया, त्रिवेणी, मंजुगाथा—ये चार पुष्पों के भूषण शृंगार बनाने में और पुष्प पर्यङ्क बिछाने में बड़ी कुशला हैं ।७८॥

साङ्गीतिका कोकिला च सुस्वरा राग कोविदा ॥
गायन्त्यो ता श्चतस्त्रोपि ज्ञात्वेक्ष्यां समयोचितम् ॥७९॥

सङ्गीतका कोकिला, सुस्वरा, रागकोविदा—ये चार कैकयी अम्बा की इच्छा को जानकर समयानुसार संगीत से सेवा करती हैं ॥७९॥

अथात्र श्वश्रु दत्ताया स्ताः शृणुष्व सुसंज्ञया ॥
नीता ज्ञिप्सा सुस्त वाच प्रवन्धापि श्रुते मिताः ॥८०॥

अब सासु की भी दी हुई सखियों का नाम सुनो—नीता, जिप्सा, सुस्तवा प्रवन्धा–य चार ॥८०॥

शीलयन्ति सुवासांसि वासयन्ति सुगन्धिभिः ॥
परञ्च सूत्र सन्दर्भं कुर्वन्ति वसनेषु च ॥८१॥

वस्त्रों को सुगन्ध से बासित करके पहिनाती हैं और वस्त्रों में धागाओं से चित्र बनाकर श्री कैकयी अम्बा की सेवा करती हैं ॥८१॥

अथप्रभावभा सौदा गन्धी वेद मिता इमाः ॥
ताम्बूल वीटिका न्तस्यै मनोज्ञांरचयन्ति च ॥८२॥

प्रभा, वभा, सौदा, गन्धी—ये चार पान-वीरा रचना करके श्री कैकयी अम्बा की रुचि जान कर पवाती हैं ॥८२॥

यज्ञाऽनुज्ञा समा प्राज्ञा चतस्रोपि गुणान्विताः ॥
केशप्रसाधनं तस्या यावादि पाद चित्र कम् ॥८३॥

यज्ञा, अनुज्ञा, समा, प्राज्ञा—ये चार बड़ी कला कुशला केशों को सम्हालती हैं और महावर आदिक रंगों से अंग चित्र रचना करती हैं ॥८३॥

शान्ती कृपा चमाङ्गल्या शालिनीति श्रुतेर्मिताः ॥
इमा नृत्यं प्रकुर्वन्ति सर्वे लोकैः प्रसंशितम् ॥८४।

शान्ति, कृपा मांगल्या सालिनी– ये चार नृत्य आदिक कलाओं में सर्वलोक प्रसंसित हैं ॥८४॥

तथा च कौशलेन्द्रस्य श्रीमद्दशरथ स्युतु ॥
अंतरज्ञा ये च संति दासास्तान् वर्णयामि ते ॥८५॥

अब कोशलेन्द्र महाराज श्री दशरथ जी के अन्तर्मर्मज्ञ जो दास हैं उन का मैं तुमसे वर्णन करती हूँ ॥८५॥

सुकरौ पकरौ संचो मनोज्ञ श्रमनोविदः ॥
विरच्य वीटिकां राज्ञे ददन्त सर्वदेवते ।८६॥

सुकर, उपकर संच, मनोज्ञ, मनोविद—ये महाराज चक्रवर्ती जी को पान के वीरा बनाकर पवाने की सेवा में सावधान हैं ।८६।

अदङ्क सुजकौ कङ्कः कज कञ्जौ करो दकः ॥
भूषणानि किरीटादी न्ये ते रक्षन्ति यत्नतः ॥८७॥

अदङ्क सुजक कङ्क कज कंज कर, दक—ये लोग महाराज चक्रवर्ती जी के किरीटादि भूषणों को सावधानता पूर्वक रक्षा करते हैं ॥८७॥

देमानो दामन श्चैव देवक श्च दिवाकरः ॥
इमे दासा क्षापयन्ति धौतादि यत्नयन्ति च ॥८८॥

देमान, दामन, देवक, दिवाकर—ये चार दास स्थान और धुले हुए कपड़ों को पहनाने वाले बड़े बुद्धिमान है ॥८८॥

वारको वरको विन्ती नवको नन्दक स्तथा ॥
पाद सम्वाहनं चैते कुर्वन्ति तैल मृत्तणम् ॥८६॥

बारक, बरक, बिनती, नवक, नन्दक—ये पांच महाराज चक्रवर्ती जी के पाँव सुहराने वाले और तैलादिक मर्दन करने वाले बड़े सुखदायी है ॥८६॥

वासको वसको वासुः कन्तुको नैयकस्तथा ॥
नियुक्ता श्चामर च्छत्र व्यजनादिषु सर्वदा ॥६०॥

बासक, बसक, बासु, कन्तुक, नैयक—ये लोग चबर, छत्र व्यजनादिक लेकर सेवा में सदा नियुक्त रहते हैं ॥६०॥

वरालकः स्वालकश्च माल्यको मौरिक स्तदा ॥
चौलोष्णीषादि वस्त्राणि यत्नयन्ति च यत्नतः ॥६१॥

बरालक स्वालक, माल्यक, मौरिक—ये चारों महाराज चक्रवर्ती जी के चोला, पगड़ी आदि वस्त्रों को बड़ी सावधानता पूर्वक यत्न से सम्हालते हैं ॥६१॥

अभयो नभयश्चैवात्रसको बुधग स्तथा ॥
समये पादुकां रत्न खचितां संदिशन्तिच ॥६२॥

अभय नभय, अत्रसक बुधग—ये चार रत्न खचित चरण पादुकाओं का समय पर महाराज को पहिनाते और उतारते हैं ॥६२॥

प्रावलो स्थूलको विद्यो निभको मेध नामकः ॥
मध्याह्न शयनागारे प्येते तं सेवयन्ति च ।६३।

प्रावल, स्थूलक, विद्य, निभक मेध—ये पाँच मध्याह्नशयनागार में महाराज की सेवा करने वाले हैं ॥६३॥

सुदावको वेदकश्च विदनश्च विदम्वरः ॥
सुरेख श्चा वलेकश्च विकटो नटकस्तथा ॥६४॥

सुदावक, वेदक, विदन, विदम्बर, सुरेख, अवलेक, विकट, नटक ॥६४।

चंद्रको वरक श्चक्रो योधन श्चाग्रगस्तथा ॥
प्रवारको जवीकश्च यौत्तको वल्गुको वली ॥६५।

चन्द्रक, बरक, चक्र, योधन, अग्रग, प्रवारक, जीवक यौतक, बल्गुक, बली ॥६५॥

खचि द्वेत्रधरा नित्यंदिव्यालंकृत्य लंकृताः ॥
शीलादि गुण सम्भारा नृप सन्निध्य सेवकाः ॥६६ ।

लोग रत्न खचित नित्य दिव्य अलंकृत बेंतों को सुन्दर भूषणों से भूषित होकर धारण करते हैं। सुन्दर, शील, आदिक सद्गुणों के समुद्र ये सेवक महाराज के नित्य समीप में रहकर सेवा करने वाले हैं ॥६६॥

अथास्य जगदीशस्य वन्दितस्य सुरासुरैः ॥
श्रीमन्तः कौशलेन्द्रस्य पारम्पर्य्येण शिल्पिनः ॥९७॥

अथ जगत के ईश्वर सुर असुर सब से वन्दित श्री मान् कोशलेन्द्र दशरथ जी के शिल्प कारी विद्या के विद्वानों का क्रमशः वर्णन करती हूँ ॥९७॥

चित्रकारो लोलचित्रः साधकास्तु सहस्रशः ॥
प्रयुक्ता स्तेन यत्कार्य्ये कुर्वन्ति शिक्षिताहिये ॥९८॥

चित्रकार, लोकचित्र, नामके ये दो कारिन्दा हजारों कार्यकर्त्ताओं के ऊपर प्रधान हैं । जिसको जिस कार्य में महाराज चक्रवर्तीजी नियुक्त करते हैं इन दोनों में से एक उसी प्रकारकी शिक्षामें निपुण हजारों शिल्पियें को कार्य में लगाकर कार्य सिद्ध करते हैं ॥९८॥

गुणचक्षुः स्वर्णकार एवं सोपि सहस्रकैः ॥
शिक्षितैः सेव्यमानस्या त्स्व कार्य्ये तत्परः सदा ॥९९॥

गुणचक्षु नामक स्वर्णकार वह भी हजारों सुशिक्षित सुनारों के ऊपर मालिक महाराज की आज्ञा पालन करने में सावधान रहता है ॥९९॥

• तन्तुवायस्तु पटवः स्वकार्य्ये कुशलो महान् ॥
वासांसि च महार्हाणि स्रुत्पादयति शिक्षितैः ॥१००॥

जुलाहा और पटवा लोगों का मालिक पटव नाम का बड़ा कुशल है और बिस कीमती वस्त्रों को सुशिक्षित नौकरों द्वारा उत्पन्न कराता है ॥१००॥

रजनः कुसुम्भादिभ्यः सतु नाम्ना गुण ध्रकः ॥
तन्तुवाय स्त्वाकृतीक स्तक्षको मेदुरङ्करः १०१

और कसुम आदि के भी कपड़ों को बनाने वाले गुणध्रक नाम का तथा रजन, तन्तुवाय आकृतीक, तक्षक, मेदूरंकर ये सब नाम के लोग हैं ॥१०१॥

क्रीडा कौतुक खेलानां निर्मेता त्ववसायिकः ॥
ग्रन्थिकास्तु सान्दर्भो मालाकार स्तु सौरभः ॥१०२॥

खेलने के खिलौना कौतुक की वस्तुओं को बनाने और व्यवसाय करने का मालिक ग्रन्थिकार, संदर्भ, मालाकार सौरभ--ये चार नाम वाले हैं ॥१०२।

सुकारस्तु तूल सोधी काम्बवीको वरीशकः ॥
रजकोपि वरीशेको गुणको द्वार मार्जकः॥ १०३॥

रुई को धुनने वाले का नाम तूल सुकार है। शंख की चूड़ी बनाने वाले का नाम बरीशक है । धोबी बरीशेक नाम का है और राज द्वार पर झाड़ू लगाने वाले का नाम गुणक है ॥१०३॥

आनद्धं रचय त्येव धनङ्कारो गुणालयः ॥
सुवेदः सुखिरङ्कारः सर्वैते शिक्षितै युताः ॥१०४॥

तत् याने तार के बाजा वीणादि तथा घन झालादि सुषिर वंशी आदि आनद्ध मृदंगादि चार प्रकार के वाद्यों के मुखिया का नाम—ततकार गुणानन्दी गुणावाद तथा—चमड़े के दुन्दुभी आदिक बाजाओं के बजाने वाले मुखिया का नाम धनकार है गुणालय, सुवेद, सुखरङ्कार व संगीत की शिक्षा देने वाले हैं ॥१०४॥

विग्रहा न्नचयत्येवं सतु नाम्ना विधानकः ॥
मणीनां वेधक श्चासौ नाम्ना जेवन्त को वरः ॥१०५॥

मूर्ति निर्माण करने वाले का नाम बिधानक है । मणियें को छेदने वाले का नाम जयवन्तक है ॥१०५॥

शस्त्राणां मार्ज को नाम्ना वीरन्दोपि स्वकीयकैः ॥
शिक्षितैः कुरुते स्वीयं कार्य्यं नित्य मुदान्वितः ॥१०६॥

शास्त्रों के मार्जन करने लाले का नाम बरीन्द है । यह अपने अनुचरों द्वारा बड़ी प्रसन्नता से नित्य प्रति काम कराने वाला है . १०६ ।

व्योकारोपि शस्त्रकारो ताम्र कार स्तथा परः ॥
रीति कारा रजतस्य वस्तूनां कारकोपि च ॥१०७॥

लाहा, ताबाँ, पीतल ओर चाँदी आदि के अस्त्र शस्त्र, भूषन, बर्तन आदि बनाने वालों के नाम ॥१०७

एतेषां त्वेव नामानि ज्ञेया न्यत्र क्रमेण च ॥
क्रोश्चको माठरो मेढ्यो जासुको ज्यादकोपि च ॥१०८॥

क्रमशः बताती हूँ क्रोंचक माठर मेढ्य, जसुक ज्यादक ॥१०८॥

कन्दुकानां कारकोपि कन्दलीकस्तु नामतः ॥
पत्रिका पटकारोसौ नाम्ना जेवन्त उच्यते ॥१०९॥

गेंदों की रचना करने वाले का नाम कंदलीक है । पत्रिका और वस्त्र आदिक बनाने वाले का नाम जेवन्त है ॥१०९ ।

कल्पिता वात पट्टानां नाम्ना गैवन्त उच्यते ॥
करण्डा वेंतसा तेषां निर्माता वैश्य नामतः ॥११०॥

वायू के लायक कपड़ों की कल्पना करने वाले का नाम गैवन्त है । बेंत के करन्डो आदिकों को बनाने वाले का नाम वैश्य है ॥११०॥

सभाया मास्तरणाय कटानां कारको पिसः ॥
दर्पणानान्तु निर्माणं करोति नामतः कुमी ॥१११॥

यही बैश्य सभा में बिछाने के लिए चटाई आदि के बनाने का काम करता है । दर्पण आदिकों का भी निर्माण करने वाले का नाम कुमी है ॥१११॥

पादुकास्तु पानीपो हस्ति घोटक सज्जनाम् ॥
करोति चाद्भुतं कारं स्वर्ण सूत्र सुनिर्मिकम् । ११२॥

चरण पादुका और हाथी घोड़ाओं के लिए स्वर्ण सूत्रों से रचित अद्भुत जीन बनाने वाले का नाम पानिप है ॥११२॥

वस्त्रागाराणिदिव्यानि वितानानि पिधानकम् ॥
तेषां निर्माण वेत्तातु नाम्ना वैधृक उच्यते ॥११३॥

वस्त्रों के दिव्य महल, वितान, परदे बिछावन आदि का निर्माण करना जानने वाले का नाम वैधूक है ॥११३॥

कल्पिता रथ गुप्तीनां सन्त्रको नाम ज्ञायताम् ॥
मयूर पक्ष गुच्छानां ग्रन्थको माङ्गलीयकः ॥११४॥

रथ के लोहे आदि से बनाए हुए आच्छादन अर्थात छत्री के बनाने वाले का नाम संत्रक हैं। मोर पंखों के गुच्छों को ग्रन्थित करने वाले का नाम मांङ्गलीयक है ।।११४॥

.ये तूक्ता स्ते मनो भावं जिज्ञासितुं नृपेशतुः ॥
श्रयन्ति नित्य सानिध्यं दिव्याम्बर विभूषणाः । ११५॥

इस प्रकार हे राजकन्यके ! तुम्हारे मनो भाव को जानकर ये जिनका नाम मैंने तुम्हें सुनाया है ये सब दिव्य वस्त्रभूषणों से सजे हुए महाराज चक्रवर्ती जी के समीप रह कर नित्य सेवा करते है ॥११५॥

एषां वैभव मालोक्य देवेशोपि स्वयं हृदि ॥
न्यूनत्वं मन्यते नून मन्येषा मत्र का कथा ॥११६॥

इन सब के वैभव को देख कर के देवेश इन्द्र भी हृदय से अपने को न्यून मानता है अन्यों की क्या कथा कहूँ ॥११६॥

एवं त्वयोध्ये शितुन्वितं परंमह त्समाजः किल योग मुद्रया ॥
तस्यां सु प्रीत्या कथितं सु श्रद्धया श्रुत्वापि साराजसुता सुखं ययौ ॥११६॥

इस प्रकार श्री योगमुद्रा जी ने अवधेश महाराज के समीप में रहने वाले महान समाज का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। बड़ी श्रद्धा से प्रेमपूर्वक सुनने वाली राजकन्या सुनकर महान् सुख को प्राप्त हुई ॥११७॥

इति श्री शंकर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
अमात्यादि नाम कथनो नाम नवम स्सर्गः ॥९॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां अमात्यादि
(मन्त्री) नाम कथन नाम नवमः सर्गः

सा पूर्वं कृतयौगिका जनकजा कान्ते सुकान्ते धिया।
तेनाती व सुजात प्रीति हृदया यावन्नतं प्राप्स्यति ॥
तावत्तच्चरिताश्रया भवतिकिं तस्यै परं रोचते,
ह्याप्रच्छ त्पुनरेवविरतरकथा तां योगमुद्राम्प्रति ॥१॥

वह राजकन्या सुन्दर कान्त श्री जानकी जी के कान्त में निश्चय बुद्धि से पूर्व जन्म से ही भावना को सिद्ध की हुई अतः इसी बजह से अत्यन्त बढ़े हुए अनुराग वाली जब तक प्रियतम को प्राप्त नहीं कर जायगी तब तक के लिए उन श्री सीताराम जी का चरित ही उसका आश्रय है। क्या उसको और कुछ अच्छा लग सकता है ? अर्थात् नहीं। अतः उस राजकन्याने योगमुद्रा से उन्ही श्री सीताराम जी की कथा को विस्तार से सुनने के लिए पूछा ॥१॥

अत स्तयो हिं सम्बन्धे चतुर्वर्गे ण शान्तिकम् ॥
दम्पत्यो र्मिश्रितं रूपं वेदे शा त्रेपि गीयते ॥२॥

अर्थ, धर्म, काम मोक्ष इन चारों वर्गों (कामनाओं) से निवृत्त हो गया है मन जिनका ऐसे भक्त उन्हीं श्री सीताराम जी के सम्बन्ध में श्याम-गौर मिश्रित रूप से सने हुए हृदय वाले भक्तों की वेद शास्त्रों में प्रसंशा गाई गयी है ॥२॥

राजपुत्रो वाच

वाम पत्नी पते रङ्गं सस्या दस्या स्तुदक्षिणंम् ॥
मातृ पित्रो स्तयो रेव मातृ पितृ महावधिः ॥३॥

सुकान्ति बोली कि हे योगमुद्रे ! पति का बायाँ अङ्ग पत्नी होती है और पत्नी का दाहिना अङ्ग पति होता है। इस प्रकार से माता पिताओं की महा अवधि उन दोनों श्री सीताराम जी में ही होता है ॥३॥

अवान्तंरीय मिथुनं यच्च सम्वन्धिनो नयोः ॥
सर्वं कथय सर्वज्ञे चे त्कृपा मयि ते स्थिरा ।४॥

इन श्री सीताराम जी का और इन दोनों के अन्तरङ्ग सम्बन्धियों की सम्पूर्ण कथा को हे सर्वज्ञे तुम्हारी मेरे में स्थिर कृपा है तो कहो ॥४॥

योगमुद्रोवाच

श्रूयतां सावधानेन य त्पृष्टं हि त्वाया शुभे ॥
कीर्त्ति मा न्यशशा लाढा दिनेशस्या न्वयोस्ति च ॥५॥

श्री योगमुद्रा जी बोलीं-हे शुभे ! तमने जो कुछ पूछा है उसे मैं कहती हूँ सावधान होकर सुनो। बड़े कीर्तिमान, यशस्वी सूर्य वंश में उत्पन्न हुए ॥५॥

इन्द्रादिभिर्वन्दितोयं वंशः शुद्धः सनातनः ॥
भगीरथ ककुत्थाया यत्र जाता महा शया: ॥६॥

इन्द्रादि लोक पालों से अभिबन्दित सनातन शुद्ध वंश में भगीरथ, ककुस्थ सरीखे महाशय उत्पन्न हुए हैं ॥६।

येनाववतारिता गङ्गा सर्वा लोक शुभंकरी ॥
चत्वारः सागरा लोके प्रसिद्धाः सगरात्मजै ।७॥

जिन्होंने सर्व लोक मङ्गलकारिणी गङ्गा को लोक में उतारा। चारों समुद्रों को जि सगर जीन के पुत्रों ने खन डाला यह बात लोक में प्रसिद्ध है ॥७॥

एवम्भूतोत्तमे न्वाये नाभागस्यात्मजस्त्वजः ॥
तस्य पत्नी तु सानंदा साचा त्कीर्तीव मूर्तिमान् ॥८॥

इस प्रकार के उत्तम वंश में श्री नाभाग महाराज के बेटा श्री अज महाराज हुए उनकी पत्नी श्री सानन्दा साक्षात् कीर्ति ही मूर्तिमान थीं।।८।।

तस्यां सुकीर्त्ती रूपायां विख्यातो विजयी महान् ॥
श्रीमान्दशरथो जातः सर्वाङ्गेन प्रकीर्त्तितः ॥६॥

उन सुन्दर कीर्ति स्वरूपा श्री सानन्दा जी से महान् प्रसिद्ध, लोक विजयी श्रीमान् दशरथ जी उत्पन्न हुए। जो सर्वाङ्ग से कीर्तिमान हैं ।।६।।

दिश्यावाच्यां मद्र देशे कान्तिकास्ति पुरी वरा ॥
मण्डलेशो महीपालो नाम्ना तत्रास्ति शन्तिकः ॥१०॥

दक्षिण दिशा मद्र देश में कान्तिका नाम की श्रेष्ठ नगरी है। वहाँ के माण्डलिक महिपाल श्री शान्तिक नाम से प्रसिद्ध हैं ।।१०।।

भ्राता राज्ञो देवशील; पुत्रस्तुमानशीलकः ॥
सुता तस्यैव सानन्दा दत्ता तेन त्वजायसा ॥११॥

उन के भाई देव सील पुत्र मानसील हैं तथा कन्या सानन्दा नाम की महाराज शान्तिक ने महाराज श्री अज जी के लिए पाणिग्रहण कराया ।।११।।

सा च श्री रामभद्रस्य सम्बन्धेस्या त्पितामही ॥
श्यालोऽजस्य मानशीलो रामस्य मातुलः पितुः ॥१२॥

वे श्री सानन्दा जी श्री रामभद्र जी की सम्बन्ध से पितामही (दादी) लगती हैं। महाराज अज जी के साले श्री मानशील जी श्री राम जी के पिता के मामा लगते हैं ।।१२।।

श्रीमद्दशरथस्यास्ति मतामहस्तु शान्तिकः ॥
पितु र्मातामहो रामे सो भव च्छान्ति को नृपः ॥१३॥

महाराज श्री दशरथ जी के नाना श्री शान्तिक जी श्री राम जी के पितृमातामह लगते हैं ॥१३॥

मानशीलस्य पुत्रोस्ति मानदो नाम सुव्रतः ॥
भ्रातादशरथ स्यैव मातुलीयो हि सोभवत् ॥१४॥

महाराज मान सील जी के पुत्र सुन्दर धर्मात्मा मानद नाम से प्रसिद्ध हैं जो महाराज दशरथ जी के मातुलीय भ्राता (ममुहर भाई) लगते हैं ।।१४।।

स रामस्य पितृव्योऽस्ति पितृ र्मातृक वर्गिकः ॥
एवम्विधस्तस्य पुत्रो वराङ्गो वन्धुरेव च ॥१५॥

वे श्री राम जी के पितृ र्मातृक काका लगते हैं। इसी प्रकार उन के पुत्र बराङ्ग जी श्री राम जी के भाई लगते हैं ।।१५।।

श्रीमद्दशरथस्यैका भगिनी दिव्यरूपिणी ॥
नाम्ना देव कला सा च सन्धिराजो नृपोत्तमः॥१६॥

श्री महाराज दशरथ की दिव्य स्वरूपा एक बहिन हैं जिनका नाम देवकला है। उनका विवाह एक श्रेष्ठ राजा श्री सन्धिराज जी हैं ॥१६॥

तस्य पुत्रः सालिनीक स्तस्मै दत्ता सुदायकैः ॥
पश्चिमायां दिशि तस्य पुरी नाम्ना विशालिकाः ॥१७॥

उनके पुत्र सालिनीक महाराज से हुआ है इनकी राजधानी पश्चिम दिशा में बिशालिका नाम से एक प्रसिद्ध नगरी है उसमें है ॥१७॥

तस्या देवकलायास्तु सुतो दिव्य गुणान्वितः॥
श्रीमद्दशरथस्या सौ भागिनेयो भवच्छुभे ॥१८॥

उन श्री देवकला जी से दिव्य गुण सम्पन्न एक पुत्र उत्पन्न हुआ जो महाराज दशरथ जी का भानजा है ॥१८॥

सतुस्या द्राम चन्द्रस्य भ्राता फाव्योस्ति लौकिकै ॥
नाम्ना देव वरो सौस्या द्रामाय रोचते गुणैः ॥१६॥

हे शुभे वे श्री राम चन्द्र जी के फुफेरा भाई लगते हैं। उनका नाम देवबर है जो श्री राम जी को अति प्रिय लगते हैं वे बड़े गुणवान हैं ॥१६॥

एवं पत्रिक वंशस्तु रामस्य वर्णितः शुभे ॥
मातृ वर्गं शृण्वेदानिं त्व त्प्रीत्या वर्णयाम्यहम् ॥२०॥

हे शुभे ! मैंने इस प्रकार तुम से श्री राम जी के पैतृक-वंश का वर्णन किया अब मैं तुम्हारी प्रसन्नता के लिए श्री राम जी के मातृक-वंश का वर्णन करती हूँ सुनो। २०॥

दक्षिणस्यां दिशिस्त्वेको देशः कौशल नामकः॥
पूर्व मेवाभवत्तत्र ब्रह्मवीर्यो नृपो बली ॥२१॥

दक्षिण दिशा में कौशल नामक एक देश है वहाँ प्राचीन समय में ब्रह्मवीर्य नाम के एक बड़े बलवान राजा हुए हैं ॥२१॥

अभवत्तस्य वन्शेतु देवकौशल्य नामतः ॥
तस्य पत्नी महाभागा सौजन्या गुणवत्तरा ॥२२॥

उन के वंश में श्री देव कौशल्य महाराज उन की पत्नी महाभागा, बड़ी गुणवती श्री सौजन्या जी हैं ॥२२॥

तस्यां जाता तस्य राज्ञः पुत्रा वेदमिताः शुभाः ॥
पुत्री त्वेका भवत्तस्य कौशल्या कीर्ति विग्रहा ॥२३॥

उन से महाराज देव कौशल्य जी के बड़े सुन्दर चार पुत्र उत्पन्न हुए और एक साक्षात् कीर्ति बिग्रहा श्री कौसल्या नाम की कन्या हुई ॥२३॥

इनप्रभो ज्येष्ट पुत्रो वरजस्तु रविप्रभः ॥
तस्मादप्यवरजोयः सतुनाम्नादिवाकरः ॥२४॥

बड़े पुत्र का नाम इनप्रभ, छोटे रविप्रभ, उनसे छोटे दिवाकर ॥२४॥

ततोनुजातः सम्याकः सम्य ग्दिव्य गुणा वधिः ॥
सुदाये स्तेन कौशल्या देव कौशल्यकेनच ॥२५॥

उन से छोटे सम्याक—ये चारों दिव्यों गुणों की अवधि हुए हैं। महाराज श्री देव कौशल्य जी ने अपनी कन्या कौशल्या जी को सुन्दर दमाद ॥२५॥

दत्ता श्रीमद्दशरथाय भानु वंशस्यभानवे ॥
वेदैश्च गीयमाना सा राम ब्रह्म प्रजावती ॥२६॥

भानु वंश में सूर्य सदृश श्री दशरथ के लिए दिया। इस प्रकार वेदों द्वारा गायी गयी व श्री कौशल्या जी परात्पर ब्रह्म श्री राम जी की माता हुईं। २६॥

एकोस्ति पश्चिमाया न्तु दिशि देशो वराहलः ॥
हारालिका पुरीतस्य देशे ख्याता शुभावनी ॥२७॥

पश्चिम दिशा में एक वराहल नाम का देश है वहाँ पर हरालिका नाम की नगरी बड़ी सुभावनी है ॥२७॥

तत्र राजास्ति सान्तानो नाम्ना दिव्य गुणावधिः ॥
गुणाशीला सुरूपाच चतस्रो गुणभ्राजया ॥२८॥

वहाँ के राजा बड़े गुणवान श्री शान्तान नाम से प्रसिद्ध हैं। उनकी गुणा, शीला सुरूपा गुण भ्राजा नाम की चार कन्याऐं उत्पन्न हुईं ॥२८॥

सुता जाता तस्यराज्ञः सर्वाश्च गुण वत्तराः ॥
देव कौशल्य पुत्रेभ्य स्तेन दत्ता यथा क्रमात् ॥२९॥

इन सब गुणवती कन्याओं को देव कौशल्य के चारों पुत्रों के लिए क्रमशः व्याह दिया ॥२९॥

मातामहस्तु रामस्य देवकौशल्य कोनृपः ॥
इन प्रभाद्या रामस्य मातुलाः सन्ति सद्व्रताः ॥३०॥

वे महाराज देव कौशल्य श्री राम जी के नाना लगते हैं इनप्रभादि राजकुमार ममुहर भाई लगते हैं जो सुन्दर व्रत वाले हैं ॥३०॥

गुणाद्या अपि मातुल्यो रामे वात्सल्य वृत्तिकाः ॥
मातामही च सौजन्या धन्या लोक प्रशंशिताः ॥३१॥

गुणादिक मामियाँ (मातुलानि; मामी) श्री राम जी में वात्सल्य भाव से स्नेह रखती हैं और श्री राम जी की मातामही (नानी) श्री सौजन्या भी बड़ी लोक प्रशंसित धन्य हैं। ३१॥

श्रीरामस्य मातुलानां पुत्राः सर्वे गुणायताः ॥
ते भवन्ति भ्रातरश्च रामस्य मातृ वर्गिकाः ॥३२॥

श्री राम जी के मामा इनप्रभादिकों के पुत्र भी महान गुणवान हैं जो श्री राम जी के मातृवर्गिक (माता के वंश के) भाई हैं ॥३२॥

नामान्येषां शीलभानु रिन प्रभौरसो भवत् ॥
रविप्रभस्यौरसस्तु देव दालक नामकः ॥३३॥

उन ममुहर भाइयों के नाम—इनप्रभ के बेटा शीलभानु रविप्रभ के बेटा देव दालक ॥३३॥

दिवाकरस्यौरसस्तु नाम्ना देवप्रभो वरः ॥
औरस्योपि सम्याकस्य सुजात इति नामतः ॥३४॥

दिवाकर के बेटा देव प्रभ और सम्याक के सुजात—हैं ॥३४॥

देवकौशल्य नृपतेः पितृव्यो ज्ञाति बान्धवः ॥
नाम्ना तु सुमित्रः सोऽस्ति पत्नी तस्य शुभावनी ॥३५॥

देव कौशल्य का चचेरा भाई सुमित्र हैं उन की पत्नी सुभावनी है ॥३५॥

तस्यां तस्य त्वेक पुत्रो गुणमित्रो महावलः ॥
पुत्री त्वेका गुण श्लिष्टा सुमित्रा कारि नामतः ॥३६॥

उन महाराज सुमित्र जी के सुभावनी पत्नी से एक गुणमित्र नामक महावलवान् पुत्र हुए और एक पुत्री सुमित्रा नाम की बड़ी गुणवान हुई ॥३६॥

कौशल्या च सुमित्रा च प्रीति मत्योः परस्परम् ॥
सापि तेन सुदायैश्च दत्ता दशरथाय वै ॥३७॥

ये कौशल्या और सुमित्रा दोनों कन्याएँ बड़ी प्रीतमती थीं अतः सुमित्र ने अपनी कन्या सुमित्रा को भी सुन्दर दमाद श्री दशरथ जी के लिए ब्याह दिया ॥३७॥

तस्यां लक्ष्मण शत्रुघ्नौ जातौ तस्य महात्मनः ॥
वायव्यदिशि चैकोऽस्ति देश कास्मीर नामकः ॥३८॥

उन सुमित्रा जी से महात्मा श्री दशरथ जी के श्री लक्ष्मण और शत्रुघ्न नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए। वायव्य दिशा में काश्मीर नाम का एक देश है ॥३७॥

राजास्या त्केकय स्तत्र तत्पत्नी सुप्रभाभवत् ॥
पुत्री केकय राजस्य भरतस्यास्ति मातृका ॥३९॥

वहाँ के राजा श्री कैकय जी उन की पत्नी सुप्रभा हैं उन महाराज कैकयराज की एक कन्या हुई जो भरत जी की माता है ॥३९॥

तस्या बन्धुर्देवकोऽस्ति तत्पुत्रो देव मानकः ॥
मातातु देव मानस्य सुदेवी नामतः शुभा ॥४०॥

कैकयी का भाई देवक हैं उनके बेटा देव मानक हैं। देव मानक की माता सुदेवी नाम की बड़ी सुलक्षणा है ॥४०॥

पत्नी तस्य जात रूपा पुत्र स्तुभ्या सुखायनः ॥
एवं श्रीरामचन्द्रस्य मातृ वर्गाणकं विदुः ॥४१॥

देवमान की पत्नी जातरूपा है और पुत्र सुखायन नाम के हुए। इस प्रकार श्री राम जी के मातृवर्ग के वंश का वर्णन किया इस को तुम जानो ॥४१॥

* अथ श्रीजानकी जीका वन्श वर्णनम् *

तत्पत्न्यः पितृ वन्शोपि मातृवन्शोपि कीर्तिमान् ॥
ब्रह्म शक्त्या स्तुजानक्या वदामिश्रद्धया शृणु ॥४२॥

उन श्री राम जी की पत्नी श्री जानकी जी का पितृ-वंश और मातृ-वंश भी महान् कीर्तिमान है जिस वंश में परात्पर ब्रह्म की आदि शक्ति श्री जानकी जी का प्रादुर्भाव हुआ है उसका मैं वर्णन करता हूँ हे सुकान्ति ! श्रद्धा से सुनो ॥४२॥

पूर्वं त्वेको रवे र्वन्शो विवाहेन विभागतां ॥
जानक्या रामचन्द्रस्य जात स्तत्तु सताम्मतम् ॥४३॥

प्राचीन समय में तो ये दोनों वंश (सूर्य वंश, निमि वंश) एक ही थे विवाहादिकों की बजह से इन वंशों के दो विभाग हो गए यह सज्जनों का मत है ॥४३॥

विवाह स्त्रोटना च्छुम्भो श्चापस्य सत्य वादिनः ॥
अन्यथा नभवेद्वाक्यं जनकस्य महामतेः ॥४४॥

महामति सत्यवादि महाराज जनक जी के शंकर जी के धनुष तोड़ने के शिवाय विवाह का बचन व्यर्थ नहीं हो सकता ॥४४॥

निमि वन्ये ह्रस्व रोमा सर्वज्ञो लोक पालकः ॥
तस्यास्ति ज्येष्ठ पुत्रस्तु नाम्ना शीरध्वजोमहान् ॥४५॥

निमि वंश में लोक पालक महाराजा ह्रस्व रोमा बड़े सर्वज्ञ थे उन के ज्येष्ठ पुत्र श्री शीरध्वज नाम के राजा बड़े महान महात्मा थे ॥४५॥

कनिष्ट स्तस्य भ्रातातु नाम्ना कुशध्वजो महान् ॥
अष्टौ शीरध्वजस्यापि सन्ति चान्येविमातृकाः ॥४६॥

और छोटे पुत्र श्री कुशध्वज जी ये भी बड़े महान् महात्मा हुए। श्री शीरध्वज जी की आठ शौतेली मातायें थीं ॥४६॥

पूर्व दक्षिण कोणे तु कोण देशोस्ति विस्तरः ॥
विकाशास्ति पुरीतत्र स्मृद्धितोपि विकाशिता ॥४७॥

पूर्व और दक्षिण के बीच कोने में एक कोण कामक विस्तृत देश है वहाँ विकासा नाम की एक नगरी बड़ी समृद्धि शाली है ॥४७॥

तत्रराजा भूरि मेधा भूरिभागो महावलः ॥
भ्राता सहोदरस्तस्य ज्ञानमेधा गुणा करः ॥४८॥

वहाँ के राजा श्री भूरिमेधा जो महा बलशाली बड़े भाग्य मान थे उन के सहोदर भाई बड़े गुणवान श्री ज्ञान मेधा जी थे ॥४८॥

सुमाल कुण्डला वेतौ द्वौपुत्रोभूरि मेधशः ॥
सुदशा कान्तिमतीति पुत्रीद्वय मजायताम् ।।४६।।

श्री भूरि मेधा महाराज के सुमाल और कुण्डल नामक दो पुत्र थे और सुनया व कान्तिमती नाम की दो कन्याएँ भी हुईं ।।४६।।

तथैव तस्य भ्रातुश्च द्वे सुते शुभदर्शने ॥
विद्याचैका सुविद्याच पुत्रौद्वौ वीर कान्तिकौ ॥५०॥

उसी प्रकार उन के भाई श्री ज्ञान मेधा जी के भी बीर और कान्ति नाम के दो पुत्र और विद्या, सुविद्या, नाम की दो कन्याऐ हुईं ।५०।।

पत्नी सुमेधसो नाम्ना सुधाग्रा दिव्यदर्शना ॥
गुणाग्रेति च नाम्नातु पत्नी स्या ज्यानमेधशः ॥५१॥

श्री सुमेधा जी (भूरि मेधा जी) की पत्नी श्री सुधाग्रा जी बड़ी सुन्दर दिव्य दर्शना थीं और ज्ञान मेधा जी की पत्नी श्री गुणाग्रा जी महान् गुणवती थीं ।।५१।।

सुमेधसा स्वयं पुत्र्यौ दत्ते शीरध्वजाय च ॥
सुदायैः सर्व विधिना वित्तव्यय कृतेमहि ।।५२।।

श्री सुमेधा जी ने अपनी दोनों कन्या श्री सुनया और कान्तीमती जी को सुन्दर दमाद श्री शीरध्वज जी के लिए खूब धन खर्च पूर्वक सुन्दर सब विधियों से विवाह कर दिया ।४२।।

तथैव तस्य भ्रात्रापि द्वे च एव सुतेस्वयं ॥
सुदायैः सर्वविधिनादत्ते कुशध्वजाय च ॥ ५३॥

इसी प्रकार उनके भाई भूरिमेधी जी ने भी अपनी कन्या श्री विद्या और सुविद्या जी को समस्त उत्तम बिधियों से विवाह करके सुन्दर दमाद श्री कुशध्वज जी के लिए दे दिया ।।५३।।

तस्यां पत्न्यां सुदशायां शीरध्वज महात्मनः ॥
पुत्री श्री जानकी जाता सुतो लक्ष्मी निधि स्तथा ।।५४।

तथैव च कान्तिमत्यां च सुतस्त्वेको गुणाकरः ॥
सुता नाम्नोर्मिला जाता गुण रूपविभूषिता ।।५५।।

महात्मा श्री शीरध्वज जी की सुनयना नाम की पत्नी से श्री जानकी जी प्रगट हुईं तथा एक पुत्र श्री लक्ष्मी निधि नाम के हुए। उसी प्रकार कान्तिमती पत्नी से गुणाकर नामक एक पुत्र और उर्मिला नाम की बड़ी गुणरूप भूषिता कन्या उत्पन्न हुई ।।५४।।५५।।

भ्रातुः कुशध्वस्यास्य विद्यायां माण्डवीतिच ॥
श्रुतिकीर्तिः सुविद्यायां जाता दिव्य गुणायता ॥५६॥

इसी प्रकार दूसरे भाई श्री कुशध्वज जी के श्री विद्या नाम की पत्नी से माण्डवी सुविद्या नाम की पत्नी से श्रुतिकीर्ति नाम की बड़ी गुणवती कन्याऐं उत्पन्न हुईं ।।५६।

विद्यायां सुनिधिश्चैव सुविद्यायां निधानकः ॥
एवं पुत्रा वपि द्वौच जातौ तस्य महात्मनः ॥५७॥

और विद्या जी से सुनिधि नामक और सुविद्या से निधानक नाम के दो पुत्र भी महात्मा कुशध्वज जी के हुए ॥५७॥

अस्ति देशो दक्षिणस्यां दिशिनाम्ना विडालकः ॥
पुरीतत्रास्ति वैडाला राजा तत्रास्ति श्रीधरः ॥५८॥

दक्षिण दिशा बिडालक देश में बैडाला नामक नगरी में श्री धर महाराज रहते थे ॥५८॥

पत्नी तस्यास्ति राज्ञस्तु श्रीधरस्य सुकान्तिका ॥
तस्यां पुत्रा वुभौ जातौ चतस्रोपि सुताः शुभाः ॥५६॥

उसकी पत्नी श्री सुकान्तिका नाम की थी उनसे दो पुत्र और चार कन्यायें उत्पन्न हुईं ॥५६॥

कान्तिधरो ज्येष्ट पुत्रो वरजस्तुयशोधरः ॥
नन्दा वाणी च सिद्धोषा चतस्रो नामतः सुताः ॥६०॥

बड़े पुत्र का नाम कान्तिधर और छोटे का नाम यशोधर था। नन्दा वाणी, सिद्धा, ऊषा—ये चार नाम उसकी कन्याओं के हैं ॥६०॥

आदरेणैव महता शीरध्वज कुशध्वजौ ॥
आनीतौ हि पुरीं स्वांच श्रीधरेण महात्मनाः ॥६१॥

महात्मा श्री धर जी ने बड़े आदर के साथ मिथिलेस महाराज श्री शीरध्वज और कुशध्वज जी को अपनी नगरी में लिवा लाए ॥६१॥

सुदायैः सर्वविधिना चतस्रोपि सुताः स्वयम् ॥
तयोर्यथा क्रमेणैव सुतेभ्यः सम्मतो पिताः ॥६२॥

और स्वयं अपनी कन्याओं को उन दोनों महाराज के कुमार चारों सुन्दर दमादों के लिये सब प्रकार की वैदिक लौकिक विधि के अनुसार विवाह कर दिया ॥६२॥

सिद्धानाम्नी तुया कन्या दत्ता शीरध्वजश्यच ॥
सुताय वै श्रीनिधये वाणी गुणाकराय वै ॥६३॥

सिद्धा नाम की जो कन्या थी उसे श्री शीरध्वज जी के पुत्र श्री निधि के लिए दिया और वाणी नाम की कन्या को गुणाकर जी के लिए दिया ॥६३॥

कुशध्वजस्य पुत्राय दत्ता सुनिधये शुभा ॥
उषा नाम्नी च या कन्या नन्दा सा तु निधान के ॥६४॥

और श्री कुशध्वज जी के पुत्र सुनिधि के लिए उषा नाम की सुन्दर कन्या को दिया और निधानक के लिए नन्दा नाम की कन्या को दिया ॥६४॥

एवं श्री मिथिला महेन्द्र मणिना शीरध्वजेनात्मजाः ॥
सभ्राता च विवाहिताः समकुले वध्वश्च लब्धाः शुभाः ॥६५॥

इस प्रकार श्री मिथिला महेन्द्र मणि शीरध्वज जी ने अपने और अपने भ्राता के सब कुमारों के लिए समान कुल में उत्तम बधुओं को प्राप्त किया ॥६५॥

अश्वेभा बहुस्यन्दना वहुधनं माणिक्य मुक्तामयं ॥
तैषा श्चैव सुदायदे गुणवतां दामाश्च दासो वराः ॥६६॥

हाथी घोड़े, रथ, सम्पत्ति, मणि माणिक्य, मुक्ता इन प्रकार की बहुत सम्पत्ति को प्राप्त किया। और बधुओं के पिताओंने भी सुन्दर गुणवान दमादों के लिए दास दासी उत्तम सम्पत्ति बहुत दिया ॥६६॥

अस्ति वारहलो नामा कोणे चोत्तर पश्चिमे ॥
देशो वृन्दारको नाम मच त्पूर्व नृपोत्तमः ॥६७॥

उत्तर पश्चिम के कोना पर वारहल नामक देश में वृन्दारक नामक नगरी में प्राचीन समय में एक उत्तम राजा हुए ॥६६॥

तस्य वन्श्यो महातेजा नृपो भृदर्क भाग्यवः ॥
तश्य पत्नी तु ज्येष्टिका जाज्या नाम्नी गुणान्विता ॥६८॥

उनके वंश में महान तेजस्वी अर्कभाज नाम के बड़े भाग्यशाली राजा हुए। उनकी ज्येष्ठ पत्नी जाज्या नाम की बड़ी गुणवती थी ॥६८॥

तश्यामेवार्कभाजस्तु द्वौ जातौ बलव त्सुतौ ॥
बलापत वल्लोत्रायौ पुत्री त्वेका शुभाजया ॥६६॥

उन से अर्कभाज महाराज के बड़े बलवान दो पुत्र उत्पन्न हुए। एक का नाम बलापत दूसरे का नाम बलोत्राय था और एक शुभाजया नाम की कन्या थी ॥६६॥

सा तेना दत्य विधिना सुदायैः शुभदर्शने ॥
हश्वरोम्णि हर्षितेन योजिता जय शालिनी ॥७०॥

हे शुभदर्शने! उन महाराज अर्कभाज जी ने अपनी उस सुभाजया नाम की बड़ी जयशालिनी का बड़े आदर के साथ वैदिक विधि से सुन्दर दामाद श्री हर्षरोम जी के लिए बड़ी प्रसन्नता से विवाह कर दिया था ॥७०॥

तस्याः सुगर्भ सम्भूतौ शीरध्वज कुशध्वजौ ॥
लोक प्रशंशिता साहि श्रीजानक्या पितामही ॥७१॥

उन शुभाजया जी के गर्भ से श्री शीरध्वज व कुशध्वज उत्पन्न हुए जो लोक प्रशंसित हैं। वह श्री जानकी जी की पिता मही (दादी) हुई ॥७१॥

परश्चैका वारधानो नाम्ना महोदधे स्तटे ॥
नाम्नातु विश्वकायोऽस्ति राजा राजकुलोत्तमः ॥७२॥

और एक समुद्र के किनारे वारधान नाम की नगरी में विश्वकाय नामक राजा राजकुल में सर्व श्रेष्ठ हुए ॥७२॥

तेनापि हर्षरोम्णे वै दत्तं पुत्री द्वय स्स्वयम् ॥
नाम्नैका सर्वदा चैका सदा सत्यव्रते उमे ।७३॥

उनने भी हर्षरोम जी के लिए अपनी दो कन्याओं को स्वयं दिया। एक का नाम सर्वदा और एक का नाम सदा है जो दोनों कन्यायें हमेशा सत्य और व्रत में सावधान रहती हैं ॥७३॥

तयोस्तस्य समं जाता वेद वेद मिताः सुताः ॥
बभूवुरुद्वैक वीरास्ते गुण रूप विभूषिताः ॥७४॥

उन दोनों पत्नियों से महाराज रोमहर्ष जी के चार २ पुत्र उत्पन्न हुए। वे सब के सब अद्वितीय पराक्रमी दिव्य गुण रूप भूषित थे ॥७४॥

तथैकैकापि पुत्री च जाता रूप गुणान्विता ॥
तयो रूपयम स्तेन कृतः स्वयम्वरेण च ॥७५॥

तथा एक २ कन्या भी उत्पन्न हुई जो दिव्य गुण रूपवती थीं उनका विवाह महाराज हर्षरोम जी ने स्वयम्बर के द्वारा किया ॥७५॥

यत्पृष्टं नृपजे त्वया जनकजा रामान्वये वार्गीणां ॥
नामान्येव सतां समस्त सुकृतें हित्वा तु मायामयम् ॥७६॥

हे राजकन्ये ! तुम ने श्री जानकी जी राम जी के दोनों वंशों के विषयमें जो कुछ पूछा था—मायामय संसार को त्याग करके भजन करने वाले संतों के समस्त पुण्यों के द्वारा प्राप्त हुए इन नामों को ॥७६॥

सम्बन्धेनिरमायके स्थितवतां ज्ञानेन भक्त्या वधौ ॥
तत्सर्वं मिथुनेन पूर्व परयो रुक्तं हि चाग्रे वद ॥७७॥

जो मायारहित भगवत सम्बन्ध में स्थिर रहने वाले ज्ञान और भक्ति की अवधि में प्राप्त कर सकते हैं उन जुगल सरकार के वंश चरित्रों को पूर्वा पर दृष्टि से देखकर मैंने कहा। अब आगे क्या कहूँ, बताओ ॥७७॥

इति श्री शङ्कर कृते श्री अमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
श्री सीतारामयोमातृ पितृ वन्शकथनोनाम
दशमस्सर्गः ॥१०॥

इति श्री मधुकररूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्री सीताराम मातृ-पितृ-वंश कथनो नाम दशम सर्गः ॥

राजकुमार्य्यूवाच

अद्य प्रोद्यत वैभवस्य मिथिला नाथस्य प्राथम्यका ।
नित्याश्चित्त विशुद्ध कार्य्यनिपुणाः सेवा रताः सेवकाः ॥
राज्ञी वर्ग प्रवर्त्त काश्च चतुर प्रज्ञा स्यू सेवान्वया ।
दास्योदिव्य तमा अमात्य सुकरा एतद्धि नाम्ना वद ॥१॥

सुकान्ति बोली कि हे योगमुद्रे ! अब अत्यन्त बढ़े हुए ऐश्वर्य वाले महाराज मिथिलेश जी के नित्य विशुद्ध चित्त से काम करने में निपुण, सेवा करने में आसक्त ऐसे जो प्रधान सेवक हैं तथा उनकी महारानियों के अग्रचतुरी, सेवा विधान की सम्हाल करने वाली जो दिव्य दासियाँ हैं तथा महाराज के कार्य को सुन्दर तरह से सम्हाल ने वाले मन्त्री वर्गों के नामों को भी कहो ॥१॥

योगमुद्रोवाच

ये पूर्वैः कृत सुक्रियो दय फलै लब्धात्मभावा न्वयाः ।
सीताराम कुटुम्ब कोटि निवहे नित्यानुरागान्विते ॥
तेस्यु र्विष्णु महेश ब्रह्म मुनिभि र्देवैश्च वन्द्यांघ्रय ॥
स्तस्मि न्तेपि नृपात्मजे भवति यद्भावोसिधन्या परा ॥२॥

श्री योगमुद्रा बोली—कि जो पूर्व जन्म के सुन्दर पुण्यमयी आत्म भावनाओं से सिद्ध हुए फल स्वरूप श्री सीताराम जी के करोड़ों कुटुम्ब समूह में नित्य अनुराग वाले हैं वे ब्रह्मा, विष्णु महेश, मुनि व देवताओं से वान्दित चरण वाले हैं, इस कुटुम्ब में हे राजकन्यके ! तुम्हारा भी सम्बन्ध होगा अतः इस कुटुम्बमें भाव रखने वाली आप परम धन्य हैं ॥२॥

गुणालयो गुणज्ञोपि गुणधीश्च गुणायतः ॥
पतद्ग्रहं गृहीत्वाच पानपात्रश्च तिष्ठति ॥३॥

गुणालय, गुणज्ञ, गुणधी, गुणायत—ये चार महाराज मिथिलेश की पीक दानी और पान-पात्र को लेकर सेवा में समीप रहने वाले हैं ॥३॥

सभायां मिथिलेशस्य समीपे देव नन्दनौ ॥
ताम्बूल दानं द्वावेतौ गृहीत्वातिष्ठन्तः सदा ॥४॥

देव और नन्दन मिथिलेश महाराज जी के पानडब्बों को लेकर सभा में हमेशा समीप रहते हैं ॥४॥

शुभक शोभका वेतौ मुख प्रोञ्छन वस्त्रकम् ॥
मौलिको मालक श्चैव गुणानीकौ तु चामरम् ॥५॥

शुभक, शोभक—ये दो मुख पोंछने का अँगोछा लेकर तथा मौलिक और मालक—ये दो गोल चवँर लेकर समीप रहते हैं ॥५॥

गृहीत्वा स्वांत पत्रश्च तिष्ठन्ति भूषिताङ्गकाः ॥
मोदको मुदका वेतौ व्यजनेनोपचारकौ ॥६॥

और गुण व अनीक ये दो जने सुन्दर भूषित अङ्ग वाले छत्र को लेकर खड़े रहते हैं। मोदक और मुदक पंखा लेकर हवा करते हैं ॥६॥

मुगदो मेघनो घानी धावको धरकस्तथा ॥
एतेत्वादान सन्दानं कुर्वन्ति वस्त्र भूषणैः ॥७॥

मुगद, मेघन, धानी, धावक धरक—ये पाँच वस्त्रभूषणों का खोलने, पहिनाने लेने और देने का काम करते हैं ॥७॥

मेधको गुडकश्चैतौ ब्रह्मादि वन्दितेपदे ॥
जानकी जनकस्यैव योजयन्तश्च पादुकाम् ॥८॥

मेधक, गुडक ये दो जने ब्रह्मादिक देवताओं से वन्दित चरण वाली श्री जानकी के पिता के चरण पादुकाओं को खोलने व पहिनाने वाले हैं ॥८॥

वादिक विन्दका वेतौ वार्तानां स्मारकौ यथा ॥
मनीष मुखरा वेतौ दर्शकौ समयस्य च ॥९॥

बादिक और बिन्दक—ये दो जने महाराज को हर एक बात को स्मरण दिलाने वाले हैं। मनीष और मुरवर— ये दो जने समय बताने वाले हैं ॥९॥

प्रवीण प्रवणा वेतौ सदैव श्नान कारकौ ॥
तथैवाभ्यञ्जनं राज्ञः करोति नामशैलकः ॥१०॥

प्रवीण और प्रवण—ये दो जने महाराज को हमेशा स्नान कराने वाले हैं। शैलक, महाराज को हमेशा अञ्जन लगाने की सेवा करते हैं ॥१०॥

चारुक वानिका वेतौ पूजा साहित्य विस्तरम् ॥
देव गेहे सञ्चयतः पूर्वं श्नात्वा स्वयं यथा ॥११॥

चारुक और बानिक—ये दो जने महाराज की तरह से नित्य स्नान आदिक करके देव मन्दिर में पूजा-सामग्री को तैयार करने वाले हैं ॥११॥

सुधोदनः सुधा श्राविः द्वौ मुख्यौ सूपकारकौ ॥
भोजनं कुर्वतो राज्ञः सान्निध्यश्चोप तिष्ठतः ॥१२॥

सुधोदन और सुधाश्रावि—ये दो जने महाराज के रसोइयों में मुख्य भोजन करते समय समीप में रहने वाले हैं ॥१२॥

धौतं कौशेयकं दिव्य माशनं पूर्व मुत्तरे ॥
भोजनस्य ददात्येव मनोज्ञो नाम सेवकः ॥१३॥

मनोज्ञ नाम का सेवक भोजन के लिए धुला हुआ दिव्य रेशमी आसन को पूर्व उत्तर (ईशान) को ओर मुख करके आसन बिछाने वाला ॥१३॥

सालीक मनिका वेतौ शय्या सन्धान कारकौ ॥
तस्यागारस्य द्वारस्थौ हारीक हेमका वुभौ ॥१४॥

सालीक और मनिक—ये दो जने शयन के लिये पर्यङ्क बिछाने वाले हैं। हारीक और हेमक—ये दो जने शयन कुञ्ज के द्वारपाल हैं ॥१४॥

काञ्चीक नानुका वेतौ मुखप्रक्षालनं तथा ॥
उपाशनं कारयतो मध्यान्ह शयनोत्तरम् ॥१५॥

काञ्चीक व नानुक—ये दो सेवक मुख प्रक्षालन करने वाले मध्यान्ह शयन के बाद महाराज के जागने की प्रतिक्षा करते रहते हैं ॥१५॥

श्वसुरो रामचन्द्रस्य सीताया जनको महान् ॥
तस्याङ्ग सेवका नित्याः सच्चिद्रूपा नृपात्मजे ॥१६॥

इस प्रकार श्री रामचन्द्र जी के ससुर अर्थात् श्री सीता जी के पिता महात्मा श्री मिथिलेश जी के सच्चिदानन्द स्वरूप नित्य अङ्ग सेवा करने वाले सेवकों को वर्णन किया ॥१६॥

ध्यातुं ज्ञातुं सदा योग्याध्येया श्चापिमहर्षिभिः ॥
सीतारामो पासकानां तत्सम्वन्धे स्पृहावताम् ॥१७॥

इन सेवकों का यथार्थ ज्ञान, नित्यध्यान करना श्री सीताराम उपाशक महात्माओं को योग्य है जिससे उन सेवकों का सम्बन्ध प्राप्त हो सके ॥१७॥

तथा शुभागा सुचिशील युक्ता सीता सुभाग्यां जननी सुनेत्रा ॥
तस्याः सुसख्यः परिशील दत्ता वक्ष्यामि सेवामपि नाम तासां ॥१८॥

अब इसी प्रकार सुन्दर भाग्यवती, महान् पवित्र सुन्दर अङ्ग वाली श्री सीता जी की माता श्री सुनयना जी की सखियों व उनकी सेवा का वर्णन करती हूँ जो सेवा में बड़ी सावधान हैं ॥१८॥

सार्कं विवाहे भवनात्पितुर्य्याः स्वम्या सुप्रीत्या गुण रूप युक्ताः ॥
दत्ता जनन्यापरि शीलनाय सख्योपि दास्यो पि समानशीलाः ॥१९॥

बहुत सी सखियाँ और दासियाँ तो महारानी जी के समान शील प्रेम, गुण रूप वाली विवाह के समय पिता के घर से कन्या की सेवा के लिए माता ने दी हैं ॥१९॥

अत्रापि पत्यु र्भवना गतायां श्वश्रू नि युक्तानिपुणा हि सख्यः ॥
दिव्याम्वरा भूषण सज्जनाय चातुर्य्य शिक्षादि परीक्षणाय ॥२०।

और बहुत सी पतिके घर में आने पर सासुने भी दिव्य वस्त्र भूषण सजाने में बड़ी चतुरी, शिक्षा देकर परीक्षा में पास की हुई सखियों को दिया है ॥२०॥

एवं तु पक्षद्वय सन्निधाने नामानि वक्ष्यामि समग्रकानाम् ॥
सामान्य पंक्तौ तु विदेहकानां शेषोपि संख्या न चिरं समेति ॥२१॥

इस प्रकार दोनों पक्षों की सखियों और दासियों के नाम व सेवाओं का साधारण रूप से वर्णन करती हूँ। यथार्थ रूप से तो शेष जी भी बहुत काल तक पूर्ण वर्णन करने में समर्थ नहीं हैं ॥२१॥

साकं तया पितु र्गेहा त्सख्यो दास्योपि कोटिशः ॥
आगता रूप शालिन्यो नव यौवन भूषिताः ॥२२॥

करोड़ों दासियाँ व सखियाँ तो पिता के घर से महारानी जी के साथ आयी है जो बड़ी रूप यौवन शालिनी सुन्दर भूषिता हैं ॥२२॥

विद्यावन्त्यः कला भिज्ञाः सदृशा राज कन्यया ॥
मुख्यास्तासां हि सर्वासां वशुद्धय मतिप्रभाः ॥२३॥

महारानी जी के सदृश विद्यावती, कला पारङ्गता उन करोड़ों मे से मुख्याओं में से भी मुख्या अत्यन्त प्रभाव शालिनी सोलह सखी प्रधान हैं ॥२३॥

तासांश्चैवाति द्वे मुख्ये सा कलैका कलाधुराः ॥
द्वितीया हि विजानीहि श्रद्धा शीले नरेन्द्रजे ॥२४॥

उन सोलहों में भी दो मुख्य हैं। हे श्रद्धावती राजकन्यके! इन दोनों में एक का नाम कला और दूसरी का नाम कलाधुरा है—ऐसा जानो ॥२४॥

अन्या मुनि द्वयो न्माना स्तयो वंश्याः सुभा स्यकाः ॥
तासां नामानि वक्षामि दक्षानां लक्ष सेवया ॥२५॥

अन्य जो चौदह हैं वे चंन्द्रमुखीं उन दोनों के अधीन हैं। लाखों प्रकार की सेवा करने में कुशला इन चौदहों का भी नाम मैं तुमको बताती हुँ॥२५॥

प्रज्ञी विद्या च वागीशा धन्या विद्यापि वैनुता ॥
सीमा चैवेति सप्तस्युः सा कला मनु संश्रयाः।२६॥

प्रज्ञी, विज्ञा, वागीशा, धन्या, विद्या, वैनुता, सीमा ये सात श्री कला जी की अनुगामिनी हैं ॥२६॥

तथा कलाधुरायास्तु जीवा जानी प्रभा जिता ॥
वभ्रा भ्राजा विजृभीयाः युक्ताः सप्त गुणाधिकाः ॥२७॥

जीवा, जानी, प्रभा जिता, वभ्रा, भ्राजा, विजृभी—ये सात गुणों में बढ़ी चढ़ी श्री कलाधुरा जी की अनुगामिनी हैं।२७॥

अथ पत्युः पक्षके चानवद्य लक्ष्य के हि द्वे ॥
पराद्धोर्द्ध्वा सुमुख्ये च गुणतो रूप तोद्ध्व गे ॥२८॥

अब पति पक्ष की सखियों में अनवद्य और लक्ष्मका—ये दो मुख्य हैं जो परार्द्ध से ऊर्ध्व (अधिक) अर्थात अनन्त सखियों में मुख्य हैं और गुण रूप में चढ़ी बढ़ी सर्व श्रेष्ठ हैं ॥२८॥

तदानुगाः क्रमेणैव ज्ञातव्या महिपात्मजे ॥
शिक्षशान्ती कला काव्या कान्ति दीक्षा च दक्षिका ॥२९॥

हे राजकन्यके! इन दोनों मुख्यों की अनुचरियों का भी नाम जानना चाहिए—शिक्षा, शान्ति, कला, काव्या कान्ति, दीक्षा, दाक्षिका—ये सात श्री अनवद्य जी की अनुचरी हैं ॥२९॥

अथ रूपा सुखा स्यामा गद्या पद्या प्रभासिका ॥
विलासया समा सप्त गरीयस्यो गुणै रिमाः ॥३०॥

और रूपा, सुखा, श्यामा, गद्या पद्या प्रभासिका, विलासया—ये सात उत्तम गुणवतियों में भी उत्तम बढ़ी चढ़ी श्री लक्ष्मका जी को अनुचरी हैं। ये सात २ करके चौदह और दो मुख्य सहित ये सोलह अनन्त प्रधान यूथे स्वरियों में मुख्यों में मुख्य हैं ॥३०॥

उद्वर्तनं तथा स्नानं दन्त मज्जन पूर्वकम् ॥
भूषणांशुक सौगन्ध्यं ह्यङ्ग रागाङ्ग भक्तिकाः ॥३१॥

ये सब सखियाँ श्री महारानी सुनयना जो की सेवा में दन्तमज्जन उबटन, स्नान, भूषण, वस्त्र, सुगन्धि, अङ्गराग लेपन आदि सेवा बड़े अनुराग से करती हैं ॥३१॥

शय्यादि परि स्यन्दोपि पुष्प माल्यादि ग्रन्थनम् ॥
एला कर्पूर मिश्राश्च वीटिकानां प्रदानकम् ॥३२॥

पुष्पों के पर्यङ्क शय्यादिकों की रचना और फूलों की मालाओं की रचना तथा इलाइची, कपूर आदिक मिश्रित सुन्दर पान के बीराओं की रचना करके पवाना ॥३२॥

वद्यानां वादनं रुच्यं गानं तालादि भेदतः ॥
मान शिक्षो पनयन क्रिया कोकादि पाठनम् ॥३३॥

उत्तम रुचिकर बाजाओं का बजाना, तालादिक भेद से सुन्दर गाना, पति के साथ बिलास में मान आदि की शिक्षा देना, कटाक्ष आदि लीला विलास कोक शास्त्र की शिक्षा देना। ३३॥

विहारदर्शनं दिव्यं वाटिकादि सहोद्गमम् ॥
निदाघ प्राविडा दीनां यद्यत्तत्रानुमोदनम् ॥३४॥

दिव्य विहार बाटिकादिकों क दर्शन में साथ चलना, गर्मी, वर्षादिक ऋतु बिलासों में भी महारानी जी को प्रसन्न करना ॥३४॥

प्रस्ताव रचना वार्ता चतुर्य्येण प्रहेलिकाः ॥
इत्यादि तु सखीनां च कर्त्तुं कार्य्याणि सर्वदा ॥३५॥

लीला के प्रस्तावों रचना तथा बात चातुरी, प्रहेलिकादिकों की रचना करना इत्यादि सखियों के करने योग्य कार्यों में सदा सावधान होकर ॥३५।

अधिकार विभागैश्च मुख्याभिः स्थापिता यथा ।
तां श्रयन्ति तथा चान्याः स्वस्याः स्वस्याहि विद्यया ॥३६॥

अपने २ अधिकार के विभाग पूर्वक अपनी मुख्याओं का अनुशरण करके अपनी अनुचरियों को उचित सेवा में लगाती हैं और अपनी २ विद्याओं के अनुसार अपनी अनुचरियों को साथ लेकर महारानी श्री सुनयना जी की सेवा करती हैं ॥३६॥

युग्मं गाङ्गेय स्फटिकेन्द्र नील हरितै र्वंशच्छदै र्विद्रुमैः ।
पीतैः पाटलकै र्विनिर्मित तटै दुर्गै र्वृता सप्तभिः ॥

रामानन्द विधायिनी जनकजा तस्याः पुरी जन्मनः।
श्वाशुर्य्या रघुनन्दनस्य मिथिला सद्वैभवा सर्वदा ।।३७।।

गांगेय अर्थात् (स्वर्ण रंग की पीली) मणि, स्फटिक (सफेद) मणि, इन्द्रनील (श्याम) मणि, हरित मणि, वंशच्छदमणि (कषायमणि), लालमणि, पीतमणि, पाटल (लाल श्वेत मिश्रित रंग की) मणि—इस प्रकार का विधान की विविध रंग की मणियों से रचना किए हुए सात दुर्ग वाली, श्री राम जी के लिए आनन्द का विधान करने वाली, श्री जानकी जी की जन्मभूमि, हमेशा महान् वैभव से युक्त, श्री रघुनन्दन जी की ससुराल जो मिथिला नगरी है ।।३७।।

तैः सप्तावरकैर्वृतोच्च शिखरा प्रासाद पंक्तिः ।।
परा रत्न स्तम्भ विजृम्भिता मणिगणैः सत्तोरणोच्च ध्वजा ।।
तस्या द्वार सहस्रकेषु निपुणा द्वास्था विदेहाधिपै ।
र्युक्ताहेतुभि रन्तरे विरलशाः तिष्ठन्ति सद्भूषणाः ।।३८।।

उसके सात आवरण शहर में ऊँचे २ शिखर वाली उत्तर महलों की पंक्तियाँ हैं जिन महलों में उत्तम रत्नों के खम्भ और ऊँचे मणियों के ध्वजा, पताका तोरण सजी हैं ऐसे महलों वाली नगरी में हजारों फाटकों पर श्री मिथिलेश महाराज से नियुक्त चतुर द्वारपाल पहरे में अपने आयुधों को कसे हुए खड़े हुए जो सुन्दर भूषणों से सजे हुए, आलस्य को त्याग करके हृदय से मालिक पर स्नेह रखकर पहरा करते हैं ।।३८।।

राज्ञीनां सत विस्तरोत्तमगृहाः कक्षान्तरा कल्पका ।
वस्तूनाञ्च प्रभेदका मणिमयाः सद्रक्षकै रचिताः ।।
तत्रान्तः पुर द्वार रक्षक जना तिष्ठन्ति ते भिन्नकाः ।
पूर्वोक्तास्तु वहिःस्थका अभिमता मुख्या द्विधा तच्छृणु ।।३९।।

हे सुकान्ति ! श्री सुनयनादिक महारानियों के सैकड़ों प्रकार के उत्तम बिस्तर जिनमें बिछे हुए हैं ऐसे कई आवरण वाले महलों में विविध प्रकार के भेद वाले मणि रचित खिलौनादिक की रचना की हुई वस्तुऐं जिनमें भरी पड़ी हैं और जिन महलों में सुन्दर स्वभाव वाले द्वार पाल रक्षा कर रहे हैं ऐसे महलों के प्रधान अन्तः पुर स्थान में रक्षा करने वाले जो सेवक हैं वे भिन्न हैं और पहले जिन सेवकों का नाम बताया था वे बाहरी भाग के रक्षक हैं इस प्रकार महारानियों को अभिमत दो प्रकार के सेवकों का नाम मुझ से सुनो ३९।।

द्वाराणि सप्त कक्षाना म्वाह्यानाम्मास्वराणिच ।।
पूर्व दक्षिण पश्चिमोत्तरा सन्ति सन्मितानिवै ।।४०।।

प्रत्येक महल सात आवरण वाला है। प्रत्येक आवरण के प्रकाशमान जो महल हैं उनके चारों दिशाओं में फाटक हैं उन फाटकों के बाहरी तरफ में ।।४०।।

वेद वेद मिता स्तत्र द्वास्थास्सन्ति नृपात्मजे ।।
मुख्या स्तेषा श्चापि मुख्या श्चवारोहिदिशंप्रति ।।४१।।

एक २ कोना पर चार २ द्वारपाल फाटकों की रक्षा करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक फाटक के चारों कोनाओं पर सोलह-द्वारपाल एक महलके होते हैं इस तरह आवरणके प्रत्येक दिशाओं के महलों में जितने भी द्वारपाल हैं उन समस्त द्वारपालों के चार चार मुखिया प्रत्येक दिशाओं में हैं ॥४१॥

एवं तु षोडशोन्माना स्सुरेन्द्र शत वैभवा: ॥
शीरध्वज महाराज्ञ स्तेस्युः प्रासाद द्वास्थकाः ॥४२॥

इस प्रकार एक आवरण के चारों दिशाओं के सोलह मुखिया होते हैं और प्रत्येक मुखिया सौ इन्द्र के बराबर वैभव वाला है। इस प्रकार के ऐश्वर्यमान द्वार पाल महाराज श्री शीरध्वज जी के प्रत्येक महलों के हर आवरणों में बहुत हैं ॥४२॥

धार्मिकश्च धरा धीर: प्रज्ञकः प्राज्ञक स्तथा ॥
चत्वारः पूर्वद्वाराणां द्वास्थाना म्प्रेरका इमे ॥४३॥
शीलकः प्रकरः प्राशी नवानीक स्तथैवच ॥
चत्वारो दक्षिण द्वार द्वास्थाना मधिकारिणः ॥४४॥

अब राज महल के पूर्व द्वार पर धार्मिक, धराधीर, प्रज्ञक प्राज्ञक, ये चार उन सब द्वार पालों के मुखियों के मुख्य हैं जो सब द्वार पालों के उच्च अधिकारियों को प्रेरणा करने वाले हैं। इसी प्रकार राज महल के दक्षिण द्वार पर शीलक, प्रकर, प्रसी, नवानीक—ये चार सब द्वार पालों के उच्चाधिकारियों के मुखिया हैं ॥४३॥४४॥

भाद्रको भद्रको भाव्यो भानु स्नक इमे शुभाः ॥
पश्चिम द्वार द्वास्थानां चत्वारो पि महात्मनः ॥४५॥

इसी प्रकार पश्चिम द्वार के भाद्रक, भद्रक, भाव्य, भानुश्नक—ये चार महात्मा सब द्वारपालों के उच्चाधिकारियों के भी उच्चाधिकारी हैं ॥४५॥

गणाग्र्या श्चोत्तरीया स्तु वलायत वलोत्तरौ ॥
घना घनो दुवला वेते जानीहि महिपात्मजे ॥४६॥

इसी प्रकार उत्तर द्वार के भी बलायत, बलोत्तर घनाघन, वदुबला—ये चार सब द्वार पालोंके अफसरों के अफसर हैं। हे राजकन्यके! यह तो महाराज श्री शीरध्वज जी के राजमहल का वर्णन हुआ ॥४६॥

राज्ञोप्यष्टौ शता न्येव रूप शीला गुणायताः ॥
राज्ञः शीरध्वज स्यैव तासां गेहान्तराणि च ॥४७॥

महाराज श्री शीरध्वज जी के रूप गुण शील में चढ़ी बढ़ी एक सौ आठ रानी हैं उन सबके अलग अलग प्रत्येक महलों में ॥४७॥

द्वास्था वर्ष्म वरा स्तत्र कुब्जका अपि सम्मिताः ॥
जानक्या जननी ज्येष्ठा तस्याः प्रासाद द्वारिकाः ॥४८॥

सुन्दर सरीर वाले तथा कूबड़ शरीर वाले द्वार रक्षक दास पहरा करते हैं श्री जानकी जी की माता सब रानियों में ज्येष्ठा प्रधान पटरानी श्री सुनयना अम्बा जी के महल के द्वार रक्षक दास ॥४८॥

कुब्जा वर्ष्म वरा एव भूषिताश्च सहस्रशः ॥
तेषाश्चै वाग्रमाणास्तु स्युः षड्भि रधिका दशः ॥४६॥

हजारों की संख्या में कोई कुबड़ कोई सुन्दर शरीर वाले, इस प्रकार सुन्दर वस्त्र भूषणों से भूषित हैं उन सबके मुख्यों के मुख्य हैं ॥४६॥

पुनीत दर्शना स्सर्वे लालिता जानकीं तुयैः ॥
बाला खेलोपकरणै स्तेषां नामानि मेभृणु ॥५०॥

जो श्री जानकी जी से लाड़ प्यार करने वाले अत्यन्त पवित्र दर्शन करने वाले हैं। सुन्दर खिलौनादि उपकरणों से खिलाते हैं उन सोलहों का नाम मुझसे सुनो ॥५०॥

वरीक वरणो वन्दी विशल्यो वदर स्तथा ॥
अमोघा धुर वश्चैव धुन्धुकेशेन सं युताः ॥५१॥

वरीक, वरण, बन्दी विसल्य, बदर, अमोघा, ध्रुव, धुन्धुकेस ॥५१॥

अष्टा विमे कुब्जकास्तु सहस्राणा म्महत्तराः ॥
वर्ष्म वरा स्तु सञ्जीन केयूर मेखला भिधाः ॥५२॥

ये आठ हजारों कूबड़ों के ऊपर मुख्य हैं अब सुन्दर शरीर वाले द्वारपालों के मुख्य-संजीन, केयूर, मेखला, ॥५२॥

माल्यकोमुकुट श्चैव कर्णिको माणिको पि च ॥
सहिता मेदुरेणैव ज्ञायतां वसु संख्यया ॥५३॥

माल्यक मुकुट, कर्णिक माणिक, मेदुर—ये आठ हैं। ५३॥

तस्या स्त त्संख्यया मात्या तेषां नामान्यपि भृणु ॥
सुमाली विदन श्चैव बन्धुरः प्रवरः प्रधीः ॥५४॥

अब महारानी श्री सुनयना जी के आठ मन्त्री हैं इनके भी नाम तुम मुझ से सुनो—सुमाली बिदन, बन्धुर प्रवर, प्रधी ॥५४॥

अंशुमान कुमुदः श्रम्वी राज्ञीनां सचिवा इमे ॥
शीरध्वजमहाराजस्त स्यैव सचिवातथा ॥५५॥

अंशुमान, मकुद, श्रम्वी—हैं। अब महाराज श्री शीरध्वज जी के मन्त्रियों के नाम सुनो ॥५५॥

जय मानस्सुनीतश्च सुमत स्सन्धिवेदनः ॥
सुदामापि विधज्ञश्च विष्वक्सेन सुदर्शनौ ॥५६॥

जयमान सुनीत, सुमत, सन्धि वेदन, सुदामा, विधज्ञ, बिष्वक्सेन सुदर्शन ॥५६॥

अष्टाविमे महामात्रा राज्य सन्धान सम्मताः ॥
रसोन्मानाश्च शेनान्यः परार्द्धावधि शैन्यकाः ॥५७॥

ये आठ महाराज के राज्य पालन विधि में सम्मत महा मन्त्री हैं। असंख्य सेनाके सेनापतियों में मुख्य हैं ॥५७॥

तेषां मुख्या हि मुख्यानां तेषाम्मुख्या अवेहि तान् ॥
नामान्येषाम्महावाहुर्धर्म्मयुद्धश्च क्रन्तनः ॥५८॥

इन मुख्यों के भी मुख्यों के नाम क्रम से सुनो—महावाहु, धर्मयुद्ध तथा क्रन्तन ॥५८॥

तीव्र रथ स्तीव्र खड्ग श्चारुणा क्षेण सम्मिताः ॥
सर्वे नित्य दिव्य रूपा दिव्य सद्गुण सयुताः॥५९॥

तीव्र रथ, तीव्र खड्ग, अरुणाक्ष है। ये सब के सब दिव्य रूप, दिव्य सद्गुण, नित्य दिव्य स्वरूप हैं ॥५९॥

अथ प्रजानां मिथिलाधिपस्य नामानि पुण्यानि नृपात्मजेऽद्य ॥
कलावता मन्वय सेवकानां शृणुष्व व्योकार प्रभृत्तिकानाम् ॥६०॥

हे नृपात्मजे अब मिथिलेश महाराज के प्रजा (जनता) में मुख्यकलाकारों के संरक्षक सेवकों का नाम सुनो जो लुहार सुनारादि नामों से प्रसिद्ध हैं ॥६०॥

महाराजस्य व्यौकार स्सुरेन्द्र शत वैभवः ॥
श्रीमन्मिथिला नाथस्य नाम्ना सावसिको महान् ॥६१॥

महाराज मिथिलेश जी का जो लुहार है वह सौ इन्द्रों के समान ऐश्वर्य वाला महान् है जिसका नाम सावसिक है ॥६१॥

अथैवञ्च कलादोपि कुशलो नाम सत्तमः ॥
कुविन्दः कलविङ्क स्स्या न्नाम्ना चैव न्नृपात्मजे ॥६२॥

इसी प्रकार महाराज के महान सुनार का नामकुशल है और जुलाहा का नाम कलविङ्क है जो नाम से ही अपना परिचय दे रहा है ॥६२॥

कुलालो वुधगो नाम रङ्गा जीव स्तु वैसगः ॥
त्वष्टा वरविदो नाम्ना मालाकारो विवोधकः॥६३॥

कुम्हार का नाम वुधग है; चित्रकार का नाम वैसग है और बढ़ई का नाम वरविद है। माली का नाम विवोधक है ॥६३॥

रत्नः साधुको नाम रजकस्त्वैव निर्मलः ॥
सस्त्र माज्जों तीक्ष्णीको ग्रन्थिकारो गुणाधिकः ॥६४॥

जौहरी (रत्न वाला) का नाम साधुक है और धोवियों में प्रधान का नाम निर्मल है। शस्त्रमार्जकों में श्रेष्ठ का नाम तीक्ष्णक है। पटवा का नाम गुणाधिक है ॥६४॥

काम्भवीको धनी नामा कवचानां तु कारकः॥
त्रणुको नाम विख्यातो मेदुः मुकुर निर्मकः ॥६५॥

मनिहारो में श्रेष्ठ का नाम धनी है और कवचादिकों को बनाने वाले का नाम तृणुक है और दर्पण आदि बनाने वाले का नाम मेदू है ॥६५॥

पादुकारो माठिक स्तथा द्वंशकरण्डोलकारकः ॥
नाम्ना वटीक इत्येवं सूची साकीन एवहि ॥६६॥

जूता बनाने वालों में श्रेष्ठ का नाम माठिक है बाँस की करन्डी डालादि बनाने वालों में श्रेष्ठ को नाम बटीक है। इस प्रकार यह मुख्यों का नाम सूचित किया है अर्थात अँगुल्दा निर्देश किया है ॥६६॥

एवं प्रजानां मिथिलाधिपस्य नित्यं गृहे वार्य्यवतां गुणैस्तु॥
स्वैः स्वै रसमाराधयता ःनरेश मुख्यानि नामानि प्रतिष्ठितानाम्।६७॥

इस प्रकार मिथिलेश महाराज के घर में नित्य कार्य करने वाले तथा गुणों में प्रधान प्रजा (जनता) के मुख्यों का नाम बताया जिनकी महाराज के दरबार में प्रतिष्ठा है ॥६७॥

पुनः सुश्रद्धां श्रवणे च तस्याः नृपात्मजाया अपि योगमुद्रा ॥
जिज्ञासमानात्क्षणमेकमेवसा तुष्णि भावेन समास्थिताग्रे ॥६८॥

इस प्रकार योगमुद्रा ने सुकान्ती की और भी सुनने की इच्छा को जानने के लिए थोड़ी देर के लिये मौन धारण कर लिया॥६८॥

कान्तः कृपालू रघुनन्दनो मे सीता नियन्त्री जनकात्मजासीत् ॥
अद्य स्तयो स्ते मुखनिश्रुताया कथैव मे जीवनमस्ति नान्यत् ॥६९॥

श्री सुकान्ति जी बोलीं—हे योगमुद्रे ! मेरे प्रियतम श्री रघुनन्दन जू बड़े कृपालु हैं, मेरी स्वामिनी जनकात्मजा श्री सीता जी मेरे लिए शासन विधान करने वाली हैं इस समय आप के मुख से उन दोनों की कथा रूपी अमृत की धारा ही मेरे जीवन बूटी है और उपाय से अब मैं नहीं जी सकती हूँ ॥६९॥

उक्ता यदैवं विरहार्त्तवत्या सायोगमुद्रा नर राजपुत्र्याः ॥
विज्ञाय वार्ता सुखद श्च तस्याः श्रद्धोत्तमांसापुनरेव चक्रे ॥७०॥

इस प्रकार विरह से बेचैन हुई नरराज कन्या सुकान्ति के अत्यन्त सुखदायी बचनों को जब योगमुद्रा ने सुना तो उसकी उत्तम श्रद्धा को देखकर फिर कथा कहना आरम्भ किया ॥७०॥

इति श्री शङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीतारामरत्नमञ्जूषायां
श्रीजनकराज प्रजानाम कथनप्रसङ्गे
एकादश स्सर्गः

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां
श्री जनकराज प्रताप नाम कथन प्रसंगे एकादशः सर्गः ॥

सप्त दुर्गान्तरे योध्या यथा स्या द्रचना वती ॥
राजमन्दिर पर्य्यन्ता तथा तां वर्णयामि ते ॥१॥

अब श्री अयोध्या जी के बाहरी भाग सात आवरण परकोटाओं से लेकर भीतरी भाग राजकोट पर्यन्त मध्य में जो अयोध्या जी का शहर है उसका वर्णन करके मैं तुमको सुनाती हूँ ॥१॥

सप्तावरणे परिखा सप्तैव परिशोभिताः ॥
कूल द्वये रत्न बद्धा वारिजैर्वारि पूरिताः ॥२॥

सात आवरण परकोटाओं के मध्य अन्तरालों में सात ही खाइयाँ भी अतिशोभा सम्पन्न हैं। खाइयों के दोनों किनारे मणिमय घाट हैं और खाई खिले हुए कमलों से भरी हुई अगाध जल वाली हैं ॥२॥

वाटिको पवनै र्युक्ता रत्न कुञ्जो पकण्ठिकाः ॥
गुञ्ज न्मधुव्रत श्रेणी द्विजसंघुष्ट नादिताः ॥३॥

घाट के अतिरिक्त दोनों किनाराओं पर सुन्दर वाटिकायें रत्नों के कुञ्ज (बँगले) उपवन—इन सब से वह खाई इस तरह से शोभित हैं कि जैसे अयोध्या रूपी नारी के कण्ठकी मणिमय सुन्दर कण्ठी बनी हो। जहाँ तहाँ भवँर गूँज रहे हैं; पक्षियों का कल्लोल मचा है। मृग पंक्तियाँ झुण्ड की झुण्ड घूम रही हैं ॥३॥

सर्वे पुर जना स्तत्र विलसन्ति यथा सुखम् ॥
स्वस्मि न्स्वस्मिश्च संघट्टे स्त्रियो वा पुरुषा अपि ॥४॥

इस प्रकार उन खाइयों की अगल बगल की भूमिओं पर अयोध्या नगर की जनता सुख पूर्वक विहार करने के लिए आया जाया करती है जो जनता जिस दिशा के शहर में रहती है उस दिशा के स्त्री पुरुष उसी दिशा के घाटों पर विलास करते हैं ॥४॥

अन्तरे ष्टापदैर्भक्ता चतुष्कोणा वसद्गृहाः ॥
अष्टापदा पणा योध्या मध्य भाग चतुष्पथा ॥५॥

इस प्रकार सातों आवरण परकोटाओं के मध्य श्री अयोध्या भी आठ आवरण का सुन्दर विभाग पूर्वक शहर है। शहर के आवरणों में प्रत्येक महल चार कोना के हैं। इस प्रकार कमल के आकार में बनी हुई अयोध्या नगरी के मध्य भाग से चारों दिशाओं के लिए चार राजमार्ग सीधे चार दिशाओं को गए हैं ॥५॥

गृहाणा श्चतुर श्राश्च मण्डलाकार पंक्तयः ॥
पंक्तीनाञ्च सहस्रेषु बृह चारु चतुष्पथम् ॥६॥

चार कोना वाले महलों की सीधी पंक्तियाँ बाहर के आवरण में कोना २ बाँधकर मण्डाकार होते हैं। इस प्रकार एक प्रकार एक आवरण में बड़ी २ हजारों पंक्तियाँ हैं। प्रत्येक दो पंक्तियों के बीच का जोड़ बड़े बड़े चौराहों से शोभित है। ६॥

मध्ये चतुष्पथ स्यैत स्प्रजानां गोष्टि मण्डपम् ॥
रत्नस्तम्भालिकाभार्षं तोरणध्वज मण्डितम् । ७॥

प्रत्येक चौराहों के बीच में उस आस पास की जनता का एक सभा मण्डप है जो रत्नमयी खम्भों की पंक्तियों से और ध्वजा तोरण कलशादिकों से सुन्दर भूषित प्रकाशमान है ॥७॥

वातायन गवाक्षै श्च चतु र्दिक्षु विराजितम् ॥
अट्ट प्रकोष्टकै रुच्चै र्दशितं योजन द्वयात् ॥८॥

और छज्जे, झरोखे चारों दिशाओं में शोभित हैं। ऊँचे छत्तों के कानिस आठ कोस की दूरी से दीख पड़ते हैं ॥८॥

क्रीडन्ति बालका स्तत्र युवानो नृत्यगीतकम् ॥
वृद्धाःशास्त्र प्रसङ्गाश्च जनैः पूरित मण्डपे ॥९॥

उन सभा मण्डपों की छत पर खेलते हुए बालकों तथा युवकों का नृत्य, गीत हुआ करता है। वृद्ध लोग शास्त्र प्रसंगों का विचार करते हैं इस प्रकार की जनता से वे सब सभा मण्डप भरे रहते हैं ॥९॥

मण्डलं व्याप्य सर्वत्र महोत्सवः प्रतिगृहम् ॥
गायन्ति खेलयन्त्यश्च नार्य्यः सर्वाङ्ग भूषिताः ॥१०॥

शहर के प्रत्येक घर में सर्वाङ्ग भूषिता स्त्रियाये मण्डल बाँध करके गाती खेलती महान् उत्सवों को प्रकट करती हैं ॥१०॥

सीतेतिरामेति समेत्य नाम्ना गायन्ति गीतानि कलस्वरैश्च ॥
अट्ट प्रकोष्टेषु गृहाङ्गणेषु प्रतोलिकायां प्रविशन्ति नार्य्यः ॥११॥

उनके गाते हुए गीतों में सीता और राम ये दोनों नाम और गुण भरे रहते हैं। इस प्रकार गीतों के कोकिल स्वर से कल्लोल मचातीं हुईं प्रत्येक घरों के अन्दर छत पर, आँगन में, दरवाजों पर छज्जाओं पर आती जाती झुण्ड की झुण्ड नारियाँ शोभित होती हैं ॥११॥

पूर्वेऽथ चोत्तरे पट्टे दक्षिणे पश्चिमे तथा ॥
अष्टापदेह्यापणानां वस्त्वादिभि स्त्रिकं त्रिकम् ॥१२॥

कमलाकार अयोध्या शहर के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर के बाजारों में प्रत्येक वस्तुओं की तीन २ पक्ति करके लगी रहती हैं ॥१२॥

वस्तु कला द्रविणश्च रसान्न साक संज्ञकम् ॥
वस्त्र भूषण सौगन्ध्यं पयः पशु फलाभिधम् ॥१३॥

बाजार में वस्तु, कला-विद्याऐं धन, रस पदार्थ, अन्न, साक वस्त्र, भूषण, सुगन्धित-पदार्थ दूध, पशुऐं, फल ॥१३॥

पूर्वादिष्वत्रपट्टेषु ह्यापणानां त्रिक श्चयत् ॥
त्रिकेप्येकैक द्रव्यस्य भिन्नास्त्वष्टा पदापणाः ॥१४॥

ये सब वस्तुऐं प्रत्येक दिशाओं में बाजारों की तीन २ पक्तियाँ हैं। तीन पंक्ति वाले बाजारों में भी प्रत्येक बाजर में एक २ वस्तु की तीन २ पंक्तियाँ अलग २ हैं। इस प्रकार हर एक बाजार चौपड़ खेलने के सारी पट के सदृश आकार वाले हैं। १४।

अत्र चाष्टापदाकारे कोणगृह मनोहरे ॥
वापिका वाटिका शाला सुखाय व्यवशायिनाम् ॥१५॥

प्रत्येक बाजारों में स्वर्णादिक प्रत्येक रत्नों की तीन२ पंक्तियाँ हैं। इस प्रकार सारो पट के आकारों में बने हुए बाजारों के कोने २ पर एक एक कोंण घर बड़े मनोहर हैं जिन महलों में वावड़ी, बगीचा, रहने के महल, व्यापारियों के सुख के लिये बने हुए हैं ॥१५॥

ताम्बूलिकाः कान्दविका स्तथा सिद्धान्न संग्रहाः ॥
एषां हट्टा स्सन्ति चात्र जनागन्तुक हेतवे ॥१६॥

इन महलों में पान की दुकान और हलवाइयों की दुकान बनी हुई हैं तथा सिद्ध अन्नों का संग्रह पर्याप्त है जो आगन्तुक जनता इन बाजारों में आती है उन सबके लिए इन महलों में बड़ा सुपास है ॥१६॥

आपणा द्वादश ख्याता ह्येकैक मण्डले यथा ॥
स्वर्णमय्यां त्वयोध्यायां भ्राजन्ते रुचि राजिभिः ॥१७॥

एक २ मण्डल के अन्दर बारह २ बाजार तीन २ पंक्ति करके शोभित। इस प्रकार के बाजारों से युक्त उन मण्डलों की पंक्तियाँ स्वर्णमयी अयोध्या जी के भीतर अपनी शोभा से अति प्रकाशमान हो रही हैं ॥१७॥

मध्येचतुष्पथ स्यात्र हट्ट संघट्ट के शुभा ॥
वाग्व्यवशायिनः सर्वे राजन्ते परिगृत्य च ॥१८॥

प्रत्येक पक्तियों के मध्य चौराहों पर जो सुन्दर महल बने हैं उनमें बनिया और ग्राहक के बीच की बात करने वाले (दलाल) प्रत्येक व्यापार के अलग २ इकट्ठे हैं ॥१८॥

द्वयो र्द्वयो रन्तरे तु मण्डलानां समन्ततः ॥
निवासाया गन्तुकानां गृहाः सन्ति विभागतः ॥१६॥

दो २ मण्डल के बीच में बाहर से आगन्तुक जनता के रहने के लिए विभाग पूर्वक अलग २ महल शहर के चारों तरफ से बने हुए हैं ॥१६॥

सर्व दुर्गान्तरे प्येयं मण्डलानि गृहापणैः ॥
उच्चध्वज पताकाभिः कलशैः शोभितानि च ॥२०॥

इस प्रकार के मण्डल और महल शहर के हर एक आवरणों में इसी तरह बने हुए हैं जो मण्डल और महल ऊँचा २ ध्वजा, पताका, कलशादिकों स अति शोभित हैं ॥२०॥

यदुक्तं मण्डल श्चैकं दुर्गे ष्वत्र बहूनिच ॥
चन्द्र भद्रादि संज्ञानि त्वदस्या च्छद्र मण्डलम् ॥२१॥

इस प्रकार एक मण्डल जिस प्रकार वर्णन किया गया है, उस प्रकार के मण्डल प्रत्येक आवरणों में बहुत है। हर एक मण्डलों का नाम चन्द्र, भद्र, भद्र मण्डल आदि प्रकार से अलग २ नाम हैं ॥२१॥

इति श्री शङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
श्री अयोध्या ख्याने नाम द्वादस स्सर्गः ॥१२॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्री अयोध्याख्याने
नाम द्वादशः सर्गः

रहस्यं स्त्री पुरुषाणां पाकार्थं भोजनार्थकम् ॥
वस्त्वागारं दैवतञ्च क्रीडार्थं वाटिकादिकम् ॥१॥

स्त्री पुरुषों का विलासस्थान, भोजन शाला, रसोई घर और खजाना, वस्तुओं के रखने का कोठार, देवताओं का मन्दिर खेलने का मैदान, वन उपवन वाटिका आदि ॥१॥

सर्वाधिकारकं स्थान श्चैवं षडभागसम्भृताम् ॥
सन्ति गृहा ग्रहस्थाना मयोध्यायां सनातनाः ॥२॥

सभा स्थान-इन सब प्रकार के अङ्गों से पूर्ण षट ऐश्वर्य भरे महल सनातन श्री अयोध्या नगरी के नागरिकों के हैं ॥२॥

ते रत्न मणि मुक्ताभिः खचिता मण्डलाश्रयाः ॥
मण्डलान्तर मावासाः प्रसिद्धाः वर्ण संश्रयैः ॥३॥

वे सब प्रत्येक महल चारो तरफ से मंडलाकार रत्न, मणि, मुक्ताओं से खचित, प्रत्येक अङ्गों के नामों से प्रसिद्ध निवास हैं ॥३॥

आवासान्तर संघट्टैं गृहं कस्यापि लभ्यते ॥
प्रेष्सनः प्रच्छुया तत्र सघट्ट वृद्ध संज्ञयाः ॥४॥

विशाल अन्तर वाले महलों के एक २ समूह हैं और किसी का भी महल अकेला नहीं है। पहिले से परस्पर प्रेम की सघनता से इकट्ठा हुआ जो महलों का समूह है उसका नाम वृद्ध संघट्ट है ॥४॥

आपणैर्मण्डला गारैं रष्टापदविभक्तिका ॥
रचिताष्टापदैनैवायोध्या त्वष्टापदा स्मृता ॥५॥

इस प्रकार वृद्ध संघट्ट के चारों तरफ मंडलाकार होकर बाजार बने हैं जिनका चित्र सारी पट के आकार पर बना है इस प्रकार के महल और बाजारों से सजी हुई अयोध्या नगरी स्वर्णमयी, कमलाकार, अष्टसिद्धमयी, अष्टकोण जन्त्राकार रूप से स्मरण की जाती है ॥५॥

अष्टौ च सिद्धय स्तासामयोध्या निश्चलम्पदम् ॥
तेन ह्यष्टापदा प्रोक्ता सच्चिदानन्द रूपिणी ॥६॥

ये अष्ट सिद्धियाँ अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्त, प्राकाम्य, विसित्य वशित्य अयोध्या जी में निश्चल (स्थिर) पद वाले हैं इसी से सच्चिदानन्दस्वरूपिणी श्री अयोध्या जी को अष्टापदा नाम से कहा जाता है ॥६॥

चतुर्वर्ण प्रजाभि श्चसंकुला राजते सदा ॥
राजातु राजते तत्र श्रीमद्दशरथो महान् ॥७॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, सूद्र—ये चार वर्णों वाली प्रजा से भरी हुई श्री अयोध्या सदैव एक रस प्रकाशमान रहती है। इस प्रकार की श्री अयोध्या जी में महात्मा श्री मान् दशरथ जी सदैव राज्य करते रहते हैं ॥७॥

ब्राह्मण्यः श्रुतयस्तत्र ब्राह्मणा वेदमूर्त्तयः ॥
क्षत्रियास्तत्र राजन्ते देहवद्वीरता यथा ॥८॥

वेद मन्त्र ब्राह्मणों का रूप धारण करके हमेशा वेदों का उच्चारण करते रहते हैं। वीरता की मूर्ति क्षत्रिय होकर नगर से अपने शरीर में प्रकाशमान रहते हैं ।८।

वैश्यास्तु वैश्रवणेन समृद्धाः समताङ्गताः ॥
परिचर्य्यात्मके कार्य्ये कुशला स्सूद्र जातयः ॥९॥

वैश्य लोग महान सम्पत्ति से कुबेर को अपने समान बनाए हुए प्रकाश करते हैं। सूद्र जाति के लोग तीनों वर्णों की परिचर्या रूपी सम्पत्ति से बड़ी चतुरता पूर्वक धनवान हैं ॥९॥

कला कार्य्ये शिल्पिनश्च विधात्रा समतां गताः ॥
अचले सचलत्वेन दर्शयन्तो विचक्षणाः ॥१०॥

शिल्पी लोग कला के कार्यों में ब्रह्मा जी को अपने समान बनाए हुए हैं। इन शिल्पियों के बनाए हुए यन्त्र अचल होते हुए भी सचल रूप से दीख पड़ें यह उनकी सूक्ष्म बुद्धि का चमत्कार है ॥१०॥

जलाशयाः सुधापूर्णा वापिका कूपका ह्रदाः ॥
पङ्कजैर्वहुवर्णैश्च युक्ताः सन्ति सरोवराः ॥११॥

बावड़ी, कुआँ, तालाबादि जलाशय अमृत से भरे हुए हैं। बहुत रङ्ग के कमलों से भरे हुए हैं ॥११॥

चतुर्दिक्षुप्रदेशाभू रत्नाकरसमन्विता ॥
शाखिनः कल्पवृक्षाः स्युर्गावः काम दुघाः पराः ॥१२॥

चारों दिशाओं की भूमि रत्नों से खचित रत्न खानि सदृश हैं। वृक्ष कल्पवृक्षों के समान हैं; गौऐं दिव्य कामधेनु गायों के समान हैं ॥१२॥

अश्वाः गजा कुलीना श्च भाराति वाहकोष्ट्रकाः ॥
वृषभावल रूपास्तु रनश्चावहुभारधाः ॥१३॥

हाथी, घोड़े, ऊँट, बैल, खच्चर—ये सब उत्तम कुल वाले महान बोझाओं को ढोने में साक्षात् बल के रूप हैं ॥१३॥

मृत्तिका स्वर्ण शुद्धश्च पाषाणामणय प्रभाः ॥
ताम्रादिकन्तु विधेय शस्त्र कार्य्याय लोहकम् ॥१४॥

श्री अयोध्या जी की भूमि की मिट्टी शुद्ध स्वर्णमयी है; पाषान मणिमय प्रकाशमान हैं। तावाँ केवल यन्त्रों की बिधि के लिये और लोहा केवल शस्त्र बनाने के लिए है ।१४।

सर्वे नराश्च नार्य्यश्चदिव्यालङ्कार वस्त्रधाः ॥
चातुर्य्यशीलसम्पन्नाः शौन्दर्य्यणापि पूरिताः ॥१५॥

सभी नर नारी दिव्य वस्त्र और अलङ्कारों को धारण किए हुए शौंदर्य की मूर्ति, शील, चतुरता आदिक सद्गुणों से परिपूर्ण हैं ॥१५॥

उदारा रसिका विज्ञाः विद्याहीना न वालिशाः ॥
सीतारामात्म संशक्ता भक्ता भाव परायणाः ॥१६॥

सभी उदार हैं; विलास तत्व व आत्म तत्व के जानने वाले हैं; कोई भी विद्या से हीन नहीं है; सब कोई अपनी आत्मा से श्री सीताराम जी में आसक्त भक्त, भाव परायण हैं ॥१६॥

प्रजात्वं प्राप्त सिद्धास्ते पञ्चदुर्गान्तरे यथा ॥
वसन्तिवर्द्धमानाश्च पुत्रपौत्र सुवान्धवैः ॥१७॥

सब लोग अपने को श्री सीताराम जी के प्रजा रूप में सिद्धि प्राप्त किए हैं। अपने पुत्र, पौत्र, सुन्दर बन्धुवर्गों के साथ नित्य बढ़ते हुए जो जहाँ रहते हैं वे अपने को श्री अयोध्या जी के नागरिक रूप में ही मानकर बास करते हैं इतना यह श्री अयोध्या शहर के पाँच आवरण तक का वर्णन हुआ ॥१७॥

इति श्री शंकर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
श्रीअयोध्या ख्याने त्रयोदश स्सर्गः ॥१३॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां
श्री अयोध्याख्याने नगर वैभव वर्णनो नाम त्रयोदशः सर्गः

द्वीपान्तरीया श्च दिशान्तरीया नृपा नृपेन्द्रं परि सेवितुश्च ॥
मार्तण्ड वंश्यं दशस्यन्दनाख्यं तेषष्टके दुर्ग गृहे वसन्ति ॥१॥

अब अन्य द्वीपों के, अन्य दिशाओं के सभी राजा लोग, राजेश्वर, सूर्य वंशोद्भव महाराज चक्रवर्ती दशरथ जी के सेवा के लिए श्री अयोध्या में आकर शहर के छटके आवरण में बास करते हैं ॥१॥

तत्तत्समग्रेषु स्वदेश रीत्या वाण्या जनानां वशनादि वेषैः ॥
नन्वस्त्ययोध्या महतीत्रिलोक्यां मत्वैत्यलोका अपि तां श्रयन्ति ॥२॥

वे सब अपने देश की भाषा, रीति, भूषण बस्त्र, शृङ्गारादिकों से सम्यक् प्रकार शोभित रहते हैं। और अपने को धन्य मानते हैं। तीनों लोकों (स्वर्ग, पाताल, भूलोक) के लोक पाल श्री अयोध्या जी के आश्रित होकर सेवा करते हैं ॥२॥

गजा विचित्रा श्च हया विचित्रा मृगा विचित्रा अपि पक्षिणाश्च ॥
वाद्य स्वरूपाणि विचित्रकाणि विचित्र दुर्गं हि वदन्ति पौराः ॥३॥

श्री अयोध्या जी के हाथी विचित्र घोड़े विचित्र, मृग पक्षी आदि भी विचित्र हैं। बाजाओं के स्वरूप, नगर वासियों के स्वरूप, नगर आवरणों के स्वरूप अन्य लोकों की अपेक्षा अति सुन्दर विचित्र ही विचित्र हैं, इस प्रकार सब नगर वासी लोग कहते हैं ॥३॥

पुत्र्या प्रदानं कृतवन्तएते रामाय तेनैवभवन्तिसर्वे ॥
द्वीपान्तरीयाश्च दिशा वनीशा सम्बन्धिनः कौशल पालकस्य ॥४॥

अन्य दिशा और द्वीपों के राजा लोग इन श्री राम जी के लिए अपनी कन्याओं का विवाह कर देने से श्री कौशलेश चक्रवर्ती महाराज के सम्बन्धी अपने को मान कर प्रसन्न रहते हैं ॥४॥

या मातरि स्नेहयुता वसन्ति नलोभ कार्य्यविधिपाल सेवा ॥
ते कौशलेशस्य तु लेशमात्रं नरान्ति स्वीयं विहितं ददन्ते ॥५॥

सुन्दर दामाद श्री राम जी मे प्रेम युक्त होकर बास करते हैं और लोभ रहित होकर महाराज चक्रवर्ती जी की सेवा करते हैं यद्यपि उनके पास महाराज कोशलेश जी के धन की अपेक्षा लेश मात्र भी धन नहीं है तो भी अपने निजी धन को महाराज की सेवा में दे देते हैं ॥५॥

स्वदेश जातं मणिभूषणञ्च महाधनं वाहन मशुकाम्वा ॥
आमन्त्ररामं स्वगृहे हि तेन ददन्ति तद्भोजन व्याजकेन ॥६॥

श्री राम जी को अपने घर में आमन्त्रित करके, भोजन के बहाने अपने देश में उत्पन्न होने वाले महाधन, मणि, भूषण, कम्बलादिक वस्त्र, और विविध प्रकार की सवारियों को दे देते हैं ॥६॥

विशेष वारेष्वपि लोक रीत्या सम्बन्धिनं कौशल राजराजम् ॥
सबान्धवं शैन्य समेतकञ्च निमन्त्रयेयु महता दरेण ॥७॥

और कभी २ संक्रान्ति आदि विशेष तिथि वारों के दिन लोक रीति से अपने सम्बन्धी राज राजेश्वर कोशलपाल महाराज को बन्धु-बान्धव, सेनादि सहित महान आदर से निमन्त्रित करते हैं ॥७॥

वित्त व्ययं वर्णयितु न्नशक्तस्तदाहितेषां द्वि सहस्र जिव्हः ॥
महीपतीनां धन वारिदानां श्रीराम जामातरिश्चेह लानाम् ॥८॥

उस समय इन सब राजाओं के धन खर्च का हिसाब हजार जिह्वा वाले शेष जी भी नहीं कर सकते हैं। सुन्दर दामाद श्री राम जी में स्नेह से लालायित होकर दान देने के लिए मानो मेघ होकर धन बरषाते हैं ॥८॥

मत्वा सखायं मिथिलाधिनाथं तस्यात्मजा ह्यात्म सुतेव मत्वा ॥
पत्नी समेताः परिलालयन्ति श्रीजानकीं प्रीतियुता नरेन्द्राः ॥९॥

सभी राजा लोग श्री मिथिलेश महाराज को अपना सखा मान कर उनकी कन्या श्री जानकी जी को अपनी कन्याओं की ही तरह मानकर अपनी रानियों के सहित राजा लोग श्री जानकी जी का बड़े प्रेम से लाड़ प्यार करते हैं ॥९॥

अथातः सप्तमे दुर्गे सूर्य्य वंश्याः समग्रतः ॥
निवसन्ति यथा तथ्यं पूर्वा नुक्रम भेदतः ॥१०॥

यहाँ तक श्री अयोध्या शहर के छटवे आवरण का वर्णन हुआ अब सातवे आवरण में पूर्व दक्षिण आदि भेद से यथा स्थानों पर सूर्य वंशीय राजा लोग सम्यक् प्रकार बास करते हैं ॥१०॥

तेजस्विनोवीर्य वन्तो विद्यावन्तोधनुर्भृतः ॥
नीतिमन्तो वाग्मिनःस्यु रप्रमेय पराक्रमाः ॥११॥

ये सब सूर्य वंशीय राजा लोग बड़े तेजस्वी, वीर्यवान, विद्यावान, धनुष धारी, नीतिवान, सत्य बोलने वाले, अजय पराक्रम वाले ॥११॥

रूपवन्तो भूषिताङ्गाः शीलवन्तः सुभाषिणः ॥
समर्थाश्च क्षमावन्त सौभाग्य गुण पूरिताः ॥१२॥

रूप वान, भूषित अङ्ग वाले, बड़े शीलवान, प्रिय वाणी बोलने वाले, सब कार्यों में समर्थ, बड़े क्षमावान, सौभाग्यादि सद्गुणों से परिपूर्ण हैं ॥१२॥

कोटीन्द्रवैभवाः सर्वे भोग्यभावविचक्षणाः ॥
गांधर्व वेद कुशलाः कलासु निपुणा अपि ॥१३॥

करोड़ों इन्द्रों के समान ऐश्वर्य भोग सम्पत्ति होने पर भी भोग बिलास में सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने वाले, संगीत विद्याओं में कुशल और सब प्रकार की कलाओं में भी निपुण हैं ॥१३॥

विवेक ज्ञान वैराग्य भक्तियोग परायणाः ॥
सख्य वात्सल्य भावाभ्यां श्रीरामे शक्तमानसाः ॥१४॥

और बिवेक, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति-योग परायण, सख्य, वात्सल्य आदिक भावों से श्री राम जी में आसक्त मन वाले हैं ॥१४॥

राज्ञी वृद्धा सुवासिन्यो रामे वात्सल्य वृत्तयः ॥
स्नुषापि मिश्र श्रृङ्गारे हास्यादि व्यवहारतः ॥१५॥

जो वृद्ध स्त्रियाँ हैं वे श्री राम जी में वात्सल्य भाव से व्यवहार करने वाली और जो पतोहू आदिक युवती स्त्रियाँ हैं वे मिश्रित-श्रृङ्गार-भाव से श्री राम जी से हास्यादिक व्यवहार करती हैं ॥१५॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
अयोध्या ख्याने नाम चतुर्दशस्सर्गः ॥१४॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां अयोध्याख्याने
षष्ठ सप्तम आवरण वर्णनो नाम चतुर्दशः सर्गः ॥

एवञ्च सप्तदुर्गाणाम्मध्ये शोभितमद्भुतम् ॥
असंख्य विस्तरं रम्यं सर्वस्मादुच्च भूतलम् ॥१॥

इस प्रकार इस सात आवरण वाले शहर से शोभित मध्य की अमित विस्तार वाली अद्भुत रमणीय भूमि समान भूतल से सम्यक् प्रकार ऊँची है ॥१॥

रचितं शिखरै र्दिव्यैः स्फटिकैः श्रेणिशोभितम् ॥
महद्द्वार चतुस्कञ्च पताकाध्वज मण्डितम् ॥२॥

इस प्रकार की भूमि में महाराज चक्रवर्ती जी का राजदुर्ग ऊँचे सुन्दर युक्त शिखरों से तथा स्फटिक मणियों से रचित सुन्दर सीढ़ियों से शोभित गोपुर वाले बहुत बड़े २ चारों दिशाओं में चार फाटक ध्वजा, पताका, तोरण और कलसादिकों से भूषित हैं ॥२॥

राज दुर्ग मिति ख्यातं वाद्य घोष निरन्तरम् ॥
तस्यापि परिखा गाधा वाशिष्टी वारि पूरिता ॥३॥

इस प्रकार इस राजदुर्ग के चारों फाटकों पर बाजाओं के निरन्तर घोष का सुन्दर इन्तजाम बना है। इस राजकोट के बाहरी भाग में भी कोट रक्षार्थ खाई बनी हुई है जिसमें श्री सरजू से आई हुई नहर के द्वारा अगाध जल भरा हुआ है ॥३॥

सरोजैः पञ्चवर्णैश्चशोभिताभ्रमराकुलैः ॥
कूलो भये रत्न बद्धा तट पादप मण्डिताः ॥४॥

इस खाई में पाँच रङ्ग के कमल खिले हैं; भ्रमर गूँज रहे हैं; दोनों किनारे की भूमि पर मणिमय वेदिका तथा पत्र, पुष्प, फलों से भूषित वृक्षों की सुन्दर पंक्तियाँ दोनों तरफ हैं ॥४॥

इत्थं दुर्गान्तरे प्येकं कल्पवृन्दाख्यकम्वनम् ॥
कृत्तिमा गिरय स्तत्र श्चत्वारश्च दिगेकतः । ५॥

यह तो बाहरी वर्णन हुआ। अब राज दुर्ग के भीतर एक कल्पवृन्दाख्य नामक बन है जिससे चारों दिशाओं में चार कृत्रिम पर्वत बने हुए हैं ॥५॥

सरितोपि चतस्रश्चरम्या एवम्विभागतः ।
सरोजै रावृता जलारत्न चित्रितघट्टकाः ॥६॥

इन पर्वतों में चारों तरफ नदियाँ भी सुन्दर विभाग से बनी हुई हैं जिन नदियों में रङ्ग २ के चित्र विचित्र घाट बने हैं और रङ्ग २ के कमल भी खिले हैं ॥६॥

नामानि पर्वतानाश्च सरिताश्च यथाक्रमम् ॥
दक्षिणे चोत्तरे भागे पूर्वे च पश्चिमेयथा ॥७॥

अब पर्वतों के तथा नदियों के भी पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर विभाग में उसी अनुसार नाम भी गिनाते हैं ॥७॥

रत्नाद्रिश्च श्रृङ्गाराद्रिः कनकाद्रिश्च केलिकः ॥
सुधावारा चेक्षुरसा पद्मा पुण्य तटी सरित् ॥८॥

रत्नाचल, श्रृङ्गाराचल, कनकाद्रि, केलिकाचल—ये चार पर्वतों के नाम तथा सुधावारा, ईक्षुरसा पद्मा, पुण्यतटी—ये चार नाम नदियों के हैं ॥८॥

घट्टो पर्य्यङ्क पंक्तीनां प्रति विम्बै विभूषिताः ॥
शैवालैः केशपासास्ता हरिद्भूमि तटाम्वराः ॥९॥

घाटों के किनारे बने हुए महलों की पंक्तियाँ सुन्दर भूषित हैं उनका प्रति विम्ब नदियों में अति शोभित हो रहा है घाटों के अलावा मणिमय किनारों पर नदी में सुन्दर सेवार लगा है मानों नदी रूपी नायका के केश फैले हैं। अगल बगल की हरित जो भूमि है मानों नदी रूपी नायका हरे वस्त्र पहने हुये हैं ॥९॥

सेविताः सित पक्षैश्च सारसैश्च चकोरकैः ॥
कादम्वै र्विविधैर्वर्णैं र्जल कुक्कुटकै स्तथा ॥१०॥

जहाँ तहाँ सफेद पक्ष वाले सारस, चकोर, कलहंस जलकुक्कुट, चकवादिक-किनारे पर बिहार कर रहे हैं ॥१०॥

एतन्मध्येहिभागे च वनान्यष्टौ विभागतः ॥
भद्रवृन्दाख्यकं तेषां सर्वेषाम्मध्य वार्तिकम् ॥११॥

इन चार पर्वतों और नदियों के बीच भाग में आठ वन विभाग पूर्वक हैं। उन आठों के बीच वाले वन का नाम भद्रवृन्द है ॥११॥

श्रीमद्दशरथस्यैव तत्रास्तिमन्दिरम्महत् ॥
द्वादशैश्च सतागारैर्युक्तं स्वर्णाद्रि सन्निभम् ॥१२॥

इस भद्र वृन्द वन में महाराज श्री दशरथ जी का बहुत बड़ा रनिवास है जिसमें स्वर्ण पर्वतों के समान बारह सौ महलों की मण्डलाकार पंक्ति है ॥१२॥

सप्तकक्ष श्चतुर्दिक्षु बलवद्वीर रक्षितम् ॥
उच्चध्वज पताकाभिः शिखरैर्दूर दर्शितम् ॥१३॥

पंक्ति के बाहर में सात आवरण परकोटा है जिन में बलवान वीर रक्षा के लिए पहरा कर रहे हैं। उन परकोटाओं के चारों दिशा वाले फाटकों के ऊँचे शिखरों पर दूर से दीख पड़ने वाले ध्वजा पताका सुन्दर शोभित हैं ॥१३॥

दुन्दुभीनांचभेरीणां पणवानां शब्द पूरितम् ॥
सदोत्सव मिवद्वार भाषितं गायनोद्धृतैः ॥१४॥

तथा दुन्दुभी, भेरी, पणव आदि बाजाओं का घोष (नाद) दूर दिशाओं तक फैल रहा है। सुन्दर गायकों के गान से नित्य उत्सव पूर्वक रागों की धार बँधी है ॥१४॥

सूत मागध नटाश्चदेश्या देशान्तरीयकाः ॥
तेतिष्ठन्त्याद्य कक्षाया मिति संधा सनातनी ॥१५॥

देश और विदेश के सूत मागध नटों का सबसे बाहर वाले पहले आवरण में निवास है यह मर्यादा (प्रथा) सनातन की है ॥१५॥

अतः परंच देशीय स्तथा देशान्तरीयकाः ॥
गुणिनो राजराजस्य गुणज्ञस्य हि दर्शने ॥१६॥

इसके दूसरे आवरण में संगीत गुण के पण्डित महाराज चक्रवर्ती जी के देश देशान्तरीय सङ्गीतज्ञ बड़े २ गुणी लोग निवास करते हैं ॥१६॥

तेतिष्ठन्ति द्वितीयायां कक्षायां पक्ष संयुक्ताः ॥
प्रतिहारस्य द्वारेण तेषां राज्ञा समागमः ॥१७॥

ये देश विदेशीय सङ्गीतज्ञ लोग अपनी २ पार्टियों से विभक्त हुए निवास करते हैं। प्रत्येक पार्टी के खण्ड के लोग द्वारपालों के द्वारा महाराज चक्रवर्ती जी से भेंट करते हैं ॥१७॥

पण्डिताः पटुवाग्युक्ताः शास्त्र पक्ष विवादकाः ॥
ते कक्षाया मादरेण तृतीयायाम्विशन्तिच ॥१८॥

तीसरे आवरण में शास्त्र के विषय में बड़े वाक्य पटु पण्डित लोग जो बड़े २ बिवाद पक्ष के विजयी हैं वे बड़े आदर पूर्वक निवास करते हैं ॥१८॥

कक्षायां तु चतुर्थ्यां हि सुमन्ताद्याश्च मन्त्रिणः ॥
विशन्ति स्वस्य पर्यायैः सर्वकार्य्य प्रवर्तकाः ॥१९॥

चौथे आवरण में सुमन्त आदिक अष्ट मन्त्री जो सब प्रकार के कार्यों का विधान करने वाले हैं वे लोग समय २ पर इस आवरण मे आकर निवास करते हैं ।१९॥

अतः परश्चे न कुले वृद्धाः प्रज्ञानसम्मताः ॥
वयसापि कृच्छ्र प्रज्ञानपक्ष निर्णयरताः ॥२०॥

तेषां समज्या कक्षायां पञ्चम्यां परिराजते ॥
रणे प्यचल वृत्तीनां ज्ञाने चसुद्ध चेतसाम् ॥२१॥

पाँचवे आवरण मे अपने कुल के वृद्ध लोग तथा देश विदेश के सज्जन सम्मत तत्व ज्ञान सम्पन्न लोग जो कि अवस्था मे भी बूढ़े है किसी भी विवाद मे सुन्दर निर्णय देने वाले है वे लोग समय २ पर आकर निवास करते हैं ये लोग रण मे भी अचल बुद्धि वाले हैं; ज्ञान मे भी सुद्ध चित्त वाले हैं अपने सहायक समाज के सहित समय २ पर इस पाचवें आवरण में निवास करते हैं ॥२१॥

वामदेवो वशिष्ट श्च जावालिः गौतमस्तथा ॥
भरद्वाजो याज्ञवल्क्यः वाल्मीको हारितो महान् ॥२२॥

श्री वामदेव, वसिष्ठ, जावालि, गौतम, भरद्वाज याज्ञवल्कि, बाल्मीकि, हारित ॥२२॥

लोमशः पुलह श्चैव भृगुः कौशिक सद्व्रतः ॥
एते प्यन्न्येपि मुनयो वेद तत्त्व विशारदाः ॥२३॥

लोमश, पुलह, भृगु, कौशिक आदि बहुत से मुनि लोग जो वेद के तत्व को ठीक से जानने वाले सद्व्रती तत्व दर्शी हैं ॥२३॥

श्रीमद्दशरथस्यैव शभायां प्राक विवाककाः ॥
विशन्ति ते प्यादरेण कक्ष्या षष्ठ्यां यथा न्यायः ॥२४॥

ये सब लोग महाराज श्री चक्रवर्ती जी की सभा में बड़े आदर से प्रवेश करके प्रत्येक शब्दों का प्रधान निर्णय करते हैं ये लोग भी राजमहल के छटवे आवरण में निवास करते हैं ॥२४॥

सप्तान्तरेतु राज्ञीनां मन्दिराणि विभागतः ॥
तासा न्तासाञ्च पुत्राणामन्वयेन महत्तरे ॥२५॥

सातवे आवरण में राजरानियों के बारह सौ महलों की सुन्दर विभाग पूर्वक पंक्ति है उन महलों में उन प्रत्येक रानियों के साथ उनके मनोहर पुत्रों के भी ॥२५॥

क्रीडा शभादि सर्वं च खण्ड खण्डान्तरंबृहत् ॥
इत्थ न्तु पूर्वदिग्भागे कक्ष्याः सप्त महत्तराः ॥२६॥

खेलने का सभास्थान बहुत बड़ा खण्ड खण्डान्तर वाला बना हुआ है इस प्रकार यह पूर्व भाग में भद्रवृन्दनामक वन के बीच में सात आवरण वाला बहुत बड़े रनिवास का वर्णन हुआ ॥२६॥

इति श्री शंकर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
श्रीअयोध्या ख्याने राज रनिवाश भवन वर्णनो
नाम पंचदशस्सर्गः ॥१५॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्री अयोध्याख्याने
राजरनिवास वर्णनो नाम पंचदशः सर्गः

अथ सन्ति दक्षिणास्यां कक्ष्यानां सप्तकं दिशि ॥
सहितै रेव तत्र स्थै र्वस्तुभिर्वर्णयामि ते ॥१॥

हे सुकान्ति ! अब मैं तुमको दक्षिण दिशा में बगीचा के बीच सात आवरण वाले राज महल (रत्न सिंहासन) तथा तत्सम्बन्धी बहुत सी वस्तुओं के सहित वर्णन करके सुनाती हूँ ॥१॥

वर्णितानां क्रम न्त्वत्र स्थानां विद्धि हि पूर्वतः ॥
कक्ष्याया अन्त्य द्वारान्तं तदादि क्रम मुच्यते ॥२॥

इस स्थान पर पूर्वादि क्रम से प्रत्येक स्थान और वस्तुओं का द्वारों के बाहरी भागों से भीतर के आदि भाग तक का वर्णन मुझ से सुनो ॥२॥

सिद्ध पाक गृहन्त्वेक म्वहुशो वस्तु भेदतः ॥
तत्रापि च त्रयं मुख्यं पायसम्भोज्यभक्षके ॥३॥

राज महल के दक्षिण दिशा सात आवरणों में से सब से बाहर वाले आवरण में बहुत सिद्ध भेद के सिद्ध हुए अन्नों (मिठाई, पकवानादि भोजन सामग्री) के महल हैं उनमें भी भक्ष्य, भोज्य तथा दूधकी मिठाई आदिक वस्तुओं के तीन महल मुख्य हैं ॥३॥

अन्नागारे तु द्विविधं सिद्धोऽसिद्धश्च भेदतः ॥
वहुशो व्रिहि भेदानां सन्त्यागाराणि तत्र च ॥४॥

और चौथा अन्नागार जो सिद्ध और असिद्ध भेदसे बहुत से अन्नों के महल वाला है ॥४॥

तथा रस गृहे प्येवं घृतादि कर्करादिकम् ॥
पृथक्त्वेन विजानीहि शाकागारे यथाविधम् ॥५॥

और पाँचवे रसागार में घी चीनी आदिक पदार्थों के अलग २ बहुत से महल हैं। इसी प्रकार के भेद से साकागार भी है ॥५॥

वेषवार गृहे प्येवं-यथातथ्यं पृथक्पृथक् ॥
चत्वारो पि वर्णाना ञ्च भोजनाय पृथक्पृथक् ॥६॥

तथा इसी प्रकार वेष बार गृह में मशाला आदि वस्तुओं के अलग २ पूर्व कहे हुए के शमान महल हैं भोजनागार में चारों वर्णों के लिए अलग २ इन्तजाम पूर्वक महल बने हुए हैं ॥६॥

तेषाञ्चात्र विभागेन स्त्री पुंसां भेदतो यथा ॥
राज्ञीना ञ्चैव राज्ञा ञ्च भिक्षुकानान्ततोन्यतः ॥७॥

इनमें भी स्त्रियों के लिए अलग, पुरुषों के लिए अलग, रानियों के लिए अलग; राजाओं के लिए अलग; भिक्षुओं के लिए अलग महल बने हुए हैं ॥७॥

ताम्बूल दक्षिणागारं विशालम्भोजनोत्तरम् ॥
शेष पाक गृहञ्चात्र समग्रे भेद भावितम् ॥७॥

तथा भोजन के बाद पान और दक्षिणादि विधान पूर्ति का महल उन भोजन महलों के उत्तर भागों में साथ ही है। पाक-गृह भी समस्त भेदों से भावित उन भोजन महलों में ही है ॥८॥

सीताराम रूपकारा भक्षकारा तेषाञ्चैवोपचारकाः ॥
एषाञ्च भोजनागाराण्येवं कक्ष्यैक वृत्तकम् ॥६॥

रसोइया लोग भोजन करने वाले लोग व इन दोनों के अनुयायी लोग—इन सबके रहने और भोजन करने के महलों से ही राजमहल (रत्न सिंहासन) के बाहरी भाग वाले एक आवरण का वर्णन हुआ ॥६॥

अत्र कक्षा द्वितीयायां तत्र शस्त्र विशारदाः ॥
अभ्याशं कारयामासु कुमारा न्नृप वंशजान् ॥१०॥

अब द्वितीय आवरण में अस्त्र क अभ्यास कराने वाले, राजकुमारों को रण शिक्षा व शिकार शिक्षा को देने वाले पन्डितों के निवास स्थान और अभ्यास स्थान हैं ॥१०॥

तत्रैवचगृहास्सन्ति शस्त्राणां क्रम भेदतः ॥
कोश चर्मासि धनुषां शक्ति मार्गण वर्म्मणाम् ॥११॥

उसी प्रकार दूसरे आवरण में अस्त्र शस्त्रों के रखने के महल भी अलग २ क्रम भेद से हैं। ढाल, तलवार, म्यान, धनुष, शक्ति बाण, कवच आदि अस्त्र शस्त्र उन महलों में रखे हुए हैं। यह द्वितीय का वर्णन हुआ ॥११॥

अत्रैवञ्च तृतीयायां कक्षाया मष्ट भेदतः ॥
धातूनां गृह संघट्टे सिद्धासिद्धद्विधभेदतः ॥१२॥

अब तृतीया आवरण में आठ भेद से सिद्ध और असिद्धा आदि धातुओं के रखने के महल हैं ॥१२॥

सिद्धे धातु गृह वृन्दे पीठा मन्त्रादि सर्वकम् ॥
असिद्धे तु यथा सर्वधातुकं स्याद नाहतम् ॥१३॥

सिद्ध धातु के घर में बने हुए सिंहासनादि धातुओं के पदार्थ हैं; असिद्ध धातु के घर में बिना बना हुआ धातु जैसा का तैसा रखा हुआ है ॥१३॥

सन्त्यत्र तूर्य्य कक्षायां कलावतां हि शिल्पिनां ॥
स्थानानि सर्व वस्तूनां कृत्रिमाणां विभागतः ॥१४॥

अब चौथे आवरण में शिल्पी, कलाकार लोगों के कला-कार्य के स्थान और कलामयी वस्तुओं के रखने के घर तथा कृत्रिम विभाग से अलग २ बने हैं ॥१४॥

स्थित्वा यत्र हि ते सर्वे कार्यं कुर्वन्ति सम्पतैः ॥
गृहा भिन्ना स्तेपिसन्ति नितरांवद्ध दृष्टयः ॥१५॥

और जहाँ पर नित्य बद्ध दृष्टि से रह करके वे कलाकार लोग अपनी सम्पत्तियों से कार्यों को करते हैं वे महल भी इसी आवरण में अलग २ हैं ॥१५॥

अत्राग्रे पञ्चमी कक्षा तत्र गेहानि कोटिशः ॥
मणीनां त्रिविधानाञ्च सन्ति सत्क्रमतो यथा ॥१६॥

इसके आगे पाँचवें आवरण में जल, थल, सर्वादिभेद से तीन प्रकार की मणियों के अनेकन प्रकार रचनाओं के लिए करोड़ों महल सुन्दर क्रम से हैं। जैसे ॥१६॥

मणयो वर्ण साराश्च प्रकृति भेद कारकाः ॥
आदर्शा स्त्रिविधा श्चैव जानन्ति पण्डिता जनाः ॥१७॥

मणियाँ अपने प्रकाश के भेद से सहज प्रकृति के रङ्ग को बदल देती हैं, श्रेष्ठ दिव्य दृष्टि से दीखने वाले जो दर्पण वे तीन प्रकार हैं इस मर्म को पण्डित जन जानते हैं ॥१७॥

मणीनांच गृहाग्रेतु विस्तागाराणि कोटिशः ॥
सन्ति चात्रैव कक्षायां कुरुविस्तस्य भेदतः ॥१८॥

मणियों के गृहों (महलों) के आगे स्वर्ण भूषणादिकों के करोड़ों महल हैं वहीं पर पंक्ति भेद से ८० रत्तीभर बजन के भूषणों के तथा १०२४ रत्तीभर बजन वाले स्वर्ण भूषणों के महल भी करोड़ों हैं ॥१८॥

षष्ठि कक्षा चैत दग्रे मणिनिर्मित चित्रकाः ॥
वस्त्राणां संग्रहागारा एयनैकानि विभागतः ॥१६॥

छटवे आवरण में मणियों से निर्मित सुन्दर चित्र विचित्र वस्त्रों के अनेक संग्रहागार सुन्दर बिभाग पूर्वक हैं ॥१६॥

वादरं क्षौमक श्चैव कौशेयं राङ्कवन्तथा ॥
एवं चतुर्विधम्वस्त्रं धौतोष्णीषादि जातयः ॥२०॥

सूती वस्त्र, रेशमी (मकड़ी से उत्पन्न होने वाले पाट के) वस्त्र, कटियादिक (कृमियों से उत्पन्न होने वाले) वस्त्र तथा ऊनी वस्त्र—इस प्रकार चार भेद से उत्पन्न होने वाले धोती पगड़ी आदि भेदों से बने हुए कपड़े ॥२०॥

तत्रापि नीलपीतादि वर्णभेदेन संग्रहाः ॥
भिन्नागाराणि सर्वेषां स्त्री पुंसाञ्चापि भेदतः ॥२१॥

उनमें भी नील पीतादि रङ्ग भेद से अलग २ संग्रहों के अलग २ महल हैं उनमें भी स्त्रियों के वस्त्रों के महल, पुरुषों के वस्त्रों के महल अलग २ हैं ॥२१॥

अङ्गरागाभूषणानां गृहास्तत्रापि भेदतः ॥
खचिता खचितानांच स्त्रीपुंशाम्वयसा पिच ॥२२॥

अङ्गराग व भूषणों के भी महल वहीं पर कुछ भेद करके है। उन वस्त्र भूषणों में भी जरी के और बिना जरी के भी महल सादे कपड़े उन में भी वृद्धों के, जवानों के, बच्चों के वस्त्र स्त्री पुरुष भेद से अलग अलग हैं ॥२२॥

अष्टापदादि क्रीडार्थाः केल्यर्थं कन्दुकादयः ॥
तेषां श्चैवात्र कक्षायां गृहाः सन्ति विभागतः ॥२३॥

चौपड़ खेलने के तथा गेंद आदि खेलने की वस्तु भी इसी छटवे आवरण में अलग २ विभाग से महल हैं ॥२३॥

काचानां रचनार्थानि मणीनां मण्डपादिषु ॥
दीपद्रुमा विग्रहाश्च मनुष्यपशु पक्षिणाम् ॥२४॥

काँच की रचना की हुई वस्तु, मणियों की रचना की हुई मण्डपादिक वस्तु, दीपवृक्ष, मणिमय जनानो मर्दानी मनुष्य पशुपक्षी आदि मूर्तियाँ आदि के महल छटवे आवरण में हैं ॥२४॥

विद्या कक्षा सप्तमीस्या द्रागविद्यादि सर्वकम् ॥
वाद्याना म्पुस्तकानांच तत्रैव संग्रहा गृहाः ॥२५॥

साँतवें आवरण में सब प्रकार की विद्याओं की शिक्षा और सामग्रि का इन्जाम है जिन में किसी खण्ड (महल) मे रागविद्या, किसी में धनुर्विद्या, किसी में शब्द ज्ञान, पढ़ाने की पाठशालायें तथा बाजा पुस्तकआदि सामग्रियों के महल हैं ॥२५॥

सन्ति सप्त हि दिग्भागे पश्चिमे हेम निर्मिताः ॥
रत्नैश्च खचिता श्चित्रैः कक्षा ज्योतिर्मिरा वृता ॥२६॥

इसी प्रकार राजमहल के पश्चिम दिशा वाले स्वर्ण के रत्न खचित चित्र विचित्र महलों के प्रकाश युक्त सातों आवरणों का वर्णन मुझ से सुनो ॥२६॥

तत्रास्ति प्रथमायां तु गजोत्तम समूहकम् ॥
विभागे स्तत्र दिश्यानां स्थानान्युच्च तराणि वै ॥२७॥

सब से पहले बाहरी प्रथम आवरण में जातीय और दिशाओं के भेद से हाथियों के समूहों के रहने के लिए अलग २ ऊँचे २ महल हैं ॥२७॥

आधोरणानां सध्मानि तत्रैव शोभनानि च ॥
वारणाभूषणानांच विमानानां गृहा अपि ॥२८॥

पीलवानों के भी महल तथा हाथियों के भूषणों के व विमानों के (हौदाओं) के घर (महल) भी इसी आवरण में हैं ॥२८॥

तदूत्तरं द्वितीयायां कक्षायान्तु हयोत्तमाः ॥
सन्तितेपि चतुर्दिश्याः शोभना वहुवर्णकाः ॥२९॥

दूसरे आवरण में चारों दिशाओं के अलग जाति वाले, अलग २ रङ्ग वाले अति उत्तम घोड़ाओं का निवास है ॥२९॥

एषांचापि रक्षकाश्च तेषां सद्मानिसंघटैः ॥
तथै वैषाम्भूषणाना माशनानां गृहा अपि ॥३०॥

उन घोड़ाओं के सईस आदि रक्षकों के भी घर वहीं पर हैं तथा उन घोड़ों के भूषण जीन आसनादि के महल भी वहीं पर हैं ॥३०॥

एवं तृतीय कक्षायां वृषभोत्तम संघतिः॥
तेषांचापि रक्षकानां गृहा स्तत्रैव शोभनाः ॥३१॥

अब तीसरे आवरण में उत्तम जाति के देश भेश से बैलों का समूह तथा उनके रक्षकों का भी घर है ॥३१॥

एवं चतुर्थ कक्ष्यायां गवां वृन्दानि तत्रच ॥
सेवकानां गृहास्तासां वस्त्राभूषणका गृहाः ॥३२॥

इसी प्रकार चौथे आवरण में भी गाइयों का और उन के सेवकों व वस्त्रभूषणों के भी घर हैं ॥३२॥

पञ्चमी तु कक्ष्या तत्र महिषीमहिषोष्ट्रकाः ॥
तेषां वृन्दानि वहुशो गृहाः सन्ति विभागतः ॥३३॥

पाँचवे आवरण में भैंसा, भैंसी ऊँट आदि पशुओं के झुण्ड, रक्षक और उन के भूषणों के भी अलग २ महल हैं ॥३३॥

ततोग्रे षष्ठिका कक्ष्या रम्या रत्न विनिर्मिता ॥
पशुपक्षि मृगाश्चान्ये क्रीडार्था युद्ध कारकाः ॥३४॥

इस के आगे छटवे आवरण में रत्नों से रचित सुन्दर रमणीय पक्षीमृग आदि खेलने के पशु, युद्ध करने वाले पशु पक्षी मृग—इनके महल हैं ॥३४॥

अस्याश्चाग्रे सप्तमीस्या त्कक्ष्या काञ्चन रत्नका ॥
तेषां क्रीडा कारका ये निवसन्ति गृहान्तरे ॥३५॥

इससे आगे स्वर्ण रत्न रचित रमणीय सातवे आवरण में इन पशु पक्षी मृगादि के नचाने खिलाने वाले सेवकों के महल हैं ॥३५॥

तथैवोत्तरे दिग्भागे कक्ष्या सप्त मनोहराः ॥
सन्त्यत्र प्रथमायान्तु परिवृत्ता नृपस्त्रियः ॥३६॥

इसी प्रकार राज महल के उत्तरीय द्वार वाले मनोहर सातों आवरणों का वर्णन सुनो । सब से बाहरी आवरण में महाराज श्री चक्रवर्ती जी की परिवृत्ता स्त्रियाएँ हैं ॥३६॥

अतीव रूप संयुक्ताः साहित्योदये बुद्धयः ॥
विप्रश्निका श्च कोकज्ञा आर्य्या आर्य्य कुलोद्भवाः ॥३७॥

जो अत्यन्त सुन्दरी, सुन्दर साहित्य (सङ्गीतादि) को पैदा करने की बुद्धि वाली, तथा शुभाशुभ लक्षणों का निरूपण करने वाली, कोक शास्त्र को जानने वाली, उत्तम कुल में उत्पन्न हुई, श्रेष्ठ गुण स्वरूप वाली हैं ॥३७॥

तासां प्राकार सांगानि सन्ति सद्भवनानि हि ॥
अग्रे कक्ष्या द्वितीयास्ति तस्यां तासां सुवैभवम् ॥३८॥

उनके रहने के निवास महल भी अपने अङ्ग प्रत्यङ्गों से सुन्दर हैं आगे दूसरे आवरण में उन परिवृत्ता स्त्रियों की वैभव सम्पत्ति के विविध महल हैं॥३८॥

अत स्तृतीय कक्ष्यायां वावातास्यु नृपस्त्रियः ।
सर्वास्ता गुण संयुक्ताः रूपाधिक्या प्रियोत्तमाः ॥३९॥

तीसरे आवरण में महाराज की वावाता नामक स्त्रियाएँ निवास करती हैं वे दिव्य गुण सम्पन्ना, रूप में बढ़ी बढ़ी उत्तमा, अति प्रिया हैं ॥३९॥

तासां गृहा विभागेन स्वर्ण रत्न विनिर्मिताः ॥
तदग्रे तूर्य्य कक्ष्याया मासां वैभवकं तथा ॥४०॥

इन के स्वर्ण रत्न निर्मित महल सुन्दर विभाग पूर्वक हैं । आगे चौथे आवरण में उन वावाता स्त्रियों का वैभव सम्पत्ति खजानादिकों के महल हैं ॥४०॥

ततस्तु पञ्चमी कक्ष्या तस्यां सद्रूपयौवनाः ॥
सैरन्ध्री सर्व जातीयास्त्वेकांहि ब्राह्मणीं विना ॥४१॥

इस के आगे पाँचवे आवरण में सुन्दर रूप गुण, यौवन सम्पन्ना सैरन्ध्री नामक जाति की स्त्रियाएँ जो कि एक ब्राह्मण जाति को छोड़ कर सब जाति की हैं—इन का निवास है ॥४२॥

तासां तु वैभवं सर्वं माधरं स्यन्दनादिकम् ॥
षष्ठिकायां सुकक्ष्यायां विभागेन समन्ततः ॥४२॥

छटवे आवरण में इन का रथादि वाहन वस्त्रभूषणादि सम्पत्ति के अलग २ महल हैं ॥४२॥

अतः परं सप्तमीस्या त्कक्ष्या वैशालिका परा ॥
तस्यां वार वधूः सर्वाः दिव्यरूपाः गुणोत्तराः ॥४३॥

इस के आगे सातवें आवरण में वारवधू (वैश्या) जाति की स्त्रियाएं दिव्य, रूप, गुणवतियों का निवास है जो सब प्रकार की कलाओं में परम श्रेष्ठ हैं ॥४३॥

तासां यद्वैभवं सर्वं तत्कक्ष्या वरणे लसत् ॥
बहिर्भागे चतुर्दिश्याः कक्ष्या सप्तविभागकाः ॥४४॥

उन का जो वैभव है वह उसी आवरण के अलग २ महलों में शोभित है इस प्रकार सातवें आवरण वाले राजमहल के बाहरी भाग चारों तरफ में उन दिशाओं के वैभव के अनुसार बाहरी भूमि अनुकूल है ॥४४॥

तद्वृत्तं वर्णितं सर्वं कौशलेन्द्रस्य सद्मनः ॥
अद्य स्त्वभ्यन्तरं सर्वमाख्यानं कथयामिते ॥४५॥

इस प्रकार यह कौशलेन्द्र महाराज के राजमहल का वर्णन किया अब इसके बाद मैं तुमको और आन्तरिक चरित्रों को सुनाती हूँ ॥४५॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
अयोध्या ख्याने राजभवन वर्णनो नाम
षोडशस्सर्गः ॥१६॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्री अयोध्या ख्याने
राजभवन वर्णनो नाम षोडशः सर्गः ॥१६॥

चतुर्दिश्याः सप्तकक्ष्या स्तदन्त र्वर्त्तिकम्महत् ॥
कौशल्यायाा मन्दिरं स्यात् बहुभिर्मन्दिरैर्वृतम् ॥१॥

राज महल के चारों दिशा सात आवरण का वर्णन हुआ अब राजमहल के आन्तरिक विभागों का वर्णन कहते हैं । श्री कौशल्या अम्बा के महल के चारों तरफ और (अन्य) रानियों के बहुत से महल हैं ॥१॥

ध्वजा च कलशैर्दिव्यैः काञ्चनैर्सर्वतो वृतम् ॥
वातायन गवाक्षैश्च रत्नजालै श्चमत्कृतम् ॥२॥

उन महलों से घिरा हुआ श्री कौशल्या अम्बा जी का महल स्वर्णमयी ध्वजा, पताका, तोरण, कलश चारों तरफ से शोभित हैं । छज्जा और झरोखाओं में बड़े चमत्कार वाले रत्नों का जाली झालर आदिक लगे हुए हैं ॥२॥

चारु चित्रांक भित्तिश्च मणिकु त्पादिमा गणैः ॥
आवृताद्व प्रकोष्टं तत् दिवाकर सतप्रभम् ॥३॥

दिवालें अत्यन्त सुन्दर चित्र विचित्र चिनों से चमत्कृत हैं जिन चित्रों के मणिमय आँख कानें बने हुए प्रत्यक्ष के समान अट्टालिकाओं के नीचे दीवालों के सैकड़ों सूर्यों के समान प्रकाश कर रहे हैं ॥३॥

कैकय्याश्च सुमित्राया स्तस्यदक्षिणमुत्तरम् ॥
पूर्वं द्वाराणि त्रीण्येव तस्याग्रे मण्डप म्महत् ॥४॥

इसी प्रकार कैकयी सुमित्रा जी के उत्तर, दक्षिण तरफ महल हैं। इन तीन महलों से युक्त अम्बा जी का महल सात सौ रानियों के महलों से मण्डलाकार घिरा हुआ प्रत्येक दिशा में तीन २ करके फाटक शोभित हैं और पूर्व फाटक के आगे में एक बहुत बड़ा मण्डप है ॥४॥

कलशा काश स्पर्शं च पताकाध्वज मण्डितम् ॥
वहुभिर्मणिभिश्चित्र विचित्रैश्चित्त कर्षकम् ॥५॥

जिसका मणिमय ध्वजा, पताका, कलश अकाश को स्पर्श कर रहा है। उस मंडप की दीवालें बहुत रङ्ग के चित्र विचित्र चमत्कार वाले चित्तको आकर्षित कर रहे हैं ॥५॥

स्वर्ण सूत्र वितानैश्च सर्वखण्डान्तरावृतम् ॥
मुक्ता गुम्फित गुम्फैस्तु हस्तालम्बन शोभनम् ॥६॥

उस मंडप के भीतर प्रत्येक खंड और खन्डान्तरों में स्वर्ण सूत्रों से बने हुए वितान तने हैं तथा प्रत्येक वितान के बीच २ में मुक्ताओं की गुच्छियाँ हाथ के अवलम्ब के लिए लटको हुई हैं जो अति शोभायमान लगती हैं ॥६॥

शुभैर्गन्धै र्वासितैश्च वसनैर्सर्व तो वृतम् ॥
प्रतिमा युक्त यूपानां पंक्त्यन्तर प्रभान्वितम् ॥७॥

और चारों तरफ परदे सुन्दर सुगन्धित वस्त्रों के तने हुए हैं उस मंडप के मध्य भाग में चारों तरफ मूर्तियों (प्रतिमाओं) से चित्रित खम्भों की पंक्तियाँ सुन्दर प्रकाशमान हो रही हैं ॥७॥

वाद्यघोषंविना वाद्यैः तथा तन्त्री न्विना पितु ॥
गीतंश्च श्रूयते रागै स्तालादि भेद वद्यथा ॥८॥

उन मंडपों के फाटकों पर बिना बाजाओं के ही मध्य मंडप में भी वीणादिक वाद्योंसे सुन्दर रागादि तालादि भेद से सङ्गीत का सा कल्लोल हो रहा है ऐसा सुन पड़ रहा है ॥८॥

तत्र सिहासनं दिव्यमनन्ता दित्य सत्प्रभम् ॥
तत्र श्रीराममातावै राजते सत्प्रभावका: ॥९॥

इस प्रकार उस मण्डप के मध्य अनन्त सूर्यों के समान प्रकाशमान एक दिव्य सिहासन है उस सिहासन पर सुन्दर प्रभाव से प्रकाशमान श्री राम जी की माता शोभित हो रही हैं ॥९॥

सुमित्रा वामभागेच कैकयी दक्षिणे तथा ॥
कौशल्याङ्के भूषिता श्री राजतेमैथिली शुभाः ॥१०॥

उन के वाम भाग में श्री सुमित्रा अम्बा, दक्षिण भाग में कैकयी अम्बा विराजी हैं। श्री कौशल्या अम्बा जी की गोदी में सुन्दर भूषणों से भूषिता अति सुन्दरी श्री मैथिली जी शोभित हैं ॥१०॥

पृष्टे वामे दक्षिणे वै छत्र चामर हस्तकाः॥
सख्यो नन्ताः विराजन्ते सर्वाङ्ग भूषिताः शुभाः ॥११॥

पीठ की तरफ, दाहिनी तरफ बायीं तरफ छत्र चवरादि सेवा सौंज हाथ में लिए हुए अनन्त सखियाँ सर्वाङ्ग भूषिता सुन्दर शोभित हैं ॥११॥

अपरा प्यनन्ता राज्ञयो मण्डलाकार सम्वृताः॥
तत्रैवोच्चासनस्थातु गुरु पत्नी विराजते ॥१२॥

तथा महाराज चक्रवर्ती जी की और रानियाँ भी मण्डलाकार, होकर शोभित हैं। उसी स्थान पर एक ऊँचे आसन में श्री गुरु पत्नी श्री अरुन्धती अम्बा भी विराजमान हैं ॥१२॥

अयोध्या पुर वाशिन्य श्चातुर्वर्ण्य स्त्रियोवराः॥
सम्मानिता हि श्रीमत्या राज्ञ्या कौशल्यया गिरा ॥१३॥

तथा अयोध्या नगर की रहने वाली चारो वर्णों की उत्तम स्त्रियाएं श्री मती कौशल्या जी की वाणी से सन्मानित होकर विराजी हुई हैं ॥१३॥

ताभिः प्रपूरितं सर्व म्मण्डपं हि महत्तरम् ॥
दिव्याम्बरा भूषणाभिश्चा तुर्य्याञ्चित बुद्धिभिः ॥१४॥
प्रतिहार्य्यो प्यनन्तास्तु दिव्यरूपा विभूषिताः ॥
स्वर्ण दण्ड धराः काश्च द्रत्न दण्ड धरा अपि ॥१५॥

उन सब स्त्रियों से भरा हुआ वह विशाल मण्डप शोभित है। सब स्त्रियाएँ दिव्य वस्त्र भूषणों से तथा अत्यन्त चातुर्यमयी बुद्धि से शोभित हैं उस मण्डप की प्रतिहारिणी (प्रति हारी का काम करने वाली स्त्रियाँ) भी सुन्दर वस्त्राभूषणों से भूषिता, दिव्यरूपा, हाथों में स्वर्ण दण्ड, रत्न दण्डादिकों को धारण की हुई अनन्त संख्या में हैं ॥१४-१५॥

पुष्प दण्ड धरा श्चान्याः खचि द्वेत्र धरा अपि ॥
आगत्य कृतप्रणामाना न्तास्तु कुर्वन्ति ज्ञापनम् ॥१६॥

बहुत सी पुष्प दन्डों को भी तथा कोई रत्न खचित वैतों को भी ली हुई अपने २ स्थानों पर खड़ी हुई हैं। बाहर से आने वाली स्त्रियों को महारानी जी के लिए प्रणाम करने के बाद ज्ञापन कराती हैं ॥१६॥

उच्चस्वरै स्तूच्चरन्त्यः पुनः स्थापन मन्वयात् ॥
यथायोग्यं प्रकुर्वन्ति राज्ञ्या त्वत्युत्तरं हि ताः ॥१७॥

ज्ञापन माने प्रणाम करने वालियों के नामादिक समाचारों को ऊँचे स्वर से महारानी जी के लिए जनाकर प्रणाम के बाद आसन पर बैठने की आज्ञा महारानी जी से पाकर यथा योग्य स्थानों पर उन आयी हुइयों को बैठाना है ॥१७॥

रम्भोर्वसी मेनकाद्या गायन्ति नृत्ययन्ति च ॥
ध्वनिः प्रपूरित स्तत्र वाद्यानां स्वर सम्मतः ॥१८॥

इस प्रकार की सभा में महारानी जी के आगे रम्भा, उर्वशी मेनकादिक देवलोक की अप्सराओं के नृत्य, गान, राग, ताल और बाजाओं के शब्द से वह मंडप गुञ्जित हो रहा है ॥१८॥

स्त्रियो विदूषकाना श्च बहुशो हास्य हेतुकैः ॥
वाक्या नुभाव युक्तास्ताभ्यो मोदयन्ति च तां शभाम् ॥१९॥

और बहुत सी विदूषक स्त्रियाऐं वाक्य के अनुभव से बहुत प्रकार के हास्य—कौतुकों को करती हुई इस सभा को आनन्दित कर रही हैं ॥१९॥

एवम्भवति श्रीमत्याः राममातुः शभा शुभा ॥
यामेदिन स्योत्तरेंकं निशा पूर्वार्द्ध यामके ॥२०॥

इस प्रकार सुन्दर कल्याण स्वरूपा, श्री मती राम-माता दिन के प्रथम याम के उत्तर भाग में (९ से ११ बजे तक) और रात्रि के प्रथम याम के अर्ध भाग में (७ बजे से ८ बजे तक) सभा में बैठती हैं ॥२०।

अस्त्यस्य मण्डपस्याग्रे कक्ष्यान्तर द्वितीयके ॥
श्रीम त्कौशल राजस्य शभामण्डप मन्दिरम् ॥२१॥

इस मंडप के आगे दूसरे आवरण में श्रीमान कौशलेश राजाधिराज का सभागार—मंडप है ॥२१॥

नानामणि गणैश्चित्रं तोरणैश्च प्रकोष्टकम् ॥
क्वचिज्जलं स्थलं क्वापि विभ्रमं मणिभिः कृतम् ॥२२

वह राजसभा मंडप भी नाना प्रकार के मणिगणों से तोरण केतु पताका, कलशादिक से चित्र विचित्र शोभित है। उस मंडप में कहीं थल की जगह पर जल सरीखे, जल की जगह पर थल सरीखे इस प्रकार मणि रचनाओं द्वारा भ्रम कारक भूमि है ।२२॥

दिव्यास्तरण विस्तारै श्चमत्कृतमहीतलम् ॥
नागमुक्ता गुम्फितैश्च तोरणै र्द्वारभाषितम् ॥२३॥

इस प्रकार की भूमि में दिव्य बिछे हुए वस्त्रों के चमत्कार से इस प्रकार की भूमि गज मुक्ताओं से गुम्फित (गुथे हुए) तोरणों द्वारा प्रकाशमान फाटकों वाले ॥२३॥

स्वर्णसूत्राम्बरावृत्तं रत्न स्तम्भैः सहस्रकैः ॥
आदित्य कोटि संकाशं कल्प पादप सन्निभम् ॥२४॥

मण्डप में स्वर्ण सूत्रों के बने हुए वितान परदादिकों से शोभित सुन्दर चित्र विचित्र हजारों खम्भाओं से करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश करने वाले, प्राणियों के मनोरथ पूर्ण करने वाले कल्प वृक्ष के समान उस राज मंडप के अन्दर एक कल्प वृक्ष है ॥२४॥

तत्र सिंहासनं दिव्यं विशालं कलधौतकम् ॥
नानारत्नैश्च खचितं नानावर्णैं विराजितम् ॥२५॥

उस कल्प वृक्ष के नीचे दिव्य विशाल स्वर्ण के नाना रत्न खचित सिंहासन में नाना वर्णों के चित्र विचित्र चित्र शोभित हैं।२५॥

स्तम्भैः सत्कृद्विभागैश्च वितानध्वज मण्डितम् ॥
तत्रपद्मासनं दिव्य काञ्चनीयं प्रफुल्लवत् ॥२६॥

सुन्दर विभाग पूर्वक खम्भों से सजा हुआ वह सिंहासन वितान व ध्वजा से भूषित हैं उस सिंहासन के अन्दर स्वर्णमयी खिला हुआ दिव्य कमल का आसन है ॥२६॥

राजतेतत्र राजेन्द्रः श्रीमद्दशरथः प्रभुः ॥
शासकः सर्वलोकानां शक्तिमान् बलवा न्गुणी ॥२७॥

उस कमलासन पर राज राजेन्द्र श्री मान दशरथ जी महाराज सर्व लोकों के शासक प्रभु बिराजमान है जो महान् शक्तिमान, बलवान, गुणमान हैं ॥२७॥

समीपे तस्यभागेऽग्रे जानुमालम्ब्य दक्षिणम् ॥
राजते रामभद्रोसौ वामेतु लक्ष्मणो बली ॥२८॥

महाराज चक्रवर्ती जी के समीप आगे में दाहिनी तरफ दहिना घुटना को टेककर श्री राम भद्र जू विराजे हुए हैं और उसी प्रकार वाम भाग से बड़े बलवान श्री लक्ष्मण जी विराजे हुए हैं ॥२८॥

सत्रुघ्नो भरतश्चैवं चत्वारः सुखमाश्रयाः ॥
काकपक्षधराः सर्वे सर्वे सर्वाङ्ग भूषिताः ॥२९॥

तथा इसी प्रकार श्री शत्रुघ्न और श्री भरत जी भी विराजे हुए हैं—ये चारों कुमार सुख के आश्रय, काम शदस जुल्फ वाले सब के सब सर्वाङ्ग भूषित हैं ॥२९॥

विशालाक्षयाहि सर्वे स्युः सर्वे रम्य गुणाअपि ॥
महोजशो महावीरा धनुर्वेद विदोपि च ॥३०॥

तथा सभी विशाल नेत्र वाले रमणीय गुण स्वभाव वाले महान् तेजस्वी, बलवान, धनुर्वेद के विद्वान धनुष धारी हैं ॥३०॥

खड्ग चर्म धनुर्वाणा न्धृत्वा खेलन तत्पराः ॥
पुरस्त्री पुरुषाणा न्तु स्व पुत्रा इव मुत्प्रदाः ॥३१॥

तलवार ढाल, धनुष बाणादिकों को लेकर खेलने के लिए उत्सुक हुए, पुर की स्त्री पुरुषों के लिए अपने पुत्रों की तरह आनन्द देने वाले हैं ॥३१॥

चत्वारोपि गुणाधिक्याः सुखदाः सुखमाधिकाः ॥
प्रवर्द्धकाः पितुः प्रीते मातुश्च स्वकीयकै गुणैः ॥३२॥

यद्यपि ये चारों कुमार गुणों में अत्यन्त बढ़े चढ़े, सब को सुख देने वाले, स्वयं महासुख भोगकर अपने गुणों से माता पिता के प्रेम को बढ़ाने वाले हैं ॥३२॥

तथापि रामभद्रो सौ श्यामसुन्दर विग्रहः ॥
बल रूप गुणैः रम्यै राजते हि विचक्षणैः ॥३३॥

श्री श्री श्री रामभद्र जू तो श्याम सुन्दर विग्रह, बल रूप गुणों में अत्यन्त रमणीय अति ही विलक्षण हैं ॥३३॥

लक्ष्मणादि त्रय स्तस्य कुर्वन्ति दास्य मुत्तमम् ॥
परस्परं प्रीतिमन्तः सर्वे सन्तिस्वभावतः ॥३४॥

इन श्री रघुनाथ जी के लक्ष्मण जी आदि तीनों भाई उत्तम दासता को सम्हाले रहते हैं यद्यपि सब के सब परस्पर अत्यन्त अनुराग मयी स्वभाव वाले हैं तो भी अपने को श्री राम जी का दास मानते हैं ॥३४॥

दृष्ट्वा दृष्ट्वा कौशलेन्द्र स्तान्महानन्द मायथौ ॥
तेपि सर्वे पितृभक्ताः धर्मज्ञाः नीति वेदिनः ॥३५॥

इन सब कुमारों को देख देखकर महाराज कोशलेन्द्र जी अत्यन्त आनन्द को प्राप्त होते हैं क्योंकि ये कुमार भी सबक सब पितृ भक्त धर्मज्ञ नीत को जानने वाले हैं ॥३५॥

एतदग्रे वशिष्टादि मुनयः परिवर्त्यच ॥
स्वस्तीति वचनं तस्मि न्ब्रुवन्तोसंविशन्ति ते ॥३६॥

इसके आगे श्री वसिष्ठादिक मुनि लोग चारों तरफ मण्डल बाँधकर बैठे हैं। मुनि लोग जो भी सभा में आते हैं वे महाराज श्री चक्रवर्ती जी के लिए स्वस्ति वाचन आदि मङ्गलमय अशीर्वादात्मक मन्त्रों को उच्चारण करते हुए आते हैं ॥३६॥

तेषां महामुनीनांतु मण्डलाग्रे सुभाषिणः ॥
सुमन्ताद्या दीप्तिमन्तोऽमात्यास्तिष्ठन्ति सम्वृताः ॥

रवि वन्श्या महात्मान स्तेजवन्तो वलाधिकाः ॥
अमात्यानां मण्डलाग्रे तिष्ठमानाः समन्ततः ॥३८॥

उन मुनि मण्डल के आगे सुन्दर वाणी बोलने वाले बुद्धि के चमत्कारों से प्रकाशमान् सुमन्त्र आदि मन्त्री लोग चारों तरफ बैठे हैं इस मन्त्रि मण्डल के आगे बड़े बलवान, तेजस्वी, महात्मा, सूर्यवंशी राजा लोग चारों तरफ से बैठे हैं ॥३८॥

मण्डलाग्रेऽर्क वन्श्यानां भूमिपाला महौजशः ॥
खचिन्मणि कोरीटादि भूषणैश्च विभूषिताः ॥३६॥

इन सूर्य वंशी राजाओं के मण्डल के आगे मणि खचित किरीटादि भूषणों से भूषित महान् पराक्रमी अन्य राजा लोग बैठे हुए हैं ॥३६॥

हितैषिण स्तु ते सर्वे स्वनाथे कौशलाधिपे ॥
परिवार्य्य तिष्ठमाना शोभन्ते शुभदर्शनाः ॥४०॥

ये सबके सब महाराज श्री कौशलेश जी के लिए अत्यन्त हित रखने वाले महाराज के चारों तरफ बैठे हुए अपनी सुन्दरता से शोभित ह ॥४०॥

तस्यामेव शभायां श्री राजराजेश्वरस्य तु ॥
ब्रह्मेन्द्राद्याः सुराः सर्वे दिग्पाला वरुणादयः ॥४१॥

राज राजेश्वर महाराज श्री चक्रवर्ती जी की इसी राज सभा में ब्रह्मा इन्द्र आदि सभी देवता लोग तथा वरुणादि सभी दिकपाल लोग ॥४१॥

अङ्गीकृताज्ञाः सर्वे ते वध्वाञ्जलि परिस्थिताः ॥
असुराश्चाप्यनन्ताश्च तस्य सिष्टि परायणाः ॥४२॥

ये सब के सब हाथ जोड़कर के महाराज श्री चक्रवर्ती दशरथ जी की आज्ञा का पालन करते रहते हैं तथा दैत्यादिक अनन्त असुर लोग बड़ी नम्रता पूर्वक आज्ञा पालन कर रहे हैं ॥४२॥

रुक्म दण्डधरास्तत्र खचिन्मणि विभूषणाः ॥
प्रतिहाराः स्थापयन्ति भूपालान्योग्य पंक्तिषु ॥४३॥

सभा में आने वाले राजादिकों को रत्न खचित स्वर्ण दण्ड को हाथ में लिए हुए सुन्दर भूषित प्रतिहारी लोग यथा योग्य स्थानों पर सब को बैठा रहे हैं ॥४३॥

पृष्टे वामे दक्षिणे तु तस्य सिंहासनान्तिके ॥
भूषिता दासवर्गास्ते छत्र चामर हस्तकाः ॥४४॥

महाराज चक्रवर्ती जी के दाहिने बाँए, पीछे, सिंहासन के समीप सुन्दर भूषणों से भूषित दासवर्ग चवर, छत्रादि सेवा सौं जों को हाथों में लिए हुए खड़े हैं ॥४४॥

गुत्सास्तु केकिपक्ष्यानां धृत्वाता न्वहुशः करे ॥
परिस्थाः शोभयन्तस्तेभूषणांग परिस्कृताः ॥४५॥

कोई मुर्छल लिए हुए सुन्दर भूषणों से भूषित खड़े हुए अति शोभित हो रहे हैं ॥४५॥

गानं कुर्वन्ति गन्धर्वाः नृत्यन्तिमेनकादयः ॥
एवं राजति राजासौ शभाया मतुलप्रभः ॥४६॥

गंधर्व लोग गान कर रहे हैं। मेनकादिक अप्सराऐ नृत्य कर रही हैं इस प्रकार अतुल प्रभाव वाले महाराज श्री चक्रवर्ती जी राज सभा में बैठे हैं ॥४६॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां
अयोध्या ख्याने श्रीराजभवन वर्णनो नाम
सप्तदशः स्सर्गः ॥१७॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्री अयोध्या ख्याने
राजभवन वर्णनो नाम सप्तदशः सर्गः ॥१७॥

अथास्ति भद्रबृन्दस्य पश्चिमायांतु सान्तरम् ॥
दिशि सौराजिका रव्यं हि वनं कृत्तिमकं शुभम् ॥१॥

भद्र बृन्द वन के पश्चिम दिशा में सुन्दर बिस्तार वाला सौराज्य नाम का वन है जिसमें कृत्रिम रचना बहुत ज्यादा है ॥१॥

तत्र चावरजा वस्य श्रीमद्दशरथस्येतु ॥
राजे ते रविसदृसौ प्रसादान्तर प्रोद्यते ॥२॥

उस वन में महाराज श्री दशरथ जी के सूर्य के समान प्रकाश वाले वीर भाइयों के महल हैं ॥२॥

खचिद्रत्नोच्च शिखरे पताकाध्वजे शंकुले ॥
निरन्तरानकस्वाने जनैः संकुल वीथिके ॥३॥

जिन महलों में ऊँची ध्वजाऐं, तोरण, केतु, पताकादिक सघन लगे हुए रत्न खचित ऊँचे शिखर हैं जहाँ फाटकों पर नित्य दुन्दुभियों का नाद और गलियों में जनता की भीड़ होती ही रहती है ॥३॥

तद्वनश्चा तिरम्यंस्या त्सदैवतु नृपे यथा ॥
प्रफुल्लोत्पल कासारै हंश सारस सेवितैः ॥४॥

उस वन में ऋतुराज बसन्त की शोभा सदैव अति रमणीयता से बनी रहती है। सरोवरों में कमल खिले रहते हैं हंस, सारस, मृगों की पंक्ति सजी रहती है। भृङ्गादि पक्षियों का कल्लोल मचा रहता है ॥४॥

फलभारा नम्र शाखैः पादपैः परिवेष्ठितम् ॥
प्रफुल्ल पुष्प बृन्दैश्च शोभितान्तरक स्थलम् ॥५॥

फलों के बोझा से झुकी हुई डाल वाले वृक्षों की पंक्तियों से घिरा हुआ है। उन फलित वृक्षों की पंक्तियों के अन्दर फूलों से लदे हुए वृक्षों की पंक्तियाँ अपनी वेदिकादिक रचनाओं की शोभा से प्रकाशित हैं ॥५॥

उपेतं मृग यूथैश्च पालितैस्तु तदात्मजैः॥
कण्ठ पाद भूषितैश्च पाठितैश्च प्रपालकैः ॥६॥

मृगाओं के झुण्ड उन फूलों की लता कुञ्जों के अन्दर पले हुए हैं। प्रत्येक मृगों के चरण कण्ठ सींग पूँछ व पीठ सुन्दर भूषणों से उन बाग के मालियों द्वारा सजे हुए हैं ॥६॥

अथानयो रहस्यं य न्मन्दिरं सप्तरोधकम् ॥
नानारत्नैश्च खचितं स्तम्भपंक्ति प्रकाशितम् ॥७॥

इस बगीचा के अन्दर महाराज चक्रवर्ती जी के भ्राताओं के महल सात २ आवरण के रत्न खचित खम्भों की पंक्तियों से प्रकाशमान सुन्दर रहस्यमय हैं ॥७॥

स्त्र्यागारैः पुरुषागारै मन्त्रागारैश्च क्रीडकैः ॥
तथा च कल सूत्रात्म व्यूहागारै विचित्रकैः ॥८॥

स्त्रियों के महल, पुरुषों के महल, मन्त्रागार, विशाल महल, यन्त्रागार, चक्राकार यन्त्रों के महल जो कि अति विचित्र हैं सब शोभित हैं ॥८॥

लोकचित्र वदागारैः सभागारै र्महत्तरैः ॥
त्रिविधैः पवनागारैः पाकस्थानै स्तथापरैः ॥६॥

सम्पूर्ण विश्व के चित्र सरीखे महल और बड़े २ सभा महल, जिन में शीतल, मन्द, सुगन्ध वायु बहता रहता है ऐसे हवा के महल, भोजनागार तथा और भी बहुत प्रकार के महल ॥६॥

रसान्न शाकसन्धान वेषवार गृहाभिधैः ॥
मध्यान्ह शयनागारै र्नृत्यागारै र्बृहत्तरैः ॥१०॥

रस, अन्न, सांक, मैरेय (मधु आसव) मसालादिकों के महल, मध्यान्ह सयनागार, बहुत बड़े २ नृत्यागार ॥१०॥

तथा च लेखकागारैः वित्तागारै स्त्रिधापरैः ॥
रचितैः स्वर्ण रत्नैश्च सर्वैश्च जन रक्षितैः ॥११॥

दफ्तर आमदनी खर्च और जमा के हिसाब से तीन भेद वाले खजाने का महल—ये सब स्वर्ण रत्नों से खचित सब प्रकार से सज्जित, सुसेवकों से सुरक्षित हैं ॥११॥

तथापरैः गजागारैः स्यन्दनागारकै स्तथा ॥
अश्वागारै र्गोगृहैश्च वृषभागारकैः पुनः ॥१२॥

तथा गजागार, रथागार, अश्वागार गौ शाला, बैलों के महल तथा और भी ॥१२॥

उष्ट्रागारै र्महिषीनां महिषानां तथा विधैः ॥
मृगागारै र्भेदयुक्तै र्यथा च गवयादिभिः ॥१३॥

ऊँटा गार, महिषागार, (भैंसी भैंसों के महल) मृगाओं के महल और विविध भेद युक्त पशुओं के महल ॥१३॥

क्रीडा पक्षि गृहैश्चैवान्यथा तोविषयैः परैः ॥
राजविद्या गृहैश्चान्यै राग विद्या गृहै स्तथा ॥१४॥

खेलने के पक्षियों के महल और भी बहुत से विषयों के महल, राजविद्या, रागविद्याओं के महल ॥१४॥

राज्योपकरणागारै स्तथावादित्र गेहकैः ॥
शस्त्रविद्या गृहैर्दिव्यैः कला गार समूह कैः ॥१५॥

राजकीय सामानों के महल बाजाओं के महल, शस्त्रविद्या के महल, सामूहिक दिव्य कलाओं के महल ॥१५॥

दानोत्सव गृहै रेतैः सर्वैः कक्षया समावृताः ॥
रचिता मणिभिर्दिव्यैरक्षिता दिव्यकिंकरैः ॥१६॥

दान, उत्सवों के महल—इस प्रकार के महलों से भाइयों के सातों आवरणों से घिरे हैं जो दिव्य रत्नोंसे रचित दिव्य सेवकोंसे सुरक्षित हैं ॥१६॥

एवंसद्भिमवावेतौ श्रीमद्दशरथस्यच ॥
महारथी विक्रमाग्रौ राजेते सत्सुखात्मनौ ॥१७॥

इस प्रकार सुन्दर ऐश्वर्य से परिपूर्ण महाराज श्रीदशरथ जी के पराक्रम में अग्रगण्य महारथी आत्माओं के सुन्दर सुख भोग के लिए ये महल हैं ॥१७॥

सौराजिक वनस्यैव सान्तरं दक्षिणायने ॥
श्रोत्र शाख वनं रम्यमन्तरो पवनान्वितम् ॥१८॥

इस सौराजिक वन के दक्षिण तरफ सुन्दर विस्तार वाले श्रोत्र शाख वन है जो अत्यन्त रमणीय वन उपवनों से शोभित है ॥१८॥

ब्राह्मणानिवसन्त्यत्र मुनयोपि महर्षयः ॥
भिन्नान्युप वना न्येषां तीर्थसान्निध्यकानि च ॥१९॥

इस वन में मुनि, महर्षि, ब्राह्मण लोग वास करते हैं। प्रत्येक महात्माओं के महल वन, उपवन, तीर्थादिकों से अलग २ शोभित हैं ॥ १९॥

वशिष्टस्यौ दम्वरीयं वनं तत्र च शोभनम् ॥
तस्यासन्ने गालवाख्यं वामदेवस्य सत्फलम् ॥२०॥

औदम्वरीय वन में श्री वसिष्ठ जी महाराज का महल शोभित है। समीपस्थ गालव नामक वन में वामदेव जी का महल है जहाँ सुन्दर फल युक्त वृक्षों की पंक्तियाँ हैं ॥२०॥

एङ्गुदीयं तथा चैकं भारद्वाजस्य तत्रवै ॥
यग्यवल्कस्य पालाशं विश्वामित्रस्य पाटलम् ॥२१॥

एङ्गुदीय वन में भरद्वाज जी का महल है। पलास वन में याज्ञवल्कि जी का महल है और पाटल वन में विश्वामित्र जी का महल है ॥२१॥

रसालं गौतमस्यास्ति वाल्मीकस्यतु प्लाक्षकम् ॥
रसालायं हारितस्य पुलहस्यतु भौर्य्यकम् ॥२२॥

रसाल वन में गौतम जी का महल है। प्लाक्ष वन में वाल्मीकि जी का वन है। रसाल वन में हारित जी का महल है भौर्य्यक वन में पुलह जी का महल है ॥२२॥

पौष्कराख्य न्तु व्यासस्य पराशरस्य वार्हतम् ॥
सुकस्यै साम्वरं नाम चाम्पेयं तत्परं हियत् ॥२३॥

पौष्कर वन में व्यास जी का वार्हत वन में परासर जी का महल है। साम्वर वन में शुक देव जी का महल है। चाम्पेय वन में ॥२३॥

तत्रैं वागस्त्यो भगवा नूसभ्राता वेद पारगः ॥
सुतीक्ष्णादि शिष्यैश्च लोपामुद्रायुतः सुधीः ॥२४॥

श्री सुदर्शन जी का तथा वेद मर्मज्ञ श्री अगस्त्य जी का महल है तथा और भी सुतीक्ष्णादिक शिष्य औ लोप मुद्रा जी के सहित सुन्दर बुद्धि वाले लोग निवास करते हैं ॥२४॥

एवमाद्यास्तु यावन्ति देव ब्रह्मर्षयोपिच ॥
उपाशयन्ति श्रीरामं वसन्तोत्र वने सदा ॥२५॥

इस प्रकार देवर्षि ब्रह्मर्षि आदिक जितने भी मुनि लोग है इस वन में सदा निवास करके श्रीराम जी की उपासना करते हैं ॥२५॥

आकल्पं मानुषेलोके चतुवर्ग स्यसिद्धये क्रियात्मकान् ॥
विस्तारयन्तो वाक्या न्स्वान्निवसन्त्यन्य रूपतः ॥२६॥

और एक रूप से जितने मुनि लोग हैं ये सब मनुष्य लोक में निवास करके कल्पों पर्यन्त ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास चारों आश्रमों को सब वर्णो का अपने शब्दों से सुन्दर शिक्षा का विस्तार करके निवास करते हैं ॥२६॥

सौराजिका दुत्तरंतु वनं सौवृन्द नामकम् ॥
तत्र चाष्टौ सुमन्ताद्याः सचिवा निवसन्तिवै ॥२७॥

इस सौराजिक वन से उत्तर तरफ में सौ वृन्द नामक वन है जहाँ सुमन्त आदिक आठ मन्त्री निवास करते हैं ॥२७॥

वनं तत्परमं रम्यं मृग पक्षि समन्वितम् ॥
सफलैः पादपैर्युक्तं काशारैः कमलान्वितैः ॥२८॥

वह वन अत्यन्त रमणीय मृग पक्षियों से भरा हुआ फल संयुक्त वृक्षों से, कमल संयुक्त सरोवरों से और अपनी वन सम्पत्तियों से अत्यन्त शोभित है ॥२८॥

नाना पुष्प लताभिस्तु नानावर्णां प्रद्रिश्यते ॥
तल्लुब्ध षट्पदानाञ्च वृन्दैर्झङ्कारिता दिशम् ॥२९॥

विविध प्रकार के फूल, वृक्ष, नाना रङ्ग की लताए, उन प्रलोभित हुए भौंरों का गुञ्जार दशों दिशाओं में प्रकाशित हो रहे हैं ॥२९॥

एतद्वने मन्दिराणि तेषां स्फाटिक कोटके ॥
ध्वजैः स्तम्भैः पताकाभिः कलशैः सूचितानिच ॥३०॥

इस वन में विविध प्रकार के महलों के बाहरी भाग में स्फटिक मणि का कोट ऊँची ध्वजा पताका का कलशादिकों से दूर दिशाओं तक सूचना दे रहा है ॥३०॥

विभागवैभवागारैः शोभितानि सभादिभिः ॥
रत्नैस्तु रचितैः सर्वैं राजमन्दिर शादृशैः ॥३१॥

बिविध सम्पत्तियों के अलग २ महल शोभित हैं प्रत्येक सभादिक महल अद्भुत रत्नों से खचित इस के सब राजमहल के सदृश हैं ॥३१॥

अथात्र कौशलेन्द्रस्य भवना स्कोण दक्षिणे ॥
वनं तु चित्रकं नाम वलितं दिव्यपादपैः ॥३२॥

अब श्री चक्रवर्ती जी महाराज के दक्षिण कोण पर चित्रक नामक बन है जो दिव्य लता वृक्षों से भरा है ॥३२॥

सरोभिर्मणि बद्धैश्च सरोजाकुलितैः शुभैः ॥
क्रीडमानैर्युग्मकैश्च हंश सारस बृन्दकैः ॥३३॥

जहाँ मणियों के घाट बाँधे सरोवर, सुन्दर कमलों से भरे हुए दो २ करके हंस सारसों के वृन्द बिलास कर रहे हैं ॥३३॥

नृत्यद्भिश्च मयूरैस्तु पठद्भिः पाठितैः सुकैः ॥
विहङ्गणाना मन्येषां संघटैश्च मनोहरम् ॥३४॥

मयूर नृत्य कर रहे हैं, वन में विहार करने वाले सुग्गाओं को पढ़ा रहे हैं। और भी पक्षी भ्रमरादिकों के समूह मन को हर रहे हैं ॥३४॥

नानाकारैश्चित्र मृगैः कण्ठ पाद विभूषितैः ॥
काञ्चना श्रित शृङ्गैश्च विचरद्भिर्विराजितम् ॥३५॥

बिविध रङ्ग के चित्र विचित्र मृग जिनके कण्ठ, चरण, सींग सुन्दर भूषित हैं और अपनी चाल से झनकार मचाते हुए बिचर रहे हैं ॥३५॥

पुष्पिताभि र्लताभिस्तु सुगन्धपूरिता दिशम् ॥
श्रेणिभि र्मधुलुब्धानां गुञ्जितं मधुपालिनाम् ॥३६॥

खिले हुए पुष्पों की लताएँ अपनी सुगन्धि से दिशाओं को भर रहे हैं। भ्रमर झुण्ड के झुण्ड गूँजते हुए शहद पी रहे हैं ॥३६॥

भूमि प्रदेशकास्तत्र नानावर्णैश्च रत्नकैः ॥
परिस्कृता मयूखैश्चावृताः सद्भिः समन्ततः ॥३७॥

इस चित्रक बन की भूमि नाना रङ्ग के रत्नों से सुन्दर रचना की गई अपनी किरणों से दिशाओं को प्रकाशित कर रही है ॥३७॥

एव म्भूते वनस्यान्ते महत्प्रासाद पंक्तिषु ॥
प्राकार सप्त युक्तेषु राजते भरता नुजः ॥३८॥

इस प्रकार के बन में भीतर बड़े २ महलों की पंक्ति सात आवरण परकोटाओं से घिरी हैं। इस प्रकार यह श्री शत्रुघ्न जी का निवास स्थान है ॥३८॥

द्वारत्रिक चतुर्द्वाराः कक्ष्या वेश्मान्त मराडलाः ॥
सप्त सप्त चतुर्दिक्षु सन्ति सज्जन रक्षिताः ॥३६॥

प्रत्येक दिशाओं के फाटक तीन मुख वाले हैं इस प्रकार चारों दिशाओं में फाटक वाले सातों आवरण परकोटा भोतरी निवास महल पर्यन्त हैं प्रत्येक दिशाओं के फाटकों पर पहरा करने वाले महान् सज्जन हैं ॥३६॥

प्राकार मराडले चाष्टौ स्यन्दनाऽश्वोच सद्गजाः ॥
उष्ट्रा गावोमहिष्यश्च शौरिभा वृषभास्तथा ॥४०॥

इस प्रकार महलोंके सातों आवरणों के सब से बाहरी आवरण में रथ, घोड़े, हाथी, ऊँट, गाय, भैंसा, भैंसी, बैल ॥४०॥

गवयादि मृगाश्चान्ये वन्याश्च वहवोद्भुताः ॥
येषा यथोचिताः सन्ति गृहा स्त त्पालकै युताः ॥४१॥

पक्षी, मृग और भी वन के होने वाले अद्भुत जानवर जिनको जो उचित है उन सबके पालने वालों के सहित अलग २ महल बने हैं ॥४१॥

येच एतान्पालयन्ति विनीयभूषयन्तिये ॥
परिवार समेतानां तेषां तत्रैव सद्गृहाः ॥४२॥

जो इन जानवरों को पालने और श्रृङ्गार करने वाले नौकर हैं वे भी अपने परिवार के सहित वहीं पर सुन्दर महलों में निवास करते हैं ॥४२॥

एवञ्च पक्षि जातीनां दूरदेश प्रजायिनाम् ॥
अत्रैव मराडले सन्ति यथोचित गृहोत्तमाः ॥४३॥

इसी प्रकार दूर देश में पैदा होने वाले बहुत जाति के पक्षियों का उत्तम महल भी इसी आवरण में है ॥४३॥

आदि प्राकारकस्यास्य गोपुरेण समानि च ॥
त्रिक द्वाराणि चत्वारि चतुर्दिक्षु सविस्तरैः ॥४४॥

इस प्रकार ये सब महल परकोटा के फाटकों में ऊँचे गोपुरों की समता करते हैं। चारों दिशाओं के गोपुरों के फाटक तीन मुख वाले सुन्दर विस्तृत हैं ॥४४॥

गवाक्ष द्वार सद्द्वारैः शोभनानि समुहकैः ॥
रत्नतोरण चित्राणि रत्नकुम्भशिरांशि च ॥४५॥

इन फाटकों के गोपुर छज्जा, झरोखा, दरवाजे इन सबके अंग सुन्दर शोभित बहुत ऊँचे हैं। शिखरों पर चित्र विचित्र तोरण और कलश शोभित हैं ॥४५॥

उच्चध्वज पाताकाभि दूंरा त्सन्दर्शितानिनै ॥
रक्षितानि महावीरैर्जनैः संकुलितानि च ॥४६॥

और ध्वजा पताकादिक दूर से दीख पड़ते हैं, द्वारों पर रक्षा करने वाले महा बलवान् सज्जन भीड़ के भीड़ खड़े हैं ॥४६॥

अथ द्वितीया वरणे त्रिक द्वार चतुष्टये ॥
सौविदल्लै रचिते स्यात्प्रमदा वन संहतिः ॥४७॥

अब दूसरे आवरण के चारो दिशा वाले फाटक भी तीन दरवाजा वाले हैं। प्रत्येक फाटकों पर जनाना महल की रक्षा करने वाले सज्जन वृन्द है ॥४७॥

स्वर्ण रत्न वितर्दि स्था सुधास्वादु फलान्विताः ॥
मणि दीप्ति प्रकाण्डा इच शाखाभिश्चत्र वद्वृताः ॥४८॥

इस दूसरे आवरण में स्वर्ण रत्न के वेदिकाओं वाले, अमृत के समान स्वाद देने वाले, फलों से लदे हुए मणियों के समान प्रकाशमान डालों जिनके एवं छत्राकार वृक्षो की पंक्ति शोभित है ॥४८॥

फलभारा नम्र शाखाः स्वजातीनां तु पंक्ति भिः ॥
शाखिन स्तत्र शोभन्ते सर्वर्त्तु फलिन इच ते ॥४९॥

प्रत्येक जाति के वृक्ष अलग २ पंक्तियों में अपने फलों के भार से प्रत्येक ऋतु की शोभा दे रहे हैं ॥४९॥

फलवन्त्यो लतास्तत्र द्राक्षादीना मनन्तराः ॥
विस्तृताः स्वर्ण दण्डाना म्मण्डपे फलगुच्छकाः ॥५०॥

किशमिश आदिकों की लताऐं भी फलों से भरी हुई मण्डप के स्वर्ण खम्भों पर फैलकर फलों के गुच्छे दिखा रही हैं ॥५०॥

मन्दारादि पुष्पवृक्ष्याः पुष्पयुक्ता लता स्तथा ॥
मणिभिर्रचिता स्त्वेव वेदिकासु विरोपिताः ॥५१॥

मणि रचित वेदिकाओं पर रोपे हुए मंदार आदिक पुष्पों के वृक्ष तथा बहुत सी पुष्पों की लताऐं शोभित हैं ॥५१॥

पक्षिणो वहु जातीया मृगाश्चापि विचित्रकाः ॥
नदन्ति क्रीडयन्त्यत्र स्वदन्ति तु फलानि ते ॥५२॥

इस प्रकार के लता और वृक्षों के वन में चित्र विचित्र अनेक जाति के मृग और पक्षी गूँजते, खेलते, फलों को खाते हैं ॥५२॥

वधूनां भिन्नभिन्नानि वनानिस्यु र्विभागतः ॥
सरांसि वेदिकास्तत्र मणिवद्धानि सर्वतः ॥५३॥

स्त्रियों के भी अलग २ विभाग से वन और भिन्न २ महल, मणि बद्ध सरोवर, वेदिकादि से चारों तरफ शोभित हैं ॥५३॥

कादम्बाः सारसा हंशाः क्रीडन्ति युग्म युग्मतः ॥
मयूरीभिर्मयूराश्च नृत्यन्ति सुखिनस्सदा ॥५४॥

कल हंस, हंस, सारसादि पक्षी दो २ होकर खेलते हैं। मयूर मयूरी नृत्य करते हुए सदा सुखी रहते हैं ॥५४॥

उत्तरन्ति सरस्याश्च बहुवारिं विहङ्गमाः ॥
द्विरेफानां पंक्तयश्च गुञ्जन्ति मधु लुब्धकाः ॥५५॥

सरोवरों में बहुत रङ्ग के जल पक्षी तैरते हैं। कमलों पर भँवरों की पंक्तियाँ पराग के लोभ से गूँजती हैं ॥५५॥

नाना वितर्द्य स्तत्र नानारत्नै र्विनिर्म्मिताः ॥
क्रीडार्थे वनितानाञ्च विचित्ररचनान्विताः ॥५६॥

रङ्ग २ की वेदियाँ रङ्ग २ के रत्नों से निर्मित हैं जिन में स्त्रियों के खेलने की अनेक रचनाऐं बनी हुई हैं ॥५६॥

काचि न्निम्नो च्चका काचि दष्टास्रा चतुरस्रकाः ॥
षोडशास्त्रापि वृत्ता च जालभित्ति स्त्वकाञ्चना ॥५७॥

बहुत सी वेदिया ऊँची हैं; बहुत सी नीची हैं; कोई अष्ट कोण हैं; कोई चतुष्कोण हैं; कोई सोलह सीढ़ी वाली गोल हैं जिनकी भित्तियों में स्वर्ण सूत्रों की जालियाँ बनी हैं ॥५७॥

रथाकारा वृता कापि त्तोम युक्तापि काचन ॥
द्विखण्डापि त्रिखण्डापि चातुः खण्डापि काचनः ॥५८॥

तथा इसी प्रकार के कुञ्ज भी कोई रथाकार, कोई गोल कोई पीठस्थान (पृष्ठ स्थान) वाले भी दो खण्डे के तीन खण्डे के तथा चार खण्डे के स्वर्ण रचित कुञ्ज हैं ॥५८॥

एवं त्रिपञ्चशिखरा वातायन गवाक्षकाः ॥
मणिस्तम्भालि सद्दीप्ता द्वार तोरणभास्वका ॥५९॥

इसी प्रकार कोई तीन शिखर वाले कोई पाँच शिखर वाले छज्जा झरोखा तथा प्रकाशमान मणि स्तम्भावली और द्वार, अपने प्रकाश से प्रकाशमान तोरण वाले हैं ॥५९॥

प्रतिमाभिः परिवृता स्त्री पुंशा मृगपक्षिणाम् ॥
वैद्रुमा मौक्तिका काचि त्काचिन्माणिक्य काञ्चना ॥६०॥

किसी कुञ्ज में स्त्री पुरुषों को प्रतिमाऐं, मृग पक्षियों की प्रतिमाऐं बनी हैं। ये सब कोई विद्रुम मणि की कोई मुक्ताओं की, कोई मणियों की, कोई स्वर्ण की प्रतिमाऐं हैं ॥६०॥

काचिन्मारकतापिस्या त्काचित्स्फाटिक निर्म्मिता ॥
काचित्परिस्कृता नाना मणिचित्रैश्च शोभित ॥६१॥

कोई मर्कत मणि की, कोई स्फटिक मणि की, कोई पचरङ्गा मणियों की चित्र विचित्र कुञ्जें, कुञ्जों, के अनुकूल प्रतिमाएँ शोभित हैं ॥६१॥

काचिल्लताभ्यन्तरा च घन पादप सम्भृता ॥
जलमध्यान्तरा काचि त्काचित्तु जलजन्त्रिका । ६२॥

कोई कुञ्जें सघन लता और वृक्षों से घिरी हुई हैं; कोई कुञ्जें जल के भीतर हैं; कोई कुंजें जल जंत्रों के द्वारा फुहाराओं से घिरी हुई हैं ॥६२॥

काचित्त भ्रामण व्यूहा द्वारैक रुद्ध द्वारिकाः ॥
काचिद्वाद्यान्तरा सातु सम्पर्का नाद कारिणी ॥६३॥

कोई कुञ्जें भ्रमात्मक व्यूहाकार बने हुए हैं। किसी एक दरवाजे के बन्द करने से सब दरवाजे बन्द होते हैं। कोई गर्भित बाजा, वाली कुञ्जें स्पर्श मात्र से ही विविध सङ्गीत का नाद करने लगती हैं ॥६३॥

कुत्र चिद्दीर्घिकानिम्ना गृहपंक्तिभिरावृताः ॥
त्रिकोणा चाष्ट कोणापि चतुरस्रा षडस्रका ।६४॥

कोई कुञ्जें चारों तरफ महलों से घिरी सरोवर वाली है। कोई कुञ्जें त्रिकोण अष्टकोण, चौकोण, षटकोण आकार वाली हैं।६४॥

प्रफुल्ल कञ्ज पर्याप्ता हंश सारस संयुता ॥
प्रतिध्वानैस्तु नृत्यद्भिर्मयूरै श्चाति शोभिता ।६५॥

इसी प्रकार की कुञ्जों के भीतर तालाव भी हैं जिनमें पर्याप्त कमल खिले हुए, हंस सारसादिकों का कल्लोल और मयूरों के नृत्य शोभित हो रहे हैं। ६५॥

वाप्यागारोर्ध्व गारेषु तत्र तस्य विलासिनः ॥
विलासाय प्रिया सार्द्ध मस्ति सर्वोपकार्य्यकम् ॥६६॥

बहुत से महल बावड़ी के अन्दर हैं; बहुत से महलों में बावड़ियाँ हैं। इन महलों में विलासियों के योग्य सब प्रकार की सामग्री तैयार है ॥६६॥

प्राकारेत्र त्रितीयेपि स्वर्णमाणिक्य संस्कृते ॥
पूर्वोक्त वन्मार्ग कक्ष्या श्चतुर्दिक्षु परिस्कृताः। ६७॥

यहाँ तक दूसरे आवरण का वर्णन हुआ अब तीसरे आवरण का वर्णन करती हूँ तीसरे आवरण में भी स्वर्ण, मणि, माणिक्यों से रचना किए हुए द्वितीय आवरणकी तरहसे ही सब रचनाऐं आवरण की चारों दिशाओं में सुन्दर सुसज्जित हैं ॥६७॥

अथ प्राकारान्तराले सन्तिकक्ष्याः प्रविस्तराः ॥
वस्त्वामीधास्त्वनन्ता श्च वीभक्ताः प्रती संस्कृताः॥६८॥

एक आवरण और दूसरे आवरण के बीच का जो अन्तराल है वह भी विस्तार से वस्तुओं के भेद से नाम वाला अलग २ अनन्त रूप से सुन्दर सुसज्जित हैं॥६८॥

रसगृहा श्चान्न गृहा वेषवार गृहा अपि ॥
सिद्ध पाक गृहा स्तेतुमच्च भोजन पायसाः ॥६६॥

कहीं रस के महल, कहीं अन्न के महल, कहीं मसाले के महल कहीं सिद्ध अन्न (मिठाई आदि) के महल वे भी भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, पेयभेद से तथा दूध की भी मिठाइयों के इसी भेद से अलग अलग महल हैं ॥६६॥

करोति भोजनं यत्र स्त्रीभिः पुम्भिः समेदकाः ॥
सान्तरेणैव ते सन्ति समयोचित विस्तराः ॥७०॥

स्त्री पुरुषों के भेद पूर्वक भोजन के महल भी हैं। जो समय के अनुसार उचित विस्तार वाले अलग अलग हैं ॥७०॥

चतुर्भिधानां वस्त्राणां स्थूल सूक्ष्मेन भेदतः ॥
स्त्री पुंसामपि भेदेन नील पीतादि भेदतः ॥७१॥

[सूती, ऊनी, कृमि (कटिया) और मकड़ी (पाट) भेद से दो प्रकार के रेशम] इन चार भेद वाले वस्त्रों के इन में भी मोटे और महीन के भेद से तथा और स्त्री पुरुषों के भेद से तथा नील पितादिक रङ्गों के भेद से भी वस्त्रों के अलग २ महल हैं ॥७१॥

एवञ्चमत्कृताकारा रत्न रुक्म परि स्कृताः ॥
लक्ष्म निर्दिश्य संज्ञानां गृहाः सन्ति स्वनन्तराः ॥७२॥

इस प्रकार बड़े चमत्कार वाले रत्नों और सोने के बने हुए वस्तुओं के भेद से अलग २ नाम वाले ऐसे सुन्दर विस्तार वाले अनन्त महल हैं ॥७२॥

भूषणाना श्च गेहानि सन्ति सर्वाणि तत्र च ॥
यथोक्त भेद व्यक्तानि संस्कृतानि च तोरणैः ॥७३॥

सब प्रकार के भूषणों के भी महल हैं और जो महल जिस वस्तु के भेद से प्रसिद्ध हैं उसी प्रकार के आकार प्रकार से तोरण केतु कलशादिक रचना भी प्रसिद्ध है अर्थात प्रत्यक्ष है ॥७३॥

स्वर्णादीनाश्च धातूना मागाराणि पृथक् पृथक् ॥
कक्ष्याश्च पृथगेतेषां त्रिकद्वार चातुष्टया ॥७४॥

स्वर्ण आदि सब धातुओं के महल अलग २ हैं उन की गलियाँ और पृष्ठ भाग भी तथा दिशाओं में तीन मुख वाले फाटक भी अलग २ भेद से हैं ॥७४॥

मलयागरु कस्तूरी काश्मीरश्च चन्द्र संज्ञकम् ॥
यक्षकर्दममिश्र ञ्च एषां तत्र गृहाः शुभाः ॥७५॥

मलयागिरि चन्दन, कस्तूरी, केशर, कपूर, कंकोल आदि वस्तुओं से मिला हुआ कुम्कुम तथा अलग अलग वस्तुओं के भी अलग २ घर सुन्दर हैं ॥७५॥

स्वाङ्गरागा भिधा कदया नैपथ्यापि च नामतः ॥
एष न्तृतीय प्राकारम्वृत्तं ज्ञेयन्नृपात्मजे ॥७६॥

अङ्गराग के भेद से, शृङ्गार के भेद से अलग २ महल हैं। हे राजकन्यके ! इस प्रकार यह तुमको शत्रुघ्न जी के महल के तीसरे आवरण का भेद बताया ॥७६॥

इत्यन्त रन्त्वावरणे चतुर्थ्ये तच्छृणु प्रभे ॥
गोपुराणि चतुर्दिक्षुसन्त्युच्चक प्रकोष्टकैः ॥७७॥
पताका ध्वजसद्वृत्तैः कलशैः शोभितानि च ॥७८॥

अब इस के बाद चौथे आवरण का भेद सुनो। चारों दिशाओं में फाटकों के ऊपर जो गोपुर हैं वे बड़े ऊँचे हैं। ७७॥ ध्वजा पताका कलशादिकों से शोभित फाटकों पर ॥७८॥

प्रतिहारारुक्म दण्ड वेत्र दण्डधरा अपि ॥
भूषणैर्भूषिता दिव्यैः सौविदल्लाः समास्थिताः ॥७९॥

स्वर्ण दण्ड वेंतादिकों को हाथ में लिए हुए सुन्दर भूषणों से भूषित प्रतिहारी लोग तथा खवास (हजूरिया) लोगों से सुसज्जित इस आवरण के दिशाओं वाले फाटक हैं ॥७९॥

एकैक वर्णमणिभिः सर्वाङ्ग रचितानि वै ॥
चमत्कृतानि राजन्ते सभागाराणिसर्वतः ॥८०॥

इस आवरण में अलग २ रङ्ग के मणियों से सर्वाङ्ग रचित सुन्दर चमत्कार वाले सभा के महल चारों तरफ शोभित हैं ॥८०॥

पञ्चमावरणे त्वेवं वधूनामपि संस्कृताः ॥
शमागृहा दीप्तिमन्त; सर्वासामपि भेदतः ॥८१॥

इसी प्रकार पाँचवे आवरण में भी स्त्रियों के सुन्दर संस्कार वाले सभा महल प्रकाशमान हो रहे हैं ॥८१॥

षष्ठे च सप्तमे सन्ति राजपुत्रस्यवैभवाः ॥
गृहाः सन्ति प्रेयसीनां ज्येष्टायाः तस्य मध्यगाः ॥८२॥

छटवें और सातवे आवरण में राजपुत्र श्री शत्रुघ्न जी के सब प्रकार के वैभव सम्पत्ति के महल हैं। इन सातों आवरणों के बीच में श्री शत्रुघ्न जी की ज्येष्ठ पत्नी श्री श्रुतिकीर्ति जी के तथा आप की सखि अन्य प्रियाओं के भी महल हैं। ८२॥

मणिचित्रित सर्वाङ्गाः प्रतिमाभिः परिस्कृताः ॥
मुक्तानां तोरणैर्द्वार परमाद्भुत शोभनाः ॥८३॥

प्रत्येक महल मणियों से सर्वाङ्ग चित्र विचित्र प्रतिमाओं से रचित मुक्ताओं के तोरण सुन्दर द्वारों से परम अद्भुत शोभित हैं ॥८३॥

मणिस्तम्भालिका मापा पक्षीणां यत्र तत्र च ॥
पाठितानां पिंजरैश्चा वलम्बित विराजिता: ॥८४॥

मणियों की खम्भावलियाँ प्रत्येक दो खम्भों के बीच मद्राव में सुन्दर भाषाओं से बोलने वाले पक्षियों के पींजड़ा शोभित हैं ॥८४॥

खण्ड खण्डान्तरैर्भक्ता वितानारतर सद्वृता: ॥
अट्टारोहण निश्रेण्याः सर्वगेहेषु दर्शिताः ॥८५॥

इस प्रकार शत्रुघ्न जी का रनिवास खण्ड खण्डान्तरों मे अलग २ वितान चाँदनी पर्दादिकों से शोभित, छत में चढ़ने वाली सीढ़ीयादिकों से सुन्दर दर्शनीय हैं ॥८५॥

मञ्च पर्यंक पीठैश्च यत्र तत्र सुमण्डिताः ॥
उर्वस्याक्रान्त रूपाभिः दाशीभिश्च समावृताः ॥८६॥

प्रत्येक स्थानों पर पर्यङ्क सिंहासन, पीढ़ा, मञ्च सुन्दर रचनाओं से शोभित हैं। उर्वशी को कोका करने वाली सुन्दर रूपवती दासियाँ हर स्थानों में सेवा के लिए भीड़ की भीड़ तैयार हैं ॥८६॥

शोभन्ते कुत्रचिद्दास्यो भूषिता दिव्यभूषणैः ॥
अष्टापदेन क्रीडन्त्यो हसन्त्यश्च परस्पराः ॥८७॥

कहीं २ पर दिव्य भूषणों से भूषित दासियाँ हाथों में चौपड़ खेलने की सामग्रियों को लेकर परस्पर हँसती हुई शोभित हैं ॥८७॥

बहुशो कुत्र चिद्यूथैः क्रीडयन्त्यस्तु कन्दुकैः ॥
भूषणानां सञ्चितैश्च परस्पर प्रचारितैः ॥८८॥

कहीं २ पर बहुत सी दासियाँ झुण्ड के झुण्ड हाथों में गेंदों को लेकर खेलती हैं। उन के परस्पर भूषणों के झनकार से महल गुञ्जित (प्रतिध्वनित) हो रहे हैं ॥८८॥

तासां शब्दाः सखीनां तु ललिता रुचकैरपि ॥
महाविस्तर प्रासादा नतिक्रम्य दिशङ्गता: ॥८९॥

सखियों के परस्पर एक दूसरे के पुकारने में मीठे शब्दों की ऊँची आवाज से बड़े २ महलों को अतिक्रमण करके दिशाएँ भर गयी ॥८९॥

मन्दिरान्तर मास्थाय क्वचिद्गायन्ति वादनैः ॥
समयोचित रागांस्ताः तालस्वर समन्वितान् ॥९०

बहुत सी सखियाँ महलों के भीतर बाजाओं को बजाकर के समयोचित रागों से ताल स्वर संयुक्त गा रही हैं ॥९०॥

इत्थं दिव्य गृहा वल्यां सेव्यमानाः सुभूषितैः ॥
सपत्नीनां गणैः नित्यं रोषमत्सर वर्जितैः ॥६१॥

इस प्रकार दिव्य महलों की पंक्तियों के अन्दर सुन्दर भूषणों से भूषित स्त्रियों से अपनी बहुत सी पत्नियों के बीच श्री श्रुतिकीर्ति जी के सहित रोष व मात्सर्य आदिकों से रहित होकर श्री शत्रुघ्न जी सेवित हो रहे हैं ॥६१॥

कौशलेन्द्र कुमारस्य सत्रुघ्नस्य महीपतेः ॥
पत्नी प्रीति युता तस्मिन् न्सुव्रता गण भूषिता ॥६२॥

इस प्रकार चक्रवर्ती कौशलेन्द्र कुमार श्री शत्रुघ्न जी का पत्नियों के साथ प्रेम व्यवहार युक्त महल का वर्णन किया ॥६२॥

इति श्री शङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां
श्री अयोध्याख्याने श्री सत्रुघ्नभवन वर्णनो नामाष्टादश सर्गः ॥१८॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां
श्री अयोध्या ख्याने श्री शत्रुघ्न महल वर्णनो नाम अष्टादशः सर्गः ॥१८॥

अथातो दक्षिणे पूर्वे दिग्भागेसम विस्तरम् ॥
वनं चित्रघनं नाम वलितं दिव्य पादपैः ॥१॥

अब आगे दक्षिण पूर्व के कोण (अग्नि कोण) पर चित्रघन नामक वन का वर्णन करते हैं जो दिव्य लता वृक्षों से शोभित हैं ॥१॥

फलभार समाक्रान्त शाखाभिरानतैर्भुवि ॥
नानापुष्पलताभिस्तु नानावर्णैर्विराजितम् ॥२॥

जिस वन के वृक्ष फलों के बोझाओं से अत्यन्त व्यथित हैं । डालें पृथ्वी पर झुकी हुई हैं विविध प्रकार की लता कुञ्जें फूलों से लदी हुई हैं जोकि रङ्ग २ के प्रकाश से शोभित हैं ॥२॥

सुनादितं पक्षिसंघैः गुञ्जितं भ्रमरा कुलैः ॥
क्रीडमानं मृगयूथैः लास्यमानं मयूरकैः ॥३॥

जिस वन में पक्षियों के झुण्ड कल्लोल मचाए हुए हैं भ्रमरों की पंक्तियाँ (झुण्ड) गूँज रहीं हैं; मृगों के झुण्ड खेल रहे हैं; मोरों के झुंड विविध प्रकार की चेष्टाओं से नृत्य कर रहे हैं ॥३॥

कोकिलैर्गानकारश्च सितपुष्पैः हसन्निव ॥
भूषितं चापरैः पुष्पैः नील पीता रुणैः शुभैः ॥४॥

कोकिलाओं के झुन्ड गान कर रहे हैं । सफेद पुष्पों के झुन्ड मानो वन रूपी नायिका हँस रही है । नील पीत लाल सफेद रङ्ग के फूल मानो वन रूपी नायिका का शृङ्गार किए हुए हैं ॥४॥

चतुष्कूल रत्नवद्धं भ्रमरा कुल वारिजैः ॥
सुधास्वादु वारि पूर्णैं स्तड़ागैः स्मृद्धिमन्निव ॥५॥

सरोवरों के चारों घाट रत्न जटित हैं। कमलों के भुण्डों में भ्रमरों के भुण्ड गूँज रहे हैं। अमृत के स्वाद रूप जल से तालाब मानो धन से धनिक पुरुष के समान भरा हुआ है ॥५॥

गृह वस्तु निकुञ्जैश्च लताभिस्तु कलत्र वत् ॥
कुटुम्बव वज्जन्तु संघै वनं रम्यं विराजते ॥६॥

लता कुञ्जें मानो सुन्दर महल बने हों और अन्य लताऐं मानो उसके परिवार हों पशु मृग भँवरादिक वन के जन्तु मानो पुरजन परिजन हों। इस प्रकार चित्रघन वन रूपी महाराज अपनी प्रजा जनता से सुशोभित हैं ॥६॥

तद्वने राजतेनित्यंभरतो राघवानुजः ॥
वृत्तेतु सप्तावरणैः प्रासादैः परमाद्भुते ॥७॥

इस प्रकार के वन के बीच सात आवरण वाले परम अद्भुत महल में श्री भरत जी रहते हैं ॥७॥

त्रिकद्वार चतुष्कैश्च सर्वतो वीर रक्षितैः ॥
नानागारविधानैश्च वैभवानां यथोचितैः ॥८॥

प्रत्येक आवरण के चारों दिशा के फाटक तीन मुख वाले हैं जिनमें वीर लोग सुन्दर शृङ्गार किए हुए तथा आयुधों से सजे हुए रक्षा करते हैं। यथोचित वैभव सम्पत्ति से भरे विविध प्रकार के महल हैं ॥८॥

प्रथमावरणे पूर्वे भागे सन्तिगृहोच्चकाः ॥
विराजन्ते तत्र तस्य नागाः सर्वे नगोच्चकाः ॥९॥

अब सबसे बाहर वाले एक आवरण के पूर्व भाग से वर्णन करते हैं कहाँ बड़े २ ऊँचे २ महल हैं उनमें पर्वतों के समान ऊँचे हाथी निवास करते हैं ॥९॥

कज्जलाद्रि निभा केचि त्केचि द्धिमाद्रि सन्निभाः ॥
चतुर्दिश्या विभागेन कण्ठपाद विभूषिताः ॥१०॥

उन हाथियों में कोई कज्जल के पर्वत के समान और कोई हिमालय के समान हैं। चारों दिशाओं के विभाग भेद से अलग २ जाति वाले हाथी कंठ पाद पीठादि अंगों में मणिमय भूषणों से भूषित हैं ॥१०॥

तथात्र पश्चिमे खण्डे मण्डिताः बहुवर्णकाः ॥
तुरङ्गाहि मनोवेगा स्तुर्य्यघोषा श्चमत्कृताः ॥११॥

उसी आवरण के पश्चिम खंड में बहुत रङ्ग के सुन्दर भूषित, मन के वेग से चलने वाले घोड़े रहते हैं जो तूरी आदि बाजाओं को सुनकर चौंक पड़ते हैं ॥११॥

नृत्यङ्करायत पृष्टा बद्धाः काञ्चन शृङ्खलैः ॥
रथ्यानां सङ्घतैर्भिन्नाः सम वर्णैश्च संघताः ॥ १२॥

चौड़े पीठ वाले कमर में शृङ्खला पहने हुए अपनी किङ्किनिओं के ताल पूर्वक नृत्य करने लगते हैं। गलियों में चलने वालों को बचाकर झुण्ड के झुण्ड समान चाल से समान रङ्ग में झुण्ड के झुण्ड चलते हैं ॥१२॥

उत्तरे महिषी गावो यदिच्छित पयः श्रवाः ॥
विभूषिताः पादकण्ठै श्चचामीकर विभूषणैः ॥ १३॥

इसी आवरण के उत्तर खण्ड में इच्छित दूध देने वाले पाद कण्ठ पीठादि में सुन्दर भूषणों से सजे भैंस गौ रहती हैं ॥१३॥

वत्सकैर्भू षितैर्यु क्ता सेविता बहुभिर्जनैः ॥
समवर्णैः कृत यूथाः बद्धाः काञ्चन शृङ्खलैः ॥१४॥

जिन के सुन्दर भूषित बछड़े हैं; विविध प्रकार के भूषणों से सजे नौकर सेवा करते हैं। एक २ जाति को भैंस एक २ जाति को गाय अलग २ झुन्ड से स्वर्ण-जंजीरों से बँधी हैं ॥१४॥

तत्रैवोत्तर कक्ष्यायांहिमाद्रेः पाद सन्निभाः ॥
सुलक्षणा श्चातिबला लिप्तकाञ्चन शृङ्गकाः ॥१५॥

इसके और उत्तर खन्ड में हिमालय पर्वत के समान ऊँचे शरीर वाले सुन्दर सुलक्षण अति बलवान स्वर्ण शृङ्खलाओं से बँधे बैल रहते हैं ॥१५॥

केचि त्केचि त्खचि च्छृङ्गाः रूप्यशृङ्गाश्च केचन ॥
वृषभांस्तस्य राजयन्ते सेव्यमानाः प्रवीणकैः ॥१६॥

उन में किसी के सींग मणि जड़ित हैं किसी के स्वर्ण रङ्ग के हैं किसी के चांदी के रङ्ग से जटित हैं। बड़े चतुर सेवक लोग उनकी सेवा करते हैं ॥१६॥

अनश्वोष्ट्रामहिषाश्च ह्यत्यन्त भार वाहकाः ॥
वन्याघोरा पादः पश्चान्ये मृगाश्च गवयादयः ॥१७॥

खच्चर, भैंसा आदि जो बड़े २ बोझाओं को ढोने वाले तथा वन घोड़ा, पिछले पाँव वाले मृगा और भी बहुत से भार वाही पशु ॥१७॥

क्रीडार्था: पक्षिण स्सर्वे भिन्नभिन्नाः समाश्रयः ॥
तेषाञ्च रक्षकानां हि तदावरणकेगृहा ॥१८॥

खेलने के मृग और पक्षी जो भिन्न जाति वाले भिन्न चाल स चलते हैं। ये सब के रक्षा करने वाले नौकर—इन सबके महल इसी बाहरी प्रथम आवरण के उत्तर खण्ड में हैं॥१८॥

अथास्य दक्षिणेभागे प्राकारस्याद्यकक्षतु ॥
खचिद्रत्न रथा वाह्या गजैः केचिद्धयैस्तथा ॥१९॥

अब इसी प्रथम आवरण के दक्षिण भाग में रत्नों से खचित रथ तथा रथ वाले हाथी, रथ वाले घोड़ ॥१९॥

वहुशश्च विमानानि नरवाह्यानि शिल्पिभिः ॥
रचितानि मणीभिश्च निपुणैर्बहुचित्रकैः ॥२०॥

तथा और भी बहुत से विमान, पालकियां जिनमें शिल्पियों ने चतुरता पूर्वक मणियों की चित्रकारियां कर रक्खी हैं॥२०॥

उपवनान्यपि चित्राणि नानारत्नाञ्चितानि च ॥
गजवाह्यविमानानि तथाश्वैर्बाह्यकानिच ॥२१॥

उन सवारियों के रखने के महलों में भी वन, उपवन, चित्र विचित्र भूमि की रत्नमय रचनायें हैं जहां हाथो घोड़ा विमानादिक सवारियां हैं ॥२१॥

एषाञ्च सज्जनाभूषा भूषणानि सुरत्नकैः ॥
खचितानि विराजद्भिः स्वर्ण सूत्रांशुकानिच ॥२२॥

इन सबकी रक्षा करने वाले सज्जन सुन्दर रत्नमयी रत्नों से भूषित हैं स्वर्ण सूत्रों से बने हुए वस्त्रों को पहने हैं ॥२२॥

एवमेषां संग्रहाणां रत्नतोरण सत्कृताः ॥
रत्न स्तम्भालिकाभास्वद्गृहाः सन्ति सुपङ्क्तितः॥२३॥

इन सब सामग्री संग्रहों के रहने के लिए वने हुए जो महलों की पंक्तियां हैं वे रत्नमयी तोरण और रत्नमयी खम्भा वलियों से प्रकाशमान हो रहे हैं॥२३॥

ततो द्वितीय प्राकारे चतुर्दिक्षु बिभागतः ॥
वनानि प्रमदानांस्यु मण्डितानि बहुद्रुमैः ॥२४॥

अब दूसरे आवरण की चारों दिशाओं वाले विभागों का वर्णन करते हैं जिस आवरण में मणिमण्डित वेदी बहुत प्रकार के वृक्षों से शोभित प्रमदाओं के विलास वने हैं॥२४॥

तत्र वृक्ष्या विराजन्ते रुक्म मूलक वेदिनः ॥
सर्वर्तु फलिन स्तेषां प्रकाण्डाः स्वर्ण वर्णकाः॥२५॥

उन वनों में स्वर्ण की वेदिओं के ऊपर स्वर्ण मूलक वृक्ष सब ऋतुओं में फल देने वाले स्वर्ण रङ्ग की ढालों वाले हैं ॥२५॥

केचिन्नीलप्रकाण्डाश्च वृक्षा हरित्प्रकाण्डकाः ॥
बहुवर्णै स्तथापर्णैः फलैश्चापि लसन्तिते ॥२६॥

कोई वृक्ष नील डाल के, कोई हरित डाल के आदि प्रकार से बहुत डाली वाले तथा बहुत वरण के पत्ता, फूल, फल वाले हैं॥२६॥

तेषां वितर्दयश्चापि बहुवर्णै श्चमत्कृतैः ॥
खचिता मणिभिस्तत्र प्रकाशन्ते दिशोदश ॥२७॥

उन वृक्षों की वेदियां भी बहुत रङ्ग की चमत्कार वालों मणि खचित दशों दिशाओंको प्रकाशित करती हैं॥२७॥

गुल्मानामालवालाश्च बहुभिर्मणिभिः कृताः ॥
क्रमेणपंक्तिभिस्सर्वे शोभन्ते च मनोहराः ॥२८॥

वृक्ष और उनके थाला भी बहुत रङ्ग के मणि जड़ित पंक्ति के पंक्ति रङ्ग रङ्ग के मन हरने वाले हैं ॥२८॥

स्वर्ण दण्डैश्च रचिताः लतानां बहु मण्डपाः ॥
अतीव रमणीयास्ते रत्नजाल गृहा यथा ॥२९॥

स्वर्ण दण्ड वाले लताओं के मण्डप बहुत ही रमणीय प्रिय लगते हैं मानों रत्नों की जालों से बने घर हों ॥२९॥

पक्षिणो बहुजातीयाः स्वनन्ति मधुरस्वनम् ॥
मृगा क्रीडन्ति बहुशो भूषिताः स्वर्णभूषणैः ॥३०॥

बहुत जाति के छोटे २ पक्षी मधुर स्वर से बोलते रहते हैं। छोटे २ मृग भी स्वर्ण भूषणों से भूषित उन मण्डपों में खेलते रहते हैं ॥३०॥

रन्तुन्तासां समास्थातुं प्रमदानां वितर्दयः ॥
विशाला विविधाकारा लसन्ति मणिसत्कृता ॥३१॥

उन मण्डपों के अन्दर प्रमदाओं के रमण करने की व बैठने की वेदियां विविध रङ्ग की बड़ी २ मणियों से खचित हैं ॥३१॥

काचिल्लतान्तरा रत्न–खचिता रुक्मवेदिका ॥
कुत्रचिद्वारि॰ मध्यस्था कुत्रचिज्जलजन्त्रकाः ॥३२॥

किसी लता कुञ्ज के अन्दर रुक्म (पीले रंग की) वेदिका है और किसी कुञ्ज के अन्दर जल के बीच वेदिका है किसी कुञ्ज के अन्दर फुआरों के अन्दर वेदिका है ॥३२॥

क्वचिन्मारकताः भूमिः काञ्चनी तत्र वेदिकाः ॥
वितर्दिका यत्र नीला काञ्चनी राजतेमही ॥३३॥

किसी कुञ्ज में मरकत मणिमय भूमि पर स्वर्ण रंग की वेदिका है। जहां नीलमणिकी वेदिका है वहां स्वर्णमयी भूमि है ॥३३॥

इत्थमञ्चितवर्णानाम्मणिभिश्चित्रिता मही ॥
मयूराश्च मयूर्यश्च नृत्यन्ति प्रतिविम्बिताः ॥३४॥

इस प्रकार रंग रंग की चित्र विचित्र भूमि में मयूर मयूरी नृत्य करते हैं उनके प्रतिबिम्ब जमीन के अन्दर खिलते है ॥३४॥

यत्र तत्र च शोभन्ते प्रतिमाः काञ्चनीवराः ॥
भूषणाम्बरसंयुक्ताः कलसूत्रेण चञ्चलाः ॥३५॥

जहां तहां स्वर्णमयी प्रतिमायें सुन्दर वस्त्र भूषणों को धारण की हुईं यन्त्र के धागों से चलती हैं ॥३५॥

बहुशः पक्षिणोपिस्युः कृत्तिमा कृत्तिमा मिथः ॥
क्रीडन्तो नोपलक्षन्ते कोवाऽकृत्तिम कृत्तिमः ॥३६॥

बहुत से पक्षियां वास्तविक सही और बहुत से पक्षियां कृत्रिम (बनावटी) आपस में खेलते हैं। देखने वालों को यह पहिचान में नहीं आ सकता कि कौन सही है कौन कृत्रिम है ॥३६॥

वापिका बहुश स्तत्र नानारत्नपरिस्कृताः ॥
सुधास्वादुजलैः पूर्णा जलजै रपि शोभिताः ।३७॥

नाना रत्नों से बनी हुई बहुत सी बावड़ियां भी अमृतमयी जल से भरी हुईं उन कुञ्जों के अन्दर शोभित हैं ॥३७॥

गुञ्जन्तिमधुपानेन मत्ता श्रेण्योस्तु रञ्जिताः ॥
सरोजरजसापीता रक्तामधुलिहाम्बराः ॥३८॥

जिनमें कमलों पर मधुपान से मतवाले भँवर गूँज रहे हैं। कमल के पराग से लथपथ भ्रमर लालादि रंग के हो रहे हैं ॥३८॥

तत्रान्तरगृहाः सन्ति चित्र तोरण सँस्कृता ॥
सुगन्धपानभोगैश्च पीठ पर्य्यङ्ककैर्युताः ॥३६॥

उस वन में कहीं पर गुप्त महल हैं जो तोरणादिक चित्र विचित्र रचनाओं से तथा सिंहासन पर्यंक. सुगन्ध पानादि भोग सम्पत्ति से सुशोभित हैं ॥३६॥

मणिभिर्बद्ध वीनाहाश्चित्रकैः रामुखाम्भसः ॥
विशाला बिसिनी युक्ता राजन्ते तत्र कूपकाः ॥४०॥

उन गुप्त महलों में मणियों से बद्ध किनारे चित्र विचित्र मुख वाले बड़े २ कुआं जिनमें कमलिनी खिली हुईं शोभित हैं ॥२०॥

तेषां रचनया रत्नै र्निपानानि सुवर्णकैः ॥
रचितानि बिराजन्ते पानाय मृगपक्षिणाम् ॥४१॥

उन कुओं के पास में स्वर्ण के रत्न रचित गड्ढे बने हैं जिनमें मृग पक्षियों के पीने के लिये जल भरा है ॥४१॥

वर्णैकजातिभिः पुष्पशाखिनां फल शाखिनाम् ॥
भिन्नाः कक्ष्याः बिराजन्ते सर्वेपि मध्य शद्मकाः ॥४२॥

एक ही रंग के जाई आदिक पुष्पों की लतायें तथा फलों के बृक्ष अलग २ आवरण करके शोभित हैं और इन सबके भीतर में भी महल बने हुये हैं ॥४२॥

तत्र सद्म सुकान्तानां भरतस्य महात्मनः ॥
मालाकार्य्यो रक्षणाय निवसन्ति विभूषिताः ॥४३॥

उन स्थानों में महात्मा श्रीभरत जी के सुन्दर पत्नियों के महल हैं जिनमें रक्षा करने वाली सुन्दर भूषणों से भूषिता फूलों की माला बनाने वाली दासियां निवास करती हैं ॥४३॥

प्रतिहार्य्यः प्रति द्वारं प्रतिष्ठन्ति वहिस्तथा ॥
कुत्रचित्पुष्प कक्ष्यासु स्थित्यै तासांतु मण्डपाः ॥४४॥

प्रत्येक द्वारों में बाहर की तरफ से प्रतिहारी का काम करने वाली स्त्रिया खड़ी रहती हैं। कहीं कही पर फूलों के लता कुञ्जों के आवरणों में उन स्त्रियों के बैठने के लिए मण्डप बने हैं ॥४४॥

क्रीडन्त्यस्तत्र शोभन्ते दास्यस्तासां विभूषिताः ॥
कन्दुकैः पासकैश्चापि संस्कृताः पुष्पभूषणैः ।४५॥

खेलती हुई उनकी दासियां भी सुन्दर वस्त्रभूषणों से भूषित हुई शोभित हैं। कोई हाथों खेलने के गेंद कोई चौपड़ के पासा लिए हुए पुष्प भूषणों से शोभित हैं ॥४५॥

गृहाभूम्यन्तरालाश्च निदाघतुँ सुखप्रदाः ॥
भोगैर्भोगोपकरणै स्तत्र शय्या सुगन्धिभिः ॥४६॥

पृथ्वी के अन्दर वाले महलों में गर्मी की ऋतुओं में बहुत सुख होता है जहाँ सब प्रकार के शय्या सुगन्धि आदिक भोग सामग्रियां तैयार रहती हैं ॥४६॥

जिह्म मार्गानि गेहानि भ्रममार्गगृहा स्तथा ॥
लसन्ति वहुसस्तत्र गुप्तमार्गगृहा अपिं ॥४७॥

उन महलों में जाने के लिए कहीं तो कुटिल (टेढ़े) मार्ग हैं और कहीं भ्रमकारक मार्ग हैं और कहीं बहुत से गुप्त घरों में गुप्त ही मार्ग हैं ॥४७॥

मणिचित्रित घट्टानि नीरागार युतानि च ॥
सरांसि तत्र राजन्ते राजहंशाश्रितान्यपि ॥४८॥

उन महलों के अन्दर जलों के भी सरोवर मणिमय चित्रित घाट वाले किनारों पर राजहंसों की पंक्तियां घूम रही हैं ॥४८॥

अम्बुजैराकुलाम्भोभिराकण्ठ पूरितानिच ॥
मध्यागारैः शोभनानि मत्स्यक्रीडान्वितानि च ।४९॥

उन सरोवरों में रङ्ग २ के खिले हुए कमल भरे हुए हैं। तालाब के मध्य महल शोभित हैं। कण्ठ पर्यन्त जल हेल करके जाया जा सकता है। अगल बगल में मछलियां खेल रही हैं ॥४९॥

कृत्रमा कलभास्तत्र क्रुडन्ति वारि मध्यगाः ॥
अग्राहित् मत्स्यका स्तु क्रीडन्तिजल कुकुटाः ।५०॥

कृत्रिम हाथी के बच्चे उस तालाब में खेल रहे हैं तथा जल कुक्कुट, मछलियां परस्पर खेलती हुई शोभित हैं ॥५०॥

वहुशोवर्णकै रम्भोगृहाणां मणिसत्कृताम् ॥
उच्च कुम्भ पताकानाम्भापते प्रतिविम्वितः ॥५१॥

बहुत जगह पर जल के अन्दर रङ्ग २ की मणियों के बने हुए महल हैं जिनमें ऊँचे कलश पताकादि जल में ऊपर से दीख रहे हैं ॥५१॥

मध्यागारन्तु क्रीडार्थैवधूनां तत्र चित्रकाः ॥
स्युः पाटीर कृता नावोगन्तु मागन्तु शोभनाः ॥५२॥

सरोवरों के बीच में जो चित्रित महल हैं उनमें स्त्रियों के खेलने के लिए सब इन्तजाम है। उन महलों में चन्दन की नावों से आना जाना होता है ॥५२॥

वधूना म्भरतस्यैवं क्रीडार्थो पवनानि तु ॥
सर्वासां हि विभागेन सन्ति प्राकारकेऽत्रच ॥५३॥

श्रीभरत जी की सब स्त्रियों के खेलने के लिए सुन्दर विभाग पूर्वक महल, उपवन वन सब इस आवरण में हैं ॥५३॥

अथ तृतीय प्राकारे भिन्नादिक्षु चतुर्ष्वपि ॥
गृहाः कक्ष्यान्तरा सन्तिस्यु कक्ष्या वस्तु संज्ञका। ५४॥

अब तीसरे आवरण में भी चारों दिशाओं में अलग २ खण्डों में प्रत्येक वस्तु के नाम से उनकी अलग २ गलियां हैं ॥५४॥

रसान्न वेशवाराणांगृहा दिग्भागपूर्वके ॥
भिन्नकक्ष्यान्तरा सन्तिपाक भोजनकास्तथा ॥५५॥
भिन्न कक्ष्यान्तराश्चात्र धातुसर्व गृहाअपि ॥
वस्त्रभूषण सौगन्ध्य गृहाः सन्ति प्रभेदतः ।.५६॥

दिशाओं के विभाग पूर्वक रसों के अन्नों के मसालाओं के महलों के भिन्न खण्ड हैं तथा भोजन के, रसोई घर के भी अलग २ महल हैं। इसी प्रकार सब प्रकार की धातुओं के घर भी इसी आवरण में अलग २ खण्ड से हैं। वैसे ही वस्त्र भूषणों के तथा सुगन्धि आदिकों के अलग २ महल हैं ॥५६-५७॥

चतुर्थावरणे तस्य नाना रत्नैः परिस्कृताः ॥
बिशालाश्चोच्छ्रिता कुम्भैः पताकाभिश्चशोभनाः ॥५७॥

अब चौथे आवरण में रङ्ग २ के रत्नों से बनाये हुए विशाल ऊँचे ध्वजा पताका कलशादिकों से शोभित महल हैं ॥५८॥

विस्तीर्णास्तर संयुक्ता स्तम्भावल्यऽभितोवृता ॥
मुक्तागुम्फ वितानाढया द्वारतोरण भास्वकाः ॥५८॥

जिनमें विशाल आँगन, चारों तरफ खम्भा वलियां, मुक्ताओं से गुम्फित वितान प्रकाशमान फाटकों पर तोरणों का प्रकाश छाया है ॥५८॥

वातायन गवाक्ष्यैश्च रत्नजालै विराजिताः ॥
प्रतिहारस्यभावेन काञ्चनप्रतिमाग्रकाः ॥५९॥

जिन महलों के छज्जे, झरोखे रत्नों के जालों से शोभित हैं फाटकों पर स्वर्णकी प्रतिमा प्रतिहारी के भाव से खड़ी हैं ॥५९॥

अवाद्यावादकै वाद्यध्वानकर्णाप्तकान्नृणाम् ॥
चत्वारोपि चतुर्दिक्षु लसन्चि च सभागृहाः ॥६०॥

बिना बाजाओं के भी बजने वाले वे महल मनुष्यों के कानों को तृप्त करते हैं। उन महलों में चारों दिशाओं में सभा महल शोभित है ॥६०॥

पंचमावरणेप्येवंविधादिक्षु चतुर्ष्वपि ॥
तत्कान्तानांच सर्वांषां पृथग् सन्ति शभागृहाः ॥६१॥

इसी प्रकार पांचवें आवरण में भी चारों दिशाओं में श्रीभरत जी की कान्ताओं के अलग २ महल तथा सभा घर है ॥६१।

अथातः सप्तमेषष्ठेगृहाः सन्ति रहस्यकाः ॥
विभागतः प्रियाणान्तु ज्येष्ठाया मध्यवर्ति च ॥६२॥

इसी प्रकार छटवे और सातवे आवरण में भी रहस्य विलास के महल है। मध्य भाग में ज्येष्ठ पत्नी श्री माण्डवी जी के तथा उनकी सखियों के सुन्दर विभाग पूर्वक महल है ॥६२॥

चित्रिताः सर्वलोकानां दर्शयन्तो यथास्थितिम् ॥
निपुणैश्चित्रकारैस्तु टङ्क कारैश्च मूर्तिभिः ॥६३॥

उन महलों में चतुर चित्रकारों ने तथा मूर्तिकारों ने सम्पूर्ण लोकों के चित्रों को सुन्दर यथा स्थिति से चित्रित करके दिखाया है ॥६३॥

स्वर्णसूत्रांशुका कारैर्वासांशि निर्मितानि च ॥
नाना सुकृत चित्राणि मनोनेत्र हराणि च ॥६४॥

स्वर्ण सूत्रों के वस्त्रों को बनाने वालों ने वस्त्रों में विविध प्रकार के चित्रों का निर्माण किया है जो मन और नेत्रों को हरण करने वाले हैं ॥६४॥

तद्वाससामास्तरणै र्विमानै रपिधानकैः ॥
तेप्रियाणां गृहास्तस्य दीप्यन्तेमणि निर्मिताः ॥६५॥
प्रकाण सज्जितैर्गीतैरजस्त्रन्ते गृहाः शुभाः ॥
नृत्यन्त इव राजन्ते मारुता कम्पितध्वजाः ॥६६॥

इस प्रकार के वस्त्रों विछावन जिन महलों में बिछे हैं चाँदनी तनी हैं, परदे लगे हैं। इस प्रकार के देव-विमानों के सदृश महलों में विविध प्रकार की मणियों का प्रकाश छाया है ये सब महल श्रीभरत जी की प्रियाओं के हैं जिनमें सहज स्वभाव से संगीत का नाद एक रस हर समय नये २ रूप में निकलता रहता है हवा से हिलते हुए ध्वजा पताकाओं के द्वारा मानो महल नृत्य कर रहे हों ऐसा प्रतीत होता है ॥६५-६६॥

मध्यकुम्भैर्मौलिधरा अपरै रङ्ग भूपिताः ॥
रक्षकै र्वहुभिस्तेचालोचमानाः कुतुहलैः ॥६७॥

महल के मध्य जो कलश है मानो महल महाराज मुकुट पहने हों। अपर कलशादिक और मणि रचना मानो महल महाराज भूषण पहने हों। द्वारों पर रक्षा करने वाले द्वारपालों का आना जाना मानो महल महाराज के आगे कौतूहल हो रहा है ॥६७॥

इति श्री शङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्नमञ्जूषायां श्रीचक्रवर्ति रत्न चूड़ाम्मणि कुमारस्य श्रीभरतस्य मन्दिर वर्णनोनामैकोनविंससर्गः ॥१६॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वदिना कृता टीकायां श्रीभरतस्य मन्दिर वर्णनो नामैकोनविंशतिः सर्गः ॥१६॥

अथातः कौशलेन्द्रस्य भवनात्पश्चिमोत्तरे।
दिग्भागेपि वनं रम्यं चित्रशाखन्तु नामतः ॥ १ ॥

अब महाराज श्री कोसलेन्द्र दशरथ जी के महल के पश्चिम-उत्तर (वायु) कोंण पर चित्र शाख नामक बन है ॥१॥

निविरिण पादपैपुष्प फल पत्र समाञ्चितैः।
सर्वर्तु फलितैः छत्राकारैः पंक्ति समश्चितैः ॥ २ ॥

पुष्प, फल, पत्रों से लदे छत्राकार वृक्ष सब ऋतुओं में फल देने वाले सघन पंक्ति की पंक्ति शोभित हैं ॥२॥

गाङ्गेया महि सर्वत्र वने तत्र प्रकाशते।
क्वचित्क्वचित्तु खचिता नाना रत्नैश्च मौक्तिकैः॥ ३॥

उस बन में स्वर्णमयी भूमि चारों तरफ प्रकास कर रही है। कही कहीं पर मौक्तिक आदि प्रकार के रत्नों से खचित भूमि में चित्र बने हैं ॥३॥

स्वर्ण शृंङ्गा नील पीनाः हरिद्वर्णाश्च रक्तकाः।
केचित्केचिच्चित्र वर्णाः कण्ठपाद विभूषिताः॥ ४ ॥

उस वन में स्वर्ण से मढ़े सींग वाले कण्ठ, पादों से विभूषित नील, पीत, हरित लाल, कोई २ चित्रित वर्ण वाले मृगों के झुण्ड घूम रहे हैं ॥४॥

झणत्कारं बनान्तश्च कुर्वन्तो बहुशो मृगाः।
खेलन्तो विचरन्तीह वने दृष्टि मुद प्रदाः ॥ ५ ॥

बहुत से मृगाओं के झुण्ड वन में झंकार मचाते हुये दौड़ रहे हैं, कहीं पर खेलने के लिए धीरे से इधर उधर वन में विचर रहे हैं। देखने वालों के नेत्रों में आनन्द दे रहे हैं ॥५॥

मणिभि र्वद्ध घट्टानि सरोजा कुलितानि च।
सरांसि तत्र शोभन्ते तीरागार वृतानि च ॥ ६ ॥

कहीं पर सरोवरों पर किनारे पर महल भीतर में चारों तरफ मणिमय घाट, तालाव में बिविध प्रकार के कमल शोभित हो रहे हैं ॥६॥

अन्तरागार वर्त्यस्तु रत्न नीबाह संस्कृताः।
शिरः कुम्भेन भ्राजन्त्यो वापिकाः सन्ति तद्वने ॥७॥

उस बन में बावड़ियों के अन्दर महल बने हुये हैं और वापिकाओं के ऊपर किनारे मणिमय घाट बँधे हुये हैं। शिरों में कलश शोभित हैं ॥७॥

सनिपानोदपानानि चित्र वीनाहकानि च ।
आमुखाम्भासि राजन्ते तत्र कृत्तिम के वने ॥ ८॥

पास में जल भरने के हौदा के सहित कुआं भी चित्रित किनारे वाले सुन्दर प्रकाशमान शोभित हैं। जहाँ तहाँ वन में कृत्रिम रचनाऐं भी बहुत प्रकार की हैं॥८॥

अहिंसकाः पालिताश्चभूषिताः पाद शृङ्गकैः ।
खङ्गिनोपि वराहाश्च बहुशो व्याघ्र सैरिभाः ॥ ९ ॥

तथा उस वन में सुन्दर भूषित चरण, सींग, कण्ठ वाले गेंडा, सूअर, बाघ, भैंसा भी अहिंसा पूर्वक विचरते हैं ॥९॥

क्रीडन्ति गवयश्चान्ये वन्या नाना सुवर्णकाः ।
शाखामृगापि बहुशोऽरूणास्याः नीलकाननाः॥१०।

और भी नाना प्रकार के जंगली जानवर उस वन में खेलते हैं जैसे—लाल मुख वाले वन्दर, नील मुख वाले लंगूर ॥१०॥

वृत्त्याद्वृत्तम्ल्पवन्तश्च खादन्तोरसवत्फलं ।
परस्परं योधयन्तो वद्धयूथा लसन्ति ते ।११॥

एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर कूदते हुये रसीले फलों को खा रहे हैं। यूथ के यूथ परस्पर युद्ध भी करते हुए शोभित हैं ॥११॥

एवम्भूते लक्ष्मणस्य वने प्रासाद पंक्तयः ।
उच्च ध्वज पताकाभि श्शोभन्ते सप्तशालकाः॥१२।

इस प्रकार के लक्षण वाले वन में ऊँची ध्वजा पताकादिकों से शोभित सप्तावरण महलें शोभायमान हैं ॥१२॥

प्राकारस्तत्र प्रथमः स्फटिके र्निर्मितोच्चकः ।
त्रिकद्वार चतुष्कैश्च शोभते चित्र तोरणैः ॥१३॥

सब से बाहर वाले स्फटिक मणिका बना हुआ प्रथम आवरण बहुत ऊँचा है। चारों दिशाओं में तीन मुख वाले फाटक चित्र विचित्र तोरणों से शोभित हैं ॥१३॥

स्वर्णकुम्भैः परितश्च पताकाभिश्च वेष्टितः ।
कुशले र्व्यर्चिताभिश्च रुक्माचाभिः सुमण्डितः॥१४॥

स्वर्ण के कलशों से व पताकाओं से सजा हुए फाटकों पर बड़े कला कुशल कारीगरों ने स्वर्ण के रंग से सुन्दर चित्रों को बना कर फाटकों को भूषित किया है ॥१४॥

सर्वलोक दर्शितानि चित्राणितैः परिस्कृतः ।
चित्र जाल गवा क्षैश्च मण्डिताः सपिधानकैः॥१५॥

वे चित्र सम्पूर्ण लोकों के आकार प्रकार को दिखा रहे हैं। उन गोपुरों के छज्जे और झरोखे भी मणिमय चित्रित जालों से भूषित हैं। कोठाओं के अन्दर वितान परदे, बिछावन भी रङ्ग २ की जरी से चित्रित हैं॥१५॥



Scanned by CamScanner

विषय सूची

Scanned by CamScanner

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृ-लोक का दर्शन। द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४०१ ॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम। चतुष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम। पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४२६॥

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह। षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४४२॥

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज़ विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४६२ ॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत। अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६६ ॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति। एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४८२ ॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना। षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४६१॥

माणवक नगरीके राजा उद्धविक्रमकी कन्याओं से विवाह। एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ५०३॥

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह। द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ५१६ ॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जी की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये। फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये।

॥ इति शुभम् ॥





श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट - बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

❀ श्री अमर रामायण ❀

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❋ बन्दना ❋

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, मुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति विभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'वागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
बन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❀:—

Scanned by CamScanner



* श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः *

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

महाकपाट पिहितो दूरात्सन्दर्शितो जनैः ।
दिगन्त मूर्छितैर्नादैस्तूर्याणामपि नादितः ॥१६॥

उन फाटकों को बन्द करने के लिए महान किवाड़ रत्नों से जटित दूर से जनता को दीख पड़ते हैं उन फाटकों पर तूरी आदि बाजाओं के नाद दिशाओं को मूर्छित किए हुए हैं ॥१६॥

द्वारेषु रक्षितः काण्ड पृष्टैः सर्वाङ्ग भूषितैः ।
उपस्थितैः समावृत्तः कृत सख्यैः स शैन्यकैः ॥१७॥
देशान्तरीय राज्ञाश्च पुत्रै रूक्षित वाहनैः ।
मल्लानाञ्च नटादीनाँ कुतुका गन्तुकैरपि ॥१८॥

द्वारों के रक्षा करने वाली सेना सर्वाङ्ग से भूषित है। बाहर के आये हुए देशान्तरीय राजा लोग राजपुत्रलोग अपने वाहन, सेना पहलवान नटादि कौतुक पूर्वक सब उन फाटकों से सुरक्षित नगर में आते हैं ॥१७॥ ॥१८॥

प्राकारस्यान्तरालेस्य चतुर्दिक्षु विभागतः ।
गजानामश्वकानाञ्च चतुर्दिश्यादिशोभिनाम् ॥१९॥

इस प्रकार की लक्ष्मण जी के महल के बाहरी आवरण के अन्तराल में चारों दिशाओं में अलग २ खण्ड विभाग से अलग २ जाति के दिशा भेद से हाथी, घोड़े अत्यन्त शोभा पूर्वक निवास करते हैं ॥१९॥

वृषभानां गवाञ्चैव महिषीणां गृहोत्तमाः ।
शैरिभोष्ट्रानश्वकानां सर्वेस्युर्मणि चित्रिताः ॥२०॥

तथा बैल, गाय, भैंस, ऊँट, खच्चर घोड़े इन सबके भी उत्तम महल मणियों से चित्र विचित्र शोभित हैं ॥ २० ॥

वन्या क्रीडार्थं संगृह्या पक्षिणा पशवश्च ये ।
गृहाश्च तत्र वै तेषां रक्षकानां गृहान्विताः ॥२१॥

बन में होने वाले पशु पक्षियाँ भी जो खेलने के लिये लाए गए हैं उनके और उनके रक्षकों के घर भी उसी आवरण में शोभित हैं ॥२१॥

शिविकानांस्यन्दनानांगृहास्तोरण भूषिताः ।
गजै र्वा हय हयैश्चापि तेषां सन्ति विभागतः ॥२२॥

शिविका, पालकी, रथों के भी घर तोरणादिकों से भूषित हैं। गज रथ, हयरथों के भी महल उसी आवरण में विभाग पूर्वक है ॥२२॥

स्यन्दनाश्चेभ शिविका अमीषां रत्नकाञ्चनैः ।
निर्मितानि भूषणानि तथा घण्टादि सज्जनाः । २३ ।

गज-रथ, अश्व-रथ, शिविकादिकों में रत्नों की स्वर्णमयी जालियाँ बनी हैं। विविध प्रकार के भूषण तथा घन्टादिक सजे हैं ॥२३॥

Scanned by CamScanner

भिन्नभिन्नानि सर्वेषा मेषां सद्मानि तत्र च।
प्रथमावरणे त्वेवं राजपुत्रस्य सद्मनः ॥२४॥

इन सबके भी महल अलग २ राजपुत्र श्री लक्ष्मण जी के महल के प्रथमावरण में ही हैं ॥२४॥

लक्ष्मणस्याति विस्तारे पताकाध्वज संकुले।
भूषिताँगै रक्षकैश्च सम्बाधेऽसंख्य वैभवाः ॥२५॥

ये सब महल भूषित अङ्ग वाले द्वारपालों की भीड़ से सुरक्षित ध्वजा पताकादि सघन सजावट असंख्य वैभव से अति विस्तार से शोभित हैं ॥२५॥

द्वितीये सद्मनस्तस्य प्राकारेत्युच्च भित्तिके।
वनानि प्रमदानाश्च संकुलानि लताद्रुमैः ॥२६।

उस महल के दूसरे आवरण में अत्यन्त ऊँची भीति वाले परकोटा, प्रमदाओं के बन, लता वृक्षों के कुञ्जादिकों की सघनता छाई हुई है ॥२६॥

सर्वर्तु फल पुष्पाढ्यौ र्प्रफुल्लैर्बहु गुल्मकैः।
खचिद्रत्नालवालैश्च शोभितानि समन्ततः ।२७॥

सब ऋतुओं में पुष्प फलों से लदे नयी उम्र के वृक्ष रत्न खचित थाला वाले दशों दिशाओं से शोभित हैं ॥२७॥

तड़ाग वापिका कूपा मणिबद्ध तटा मुखाः।
मनिपानाश्च राजन्ते रुक्मार्चा गणमण्डिताः ॥२८॥

तालाब, बावड़ी, कुआँ सब मणिमय किनाराघाट बँधे हुए मुख वाले हैं कुओं के किनारे पानी के हौदा भी स्वर्ण रचित मणि चित्रित हैं ॥२८॥

वापिकाश्च जलं चित्र गृहास्तत्र मनोहराः।
तटेषु च काशाराणां गृहामध्येपि चित्रकाः ॥२९॥

बावड़ियों के भीतर चित्रित मनोहर महल तथा इसी प्रकार तालाबों के किनारे वाले महल और कहीं जल के भीतर वाले महल ये भीं सब चित्र विचित्र हैं ॥२९॥

तड़ाग वापिका तीरे नीरेपि जल कुक्कुटाः।
कादम्बा राजहंशाश्च क्रीडन्ति च नदन्ति च ।३०।

तालाबों में बावड़ियों में किनारों पर जल के बीच जल कुक्कुट, कलहंस, राजहंस, चकवा, चकवी आदिक खेलते हैं, बोलते हैं; चलते हैं ॥३०॥

गायन्ति कोकिला कापि नृत्यन्ति शिखिनःक्वचित्।
पठन्ति मिलिताः क्वापि कीराः नीलारूणादयः॥३१॥

कहीं पर कोकिला गा रहीं हैं; मयूर नृत्य कर रहे हैं; अरूण नीलादि रङ्ग भेद से तोता मैना-दिक मिलकर पढ़ रहे हैं ॥३१॥

Scanned by CamScanner

बृहद्द्रुमाणां सर्वेषां लशत्काञ्चन वेदिकाः ।
रसाल वकुलादीनां सुवर्ण स्कन्ध शोभिताम् ॥३२॥

बगीचाओं के किनारे २ बड़े २ वृक्षों के नीचे स्वर्ण की वेदिकाएं शोभित हैं। आम, मौलसिरी आदिक बड़े वृक्षों की डालें स्वर्ण मयी चमक से शोभित हैं ॥३२॥

कृत्तिमा वेदिकानान्तु प्रान्ते तासां मयूरकाः ।
हंशाः सुकाश्च शोभन्ते मणिभिवहुवर्णकैः ॥३३॥

वेदिकाओं के किनारों पर कृत्रिम मयूर नृत्य कर रहे हैं। हंस शुक शोभित हो रहे हैं वेदियाँ वहु रङ्ग की मणियों से बनी हुई सुन्दर शोभित हैं ॥३३॥

रन्तुं स्थातुं तु नारीणां विशालाश्च वितर्दयः।
लतानामन्तरे सन्ति चित्राचारू विचित्रकैः ॥३४॥

उन विशाल वेदिओं पर स्त्रियों के बैठने और रमण करने के लिये लताओं के वितान तने हैं जिनमें श्रेष्ठ चित्र विचित्र चित्रकारियाँ की हुई हैं ॥३४॥

जल जन्त्रान्तराद्यापि काश्चिद्वाद्यन्तरा अपि ।
कृत्तिमा स्त्रीगणां स्तत्र शोभन्ते दण्डहस्तकाः॥३५॥

जहाँ तहाँ जल के जंत्र फुआराऐं छोड़ते हूए किन्हीं वेदिओं को ढांके हुए हैं। वेदिओं में से संगीत की आवाज आ रही है कृत्रिम स्त्रियाऐं नृत्य करती हुई तथा कोई हाथ में डन्डा ली हुई पहरा करती हुई शोभित हैं ॥३५॥

अजस्त्रं तत्र क्रीडन्त्यः संजितैश्च स्त्रियो वराः।
तथामृदङ्ग स्वानङ्कैः पूरयन्ति दिशोदशः ॥३६॥

एक रस उन वेदिओं पर खेलती हुईं मृदङ्गादि वाजाओं को बजातीं हुईं दशों दिशाओं को आवाज से भर रही हैं ॥३६॥

इति श्रीशङ्करकृतै श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम
रत्नमञ्जूषायां श्रीलक्ष्मणभवन वर्णनो
नाम विंशतितमः सर्गः ॥२०॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्रीलक्ष्मण भवन
वर्णनों नाम विंशतितमः सर्गः ॥२०॥

अथास्य सन्ति प्राकारे सद्मन स्तृतिये गृहा ।
वस्तूनां हिविभागेन मणिचित्रैः सुशोभनाः ॥ १ ॥

अब श्रीलक्ष्मण जी के सप्तावरण महल के तीसरे आवरण का वर्णन करती हूँ। जिस महल में जो वस्तु रक्खी है उसी वस्तु के नाम पर वह महल मणिमय चित्र विचित्र शोभित हैं ॥१॥

Scanned by CamScanner

चतुर्विधानां वस्त्राणां वर्णैस्तेष्वपिभेदतः ।
तेषां स्युश्चैकतोदिव्या गृहा स्तोरण भास्वराः ॥२॥

सूती, ऊनी, मकड़ी, कृमि भेद से चार प्रकार के वस्त्रों के पहनने वालों की जाति भेद से अलग अलग महल दिव्य तोरण कलशादिकों से प्रकाशमान हैं ॥२॥

तथैकतो भूषणाना मागाराणि सुतोरणैः ।
भूषितानि विराजन्ते स्त्रीपुंसा मपिभेदतः ॥३॥

उसी तरह से भूषणों के भी महल स्त्री पुरुष भेद से ध्वजा पताकादिकों से भूषित हैं ॥३॥

तथैकतो मणीनाञ्च पृथक्सन्ति सुपंक्तितः ।
मुक्तादीनां गृहायत्र मणिस्तम्भैः सुचित्रिताः ॥४॥

उसी तरह से मणियों मुक्तादिकों के भेद से पंक्ति २ के भेद से महल मणिमय चित्रित खम्भावलियों से शोभित हैं ॥४॥

सिद्धानांश्चप्यसिद्धानां सर्वेषां ह्यत्र शोभनाः ।
ताम्रादीनाञ्च धातूना मध्यक्षयाः सम्बमन्तिच ॥।
तत्र तत्रैव सर्वेषां निपुणानुचरै युताः ।
भूषणांशुकभूषितास्ते सौन्दर्य गुणशालिनः ॥६॥

इसी प्रकार ताम्र आदि धातुओं के सिद्ध असिद्ध भेद से तथा उनके रक्षक अध्यक्षों के महल शोभित हैं। उन २ स्थानों में उन सबके अनुचर बड़े चतुर सुन्दर वस्त्राभूषणों से।और सौन्दर्यादिक गुणों से शोभित है ॥६॥

प्राकारेस्य चतुर्थे तु सन्ति सर्वान्नकागृहाः ।
पाकगृहापि तत्रैव वेशवाराभिधापि च ॥७॥

चौथे आवरण में सब महल सिद्ध असिद्ध भेद से अन्न के हैं। रसोई घर, मसाला घर और भोजन घर भी उसी आवरण में हैं ॥७॥

समारथाय च कूर्वन्तिभोजनं द्विविधाश्च ते ।
स्त्रियश्च पुरुषायत्र ब्राह्मणा भिक्षुका अपि ॥८॥

भोजन के महलों में स्त्री पुरुष भेद से, ब्राह्मण भिक्षुकादि भेद से दो दो प्रकार के भोजनों के अलग २ हैं ॥८॥

एवञ्चतुर्थ प्राकारेमणि चित्रित तोरणाः ।
पताक कलशै दिव्या गृहास्तज्जन शंकुलाः ॥९॥

इस प्रकार उस चौथे आवरण के हर एक महल मणियों से चित्रित तोरण, पताका, कलशादिकों से सुसज्जित सज्जन बृन्दों से भरे हुये दिव्य महल हैं ॥९॥

Scanned by CamScanner

प्राकारे पञ्चमेत्वस्य वितानपटभूषिताः ।
शोभनानि सभार्थाः स्युः गृहा विस्मय कारकाः ॥१०॥

पांचवे आवरण के महलों में वितान गलीचा, परदा आदि सजे हुये अति शोभित हैं। कोई महल सभा के हैं कोई विलास के हैं इस प्रकार सभी महल आश्चर्य चकित कर देने वाले हैं ॥१०॥

एवं षष्टे वधूनांहि सभार्थाः सद्गृहा अपि ।
तासां रहस्यार्थ गृहाः प्राकारे सप्तमे तथा ।११॥

इसी प्रकार छठवे आवरण में भी स्त्रियों के सभा महल तथा उनके विलास महल अति शोभित हैं ॥११॥

मञ्जीरध्वनिभिः पूर्णा अङ्गनानां कलस्वरैः ।
वीणा मृदङ्ग सहितैः रजस्रं ते सुधागृहाः ॥१२॥

इसी प्रकार सातवें आवरण में भी स्त्रियों के भूषण-झनकार, कोकिल कण्ठ, वीणा, मृदंगादि बाजाओं से एक रस अमृतमयी कल्लोल मचा है ॥१२॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्नमञ्जूषायाम्
श्रीलक्ष्मणभवनवर्णनोनाम एकत्रिंशः सर्गः ॥२१॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृत टीकायां लक्ष्मण भवन वर्णनो नाम एकविंशः सर्गः ॥२१॥

भवनात्कौशलेन्द्रस्य भागे सोत्तरपूर्वके ।
वनं श्रृङ्गारकं नाम सर्वतः शोभनं परम् ॥१॥

महाराज श्री कोसलेन्द्र दशरथ जी के महल के पूर्व उत्तर कोना (ईशान कोण) में श्रृङ्गारक नाम का परम शोभित वन है ॥१॥

फल पुष्प पलाशाढ्यैः द्रुमैः सर्वर्तु रम्यकम् ।
लतानां सुप्रतानैस्त स्कृतं कुञ्ज मनोहरम् ॥२॥

जिसमें फल पुष्पों से लदे पलासादिक ब्रृक्ष सब ऋतुओं में रमणीय शोभा देते हैं जहां तहां लताओं के वितान और कुञ्ज भी शोभित हैं ॥२॥

नानावर्णैः पुष्प गुल्मैश्चतु दिक्षु विराजितम् ।
भ्रमद् भ्रमरिकाभिस्तन्मधुरस्वर गुञ्जितम् ॥३॥

नाना रङ्ग के फूले हुये छोटे छोटे ब्रृक्ष चारों दिशाओं में शोभित हैं। मधुर स्वर से गुञ्जित भ्रमरिकाओं के झुण्ड चारों तरफ घूम रही हैं॥३॥

मयूरीभिर्मयूरै स्तन्नृत्यन्निव कलागणैः ।
पिकस्वनै र्गीयमानं मुनीनांहि मनोहरम् ॥४॥

जहां तहां मयूरियों के साथ मयूर नृत्य की कला से खड़े हैं। कोकिलाओं का कल्लोल मचा है। गाने वालियों के गाने से मुनियों का मन मोहित हो रहा है ॥४॥

Scanned by CamScanner

पठद्भिस्तु शुकैः किन्त दुद्गृणान्निव वैदिकम् ।
खेलद्भि मृग यूथैस्तु क्रीडमानं शुभायने ।५॥

सुग्गावों के झुण्ड पढ़ रहे हैं मानो वेदों को उगल रहे हैं । मृगियों के झुण्ड सुन्दर स्थानों में विलास कर रहे हैं ॥५॥

वहुशोन्ये पक्षिगणाः फलानिमधुराणिच ।
अदन्तो हि नदन्तस्ते निवसन्ति सुखंवनम् ॥६॥

और वहुत से पक्षी मधुर स्वादिष्ट फलों को खाते हुए सुखपूर्वक वन में निवास करके वन में कोलाहल मचाये हुये हैं ॥६॥

वाताः सुगन्धमादाय पुष्पाणा मति शीतलाः ।
प्रसरन्ति बने तस्मिन्मन्दं मन्दतरं सदा ॥७॥

वायु पुष्पों की सुगन्ध को लेकर के उस बन में शीतल होकर सब दिन मन्द गति से बहता है ॥७॥

तड़ाग वापिका कूपा मणिबद्धतटा मुखाः ।
शोभमाना तटा गारै हंश सारस क्रीडनैः ॥८॥

तालाव बावड़ी, कूपों के किनारे सब मणियों से बँधे हैं कहीं २ तालावों के किनारे महल वने हैं और भीतर सरोवर के तट पर हंस सारस खेल रहे हैं ॥८॥

क्रीडन्तीभिः सुन्दरी भिस्तद्वनं सुविशङ्कटम् ।
अन्तरे दीप्यमानंस्या द्वहि वीरैः सुरक्षितम् ।६॥

सब प्रकार के संकटों से रहित उस बन में सुन्दरियां (स्त्रियायें) खेलती हैं। इस प्रकार का वह वन भीतर में अत्यन्त प्रकाशमान और बाहर वीरों द्वारा सुरक्षित है ॥६॥

इत्थंभूते वने रम्ये जानकी रमण प्रभोः ।
भ्राजते भवनं रम्य मसंख्योच विशालकम् ॥१०॥

रमणीय बन में श्रीजानकी जी के रमण प्रभु श्रीराम जी का महान प्रकाशमान महल असंख्य योजन ऊँचा महान् विस्तार वाला है ॥१०॥

मणिभि श्चित्रितै स्सप्त प्राकारैश्च परिवृतम् ।
काञ्चनैः कलशैर्दिव्यैः ध्वजै द्दूरात्प्रदर्शितम् ॥११॥

मणियों से चित्र विचित्र सात परकोटायें बाहरी भाग में हैं। जो स्वर्ण के कलश ध्वजादिकों द्वारा दूर से दीख पड़ते हैं ॥११॥

तेतु सप्तैव प्रकाराः त्रिकद्वारोच्च गोपुरैः ।
शोभमानाश्चतुर्दिक्षु व्योम जाल गवाक्षकैः ॥१२॥

वे सातों आवरण चारों दिशाओं में तीन २ मुख वाले फाटक ऊँचे गोपुरों से शोभायमान छज्जा, झरोखादि मणि जालियों से अत्यन्त शोभायमान है ॥१२॥

Scanned by CamScanner

प्रथमस्य चतुर्दिक्षु प्राकारस्य महाभटैः ।
रक्षितानि गोपुराणि बहिस्तो द्वितयस्यतु ॥१३॥

उस कनकभवन के बाहरी वाले प्रथम आवरण का वर्णन करते हैं जिसके फाटक की बाहर से दोनों तरफ वीर लोग रक्षा कर रहे हैं ॥१३॥

ततोऽभ्यन्तरतस्सर्वं सौविदल्लैर्विभूषितैः ।
दासीभिरूपशीलाभिः पुम्वेषाभि स्सुरक्षितम् ॥१४॥

और भीतरी तरफ से हाथ में छड़ी लिए हुए पहरेदार सुन्दर वस्त्राभूषणों से भूषित रूप गुण शीलादि सम्पन्न दासियां पुरुष भेष में रक्षा कर रही हैं ॥१४॥

प्रसस्ताः कोटिशः सन्ति हयेभा रक्षिताः शतैः ।
जनैर्योग करैस्तेषां भूषिता रत्न भूषणैः ॥१५॥

तथा हाथी घोड़ा और उनके रक्षा करने वाले प्रशंसनीय सैकड़ों करोड़ रक्षक निवास करते हैं। उनके सहायक वस्त्राभूषणों से भूषित और भी बहुत हैं ॥१५॥

पंक्तितः प्रथमे तेषां गृहा प्राकार लग्नकाः ।
पाठकानां तथा तेषां पालकानां गृहाऽपि ॥१६॥

इन सबके रहने के लिए प्रथम आवरण में परकोटा से लगे हुए पंक्ति के पंक्ति महल हैं और उन हाथी घोड़ाओं के पढ़ाने वाले, पालने वालों के भी महल उसी में हैं ॥१६॥

स्यन्दनाः राजताः केचित्काञ्चनाः खचिताबहु ।
डयनानि विमानानि नानाकाराणि भास्वरैः ॥१७॥

तथा उसी आवरण में उन हाथी घोड़ाओं के जो रथ हैं वे कोई चांदी के हैं, कोई सोना के हैं, कोई बहुत प्रकार के मणियों से खचे हैं। इसी प्रकार शिविका, विमानादि भी नाना आकार प्रकार के प्रकाशमान हैं ॥१७॥

मणिभिः खचितान्येषां गृहाः प्राकारकेत्र च ।
अध्यक्षयानां तथा तेषां गृहाः सन्ति सुतोरणाः ॥१८॥

इन सबके रखने के महल भी इसी आवरण में इनके अध्यक्षों के रहने के घरों सहित हैं ॥१८॥

आपणा विपणा श्चात्र देशीयाश्चादिगन्तकाः ।
पृथक् पृथक् च सर्वेषां वस्तूना मट्ट हट्टका ॥१९॥

और इसी आवरण में देश देशान्तरों के व्यापारियों के बाजार भी हैं। प्रत्येक वस्तुओं के अलग २ हाट व अलग २ महल हैं ॥१९॥

विभागेन च सर्वेते संघता वस्तु हट्टकाः ।
विक्रेत्रीणां कारकाणां कला वस्तु विशेषिणाम् ॥२०॥

सभी वस्तुओं के हाट सुन्दर सघनता पूवक अलग २ हैं उन्हीं हाटों में उन वस्तुओं के बेचने वाले और पैदा करने वालों के भी उद्योग केन्द्र तथा निवास स्थान भी हैं ॥२०॥

Scanned by CamScanner

सद्मनः प्रथमे त्वेवं महाज्योति र्वृत्तस्यहि ।
प्राकारे रामभद्रस्य वृत्तं ज्ञेयं समृद्धिकम् ॥२१॥

महान् प्रकाश मण्डल से घिरा हुआ श्रीरामजी के महल का यह प्रथमावरण सब प्रकार के महान् ऐश्वर्य से परिपूर्ण है ऐसा जानना चाहिये ॥२१॥

अथास्य द्वितयेसन्ति प्राकारेति विशङ्कटे ।
शद्मनः रामचन्द्रस्य विविधाः पुष्पवाटिकाः ॥२२ ।

अब इसके बाद कनक भवन के दूसरे आवरण का सब प्रकार के संकटों से रहित विविध प्रकार की पुष्प-वाटिकाओं से संयुक्त श्रीरामचन्द्र जी के महलों को जानना चाहिये ॥२२॥

प्राकार लग्नकाः सन्ति तथाचोभयतो दिशम् ।
गृहावल्य स्तोरणादि भूषिताः कलशध्वजाः ॥२३॥

आवरण के दोनों भाग वाले परकोट ओं में सटे हुये महलों की पंक्ति तोरण, ध्वजा, कलशादिकों से भूषित हैं ॥२३॥

मध्ये मध्येगृहावल्यो द्रुमाः खर्व प्रकाण्डकाः ।
तैर्घनं बिपिनं रम्यं नानामिष्ट फलान्वितम् ॥२४॥

बीच वाले बगीचाओं में भी चारों तरफ बृक्षों की पंक्तियां फल पत्र पुष्पों से भरी शोभित हैं मध्य बागों में भी महलों की पंक्तियां हैं। इस प्रकार के बृक्ष और महलों से सघन वन नाना प्रकार के मीठे फल पुष्पों से अत्यन्त रमणीय हैं ॥२४॥

नालकेरि वनं द्राक्षा वनञ्चैव रसालकम् ।
कदलीवन मेवश्च नाम्ना बहुवनान्यपि ॥२५॥

किसी वन का नाम नालकेरि वन है, किसी का द्राक्षा वन, किसी का रसाल वन. किसी का कदली वन, इस प्रकार बहुत बनों के वस्तु भेद से नाना नाम हैं ॥२५॥

मध्ये तेषां वनानान्तु कूप वापी सरांसि च ।
विशाला वेदिकारम्या मणिभिः कृत चित्रकाः ॥२६॥

उन वनों के बीच २ कुआं बावड़ी, सरोवर, बड़ी २ रमणीय वेदियां, मणिमय कृत्रिम यन्त्र के चित्र हैं ॥२६॥

प्रफुल्ल पुष्प गुल्माना मालवालैश्च सङ्गताः ।
कुत्रचि त्कुञ्जगा वेदी सरसां मध्यशोभनाः ॥२७॥

खिले हुए नाना रङ्ग के फूलों के छोटे २ बृक्ष तथा उनके थाला पंक्ति के पंक्ति सुन्दर संगति से शोभित हैं। कहीं २ कुञ्जों के भीतर वेदी. कहीं २ सरोवरों के भीतर कुञ्ज शोभित हैं ॥२७॥

द्विजाश्च बहुवर्णाहि हंशाः पिक मयूरकाः ।
शुकाश्चसारसाः क्रौञ्चा श्चक्रवाक चकोरकाः ॥२८॥

हंस, कोकिला, मोर. सुक, सारस, क्रौंच, चकवा, चकवी, चकोर आदि बहुत जाति के पक्षी रङ्ग रङ्ग के शोभित हैं ॥२८॥

Scanned by CamScanner

तेतु युग्मैश्च युग्मैश्च क्रीडन्ति यत्र तत्र च ।
खादन्ति फल मिष्टानि स्वनन्ति मधुर स्वनम् ॥२६॥

वे सब पक्षी दो दो करके जहां तहां खेलते, स्वादिष्ट मीठे फल खाते हुये मधुर स्वर से बोल रहे हैं ॥२६॥

कञ्ज कोष गताः केचित्केचित्पुष्प लतास्थिताः ।
सर्वत्र परिगुञ्जन्ति कृतपानमधुव्रताः ॥३०॥

इसी प्रकार भ्रमर कोई कमल कोष में बैठे, कोई पुष्प लताओं में बैठे मधु पान करके सर्वत्र गूंज रहे है ॥३०॥

कुत्र चित्कृतयूथाश्च मृगिभिस्सहिता मृगाः ।
बहुवर्णाः स्वर्णशृङ्गाः कण्ठपाद विभूषिताः ॥३१॥

कहीं पर झुण्ड के झुण्ड मृगियों के सहित बहुत रङ्ग के बहुत जाति के मृग स्वर्ण के सींग मढ़े हुए, कण्ठ पाद भूषणों से भूषित हैं ॥३१॥

पूरयन्तो दिशस्तेतु पादकङ्कण झंकृतैः ।
कुर्दन्ति च प्रधावन्तः कान्ताभिश्च पलायिताः॥ ३२॥

वे मृगा मृगियों के झुण्ड कूदते हुये अपने चरणों के नूपुर किंकिणी झनकार से दशों दिशाओं को गुन्जित करते हुए स्त्रियों के द्वारा भगाये जाने पर कूद कर दौड़ते हैं ॥३२॥

गृहाश्च मणिवद्धानां वापीनां मध्यमण्डिताः ।
प्रतिध्वानैस्तु तत्रोत्थै नारीणां गान वाद्यतः ॥३३॥

उन वनों में वावड़ियों के अन्दर मणिमय महल शोभित हैं उन महलों में स्त्रियों के गाने बजाने की आवाज वावड़ियों से वाहर आकर दिशाओं में प्रतिध्वनित हो रही हैं ॥३३॥

धन शब्द भ्रमापन्नाः केकिनो तत्र तत्रच ।
नृत्यन्ति शब्दयन्तस्ते विदधुः कौतुकं परम् ॥३४॥

मोर इस शब्द को सुन कर मेघ गर्जन के भ्रम से जहां तहाँ बोलते हुये नृत्य करने लगते हैं इस प्रकार वे वावड़ियां महान् कौतुक का विस्तार कर रही हैं ॥३४॥

तड़ाग तटगेहानि मणिभिर्निर्मितानि च।
उच्चव्योम गवाक्षैश्च कलशैः शोभितानि च ॥३५॥

कहीं पर तालावों के किनारे २ जो मणिमय महल हैं उनकी ऊँची अटारी, छज्जा, झरोंखा, ऊँचे कलश शोभित हैं ॥३५॥

क्रोडन्तीनां हि रामस्य रमणीनां सुगायनैः ।
सुस्वरैः पूरिताः सर्वे गृहा वाद्यप्रघोषकैः ॥३६॥

उन महल और सरोवरों में श्रीरामजी की रमणीगण सुन्दर स्वर से गान करके अपने वाद्यादि संगीत घोष से दशों दिशाओं को भर रही हैं ॥३६॥

Scanned by CamScanner

अजस्रं रमते तत्र सुन्दरीणां गणे गणे ।
रामोपि वनिताशक्तः श्रीमान्सुन्दर विग्रहः ॥३७॥

इस प्रकार की उन स्त्रियों के झुण्डों के साथ सुन्दर विग्रह श्रीमान् राम जी एक रस उन वनिताओं में आसक्त होकर रमण करते हैं ॥३७॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीतारामरत्नमञ्जूषायां श्रीरामजानकीभवने वाटिकागार वापिकावर्णनो नाम द्वाविंशस्सर्गः ॥२२॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्रीरामजानकी भवने वाटिकागार वापिका वर्णनो नाम द्वाविंशः सर्गः समाप्तः ॥२२॥

शरोभिर्वापिका कूपै वाटिका च तयान्वितः ।
क्रीडा वस्त्वभिधा गारैर्युक्तः प्रासाद उच्यते ॥१॥

जिसमें सरोवर हों; वापिका, कूप हों, वाटिकाएं हों, खेलने के अलग २ नाम वाले छोटे-छोटे घर हों, ऐसे इनसे युक्त जो महल हो उसको प्रासाद कहते हैं ॥१॥

चतुर्दिक्ष्वप्युभयतः सन्मुखाश्च परस्परम् ।
श्रेण्यः प्रासादकानान्तु मिलितद्योम जालकाः ॥२॥

चारों दिशाओं में दोनों तरफ से सन्मुख परस्पर जो सीढ़ियां हों तथा छज्जाएं भं ॥२॥

एवं प्रासाद पंक्ति स्यात्पंक्तीनां लक्ष्य कोटिभिः
प्रासाद मण्डलञ्चैकं कलशध्वज मण्डितम् ॥३॥

सुन्दर जाली युक्त हों इस प्रकार के प्रासादों की लाइन हो उसे प्रासाद पंक्ति कहते हैं, इस प्रकार की प्रासादों की पंक्तियां लाख करोड़ हों तो उसको एक प्रासाद मण्डल कहा जाता है जो कि ध्वजा कलशादि से मण्डित हो ॥३॥

मण्डलानां परार्द्ध तु प्रासादखण्ड मुच्यते ।
तयोः खण्डान्तर मण्डलान्तरं त्वर्ध्वकेन वै ॥४॥

एक परार्द्ध मण्डलों को प्रासाद खण्ड कहा जाता है। खण्डान्तर और मण्डलान्तर इन दोनों के मेल को अर्द्धक कहा जाता है ॥४॥

मध्य स्थान पञ्च कुम्भं चतुर्द्वारं वशु गृहम् ।
प्राकार मिलितागारै वृत्तं द्वार चतुष्टयम् ॥५॥

अर्द्धक के बीच स्थान को पंच कुम्भ कहा जाता है जिसमें चार द्वार आठ महल होते हैं। परकोटाओं से मिले हुये जो महल होते हैं उनके मण्डल में चारों दिशा द्वार हों ॥५॥

एवं विधस्तु प्रासादो मण्डपोसौ प्रकीर्तितः ।
अगृहो यदि प्राकार स्तदा स्यादर्द्ध मण्डपम् । ६॥

इस विधि से जो प्रासाद हो उसको "मण्डप" कहते हैं। यदि परकोटा बिना महल के केवल गोल चार फाटक वाला हो तो उसे "अर्द्ध मण्डप" कहते हैं ॥६॥

Scanned by CamScanner

चतुर्दिक्षुश्चतुष्कद्वयं गोपुरोच्च प्रकोष्ठकैः।
संयुतं मण्डपं यत्तु शभागृह मितीर्यते ॥७॥

चारों दिशाओं के बगलों में ऊँचे गोपुर लम्बो प्रकोष्ठ वाले हों इनसे युक्त जो मण्डप हो उसको सभा गृह कहते हैं ॥७॥

स्यात्प्राकारश्चतुर्द्वार स्तद्बहिः प्रतिद्वारकम् ।
द्वे द्वे कक्षेतिहा वृत्या चतुर्दिक्ष्वपि स्वङ्गणम् ॥८॥

चार दरवाजे वाला परकोटा हो उसके बाहर में फिर और द्वार हों । इनके बीच तीन आवरण दो २ कक्ष (अन्तराल) हों और चारों दिशाओं में आंगन हों ॥८॥

चतुरस्त्रं वाशगृह पृष्ठगृहं द्विकोष्ठकम् ।
पक्ष गृहेऽपि द्वे तत्र द्वि सञ्चश्च प्रशालकम् ॥६॥

चार आवरण रहने के महल हों; दोनों बगलों में पृष्ठ (पीठ) घर हों और उनके दोनों बगलों में सहायक घर भी हों इस प्रकार के जो दो संचय हों उसको "प्रसालक" कहते हैं ॥६॥

तस्याग्रे चन्द्रकक्षयास्यात्ततो धस्त्वङ्गणम्भवेत् ।
आलिन्दापि चतुर्दिक्षु पृष्ठ गेहाग्रवाटिकाः ॥१०॥

उसके आगे एक आवरण हों; उसके नीचे के भाग आंगन हो; चारों दिशाओं में खम्भे भी हों; उसके पीठ वाले घरों के आगे वाटिका भी हो १०॥

उपरिष्ठा द्वाश गृहं द्विकोष्ठम्वात्रिकोष्ठकम् ।
भवेत्किम्वा सप्तकोष्ठमेवं स्यात्स्वस्तिकाख्यकम्॥११।

उसके ऊपर भाग में निवास का घर हो, वह चाहे दो कोठा वाला हो, चाहे तीन कोठा वाला हो अथवा सात कोठा वाला क्यों न हो इस प्रकार के महल को स्वस्तिक नाम से कहते हैं ॥११॥

स्थात्तदेव प्रतिदिशं प्राकारे चाष्ट द्वारकम् ।
नाम्नाहि सर्वतो भद्रं गर्भागारेष्ट कुम्भकम् ।१२।

इसी प्रकार के स्वस्तिक महल प्रत्येक दिशाओं में आठ द्वार वाले हों तो उसको "सर्वतोभद्र" नाम से कहते हैं । इसके गर्भ वाले महल में भी आठ कलस होते हैं ॥१२॥

स्यात्सर्वन्तूक्त विधिना प्रकारे चेकद्वार वत् ।
विच्छन्दकं गृहं नाम्ना विहितं विश्वकर्मणा ॥१३॥

पूर्व विधिओं से कहे हुये सब एक परकोटा के अन्दर एक सदृश द्वार वाले जो महल हों उनको विश्वकर्मा ने विच्छंदक नाम से कहा है ॥१३॥

प्राकारस्तुत्रिभिर्युक्तं पूर्वमुत्तर पश्चिमम् ।
क्रमेणैव च द्वाराणि नद्या वर्त्तन्तु तद्गृहम् ॥१४॥

यही यदि पूर्व उत्तर पश्चिम क्रमशः तीन पर कोटाओं से युक्त हो और इसी क्रम से उसके द्वार भी हों तो उसको नद्यावर्त गृह कहा जाता है ॥१४॥

Scanned by CamScanner

वर्तुलैसप्त प्राकारैर्युक्तं गर्भं गृहं भवेत् ।
सप्तकक्षं चतुर्दिक्षु नागकुण्डलकंहि तत् ॥१५॥

गोलाकार सात प्राकार हों, भीतर सात आवरण चारों दिशा गर्भ गृह भी हों तो उसको नाग कुण्डली भवन कहते हैं ॥१५॥

सप्तष्वावरणेष्वेवं गृहा रत्नैक निर्मिताः ।
पत्नीनां रामचन्द्रस्य ह्यशंख्यानामशंख्यकाः ।१६॥

इस प्रकार सातों आवरणों में रत्नों से निर्मित महल में जिनमें श्रीरामचन्द्र जी की असंख्य संख्यायैं स्त्रियाँ यें (पत्नियां) रहती हैं ॥१६॥

सन्त्येवं पट्टकान्ताया जानक्या रत्ननिर्मिताः ।
तासामभ्यन्तरा रत्नै श्चित्रिता बहु वर्णकैः ॥१७॥

इस प्रकार महापट्ट कान्ता श्री जानकी जी के रत्न निर्मित महान अन्तर वाले चित्र विचित्र बहुत रंग के ॥१७॥

ऋतुचिता गृहाः केचित्केचि त्तद्रूप कल्पकाः ।
निशा प्रदर्शकाः केचि त्केचिदिन प्रदर्शकाः ॥१८॥

ऋतु के अनुकूल और कोई ऋतु के अनुरूप महलों का वर्णन किया । ये महल कोई २ दिनमें रात को दिखाने वाले कोई रात में दिन को दिखाने वाले हैं ॥१८॥

क्रमेणैव शृणिवदानि सीताया वाश मन्दिरम् ।
तथा तस्याः सखीनाञ्च मुख्यानाञ्च यथोचितम् ॥१६॥

अब श्री जानकी जी के निवास मन्दिर का भी क्रमशः वर्णन करती हूँ सुनो । और उसीप्रकार श्री जानकी जी की मुख्य सखियों के महलों का भी यथोचित वर्णन करके सुनाती हूँ ॥१६॥

चारुशीला लक्ष्मणाच पद्मगन्धा सुलोचना ।
वरारोहापि क्षेमाच हेमापि शुभगा च ताः ॥२०॥

प्रधान सखी श्री चारुचीला, लक्ष्मणा, पद्मगन्धा, सुलोचना, वरारोहा, क्षेमा, हेमा, सुभगा ये आठ हैं ॥२०॥

सर्वासाम्प्रेरकाः विद्धि ह्येताः रामस्य सीतया ।
स्थापितराज कन्यानां पत्नीनां रूप विग्रहाः ॥२१॥

हे सुकान्ति ? श्रीसीतारामजी की समस्त सखियों में मुख्य ये आठ सबकी प्रेरणा करने वाली हैं ऐसा तुम समझो । समस्त राजकन्या श्रीराम जी की पत्नियोंमें प्रधानरूप और श्रीविग्रह वाली हैं।२१।

नित्याश्च नित्य मुक्ताश्च सिद्धान्शाः साध्यसम्भवाः ।
इति भेदद्वयं राम पत्नीषु राजकन्यके ॥२२॥

हे राजकन्यके ? श्री राम जी की पत्नियों में नित्य पार्षद नित्य मुक्त पार्षद ये दो भेद वाले सिद्धाङ्ग और साध्य सम्भव दो रूप से प्राप्त हुये हैं ॥२२॥

Scanned by CamScanner

चतुष्षष्टि कलाभिज्ञा विद्याश्चैव चतुर्दश ।
प्रवीणाः तासु सर्वास्ताः श्रीजानक्या प्रसादतः ॥२३॥

ये सब के सब चौसठ कलाओं के जानने वाली, चौदह विद्याओं को जानने वाली श्री जानकी जी के प्रसाद से सब महा चतुरी हैं ॥२३॥

सख्यश्चतुषष्टिका स्तु मुख्यास्तासांतु त्रिंशतिः ।
द्वेच तासां षोडशापि ह्यष्टौ तापांप्रकीर्तिताः ॥२४॥

अनन्त सखियों में से चौसठ यूथेश्वरी मुख्य हैं। उन चौसठमें भी ३२ यूथेश्वरी मुख्य हैं। उन बत्तीस में भी सोलह और सोलहो में भी ये श्रीचारुशीलादिक आठ मुख्य हैं ॥२४॥

परितो वेस्मन स्त्वाषां सद्मा न्युच्चतराणिच ।
श्रीजानक्या श्चतुर्वृत्या शोभन्ते कलशादिभिः ॥२५॥

श्री कनक भवन में एक आवरण के चारों तरफ इन आठ प्रधान सखियों के अति उच्चतर महल हैं जो श्री जानकी जी के महल के चारों तरफ ध्वजा, पताका, कलशादिकों से सुन्दर शोभितहैं॥२५॥

चतुष्षष्ठि मुख्यास्तासा मावाशामण्डलान्तरैः ।
द्वेचत्रिंशत्युनस्तासांप्रत्येक मण्डलेन च ॥२६॥

चौंसठ जो मुख्य सखी हैं उनके महलों का मण्डल मण्डल करके अलग २ अन्तर पूर्वक एक आवरण और इसी प्रकार फिर ३२ यूथेश्वरियों का दूसरा आवरण है ॥२६॥

खण्डान्तरेण प्रत्येकं षोडसानांप्रकीर्तिताः ।
अष्टौ तासां तु प्रासाद खण्डेन वसुतीः शुभाः ॥२७॥

और इसी तरह से १६ यूथेश्वरियों का खण्डान्तर भेद से तीसरे आवरण में १६ महल कहे गये हैं और उनके बाद आठ जो मुख्य (प्रधान) सखी कही गयी हैं उनके महल भी खण्ड भेद से चौथे आवरण में कहे गये हैं जिनमें ॥२७॥

मन्दिर श्चारुशीलायाः स्वस्तिकाख्यं रहस्यकं ।
विशालश्च क्रमोच्चश्च रत्न तोरण भूषितम् ॥२८॥

श्री चारुशीला जी का महल महान् रहस्य वाला स्वस्तिक भवन नाम से कहा जाता है जो क्रमशः अति विशाल रत्न, तोरण कलशादिकों से भूषित है ॥२८॥

वितान विस्तरै रंग्यंबहु वर्णांशुकावृतम् ।
वहुरत्नै र्निर्मिताभिः स्तम्भश्रेणि भिरन्तरे ॥२९॥

उस स्वस्तिक भवन में प्रत्येक खण्डों के अन्दर सुन्दर वितान, विछावन, परदादिक, वस्त्र बड़े ही रमणीय रङ्ग २ के जरी के बने हैं। भीतर में महान रत्नों से खचित खम्भों की पंक्तियां हैं ॥२९॥

महाप्रकाश संशोभं निशा तिमिर हारकम् ।
विधान जाल गुम्फैश्च मनो नेत्र हरं परम् ॥३०॥

जो महाप्रकाश से अति शोभित रात्रियों में भी अन्धकार को दूर करने वालीं, रत्न जालों सुन्दर विधान पूर्वक गुम्फित, मन और नेत्रों के हरने वाले परम सुन्दर हैं ॥३०॥

Scanned by CamScanner

गवाक्ष गोपुरै दीप्तं रत्न जालैश्चकासितम् ।
पताकाभिर्ध्वजै रुच्चैस्स्वर्ण कुम्भैश्च मण्डितम् ॥३१॥

ऊंचे २ गोपुर छज्जे झरोखे रत्नों की जालियों से प्रकाशमान, ऊँचे ध्वजा, पताका, स्वर्ण कलशादिकों से शोभित हैं ॥३१॥

शभा गारं विशालञ्च मुक्तादामविभूषितम् ।
स्वर्ण सूत्राञ्चितै र्वस्त्रैर्वितानैर्पारि शोभितम् ॥३२॥

उस वास्तविक भवन में जो सभा महल है वह अति विशाल मुक्ताओं की लरो से और स्वर्ण सूत्र-जालियों से भूषित है तथा वितान, बिछावन, परदे आदिक जरी के वस्त्रों से अति शोभित है ॥३२॥

नाना रत्नै र्निर्मितैश्च स्तम्भश्रेणि विभाषितम् ।
मुक्तागुम्फै स्तोरणैश्च रत्न जालैश्चकाशितम् ॥३३॥

और नाना रत्नों से निर्मित खम्भों की पंक्तियां प्रकाशमान हो रही हैं। मुक्ता हैं गुम्फित जिनमें ऐसे रत्नों के तोरण तथा रत्नों की जालियां प्रकाशमान हो रही हैं ॥३३॥

भूषासना भूषणादि संज्ञया वहुशो गृहाः ।
विभागैः शोभामानास्ते विशालाः परमोच्चकाः ॥३४॥

भूषणों के, वस्त्रों के सिंहासनोंके, भोजनके भेद से वहुत से महल सुन्दर विभाग पूर्वक विशाल परम उच्च शोभायमान हो रहे हैं ॥३४॥

अप्यष्टावस्या स्सचिवा गुणपंक्ति गुणालया ।
रूपराजी रूपशीला सौरभाङ्गी वरालका ॥३५॥

ये सर्वेश्वरी श्री चारुशीला जू के आठ मन्त्री हैं उनके नाम–गुणपंक्ति, गुणालया, रूप राजी, रूप शीला, सौरभाङ्गी, वरालका, रङ्गिका रसिका हैं ॥३५॥

रङ्गिका रसिका चे ति मुख्या रूप गुणै रपि ।
प्रासाद पंक्तय स्तासां परिणत्य लशन्ति च ॥३६॥

ये श्रीसर्वेश्वरी जू के ८ मुख्य मन्त्री रूप गुणों में भी मुख्या हैं। इन आठों के महल श्रीसर्वेश्वरी जी के महल के चारों तरफ मण्डलाकार शोभित हैं ॥३६॥

अथाग्वष्टासु मुख्याना मनुगा सुयथाक्रमम् ।
एकै कस्या अपि द्वे द्वे अग्र गे स्तः नृपात्मजे ॥३७॥

अव इन आठ मुख्य मन्त्रियों के अनुग (उपमन्त्री) भी उसी क्रम से एक २ के दो दो हैं जो वे भी अपने अनुयायियों में अग्रगण्या हैं ॥३७॥

उपकार्य्यं विधायिन्य एवं पष्ट्या वधिर्यथा ।
तासां तासां मन्दिराणि स्वस्वामिन्या निवासके ॥३८॥

इस प्रकार यह उपकार्यो का विधान करने वाली श्री सर्वेश्वरी जी के उन आठ प्रधान मन्त्रियों के बाद १६ उपमन्त्री ३२ अनुग उपमन्त्री ६४ सहायक मन्त्रियों के महल भी इसी क्रम से हैं जो अपने २ स्वामिनियों के निवास के सामने सेवा में अनुकूल हो सकती हैं ॥३८।

Scanned by CamScanner

अष्टौ षोडश द्वात्रिंश चतुष्षष्ट्यावधिर्यथा।
षोडसाना मपिज्ञेया सर्वाश्च गुण उत्तराः। ३६॥
द्वात्रिंशच्चतथातासांपूर्वानुक्रम भेदतः।
चतुष्षष्टि स्तथातासा मेवम्मुख्यगणाविदुः ॥४०॥

जिस प्रकार श्रीसर्वेश्वरी जी के आठ, सोलह, बत्तीस. चौंसठ इस क्रम से मन्त्री हैं उसी प्रकार सर्वेश्वरी जी के एक २ मन्त्री के आठ, सोलह. बत्तीस, चौंसठ क्रम से मन्त्री हैं। यह क्रम अष्ट प्रधान-मन्त्री. सोलह उप मन्त्री, बत्तीस अनुग मन्त्री, चौंसठ सहायक मन्त्री-इन सबके लिए हैं। इस प्रकार यह मुख्य सखियों का एक २ गण कहा जाता है ॥३६-४०॥

अष्टौषोडश द्वात्रिंश त्प्रत्येकं राजकन्यके।
सर्वा गुणाढ्या रूपाढ्याः श्रीजानक्याः प्रियंकराः ॥४१॥

हे राजकन्यके ! ये श्रीसर्वेश्वरी जू के आठ, सोलह, बत्तीस, चौंसठ के हिसाब से प्रत्येक मन्त्री सबके सब सर्वगुण सम्पन्न हैं, सबके सब रूप की खानि हैं, सबके सब श्रीजानकीजी का प्रिय करने (मुख ताकने) वाली हैं ॥४१॥

अथश्रीमल्लक्ष्मणाया अष्टौविन्दा गुणावली।
सुगन्धा मुदमाला च मोदनी प्राञ्जिका तथा ॥४२॥

इसी प्रकार श्रीलक्ष्मणाजी के भी आठ प्रधान मन्त्री हैं उनके नाम-विन्दा, गुणावली, सुगन्धा, मुदमाला, मोदनी, प्राञ्जिका ॥४२॥

अरविन्दा सांवरी च गुण रूप मनोहराः।
तथा च पद्मगन्धायाः वेद युग्म मिता विदुः ॥४३॥

अरविन्दा, साँवरी है। ये आठ गुण और रूप में भी मन को हरने वाली हैं। इसी प्रकार श्री किशोरी जी की मुख्य सखी श्री पद्मगन्धा जी की आठ मन्त्री हैं ॥४३॥

राजीवा राजहंसी च नीलाक्षी काञ्चिका तथा।
वीणावती रागमाला चन्द्रभा जिष्णुका किल ॥४४॥

उनके नाम राजीवा, राजहंसी, नीलाक्षी, काञ्चिका. वीणावती, रागमाला, चन्द्रभा, जिष्णुका है ॥४४॥

अथ सुलोचनायास्तु प्रज्ञा मेधा च माधवी।
सुशायिका शान्तिका च सुघोषा सन्धिवासिनी ॥४५॥

इसी प्रकार श्रीजानकी जी की मुख्य सखी श्रीसुलोचना जी के भी आठ मन्त्री हैं उनके नाम—प्रज्ञा, मेधा, माधवी, सुसायिका, शान्तिका, सुघोषा, सन्धिवासिनी ॥४५॥

सुभाला चाष्ट संख्याता श्चैताः सर्वगुणाधिकाः।
रूप यौवन शालिन्यो जानक्याः प्रिय वाञ्छिकाः ॥४६॥

सुभाला हैं। ये आठों सब प्रकार से रूप और गुणों में बढ़ी चढ़ी हैं। रूप और यौवन वाली श्रीजानकी जी का प्रिय (हित) चाहने वाली हैं ॥४६॥

Scanned by CamScanner

अथास्यु वेरारोहायाः प्रेमा प्राज्ञीचधीमती ।
मध्या सेवा प्रभा प्राचीरेवे त्यष्टौ गुणायताः ॥४७॥

इसी प्रकार श्रीजानकी जी की प्रधान सखी श्रीवरारोहा जी के आठ मन्त्री हैं उनके नाम-प्रेमा, प्राज्ञी, धीमती, मध्या, सेवा, प्रभा, प्राची, रेवा है। ये आठों सद्गुणों की खानि हैं ॥४७॥

श्रीक्षेमाया श्तथा चाष्टौ स्यामा सौभा शुभा जया।
विज्ञा चीरा चन्द्रिका च नेमी त्यष्टौ प्रवीणकाः ॥४८॥

इसी प्रकार श्रीजानकी जी की मुख्य सखी श्रीक्षेमा जी के भी आठ मन्त्री हैं। उनके नाम—श्यामा, सौभा, शुभा, जया, विज्ञा, चीरा, चन्द्रिका, नेमी है। ये आठों अति चतुरी हैं ॥४८॥

अञ्चिताची काञ्चनी च चन्द्रभा नवली स्वना।
मोदायता स्वम्बका च सुधायेत्यष्ट संख्यकाः ॥४९॥
श्रीहेमायाश्च लावण्या प्रीणा प्राशी गुणा सुधा।
कान्ती शान्ती प्रमे त्याद्याः शुभगायासमन्ततः ॥५०॥

इसी प्रकार श्रीजानकी जी की मुख्य सखी श्रीहेमाजी के आठ मन्त्री हैं उनके नाम-अञ्चिताची, काञ्चनी, चन्द्रभा, नबली, स्वना, मोदायता, सम्बका, सुधाया हैं। इसी प्रकार श्रीजानकी जी की मुख्य सखी श्रीसुभगा जी के आठ मन्त्री हैं उनके नाम-लावण्या, प्रीणा, प्रासी, गुणा, सुधा, कान्ति, शान्ति प्रमा-है ॥४९-५०॥

चतुरावर्णके स्वासां मन्दिराणि समन्ततः।
अन्वयेन यथायोग्यं निवसन्ति महत्तराः ॥५१॥

श्रीकनक भवन में श्रीजानकी जी के महल के अन्दर के बाहरी भाग चौथे आवरण में इन श्रीजानकी जी की प्रधान आठ सखियों के तथा इन प्रधान सखियों के मन्त्रियों के महल आवरण के तरफ क्रमशः यथा योग्य महान् वैभव पूर्ण हैं ॥५१॥

अथ श्रीमल्लक्ष्मणाया नद्यावर्तं सुमन्दिरम् ।
प्राकारैस्त्रिभिरावृत्तं लग्नागारैः विशालकैः ॥५२॥

जिस प्रकार सर्वेश्वरी श्रीचारुशीला जू का निवास स्थान स्वस्तिक भवन है उसी प्रकार प्रधान सखी श्रीलक्ष्मणा जी का नद्यावर्त मन्दिर है जो तीन परकोटाओं से घिरा है जिनमें सहायक महल बड़े बड़े ऊँचे हैं ॥५२॥

मन्दिरं पद्मगन्धाया राजपुत्रि तथाविधम्।
सुलोचनाया अप्येवं प्राकारैस्त्रिभिरावृतम् ॥५३॥

हे राजपुत्री ! इसी प्रकार प्रधान सखी श्रीपद्मगन्धा जी के महल का नाम भी नद्यावर्त मन्दिर है। इसी प्रकार प्रधान सखी श्रीसुलोचना जी के भी महल का नाम नद्यावर्त मन्दिर है जो तीन परकोटाओं से घिरा है ॥५३॥

Scanned by CamScanner

तथाच वरारोहाया सर्वतोभद्र मन्दिरम् ।
क्षेमाया मन्दिरं दिव्यं नागकुण्डलिकं शुभे ॥५४॥

इसी प्रकार प्रधान सखी श्री वरारोहा जी के महल का नाम सर्वतोभद्र मन्दिर है। हे शुभे इसी प्रकार प्रधान सखी श्रीक्षेमा जी के दिव्य महल का नाम नाग कुण्डली भवन है ॥५४॥

स्वस्तिकाख्यश्च हेमायाः प्राकारैः परिवितितम् ।
तथाच शुभगायास्तु विछन्दक विधानकम् ॥५५॥

इसी प्रकार प्रधान सखी श्रीहेमा जी के महल का नाम स्वस्तिक भवन है जो तीन परकोटाओं से घिरा है। इसी प्रकार प्रधान सखी श्रीसुभगा जी के महल का नाम विच्छंदक भवन है ॥५५॥

एव मेवञ्च सर्वासा म्मन्दिराणि समन्ततः।
पृथक् पृथक् विधानेन जाल माल गवाक्षकैः ॥५६॥

इसी प्रकार सब सोलह, बत्तीस, चौंसठ मुख्य सखियों के भी महल कनक भवन के चौथे, पांचवे छटवे आवरण में चारों तरफ अलग २ छज्जा झरोखा, जाली आदि सजावटों से युक्त हैं ॥५६॥

तेषां द्वारसहस्रेषु प्रतिद्वारेच भूषिताः ।
स्वर्णदण्डधरा सख्य स्तिष्ठन्ति गणसंख्यया ।५७॥

उन सब महलों के हजारों की संख्या में फाटक हैं प्रत्येक फाटक ध्वजा, पताका, तोरण, केतु, कलशादिकों से भूषित गोपुर वाले हैं। प्रत्येक फाटक पर स्वर्ण दण्डों को हाथ में ली हुई गणों के हिसाब से सखियां पहरा करती हैं।५७॥

गणो वसु द्वयेनैव चैकया मुख्ययासह ।
तैरष्टभिस्तु स्याद्यूथो स्वष्टभिस्तैश्च यःस्मृतः ॥५८॥

सोलह गणों की एक जो मुख्या है उन आठ मुख्याओंका एक यूथ कहा जाता है। इस प्रकार के यूथ की जो प्रधान है उसका नाम यूथेश्वरी है ॥५८॥

अष्टाभिस्तै रुच्चयस्या द्विचयस्तैस्तु चाष्टभिः ।
निचय स्तैरष्टभिश्च निवहस्तै स्तथा विधः ॥५९॥

आठ यूथेश्वरियों का एक उच्चय होता है। आठ उच्चयोंका एक विचय होता है। आठ बिचयों का एक निचय होता है। आठ निचयों का एक निवह होता है ॥५९॥

निवहैरष्टभिर्व्यूहः सन्दोह स्तैस्तु चाष्टभिः ।
विशरस्तै रष्टभिश्च व्रजः स्यात्तैस्तु चाष्टभिः ।६०॥

आठ निवहों का एक व्यूह होता है। आठ व्यूहों का एक संदोह होता है। आठ संदोहों का एक विशर होता है। आठ विशरों का एक व्रज होता है ॥६०॥

एवम्विधानकलिते र्नीचाश्चेट्यो प्यसंख्यकाः ।
काश्चिद्दण्डधराः काश्चि च्छत्र चामर हस्तकाः ।६१॥

इस प्रकार के विधानों से प्रत्येक अष्ट, षोडश, बत्तीस चौंसठ सखियों के साथ यह व्रज विधान बना हुआ है। इस तरह से श्री कनकभवन में असंख्य संख्या में नीच से भी नीच दासियों का विधान बना हुआ है। कोई दण्ड लिए कोई छत्र चवर लिए सब सबकी सेवा करती हैं ॥६१॥

Scanned by CamScanner

इतस्ततश्चरन्तीनां पादभूषण झंकृतिः ।
प्राशाद पंक्तयोऽजस्त्रम्प्रति ध्वानैः प्रपूरिताः ॥६२॥

इस प्रकार की सखियों के महल पंक्तियों में इधर उधर विचरती हुई पाद भूषण, कंकन किंकिनी आदिकों का शब्द एक रस गुञ्जित रहता है ॥६२॥

चारुशीलादि मुख्यानामेवं स्याच्चतुरावृतौः ।
प्राशाद खण्डलान्येवं मण्डलानि समन्ततः ॥६३॥

सर्वेश्वरी श्रीचारुशीलाजी को मुख्य लेकर श्रीजानकी जी की आठ, सोलह, बत्तीस, चौंसठ सखियों का तीसरा आवरण, चौथावरण; पाँचवावरण, छटवाँ वरण ये चार आवरणों में महलों के खण्डों के तथा मण्डलों के भेद से चारों तरफ भरे हुए हैं ॥६३॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां अयोध्याख्याने
श्रीरामभवन वर्णनो नामत्रयो विंशतिस्सर्गः ॥२३॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्रीरामभवन वर्णनो नाम
त्रयोविंशतिः सर्गः समाप्तः ॥२३॥

एवं वृत्तं चतुर्वृत्या वर्णितं योगमुद्रया ।
राजकन्यां प्रति देवि पुनरुक्तंश्चतच्छृणु ॥१॥

श्रीशंकर जी बोले कि हे पार्वती ? श्री योगमुद्रा जी ने राजकन्या सुकान्ति के प्रति कनक भवन के इन चार आवरणों का वर्णन करके फिर जो कुछ कहा है उसको मैं तुम से कहता हूँ सुनो ॥१॥

योगमुद्रोवाच—अनन्तरं चतुर्वृत्याः शृणुराजसुतेपरम् ।
रम्यश्च षोडशदलं सुचामीकर निर्मितम् ॥२॥

श्री योगमुद्रा जी बोलीं कि हे सुकान्ति ? मैंने जो सर्वेश्वरी श्री चारुशीला आदि प्रधान आठ सखियों के महल का वर्णन किया उसी तरह से सोलह, बत्तीस, चौंसठ सखियों के महल स्वर्ण निर्मित मणि जटित हैं ऐसा जानो ॥२॥

परिणाहो दीर्घता च न वर्णीयाप्यसंख्यतः ।
तस्य प्रति दलं सन्ति गृहाश्चैवातु रूपकाः ॥३॥

चारों आवरणों की पूरी नाप तथा चौड़ाई लम्बाई का हिसाब असंख्य होने से मैं वर्णन नहीं कर सकती हूँ । अब इन चारों आवरणों के भीतर ऋतु अनुरूप, ऋतु अनुकूल भेद से बाहर दल वाले कमल की तरह ॥३॥

एवं तु द्वादश प्रोक्ता ऋतूनां हि शुभगृहाः ।
रसोन्मितादक्षिणाश्च वर्णैश्चापि तथा विधाः ॥४॥

बारह वन और उन वनों के अन्दर वनों के योग्य सुन्दर महल हैं । ये बारहों वन व महल ऋतुओं के रस को बरसाने वाले तथा उसी अनुकूल अङ्ग वाले तथा उसी अनुकूल कुशलता पूर्वक सेवा करने वाली परिचारिकाओं से युक्त हैं ।४॥

Scanned by CamScanner

वासन्ताः पीतवर्णाश्चनैदाघा धूम्र वर्णकाः ।
प्राविषाश्चित्र वर्णाश्च सारदाः शुभवर्णकाः ॥५॥

जैसे—वसन्त अनुकूल और अनुरूप वन पीले रङ्ग के हैं उसी प्रकार ग्रीष्म अनुरूप अनुकूल भी धूम्रवर्ण तथा पावस रितु अनुकूल अनुरूप चित्र रंग का वन हैं। शरद अनुकूल और अनुरूप वन सफेद रङ्ग के हैं ॥५॥

हेमन्ताःस्यामवर्णाः स्युः शैशिराः पाटलास्तथा।
एवश्चार्तु प्रतिरूपा गृहाः विद्धि नृपात्मजे ॥६॥

हेमन्त अनुकूल और अनुरूप वन श्यामवर्ण के है। शैशिर अनुकूल और अनुरूप बन पाटल (कुछ लाल मिला हुआ पीला) रङ्ग के हैं। हे राजकन्यके इस प्रकार यह ऋतु अनुकूल अनुरूप महल और वनों को तुम जानो ॥६॥

अथातदनुकूलाग्रे गृहात्युच्च विशालकाः।
पूर्वोक्ताभिन्न रङ्गैश्च राजन्ते सत्समाङ्गकाः ॥७॥

इस बारह वन वाले आवरण के भीतर बड़े २, ऊँचे, विशाल महल भिन्न २ रङ्ग के, सुन्दर, समान अङ्ग वाले, प्रकाशमान हैं॥७॥

यथाव्सन्ते दृश्यन्ते पुष्पाणि बहु वर्णकैः ।
तथैव च तत्प्रसादा बहुवर्ण मणि प्रभाः ॥८॥

जैसे वसन्त ऋतु में फूलों के वहुत रङ्ग होते हैं उसी प्रकार उन वनों के महलों का भी रङ्ग बहुत रङ्ग की मणियों की कृपा से हैं ॥८॥

चन्द्रकान्तमणिश्निधैः रचिताः ग्रैष्मकाः गृहाः।
कुसुम्भ रजनाकारा राजन्ते प्राविषाः शुभाः ।९॥

ग्रीष्म ऋतु के वनों में चन्द्रकान्त मणि के अमृत की वर्षा करने वाले महल हैं और कुसुम जाति के फूल के रङ्ग के बहुत सुन्दर प्रकाशमान वर्षाऋतु के वन में हैं ॥९॥

शारदा पाटला विद्धि हेमन्ता रक्तवर्णकाः ।
कपिलाः शैशिराज्ञेयाः पूरिताः शुभगागणैः ॥१०॥

शरद ऋतु के वन में पाटल रङ्ग के महल, हिम ऋतु के वन में लाल रङ्ग के महल, शिशिर ऋतु के वन में कपिल रङ्ग के महल सुन्दर चाल चलने वाली अनुकूल सखि गणों से सब महल भरे हुए हैं ॥१०॥

सारूपास्तु गृहास्तत्र चाद्य वासन्तिके गृहे ।
तत्रचन्द्रकलामुख्या निवसन्ति यथा सुखम् ॥११॥

इन बन्सतादि ऋतुओं के अनुकूल और अनुरूप बनों में रहने वाली सखियों के नाम वतातेहैं जैसे-वसन्तानुरूप वनमें श्रीचन्द्रकलाजी हैं मुख्य जिनमें वे सखियाँ सुखपूर्वक निवास करतीहैं॥११॥

आज्ञया चारुशीलायाः सर्वेश्वर्याः समन्ततः ।
सखीनां लक्ष्य व्यूहैश्च दिव्यांशक विभूषणैः॥१२॥

Scanned by CamScanner

जो सर्वेश्वरी श्री चारुशीला जू की आज्ञा से इस बन में निवास करती हुई श्री जुगल सरकार की सेवा के लिये सावधान रहती है। इनकी अनुयायी सखियाँ भी लाखों की संख्या में व्यूहाकार हैं। सब दिव्य बस्त्र भूषणों से सजी हैं ॥१२॥

तथा चन्द्रावली मुख्या ग्रीष्म सारूप्य मंदिरे।
सखीनाञ्चैकलक्षं हि निवहै निंवसन्ति ताः ॥१३॥

ग्रीष्म अनुरूप बन में श्रीचन्द्रावली जो एक लाख सखियों के व्यूह की स्वामिनी निवास करती हैं ॥१३॥

भवने प्राविषे चन्द्रमुखी मुख्या मनोहराः।
सखीनां लक्ष सन्दोहै निंबसन्ति यथासुखं ॥१४।

वर्षा अनुरूप वन के महल में श्रीचन्द्रमुखी जो एक लाख सखि समूहों की मनोहरा स्वामिनी सुख पूर्वक निवास करती हैं ॥१४॥

सरत्सारूप्यके गेहे सख्यश्चन्द्र प्रभा मुखाः।
वसन्ति लक्ष सन्दोहैः सखीनां सर्वदा शुभाः॥१५॥

शरद अनुरूप वन के महल में एक लाख सखियों की स्वामिनी श्रीचन्द्र प्रभा जू सुख पूर्वक सुन्दर तरह से निवास करती हैं ॥१५॥

हेमन्त रूपकागारे सखी हिमकरानना।
सखीनां लक्षविशरैः साम्याष्टाभिर्वसत्यसौ ॥१६॥

हेमन्त अनुरूप बन के महल में एक लाख सखियों की स्वामिनी, अपने समान आठ सखियों के ऊपर मालिक श्री हिमकराजी निवास करती हैं ॥१६॥

अथैवं शिशिराकार सख्य श्चन्द्रकरामुखाः।
सखीनां लक्ष विशरै निंवशन्ति शुभाननाः ॥१७॥

इसी प्रकार शिशिर अनुरूप वन में एक लाख सखियों की स्वामिनी सुन्दर मुख वाली श्री चन्द्रकरा जी निवास करती हैं॥१७॥

अथार्तवानुकूलेषु मन्दिरेषु यथायथं।
आज्ञया चारुशीलाया वयस्यानिवसन्तियाः ॥१८॥

इसी प्रकार ऋतु अनुकूल बनों में भी सर्वेश्वरी श्री चारुशीला जी की आज्ञा से बहुत सी सखियां निवास करती हैं ॥१८॥

शृणु तासां राजकन्ये मच्छकाशात्समन्ततः।
पृथक् पृथक् च नामानि वक्ष्ये गुह्यतमान्यपि ॥१९॥

हे राजकन्यके! आप उनके नाम मेरे से सुनो, मैं अलग २ करके उन सबके नाम कहती हूँ। यद्यपि यह प्रसंग गुप्त है तो भी आपकी श्रद्धा पर कहूंगी ॥१९॥

Scanned by CamScanner

आनुकूल्यं तु तद्विद्धि यद्यस्मिन्यत्ररोचते।
शोभते वानु समये द्विविधं कथ्यते बुधैः ॥२०॥

अनुकूलता तुम उसको जानो कि जिसमें विलासियों को जो २ रुचिकर हो और जिस समय में जैसी शोभा अनुकूल हो उसी तरह का जिसमें मिले। ये दो प्रकार की अनुकूलता को विद्वान जन अनुकूल कहते हैं ॥२०॥

वासन्तिकेतुभवने सख्यः श्यामा मुखा वसु।
लक्ष्यैक निवहैः सार्द्धं सखीनां निवसन्तितताः ॥२१॥

बसन्त अनुकूल बन के महल में एक लाख सखियों की स्वामिनी अपने समान मुख्य आठ सखियों वाली श्री श्यामा जी निवास करती हैं ॥२१॥

रामाद्यास्तु तथाग्रैष्मे पूर्वोक्तैस्तु गणै समम्।
निवसन्ति सखीनाञ्च महावैभव संयुताः ॥२२॥
प्राविषे वेश्म पंक्तौतु विमलानामनी वरा।
साम्याष्टाभिनिबसति किङ्करीणां समूहकैः ॥२३॥
तथाहि शारदे खण्डे वसन्ति कमला मुखाः।
किङ्करीणां गणैः सेव्या किशोर वयसां शुभैः ॥२४॥
हेमाङ्गा विशदाद्यीच हेमन्ते शैशिरे क्रमात्।
गणैः सेव्या किङ्करीणां वसन्त स्ते यथा सुखम् ॥२५॥

ग्रीष्म अनुकूल बन के महल में पूर्व की तरह एक लाख सखियों की स्वामिनी अपने समान आठ मन्त्रियों के साथ श्रीरामा जी महान् वैभव संयुक्त निवास करती हैं। वर्षा अनुकूल बन के महल में एक लाख सखियों की स्वामिनी अपने समान आठ मन्त्रियों वाली श्रीविमला नाम की श्रेष्ठ सखी निवास करती हैं। उसी तरह शरद अनुकूल वन के महल में अपने किंकिरी गणों की स्वामिनी, अपने समान आठ मन्त्रियों वाली. किशोरावस्था सम्पन्ना, अत्यन्त सुन्दरी श्रीकमला जी निवास करती हैं। इसी प्रकार हेमन्त अनुकूल बन में श्री हेमाङ्गा जी तथा शिशिर अनुकूल बन में श्री विशदाद्यी जी अपने २ गणों की स्वामिनी होकर सुख पूर्वक निवास करती हैं ॥२२-२३-२४-२५॥

अथाब्जस्य बीज कोशे भागे सोच्चसुवर्तुले।
महावकाश सद्दीप्त पद्मरागावनीवराः ॥२६॥

इस तरह यह ऋतु अनुरूप ऋतु अनुकूल बारह दल वाले कमल के गोलाकार कर्णिका भाग में महा विस्तार पद्मराग मणि के रङ्ग की प्रकाशमान श्रेष्ठ भूमि पर ॥२६॥

सेवाभिधानि गेहानि विशालोच्चतराणिच।
प्रासाद पक्ति संधानि सर्वर्तु शोभनानिच ॥२७॥

श्रीसीताराम जी के नित्य अष्टयाम सेवा विधि के महान् उच्चतर विशाल महलों की पंक्तियां सब ऋतुओं में शोभा सुख देने वाली हैं ॥२७॥

अष्टौ संख्यानि तत्रास्ति प्रथमं मंगलायनम् ।
राजते राजकन्येद्वे मांगल्याच महोत्सवी ।२८।

आठ जिनकी संख्या है हे राजकन्यके ! उन आठों में प्रथम श्री मङ्गलभवन वहां पर है जिस मंगल भवन में श्रीमहोत्सवी नाम की दो यूथेश्वरी निवास करती हैं ॥२८॥

वह्वश्चैवानुगामिन्य स्तयो स्सन्ति शुभाननाः ।
तासां तत्रैव गेहानि विशालान्युच्चकानिच ॥२६॥

ये दोनों अपनी बहुत अनुगामिनियों की स्वामिनी हैं, सुन्दर मुखचन्द्र वाली हैं, इन सबके महल भी उसी मंगल भवन के आवरणों में हैं ॥२६॥

ताश्च सर्वा राजपुत्र्यः सर्ववैभवसंयुताः ।
सीतायाः रामचन्द्रस्य प्रेम्णा सेवन तत्पराः ॥३०॥

इन सब सेवाकुञ्जों में रहने वाली राजकन्यायें महान् ऐश्वर्य सम्पन्ना श्रीसीतारामजीकी प्रेम से सेवा में सावधान रहती हैं ॥३०॥

तदग्रे चापरं गेहं दन्तधावन संज्ञकम् ।
पूर्वोक्त विधिना सर्वं शान्ति शीलाधिकारिणी।३१।

इस मङ्गल भवन (हिंडोल कुन्ज) के आगे एक और दन्तधावन (वल्लभ कुञ्ज) नामक महल है उस महल में भी पूर्वोक्त विधि से श्री शम्भी जी व शीला जी अनन्त अनुचारियों की स्वामिनी होकर निवास करती हैं ॥३१॥

तृतीयं मज्जनागारं प्रदेशैः प्रशिशोभितम् ।
मज्जनार्थानि कुण्डानि मणिघट्टानि तत्र च ॥३२।

उसके और आगे तीसरा मज्जनागार (स्नान कुञ्ज) है जिसमें अत्यन्त शोभित विस्तार भूमि पर स्नान करने के बहुत से कुण्ड हैं जिनके मणिमय घाट बँधे हुए हैं ॥३२॥

घट्टा परि गृहै श्चैव वाय्वंन्तर गृहैस्तथा ।
शोभनानि चतुर्दिक्षु कलशध्वजमण्डितैः ॥३३॥

घाटों के ऊपर बहुतसे महल हैं। जल के अन्दर भी बहुत से महल हैं जो अपने ध्वजा पताका कलशादिक सम्पत्ति से भूषित चारों दिशाओं में प्रकाश कर रहे हैं; सुन्दर शोभित हैं ॥३३॥

तत्र मोदा नुमोदाच सख्योद्वे त्वग्रगे शुभे ।
स्नान कार्य्ये च सीतायाः रामस्यरसिकात्मनः।३४।

इस मज्जनागार में श्री मोदा जी और श्रीअनुमोदाजी अपनी अनन्त अनुचरियों की स्वामिनी निवास करती हैं। रसिकात्मा श्रीसीतारामजी इन दोनों के स्नान कार्यों को सुन्दर तरहसे करती हैं॥३४॥

सायामं परिणाहोच्चं रम्यं द्वार प्रदेशकम् ।
गेहं चोप भोजनाख्यं स्नान गेहस्य पक्तितः ।३५।

इस स्नान कुञ्ज के आगे अत्यन्त रमणीय, विशाल चौड़ा, बहुत, रमणीय सुन्दर फाटकों वाला उपभोजन (कलेऊ) कुञ्ज है ॥३५॥

Scanned by CamScanner

तत्र मान्ये वयस्ये द्वे रुचिरा रोचना वरा।
तयो र्वस्या बहुशोऽया गण मुख्या गणैः समम् ॥३६॥

इस उपभोजन कुञ्ज में सामानावस्था वाली श्री रुचिरा व श्रीरोचना नाम की दो श्रेष्ठ सखियां निवास करती हैं जो देवलोक की उर्वशी से अधिक सुन्दरता वाली अनन्त गणों की स्वामिनीहैं॥३६॥

भूषागारं तु तस्याग्रे प्रासाद पंक्तिका वृतम्।
तत्र मान्ये वयस्ये द्वे रम्भा गौरी मनोहरे ॥३७॥

इस उप भोजन कुञ्ज के आगे महान विशाल महलों की पंक्तियों से आवृत्त हुआ भूषागार (शृङ्गार कुञ्ज) महल है जहां पर अनन्त गणों से मान्या मनोहर रूप गुण स्वभाव वाली समानावस्था की दो सखियां श्री रम्भा जी और श्री गौरी जी नाम की निवास करती हैं॥३७॥

तेप्रवीणे सुभूषायां सीतां रामं सुभूषणैः।
रुच्या भूषयतः स्वस्या गणैर्ग्रहीत भूषणे ॥३८॥

ये दोनों श्रीसीताराम जी के अपनी रुचि के अनुसार शृङ्गार-भूषण सजाने में अति प्रवीणा हैं और अपने अनन्त गणों की स्वामिनी होकर रुचिकर भूषणों से भूषिता हैं॥३८॥

अस्याग्रे च सभागारं मध्य मण्डप भाषितम्।
नाना कौतुक सन्धानैः साक्षा द्विस्मय कारकम् ॥३९॥

इस शृङ्गार कुञ्ज के आगे सभागार (सभा कुञ्ज) है जिसके मध्य में महान् प्रकाशमान मण्डप जिसमें नाना प्रकार के कौतुकों का महान् विस्मय (आश्चर्य) कारक साक्षात करने वाले खण्ड खण्डान्तर हैं॥३९॥

भावली च प्रभाली तिमुख्ये द्वे तत्र सद्विदे।
बहुशो ष्याश्रिताश्चान्या स्तयो मुंख्या गणान्विता ॥४०॥

इस सभा मण्डप में दो महान् पण्डिता श्री भावली और श्री प्रभावली नाम की मुख्या हैं जो अपने आश्रित अनन्त गणों की स्वामिनी हैं॥४०॥

अथातोभोजनागारं किञ्चिद्दूर समाश्रितम्।
पाकाधानंञ्च पचनं यत्रवै भोजना वृतिः ॥४१॥

इस सभागार के आगे कुछ दूर पर भोजनागार है जहां पर रसोई घर पकवान बनाना और भोजन विधि दोनों होती हैं॥४१॥

ताम्बूलं संभोजनान्ते स्थित्वा कुर्वन्ति यत्र च।
पररम्यं तदागार मित्थंभाग चतुष्टयम् ॥४२॥

और जहां पर भोजन के बाद बैठकर पान पाते हैं वह रमणीय महल भी इसी भोजन कुञ्ज के अन्दर है। इस प्रकार ये चार भागों वाला यह भोजन कुञ्ज है॥४२॥

सुधाहस्ता पुष्कला च द्वे मुख्ये स्तः शुभानने।
पाक कार्य्ये प्रवीणे ते नाम्ना तत्तत्प्रवीण के ॥४३॥

Scanned by CamScanner

इस भोजन कुञ्ज की अधिष्ठात्रिणी पाक कार्यों में अत्यन्त प्रवीणा उन अनन्त प्रवीणाओं के ऊपर सुन्दर मुख चन्द वाली दो मुख्य श्री सुधाहस्ता और श्री पुष्कला नाम की हैं ॥४३॥

मध्याह्न शयनागारं तदग्रेचाति शोभनम् ।
कक्ष कक्षान्तरै रम्यं बहु द्वारं विभाषितम् ॥४४॥

इस भोजन कुञ्ज के आगे मध्याह्न शयन कुञ्ज अति शोभायमान है जो रमणीय बहुत द्वार वाला आवरण २ प्रकाशमान है ॥४४॥

चित्रलेखाचित्रकान्ती सख्यौ द्वे तु महत्तरे ।
तत्र गेहे निवसन्तो गुणरूप मनोहरे ॥४५॥

इस कुञ्ज की अधिष्ठात्रिणी, अनन्त समाज की स्वामिनी श्रीचित्रलेखा और चित्रकान्ती नाम की गुण व रूप से मन को हरने वाली उसी शयनागार में निवास करती हैं ॥४५॥

सेवाख्यान्युक्त गेहानि दिक्ष्वष्टासु यथाक्रमम् ।
पूर्वस्मा न्मङ्गलद् गेहा द्विज्ञेयानि समन्ततः ॥४६॥

इस प्रकार एक आवरण आठों दिशाओं में सेवा के इन अष्ट कुञ्जों का क्रमशः वर्णन किया पूर्व में मङ्गल घर (हिंडोल कुञ्ज) से दक्षिणावर्त क्रमशः चारों तरफ इन कुञ्जों को जानना चाहिये ॥४६॥

द्वयो द्वयो रन्तराले गोपुरे सदृशानिच ।
सन्ति द्वाराणि चत्वारि भाषितानि सुतोरणैः ॥४७॥

इन आठों कुञ्जों में प्रत्येक दो २ कुञ्ज के बीच अन्तराल में बहुत ऊँचे गोपुर वाले भारी २ फाटकों के महल हैं। इसी प्रकार सम्पूर्ण श्री कनकभवन के चारों दिशाओं चार द्वार सुन्दर तोरण, ध्वजा, कलशादिकों से युक्त प्रकाशमान हैं ॥४४॥

गवाक्ष्य जाल पंक्तया चा पिधानांशुक सम्वृतैः ।
द्वाराणां त्रिक सद्भागैः कलशै दूर दर्शकैः ॥४८॥

प्रत्येक फाटक के गोपुर महलों में खण्ड २ प्रति छज्जे झरोखे मणियों की जालियां, वितान, परदे बिछावन शोभित हैं। हर एक फाटक तीन मुख वाला अलग २ विभागों से कलश ध्वजादि द्वारा दूर से दीख पड़ते हैं ॥४८॥

स्वर्णसूत्राञ्चितानाञ्च वस्त्राणां रचितैः शुभैः ।
पताका ध्वज लक्षै श्च जनानाञ्चित्तकर्षकैः ॥४९॥

उन फाटकों के ध्वजा पताकादिकों में स्वर्ण सूत्रों से रचित सुन्दर जरी के वस्त्र लगे हैं। इस प्रकार के ध्वजा पताका एक २ द्वारों में चौदहों आवरण तक के लाखों हैं। उसी तरह से लाखों द्वारपाल फाटकों की रक्षा कर रहे हैं ॥४९॥

तत्पन्थानं लंघयित्वा प्राकारैको महाद्युतिः ।
स्फुरन्माणिक्य मुक्ताभि र्निर्मितः कनकेन च ॥५०॥

श्रीकनकभवन चौदह आवरण का वर्णन इस प्रकार है—सात आवरण बाहरी भाग जिसमें श्रीकनकभवनका इन्तजाम तथा देव, नाग, राजकन्याओंका निवास है। छः आवरण भीतरी भाग जिनके

Scanned by CamScanner

प्रमथ चार आवरण में ६४ यूथेश्वरी, ३२ यूथेश्वरी, १६ यूथेश्वरी तथा श्रीसर्वेश्वरी जी के सहित अष्ट प्रधान सखियों के महल हैं उसके भीतर ऋतु अनुरूप ऋतु अनुकूल बारह बनों का एक आवरण तथा अष्ट सेवा कुञ्जों का एक आवरण-इन दोनों को लेकर ये ६ आवरण श्रीकनकभवनके भीतरी भाग में हैं। इन भीतरी और बाहरी दोनों भागों के बीच एक आवरण सरजू जल का नहर है इस प्रकार ये चौदह आवरण चार द्वार अनन्त फाटकों वाले हैं। अब इन चौदहों आवरण के भीतरी भाग में जुगल सरकार के रात्रि शयन कुञ्ज (रङ्ग महल) का वर्णन करते हैं।) इन चौदहों आवरण के चार दिशा वाले चारों द्वारों का उल्लंघन करके भीतर जाने पर एक महान् प्रकाशमान महल है जो स्वर्ण, मणि, माणिक्य मुक्ताओं से निर्मित चमक रहा है ॥५०॥

तस्योच्चे रष्ट द्वाराणि तोरणै स्त्रिकसन्मितैः।
शोभतानि चतुर्दिक्षु रक्षितानि सखीगणैः ॥५१॥

उसके बहुत ऊँचे गोपुरों सहित आठ द्वार हैं वे तीन मुख वाले तथा तोरणादिकों से शोभित और चारों दिशाओं में अनन्त सखि गणों से सुरक्षित हैं ॥५१॥

तदन्तरं महादिव्यं सर्वर्तु भोग्य नामकम्।
महादीर्घं विशालञ्च कलशाकाश लम्बितम् ॥५२॥

उस महल के अन्दर महान् दिव्य, सर्व ऋतु भोग्य नामक महान् विशाल शयन कुञ्ज है जो लम्बे ध्वजा, कलशादिकों से शोभित हैं ॥५२॥

रचिताष्टापदव्यूहं चतुर्वेदात्मकं तु तत्।
तत्सिद्धान्तात्मकं मध्यं पदादि श्रुतय स्तथा ॥५३॥

यह रङ्ग महल कमलाकार स्वर्ण निर्मित अष्टकोण को तरह व्यूह बना हुआ चारों वेदों की आत्मा स्वरूप. तत्पद वाच्य, निस्चित सिद्धान्त स्वरूप है। इस रङ्ग महल की प्रत्येक सीढ़ियाँ वेदों की ऋचायें हैं ॥५३॥

मण्डल त्रय संयुक्त मिन्द्वर्काग्निभिरेवहि।
भूर्भुवः स्व स्त्रयाणाञ्च बीज ज्योतिः स्वरूपधृक् ॥५४॥

शयन कुञ्ज के बाहर में तीन आवरण महल उसके बाहर में तीन आवरण खम्भावली ये तीन तीन करके दोनों तीन २ रङ्ग के हैं क्योंकि इन तीनों आवरणों की रचना सूर्यकान्तिमणि अग्निकान्तिमणि चन्द्रकान्तिमणि से बनी है। इन तीनों आवरणों में भूलोक का बीज भुवर्लोक का बीज, स्वर्लोक का बीज ये तीनों बीजों का ज्योतिर्मय साक्षात् स्वरूप ये ही तीन आवरण हैं ॥५४॥

ये च ब्रह्म मुखेवेदा एषा मन्शा त्प्रवर्तिताः।
तेषां गुह्य तम ञ्चैतद् दूतः प्रस्तुवन्ति ते ॥५५॥

श्रीब्रह्मा जी के मुख से जो वेद उत्पन्न हुए हैं वे इसी रङ्ग महल के तीन आवरणों के अंश से उत्पन्न हुए हैं। इन तीनों वेदों का गूढ़तम जो तत्व-ये रङ्ग महल के तीन आवरण हैं—वेद इन तीनों आवरणों की दूर से स्तुति करते हैं ॥५५॥

सहस्राक्षो गवाक्षैश्च स्तम्भै रेवं सहस्रपात्।
सर्वतः श्रुतिमज्जालै द्वारैः स्यात् सर्वतोमुखम् ॥५६॥

Scanned by CamScanner

वेदों की स्तुतियों में जो उन परमात्मा के लिये सहस्राक्षः सहस्रपात् शब्द आते हैं वे यही तीन आवरणों के महलों के छज्जा झरोखा सहस्र अक्ष रूप में और खम्भावलियाँ सहस्रपाद रूप में हैं। सर्वतः श्रुति शब्द इन महलों की मणियों की जालियाँ है। सर्वतो मुखं इन महलों के फाटक है ॥५६॥

अट्टोपर्य्यट्ट गेहैश्च मणि चित्रित भित्तिकैः।
सहस्र शिरसामोयं सहस्रमौलिमान्यथा ॥५७॥

इन महलों के खण्ड २ प्रति दीवालों पर मणियों की चित्र कारियां हैं। अट्टालिकाओं के ऊपर भी सुन्दर अट्टालिका वाले महल हैं। ये ही वेद मन्त्रों के सहस्र शिरसा; सहस्र मौलि शब्दों का अर्थ है ॥५७॥

अन्यान्यावर्त्त्य गेहानि तेषां चित्र गवाक्षकाः।
तेतु वैमानिका देवाः पुरूषं तं स्तुवन्ति वै ॥५८॥

आवरण भर में जो अन्य २ महल हैं उनके छज्जा, झरोखा, जहाँ तहाँ चित्रकारियाँ ये सब विमानों में बैठे हुए देवताओं के रूप हैं और उन परात्पर पुरुष की स्तुति कर रहे हैं ॥५८॥

जानक्या सह श्रीरामो मणिपर्य्यंक संस्थितः।
हृदये पुरुषस्यास्ति ध्यान मूर्तियथास्य च ॥५९॥

भीतर शयन कुंज के पर्यङ्क पर सोये हुए श्री राम जी के साथ श्री जानकी जी सोयी हुई हैं ये ही उस परात्पर पुरुष के हृदय के अन्दर ध्यान दृष्टि की साक्षात् मूर्ति (श्रीवत्स) हैं ॥५९॥

अट्टोपरि विराजन्ते वाटिका ह्रस्वकद्रुमाः।
सफलाश्च सपर्णाश्च सपुष्पाः सर्वदै वहि ॥६०॥

महलों की अटारियों पर छोटी २ वाटिकाएँ, उनमें छोटे २ बृक्ष हैं जो फल पत्ते व पुष्पों से हमेशा ही शोभित हैं ॥६०॥

सरांसि ससरोजानि कूपा वाप्योपि शोभनैः।
चित्रितैर्मणिवद्धेश्च घट्टै रागार संयुतैः ॥६१॥

उन वाटिकाओं में सरोवर वापी कूप भी मणिमय चित्र विचित्र घाटों से तथा किनारे के महलों से शोभित हैं। सरोवर आदिकों में रङ्ग २ के कमल भी खिले हैं ॥६१॥

सर्वदिक्ष्वपि राजन्ते हंसैः सारसकैरपि।
मृगैश्चापि मयूरैश्च पिक यूथ मनोहरैः ॥६२॥

उन सरोवरों में हंस आदि भी तथा मृग सारस मयूर कोकिल भ्रमरों के झुण्ड भी मन को हर रहे हैं ॥६२॥

पताकाभिः सुकलशैमुक्तागुम्फ सुलम्बितैः।
द्वार छत्रै विराजन्ते हर्म्या गाराणि सर्वतः ॥६३॥

उन अट्टालिकाओं के ऊपर भागों में जो स्वर्णमणि महल हैं उनमें पताका, कलश, मुक्ताओं के गुच्छे, जालो, शोभित हैं। उनके फाटकों पर छत्र लगे हैं ॥६३॥

Scanned by CamScanner

गृहास्तु त्रिविधाः प्रोक्ता उर्ध्वामध्यान्तरालकाः।
पार्थिव्या अपि ग्रैष्मास्ते काञ्चनमणि चित्रिताः।६४।

श्री रङ्ग महल में तीन प्रकार के महल कहे गये हैं। एक अट्टालिकाओं के ऊपर, एक मध्य तथा अन्तरालों में, एक पृथ्वी के अन्दर-ये तीनों प्रकार के महल स्वर्ण निर्मित मणियों से चित्रित हैं जो ग्रीष्म आदि ऋतुओं में सुखदायी हैं ॥६४॥

उर्ध्वा तु वायु मेघानां मण्डलं संस्मरन्ति च।
अधस्ता द्वारि पर्य्यन्ता विशाला शंकुलास्त्रिभिः।६५ ॥

ऊपर अट्टालिकाओं वाले महल वायु और मेघ के मण्डल का स्मरण दिलाते हैं और पृथ्वी के अन्दर के महल वरुण लोक पर्यन्त विशाल अनन्त स्त्रियों से भरे हैं ॥६५॥

वाय्यांतपाशुगायत्ना जानक्या भवने शुभे।
खण्ड खण्डान्तरे नन्ते वर्त्तन्ते चानुकूलतः।६६।

वायु, जल, पवन-इसके संचरणार्थ [विलासार्थ] यत्न जिन महलों में हैं ऐसे महल श्रीजानकीजी के सुन्दर महल के अन्दर खण्ड खण्डान्तरों में सब प्रकार की अनुकूलता का वर्ताव करने वाले अनन्त हैं ॥६६॥

सलिलं सालिलैः सूत्रै वायु सूत्रैस्तु वायवः।
आतपादर्श यत्नेन ह्यगतौ गतिकारकाः ॥६७॥

जिन महलों में जंत्रों के द्वारा जल के सूत्र से जल निकलता है वायु के सूत्र से वायु निकलता है, शीशाओं के द्वारा धूप निकलता है। जहां किसी की गति नहीं वहां पर गति पैदा करने वाले ऐसे यत्न बने हैं ॥६७॥

वहिस्तु सप्तमे द्वारे ह्यागतस्य च सूचनम्।
अत्येवाभ्यन्तर स्थस्य तदप्यादर्श यत्नतः ॥६८॥

श्री कनक भवन के बाहरी भाग वाले सातों आवरणों के समाचार यंत्र द्वारा इन महलों में प्रत्यक्ष दर्शन की तरह से प्राप्त होते हैं ॥६८॥

श्रोत्रे वार्ता च कर्तव्या दूरात्तस्यापि श्रावणम्।
तदर्था श्रोत्र नाल्योपि वर्तन्ते प्रति मन्दिरम्। ६९।

बात चीत करने वाले यद्यपि बहुत दूर हैं पर उन यंत्रों के द्वारा बात चीत करते समय प्रत्यक्ष कानों कान बात की तरह से प्रतीत होता है। रत्ती भर भी अर्थ का भ्रम किसी भी महल के अन्दर बिल्कुल नहीं होता ॥६९॥

निर्मितं स्वर्ण सूत्रैश्च चित्रितं रौप्य सूत्रकैः।
निर्मितं रौप्य सूत्रैस्त च्चित्रितं स्वर्ण सूत्रकैः। ७०॥

उन महलों के वितान परदा बिछावनादि जो स्वर्ण सूत्र से निर्मित हैं वे रौप्य सूत्र से चित्रित हैं और जो रौप्य सूत्र से निर्मित हैं वे स्वर्ण सूत्र से चित्रित हैं ॥७०॥

Scanned by CamScanner

ग्रथिता मणय स्तस्मिन्नानावर्णाकृति कृताः।
एवम्भूतानि वस्त्राणि महार्हाणि ज्वलन्ति च ॥७१॥

नाना रङ्ग की मणियाँ उन चित्रों में गुथी हुई हैं। इस प्रकार के जो महान् बेसकीमतीय वस्त्र हैं वे उन महलों में प्रकाशमान हो रहे हैं ॥७१॥

गृहचन्द्रपिधानानि तैरेव रचितानि च।
गृहास्तरणानि तैरेव राजन्ते मन्दिराणि तैः ॥७२॥

इसी प्रकार के वस्त्र हरेक महलों में शोभित हैं। जहाँ चन्द्रकान्त मणि के महल हैं वहां चन्द्रकान्त मणि के ही वस्त्र भी हैं वे वस्त्र वितान, बिछावन, पर्दे आदिकों में शोभित हैं उसी रङ्ग के दीवालों पर चित्र भी बने हैं ॥७२॥

द्वार तोरण मालाभिः स्तम्भतोरण माल्यकैः।
चित्र तोरण द्वारैश्च दिप्यन्ते सर्वतो गृहाः ॥७३॥

द्वारों पर भी तोरणों की माला, खम्भों पर भी तोरणों की माला, चित्रों पर भी तोरणों की माला इस प्रकार की तोरण मालाओं से प्रत्येक घर चारों तरफ से शोभित हैं ॥७३॥

पंक्तिभिर्भित्तिकोशानां द्वार वत्तोरणांकिनाम्।
भित्ति सर्वा विराजन्ते नानावर्णैः सुचित्रिताः॥७४॥

पंक्तियों की पंक्ति भित्तियों पर भी द्वारों की तरह से तोरण बँधे हुए। इस प्रकार की नाना रङ्ग की भित्तियां नाना रङ्ग के चित्रों से शोभित हैं ॥७४॥

मुक्ताभिग्रथिता गुम्फाश्चन्द्रांशुक विलम्बिताः।
हस्तावलम्बनार्थास्ते दिप्यन्ते च प्रतिगृहम् ॥७५॥

प्रत्येक महलों के खण्डों में कमरों के अन्दर वितानों पर से लटके हुए मुक्ताओं से गुँथी हुई चन्द्रकान्त मणि की डोरियां नीचे को लटकी हुई हैं। उन्हीं मुक्ताओं की गुच्छिओं को पकड़ कर उठने बैठने के लिए हाथ के अवलम्बन रूप में हैं। इस प्रकार के अवलम्बन प्रत्येक घर में प्रकाशमान हो रहे हैं ॥७५॥

पंक्ति दीपायनानाञ्च रचितानां सुरत्नकैः।
मणिभिर्निर्मितानाञ्च पक्षीणां सर्व मन्दिरे ॥७६॥

प्रत्येक महलों में खण्ड २ प्रति कमरों में मणियों की दीपावली तथा पक्षियों के लिये मणि निर्मित पिंजड़े शोभित हैं ॥७६॥

प्रतिमानां पंक्तयश्च भूषितां शुक भूषणैः।
स्तम्भेषु भित्तिकोषेषु राजन्ते यत्र तत्र च ॥७७॥

और स्वर्ण की रत्न रचित प्रतिमाएं सुन्दर वस्त्र भूषणों से सजी दीवालों पर, खम्भावलियों पर जहाँ तहाँ शोभित हैं ॥७७॥

गृहात्केचिन्मारकताः केचित्पीतास्तथा विधाः।
हरिताश्चारुणाः केचिद्रक्ताः केचित्तु मिश्रकाः॥७८॥

Scanned by CamScanner

जिस रङ्ग के महल हैं उसी के अनुकूल चित्र और प्रतिमाएं हैं कोई मर्कत मणि की हैं; कोई पीत रङ्ग की हैं; कोई हरित, अरुण, कोई लाल; कोई २ मिश्रित रङ्गों की भी हैं।।७८।।

काञ्चनाः स्फाटिकाः केचित्केचिद्वस्त्रविनिर्मिताः।
सर्वेच सर्वदिक् द्वारा वाद्य गानैः सुनादिताः ।।७६।।

कोई स्वर्ण की; कोई स्फटिक मणि की और कोई २ मूर्तियाँ वस्त्रों की भी बनी हुई हैं। ये सब मूर्तियाँ सब दिशाओं से यंत्रों द्वारा गान बजान कल्लोल मचाती हैं।।७६।।

चोमागार निवेशायनि श्रेणीनां च श्रेणयः।
वैद्रुमाश्च मारकताः काञ्चना गज दन्तकाः ।।८०।।

महल से पिछवाड़े और नीचे गलियों में उतरने की सीढ़ियाँ कोई विद्रुम की हैं; कोई मर्कत मणि की हैं; कोई स्वर्ण की तथा कोई गजदन्त की सीढ़ियाँ हैं।।८०।।

कश्चिच्चन्दन काष्टेन निर्मिताश्च विचित्रकाः।
पूरिताः सुचिगन्धेन कोमलांशुक वेष्टिताः ।।८१।।

कोई चन्दन काष्ठ से बनी सीढ़ियाँ हैं जो रत्नों से जड़ित विचित्र हैं जिनमें कोमल वस्त्र लिपटे सुगन्धि से सींचे हैं ।।८१।।

आन्दोलकाश्च निश्रेण्यः कलसूत्रैश्चमत्कृताः।
नामारुह्य जनोधस्ता दुच्चत्तोम गृहं व्रजेत ।।८२।।

बहुत सी सीढ़ियाँ झूला की तरह से हैं जो यन्त्रों के सूत्र से चमत्कार करती हैं, जिनके द्वारा पहुंचने वाले स्थान का नाम लेते ही नीचे से बहुत ऊँचे महलों की छत तक भी पहुँचा देती है ।।८२।।

मुखद्वाराणि मुख्यानि पृष्टिद्वाराणि सर्वतः।
समन्तात्पन्न द्वाराणि शोभमानानि तोरणैः ।।८३।।

जहाँ तहाँ प्रधान द्वार तो मुख्य हैं ही पृष्ठ द्वार भी चारों तरफ से बहुत हैं। जहाँ तहाँ पच्छ द्वार भी तोरणादिकों के द्वारा शोभित हैं।।८३।।

अन्तर्द्वाराणि गोप्यानि तथा चोर्द्ध्वश्चो गृहे।
आसनानि च पीठानि मञ्च पर्य्यंक पंक्तयः। ८४।।

कहीं २ अंतर्द्वार, गुप्तद्वार, ऊद्धर्व द्वार, अधः द्वार (नीचे के द्वार) इस प्रकार प्रत्येक घरों में हैं। इसी प्रकार प्रत्येक घरों में पर्यङ्क, सिंहासन आसन मञ्चों की पंक्तियाँ हैं।।८४।।

प्रतिगृहं विराजन्ते स्वर्ण रत्न विनिर्मिताः।
काश्चिदान्दोलकाः कश्चिदास्तरो परिशोभनाः।।८५।।

प्रत्येक घरों में पर्यङ्कों की पंक्ति कोई स्वर्ण रचित हैं, कोई रत्न निर्मित है, कोई झूला के आकार में है, कोई नीचे बिछावन के आकार में है जो कि अति शोभित हैं ।।८५।।

उपकार्य्याश्च क्रीडार्था पर्य्यङ्काग्रे समन्ततः।
न्यस्ता अपि विराजन्ते काञ्चनैश्चित्रिता पराः।।८६।।

Scanned by CamScanner

कोई ओप कार्य्य (गुप्त कार्य) के लिए है, कोई खेलने के लिये है। इस प्रकार की सामग्री पर्यङ्कों के चारों तरफ रक्खी हैं। रखने के स्थान भी स्वर्ण विचित्र परम रमणीय शोभित हैं ॥८६॥

गृहान्तरेषु भित्तीनां पन्नमास्य ततिः शुभाः।
स्यादग्रभागके मुक्तागुम्फयुक्ता विराजते ॥८७॥

महलों के अन्दर दिवालों पर सर्पों के मुखों की पंक्ति सदृश खूटियां अति सुन्दर हैं जिनके मुख में मुक्ताओं की गुच्छियां लगी हुई हैं ॥८७॥

तस्या अधो विमानानि मणिभिर्निमितानि च।
तासु सर्वासु शोभन्ते शश्वयो नाना सुगन्धिनाम् ॥८८॥

उन खूटियों के अगल बगल कुछ नीचे के भाग में विमानों के आकार पर ताख बने हैं जिनमें नाना प्रकार की सुगन्धियों से भरी शीशियां सुन्दर तरह रक्खी हुई शोभित हैं ॥८८॥

मणिभिर्निर्मिता गुल्मा पुष्पाणां बहुवर्णकाः।
पक्षिणो बहुवर्णाश्च तेषु तेषु शुकादयः ॥८९॥

उन ताखों के अगल बगल दीवालों पर बहुत रङ्ग के पुष्पों के वृक्ष मणियों से बने हैं। उन वृक्षों पर बहुत रङ्ग के सुकादिक पक्षियां बने हैं ॥८९॥

हंशाश्च सारसा श्चान्ये समस्त मृग जातयः।
स्त्री पुमांशो मूर्त्तयश्च स्तम्भेभित्तौ च निर्मिताः ॥९०॥

कहीं २ दीवालों पर हंस सारस तथा और भी बहुत जाति के मृग और स्त्री पुरुषों की विलास मूर्तियां दीवालों पर खम्भों में सुन्दर रचना युक्त बनी हैं ॥९०॥

मध्यभागे प्राङ्गणस्य वेदिकाः मणिचित्रिताः।
स द्रुमा सापि शोभाढ्या सभामण्डप संयुताः ॥९१॥

जहां तहां दीवालों पर महलों के चित्र बने हैं। उन महलों के आंगन के मध्य भाग में मणियों से विचित्र चित्रित वेदिका बनी हैं उस वेदिका पर सुन्दर वृक्ष बना है उस वृक्ष के नीचे सुन्दर शोभा की खानि सभा मण्डप बना है ॥९१॥

इत्थं वास गृहाः सर्वे सर्वर्तु भोग्य मन्दिरे।
नार्य्यो क्रीडन्ति गायन्ति वाद्यानि वादयन्ति च ॥९२॥

इस प्रकार निवास करने के सर्व ऋतुओं में भोग्य मन्दिर हैं जिनमें अनन्त स्त्रियायें कोई गाती हैं। कोई बजाती हैं और कोई खेलती हैं ॥९२॥

तत्राजस्त्रंहि जानक्या रमते राघवः प्रभुः।
अनङ्ग कोटि शोभाङ्गो महावीरोति तेजसा ॥९३॥

इस प्रकार के उन महलों में अखण्ड एक रस श्रीजानकी जी के साथ विहार करते हुये करोड़ों काम लज्जित अंग वाले महावीर अति तेजस्वी श्रीराघव प्रभु विराजते हैं ॥९३॥

गाथा श्रीमिथिलाधिनाथ तनया नाथस्य धाम्नः परा विस्तारेण समासतोपि नृपजे तोषाय ते वर्णिता।

Scanned by CamScanner

अग्रे यद्वद् तद्वदामि शुभगे श्रीराम भावोन्नते श्रद्धा मेत्वयि सर्वथाहि सततं मा शंकनीया क्वचित्॥६४॥

हे राजकन्यके! यह श्री मिथिलाधि नाथ तनया के नाथ श्रीरामजी की परात्पर धाम की कथा तुम्हारे सन्तोष के लिए मैंने विस्तार से भी और संक्षेप से भी वर्णन की है। हे शुभगे! अब आगे जो तुम कहोगी वही मैं तुमको वर्णन करके सुनाऊगी। हे श्रीराम जी में भाव बढ़ाने वाली। मेरी तुम्हारे में महान् एक रस सर्वथा श्रद्धा है तुम किसी प्रकार की शंका न करो॥६४॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां श्रीअमोध्या ख्याने श्रीरामभवन वर्णनोनाम चतुर्विंशतिस्सर्गः ॥२४॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्रीअयोध्या ख्याने श्री रामभवन वर्णनो नाम चतुर्विंशतिः सर्गः समाप्तः ॥२४॥

राजकुमार्य्युवाच—श्रीजानकी वदन चन्द्र चकोरवृत्तेः संस्मृद्धिमल्ललित केलि प्रवाह पूर्णम्।
नैश्यान्हिकं कुरु कृपां कथय प्रवीणे सञ्जीवनंभवति यद्भुवि भावुकानाम्॥१॥

श्री सुकान्ति बोली कि श्रीजानकी जी के मुखचन्द्र के चकोर वृत्ति वाले श्री प्रियतम की महान् सम्पत्तिरूप ललित केलिओं का प्रवाह पूर्ण जो रात्रि का चरित्र है उसको हे प्रवीणे? यदि मेरे ऊपर तुम्हारी कृपा है तो कहो। वे ही चरित्र मेरे लिए और भू लोक के लिए संजीवनी बूटी है॥१॥

निखिल गुण गणानामाश्रयःपूर्णकामो रवि कुल कुमुदानां पावकः शर्वरीशः।
कुरु कुरु कृपया त यौगिकं योगमुद्रे भवति भवति भाग्ये येन मे सोपि कान्तः॥२॥

हे योगमुद्रे! जो निखिल गुण गणों के आश्रय हैं, सब प्रकार से पूर्ण काम हैं, सूर्य वंश रूप कुमुद के बन को खिलाने के लिये शरद पूर्णमासी के चन्द्रमा हैं वे जिस तरह से मेरे भाग्य में पतिभाव के सम्बन्ध से प्राप्त हों ऐसी पति पत्नी सम्बन्ध को देने वाली कृपा की मेरे ऊपर करिये करिये॥२॥

श्रीशंकर उवाच—यथार्णवाकृष्ट मनोज्ञ मत्सी दधाति प्राणान्भुवि वारि शेकात्।
तथा गतिं राम पतीच्छुकाया विलोक्य चाश्वास्यसमब्रवी त्सा॥३॥

श्री शंकर जी बोले कि हे पार्वती योगमुद्रा ने जिस प्रकार समुद्र में से निकली हुई मन रमणीय मछली को पृथ्वी पर रख करके जल के सिचन से प्राणों की रक्षा की जाती है उसी तरह से श्रीराम जी को पति रूप में चाहने वाली सुकान्ति को देख करके बोली॥३॥

अपूर्व मिदमाश्चर्य्यं रहस्यं जानकी पतेः।
अनुक्तमपि चानीय स्वोक्तौ वक्ष्यामि त्वां किल॥४॥

हे सुकान्ति तुमने जो जानकी पति के रहस्य को पूछा यह अपूर्व और आश्चर्य की बात है यद्यपि मैंने कभी कहा नहीं था तो भी अपनी उक्तियों से निकाल कर तुमसे कहूंगी॥४॥

स्वकीर्ति सन्दर्भ कृतानि साद्धं वाद्य त्सुवाद्यै श्च सुबन्धतालैः।
सप्त स्वरै रुत्तमगायकानां गीतानि कण्ठोत्थितकानि शृण्वन्॥५॥

सज्जनों के द्वारा अपनी कीर्ति के समूह रूप रचना किया हुआ पद सुन्दर ताल, बंध के साथ बाजाओं से बजाकर सातों स्वरों से उत्तम तरह गुणियों द्वारा गाये हुए गीतों से सुनते हुए॥५॥

Scanned by CamScanner

प्रात दिनेशान्वय कंजभानु भूतानुकम्पो रिपु कम्पनोसौ ।
जागर्ति नित्यं जन मोदकारी तदा भवत्तूर्य्य महा सुघोषः ॥६॥

सूर्य वंश रूप कमल वन को खिलाने के लिये सूर्य के सदृश प्राणियों पर अनुकम्पा करने वाले शत्रुओं को कम्पित करने वाले, आश्रितों को आनन्द देने वाले नित्य प्रातःकाल जागते हैं उस समय तूरी आदिक बाजाओं का महान् सुन्दर घोष होता है ॥६॥

तदानकध्वान निवर्त निद्राः प्रवृत्त चित्ता निज नित्य कृत्ये ।
स्नानादि कार्य्ये जनकात्मजायाः प्रियस्य रामस्य च सर्वसख्यः ॥७॥

उस समय निद्रा से निवृत्त हुईं श्रीसीताराम जी की प्रिय सखियां अपने नित्य कृत्य से निवृत होकर श्रीजुगल सरकार के स्नानादिक सेवा के लिए आसक्त चित्त हो गयीं ॥७॥

स्वकिंकरीभिर्समुपास्यमाना उद्वर्तन स्नान शुभांग रागैः ।
श्रीचारुशीलाभवने समेताः गच्छन्ति पूर्वं स्वगणैः सखीनाम् ॥८॥

इस प्रकार अपनी दासियों के द्वारा अपने २ महलों में उबठन स्नान, सुन्दर अङ्गरागादिक सेवाओं से सेवित होकर, सुन्दर शृङ्गार करके अपनी सखि गणों के समूह सहित सर्वेश्वरी श्रीचारुशीला जू के भवन में सब यूथेश्वरियां इकट्ठी होगयीं ॥८॥

ताभिःसमेता शिविका स्थिताभिः स्वयं रथस्था कृतंभूषणाङ्गा ।
श्रीचारुशीलागुणशीलयुक्ता समस्त नेत्री नवकञ्जनेत्रा ॥६॥

उन समस्त कनकभवन की शिविकाओं में बैठीं अपने झुण्ड की यूथेश्वरियों के श्रीसर्वेश्वरी जी के महल में इकट्ठा हो जाने पर स्वयं भी अपनी सखियों से सेवित शृङ्गारित होकर सुन्दर वस्त्राभूषणों से सुसज्जिता, दिव्य शीलादि सद्गुणों की समुद्र श्रीजुगल सरकार के समस्त परिकरों की नियमन करने वाली, नवीन कमल के समान विशाल नेत्र वाली सर्वेश्वरी श्रीचारुशीला जी भी स्वयं बहुत सुन्दर एक रथ पर बैठ गयीं ॥६॥

एवं तदागत्यमणिप्रकाशं श्रीजानकी राघवयो निशान्तम् ।
धृत्वा सुचामीकर चित्र दण्डान्द्वारोपविष्टं वहु दासिकाभिः ॥१०।

इस प्रकार समस्त यूथेश्वरियों के सहित श्रीसर्वेश्वरी जी श्रीजुगल सरकार के रात्रि-शयनकुञ्ज मणिमय प्रकाशमान रङ्ग महल में आ पहुँची जहां पर फाटकों में स्वर्ण के मणि चित्रित दण्डों को हाथों में ली हुई अत्यन्त दासियां पहरा कर रही हैं ॥१०॥

अस्थाय तत्रावलिभिः सखीनां श्रीचारुशीला ललितातिशीला ।
गानेप्रवीणा धृत हस्त वीणास्त्वालापय द्भैरव मुख्य रागम् ॥११॥

श्री रङ्ग महल के शयन कुञ्ज में मुख्य २ सखियों को साथ लेकर तथा स्वयं अपने हाथ में वीणा लेकर अत्यन्त ललित शील वाली, गान में महान् प्रवीणा अपनी सखियों के साथ रागों में मुख्य भैरव राग में अलाप को लेकर गाने लगीं ॥११॥

नाना रत्न परिष्कृते विलसितौ सत्पञ्जरे पक्षिणौ नाम्नास्तः शुक शारिके जनकजा कान्तेन वाक्पाठितौ।
ता वालाप कलं निशम्य मधुरं हेजानकीवल्लभ सख्यस्ते हिं समागता इति बचो ब्रूतो भृशं शान्तिके १२

श्री सर्वेश्वरी जी के इस मधुर गान को सुनकर नाना रङ्ग के रत्नों से सुन्दर रचित श्रेष्ठ पिंजड़ों में विलास करने वाली सुक स्तरिका आदिक नामों वाले श्र जानकी जी और श्रीकान्त जी के वाँणियों से पढ़ाए हुए पक्षी महान शान्ति पूर्वक हे श्री जानकी वल्लभ जी ! आप की सखियाँ आ गयी हैं—ऐसा शब्द बार २ सुन्दर तरह से बोलने लगीं ॥१२॥

विनिद्रोभूद्रामः श्रुतिपथ गते पक्षि गदिते
तदा पश्यत्कान्ता वदन कमलं मुद्रित दृशम् ।
शनैर्हस्तेनासौस्पृशतिमृदुलाङ्गं सुख करं
प्रियायाः प्राणेशः प्रणय वश वर्त्तीति विदितः ॥१३॥

इस प्रकार पक्षियों के कहने पर शब्द कान में जाने से श्रीरामजी निद्रा रहित होकर नेत्रों को बन्द की हुई कान्ता के कमल वदन को देखने लगे। धीरे से प्रियाजू के कोमल अंगों को हाथ से अत्यन्त सुख कर स्पर्श करने लगे। प्रिया जू भी प्राणेश्वर मेरे प्रणय के वश में हैं ऐसा जानकर आँख नहीं खोलती हैं ॥१३॥

पाणिस्पृशा त्प्राणपते स्तु सीता विनिद्रिताप्येव सुखानुभूत्या ।
तन्मुद्रया दर्शयतीव निद्रां क्षणस्मिताभूत् प्रिय कण्ठ लग्ना॥१४॥

यद्यपि श्रीसीता जी निद्रा से रहित हो गयीं तो भी प्राणपति पाणिस्पर्श का सुख अनुभव करतीं हुई एक क्षण केलिये उसी निद्रा की मुद्रा को दिखाया। थोड़ी देर के बाद कुछ हँसकर आँख खोलीं और प्रियतम के कण्ठ से लग गयीं ॥१४॥

विशीर्णहाराद्गज मौक्तिकानि कण्ठात् प्रियायाः प्रियकण्ठतोपि ।
चिन्वन्ति चेव्यस्खलितानि रात्रौशय्या गृहे यानि वसन्ति बालाः ॥१५॥

श्री प्रिया-प्रियतम जू के कण्ठ से गज मुक्ताओं के हार टूट कर पलँग पर विखरे पड़े हैं। जो चेटियाँ श्री प्रिया प्रियतम जू के सेवा में रात्रि में वहाँ निवास करती हैं वे बालाएँ उन मुक्ताओं को बीनने लगीं ॥१५॥

इत्यन्तरे श्रेष्ठतराश्च ताभ्यः पटान्तरे स्वाप गृहे वसन्ति ।
श्रुत्वा स्वनं तत्पद भूषणानां समुत्थितौ प्राण पर प्रियौ हि ॥१६॥

इसी बीच में बाहर से गान करती हुई भीतर आने वाली श्रेष्ठतर सखियों के पाद, कणकण आदि भूषणों की आवाजको सुनकर उन शयन घर में रहने वाली अङ्गजा सखियों द्वारा प्राणों से भी अधिक प्रिय सरकार उठ गए ॥१६॥

ज्ञात्वेति तासां निपुणैक मुख्या श्री चारुशीलायान्तिकमागता ।
तदात्र नाम्ना रसिकेति दक्षा श्रीचारुशीला भगिनी कनिष्ठा ॥१७॥

उन शयन कुञ्ज में रहने वाली सखियों में मुख्या श्री चारुशीला जी की छोटी बहिन बड़ी चतुरी रसिका नाम की सखी ने सखियाँ आ गयीं हैं-ऐसा जानकर तुरन्त बाहर श्री सर्वेश्वरी जी के निकट आ गयीं ॥१७॥

सा दर्पणं मङ्गल दर्शनञ्च नीराजनं साधितमेव पूर्वम् ।
तदा ज्ञया मोदयुता मनोज्ञा हस्ते समादाय मणि प्रकाशम् ॥१८॥

Scanned by CamScanner

फिर श्री सर्वेश्वरी जी को आज्ञा पाकर वह रसिका नाम की सखी पहले से ही दर्पण मङ्गल दर्शन की सामग्री और आरती के साधनों को तैयार की हुई अति मनोज्ञा प्रसन्न मन होकर श्री सर्वेश्वरी जी की आज्ञा से मणियों से भरा हुआ प्रकाशमान थाल लेकर ॥१८॥

शय्या गृहं कोटि सुभक्ति भव्यं विवेश सौगन्धि सुपूरितान्तत् ।
आदर्श मादर्श्य नीराजनं साऽकरोत्तदाराघव सीतयो वै ॥१६॥

सुन्दर सुगन्धियों से परिपूर्ण, करोड़ों की संख्या में सुन्दर भक्तियों से भी श्रेष्ठ श्रीजुगल सरकार के शय्या घर में प्रवेश किया; दर्पण दिखाया और श्री जुगल सरकार की आरती की ॥१६॥

इति श्रीअमररामायणे श्रीशङ्करकृते श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने उत्थापन समय वर्णनं नाम पञ्च विंशतिः सर्गः ॥२५॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने उत्थापन समय वर्णनं नाम पञ्च विंशतिः सर्गः समाप्तः ॥२५॥

नीराजनानन्तर माद्रितास्ताःश्रीचारुशीलादि सखी सुमुख्याः ।
शय्यागृहे राघव सीतयोस्तु कुर्वन्ति गानं ललितं प्रभाते ॥ १ ॥

इस प्रकार आरती करने पर श्रीसर्वेश्वरी चारुशीला जी आदि मुख्य सखियों से आदर पाकर श्री जुगल सरकार के सामने शयन कुञ्ज के अन्दर ललित प्रभात काल में रसिकादिक सखियाँ गान करने लगीं ॥१॥

अन्याभिरम्याहि सुदम्पतीभ्यां श्रीमैथिलो राघव सुन्दराभ्याम् ।
सुकारयित्वा मुखमार्जनाघं नवां सुभूषां रचयन्ति सस्ताम् ॥ २ ॥

और अन्य रमणीय सखियाँ सुन्दर दम्पति श्री मैथिलो राघव जी के मुख-मार्जन अर्घ्यादिक करके नवीन भूषणों की रचना करने लगीं ॥२॥

काचित्तु ताभ्यां नवरङ्ग शय्यां सुकल्पयत्येव सखी प्रवीणा ।
काचित्सुधूपं च सुदीपकश्च सु पुष्प हाराञ्च चयन्ति चान्याः ॥ ३ ॥

कोई प्रवीण सखी उन जुगल सरकार के लिये नवीन रङ्ग की शय्या को रचने लगी। कोई धूप कोई दीप, कोई फूलों के हारों की रचना करने लगीं ॥३॥

काश्चित्करेकाञ्चनपात्रकेतु प्रातर्विधानं नरदेवतानाम् ।
सुलेह्य माद्यं मधुपर्कमेव सखी समादाय समास्थिताग्रे ॥ ४ ॥

कोई अपने कर कमल में स्वर्ण पात्र को लेकर नर देवता श्रीयुगल सरकार केलिए प्रातःकालीन विधि के अनुसार मधुपर्क आदिक सुन्दर लेह्य पदार्थों को ली हुई आगे में खड़ी है ॥४॥

काश्चित्पयः सिन्धु तरङ्ग भानि मयङ्क कीर्ण प्रकरैः समानि ।
आदाय हस्ते सित चामराणि समास्थितास्तत्र शुभाङ्गरागाः ॥ ५ ॥

कोई शुभ अङ्ग राग वाली सखी क्षीर समुद्र के तरङ्ग की तरह अथवा चन्द्रकी किरणों की तरह सुन्दर प्रकाशमान सफेद चँवरों को हाथ में लेकर दोनों सरकार के बगल में खड़ी है ॥५॥

आदाय काश्चिद् व्यजनानि हस्तेसरोजशोभे रचितानिरत्नैः ।
सख्यः सुरत्नाश्चित भूषणांगाः समास्थितास्तत्र पतिप्रियाग्रे ॥६॥

कोई सुन्दर कमल के समान करकमल वाली सखी रत्नों से रचित दण्ड वाले व्यजन को हाथ में लेकर खड़ी है। इस प्रकार सब सखियां सुन्दर रत्नमय वस्त्रों से सजी सेवा सौंजों को हाथ में लेकर श्री प्रिया प्रियतम जू के अगल बगल चारों तरफ खड़ी हैं ॥६॥

पर्वेन्दु पूर्णोज्वल सत्प्रभानि द्रवत्सु गन्धद्रव शीकराणि ।
सख्यः शुभांगाः करकञ्जभाषे छत्राणि चादाय समुल्लसन्ति ॥७॥

कोई सुन्दर अङ्ग वाली सखी अपने प्रकाशमान करकमलों में शरदपूर्ण चन्द्र सदृश प्रकाशमान अमृत के सीकरों की वर्षा करने वाले छत्र को लेकर बड़े उल्लास में खड़ी है ॥७॥

रूक्मारविन्दानि च कन्दुकांश्च सख्यः समादाय सरोजपाणौ ।
प्राणप्रियाया रघुनन्दस्य काश्चि द्विशन्त्यत्र विशाल नेत्राः ॥८॥

कोई सखी स्वर्ण कमल को, कोई गेंद को अपने करकमलों में लेकर श्रीप्राणप्रिया प्रियतम जू के नजदीक विशाल नेत्र वालों प्रवेश कर रही हैं ॥८॥

काश्चि त्सुवर्णांश्च .सुवर्ण पिञ्जरान् श्रीजानकी राघव वाक्सु पाठितान्–
सख्यः समादाय शुकांश्च सारिकाः करे विरेजुस्तु सरोज सुन्दरे ॥९॥

कोई सखी स्वर्ण पींजरा में सुन्दर रङ्ग के सुक सारिका को, जो जानकी राघव जी की पढ़ायी हुई हैं, अपने कर कमल में लिए हुए शोभित हैं ॥९॥

सौवर्ण सूत्रेणपदेषु जन्त्रितं सुभूषितं हंश. युगं मनोहम् ।
काश्चिद्गृहीत्वा सुलसन्ति योषिता गत्या गता स्तेषु समानतां हिताः ॥१०॥

कोई जोषिता हंस की चाल से चलने वाली, सुन्दर भूषणों से भूषित दो मनोहर हंसों को चरणों में स्वर्ण सूत्र से नूपुर बाँधकर हाथ में ली हुई सुन्दर शोभित होती है ॥१०॥

सलक्ष्मणा सारसकाश्च काश्चि द्वशीकृता नित्य विनीय भव्याः ।
आदायतांस्तास्तु पतिप्रियाग्रे सख्यो विरेजुः शुचिभूषणाङ्गाः ॥११॥

कोई सखी लक्ष्मणा (सारसी) सारस को अपने वश में करके साथ में ली हुई नित्य भव्य रूपा आरही है। इस प्रकार सब सखियां अपनी २ सेवा सौंजों को श्रीजुगल सरकार की प्रसन्नता के लिए ली हुई सुन्दर भूषिताङ्गा शोभित हैं ॥११॥

काश्चित्प्रियायाः प्रियपार्श्वके तदा काचि त्करे चालयती ह चामरम् ।
तथैव केचिद् व्यजनं मनोहरं सख्यः प्रियायाः प्रियपार्श्वके मुदा ॥१२॥

कोई सखी श्री प्रिया प्रियतम जू के बगल में खड़ी होकर चँवर कर रही हैं, कोई मनोहर व्यजन कर रहीं हैं इस प्रकार श्रीजुगल सरकार की प्रियता के लिए प्रसन्न हुई हैं ॥१२॥

विरेजतु श्चालयतश्च भूषिते करेसुपंके रूह रङ्गभाषिते ।
कांचित्तयोः सम्मुख मास्थिता सती सुदर्श मादर्शक माददर्शह ॥१३॥

Scanned by CamScanner

कोई भूषित करकमलों में सुन्दर दर्वाङ्गादर्श दर्पण को लेकर दोनों सरकारों के सामने खड़ी होकर दर्पण दिखा रही है ॥१३॥

ऐणीदृशाया रघुनन्दनस्य वेणिं प्रियाया बिचलायमानाम् ।
करे गृहीत्वा वर कङ्कतीकां सुवन्ध वद्धांहि सखी करोति ॥१४॥

कोई मृगनयनी सखी श्री रघुनन्दन जू की मृगनयनी अत्यन्त प्रिया श्रीकिशोरी जी की वेणी को पकड़ करके हाथमें कंघी लेकर बालोंमें सुगन्धि आदि लगाकर बाल झाड़ रही है और वेणी गूथरहीहैं॥१४॥

काचित्प्रियाया रघुनन्दनस्य सिन्दूर विन्दु तिलकं सुभाले ।
सुधारयित्वा वसनं नवं च विभूषणै रञ्चति स्वञ्चितांगे ॥१५॥

कोई सखी श्रीरामप्रिया जू के सुन्दर भाल में तिलक सिन्दूर, विन्दु लगा रही है और नवीन वस्त्रों को धारण करा रही है तथा प्रत्येक अंग भूषणों को सजा रही है ॥१५॥

तयोः समाघ्राय सुगन्धिधूपं सुमङ्गलं दर्शयते च दीपम् ।
सुकारयित्वामधुपर्क्कं लेह्यं सुकारय त्याचमनं पुनश्च ॥१६॥

कोई श्रीजुगल सरकार को सुगन्धित धूप सुँगा रही है, कोई सुन्दर माङ्गलिक दीप दर्शन करा रही है, कोई मधुपर्क पवा रही है और पुनः कोई आचकन करा रही है ॥१६॥

सुकारयित्वाचमनं तयोस्तु ददौ सखी जायक मेलंकाश्च ।
आदर्शकं दर्शयती प्रियायाः प्रियस्य रामस्य मुखं सुभास्या ॥१७॥

कोई उन दोनों सरकारों को आचमन कराने के बाद इलाइची, जायफल पवा रही हैं, कोई जुगल सरकार के मुखचन्द्र को दर्पण दिखा रही है ॥१७॥

मन्दं सुमन्दं गज हंस गत्या ततः समुत्थाय नवांसु शय्याम् ।
श्रीसीतयामुख्यसखीसमेतो विवेश रामोऽन्य गृहान्तर ञ्च ॥१८॥

इस तरह शयन कुञ्ज में सेवित होकर अब जुगल सरकार हाथी और हंस की चाल से नवीन पर्यंक पर से उठे मुख्य सखियों के सहित श्रीसीता जी के साथ दूसरे घर में प्रवेश किया ॥१८॥

नवायां शय्यायां कुसुम रचितायां मणि गृहे समासीनौ सीता रघुपति विशालाम्वुज दृशौ ।
तयो रग्रे काचि द्रचयति सुमाङ्गल्य रचनां जवाङ्कान्दूर्वाङ्का न्कनक कलशं स्वास्तिक शुभम् ॥१९॥

उस मणिमय महल में पुष्पों की रचना की हुई नवीन शय्या में कमल सदृश विशाल नेत्र वाले श्रीसीता रघुपति जी विराजमान हुए। दोनों सरकार के आगे कोई सखी जौ के अंकुर, दूर्वांकुर. स्वस्तिक चिन्ह से चिन्हित स्वर्ण कलश आदि माङ्गलिक वस्तुओं की रचना कर रही हैं ॥१९॥

पीतादि चूर्णैः कलधौत पात्रे बिधाय चित्राणि सुमङ्गलानि–
प्रज्वाल्य दीपाष्ट सुवर्तिकानि नींराजयन्तीह सखी शुभास्तौ ॥२०॥

स्वर्ण के पात्रों में नील पीतादिक रङ्ग के चूर्ण रखकर माङ्गलिक चौक पूर रही है। कोई सखी अष्टवर्तिका वाली आरती को जलाकर दोनों सरकार को आरती कर रही है ॥२०॥

Scanned by CamScanner

काचिन्मुदा वादयतीह वीणां काचिन्मृदङ्गं स्वरमण्डलञ्च ।
काचिद्विपञ्ची सुषिरञ्च काचि त्काचि द्गनं नाद वरं सुनव्या । २१॥

कोई वीणा, कोई मृदंग बजा रही हैं । कोई विपञ्ची, कोई झाल आदि बाजाओं के स्वर का मण्डल बाँधकर आनन्द भरी हुई नवीन अङ्ग वाली ऊँचे स्वर से गा रही हैं ॥२१॥

उच्च स्वरैं र्गायति कापि बाला सुपुष्प मालाः प्रकिरन्ति काश्चित् ।
विशाल सौन्दर्य्य विलास मानं निरीक्ष सीता रघुनन्दनास्यम्॥२२॥

कोई बाला सुन्दर पुष्पों की मालाओं की रचना कर बरषा रही है इस प्रकार सौन्दर्य विलास की विशालता को श्रीसीता रघुनन्दन जी देख रहे हैं ॥२२॥

नृत्यन्ति काश्चि त्कलयन्ति तालान्काश्चि त्प्रबन्धान्स्वरयन्ति सख्यः ।
गतेः प्रशंसाम्प्रकरोति वाग्भिः काचित्तु सीता रघुनन्दनाग्रे ॥२३॥

कोई नृत्य कर रही हैं, कोई गान कर रही हैं, कोई ताल प्रबन्धों से स्वर मिला रही हैं। कोई सखी श्रीसीता रघुनन्दन जू के आगे संगीत की गतियों की प्रशंसा कर रही है ॥२३॥

एवंहि सख्यो जनकात्मजाया रामस्य सौन्दर्य्य सुखावहस्य ।
नीराजनं मङ्गल नाम प्रातः कृत्वा निरीक्षन्ति प्रियाः प्रियास्यम् ॥२४॥

इस प्रकार श्रीजुगल सरकार के सौन्दर्य सुख में मग्न हुई प्रातःकालीन मङ्गल आरती को करके श्रीप्रिया प्रियतम जू के मुखचन्द्र को देख रही हैं ।२४॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां रहस्याख्याने
अष्टयामसेवा वर्णनो नाम षड्विंशतितमः सर्गः ॥२६॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने मंगलभवने मङ्गल आरती वर्णनं नाम षड्विंशतितमः सर्गः समाप्तः ॥२६॥

हेप्राणनाथ प्रणयि प्रसन्न प्रिया समेतौ हि सुमौक्तिकाभाम् ।
दन्ताँश्च सुद्ध्यस्व मुखं प्रधाव्येत्येवं सखी काप्यवदद्विपञ्च्याम् ॥१॥

कोई सखी वीणा से-हे प्रणय से प्रसन्न होने वाले प्राणनाथ ! प्रिया जू के सहित मुक्ताओं के समान प्रकाशमान दांतों को मञ्जनादि से शुद्ध कीजिये, मैं आपका मुख धुलाऊँ गी-ऐसा कहती है ॥१॥

आदाय चामीकर वारि पात्रकं सख्यौ द्वयोर्द्वे समभाग मागते ।
तथा मुख प्रोञ्छन चीर सुभ्रकं धृत्वाच सख्यौ समपार्श्वके तयोः ॥२॥

दो सखियां स्वर्ण झारियों को लेकर दोनों सरकार के अगल बगल में खड़ी होकर कुल्ला करा रही है । दो सखियां सफेद रङ्ग की मुख पोछने की साफी लेकर दोनों सरकार के अगल बगलमें खड़ीहैं॥२॥

आनीय सौगन्धि च दन्तधावनम् ददौ करे राघव सीतयो स्तदा ।
सख्या शुभे सन्मुख मन्तिकं तयो रादर्श मादाय तदोपतिष्ठतः ॥३॥

कोई सुगन्धित दतौन लाकर सीता राघव जी के हाथ में दिए. कोई सखी दोनों सरकार के सन्मुख दर्पण लेकर खड़ी होगयी ॥३॥

Scanned by CamScanner

गणे सखीनां सुविलास हास्यकैः श्रीजानकीराघव मोद वर्द्धनौ ।
कृत्वामुदा दन्त सुपंक्ति मार्ज्जनं गृहान्तरं जग्मतु रन्वितन्तदा ॥४॥

इस प्रकार सखि समूह के मध्य श्रीजुगल सरकार के मोद वर्धक हास्य बिलास हो रहे हैं। इस प्रकार दोनों सरकार सुन्दर दन्त पंक्तियों का मञ्जन करके फिर समाज सहित दूसरे महल में गये ॥४॥

विशाल खण्डान्तर सद्विधानं सुचित्र भित्ति प्रतिमा गणाढ्यम् ।
सौवर्ण सूत्राश्चित सद्वितानं पिधान जालैः सुकपाट युक्तम् ॥५॥

दूसरे एक विशाल सुन्दर प्रतिमाओं से चित्रित भित्ति वाले खण्ड में गये जिस खण्ड में स्वर्ण सूत्रों से रचित वितान, परदे, बिछावन बिछे हैं, सुन्दर किवाड़ लगे हैं ॥५॥

तत्रापि वाशोभि रशेष सख्यो विभूषणैः प्राणपतिं प्रियांश्च ।
समर्च्चयित्वा मलयादिरागै धूँपञ्च दीपञ्च तदाहि चक्रुः ॥६॥

वहां पर सखियां दोनों श्रीप्रिया प्रियतम जू को नवीन वस्त्र और समस्त भूषणों को सजाया, सुन्दर मलयाचल चन्दन, अङ्गराग, धूपदीपादि विधि से सम्यक् प्रकार पूजा की ॥६॥

प्रासाद मुख्या तु सखी तदेका स्व किंकरीभिः सुचि भूषणाङ्गा ।
फलानि सर्वर्तु रसाधिकानि सौवर्णपात्रेषु करेनिधाय ॥७॥

उस महल की एक मुख्य सखी अपनी किंकरियों द्वारा सुन्दर भूषणों से सजी हुई, रस से सुन्दर बढ़े हुए सब ऋतुओं के फलों को स्वर्ण पात्र में रखकर हाथ में ली हुई हैं॥७॥

समागता सा च विनीय पूर्वं निवेदितान्यश्चित योषिताय ।
रामाय पर्य्यङ्क समास्थिताय फलानि दिव्यानि सुवर्ण पात्रे ॥८॥

अन्य स्त्रियों से पूजित पर्यंक पर बैठे हुए श्रीजुगल सरकार के सामने अपनी सखियों से पूजिता दिव्य सुवर्ण पात्रों में फलों को लिए हुए आ पहूँची ॥८॥

फलानि कानीह त्वगा मृतानि वीजेषु मिष्टानि फलानि कानी ।
त्रिमिष्टकान्येव फलानिकानि स्वऽत्तस्तदा प्राण परप्रियौ तौ ॥६॥

कोई फल छिलके में मीठे, कोई फल बीज में मीठे, कोई फल गुठलो में मीठे, कोई फल तीनों से मीठे, प्राणों से अधिक प्रिय दोनों सरकार को फल पवाये ॥६॥

स्वादञ्च नामानिगुणान्फलानां सखी समास्थाय पति प्रियाग्रे ।
व्याख्याय व्याख्याय सुकारयित्वा फलाशन ञ्चा चमनं तयं.वै ॥१०॥

वह सखी दोनों सरकार के आगे बैठकर फलों के नाम गुण, स्वादों को व्याख्या कर करके फलाहार कराया फिर दोनों को आचमन कराया ॥१०॥

एला लवंगै श्शुचि गन्धमिश्रांकाखाय चूर्णेन सुकाग्तिाञ्च ।
ददौप्रियाया श्च मुखे प्रियस्य वीटि तदा नाग सुवल्लिकाय ॥११॥

और सुगन्धित इलाइची लौंग आदि बहुत वस्तुओंसे मिश्रित चूर्ण डाला हुआ सुन्दर नागवल्लो नाम के पान के वीरा को श्रीप्रियाप्रियतम जू के मुख में दिया ॥११॥

Scanned by CamScanner

घटादि संस्थाप्य पतिप्रियाग्रे सुमङ्गलं पूर्व यथैव चोक्तम् ।
गानैश्च वाद्यैश्च सखीभिराभि र्नीराजितौ प्राणपति प्रियौ तौ ।।१२।।
श्रीराजराजेन्द्रकुमार रामः श्रीजानकीमैथिल राजपुत्री ।
नीराजितौ प्राण परप्रियौ तौ सखीगणै स्तत्र गृहे विशाले ।।१३।।

फिर श्रीजुगल सरकार के आगे पहले की तरह चौक पूर के माङ्गलिक घड़ाओं को पूर कर जैसे माङ्गलिक कृत्य कहे गये हैं उसी विधि के अनुसार सखियों की भीड़ में गान वाद्य संयुक्त दोनों श्रीप्रिया प्रियतम जू की उस लिशाल महल में सखियों ने आरती की ।।१२–१३।।

मयूरका न्सारस हंशकांश्च मृगांश्च सर्वान्गजसावकांश्च ।
सखीभिराहूय विभाग कै स्तै र्यथोचितं खादमत स्तदग्रम् ।।१४।।

उसके बाद उसी मङ्गल घर में मोर, हंस, सारस, मृग, हाथियों के बच्चे-सबको विभाग पूर्वक बुला करके जो जिस वस्तु को खाता है उसको उसी उचित रूप में सखियों ने खवाया ।।१४।।

विज्ञाय वेलाम्भवनाधिकारिणी श्नानस्य सीतारघुनन्दयो स्तदा ।
प्रेष्या स्वकीया स्तु तयोः समीप म्विज्ञापनाय प्रतिबुध्य प्रेषिता।।१५।।

स्नान कुञ्ज की अधिकारिणी ने समय जान करके अपनी दूतियों कों श्रीजुगल सरकार को अपने घर में बुलाने के लिए समझाकर भेजा ।।१५।।

आगत्यसा तत्र प्रणम्य दम्पती वध्वाञ्जली मुक्ति रिति प्रयुक्ता ।
व्यतीत वेलं निज नित्य दैहिकं तद्दोषकारं न सुखाय कल्पते ।।१६।।

वह दूती श्रीजुगल सरकार के समीप में जाकर हाथ जोड़ कर नम्रता पूर्वक प्रणाम किया और कहा कि नित्यके शारीरिक कृत्यको करनेका समय बीत रहा है अतः यह दोष सुखके लिए नही होता।है।।१६।

प्रीत्या सुनीत्या पिच संस्कृतं वचः श्रुत्वा प्रसन्नौ भवत स्तु दम्पती ।
तस्यै ददौ काञ्चन भूषणं प्रिया परार्द्ध रत्नैः खचितं कराम्बुजात् ।।१७।।

उस सखी की सुन्दर नीति से भरी हुई सत् संस्कार युक्त प्रेम मयी वाणी को सुनकर श्रीजुगल सरकार प्रसन्न हुए। श्रीप्रिया जू ने विस कीमतीय परार्द्ध रत्नों से खचित अपने हाथ के स्वर्ण भूषण को निकाल कर उस सखी (दूती) को दे दिया ।।१७।।

वाह्यं सहस्त्रैक सुदासिकाभिः र्महान्शुका भूषण भूषिताभिः ।
विमान मारुह्य गणैः सखीनां सीतापतिः श्नानगृहं प्रतस्थौ ।।१८।।

इसके बाद नवीन वस्त्र भूषणों से सजी हुई हजारों दासियां जिस विमान को ढोती हैं उस विमान में सब सखियों के सहित श्रीसीतापति बैठकर स्नान घर को गये ।।१८।।

दास्यः सहस्रं तु विमान काग्रे चलन्ति चामीकर दण्ड हस्ताः ।
पृष्टे सहस्रं च सहस्र मेवपार्श्वद्वयोः सर्वविभूषिताङ्गाः ।।१९।।

श्रीजुगज सरकार को लेकर चलते हुए विमान के आगे पीछे अगल बगल हजारों दासियां स्वर्ण दण्डों को हाथों में लेकर सर्वाङ्ग भूषिता चल रही हैं ।।१९।।

Scanned by CamScanner

अन्याश्च वध्वो बहुभूषणाङ्गा बहुनि वस्तूनि करै गृहीत्वा ।
अग्रे च पृष्टे च तथाहि वामे दक्षे विमानस्य लसन्ति सख्यः ॥२०॥

और बहुत सी सुन्दर वस्त्र भूषणों से भूषित अङ्ग वाली बधुयें बहुत प्रकार की वस्तुओं को हाथ में लिए हुए श्रीजुगल सरकार के बिमान के आगे, पीछे, दाहिने, बांयें शोभित हैं ॥२०॥

दक्षे च वामे च खचि न्मणीनां प्रासाद राजौ निज पालिकाभिः ।
नीराजनं चानुभवं स्तु मार्गे सीतापतिः श्नानगृहं प्रपेदे ॥२१॥

रास्ते में दाहिने बाए मणि खचित लहलों के छज्जाओं पर, भीड़की भीड़ श्रीरामजी की पत्नियां सीतापति की आरती करके अपने पतिपत्नी पनेका अनुभव करती हैं। इस प्रकार श्रीजुगल सरकार स्नान घर में पहुँचे ॥२१॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने
दन्त धावनमन्दिरागमन वर्णनं सप्तविंशतितमः सर्गः ॥२७॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने दन्तधावन मन्दिरागमन वर्णनं नाम सप्तविंशतितमः सर्गः समाप्तः ॥२७॥

समागते मैथिलराजपुत्री प्राणप्रिये श्नान गृहस्य. चाद्यां ।
कक्षां त्रिकद्वार चतुष्क चित्रां तत्रा भव त्तूर्य्य महासुघोषः ॥१॥

श्री मैथिल राजपुत्री व श्रीप्राणप्रियतम जू के स्नान घर के प्रथम आवरण में आ पहूँचने पर तीन मुख वाले चारों तरफ चित्र विचित्र वित्रित विशाल फाटकों में तूरी आदि बाजाओं का महान् घोष हुआ ॥१॥

तदानकस्वान संचेत चित्ता करे समादाय सुवर्णपात्रम् ।
दूर्वा हरिद्रा दधिरोचनाढ्यं समागता सन्मुख मेवमुख्या ॥२॥

इस दुन्दुभी के चित्त को सचेत करने वाले आवाज को सुनकर स्नान घर की मुख्या स्वर्णपात्र में दूर्वा हरिद्रा (हल्दी) दधि, रोचन सजकर हाथ में लेकर स्वागत के लिए अपने समाज सहित आगे आईं ॥२॥

दृष्ट्वा विमाने च गणेसखीनां परस्परा लम्बित कण्ठ वाहू ।
सौदामिनी स्यामघना वभापौ परस्परावेषित दृष्टि चित्तौ ॥३॥

विमान में सखिगणों की भीड़ मध्य परस्पर गलवाहीं दिये हुये सुन्दर बिजली और मेघ के समान श्याम गौर छवि वाले परस्पर आवेषित चित्त से बात करते हुए दोनों सरकारों को देखा ॥३॥

मन्दस्मितौस्वल्पविभूषणौ श्च शोभाधिका न्नेत्र सुखौ सखीनाम् ।
नीराजितौ प्राण पर प्रियौ तौ तदा मुदा श्नान गृहस्य सख्या ॥४॥

दोनों सरकार मन्द मुसका रहे हैं, थोड़े भूषण धारण किये हुए हैं, अपने नेत्रों को शोभा की अधिकता से सखियों को सुखी कर रहे हैं। इस प्रकार प्राणों से अधिक प्रिय दोनों सरकारों की उस स्नान घर की मुख्य सखि ने आरती की ॥४॥

Scanned by CamScanner

प्रस्थाप्य भूमौ मणि चित्रितायां तदा विमानं मणि चित्रिताङ्गम् ।
यूयेश्वरी सा तु कृतप्रणामा प्रिया प्रियाभ्यां प्रिय कारिणो च ॥५॥

फिर मणि चित्रित भूमि पर उतार कर श्रीजुगल सरकार का अत्यन्त प्रिय करने वाली उस यूथेश्वरी ने दोनों सरकार को प्रणाम किया ॥५॥

प्रस्थापिता सादरतो विमाने ततः सुयानं भवनान्तरेऽग्रे ।
स्नानस्य कक्षान्तर दूरमार्गे क्षणेन नीतं तु सुवाहकाभिः ॥६॥

उसके बाद उस यूथेश्वरी ने विमान में बैठाया तब वह विमान उस आवरण से आगे स्नान कुञ्ज के मार्ग में वाहकों द्वारा एक क्षण में प्रविष्ट हुआ ॥६॥

ततो विमाना दवतीर्य साकं सखी गणैः प्राण पर प्रियौ तौ ।
श्रीजानकी राघव सुन्दराङ्गौ स्नातुं तदा स्नान गृहं प्रविष्टौ ॥७॥

स्नान कुञ्ज के भीतरी आवरण में समाज सहित कुञ्जेश्वरीने समाज सहित सुन्दर अङ्ग वाले दोनों प्रिया प्रियतम जू को विमान से उतार कर स्नान के लिये स्नान घर में प्रवेश कराया ॥७॥

तया मुदा स्नानगृहे सुपीठे प्रस्थाप्य सीता रघुनन्दनाङ्गे ।
सौगन्ध लावण्य विकाश माने सौगन्ध्य तैलं प्रथमंविमर्द्य ॥८॥

स्नान घर के भीतर महल में सुन्दर सिंहासन पर बैठाल कर आनन्द पूर्वक दोनों सरकारों के अङ्गों में प्रथम सुगन्धित लावण्यता को प्रकाशित करने वाले सुन्दर तेल का मर्दन किया ॥८॥

उद्वर्तनं कोमलकैं र्मनोज्ञैः सुगन्धि संस्कार कृतैः सुचूर्णैः ।
करेण पंकेरुह कोमलेन कृतं मुदा मज्जनगेह सख्या ॥९॥

फिर स्नान कुञ्जकी यूथेश्वरी ने कोमल मन रमणीय सुगन्धित सत् संस्कारों से बने हुए सुन्दर चूर्ण से कोमल करकमलों से आनन्द पूर्वक उबटन किया ॥९॥

कृत्वां शुकेनान्तरकं तत स्मया जायापतीक्षीण मनः क्षणान्तरौ ।
सुस्नापितौ स्वच्छक बोष्णवारिणा मुदा स्वहस्तेन सुमर्द्य स्वाङ्कके ॥१०॥

स्नान करते समय सखियों ने संकोच को वजह से बस्त्र का परदा कर दिया एक क्षण के दृष्टि में परदा पड़ने पर दोनों सरकार विरह बेदना से क्षीण मन होगये परन्तु सखियों ने स्नान तो गर्म जल से अपने सुन्दर करकमलों से मर्दित करके करा ही दिया पर दोनों सरकार फिर इकट्ठे स्नान करने लगे ॥१०॥

जनकात्मजाया रघुनन्दनस्य शुभानिदिव्यानि सुकोमलाति च ।
अङ्गानि सा श्नान गृहाधिकारिणी प्रौञ्छत्यतीवांशुक चीर कोमलैः ।११।

सखियों ने सुन्दर, दिव्य, कोमल अंगों में दोनों सरकारों को खूब मल २ कर स्नान कराया और अँगोछा से अगों को पोंछ दिया ॥११॥

वा सांसि सा सान्तरके नवानि सुधार्य्य दिव्यानि सखी सुविज्ञा ।
संस्थापितौ ह्येक सुपीठकै तौ रत्नाश्रिते रत्नगृहे सुदिव्ये ।१२।

Scanned by CamScanner

फिर पर्दा देकर अलग २ दोनों सरकारों को नवीन बस्त्र पहनाए। इस स्नान कुञ्ज की अधिकारिणी बड़ी पण्डिता सखी ने दोनों को एक रत्न-रचित घर में दिव्य सिंहासन पर बैठाया ॥१२॥

सर्वाङ्गरागस्य विचित्र सम्पुटं जनकात्मजाया रघुनन्दनाग्रे ॥
आधारके काञ्चन कञ्जके धृतं सदर्पणं स्नान गृहस्य मुख्यया। १३॥

इसके बाद स्नान घर की मुख्या ने सब अङ्गोंमें लगाने योग्य अङ्गराग का बिचित्र डिब्बा दोनों सरकार के आगे एक स्वर्ण चौकी पर दर्पण के सहित रख दिया ॥१३॥

वेणी प्रियाया रघुनन्दनेन वै एणी दृशायाः स्वकरेण गुम्फिता ॥
प्रियस्य भाले पि सुभाग्य भाजने तमाल पत्रं रचितं च सीतया ॥१४॥

श्रीरघुनन्दन जी ने मृगनयनी श्रीकिशोरी जू की बेणी को अपने हाथ से गूथा और श्रीसीताजी ने भी सुन्दर भाग्य के भाजन प्रियतम जू के मस्तक में तमाल पत्रों की रचना की ॥१४॥

जनकात्मजाया रघुनन्दनेन भालेविशाले रचितं विशेषकम् ॥
तथाञ्जनं कञ्ज विशाल चक्षुषोः परस्परं वै ददतुः प्रियाप्रियौ ॥१५॥

इसी प्रकार श्रीरघुनन्दनजी ने भी श्रीजनकात्मजा जी के विशाल भाल में और अधिक विशेषता पूर्वक रचना की तथा दोनों प्रियाप्रियतम जू ने परस्पर विशाल कमल नेत्रों में अञ्जन लगाया ॥१५॥

आदर्शकं दर्शयतः परस्परं प्रिया प्रियौ प्रेम महाऽब्धि मग्नतः ।
तदा मुदा प्येक विशाल दर्पणे चिराय रूपं सदृशं हि पश्यतः ॥१६॥

दोनों प्रिया प्रियतम प्रेम समुद्र में मग्न हुए परस्पर दर्पण दिखा रहे हैं उसी समय एक बहुत बड़े दर्पण में परस्पर दोनों मिलकर अपने रूप को देर तक देखने लगे ॥१६॥

आदर्शैक गते मुख प्रति फले श्रीजानकीरामयो रुत्प्रेक्षां कुरुते सखीजन इति प्राथम्यकाऽत्र श्रुतिः।
आकाशे विमले निशाकरयुगे किम्वा युगे द्वन्तरे तद्भूतं नभविष्यके भवतिकिं भावोद्भुतः प्राभवत्। १७।

शीशा में दोनों के मुखचन्द्र का प्रतिविम्ब दोनों जने देखकर सखियों से पूछते हैं कि हम दोनो में से कौन सुन्दर है सखियां कहती हैं कि हमारी तरफ से तो तुम दोनों ही बराबर हैं हम किसको उत्प्रेक्ष (न्यूनाधिक्य) कर पर यह प्राचीन प्रसिद्धि है कि आकाश में दो पक्ष के चन्द्रमा हैं, एक चन्द्रमा पूर्णमासी को पैदा करता है, एक चन्द्रमा अमावस्या को पैदा करता है अथवा सतयुग और कलियुग नाम के दो युग हैं परन्तु इस प्रकार के दो चन्द्रमाओं का मेल तो न कभी हुआ था और न कभी होगा। यह तो आप दोनों के मुखचन्द्र का मेल हुआ है यह अद्भुत हुआ है ॥१७॥

एवं श्नानगृहे मुदा सुखनिधी श्रीजानकी राघवौ।
श्नात्वाङ्गे च परस्परम्विलशितैर्धृत्वाङ्ग रागंशुभम् ॥
आशीनौ मणि पीठके छविधरौ दासी सखीभिस्तदा ।
कृत्वा मङ्गल धूपदीप सुविधिं मिष्टाशनं कारितम् ॥१८॥

इस प्रकार स्नान घर में सुख के समुद्र दोनों सरकार बहुत बिलम्ब पूर्वक बहुत सुन्दर अङ्गराग को स्नान के बाद धारण किये। उसके बाद और एक मणिमय सिंहासन में दासी व सखियां लिवा लाईं, बैठाया मङ्गल धूप, दीप, नैवेद्य सुन्दर विधि से कराया ॥१८॥

Scanned by CamScanner

दृष्टे दोंष निवारणाय वनिता स्तौदम्पती सुन्दरौ गायन्त्यः स्वर सञ्चनै र्बहुविधम्सम्पादयन्त्य स्तदा।
वाद्याना मपि मेलनं च निपुणा नीराजयन्त्यग्रगाः नृत्यं तत्र कारोति कापिमुदिता हर्षाश्रु पूर्णेक्षणा। १६

और सुन्दर स्वर समूहों को सम्हाल कर गान करते हुए अति सुन्दर दोनों दम्पतियों को दृष्टि दोष निवारण के लिए राई लोन उतारा, तृण तोड़ा, आरती की, मणि भूषणादि न्योछावर किए इस प्रकार बड़ी निपुणता पूर्वक बाजाओं के मेल से नृत्य किये। इस तरह हर्ष के आसुओं से पूर्ण नेत्र वाली सखियां दोनों सरकारों को प्रसन्न करती हुई प्रसन्न हो रही हैं ।।१६।।

वेलां बीच तदोप भोजन गृहाधिष्ठातृका प्राग्विदा ।
प्यानेतुं जनकात्मजा रघुवरौ प्रेष्या तया प्रेषिता ।
सात्वागत्य सुनम्य सौम्य नयना मन्दस्मिता ।
सत्वरं चातुर्य्याञ्चित संख्य वर्ण वचनै रर्थैं वभाषेततः ।।२०।।

इसी बीच में कलेऊ कुञ्ज की अधिष्ठात्रिणी सखी श्रीजुगल सरकार के सब समाचारों को जानने वाली कलेऊ का समय देख करके दोनों सरकारों को लिवा लानेके लिए दूतियों को भेजा। वह दूती शीघ्र आकर बड़ी नम्रता पूर्वक मन्द मुसकराती हुई सौम्य दृष्टि से दोनों सरकार की तरफ ताक करके बड़ी चतुरता पूर्वक सुन्दर अर्थ भरे हुए असंख्य वरण वाले बचन को बोली ।।२०।।

श्रुत्वा ·लंकृतिकम्मनोहर तया प्रेष्या सुवेष्या वच ।
उन्मेषाब्ज दृशा वुपाशन गृहं श्रीजानकी राघवौ ।।
रत्न द्योतितकं रथं परि वृतं दाशी सखी नाङ्गणै।
श्चक्राष्टाश्व विभूषितं कणितकं स्थित्वा मुदा जग्मतुः ।।२१।।

सुन्दर भूषणों से अलंकृत उस दूती की मनोहर तर अलङ्कारों से भरी हुई वाणी को सुनकर, अधखिले कमल के सदृश नेत्र वाले दोनों सरकार कलेऊ कुञ्ज में जानेके लिए आठ चक्र वाले आठ घोड़े जोते हुए सुन्दर भूषित रत्नों से प्रकाशमान रथ में दासी व सखीगणों से घिरे हुये बैठ करके किंकिणी आदिक बाजाओं का शब्द करते हुए आनन्द पूर्वक गये ।।२१।।

गच्छन् ता वुपभोजनस्य भवनं श्री जानकी राघवौ ।
स्वल्पाभूषण नीलपीत वसनौ विद्यु द्घना वित्युभौ ।।
वर्षन्तौ निज रूप मोद सलिलं नेत्रै सखीनांद्रवं ।
मार्गावास गवाक्षकेषु वनिता नीराजय न्तीक्षणैः ।।२२।।

कलेऊ कुञ्ज में जाते हुए स्वल्प भूषण, नीलपीत वस्त्रों को धारण किये हुए बिजली और मेघ के समान श्याम गौर श्री जानकी राघव जी सखियों के नेत्रों से अपने रूप आसक्ति की अश्रुधारा को बह-वाते हुए जारहे हैं। मार्ग में दोनों तरफ के नौखन्डे महलों के छज्जाओं में खड़ी हुई स्त्रियोंकी भीड़ अपने हृदय को द्रवित करके जुगल सरकार की आरती उतार रही हैं।।२२।।

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां रहस्याख्याने ।।
स्नान लीलोपभोजन मन्दिरागमन वर्णनं नामाष्ट विंशतितम स्सर्गः ।।२८।।

Scanned by CamScanner

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्य ख्याने स्नान लीला वर्णनं नाम अष्ट विंशतितमः सर्गः समाप्तः ॥२८॥

प्राप्ते तयोः स्यन्दनकेतु तस्या गारस्य कक्ष्यां प्रथमांसुदिव्यां ।
तदागमाऽत्यन्त मुदा सखीभि र्भेर्य्यानकाः वादयिता श्च शीघ्रम् ॥१॥

कलेऊ कुञ्ज के प्रथम आवरण में श्रीजुगल सरकार के दिव्य रथ के प्राप्त होने पर फाटक की रक्षिका सखियों ने अत्यन्त प्रसन्न होकर आगमन सूचक दुन्दुभी को शीघ्र बजाया ॥१॥

तदा मुदा तद्गृह मुख्यमान्या कराम्बुजे मङ्गल दर्शपात्रम् ।
आदाय चान्याभि रसंख्यकाभिः सीतापते रसन्मुख माययौ सा ॥२॥

यह दुन्दुभी का शब्द सुनकर कलेऊ कुञ्ज की मुख्य सखी अपने करकमल में मङ्गलादर्श थाल को लेकर आनन्द पूर्वक असंख्य सखियों को साथ लेकर वह जुगल सरकार के सन्मुख आयी ॥२॥

सौदामिनीं स्याम घनेन साक मुद्वीक्ष नृत्यन्ति यथा मयूराः ।
रामेण स्यामेन तथाहि सीतां निरीक्ष नृत्यन्ति सखीगणा श्च ॥३॥

जिस प्रकार बिजली की चमक सहित मेघ की गर्जना को सुनकर मोर नृत्य करने लगते हैं उसी प्रकार श्याम घन श्रीराम जी के साथ श्रीसीता जी को देखकर सखियां नृत्य करने लगीं ॥३॥

नीराजयित्वा तु तदा तया तौ श्रीमैथिली कोशलराजपुत्रौ ।
नितम्बिनी गुम्फन वाहने ना नीतौगृहं मध्यमणि प्रकाशम् ॥४॥

प्रथम कुञ्जेश्वरी ने दोनों सरकारों की आरती की उसके बाद सुन्दर नितम्बिनी सखि समूहों की भीड़ द्वारा विमान से दोनों सरकारों को मणिमय प्रकाशमान कलेऊ कुञ्ज के बीच लिवा लायी ॥४॥

अथाञ्चिताया स्फटिकेन्द्र नीलभूमौ तुविस्तार्य्यसुवर्ण सूत्रैः ।
कौशेयकं चित्र सुभव्य वस्त्रं निवेश्य संस्थाप्य सखीगणांश्च ॥५॥

इन्द्र नीलमणि से रचित, स्वर्ण सूत्र से चित्रित स्फटिक मणि की भूमि पर सुन्दर रमणीय रेशमी वस्त्र को बिछा करके उसमें सखीगणों को बैठाया ॥५॥

मध्ये तदा मैथिल राजपुत्री मार्तण्ड वन्शेन कुमार रामः ।
संस्थापितौप्राण पर प्रियौ तौ तयाग्र सख्या हि सुरत्न पीठे ॥६॥

और उन सखिगणों की भीड़ के बीच में सुन्दर रत्न सिंहासन पर श्री मैथिल राजपुत्री व सूर्य-वंशीय राजकुमार श्रीरामजी दोनों प्रिया प्रियतम जू को कुञ्जेश्वरी ने बैठाया ॥६॥

आघ्रापि धूपश्च प्रदर्श्यदीपं सुगन्धिना काम दुधाघृतेन ।
पक्वानि नानाविधि संस्कृतानि पक्वान्नकानीह सुवर्ण पात्रे ॥७॥

धूप सुघाया, दीप दिखाया, सुगन्धित कामधेनु के घी के नाना विधि से बने हुए पकवान स्वर्ण पात्रों में परस करके लायो ॥७॥

सुतेमनः षड्भि रशेष स्वादै स्तद्भोग पात्रन्तु तदग्रभागे ।
रुक्मा ब्जके बिस्तृतके च धृत्वा विज्ञापनं तत्र तयोस्तयोक्तम् ॥८॥

षठ रस चार प्रकार के सब स्वादों से भरे हुए पक्वान्न पदार्थों को भोग-पात्र (भोजन की थाली) में रखकर श्री जुगल सरकार के आगे स्वर्ण कमल के रूप में विस्तृत चौकी पर रख दिया। दोनो सरकारों को भोजन (कलेऊ) पाने की प्रार्थना की ।।८।।

एवं सखीनामपि चक्रवाले प्रत्येक पात्रेषु सुवर्णकेषु ।
तयोपभोगं परिवेषितं तदा सुतेमनं हस्त निवारणान्तम् ।।९।।

और सब सखियों के आगे भी प्रत्येक के आगे स्वर्ण थाल सब प्रकार के भोग पदार्थों से युक्त रक्खे गये हैं और भी पदार्थ उनके हाथों से रोकने तक परसे गये ।।९।।

सुवासितं वारि पुनः पुनः सा नानामणीनां चषके ददाति ।
श्रीजानकीराघवयोः समीपे सख्योऽष्ट मुख्या परिशीलयन्ति ।।१०।।

सुन्दर सुगन्धित जल भी परसा गया। नाना रङ्ग की मणियों के कटोराओं में और भी बहुत स्वादिष्ट वस्तुओं को बार २ परसती हैं। श्री जुगल सरकार के समीप में मुख्य आठ सखियाँ सेवा कर रही हैं ।।१०।।

एवं श्रीमिथिलाधिनाथ तनया श्रीकौशलेशात्जौ पक्वान्नै-
र्बहु तेमनै श्चिपिटकै र्दध्नाद्र कै स्तर्प्यच ।
साचम्येवं तदैलकादि सचितां ताम्बूल वीटीं ददौ-
पीठे काञ्चन के निवेश्य खचिते नीराजिता वात्मना ।।११।।

इस प्रकार श्रीमिथिलाधि नाथ तनया श्रीकोशलेशात्मज दोनों सरकारोंको विविध प्रकार की मिठाइयाँ पक्वान्न, दही, च्यूड़ा आदि पदार्थों से पवाकर तृप्त किया उसके बाद आचमन कराया, इलाइची आदिक मसालाओं पान का वीरा पवाये उस भोजन के स्थान से उठकर एक रत्न जटित स्वर्ण सिंहासन पर बैठाया और आरती की ।।११।।

अस्या भाव कृतोपचार मुदितौ श्रीजानकी राघवौ-
सर्वांगेषु विभूषणैः सुरचितु ङ्गे हे न्यके जग्मतुः ।
आस्थायेभरथं प्रकाश निवहं साद्ध सखीनाङ्गणे-
र्नानावस्तु करान्तकैः क्वण रसान्मजीर शब्दायतैः ।।१२।।

इन कुञ्जेश्वरी की सद्भावना से पूजित अति प्रसन्न होकर दोनों सरकार फिर सर्वाङ्ग वस्त्र भूषणों से सुसज्जित होने के लिए साथ में सखियों के समूह को लेकर हाथी वाले प्रकाशमान रथ में बैठे हैं, सखियां विविध प्रकार की बस्तुओं को हाथ में लिए हुए हैं, चलते हुवे मञ्जीर (किंकिनी, नूपुर) आदि भूषणों का क्वणकार रसीला शब्द गुञ्जायमान हो रहा है। इस प्रकार एक अन्य घर (श्रृङ्गार कुञ्ज) में गये ।।१२।।

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने
उपभोजन लीला वर्णनो नामैकोनत्रिंशत्तमः सर्गः ।।२९।।

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने उप भोजन लीला वर्णनो नामैकोन त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ।।२९।।

Scanned by CamScanner

तद्गेहा धिकृतापिमार्ग मनयो रुत्कण्ठया न्वीक्षते ।
नानाभूषण काङ्गराग सुविधंसम्पाद्य भूषागृहे ॥
ताव त्तावपि दम्पती छविनिधी श्रीजानकी राघवौ ।
दाशीभिः परिसेवितौ निकटकङ्कहस्य चा जग्म तुः ॥१॥

उस शृङ्गार घरकी यूथेश्वरी भी शृङ्गार घर में नाना प्रकारके भूषण अङ्गराग आदि सामग्रियों को सुन्दर विधि से सजा करके दोनों सरकारों के आने की उत्कण्ठा में रास्ता देख रही थी तब एक छवि समुद्र श्रीजानकी राघव दोनों दम्पति भी अनन्त दासियों से परि सेवित होकर शृङ्गार कुञ्ज के प्रथम आवरण में आ पहूँचे ॥१॥

तदागमानन्द निमग्न चेता गणैः समेता निजदाशिकानाम् ।
हस्तेसमादाय निराजि तुन्तौ माङ्गल्य वस्त्वऽन्वित रुक्म पात्रम् २॥

दासियों द्वारा आने का समाचार सुनते ही आनन्द मग्न हुई कुब्जेश्वरी अपनी अनन्त दासियों को साथ में लेकर अपने हाथ में मङ्गल वस्तुओंसे भरे हुए स्वर्ण पात्र को लेकर दोनों सरकारोंकी आरती के लिये बाहरी फाटक में आ पहुँची ॥२॥

समागता तद्भवनस्य चाद्या ङ्कत्यांत्रिकद्वार चतुष्क चित्राम् ।
नीराजयित्वाहि तया तुशीघ्रं नीतौ गृहे भूषणकेऽन्तरे तौ ॥३॥

शृंगार कुञ्ज के बाहरी आवरण चित्र विचित्र चमत्कारों से चारों तरफ से चमकीले तीन मुख वाले फाटक पर आकर आरती करके शीघ्रता से दोनों सरकारों को शृङ्गार कुञ्ज के अन्तः गृह में ले आई ॥३॥

नानासुरत्नाञ्चित भूषणानाङ्करण्ड पंक्तिः प्रभयातिभाषे ।
हस्तेसमादाय गणैः सखीनां विभूषणानीह समास्थिताग्रे ॥४॥

शृङ्गार कुञ्ज में सखीगण विविध प्रकार के सुन्दर रत्न जटित भूषणोंकी प्रकाशमान करण्डियो को लेकर पंक्ति की पंक्ति खड़ी हैं ॥४॥

नेपथ्यका मैथिलराजपुत्री श्री कौशलाधीशकुमाररामौ ।
सिंहाशनाशीन कृताङ्ग रागौ सा लङ्करो त्यङ्ग विभूषणैश्च ॥५॥

कुब्जेश्वरी सामने होकर श्रीजुगल सरकार का शृङ्गार कर रही हैं। श्रीमैथिलराज पुत्री और कोशलाधीस कुमार श्रीरामजी सिंहासन पर बैठे हुये हैं। अंग में अंगराग और सुन्दर भूषणों के अलङ्कारों से शृङ्गार की शोभा प्रकाश कर रही है ॥५॥

तस्या अनन्ता निपुणा हि सख्यः परार्द्ध रत्नैः खचितानि हस्ते ।
सुकाञ्चने सम्पुटके च धृत्वा स्वादाय सर्वाश्च समास्थिताग्रे ॥६॥

कुब्जेश्वरी जी की अत्यन्त चतुरी अनन्त सखियां विसकीमतीय रत्नों से खचित भूषणों के स्वर्ण संपुटें हाथों में लेकर दोनों सरकार के अगल बगल में खड़ी हैं ॥६॥

Scanned by CamScanner

आदाय चादाय सुमण्ठिता सा ताभ्योयदङ्गस्य यदीप्सितम्वे ।
विभूषणं भूषयति प्रवीणा श्रीजानकीराघवयोः शुभाङ्गे ।७।।

सुन्दर भूषणों से भूषित, अत्यन्त प्रवीणा कुञ्जेश्वरी अपनी सखियों के हाथों से भूषणों को ले ले करके जो भूषण जिस अङ्ग में अभिलाषित है उसी तरह से श्रीजुगल सरकार के अङ्गों में शृङ्गार कर रही हैं ।।७।।

चूड़ामणी चन्द्रला किरीटं सुकर्णिका कुण्डलके सु दिव्ये ।
मुक्तान्य रत्नैः खचिताप्रदीप्ता सुवाल पाश्यापि ललाटिकाच ।।८।।

श्रीकिशोरी जू के सिर की चूड़ामणि (चोटी की मणि) श्री सरकार के सिर के मुकुट का क्रीट ये दोनों चन्द्रमा सदृश किरणों को फैला रहे हैं । श्रीकिशोरी जी के कानों की तरकी (तरवन) और सरकार के कानों में कुण्डल-दोनों दिव्य हैं । श्रीकिशोरीजी का सीमन्त भूषण (सीमन्तमें बांधी हुई स्वर्ण पाठी) (मांगलर) और वैना (वैंदा) (मांगटीका) ये दो भूषण मुक्तादि मणियों से खचित प्रकाशमान हो रहे हैं ।।८।।

ग्रैवयेकञ्चैव ललन्तिका च प्रालम्बिका चैव तयो रसूत्रिका ।
एकावली मौक्तिक सञ्चिता सा नक्षत्रमालातु तदुन्मिता स्यात् ।।९।।

कण्ठभूषा अर्थात् (चंम्पाकली), (कण्ठा) कण्ठी (नीलमणि वाली दुलरी गलपोती), सौने की नाभि तक लम्बी माला, मोतियों की कण्ठी, एक लर वाली मोतियों की माला, एक नक्षत्र माला, (२७ मोतियों की छोटी इकलरी माला) शोभित हो रही हैं ।।९।।

गुत्सश्च गुत्सार्द्धक गोस्तनाद्याः कार्त्तस्वरा वर्द्धित सूत्रकैस्तु ।
सुग्रन्थिता मिश्रितकाश्च नीलै र्हाराइभानाम्मणिभिः प्रसस्ताः ।।१०।।

एक बत्तीस लर वाला हार, एक चौबीस लर वाला हार एक चौंसठ लर वाला हार, आदि शब्द से एक बारह लर वाला हार, एक तीस लर वाला हार-ऐसे और भी अनेक स्वर्ण सूत्रों से गुथे हुए बहुत सी ग्रन्थि वाले बहुत सी वे ग्रन्थि वाले, बहुत से नील मणियों से मिश्रित गज मुक्ताओं के हार जो कि बड़े प्रशंसनीय हैं ।।१०।।

नानासुरत्नैः खचितानिदिव्य स्केयूरकानीह सुवर्ण कानि ।
परार्द्धसौवर्णक पारिहार्य्य स्तथोर्म्मिका चांगुलि मुद्रिका च ।।११।।

और रङ्ग र के सुन्दर नाना रत्नों से खचित विजायट (अङ्गद, बाजूबन्द) स्वर्ण के बने हैं और बिसकीमती स्वर्ण की कण्कण पहुँची, अँगूठी (छल्ला) तथा नामाङ्कित मुद्रिकायें भी अति शोभित हैं ।।११।।

पादांगुदं सारसनञ्च नार्य्यः पुंसस्तथाशृङ्खलकं च कव्याः ।
इत्याद्यनन्तैस्तु परार्द्ध रत्नैः परिस्कृतानीह विभूषणानि ।।१२।।

पायजेब, करधनी, तागड़ी, शृंखला (पुरुष की तागड़ी) इत्यादिक असंख्य दाम वाले रत्नों से बने हुए अनन्त भूषण श्रीजुगल सरकार के अंगों में शोभित हैं ।।१२।।

अलंकृतौ तैर्जनकात्मजा श्रीरामौ तया काञ्चन नीलकान्तौ ।
सौवर्ण सूत्राञ्चित दिव्य साटी चण्डान्तकं चित्र विचित्र रागम् ॥१३॥

इस प्रकार श्रृङ्गार कुञ्ज की कुञ्जेश्वरी ने तप्त-स्वर्ण और नीलमणि के सदृश श्याम गौर दोनों सरकारों को स्वर्ण सूत्र से निर्मित दिव्य पीताम्बरी तथा साड़ी व चित्र विचित्र रङ्ग का लहँगा पहनाया ॥१३॥

सु पीतचोलो रघुनन्दनांगे एवं हि वस्त्रैरपि संस्कृतौ तौ ।
आघ्रायि धूपञ्च प्रदर्श्य दीपं तदा तया काञ्चनके सुपात्रे ॥१४॥

श्रीरघुनन्दन जू के अंग में पीत रङ्ग का चोल (आङ्गी) पहिनाया। इस प्रकार सुन्दर वस्त्र भूषणों से दोनों सरकार का श्रृङ्गार करके धूप सुघाया, दीप दिखाया फिर स्वर्ण के दिव्य पात्र में ॥१४॥

दिव्याशन म्मोदक पूपकाद्यं सुकारयित्वा चमनं पुनश्च ।
एला लवंगै करपूरमिश्रा दत्ता सुवीटी वरनागवल्याः ॥१५॥

लड्डू, पूआ आदि दिव्य पदार्थों को पवाकर जल पिला के आचमन कराया । इलाइची लौंग कपूर आदि मसालाओं से बना हुआ नागवल्ली नाम का बीरा दिया ॥१५॥

सहस्र दण्डान्वित रत्नपीठे निवेश्य सीता रघुनन्दनौ सा ।
गानैश्च वाद्यैश्च चतुष्प्रकारैः सुनर्तनैः पुष्प सुवर्षणैश्च ॥१६॥

उसके बाद एक हजार दण्डा वाले एक और रत्नजटित सिंहासन पर बैठाकर श्रीजुगल सरकार को गान वाद्य, नृत्य, पुष्प वर्षा-इन चार प्रकारों से प्रसन्न किया ॥१६॥

दीपाष्टकं मंगल वस्तु युक्तं निधाय चामीकर पात्रेकच ।
नीराजयत्येव मुदा सु मुख्या श्रृंगार गेहस्य सखी प्रवीणा ॥१७॥

और एक स्वर्ण के थाल में आठ बत्ती तथा और भी माङ्गलिक वस्तुओं को रखकर अति प्रसन्नता से बड़ी चतुरी श्रृंगार कुञ्ज की यूथेश्वरी ने आरती की ॥१७॥

प्रीते स्तदास्या बिबिधो पचारा नाऽलंकरिष्णो बिमला न्समृद्धान् ।
प्रीत्या नुभूत्वा जनकात्मजा श्रीरामौसुभूषा परिशोभमानौ ॥१८।

विविध निर्मल सम्पत्ति वाले अलङ्कारों से श्रृङ्गार करने की अत्यन्त अनुराग मयी इच्छा वाली इस कुञ्जेश्वरी के प्रेमका अनुभव करके दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषित परम शोभायमान श्रीजनकात्मजा व श्रीरामजी ॥१८॥

स्थित्वा बिमाने रवि कोटिभासे चाक्षु विलासे च गणैः सखीनाम् ।
आजग्मतु दिव्य मणि प्रकाशे शभा गृहे मध्य विशाल कक्ष्ये ॥१९॥

करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशमान अनन्त सखिगणों नेत्र-विलास वाले विमान में बैठकर दिव्य मणियों से प्रकाशमान कई आवरण वाले तथा कई खण्ड वाले विशाल दिव्य सभा मण्डप के मध्य आ पहुँचे ॥१९॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां रहस्याख्याने
श्रृंगार समय वर्णनो नाम त्रिंशत्तमः सर्गः ॥३०॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने श्रृङ्गार समय वर्णनो नाम नाम त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३०॥

पराः परार्द्धा नरराजपुत्र्यो रामस्यभार्य्या विधिना बभूवुः ॥
गन्धर्व राजाप्सरसाश्च पुत्र्य स्तथैव नागाष्ट कुलोत्तमानाम् ॥१॥

असंख्य प्रधान राजकन्यायें विधान पूर्वक प्राप्त हुईं श्रीराम जी की भार्य्या हैं। इसी प्रकार विधान पूर्वक प्राप्त हुईं गंधर्व राजों की तथा अप्सराओं की भी कन्यायें और उसी प्रकार नागकुल के उत्तम अष्ट नाग राजों की कन्यायें श्रीराम जी की भार्य्यां हैं ॥१॥

नित्यं समाजोभवतीहतासां शुभागृहे नित्यमहोत्सवाप्ते ॥
स्वस्याश्च स्वस्याश्च समाज कैस्ता यथाधिकाराशन माश्रयन्ते ॥२॥

इन सबका तथा और भी बहुत सी स्त्रियों का सभा महल में नित्य महोत्सव समाज होता है। ये सब जाति वाली कन्यायें अलग २ समाज बनाकर अपने २ अधिकार के अनुसार विलास वास करती हैं ॥२॥

तद्गेहकक्ष्यां प्रथमा ङ्गतौ तौ श्रीजानकीराघव सुन्दराङ्गौ ॥
नीराजितौ तद्गृह मुख्ययेत्य प्रबन्धगानै रथनृत्य वाद्यैः ॥३॥

जुगल सरकार जिस समय उस सभा महल के प्रथम आवरण के फाटक पर पहुँचे उसी समय उस महल की मुख्य यूथेश्वरी अनेक प्रकार प्रबन्धों से गान वाद्य नृत्य करके सुन्दर अङ्ग वाले श्रीजानकी राघव जी की आरती की ॥३॥

समागते तत्र च सीतया श्रीरामे मयङ्काननयाम्बुजाक्षे ॥
उत्थाय चोत्थाय विशुद्धभावा ज्येष्ठा युतं प्राणपतिं ववन्दुः ॥४॥

सभा मण्डप में लिवा कर बैठाया, चन्द्रमुख कमलनयन श्रीसीता राघव जी को उन विशुद्ध भाव वाली मुख्या से लेकर क्रमशः छोटी बड़ी सबने अपने प्राणपति को बार बार उठ उठ करके प्रणाम किया ॥४॥

कुलेन रूपेण गुणैः समानयोः पीठे लस द्दिव्य तडिद्घनाभयोः ॥
तासां निपेतु नयनानिषट् पदः श्रीजानकीराघवयो मुखाम्बुजे ॥५॥

और अपने कुल रूप व गुण की यथा योग्यता से उचित स्थानों पर समान रूपसे बहुत विशाल रूप में बने हुए उस सिंहासन पर बिजली और मेघ के समान श्याम गौर छवि वाले श्रीराघव जी के मुख कमल में अपने नेत्रों को भ्रमर बना करके सबकी सब बैठ गयीं ॥५॥

किमत्र चैकत्र त्रिलोकयन्त्यो प्यहो निशं नित्य निषेवयन्त्यः ॥
नयान्ति तृप्तिं जनकात्मजाया रामस्य रूपार्णव वारि पानात् ॥६॥

नित्य रात दिन सेवा करती हुई रूप-समुद्र श्रीजनकात्मजा राम जी के शौन्दर्य रूप जल का एक रस रात दिन पान करती हुई भी क्या यहां पर तृप्त नहीं होती हैं ? (अर्थात् अवश्य होती हैं) ॥६॥

Scanned by CamScanner

ऐकान्तकीयं सुदृशां शभाया शौन्दर्य्य माधुर्य्य विलाश पूर्णा ॥
भोक्ता रसज्ञो रघुनन्द एको बिराजते तत्र बिनोद कारी ॥७॥

यह सुन्दर नेत्र वाली स्त्रियों के शौन्दर्य माधुर्य विलास पूर्ण एकान्तकीय सभा में बिनोद करने वाले रसज्ञ एक रघुनन्दन ही भोक्ता विराजमान हैं ॥७॥

पत्यु विनोदाय मुदा स्वयन्ता नृत्येन गानेन च कौतुकेन ॥
विलक्षणान्तत्र विकाशयन्ते चातुर्य्यभावं प्रमदाः प्रवीणाः ॥८॥

उस सभा मण्डप में प्रवीण (चतुर) स्त्रियायें अपने प्रियतम के विनोद के लिए अत्यन्त प्रसन्न होकर स्वयं नृत्य गान कौतुक के द्वारा अपने विलक्षण चातुर्य मय भावों का विस्तार करने लगी ॥८॥

स्या त्कापि कस्या मपि कापि कस्यां प्रिया कलायां रघुनन्दनस्य ॥
विचक्षणा तत्रमिथप्रवादा जिज्ञासुकानामपि बोध लाभः ॥९॥

कोई प्रिया रघुनन्दन जी की कला की, कोई प्रिया श्रीप्रिया जू की कला की आप प्रशंसा करती हुई आपस में बड़ी सूक्ष्म बुद्धि पूर्वक अपने विजय की चेष्टा से दूसरे को जीतने के लिए एक दूसरे से विवाद करने लगीं। यह पारस्परिक विवाद जिज्ञासु पुरुषों के लिए भी जुगल सरकार के दिव्य गुणों का बोध कराने वाला है ॥९॥

काचित्तु शब्द प्रक्रिया प्रवीणा स्वर्थाश्च सम्पादयति त्वनेकान् ।
विचक्षणा कापि च चित्र काव्ये काठिन्यभावं प्रकटी करोति ॥१०॥

कोई सखी शब्द प्रक्रिया में अनन्त प्रवीणा अनेक प्रकार के स्वार्थों का सम्पादन करती है। कोई सूक्ष्म बुद्धि वाली सखी चित्र विचित्र काव्यों में बड़े कठिन २ भावों को प्रकट करती है ॥१०॥

चित्रप्रवीणापि विचित्र भावान्निदर्शं यत्येव सुकल्प्य मूर्तिम् ॥
ज्योति विंदा कापि बिशंख्यकानां विद्यावलेनैव करोति शंख्याम् ॥११॥

कोई चित्र बनाने में प्रवीणा सुन्दर एक मूर्ति की कल्पना करके विचित्र भावों में दिखाती है। कोई ज्योतिष विद्या में पण्डिता सखी अपने विद्या बल से असंख्य वस्तुओं की संख्या बताती है ॥११॥

विजित्य वाक्यानि समन्ततश्च चातुर्य्यभावादपि पण्डिता सा ॥
प्रस्ताव वार्त्तासुपरम्पराभि निंजं यदुक्त म्प्रवली करोति ॥१२॥

कोई पण्डिता सखी परम्परागत प्रस्ताव रक्खे हुये वार्ताओं में बड़े चातुर्य भाव से उसने जो कुछ कहा है उन सबकी बातों को चारों तरफ से जीत कर अपनी बात को प्रबल करती है ॥१२॥

उद्घाट्य पाडित्य मतिप्रभावा नाविष्करोत्येव पुनर्यथार्थान् ॥
प्रतिज्ञया कापि सुविज्ञबाला प्रश्नस्य मालां प्रकरोतिपूर्णाम् ॥१३॥

कोई बुद्धि की बिलक्षण प्रभा वाली अपने पान्डित्य का उद्घाटन करती अनेक प्रकार के प्रश्नों की मालाओं को प्रगट कर देती है और कोई सुन्दर तत्व बेत्ता वाला प्रतिज्ञा करके उसके सब प्रश्नों की माला का यथार्थ अर्थ करके माला को अर्पण कर देती है ॥१३॥

Scanned by CamScanner

बलेन तन्त्रस्य हि तन्त्र वेत्री काप्यन्यतस्त्वन्यतरं दधाना ॥
प्रादर्शय त्कौतुहलं शभायाम्बुद्धिभ्रमं यात्यपि पण्डितानाम् ।१४॥

कोई तन्त्र विद्या की पण्डिता बाला तन्त्र के बल से कुछ का कुछ धारण करके दिखा देती हैं। इस प्रकार सभा अनेक कौतुकों को दिखा कर बड़े २ पन्डितों की बुद्धि को भी भ्रम में डाल देती है ॥१४॥

तत्रैकया गुह्यक कन्यायातु प्रदर्शितं गुह्य चरित्र चित्रम् ॥
अन्योन्यमात्मान मेवेक्षयन्ति रामाङ्कलग्ना अपि वस्त्रहोनाः ॥१५॥

उस सभा में कोई गुह्यक जाति की देवकन्या ने एक गूढ़ चरित्र का चित्र दिखाया। वह गुह्यक कन्या ने यद्यपि वस्त्रहीना है, श्रीरामजीके अङ्कमें चिपकी है, सब कोई अपनी आत्माको ही देखने लगे॥१५॥

मायेव जानन्त्यपि लज्जिता स्ता साक्षात्समालोक्य वभूवु रेव ॥
स्वस्यप्रभावेन निवर्त्त्यतस्याः साभ्रामिता मन्त्र बलात्कया च ॥१६॥

देखने वाली सब सखियां यह माया है ऐसा जानती भी हैं साक्षात् प्रत्यक्ष इस विचित्र चरित्रको देख करके लज्जित हो गयीं, कोई सखी मन्त्र के बल पर अपने प्रभाव से उस गुह्यक कन्या को भ्रमित करके उसकी इस लीला को निवृत्त कर दिया ॥१६॥

काश्चित्तु रागाङ्ग समस्त वेत्र्य आरोप्य संख्याहि परस्परं ताः ॥
प्रादर्शयन्त्यः प्रगुणी कृतान्तां विद्या विनोदाय नवीन नार्य्यः ॥१७॥

कोई रागों के समस्त अङ्गों को जानने वाली नवीनावस्था वाली स्त्रियायें विनोद के लिये कई गुना बढ़ायी हुई अपनी विद्या को परस्पर में संख्याओं का आरोप लगा करके अपनी विद्या को दिखाती हुई विनोद कर रहे है ॥१७॥

कुर्वन्तिगानं स्वर सञ्चनेन हस्तेनताला नपि बादयन्त्यः ॥
काश्चित्प्रवीणाः सुषिरं घनञ्च नद्धं ततंश्चापि सुवादयन्ते ॥१८॥

हाथों से तालों को वजाती हुई, सातों स्वरों को सन्चित करके गान करती है। कोई प्रवीणा वंशी हारमोनिय आदि हवा के बाजाओं को, कोई झांझ, मजीरादि काँसाओं के बाजाओं को, कोई वीणा सितारादिक तार के बाजाओं को सुन्दर तरह से बजा रही हैं ॥१८॥

नृत्यन्ति काश्चि त्सुगति प्रवीणा मयूर हंशादिक षोडशैश्च ॥
विमोहयन्त्यस्तु पतिं रसज्ञं रामं स्वयङ्काम कलाप कान्तम् ।१९॥

कोई मयूर हंसादिक सोलह प्रकार की गतियों को जानने वाली नृत्य कर रहीं हैं, स्वयं काम के कलापों को भी विजय करने वाली कान्त, रसज्ञ, पति श्रीराम जी को मोहित कर रही हैं ॥१९॥

रमो मा सावित्री मदन रमणीशक्र रमणी घृताची रम्भाद्याः कनकभवने चात्रसदसि ॥
निषेवन्ते नित्यं जनकतनया पाद युगलं स्वलोका दागत्य प्रतिदिनमथो यान्ति सकलाः ॥२०॥

इस प्रकार नित्यप्रति कनकभवन में श्रीसीताराम जुगल सरकारके इस सभा में लक्ष्मी, पार्वती, सावित्री, रति सची, घृताची, रम्भा आदि सम्पूर्ण विश्व की उत्तम स्त्रियायें आकर श्रीजनकजाया जू के जुगल चरण कमलों की नित्य सेवा करती हुई दर्शन करके अपने २ लोकों में जाती हैं ॥२०॥

Scanned by CamScanner

वार्ता कौतुक राग शास्त्रविषयां शौन्दर्य सद्वैभवां ।
न्नारीणामनुभाव्य स्वस्य सुदृशामानन्द मग्न स्थितौः ॥
तावद्भोजन मन्दिरस्य सुदृशा प्रेष्या स्वयम्प्रेपिता ।
श्रुत्वा तद्विनयं समाजसहितौ तौ दम्पती जग्मतुः ॥२१॥

सुन्दर नेत्रवती अपनी नारियों के रागशास्त्र विषयक कौतुक शौन्दर्य आदि सद्वैभव वाली वार्तायें अनुभव करके, कराके आनन्द समुद्र में मग्न दोनों सरकार सभा कुञ्ज में बैठे हैं तब तक भोजन कुञ्ज की सुन्दर नेत्र वाली प्रिया की भेजी हुई दूतियां समाज सहित श्रीजुगल सरकार के समीप आकर विनय की, दोनों सरकार उस विनय को सुनकर भोजन कुञ्ज के लिए चल दिये ॥२१॥

इति श्रीअमररामायणे श्रीशङ्कर कृते श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने शभाप्रसंग वर्णन न्नामैक त्रिशत्तमः सर्गः ॥३१॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने सभा प्रसङ्ग वर्णनं नामैक त्रिशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३१॥

गच्छन्तौ गजवाहनेन मिथिलानाथात्मजा राघवौ-
मार्गे भोजन मन्दिरस्य वनिता कोट्यर्व खर्वान्वितौ ।
मार्गावास गवाक्षकेपि सुदृशो नीराजयन्त्य भ्दुतां-
शोभांवीक्ष्य मुदं प्रयान्ति सततं कान्तस्य रामस्यवै ॥१॥

श्रीमिथिलानाथात्मजा व श्रीराघव जी करोड़ों अर्ब खर्ब वनिताओं के साथ हाथी के रथ में बैठकर भोजन कुञ्ज के मार्ग में जारहे हैं। रास्ते में दोनों तरफ के नौखण्डा महलों के छज्जा दरवाजाओं में सुन्दर नेत्र वाली स्त्रियायें कान्त श्रीरामजी की क्षण २ नवीन आनन्द को देने वाली अद्भुत शोभा को देखकर आनन्द में मग्न हुई आरती कर रही हैं ॥१॥

श्रीरामंघनसुन्दरं जनकजा सौदामिनी सत्प्रभां-
वाद्यानां ध्वनि गर्जितं च शिखिनो दृष्ट्वा समाकर्ण्यच ।
नृत्यन्तो मणिमन्दिरोच्च शिखरे शोभां विदध्युः परां-
तच्चालोक्य सुदम्पती शुशुभतुः प्रोद्दर्शका प्रेक्षणौ ॥२॥

सुन्दर मेघ की तरह सुन्दर श्याम श्रीराम जी सुन्दर विजली की तरह श्रीजनकजा जी इन दोनों की सुन्दर शोभा को देखकर तथा मार्ग में गर्जित बाजाओं की ध्वनि को सुनकर मणि मन्दिरों के ऊँचे शिखरों पर मोर नृत्य कर रहे हैं। इस शोभा को देखकर दोनों दम्पत्ति श्रीसीताराम जी अति प्रसन्न हो रहे हैं, ऐसा दृश्य दर्शकों ने देखा ॥२॥

इत्थं त्रिलोक तरुणी मणि कण्ठ रत्नो-
मार्तण्डवन्श मणिपंक्ति रथात्मजो सौ ।
श्रीसीतया सहमुदा प्युदिताम्बुजाक्ष्यो-
मध्यान्हकाशन गृहान्ति कमाजगाम ॥३॥

इस प्रकार तीनों लोकों की उत्तम तरुणियों के कण्ठ रत्न सूर्य वंशज श्रीमहाराज दशरथ जी के आत्मज ये श्रीरामजी श्रीसीताजी के साथ कमल सदृश नेत्रोंसे सबको देखते हुये प्रसन्नताके साथ मध्याह्न भोजन कुञ्ज के समीप आ पहुँचे॥३॥

श्रुताम्बुजायत दृशां पदभूषणानां वाद्यौघकध्वनिमपीह समाजकस्य ।
साप्यागताशन गृहाधिकृता सखीनां स्वस्यागणै रभिमुख प्रिययाप्रियस्य ॥४ ।

कमल सदृश विशाल नेत्र वाली सखियों के चरण भूषणों की तथा बाजाओं की महान् ध्वनि को सुनकर भोजन कुञ्जकी अधिष्ठात्रिणी अपनी सखिगणों को साथ लेकर श्रीप्रिया प्रियतम जू के स्वागत के लिए सन्मुख आयीं ॥४॥

नीराजितौ नवसरोज विशाल नेत्रौ श्रीजानकी रघुवरौ गजस्यन्दनस्थौ ॥
दिव्याङ्गनाङ्ग परिगुम्फन वाहनेना नीतौ तयाशन गृहान्तर रत्नभूमौ ॥५ ।

भोजन कुञ्ज की यूथेश्वरी ने नवीन कमल के समान विशाल नेत्र वाले दिव्याङ्गनाओं से परि-गुम्फित, हाथी के रथ में बैठे हुए श्रीजानकी राघव जी की आरती की उसके बाद हाथीके रथसे रत्नमयी भूमि पर उतार कर भोजन कुञ्ज के अन्दर लिवा लायी ॥५॥

कृत्वार्घ्य मङ्गल विधि परिवार्य मुक्तामाल्यानि शैन्धवमथैव च कृष्णिकाश्च ॥
वासों विभूषण मुपार्ज्य तया तयोर्वै प्रक्षालितं पदयुगं नलिनी दलाभम् ॥६॥

रत्नमयी वेदी पर बैठा करके पहले अर्घ्य पाद्य आदि भूमि पर मङ्गल विधि को करके उसके बाद मुक्ता मणिमालाओं को न्यौछावर करके तथा राई लोन उतार करके फिर दोनों सरकारों का स्वल्प वस्त्र भूषणों का निर्माण करके फिर नलनी (कमलिनी) दल के समान सुकुमार अरुण दोनों सरकारों के चरणों को कुञ्जेश्वरी ने धोया ॥६॥

संस्थाप्य रत्न खचितां सुक विस्तराढ्ये वस्त्रैकशोभित मनोहर दम्पतीतौ ॥
सिंहाशने व्यजन काञ्चन वारिपात्रा न्यादाय सेवन विधौ प्रमदा परिस्थे ॥७॥

रत्नों से खचित वस्त्रों के बिस्तर वाले सिंहासन में एक २ वस्त्र को पहने हुए मनोहर दम्पतियो को बैठाकर व्यजन, स्वर्ण की झारी जलपात्र आदि सेवा की सामग्रियों को लेकर स्त्रियायें (प्रमदायें) अगल बगल खड़ी होगयीं ॥७॥

पात्रे निधाय बहुश श्चषकान्सुवर्णे नाना सुरत्न रचितान्धृत तेमनांश्च ॥
उष्णान्तु भोजन मथो विधिना चतुष्क षड्भिरसै रशनगेहकयाहि नीतम् ॥८॥

स्वर्ण पात्र में नाना प्रकार की रत्न रचित कटोरियों को रखकर विविध प्रकार के ताजे पदार्थों को रखकर (परस कर) तथा थालों में षटरस चार प्रकार के भोजनों को परस कर कुञ्ज की यूथेश्वरी लेकर आयी ॥८॥

अग्रे तदा जनकजा रघुनन्दयोः सा स्थित्वा सुकारयति भोज्यविधान दृष्टिम् ॥
यद्रोचते धिकतया जनकात्मजायैः रामायवा किमपि तद्विपुलं ददाति ॥९॥

वह कुञ्जेश्वरी उस समय श्री जनकजा रघुनन्दन जी के आगे बैठकर सुन्दर भोजन के विधानो में दृष्टि करा रही है । श्री जनकात्मजा जी और श्रीराम जी को जो भी वस्तु अधिक रुचिकर होती है उसे कोई भी वस्तु को बहुत परसती है ॥९॥

Scanned by CamScanner

अन्याभगिन्यो जनकात्मजाया रामस्यभार्य्या मिथिलेन्द्र पुत्र्यः ॥
देशान्तरीयावनि पालपुत्र्यः सम्बन्धतस्ता अपि तत्समानाः । १०॥

श्री जनकात्मजा जी की बहिन जो मिथिलापति महाराज की पुत्रियां हैं श्रीरामजी की भार्य्या हैं तथा और अन्य देशके राजाओंकी कन्या वे भी सम्बन्ध से उन किशोरी जी के समान हैं॥१०॥

रत्नाशने ताः परितो विरेजुः सुधाशन ङ्काञ्चनके सुपात्रे ॥
अश्नन्ति तासां परिवेषयन्ति तद्गेहका याः परिचारिकावै ॥११॥

रत्न सिंहासन पर बैठे हुए दोनों सरकारों को अगल बगल चारों तरफ बैठी हुई उन सबको भी भोजन कुञ्ज की जो भी परि चारिका हैं वे सुन्दर स्वर्ण पात्रों में अमृत के समान भोजन सामग्रियों को उन सबके लिए भी परस रही हैं, वे सब साथ ही पा रही हैं ॥११॥

वीणा स्वरी कापि करे सुवीण मादाय गानम्मधुरस्वरेण ॥
सारङ्गरागेण समूर्छनञ्च करोति सीता प्रियरोचनाय ॥१२॥

कोई वीणा में स्वर भरी हुई सुन्दर वीणा को सुन्दर तरह से हाथ में लेकर गान कर रही है। श्रीसीताप्रिय के रुचि बढ़ाने के लिए सारङ्ग राग से मूर्छना पूर्वक मधुर स्वर से गा रही है ॥१२॥

बिलम्बकारं कुरुतां सुभोजनं सर्वप्रिय प्राणपरप्रियौ तौ ॥
इत्या शयेनाम्बुज सुन्दराक्षी बिलक्षणा ङ्कापि करोति वार्त्ताम् । १३।

कमल सदृश विशाल नेत्र वाली कोई विलक्षण सबको प्रिय लगने वाले दोनों श्री प्रियाप्रिय जू भोजन को बड़ी देरी तक करते रहे इस आशय से वार्ता करती है ॥१३॥

इत्थं तया भोजन मम्बुजाक्ष्या सुकारितं राघवसीतयोर्वै ॥
आदाय चामीकर वारिपात्र ङ्करे पुनश्चाचमनं स्वयंहि ॥१४॥

कमल के सदृश नेत्र वाली उस कुञ्जेश्वरी ने श्रीराघव सीताजी को भोजन कराया, उसके बाद स्वर्ण के जलपात्र को हाथ में लेकर स्वयं ही आचमन कराया ॥१४॥

गृहान्तरं प्राण परप्रियौ तवानीय नव्यांसुक भूषणैश्च ॥
संस्कृत्य सौगन्धि सुपुष्पमाल्यैः पर्य्यंकनिवेश्याथ ददौ सुबीटिम् ॥१५॥

और प्राणों से अति प्रिय दोनों सरकारों को दूसरे घर में लाकर के नवीन वस्त्र भूषणों से शृङ्गार किया, सुगन्ध आदि सुन्दर पुष्पों की मालाओं से पर्यंक की रचना करके उस पर बैठाया और सुन्दर पान का बीरा हाथ में दिया ॥१५॥

यथाम्बुजाक्षो बहुशश्चतस्य वस्त्रैः सुगन्धैश्च सुबीटिकाभिः ॥
सम्मानिताः सर्वसुकिंकरीभि स्तत्रागता यत्र सुम्पतीस्तः ॥१६॥

कुञ्जेश्वरी के अनुचरियों ने श्रीजुगल सरकारके साथ की कमलनयनी सब सखियों (वनिताओं को वस्त्र सुगन्धि, पान-बीरा आदिक वस्तुओं से सम्मान किया और वे सब जहां जुगल सरकार बिराजे हैं वहाँ पर आ पहुँची ॥१६॥

Scanned by CamScanner

शय्यां समाशीन सुकारिताशनौ ताम्बूल रागाधर शोभनारूणौ ॥
तौ दम्पती तत्र तया नीराजितौ गानैश्च वाद्यैश्च सुपुष्प वर्षणैः ॥१७॥

भोजन करके पर्यङ्क पर बैठे हुए; पान के चर्वण से अरुण अधर वाले दोनों सरकारों की कुञ्जेश्वरी ने उस स्थान पर गान वाद्य पुष्प वर्षा पूर्वक आरती की ॥१७॥

स्वापं विधातुम्मिथिलेन्द्र पुत्र्या मध्याह्नकं वेश्मनि तत्र सख्यः ॥
प्रज्ञापिता सर्वसमान शीला दत्वा स्वहस्तेन च वीटिकां च ॥१८॥

श्री प्रियतम जू श्री मिथिलेस पुत्री जी के साथ मध्याह्न शयन कुञ्ज में शयन करेंगे इस प्रकार के विधान को; समान शीलवाली अपनी सब सखियों के लिये अपने हाथ से पान देकर, जनाया ॥१८॥

वेला व्यतीता कुरू भोजनं त्वं नाश्नासि सार्द्धं हठतः सदात्वम् ॥
सखीति शब्देन तदाहि सीता ताम्प्रत्युवाचेति वचः सुखाप्तम् ॥१९॥

हे सखी ? भोजन का समय बीत रहा है जाओ भोजन करो। मैं हमेशा तुमको अपने साथ पवाना चाहती हूँ परन्तु तुम हठ से मेरे साथ भोजन नहीं करती हो। इस प्रकार के सुख से भरे हुए शब्दों में श्री सीता जू ने कुञ्जेश्वरी को कहा ॥१९॥

यास्यामि चेत्कुरू मदीच्छित मत्रगेहे मध्याह्निकं प्रवलधर्म्मं हरोपचारे ॥
ताम्बूलवारि कुसुमाञ्जित गन्धसश्री एलालवङ्ग घन सारक चन्दनैश्च ॥२०॥
पुष्पैःसुगुम्फित नवैर्व्यंजनैर्विचाल्ये र्बालाभिराभिरभितः परिसेव्यमाना।
स्वापं सरोज नयने रघुनन्दनेन शय्या त्वदर्थं रचिता हि मया श्रमेण॥२१॥

मैं तब जाऊँगी जब आप इस मध्याह्निक शयन कुञ्ज में पान; गुलाव जल, चन्दन, अतरादिक सुगन्ध, इचायची, लौंग कपूर, चन्दन, फूलों से गुम्फित नवीन व्यजन इन सेवा सामग्रियों से इन सब सखियों द्वारा चारों तरफ से सम्यक् प्रकार सेवित होकर के कमल सदृश नेत्र वाले इन श्री रघुनाथ जी के साथ, बड़े परिश्रम के साथ आप के लिए मेरी बनायी हुई इस पर्यङ्क में आप शयन कर जाँय और मेरे प्रवल धर्म रूप एकान्तिकी सेवा में आप मेरी इच्छा को पूर्ण कर दें तो तब मैं भोजन करने जाऊँगी ॥२०॥ २१॥

त्वद्वाञ्छया शयनमत्र गृहे करोमि स्वापायने प्यधिकृते हृदि मन्यते किम् ॥
भोक्तुं प्रयाहि तदपीच्छितकं हि कूर्वे श्रुत्वेति सुन्दर गिरं जनकात्मजायाः ॥२२॥

श्री किशोरी जी बोलीं कि तुम्हारी इच्छा से मैं इस शयन घर में शयन करूँगी। मैं सोने के लिए तैयार भी हूँ तो भी तुम्हारे हृदय में यह अन्य बात क्यों आ गयी। तुम भोजन करने केलिए जाओ; तुम्हारी जो कुछ भी इच्छा होगी उसे भी मैं पूरा करूँगी। इस प्रकार के श्री जनकात्मजा जी के शब्द को सुनकर ॥२२॥

सेवाविधौ सहचरीः सकलाष्टवर्षाः लावण्य सौरभ कलाञ्चित भूषिताङ्गाः ॥
शय्यान्तिके परिनियोज्य तथा वहिश्च भोक्तुं गताशन गृहाधिकृता मुदावै ।२३।

आठ वर्ष वाली लावण्यता, सुगन्धि, विलास कलाञ्चिता; सुन्दर भूषित अङ्ग वाली सहचरियों को पर्यङ्क के पास सेवा विधि में सम्यक् प्रकार नियोजित करके भोजन कुञ्ज की यूथेश्वरी आनन्द मग्न होकर भोजन के लिए शयन कुञ्ज से बाहर गयी ॥२३॥

Scanned by CamScanner

निदाघ काले महदुस्म जाले भूम्यन्तराले शिशिरे सुगेहे ॥
पुष्पै स्सुगन्धैः कृत कल्पचित्रैः शय्यां प्रियाभिः रचिता सखीभिः ॥२४॥

महान् गर्मी से तपे हुए ग्रीष्म काल में भूमि के अन्तराल में शिशिर ऋतु के सुन्दर घर में प्रिया सखियों के द्वारा चित्र विचित्र चित्रों से [कलाओं से] रचना किया हुआ सुन्दर सुगन्धित पुष्पों की शय्या में ॥२४॥

सीतासखस्तत्र विचित्र कान्तिरनन्तरं राजकुमारीकाभिः ॥
संसेव्यमानो व्यजनैश्च चामरैः मध्याह्न स्वापं सुतराङ्करोति ॥२५॥

निरन्तर राज कुमारियों के द्वारा पंखा चवरादि सामग्रियों से सुसेवित विचित्र कान्ति वाले श्री सीता जी के सखा उस मध्याह्न शयन घर में सुन्दर तरह से शयन कर रहे हैं ॥२५॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने भोजन लीलावर्णनं नाम द्वित्रिंसत्तमः सर्गः ॥३२॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने भोजन लीला वर्णनं नाम द्वित्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३२॥

मध्याह्नोत्तर मम्बुजायतदृशः श्रीजानकीरामयोः
सख्यः स्वाप गृहाङ्गणे मधुरया कुर्वन्ति गानं गिरा
तच्छ्रुत्वाच विनिद्रितौ सुखनिधी श्रीजानकी राघवो
सुस्थायान्सुक भूषणानि सुविधं चान्योन्य मेत्यस्थितौ ॥१॥

मध्याह्न काल के बाद [३ बजे के समय पर] कमल के सदृश नेत्र वाली श्री जानकी राम जी की सखियाँ शयनकुंज के आँगन में इकट्ठी होकर मधुर स्वर से गान करने लगी उस गान को सुन कर सुख के समुद्र श्री जानकी राघव जी निद्रा से रहित होकर सुन्दर तरह से उठे। वस्त्र भूषणों को सुन्दर विधि पूर्वक धारण करके परस्पर गलबाहीं देकर बैठे ॥१॥

तदा दर्पणमवारि पात्रञ्च हस्तै गृहीत्वा समीपङ्गता चैकबाला ॥
प्रधाव्यानन न्दपर्णं दर्शयित्वा कृता चित्रविन्दुश्चभाले विशाले ॥२॥

कोई एक बाला उस समय दर्पण, जल-पान को हाथ में लेकर समीप गयी; दोनों सरकार को कुल्ला कराया; मुख धोया; दर्पण दिखाया; सुन्दर चित्र के सहित बिन्दु को विशाल भाल में लगा दिया ॥२॥

तदैका सखी हस्त नीराजनैत्य प्रिया प्राणनाथौ सुनीराजयित्वा ॥
तया गान वाद्यैः सुनृत्यं मनोज्ञं कृतं भाव दृष्ट्या प्रफुल्लाम्बुजाक्ष्या ॥३॥

कोई एक सखी हाथ में आरती को लेकर श्रीजुगल सरकार प्रिया प्रियतम जू के समीप आकर सुन्दर तरह से आरती की और गान, बजान, नृत्य व मन रमणीय भाव दृष्टि से खिले हुए कमल सदृश नेत्र वाली ने कटाक्ष किया ॥३॥

तदेकामुदादाय हस्तेम्बुजाभे सखी भक्षपानस्यपात्रं नवद्या ॥
क्वणन्नूपुराभिः सखीभिः समेता समागत्यभक्ष्यं ददौ वारि पानम् ॥४॥

Scanned by CamScanner

उस समय कोई दोष रहित सखी प्रसन्न होकर कमल सदृश हाथ में भक्ष्य और पान के पदार्थों से भरे पात्र को लेकर अपनी सखियों के साथ नूपुरों को छमकाती हुई श्री प्रिया प्रियतम जू के पास आयीं; भोजन पवाया; जल पिलाया ॥४॥

तदाकारयित्वा तु सा वारि पानं लवङ्गैलकापुञ्ज कर्पूर युक्ताम् ।
मुदा मोदि ताम्बूल वीटीं ददौ जानकी रामयो रम्बुजाभे सुहस्ते ॥५॥

इस प्रकार जल पान कराके लौंग इलायची, सुपारी, कपूर युक्त और भी स्वादिष्ट पदार्थों से बना पान के वीराओं को श्री जानकी राम जी के कमल सदृश सुन्दर हाथों में दिया ॥५॥

प्रियाया मुखे प्राणनाथः सुवीटीं ददौ स्नेहभावात्प्रिया वै प्रियस्या ॥
मुदा दर्पणैके मुखस्य श्रियं द्वौ परास्पश्यतो जानकीरामचन्द्रौ ॥६॥

बड़े स्नेह भाव से भरे प्र ण नाथ ने प्रिया जू के मुख में, प्रिया जू ने श्री प्रियतम जू के मुख में सुन्दर पान के वीरा को दिया कोई एक सखी ने प्रसन्नता पूर्वक दपरण को लेकर दिखा दिया; दोनों सरकार परस्पर अपने मुख की श्री को देखने लगे ॥६॥

तदेतस्ततो दम्पतो गुम्फितांशौ समुत्थाय पर्य्यङ्कतः शोभिताङ्गौ ॥
सखीभिस्त्वनन्ताभिरावेष्टितौ तौ क्रीडमानौ भ्रमेतेङ्गणे शोभमाने ॥७॥

उसके बाद सुन्दर शोभित अङ्ग वाले परस्पर अंश भुजा दिए हुये दोनों सरकार इस पलंग पर से उठकर अनन्त सखियों से घिरे हुए शयन कुञ्ज के आँगन में घूमते हुए खेलने में शोभित हो रहे हैं ॥७॥

तदेकया मनोज्ञया तडिद्घनाभ शोभनौ विनीय तौप्रियौ प्रियौ सुकारितश्च भोजनम् ।
मनोज्ञ पूपमोदकैरनेकधैव संस्कृतैः पुनश्च भूषणांशुकैः सुसंस्कृतौ च दम्पती ॥८॥

उस समय कोई एक मनोज्ञा सखी बिजली और मेघ के समान दोनों सरकारों को कुञ्ज में ले जाकर मन रमणीय पूआ लड्डू आदि अनेक प्रकार के सुन्दर तरह से बने हुये पदार्थों से भोजन कराया फिर भूषण वस्त्रों से दम्पत्ति का शृङ्गार किया ॥८॥

सीतारामौ गुण गण विमलौ पद्म पाण्यंघ्रिनेत्रौ
रोचिष्णुतौ मणिगण खचितै भूषणै भाविताङ्गौ
नाना रत्नै विरचित विशदे पीठके चानिवेश्य
भ्राजत्पात्रेमुकलित कुशुमै रानी राजन्ति सख्यः॥९॥

निर्मल गुण समूह वाले कमलवत् कर चरण नेत्र वाले, सुन्दर लावण्यता से प्रकाशित, दिव्य मणि गण खचित भूषणों से भावित अङ्ग वाले श्रीसीताराम जी को नाना रत्नों से रचित प्रकाशमान निर्मल सिंहासन पर लाकर बैठाया; प्रकाशमान पात्र में अधखिले फूलों से सखियाँ आरती करने लगीं ॥ ९ ॥

नीराजमानौ जनकात्मजा श्रीरामौ सखीभिः परिवारितौ च ॥
परस्पर ङ्किश्च मनोभिलाषं वाक्यानुभावैः कुरुतः प्रकाशम् ॥१०॥

Scanned by CamScanner

परस्पर किंचित् मनोभिलषित वाक्यों से अनुभवों को प्रकाशित करते हुए सखियों ने श्रीजनकात्मजा राम जी को घेर कर आरती की ॥१०॥

यामैक शेषे दिवशेर्क कीर्णा स्तीव्रत्व मुत्सृज्य दधन्त्यनुष्णम् ॥
मरुच्च मन्दःसरसि प्रविश्य सरोज गन्धी वहति प्रियाद्य ॥११॥

दिन के एक याम शेष रहने पर (४ बजे से ७ बजे तक) सूर्य किरणों की तीव्रता को त्यागते हुए शीतलता को धारण करने लगे हैं और वायु सरोवरों में प्रवेश करके कमलों की सुगन्ध को लेकर मन्द २ वह रही है। हे प्रिय ? इस समय ॥११॥

मध्याह्न सङ्कोच गतं तरूणां छायाञ्च विस्तारक मापमद्यः ॥
इत्थंप्रिया प्राणपति प्रणीतं ग्रैष्म्यं हि विज्ञाय सखीवभाषे ॥१२॥

दो पहर का सूर्य संकोच को प्राप्त हो गया; वृत्तों की छाया लम्बी हो गयी। इस प्रकार श्री प्रिया जू प्राणपति के कहे हुए ग्रीष्म ऋतु को समझीं। तब एक सखी बोली ॥१२॥

छायं तरूणां हि तरोरतलम्बै सीतानि गेहान्तर माश्रयन्ते ॥
मध्यह्नके चोत्तर के त्वदेताः स्वाराम रम्ये किलसञ्चरन्ति ॥१३॥

वृत्तों की छाया वृत्तों के नीचे और शीतलता महलों के अन्दर आश्रयण करती है सो इस समय मध्याह्न के बाद उत्तर समय होने पर यह छाया और शीतलता आपके विलास करने रमणीय बनों में क्या तो विचर रही है (देखो न) ॥१३॥

इत्थं भाष्य परस्परैक हृदया वन्योन्य तोषावहा
वन्योन्यं गुण रूप साम्य विभवौ श्रीजानकीराघवौ।
आस्थायेभरथं प्रकाश निवहं सार्द्धं सखीनां गणै
र्नानापुष्पलता तणाग शिशिरां वाटीं मुदा जग्मतुः ॥१४॥

परस्पर एक हृदय वाली, परस्पर संतोष को आवाहन करने वाली सखी परस्पर गुण रूप ऐश्वर्य में बराबर स्वरूप वाले श्री जानकी राघव जी को जब ऐसा कही तब प्रकाशपुञ्ज हाथी के रथ में सखियों के समूह को साथ लेकर बैठे और विविध प्रकार के पुष्पों की लता तथा कमल खिले हुए अनेक सरोवरों से शिशिर ऋतु के सदृश बनी हुई वाटिका में आनन्द पूर्वक गयी ॥१४॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने मध्याह्नोत्तरोत्थापन समय वर्णनो नाम त्रयस्त्रिंशत्तमः सर्गः ॥३३॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायाँ रहस्याख्याने मध्यानोत्तरोत्थापन समय वर्णनो नाम त्रयस्त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३३॥

सखीभिरावेष्टित नागयाने दिव्याम्बरा भूषणभूषिताभिः
बह्वुर्वसीभि र्परिसेव्यमानो रत्यायुतोमन्मथ एवरामः ॥१॥

दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषिता, सखि गणोंसे घिरे हुए श्रीरामजी हाथियों के रथमें बैठे हुए ऐसे लगते हैं जैसे बहुत उर्वशी आदि अप्सराओं से परिसेवित रति के सहित मन्मथही [कामदेव] शोभित होता हो ॥१॥

Scanned by CamScanner

प्रासाद सूच्चोच्च परम्परासू स्वस्यैव पत्नी निवहस्यमार्गे ॥
पुष्पैः सुगन्धै रधिवासिते सौ गच्छन्त्वभौवाम सुभाग वामः ॥२॥

ऊंचे २ महलों की परम्परा (लाइन) अपनी ह। पत्नियों के निवास महलों के मार्ग से सुन्दर सुगन्धित पुष्प बिछे हुए सिंचित मार्गसे बाम भाग में अपनी पत्नी श्रीसीता जी को लिए हुए श्रीरामजी॥२॥

मार्गेतु तस्मिन्निज सुन्दरीणा सुभार्यया मैथिल राजपुत्र्या ॥
समेत मेनं वहुकाम कान्तं सख्यो गवाक्ष्येषु नीराजयन्ति ॥३॥

उन अपनी सुन्दरी पत्नियों के मार्ग से मैथिल राजपुत्री सुन्दर भार्य्या के साथ बहुत कामों के समान कान्ति वाले इन श्रीप्रियतम जू को सखियां छज्जा, झरोखादिकों से आरती करती हैं ॥३॥

कनकभवन खण्डे मण्डिते हर्म्य जाले निज-
नव रमणीनां नूपुरा रावरम्यैः ॥
ललित वहुलताभिः पुष्पिताभिः सुगुल्मै-
र्विविध कुसुम फुल्लैः संकुले चान्तरन्यैः ॥४॥

श्रीकनकभवन का ग्रीष्म अनुकूल खण्ड, जो मणिरत्नों से भूषित छज्जा झरोखा वाले नौखण्डा महलों से कई आवरण मण्डलाकार बना है, उस बन में निज नवीन रमणियों के समूह द्वारा नूपुरों के झनकार से रमणीय बना हुआ तथा बहुत पुष्पित ललित लताओं से तथा बिविध प्रकार के फूल खिले हुए नवीन बृक्षों से भरा हुआ है जिस बन के अन्दर ॥४॥

विपुल बिहंग युग्मैः क्रीडमाने नदद्भि मधुकर ख रन्ये स्वर्ण वेदी विचित्रे ॥
कमल कुल वराढ्यै र्भ्राज माने तड़ागे रघुवर इभ यानं स्सुप्रवेशं चकार ॥५॥

बहुत पक्षी दो २ होकर विलास करते हैं, मधुर रमणीय शब्द से गरजते हैं जिस बन में चित्र विचित्र स्वर्णकी वेदिकायें हैं अनेक रङ्ग के कमलों से भरे तड़ाग प्रकाशमान हो रहे हैं-इस प्रकार के बन में हाथी के रथ में बैठे हुए श्रीजुगल सरकारों ने सुन्दर तरह प्रवेश किया ॥५॥

तौ तत्र शौन्दर्य्य चमत्कृतांगा बतारितौ रत्न भुविप्रियौ च ॥
स्कन्धावलम्वैश्च करावलम्वै स्सखीभिरत्यन्त मनोवलम्वै ॥६॥

शौन्दर्य के चमत्कार से चमत्कृत दोनों सरकारों को रत्नमयी भूमि पर उस बन की यूथेश्वरी के स्वागत सत्कार पूर्वक सखियों के मानसिक उत्साह के बल से तथा कन्धाओं के अवलन्व से तथा हाथों के अभलम्व से उतारे गये ॥६॥

तद्वाटिकाया अधिकारिकायाः सखी समागत्य नीराजितौतौ ॥
श्रीजानकीराघव रम्यरूपौ गानैः सुवाद्यै र्मधुरान्नभोगैः ॥७॥

उस वाटिका की अधिकारिणी ने सखी समाज सहित आकर आरती की। सुन्दर गान, वाद्य, मधुर अन्नभोग द्वारा रमणीय रूप दोनों सरकारों को तृप्त किया ॥७॥

तया ततस्स्वर्ण वितर्दिकाया म्विस्तार वत्स्वास्तरणं सुवर्णम् ॥
विस्ताय्यं सीता रघुराज पुत्रौ संस्थापितौ सर्व सखी गणैश्च ॥८॥

Scanned by CamScanner

और एक स्वर्ण वेदिका में विस्तार पूर्वक सुन्दर रङ्ग के बिछावन बिछा करके सीता रघुराज पुत्र दोनों को सब सखीगणों के साथ बैठाया ॥८॥

तया पुनः श्रीमिथिलेन्द्रपुत्र्या रामस्य मुक्ताञ्चित भूषणानि ॥
व्याचीय पुष्पाञ्चित भूषणैस्तु प्रीत्या सुभक्त्या परिसंस्कृतौ तौ ॥९॥

फिर उस कुञ्जेश्वरी ने मुक्ताओं के भूषण तथा पुष्पों से बनाये हुये भूषणों से बड़े प्रेम पूर्वक श्रीमिथिलेश पुत्री श्रीराम जी का बड़ी भक्ति पूर्वक शृङ्गार किया ॥९॥

सरोज सन्दर्भ लता वितानके चानीय पुष्पाञ्चित भूषणाङ्गकौ ॥
सिंहासने तत्र तया निवेशितौ नाना सुपुष्पै रचिते मनोज्ञके ॥१०॥

इस प्रकार फूलों का शृङ्गार करके एक लता के कुञ्ज में कमलों का समूह वितान बिछावन पर दादिकों के रूप में सजा करके उस कुञ्ज के अन्दर मन रमणीय पुष्पों से रचित एक सिंहासन में दोनों सरकारों को बैठाया ॥१०॥

सख्यस्तु काश्चिद्व्यज नानि हस्ते धृत्वा सुपुष्पै ग्रंथितानि चात्र ॥
पुष्पातपत्राणि सरोजपर्णौ धृत्वा सुपुष्पान्ति चाम राणि ॥११॥

कोई सखी पुष्पों से रचित व्यजनों को हाथ में लिए, कोई सखी पुष्पों से रचित छत्र को अपने करकमल में लिए, कोई सखी पुष्पों से रचित चवरों को हाथ में लिए हैं ॥११॥

दण्डांश्च पुष्पै रचिता न्मनोज्ञान्धृत्वा सु पुष्पाञ्चित भूषणाङ्गा ॥
भव्याः प्रियायाश्च तथा प्रियस्य सख्यः शुभांगाः परितो विरेजुः ॥१२॥

कोई सखी पुष्पों से रचित दण्डाओं को हाथमें लिए स्वयं भी सब सखियां पुष्पों के बस्त्र भूषणों की धारण की हुई भव्य रूपा सुन्दर अङ्ग वाले श्री प्रिया प्रियतम जू के चारों तरफ में सखियां शोभित हैं ॥१२॥

काश्चित्सुपुष्पाञ्चित भूषणांगास्समाजके तत्र मनोज्ञ रूपाः ॥
कुर्वन्तिगानं समयोक्त रागै रानद्धकं वादयति प्रवीणा ॥१३॥

कोई सुन्दर पुष्पों के भूषणों से भूषित अङ्ग वाली, मन रमणीय स्वरूपा इस समाज में समय के अनुसार रागों से वीणा मृदंगादि बाजाओं द्वारा सुन्दर ताल पूर्वक गान करती हैं ॥१३॥

वीणाञ्च काचित् त्रिवीणाञ्च काचि त्काचिद्द्विवीणां सुषिरस्यभेदे ॥
काचि न्मुखाञ्चीनिपुणाहि तत्र सुवादयत्येव सुलायकासा ॥१४॥

कोई वीणा को, कोई त्रिवीणा को हवा आदिक के भेद से वंशी आदिक द्विवीणा को, कोई बड़ी निपुणा सखी मुखाञ्ची नामक बाजा को उस समाज में सुन्दर तरह से बजा रही हैं वे सबकी सब सुन्दर गाने बजाने में लायक हैं ॥१४॥

काश्चि त्सुगन्धाञ्चित वारि सिञ्च्या सिञ्चन्ति शीतंहि महासमाजे ॥
पुष्पांशुकांगा ललिता स्सहावा स्कर्षन्त्य एत्रात्मपतेः सुचित्तम् ॥१५॥

कोई गुलाब आदि सुगन्धित जल को सींच रही हैं, कोई उस महा समाज में अनेक शीतलोपा

Scanned by CamScanner

चार कर रही हैं, कोई पुष्पों के वस्त्र भूषणों से सजी हुई अत्यन्त लज्जिता अपने आत्म पति श्रीप्रियतम जू के सुन्दर चित्त को अपने हाव भावों से आकर्षित कर रही है ॥ १५॥

लता प्रतानै र्मणिभिश्चमत्कृतै मृदंग नादै र्मधुराभ्रगर्ज्जनैः ॥
जलोर्द्ध जन्त्रैः परितः प्रवर्षुकै ग्रीष्मर्तु रेवात्र बभूव वार्षुकः ॥१६॥

लता प्रतानों से, मणियों के चमत्कार से, मधुर मेघ के समान गर्जन करने वाले मेघ के नाद से जल जन्त्रों के द्वारा चारों तरफ ऊँचे फुआराओं की वर्षा से इस समय ग्रीष्म ऋतु होने पर भी इन लता कुञ्ज में वर्षा ऋतु शोभित हैं ॥१६॥

शृङ्गार नीराजन सूत्सवश्च कृत्वा सुधासारक नामकाश्च ।
देशान्तरीया स्सुरसाल वृक्षाः फलानि तेषाञ्च रसाधिकानि ॥१७॥

इस लता कुञ्ज में पुष्प-शृङ्गार, आरती उत्सव करके फिर सुधा सारक नाम के देशान्तरीय रसाल के वृक्षों को तथा उनके अत्यन्त रस से बढ़े हुए फलों को ॥१७॥

कूष्माण्डका कार फलानि वर्णै र्हरित्सुपीतान्य रूणानि कानि ॥
आनीय सीता रघुनन्दनाग्रे पुञ्जीकृता नीह महासमाजे ॥१८॥

कोई फल को जो पेठा के बराबर आकार वाले हैं कोई फल हरित रङ्ग के, कोई पीत रङ्ग के, कोई लाल रङ्ग के—इस प्रकार अलग २ रङ्ग के बड़े २ आमों के तथा छोटे आमों की भी अलग ढेर लाकर सखियों ने श्रीजुगल सरकार के आगे महासमाज के बीच में ढेरियों को लगाया ॥१८॥

रसञ्च निस्सार्य्यसुवर्ण पात्रे तुष्टि प्रद म्पुष्टि प्रदम्सुमिष्टम् ॥
पीत्वा प्रिया प्राणपति स्तु पूर्व मपूर्व मेवेति सशंश वाक्यैः ॥१९॥

और बहुत फलों का स्वर्ण पात्रों में रस निकाल कर तुष्टि पुष्टि देने वाले उस स्वादिष्ट रस को पहले दोनों प्राणप्रिया प्रियतम जू ने पिया—और अति मीठा है—ऐसी प्रशंसा अपने वाक्यों से की ॥१९॥

सख्य स्त्वनन्ताहि पुनः पपुश्चे त्येवंप्रशंस्याथ मुदं ययुश्च ॥
सुगन्धताम्बूल सुवीटिकाभिः श्रीरामरामाश्च तुतोष मुख्या ।२०॥

उसके बाद अनन्त सखियों ने भी उस रस को पिया और प्रशंसा करके आनन्द को प्राप्त हुईं। सुगन्धित पान वीणा आदिकोंसे दोनों सरकारों को कुञ्जेश्वरीने समाज सहित सबको सन्तुष्ट किया ॥२०॥

अनन्त रामाभि रसौ रसज्ञः श्रीसीतया पुष्प सुवेष शोभी ॥
शोभां विचित्रां प्रमदा वनस्य पश्यंश्च पश्यन्वि चचार रामः ॥२१॥

अनन्त सखियों के साथ बड़े रसज्ञ ये प्रियतम जू श्रीसीता जी के साथ पुष्प शृङ्गार से शोभित हुए। इस प्रकार यह प्रमदा वन की विचित्र शोभा को देखते २ श्रीराम जी व जानकी जी दोनों सरकार बन में विचरने लगे ॥२१॥

इत स्ततो भ्राम्य वनेतु तस्मिन्दृष्ट्वा शुभाम्मारकतैक वेदीम् ॥
स्थातुम्मनः कुर्वन्ति राम कामे प्रस्तारितं स्वास्तरण क्वयाचित् ॥२२॥

इधर उधर घूमते हुए उस बन में एक सुन्दर मर्कत मणि की वेदी को देखा। किसी ने दोनों सरकार इस वेदी पर बैठने की इच्छा कर रहे हैं, ऐसा जानकर सुन्दर बिछावन को बिछा दिया ॥२२॥

Scanned by CamScanner

ततः समास्थाय सुवेदिकान्ता मनेन यूना युवती व्रजेषु ॥
रन्तुं सुमध्वाशव पान गोष्ठी कृता मुदा राघवसुन्दरेण ॥२३॥

उस वेदिका पर युवती समूहों के साथ ये युवा पुरुष श्रीरामजी बैठे। रमण करने की इच्छा से रमणीय सुन्दर श्रीराघव जी ने इस वेदी में मधु (आसव) पान करने की सभा की ॥२३॥

नासैक मौक्तिक धराधर भास मानः–
सीताधराशव निरन्तर लालशोऽसौ ।
मध्वाशव म्परिनिपीय मदारूणाक्षः–
क्रीडां श्चकार रमणीभिरशेषभावैः ॥२४॥

नासामणि के हलन से प्रकाशमान अधर ओष्ठ वाले, श्रीसीता अधर पान की निरन्तर लालची, ये प्रियतमजू मैरेयको सुन्दर तरह पान करके मदारुणा नेत्र वाले रमणियोंके अशेष हाव भावों से बिलास (क्रीड़ा) करने लगे ॥२४॥

श्यामालकश्चपल कुण्डल चाञ्चलाक्षः–
स्वेदाम्बु विन्दुक मुखाम्बुज मोहन श्रीः ॥
कान्ता गणे कुसुम कन्दुक ताड्यमानो–
धावन्नसौ विजयते रघुराजसूनुः ॥२५॥

श्याम, चमकीले, कुटिल, चपल अलक वाले, चञ्चल कुण्डल व नेत्र वाले, पसीना के विन्दुओं से शोभित मुख कमल वाले अति मन मोहन शोभायमान, कान्तागणों के बीच पुष्प-गेंदों से मार खाने वाले, स्वयं हाथ में पुष्प गेंद को लेकर कान्तागणों को जीतनेकी इच्छा से दौड़ने वाले इन रघुराजकुमार की जय हो ॥२५॥

नरेन्द्र नागेन्द्र देवेन्द्रजानाङ्गणे महीपेन्द्र कुमार रामः ।
कुर्वन्ति काचिल्ललितांहि लीलां प्रत्येक रूपः प्रवभूव तासु ॥२६॥

नरेन्द्र कन्या, नागेन्द्र कन्या, देवेन्द्र कन्याओं को भीड़में राजेन्द्रकुमार श्रीरामजी, कोई ललित लीलाओं को करने वाली उन रमणीयों के बीच प्रत्येक के साथ, एक २ रूप होगये ॥२६॥

रामस्य रूपं रमणी विमोहनं साधारणं तत्र कटाक्ष वीक्षणम् ॥
रते दिंवा दोष इति श्रुते र्वचो नसज्जते तत्र विपश्चि ताम्मते। २७॥

श्रीराम जी का रूप सब रमणी समाज को अत्यन्त मोहित करने वाला है। आपस में कटाक्षों का प्रहार सबके साथ साधारण रूप से हो रहा है दिन की रति का वेद की वाणी दोष बताती हैं इसलिए उस स्थान पर विद्वानों के मत से श्रीरामजी सुसज्जित नहीं होते हैं ॥२७॥

पुंशो बलं किम्बलिनोऽपि भूयः प्रवर्त्तमाने त्वबला बलेवै ॥
घृतं यथा ग्रावति शीनशीनं शीमं द्रवत्यत्र विचारणा का ॥२८॥

बलवान होने पर भी पुरुष का बल अबला के बल के प्रवर्तमान होने पर क्या काम कर सकता जैसे जलती हुई अग्नि में ठन्डी से बहुत कड़ा होने पर भी घी बहुत शीघ्र द्रवित हो जाता है, इस स्थान पर विचार ही क्या करना है ॥२८॥

Scanned by CamScanner

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां बाटिकागमन वर्णनो नाम द्वित्रिंसत्तमः सर्गः ॥३४॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां बाटिकागमन वर्णनं नाम चतुस्त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३४॥

त्वम्मन्मथो माद्यसि मानसम्मे पुनर्न तोषं प्रकरोपि कस्मात् ॥
करं गृहीत्वा वदतीति वाक्य रामस्य रामेन्दु मुखस्य काचित॥१॥

आप मेरे मन में मन्मथ को उन्माद पैदा कर रहे हैं फिर संतोष को क्यों नहीं कर रहे हैं। इस प्रकार कहकर अत्यन्त रमणीय चन्द्रमा के सदृश मुख वाले श्रीरामजी के हाथ को पकड़लिया ॥१॥

मन्दार पुष्पाञ्चितया सुरेखौ बध्नाति पङ्केरूह रङ्गभासौ ॥
श्नेहा त्वमत्ताप्रमदाशुभाङ्गा वेण्यावला द्रामकरा वुभौच ॥२॥

कोई सुन्दर अङ्गवाली स्नेह से उन्मत्त प्रमदा ने मन्दार के पुष्पों से गुथी हुई अपने सिर की वेणी के बल से सुन्दर रेखा वाले कमल के सदृश लाल रङ्ग से प्रकाशमान श्रीरामजी के दोनों हाथों को बाँध रही है ॥२॥

धन्योयुवासौ तिरतौयुवाययाः करेण पङ्केरूह कोमलेन ॥
काञ्च्यास्रजा कङ्कणनूपुरेण वेणया सुवद्धोपि च ताड्यमानः॥३॥

अति विलास के प्रसंग में युवावस्था वाली के कोमल कर कमलों से, कमर की करधनी से, फूलों की मालाओं से, कङ्कण व नूपुरों से, सुन्दर वेणी से सुन्दर तरह बँधे होने पर भी पीटे जा रहे हैं, एवं भूत अहो ? ये युवक धन्य हैं ॥३॥

पासे तु काचित्करयोच्छलेन प्रियं प्रियार्हं सुदृढ़े सुनीत्वा ॥
लता गृहेषट्पद पुञ्ज गुञ्जे चानीय रामं सुरतञ्च चेष्ठे ॥४॥

कोई छल पूर्वक दोनों भुजाओं के बन्धन से मजबूत करके अत्यन्त प्रिय करने योग्य जो प्रियतम उनको बाँध कर किसी लताकुञ्ज में सुन्दर तरह से ले गयी जहाँ भ्रमरों के झुण्डों का गूँज मचा है वहां पर श्रीरामजी को लाकर सुरत की चेष्टा कर रही है ॥४॥

मध्या सुमध्या अपि पानमत्ता लज्जां तिरस्कृत्य भजन्तिशय्याम्॥
प्रौढ प्रवीणे च रतौ विनिन्यू रामं युवानं सुखमादधानम् ॥५॥

कोई पतली कमर वाली उम्र में यद्यपि मध्या है तो भी पान से मत्त हुई लज्जा को तिरस्कृत करके प्रौढ़, प्रवीण विलास में सुख का विधान करने वाले युवा श्री राम जी को शय्या पर जाकर सेवा कर रही है ॥५॥

रतौ भयं त्यज्य विलज्जयापि पत्युः समीपे रघुनन्दनस्य ॥
मध्वाशवा पान मुदा हि मुग्धाः कुर्वन्ति कश्चित् कमनीयकेहाम्॥६॥

कोई मुग्धा मध्वासव पान से प्रसन्न हुई लज्जा से भी भय को त्याग कर अपने पति श्रीरघुनाथ जी के समीप कोई विलास में कमनीय चेष्टा को कर रही है ॥६॥

Scanned by CamScanner

पुम्वेषा रमणा मशेष केलिभिज्ञा स्त्रीवेषं ललित लता निकुञ्जगेहे ॥
शय्यायां सरसिज खण्ड मण्डितायां श्रीरामं रमयति कापि प्रौढभावात् ॥७॥

कोई रमणी ललित लता निकुञ्ज के घर में स्वयं पुरुष भेष धारण की हुई सब प्रकार के केलि के भेदों को जानने वाली स्त्री के भेष में रमण को कमल के समूह से सुसज्जित पर्यङ्क पर श्रीरामजी को प्रौढ़ भाव से रमा रही हैं ॥७॥

शङ्के तं कृतमपि नागतोहि कस्मात्प्राणेशः प्रणय वशोऽनयाऽस्ति किम्मे ॥
सोत्कण्ठा दधति विचार्य्य चेति यावत्स्त्री वेषो रघुपति रागतश्च दृष्टः ॥८॥

मेरे प्राणेश मुझ से संकेत करने पर भी किस लिए नहीं आ पहुँचे क्या इसके प्रणय के वश में तो नहीं हो गये। जब तक इस प्रकार की उत्कण्ठा से विचार कर रही तब तक स्त्री वेष में रघुपति आ गए हैं ऐसा देखा ॥८॥

प्रौढानां सुरत मशेष कोक भेदैः कान्ताना मुरसिज कुङ्कु माश्रितानाम् ॥
उत्सृज्य प्रचुर कुचाङ्ग मुग्धकानाम्वामानां सुरत रतोहि राघवोसौ ॥९॥

कुंकुम से परिलिप्त वक्ष स्थल वाली प्रौढ़ा कान्ताओं के अनेक कोक कलाओं के भेदों से सुख देने वाली सुरत (विलास) को त्याग कर अविकशित वक्ष स्थल वाली मुग्धा अवस्था की स्त्रियों से राघव विलास आ सक्त हुए हैं ॥९॥

इत्येनं सरसिज सुन्दरायताक्ष्यो निन्दन्त्यो ललित प्रतान गेहे ॥
सीदन्त्यः सुमन शरेण विद्ध चित्तारत्यर्थं ह्युपमाशयानुचक्रुः ॥१०॥

इस प्रकार के कमल सदृश विशाल नेत्र वाले प्रियतम जू की कमल सदृश विशाल नेत्र वाली सुन्दर लता प्रतानों के घर में मनोजसर से व्याकुल चित्तवाली स्त्रियाएँ, निन्दा करती हुईं विलास के आशय से तिरष्कार पूर्वक अनुशरण कर रही हैं ॥१०॥

तावत्सोम्बुज नयनो नवीन कान्तः सर्वासां सविधमुपेत्य कामिनीनाम्॥
मुग्धा नामुरसिज राग रक्तः वक्षा उक्तानां मुदमुदयन्नराम रामः ॥११॥

तब तक कमल सदृश नेत्र वाले नवीन कान्त सभी कामिनियों के पास सुन्दर विधान पूर्वक प्राप्त होकर काम के राग से अनुरक्त वक्ष स्थल वाली उन मुग्धाओं के आनन्द को उदय करते हुए श्री रामजी ने रमण नहीं किया ॥११॥

शय्यायां कमल दलोपचारितायां शैथिल्यं स्मर समरेसमागतास्ताः ॥
शौन्दर्य्यस्त्वथ वसना लकाँगरागा रामस्याद्भुत नयनोत्सवे बभूवुः॥१२॥

कमल दलों से बने हुये पर्यङ्क पर काम समर में वे सब शिथिलता को प्राप्त हो गयीं। इन सब के वस्त्र, अलक, अङ्गराग, शौन्दर्य श्रीरामजी के नेत्रों का अद्भुत उत्सव के रूप में हो गये ॥१२॥

अन्योन्यं मनसिज काहवे नखानां दन्तानां व्रण चयमुपजात मङ्गे
तत्कान्तां रघुवर आनंताम्बुजाक्षीमंगुल्या दिशति विग्रहे स्य मन्द मन्दम् ॥१३॥

अन खिले कमल सदृश झुकी हुई नेत्र वाली उस अपनी कान्ता को रघुवर मन्द २ हँसते हुए परस्पर मनसिज समर में नखों के, दाँतों के चिह्न तथा अँगुली से उसके शरीर में घाव दिए इस प्रकार दोनों के अङ्गों में विलास के चिन्ह उत्पन्न हुए ॥१३॥

Scanned by CamScanner

कामोसौ कुशुम शरै स्त्वया विहीनां शौन्दर्य्याधिक वर विग्रहेणाभित्तः ॥
दृष्ट्वामांक्षणमपि तीक्षणैः सहन्यात् तेन त्वा महमपि नाथ नो त्यजामि ॥१४॥

शौन्दर्यता में अत्यन्त चढ़े बढ़े अत्यन्त सुन्दर विग्रह वाले आपके बिना व्यथित हुई यह कामदेव मेरे को देखकर तीक्षण पुष्पों के बाणों से मारेगा इसलिए हे नाथ ? मैं आप को क्षण भर भी नहीं त्याग सकती हूँ ॥१४॥

काप्येवं वदति विलक्षणं हि युक्त्या चानीयो रसि कर बन्धनेन बामा ॥
श्रीरामं रघुकुल भूषणं रसज्ञं रत्यन्ते किल न च मुञ्चति इति मोहात् ॥१५॥

कोई वामा बड़े रसज्ञ रघुकुल भूषण श्रीरामजी को अपने दोनों भुजाओं के बन्धन से अपने हृदय में लगाकर बिलास के अन्त में हास्य कारक कुछ बिलक्षण शब्दों को कहेंगे इस युक्ति से क्या तो इसी मोह से नहीं त्यागती है ? ॥१५।

कान्ताना ङ्कलित कटाक्ष दोलकाभिः कृत्येत्थं मनसिज मुत्सवं विचित्रम् ॥
आन्दोलोत्सवमपि कर्त्तु मुद्यतः संस्वागारे तदनुतथाभिधेजगाम् ॥१६॥

कान्ताओं के कटाक्ष-कला रूप झूलाओं से इस प्रकार विचित्र मनसिज उत्सवों को करके उसके बाद प्रत्यक्ष हिंडोला उत्सव को भी करने के लिये तैयार होकर इसी इन्तजाम से उसी कुञ्ज नामक अपने महल में गयी ।१६।।

श्रीसीतया सह मुदारघुराज सूनूरत्यायुतेन मदनेन सम प्रभोसौ ॥
अन्यास्वनेक बनिता गण सेव्यमानश्छत्रैश्च चामरचलै व्यंजनैर्विचाल्यैः॥१७॥

आनन्द मग्न होकर श्री सीता जो के साथ रघुराज कुमार रति के सहित मदन की तरह से प्रकाशमान हो रहे हैं । साथ में अन्य अनेक वनिता गणों से छत्र चवर व्यजन के सुन्दर संचार से सेवित हो रहे हैं ॥ १७॥

ततः समासाद्य सुदम्पती ता वान्दोलगेहं प्रमदा वनान्तम् ॥
कौसुम्भवासांसि मनोहराङ्गे विरेजतुर्धार्य्य सुकोमलानि ॥१८॥

इस तरह से दोनों दम्पत्ति प्रमदा वन (प्रमोदवन) के अन्दर आन्दोल कुञ्ज में प्राप्त हो कर सुन्दर कोमल कुसुमी रङ्ग के वस्त्रों को मनोहर अङ्गों में धारण करके हिंडोले पर प्रकाशमान हुये विराजमान हैं ॥१८॥

नीलारक्त सुपीत शुभ्रहरितै रत्नैस्समग्राञ्चितम्।
स्वर्णस्तम्भ सुयुग्मके तदुभयोर्मध्येपितिर्य्यक्स्थितम्॥
दण्डाधारक धारिणौ तदपरौ मायूरकौ संज्ञया।
तन्मायूरक युग्मके विधरिते स्याच्चौरशी संज्ञया॥१९॥

नील, लाल, पीत, सफेद, हरित आदि रङ्ग के सुन्दर रत्नों से सर्वाङ्ग रचित सुन्दर दो स्वर्ण खम्भाओं के बीच एक तिरछा स्वर्ण का दण्डा बना है जिसका आधारक दण्ड नाम है उस दण्डे को धारण किए हुये दो दण्डे और हैं जिनमें मोरों का चित्र बना है वे मायूरक नाम से दोनों दण्डे प्रसिद्ध हैं उन दोनों मायूरक नाम के दण्डों के बीच में उरशी नामक चार कोने का दण्डा है ॥१९॥

Scanned by CamScanner

तस्याः कोण चतुष्टयेतु बिहितं नीलेन्द्ररत्नैः कृतम् ।
दण्डानांहि चतुष्टयं सुललितं तन्मुन्द्रितं त्वासनम् ॥
मुक्तारत्न सुवर्ण सूत्र कलितैर्वस्त्रै बिधानाश्चितम् ।
दण्डेप्यत्र चतुष्टये सुरचितं स्तम्भेपि युग्मेगणम् ॥२०॥

उस उरशी नामक दण्डा के चारों कोनाओं पर जुटे हुए इन्द्र नील मणि आदिक रत्नों से बने हुए चार दण्डे सन्दर ललित नीचे को लटके हैं उनमें पेचों से कसा हुआ आसन है उस आसन में स्वर्ण सूत्र से बने हुये मुक्तारत्न जड़े ऐसे वस्त्र बिछे हुये हैं उस आसन के चारों कोनाओं में ऊपर के चारों सुरचित दण्डे जुटे हुए हैं। इस प्रकार दोनों खम्भाओं के बीच में बना हुआ यह आसन है और दोनों खम्भाओं के ऊपर भी ॥२०॥

रत्नैः सत्कृत पक्षिणां बहुबिधा वृत्त्याश्चरत्नै कृता ।
मुक्तातोरण जालमाल शिखरस्यादर्पणं दीर्घकम् ॥
एतैर्मण्डित मण्डपेन सहितं सीतापते रूक्मके ।
गेहे श्राबण कालिके बिजयते सद्दीप्तिमद्दोलकम् ॥ २१॥

रत्नों से सुन्दर सत्कृत बहुत जाति के पक्षी तथा रत्नों के बनाये हुवे वृक्ष तथा मुक्ताओं के बने तोरण, जाली, माला सजे हैं। ऊपर शिखर पर एक सुन्दर बड़ा दर्पण लगा है। इस प्रकार इन सब रचनाओं से भूषित प्रकाशमान हिंडोला में, रत्न रचित सीतापति के महल के अन्दर मण्डप में बैठे हुए दोनों सरकार श्रावण कालिक आन्दोलोत्सव विनोद में प्रकाशमान हो रहे हैं इस प्रकार आप की जय हो ॥ २१ ॥

सखी जनैर्प्रेषित दोलके तौ श्रीजानकी राघव शोभनाङ्गौ ॥
अन्योन्य संक्षेप भुजांशभव्यौ मन्दस्मितौ वीक्ष परस्परं द्वौ ॥२२॥

अनन्त सखियाँ झुला रहीहैं इस प्रकार झूला में बैठे हुए अत्यन्त सुन्दर शोभायमान अङ्गवाले श्रीजानकी राघव परस्पर गलबाहीं दिये हुए एक दूसरे को देखकर मन्द २ मुसकराते हुए दोनों दिव्य कल्याण स्वरूप हैं ॥२२॥

मल्लहार राग स्वर मुच्चरन्तौ समान तालै युत मूर्च्छनाभिः ॥
प्रफुल्लितास्यौ मणि भूषणाढ्या वान्दोल गेहे जयतो रमन्तौ ॥२३॥

मणि भूषणों से भूषित होकर मूर्छनाओं के सहित समान तालों से मल्हार राग में स्वर उच्चारण करने वाले प्रसन्न बदन आन्दोल घर में रमण करते हुए दोनों सरकारों की जय हो ॥२३॥

कुसुमराग मनोहर सृष्मिषः कुसुम राग सचैल सुवेषनी ॥
रघुवरस्स च सा जनकात्मजा शुशुभतु र्नव दोल युतौ हि तौ ॥२४॥

बनों के फूलों के रङ्ग को देख कर हरण हुआ है मन जिनका, कुसुमी रङ्ग के सुन्दर वस्त्रों को धारण किए हुए वे रघुवर और वे जनकात्मजा जी नवीन आन्दोलन में बैठ कर झूलते हुए सुन्दर शोभित हो रहे हैं ॥२४॥

Scanned by CamScanner

कनकमन्दिर दोल नवांगणे रघुबरः प्रियया सह दोलयन् ॥
स्वधर बिम्बित नाशिक मौक्तिको विजयते बिहसन्रमणीसखः ।२५॥

कभी कनकभवन के आन्दोल कुञ्ज के नवीन आँगन में श्री प्रिया जू के सहित झूलते हुए अधर विम्बों में नासामणि हिल रही है इस प्रकार के रमणियों के सखा श्रीरघुवर की जय हो ॥२५॥

बिबिधिरत्न सुचित्रित दोलके प्रियतमां क्षितिपेशसुतात्मजः ॥
स्वकर भूषितकां तु नृपा त्मजा रघुबरः शुशुभेपरिदोलयन् ॥२६॥

विविध प्रकार के रत्नों से सुन्दर चित्रित हिंडोला में अपने हाथ से शृङ्गार करायी हुई अपनी प्रियतमा राजकन्या को झूला झुलाते हुए चक्रवर्ति राजकुमार श्रीरघुवर जी अति शोभित हो रहे हैं ॥२६॥

हँसति गायति कौतुक मादध न्युवतिभिः कलयन्ततक स्वरान् ॥
ललित ताल कलाधर राघवः प्रियतमां रमयन्रमते स्वयम् ॥२७॥

युवतियों के द्वारा वीणा, मृदंग, मजीरा, वंशी आदिक बाजाओं का सुन्दर ताल मिला कर कौतुक कराते हुए ललित ताल गान आदि अनेकों कलाओं के पण्डित श्री राघव जी स्वयं हँसते हैं; गाते हैं और प्रियतमा को रमाते हुए स्वयं रमण कर रहे हैं ॥२७॥

अलक कुण्डल हार चलत्प्रभै र्नवयुवा युवतीव्रज सम्वृतः ॥
रघुवरः प्रियया सह दोलके लसति दोलकलाभिरवन्प्रियाम्॥२८॥

नवीन अवस्था वाली युवती समूहों से घिरे हुये हिंडोला की केलि की कलाओं को करके प्रिया को पालते हुए प्रिया के साथ रघुवर कुण्डल हार के हिलते हुए प्रकाश से झूला पर अति शोभित हो झूल रहे हैं ॥२८॥

युवतिभिः परिदोलित दोलके रघुवरः प्रियया सहदोलयन् ॥
जयति श्रावण केलि सुखावहे जनकजा मुखपद्म मधुव्रतः ॥२९॥

श्रावण की केलिओं के सुख में भरे हुए युवतियों के द्वारा सुन्दर तरह से झुलाए गये झूलापर श्री जनकजा जी के मुख कमल के भँवरा श्री रघुवर जी अपनी प्रिया के साथ झूलते हुए आप की जय हो । २९ ॥

श्रम कणा नवलोक्य शशि प्रभे जनकजा वदने रघुनन्दनः ॥
कमल कोमलभूषित पाणिना व्यजनकं सुमनाश्चित मादधत्॥३० ।

श्रीजनकजा जी के चन्द्रमा सदृश प्रकाशमान मुख चन्द्र में पसीना के विन्दुओं को देख कर श्री रघुनन्दन जी कमल के समान कोमल, सुन्दर भूषणों से भूषित अपने हाथ में पुष्पों से रचित व्यजन को लेकर श्री प्रिया जू को हवा करने लगे ॥३०॥

सुचि सुगन्धजलं मुख वासनं यदि यदीच्छति चात्मसुखायताम् ॥
सहिनिषेधितकिङ्कर राघवः प्रियतमा मुपतिष्ठति तद्धिते ।३१॥

श्री प्रिया जू के मना करने पर भी किंकर की तरह श्रीराघव जी अपने आत्मा के सुख के लिये यदि प्रिया जू चाहेंगी तो मैं तुरन्त उनको दूँगा इस इच्छा से श्री प्रिया जू के हित के लिए पवित्र सुगन्धित मुख धोने के जल को झारी में लेकर के प्रियतमा के पास में खड़े हैं ॥३१॥

श्रम मवाप्य सुदोलक लीलया ललितभाव सुखञ्चित दम्पती ॥
युवति भिर्व्यजनैः परिसेवितौ जनकजा रघुनन्दन नन्दनौ ॥३२॥

सुन्दर झूला की ललित लीलाओं के भाव सुखों से रँगे हुए आनन्द समुद्र जनकजा रघुनन्दन दम्पत्ति परिश्रम को प्राप्त हुए। युवतियाँ व्यजनादि सेवा सामग्रियों से दोनों सरकारों की सुन्दर सेवा करने लगीं ॥३२॥

मणिनिवद्ध सरोवर के तटे मिथुन सारस हंश गणाश्रिते ।
कमल कोष गतालिसु गुञ्जिते शिबिकया मणि भूषितया गतौ॥३३॥

मणियों से बँधे हुए घाट जिनके, दो २ करके सारस हँसादिक पक्षियाँ अपनी जोड़ी जोड़ी जहाँ घूम रहे हैं, कमलों की कर्णिकाओं में भ्रमरों के झुण्ड जहाँ गूँज रहे हैं ऐसे सरोवरके किनारे मणियों से भूषित शिविका के द्वारा दोनों सरकार गये ॥३३॥

अनिल मम्वुज भावित दम्पती सुरभिमन्द सरोवर् सीतलम् ॥
श्रमहरं स्वनुभूय दिनान्तके शिविकया शयनालय मागतौ ॥३४॥

कमल के पराग से सुगन्धित सरोवर के किनारे शीतल, मंद, सुगन्ध, परिश्रम को हरने वाले ऐसे वायु का अनुभव करके दम्पत्ति श्री जुगल सरकार दिन के अन्त समय शिविका द्वारा शयनालय में आ गए ॥३४॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने
वाटिकाविहारवर्णनं नाम पञ्चत्रिंशत्तमः सर्गः ॥३५॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायाँ रहस्याख्याने वाटिका विहार
वर्णनं नाम पञ्चत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३५॥

दीपायनानाम्मणि सत्कृतानां योगेन प्राप्तास्वहुदीप्तिमन्तमा ॥
तद्दीपकाना मवलिप्रकाशे सौवर्ण सूत्रास्तरणातिभाषे ।१॥

मणियों से सुन्दर सत्कार किये हुए, सुन्दर योग से प्राप्त हुए बहुत प्रकाश करने वाले दीपों की पंक्ति से प्रकाशमान शयन कुञ्ज में स्वर्ण-सूत्र से बने हुए सुन्दर बिछावन अति प्रकाशित हो रहे हैं ॥१॥

गिरीभमत्स्यावनि सिन्धुजानां रत्नाञ्चिता लम्बित तोरणाङ्के ॥
सौवर्ण सूत्रांञ्चित सद्वितानै प्रक्वाण मञ्जीर रव प्रपूर्णे ।२॥

मणि, माणिक मुक्ता, मोती आदि रत्नों से रचित लम्बे तोरण हैं सजे हुये जिसमें स्वर्ण-सूत्र से बना हुआ श्रेष्ठ वितान तना है जिसमें और मञ्जीर आदिक भूषणों का क्वणकार शब्द भरा है जिसमें ॥२॥

सौवर्णिकार्चांगण भित्तिचित्रे स्तम्भावली रत्न प्रभावलीढ्ये ॥
विरेजतू रत्न गृहे सखीभिः श्रीजानकी कौशलराजपुत्रौ ॥३॥

स्वर्ण आदि रत्नों से चित्र विचित्र चित्रों की पंक्ति है भित्ति में जिसके, सुन्दर प्रभाव मान रत्नों से खचे हुए प्रकाशमान खम्भों की पंक्ति है शोभित जिसमें ऐसे रत्नों के घर में अनन्त सखियों के साथ सर्वेश्वरी श्रीचारुशीलाजीके सहित श्रीमिथिलेन्द्र राजकन्या श्रीकिशोरीजी और कौशल राजपुत्र श्रीरामजी सिंहासन पर सुशोभित हो रहे हैं ॥३॥

आथर्क कार्पाश भरांशुकासने गद्दे पयः फेन समान कोमले ॥
संस्थाप्य सीता रघुनन्द नन्दनौ कुर्वन्ति सायन्तन मङ्गलोत्सवम् ॥४॥

अर्क (अकवा) और कपास की रूई भरे हुए, दूध के फेन के समान कोमल गद्दे बिछे हुए हैं जिसमें ऐसे आसन पर श्रीसीता रघुनन्दन जू को बैठाकर सखियां सायंकालिक मङ्गल उत्सवों को करने लगी ॥४॥

कृत्वार्घं पाद्यञ्च सुगन्धि धूपकम्प्रदर्श्यदीपं समयो चितंपुनः ॥
सुकारयित्वाचमनम्प्रिया प्रियौ सुकारितंमिष्ठ मनन्तभोजनम् ॥५॥

समय के योग्य अर्घ्य, पाद्य, सुगन्धित धूप दीप आदि पूजा विधियों को करके फिर दोनों प्रिया प्रियतम जू को सुन्दर तरह से आचमन कराके अनन्त प्रकार के स्वादिष्ट पदार्थों का भोजन कराया ॥५॥

सुकारयित्वाचनम्पुनश्च ताम्बूल बीटीं प्रददौ वयस्या ॥
गानेन वाद्येन सखीभिरेनौ नीराजिता वात्मसुखाब्धौ च ॥६॥

पुनः सुन्दर तरह से आचमन कराया, समान अवस्था वाली सखी ने पान का बीड़ा सुन्दर तरह से दिया। अपनी आत्मा को अत्यन्त सुख देने वाले, सुख के समुद्र दोनों सरकारों की सखियों ने गान वाद्य पूर्वक आरती की ॥६॥

नृत्येन गानेन तथैक यामक न्निशा गता तत्र तयो विलाशिनौ ॥
श्रीजानकी राघवयोर्गुणज्ञयोः सखी जना सेवित सर्वभावयोः ॥७॥

सखी जनों के सम्यक् प्रकार भाव पूर्वक से वित, सुन्दर गुणों के जानने वाले बड़े विलासी श्री जानकी राघव जी के नृत्य गान आदि के उत्सव को देखते हुए एक याम रात्रि बीत गयी ॥७॥

लक्षैक गावो बहुशः पयोदाः पयांसि तासा मयुतम्पिबन्ति ॥
तासां सहस्रञ्च पिबन्ति गावः सतञ्च तासाञ्च शतस्य पंक्तिः ॥८॥

बहुत दूध देने वाली एक लाख गायों का दूध दस हजार गाय पी जाती हैं, उन दस हजार गायों का दूध एक हजार गाय पी जाती हैं, उन एक हजार गायों का दूध एक सौ गाय पी जाती हैं, उन एक सौ गायों का दूध दस गाय पी जाती हैं ॥८॥

पंक्तेः पिबत्येक महोत्तमा गौरित्थंश्च गावो बहुश श्च तासाम् ।
पयांसि यामाष्टक पाचितानि सीतोपलौषध्यभि संस्कृतानि ॥ ६॥

उन दस गायों के दूध को एक गाय पी जाती है, ऐसी महान् उत्तमा गायें श्रीकनकभवनके लिए बहुत ज्यादा हैं। इन महान् उत्तमा गायों का दूध ८ पहर तक सिद्ध (गर्म) किया जाता है तब उसमें शीतोपल मिलाया जाता है गन्ने के रस से बना हुआ राब, राब से शक्कर (खांड), शक्कर से चीनी, चीनी से मिश्री बनती है तब इसके बाद मिश्री से कन्द बनता है उसी कन्दको शीतोपल कहते हैं) औरके शरादिक सुगन्धित औषधियां भी मिलायी जाती हैं। इस प्रकार का दूध तथा ॥६॥

Scanned by CamScanner

सुगन्धिना काम दुहाधृतेन कृतानि पक्वान्न सुतेमनानि ॥
हितेन मात्रा तदिदं समस्तं प्रेष्याभि राभ्यां हि तदा सुनीतम् ॥१०॥

इसी प्रकार कामधेनु के सुगन्धित घी से बने हुए अनेक प्रकार के पक्वान्न पदार्थों को हित मयी भाव से माता ने दूतियों द्वारा इन दोनों सरकारों के लिए सम्यक् प्रकार सजाकर भेजा। दूतियों द्वारा लाये गये उन पदार्थों को ॥१०॥

निशा शनागार विशाल कक्षां विशालवक्षयाः सुविशाल बाहू ॥
अनन्त नारीक्षण हृद्विकारी समागतो मैथिल राजपुत्र्या ॥११॥

रात्रि के भोजनागार विशाल महल में रक्खा गया। विशाल वक्षस्थल वाले और विशाल दोनों भुजा वाले अनन्त स्त्रियों के सुन्दर कटाक्षों से उत्पन्न हुई सुन्दर भावना वाले श्री प्रियतम जू श्रीमैथिल राजपुत्री जी के साथ उस ब्यारू महल में आ पहुँचे ॥११॥

समादृतौ तद्गृह मुख्यया तौ सुकारितं स्मोजन मामृतान्नम् ।
सुगन्धताम्बूल सुबीटिकाभि स्तयार्चितौ स्वाशन के निवेश्य ॥१२॥

उस घर की मुख्या सुन्दर स्वागत पूर्वक लिवा ले गई और माता जी के भेजे हुए अमृत सदृश अन्नों का सुन्दर तरह से भोजन कराया और आचमन कराके एक दूसरे सुन्दर आसन पर बैठा करके सुन्दर सुगन्धित पानका नागवल्ली नामक बीराको बनाकर पवाया और सम्यक् प्रकारकी पूजाकी ॥१२॥

नीराजमानौ तु तत स्तया तौ विमानमारूह्य गणैः सखीनाम् ॥
निद्रालसारक्त विशाल नेत्रौ समागतौ स्वाप गृहंसुदीप्तम् ॥१३॥

उसके बाद उस कुञ्जेश्वरी ने आरतीकी तब सब सखि समाज सहित श्रीयुगल सरकार विमान पर बैठ करके शयन कुञ्ज में आए। निद्रा के आलस से रँगे हुए विशाल नेत्र वाले उस सुन्दर प्रकाशमान शयन कुञ्ज में सुन्दर तरह आ पहुँचे ॥१३॥

तत्रागत्य मणिप्रकाश सदने दासी गणै रक्षिते–
रुक्माचाँगण मण्डितास्तरणके विस्तीर्ण खण्डान्तरे ॥
मात्रा प्रेषितकं पयस्तुशयने पीत्वा प्रिया संयुतः–
श्रीरामो रसविग्रहो विजयते चर्वन्हसन्वीटिकाम् ॥१४॥

अनन्त दासीगण जिसमें रक्षा कर रहे हैं, अनन्त मणियोंका प्रकाश जिस महल में छाया हुआ है ऐसे विशाल महल के विस्तीर्ण खण्डों के अन्दर स्वर्ण से सुन्दर भूषित बिछावनों के ऊपर बैठ कर के माता जी के द्वारा भेजे हुए दूध को श्रीप्रिया जू के सहित शयन के समय पीकर के पान का बीरा चबाते हुए रस विग्रह श्रीराम जी विजय को प्राप्त हों ॥१४॥

निद्रालसारुणनवाम्बुज सुन्दराक्षौ शय्यास्थितौ जनकजा रघुराजसूनू ॥
शय्याङ्ग सञ्चित सुखाञ्चित भूषणाङ्गौ नीराजितौ युवतिभिर्नवदम्पती तौ ॥१५॥

निद्रा के आलस से लाल हुए सुन्दर कमल के सदृश विशाल नेत्र वाले जनकजा रघुराजकुमार शयन के योग्य सुखदाई भूषणों से सर्वाङ्ग शृङ्गारित होकर शय्या पर बैठे। उन नवीन दम्पत्तियों की युवतियों ने आरती की ॥१५॥

Scanned by CamScanner

स्वाप म्विधातु म्मिथिलेन्द्र पुत्र्या दिव्याम्बरै दिव्य बिभूषणैश्च ॥
सन्मानिताः सर्व सखीगणाश्च विधाय जेष्ठासु तथा प्रणामम् ॥१६॥

श्रीमिथिलेस राजपुत्री जी के साथ शयन का विधान करते हुए सब सखीगणों को दिव्य वस्त्राभूषणों से सन्मानित किया और उन सखियों ने भी ज्येष्ठा और कनिष्ठा के क्रम से प्रणाम का विधान किया ॥१६॥

प्रवर्द्ध ताम्प्रत्य हरब्ज नेत्रे समंहि यूना रघुनन्दनेन ॥
कामं विलाशो जनकात्मजेयं सखी जनानाम्मुदमावहं स्ते ॥१७॥

यह जनक पुत्री है इसके साथ मुझे मनमाना विलास भोगना है इस प्रकार की भावना से सभी सखिजनों को आनन्द भरते हुये युग पुरुष श्रीरघुनन्दन जू के द्वारा वे समानावस्था वाली सखियां मेरे कमल नेत्रों को अपने प्रतिहरण करने वाले मेरे नेत्रों में नित्य प्रति बढ़ें ॥१७॥

जेष्ठा वयस्यां जनकात्मजाया मित्याशिषं योज्य तया समेतम् ॥
पतिं प्रणम्याथ ययुः समस्ताः निशा वशेषम्परि चिन्तयन्त्यः ॥१८॥

जो ज्येष्ठा हैं वे श्री जनकात्मजा जी को आशीर्वाद देकर उनके सहित श्री प्रियतम जू को प्रणाम करके रात बीतने की चिन्ता करती हुई सबकी सब चलीं गयीं ॥१८॥

चित्रोपधाने परि सेव्यमानो बालाभिरम्भो व्यजनैः सुगन्धैः ॥
पतद्ग्रहा मोदि समुद्गकैश्च सीतायुतोसा शयने शयानः ॥१९॥

चित्र विचित्र तकिया वाले शयन के बिछावन पर कमल के दलों से बने हुये सुगन्धित पंखे से और आमोद की पीक को डालने की पीकदानी से तथा और भी सेवा सामग्रियों से इन बहुत सी बालाओं द्वारा सेव्यमान सीता के सहित ये प्रियतम शयन कर गये ॥१९॥

रत्नाञ्जिते रत्न गृहे विचित्रे वींणेश्वरीणा ङ्कलगान भावे ॥
श्रीराजराजेन्द्र कुमार रामो विलाश दक्षो जयति प्रकामम् ॥२०॥

रत्नों से जड़ित रत्न घरमें यूथेश्वरियों के वीणादिक बाजाओं द्वारा नृत्य गानके मधुर प्रकाश में विलास रङ्गमें बड़े चतुर श्रीराज राजेन्द्र कुमार श्रीरामजी को मन अभिलाषा पूर्ण जयको प्राप्तहावैं॥२०॥

धन्या स्यास्मि मनो वृत्ति र्यस्य कस्या पिभाग्यतः ॥
विलाश विषया सीता पते स्तस्येदममृतम् ॥२१॥

सीता पति के बिलास विषय में जिस किसी की भी भाग्य से मनोवृत्ति हो गयी हो उन धन्य के लिए यह चरित्र अमृत के रूप में है ॥२१॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने शयन बर्णनो नाम षट्त्रिंशत्तमः सर्ग ॥३६॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने शयन प्रकार वर्णनो नाम षट त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३६॥

Scanned by CamScanner

कचिद्रसात्मा रघुराजसूनु निशार्द्धभागे शशि मङ्गलांगे ॥
अनन्त रामा रमण प्रवीणः प्रियाविनोदे प्रकरोति रासम् ॥१॥

कभी चन्द्रमा से माङ्गलिक अङ्ग वाले रात्रि के आधे भाग में अनन्त रामाओं को रमण करने में बड़े चतुर रसस्वरूप रघुराज कुमार श्री प्रिया जू के विनोद में रासोत्सव करते हैं ॥१॥

पीतांशुकावृत विभूषण भूपिताङ्गो मन्दार हार हृदये विलशायमानः ॥
मार्तण्डवन्श सुखवर्द्धन मोहन श्रीरासेविराजति प्रियाकर कण्ठ लग्नः ॥२॥

पीत वस्त्र, दिव्य भूषणों से भूषित अङ्ग वाले और मन्दार पुष्पों के हार विलास कर रहे हैं हृदय पर जिनके ऐसे सूर्यवंशी सभी पूर्वजों के सुख को बढ़ाने वाले सुन्दर मनमोहक शौन्दर्य वाले श्री राम जी श्रीप्रिया जू के साथ परस्पर गलवाहीं देकर कण्ठ से लगे हुए रास के बीच में शोभित हो रहे हैं ॥२॥

नीलाम्वराम्वरविभूषण भूपिताङ्गी सेव्यां सुराधिप नगाधिप कन्यकाभिः ॥
प्राप्ते स्वृतौ शरदि चन्द्रमसः प्रकाशे रासेविनोदयति राघव आत्म कान्ताम् ३॥

नील साड़ी आदि वस्त्रों को धारण की हुई, शेष भूषणों से सजी हुई अंग वाली, देवराज नर-राज कन्याओं से सेविता, अपनी आत्मकान्ता को सुन्दर ऋतु के प्राप्त होने पर शरद पूर्णमासी की रात्रि के पूर्ण चन्द्रमा के प्रकाश में श्रीराघव जी रासरङ्ग के मण्डल में विनोदित करा रहे हैं ॥३॥

प्रियांश दत्तैक भुजाभिरामो भुजैक नृत्या भिनयान्वितश्च ॥
रासे शरचन्द्र मसः प्रकाशेमन्दस्मितो नर्तति राघवोसौ ॥४॥

श्रीप्रिया जू के साथ गलवाहीं देकर अति शोभित हुए श्रीराम जी एक हाथ से नृत्यों के अभि-नयों को बताते हुए शरद ऋतु के चन्द्रमा से प्रकाशमान रासरङ्ग के बीच में ये श्रीराघव जी नृत्य कर रहे हैं ॥४॥

चमत्कृता भूषण पूरितांगः पद्भ्यां चरन्नृत्य गति गुणाढ्यः ॥
ददाति तालं प्रकरोति गानं सुरांगणा मोहन रामचन्द्रः ॥५॥

चमकते हुये भूषणों से परिपूर्ण अंग वाले. नृत्य के गति आदि गुणों से परिपूर्ण, अपने गुणों से देवताओं को भी मोहित कर देने वाले श्रीरामचन्द्रमाजी पैरोंसे नृत्यकी गति लेते हुए भी ताल दे रहे हैं और गान कर रहे हैं ॥५॥

वीणां गृहीत्वाहि सरोज सुन्दरे करे सुचामीकरभूषणाञ्चिते ।
कृतश्च गानं स्वयमेव सीतया स मूर्च्छणं राघव चित्त हारकम् ॥६॥

सुन्दर मणि जटित स्वर्ण के भूषणों से भूषित प्रकाशमान कमल के सदृश सुन्दर हाथों में वीणा को लेकर श्रीराघव जी के चित्त को अपहरण करने वाले मूर्छना के सहित श्रीसीता जी ने स्वयंही गान किया ॥६॥

सद्य स्तदा चन्द्रकला मृदङ्गकं नानाद सार्द्धं स्वर मेलनेन वै ॥
तदा सुकेशी निपुणा ततेघने तया स कांस्यं स्वर मण्डलं धृतम् ॥७॥

Scanned by CamScanner

उस समय श्रीचन्द्रकला जी ने शीघ्रता से मृदंग को लेकर साथ में स्वर से मेल करके बजाया। उस समय सुकेशी नाम की चतुर सखी कांसे के मजीरा आदिक बाजा और तार के सितारादिक बाजा बजाये। इस प्रकार स्वर का मण्डल बाँधा ॥७॥

अतीव सान्द्रम् लय मूर्च्छनादिभिन्नितम्बिनीभिः कृतगानमद्भुतम् ॥
भ्रकुंशभावेन तदैत्यराघवो ननर्त नाना गतिभिर्मुदान्वितः ॥८॥

सुन्दर नितम्ब वाली सखियों ने अति सघन कोमल लय मूर्छनादिकों से अद्भुत गान किया। उस समय श्रीराघव जी आनन्द मग्न होकर स्त्री भाव से नाना गतियों द्वारा नृत्य किये ॥८॥

गन्धर्वामर किन्नरागिरि सरि न्नागा नगा साखिन-
श्चैतन्या जड़ातां जड़ा अपिययु श्चैतन्य भावन्तदा ॥
नोचर्वन्ति तृणं मुखे गृहितकं साभूत्पशूना न्दशा-
रासेराघव सुन्दरेण स्वधरे वन्शीधृता वैयदा ॥९॥

जिस समय सुन्दर श्रीराघव जी ने रास में अपने अधरों पर वंशी को धारण किया उस समय गन्धर्व, देवता, किन्नर, पर्वत, नदियां, नाग, वृक्ष, लतायें इन सबमें से जो जड़ थे वे चैतन्य हो गये और जो चैतन्य थे वे जड़ भाव को प्राप्त हो गए। जंगलों में चरते हुए पशु मुख में घास लेकर भी नहीं चबाते हैं? इस प्रकार दशा पशुओं की हो गयी ॥९॥

आकाशान्मदनातुरा रघुवरे सम्मोहिता स्त्रीगणा-
देवानं हि समाययुः क्षिति तले यावच्च नार्य्यो वराः ॥
नागानां वनिता अधो भुवनतो रामे प्रकामा शुभाः-
वन्श्या मोहनकं रघूद्वह कृतं श्रुत्वाहि नादाद्भुतम् १०॥

रघु श्रेष्ठ श्रीराम जी के मनमोहक वंशी से किये हुए अद्भुत नाद को सुनकर श्रीरघुवर में संमोहित होकर के देवताओं की स्त्रीगण मदन से आतुर होकर आकाश से उतर आयीं। नागों की बनितायें पाताल के लोकों से तथा और भी जितनी भी उत्तम नारी हैं सब सुन्दरी श्रीराम जी में कामासक्त होकर इस रास मण्डल के पास पृथ्वी पर आगयीं ॥१०॥

श्रीरामचन्द्र उवाच-कायूयं खलु कस्मात्सकामा अप्यागताहि चात्र किम् ॥
गच्छन्तु स्वस्मि न्लोके स्वपत्नी रमणशीलोस्म्यहम् ॥११॥

श्रीरामचन्द्र जी उन सबसे बोले, "आप सब कौन हैं, सकामी होकर कहां से यहां आयी हैं, यहां क्या काम है, आप सब अपने २ लोकों में चले जाओ, मैं अपनी पत्नियों में ही रमणशील हूँ" ॥११॥

गच्छेति वदति रामे ता अपि जगदुः प्रणय कोपेन तम् ॥
नीति विशारद वचनै र्वनिता बिरहाकुला आतीव ॥१२॥

श्रीराम जी के तुम चली जाओ ऐसा कहने पर प्रणय कोप से भरी हुई, अत्यन्त बिरह की व्याकुलता से वे सब बनितायें भी सुन्दर नीति विशारद वचनों से उन श्रीरघुनाथ जी से बोलीं ॥१२॥

नार्य्य उचुः—पति रसि सर्वासां त्वं रामेति नाम्नो व्युत्पत्या श्रतौ ॥
रमयसि किन्नास्माभि रघुनन्दन मोहनेक्षण ॥१३॥

Scanned by CamScanner

वेद में राम इस नाम की व्युत्पत्ति करने पर आप सब स्त्रियों के पति होते हैं। हे मनमोहन कटाक्ष वाले रघुनन्दन जी ! हमारे साथ क्यों नहीं रमण करते हो ॥१३॥

अखिल लोक रमणशील त्यक्त्वा त्वां खलु कुत्र ॥
गमिष्यामः कूमः खलु कैंकर्यं जावकथा स्ते बल्लभायाः ॥१४॥

हे सम्पूर्ण लोकों को रमण कराने वाले हम आपको छोड़कर कहां जायगी, आपकी अत्यन्त प्रिया श्रीजानकी जी की हम निश्चय करके सेवा करेंगी ॥१४॥

पुनरिति हृदय विचारय भवता प्रेरिता वन्श्या नादेन ।
कथम प्युचितं ल्लोके निराकरोस्या मन्व्य राघव ॥१५॥

आप ही इस बात का अपने हृदय से विचार कीजिये कि निराकार रूप काम के मन्त्र से अभि-मन्त्रित करके इस वंशी के नाद द्वारा आपने ही हमको प्रेरणा की है, हे राघव अब अपने लोकोंमें जाना कैसे उचित होगा ? ॥१५॥

तिरस्कृता नुरागत्वं जहासि हेराम जानकी जाने ॥
मिथिलाधिप कुल कीर्ते राघवमोहनि कुरु प्रसादम् ॥१६॥

हे राम ? हे जानकी जाने ! यदि आप अनुराग का तिरस्कार करके हमको त्यागते हैं तो। हे मिथिलेस-कुल-कीर्ति-स्वरूपा, श्रीरामजी को मोहित करने वाली हे सीते ? आप हम लोगों पर कृपा कीजिये ॥१६॥

करुणानिधे जानक्याः प्रणतिप्रसन्न हृदया याः ।
इच्छा मवेच्या घटनं सुराङ्गणानां वृत्तं प्रभुणा ॥१७।

प्रणाम करने मात्र से प्रसन्न हृदय वाली, करुणा समुद्र श्रीजानकी जी की इच्छा को और उन देवस्त्रियों का जो आचरण है उसको भी देखकर प्रभु श्रीरामजी ने उनकी प्रार्थना को सुघटित किया॥१७॥

नाकाधो भुवनाङ्गणा रघुवरे नित्या नुरागान्विता-
स्तद्वन्श्यः स्वन जात बोध हृदयाः सीता पदाब्जा श्रिताः ॥
ताभिस्ताण्डवकं कृतं सुचरितं लीला विलासान्वितम्-
दृष्ट्वा संस्थिरतां निशाकर निशा ताराश्च वै संययुः ॥१८॥

श्री रघुनाथ जी की वंशी से उत्पन्न हो गया है हृदय में दिव्य ज्ञान जिनके; ऐसी स्वर्ग पाताल आदि सब लोकों की स्त्रियां श्रीसीता जी के चरण कमल के आश्रित हुई श्रीराम जी में नित्य अनुराग पूर्ण हो गयीं, उन सबके साथ सुन्दर चरित्र युक्त लीला से ताण्डव नृत्य को करते हुए विलास रङ्ग मग्न श्रीराम जी को देखकर रात्रि में चन्द्रमा और तारायें सबके सब स्थिरता को प्राप्त हो गये ॥१८॥

उभयो रुभयो नार्य्यो मध्यगति रसिको ंह राघवेन्दुः ।
मण्डल मध्यगतोपि सश्च नृत्यति घन शुन्दरोऽनन्तः ॥१६॥

रसिक शिरोमणि श्रीराघव चन्द्रमा जी दो २ नारियोंके बीच होकर तथा रास मण्डल के बीच में भी होकर मेघ के सदृश अनन्त सुन्दर नृत्य करने लगे ॥१६॥

Scanned by CamScanner

बिलुलित चिकुर कपोल कुण्डल लोल विलोल मौक्ति नाशं ॥
मदनविकाशन हासं चन्द्रं निन्दति राघवास्यम् ।२०।

चंचल अलक, बिलुलित कुण्डल– इस प्रकार के सुन्दर कपोल, नासिका में हिलती हुई मुक्ता, कामदेव को विकसित करने वाली मुस्क्यान–इन सबसे युक्त श्रीरामजी का मुखचन्द्र आकाश के चन्द्रमा की निन्दा करता है ॥२०॥

रासाङ्गणेऽङ्गणानाङ्गणे विजयते राघवस्य लास्यम् ॥
नूपुर रव गत गगनं चित्रपदं सुरगायकानाम् ॥२१॥

रास के आँगन में, अनन्त अङ्गनाओं की भीड़ में श्री राघव जी को विलास-चेष्टाएँ विजय को प्राप्त हों, चरणों के नूपुरों की आवाज आकाश में देव गन्धर्वों के विचित्र पद को प्राप्त हो रही है ॥ २१ ॥

सीता सीता कान्तौ रासे मुदान्योन्यांशभुजदत्तौ ॥
विजयेते नृत्यन्तौ गायती सुर सुन्दरी गणेहि ॥२२॥

रास रङ्ग में आनन्द पूर्वक परस्पर अंश भुजा दिए हुए, देव स्त्रियों की भीड़ के बीच में श्री सीता और श्री सीता कान्त नृत्य करते हुए, गाते हुए विजय को प्राप्त हों ॥२२॥

अकस्मादाकाशाच्च डमरू त्रिशूल करकज धारिणी ॥
वनिता कापि नवीना नताहि सीताराम पादयोः॥२३॥

अकस्मात् आकाश से कर कमल में डमरू और त्रिशूल को धारण की हुई कोई नवीनावस्था वाली स्त्री रास मण्डल के मध्य आकर श्री जुगल सरकार के चरण कमलों में प्रणाम किया ॥२३॥

रासाजिरे वतीर्णा कृत्वा डमरू नादमद्भुतं सा ॥
सामगान कृत रुचिरं नानाभेदै नृत्य सुचिरम् ।२४॥

रास के आँगन में उतरी हुई उस वनिता ने डमरू का अद्भुत रुचिकर नाद किया और नाना प्रकार के साम गान के भेदों से सुन्दर रुचिर नृत्य किया ॥२४॥

पुनः कृतैकं चरितं प्रकटी कृता हि तत्र सरिता तया ॥
सरितान्तर गत नृत्यं कुर्वन्त्यो दृष्टाश्च वनिताः ॥२५॥

फिर उसने उस रास रङ्ग में एक चरित्र को प्रगट किया–रास मण्डल बीच उसने एक नदी पैदा की उस नदी के अन्दर नृत्यगान करती हुई बहुत स्त्रियों को सब ने देखा ॥२५॥

नीरस्था नागर्यो नीराद्बहि रागताश्च खेलन्त्यः ॥
नत्वा सीता रामौ पुनः समाजे नताः शिरसा ।२६॥

वे नदी के अन्दर वाली नारियाँ बाहर आकर खेलने लगीं फिर सब ने उस समाज में श्री-सीतारामजी को शिर से नमस्कार किया ॥२६॥

गानन्ता वरुणात्मजाः प्रथमतः कृत्वैव वाद्यलयं ।
रागाम्नाय विधान चारू निपुणा श्चक्रुः स्वरैरुच्चकैः॥

Scanned by CamScanner

रागिण्योपि प्रतोष जातहृदयास्तासांश्च सान्निध्यकम्।
जानक्यापि प्रशंशिता किमपरं ताः कृत्य कृत्यज्ञताः॥२७

उन बरुण कन्याओं ने पहले गान किया; रागों की परम्परा के विधान में सुन्दर पण्डिता उन वरुण कन्याओं ने फिर ऊँचे स्वर से आवाज को बाजाओं के स्वर में लय किया; जिन उन सबके गाने में राग रागिनी भी अपने हृदय से सम्यक् प्रकार उन सब के सामने २ अत्यन्त संतोष को प्राप्त हो गयीं और कहाँ तक कहें साक्षात् श्री जानकी जी ने भी उन सबकी प्रशंसा की जिस प्रशंसा को सुन कर वे वरुण कन्याएँ कृतकृत्य हो गयीं अर्थात अपने पुरुषार्थ को सफल समझा ॥२७॥

कृत्वा गान मुदारं नृत्य कर्तु श्चोत्थिता वारुण्यः।
दिव्यविभूषण वसना रसना नूपुर झंकृता सुदिक्॥२८

उन वरुण कन्याओं ने पहले तो बड़ी उदारता के साथ सुन्दर गान किया उसके बाद नृत्य करने के लिये उठीं; अपने दिव्य भूषण, वस्त्र, करधनी, नूपुरों के झनकार से दिशाओं को झंकृत कर दिया ॥२८॥

निशीथके वेणु विपञ्चि सार्द्धं गानं वधूनाङ्कलनाद सारम्॥
वधूजनानन्द करस्यचित्तम् रामस्यस्वनंदमनोजपाशैः॥२६।

आधी रात के बीच वीणा, वेणु आदि बाजाओं के साथ उन बधुओं का जो कल नाद का सारभूत गान है वह सब बधु जनों को आनन्द देने वाले श्री राम जी के चित्त को आनन्द मग्न करके काम के बन्धनों से बाँध दिया ॥२६॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने रास-प्रकर्णे नृत्यगानोत्सव नागदेवादि वनितानां समागम वर्णनो नाम द्विंत्रिसप्तमः सर्गः ॥३७॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने रास प्रकर्णे नृत्य गानोत्सव नागदेवादि वनितानां समागम वर्णनं नाम चतुस्त्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३७॥

ततो निकुञ्जेषु विगुञ्जितेषु प्रसून जालैः परिभूषितेषु ॥
रामेणरन्तुं प्रमदाः प्रकामाः प्रसूनशय्यां ललितां प्रतेनुः ॥१॥

उसके बाद फूलों के जालों से परिभूषित भ्रमरादिक वन जन्तुओं से परिगुञ्जित इस प्रकार के अनेक निकुञ्जों में श्री राम जी के साथ इच्छा भरके रमण करनें की इच्छा से सब प्रमदाओं ने ललित पुष्पों की शय्याओं का विस्तार किया ॥१॥

सार्द्धं कयाचिद्व्यतिहार रीत्या वेष क्रियाभ्यां रमण प्रवेकः ॥
सकिङ्किणि कङ्कण नाद मुद्वहन्नामो रमण्या सुरतं वितेने ॥२॥

किसी सखी के साथ वेष की रचना करके विपरीत रीति से रमण करने वालों में प्रधान श्री-रामजी ने कंकण किंकिनी के नाद (आवाज) को बढ़ाते हुये उस रमणी के साथ विलास का विस्तार किया ॥२॥

कस्याश्चिदेकान्त गतोनिकुञ्जे रामोरमण्या नलिनी दलाक्ष्याः ॥
नेत्रेऽञ्जनं मोदयुतो दधाति तस्याःभुजांस्वस्य विधायकण्ठे॥३॥

Scanned by CamScanner

किसी एकान्त कुञ्ज में गए हुए श्रीरामजी कोई कमल दल के सदृश नेत्र वाली रमणी नेत्रोंमें, आनन्द मग्न हो कर उसकी भुजा को अपने कण्ठ में, अपनी भुजा को उसके कण्ठ में डाल करके, अंजन लगा रहे हैं ॥३॥

मुदाहि ताभ्यां सह राजपुत्रः कुंजे कयाचिन्मधुलिट् सुगुञ्जे
चिक्रीडसारीफलके स्वकामं गृहं विधायात्म पदे प्रवीणः ॥४॥

आनन्द मग्न हुए राजकुमार भ्रमरों से गुञ्जित किसी एकान्त कुञ्जमें, रमण करने में प्रवीण, मन मानी बाजी को लगा करके किसी के साथ चौपड़ खेल रहे हैं ॥४॥

काचिद्विलम्वेन प्रियागतं पतिं रामं वितर्ज्याम्बुज श्रोणि तेक्षणैः ॥
सरोज नालेन च ताड़नोद्यता सामोदिता तेन वचोभिरूज्वलैः॥५॥

कोई नायका बड़ी देर में समय बिता के आए हुये प्राणप्रिय पति श्रीराम जी को नेत्रों से और वचन से तर्जनो देकर हाथ में कमल के नाल को लेकर मारने केलिये तैयार हुई उस प्रिया के नितम्ब देश में कटाक्ष करके विलास के बचनों से श्री प्रियतम जू ने उसको प्रसन्न कर लिया॥५॥

ततः समालिङ्गय कृतां रतोत्सवो तां चारू हासां क्वणिताङ्गभूषणैः ॥
रामेण वद्धे द विचक्षणात्मना नत्यांप्रपेदे पुनरूत्सुकां प्रियाम्॥६॥

उसके वाद आलिंगन करके अङ्ग भूषणों के झनकार से विलासोत्सव को करने वालो उसके बाद मन्द मुसुक्या कर फिर उत्सुक हुई उस प्रिया को वेद मर्मज्ञ विद्वानों की आत्मा श्री राम जी ने नमस्कार की विधि को किया ॥६॥

सर्वांति शौन्दर्य्ये विशेषशालिनी मान्याप्य शेषे निज सुन्दरीगणे ॥
प्राणप्रियासा स्वतिमानसम्भृता तच्छ्रु य तस्या निकटं जगाम सः॥७॥

जो शौन्दर्य में भी सबसे अतिशय विशेष हैं और समस्त अपनी सुन्दरी गणों में सब में विशेष मान्य भी हैं—इस प्रकार की अति सन्मान से पलित प्राणों से भी अधिक प्रिया ने मान कर लिया है ऐसा सुन कर श्री प्रियतम जू उनके निकट गए ॥७॥

उपस्थित श्चाञ्जलिना स तस्या रोषारुणाम्भोज दलायताक्ष्याः॥
अग्रे समग्रं प्रियतात्मभावं निवेदितुं तां प्रतिगां विधत्ते ॥८॥

वे श्रीरामजी, रोष के मारे लाल हो गये हैं कमल दल के सदृश विशाल नेत्र जिनके, ऐसी उन प्रिया के आगे अपने प्रियता के सम्पूर्ण भावों को निवेदित करने लिए हाथ जोड़ कर खड़े होकर उन प्रिया जू के प्रति स्नेह की वाणी बोलने लगे ॥८॥

मानोऽयमानन्द प्रदे कथं तव मय्याशु तद्ब्रूहि करोमिकिं तत्त ॥
तवानूकूलं हि तदाचराम्यहं त्वत्प्रति कूल्यंहि त्यजामि सर्वथा॥९॥

हे आनन्द देने वाली ? यह आपका मान किस लिए है उसको मेरे प्रति शीघ्र कहिए मैं क्या करूँ मैं तो हमेशा जो आप के अनुकूल होता है उसी का आचरण करता हूँ, आप के प्रतिकूल जो भी हो मैं उसको सर्वथा त्यागता हूँ ॥९॥

Scanned by CamScanner

न्यायो न मानो मयि प्राण वल्लभे तवानुकूलैक सुवर्त्म वर्त्तिनि।।
त्वच्चेष्टितं चेष्टित एव प्राणिनां छाया तथाहं तव चारितं चरे ।।१०।।

हे प्राण वल्लभे ! मेरे लिए आपका यह मान करना न्याय नहीं है मैं तो हमेशा एक आप के अनुकूल मार्ग का ही अनुशरण करता हूँ। आपकी चेष्टा से ही सम्पूर्ण प्राणियों की चेष्टा होती है तथा मैं तो आप की छाया होकर आचरण करता हूँ ॥१०॥

मानोयमानन्दकरः किमुत्प्रिये विनावियोगेन वियोग दुःखजः ।।
सुस्मार्य्य सुश्रोणि बिहारकं सुखं तत्किं लभेचित्तसमुन्नता वपि ।११।।

हे प्रिये ! यह विना हि वियोग हुये वियोग जनित दुःख से उत्पन्न हुआ मान क्या यह आनन्द को देने वाला है हे सुश्रोणी ! विहार में अत्यन्त ऊँचे वढ़े हुए चित्त को भी यह वियोग जनित दुःख का स्मरण दिलाना क्या इससे सुख प्राप्त हो सकता है ? ॥११॥

एताः समस्ताः नरराजपुत्र्यस्तवाङ्ग भूतार्माय रन्तुकामाः ।।
नतासुदृश्यो बिभिचार दोषो योगाय क्षेमाय त्वमस्ति ह्यासाम् ।१२।।

ये रमण करने की कामना वाली समस्त राज कन्याऐं आपकी अङ्ग भूता हैं जिनकी प्राप्ति और रक्षा करने वाली तुम हो। इस प्रकार की इन सुन्दर नेत्र वतियों के साथ मेरा भी रमण करना व्यभिचार दोष नहीं होता है ।।१२॥

तवोपदिष्टा सुनिवेसितं मनो नचेतरासु स्वयमात्म मोहनैः ।।
हावैःप्रियाणां ललितादि बीक्षणै रनन्यभावेन त्वयि प्रतिष्ठितम् ।१३

अनन्य भाव से तुम्हारे में प्रतिष्ठित हुई इन प्रियाओं के सुन्दर हाव पूर्वक मेरी आत्मा को मोहित करने वाले कटाक्षों से आपकी उपदेश दी हुई इन प्रियाओं में मैंने अपने मन को सुन्दर आवेशित कर रक्खा है और अन्यों में नहीं ।।१३॥

औदार्य्य शीलादि गुणैः समुद्भवा कीर्तिः प्रिये लोक समग्रव्यापिनी।।
ईर्ष्या गुणात्सातु विभेतिते शुभा राहोर्यथा चन्द्रमसी सुचन्द्रिका।।१४

हे प्रिये ! शील, उदारता आदि अनन्त गुणों से उत्पन्न हुई आप की सुन्दर कीर्ति समस्त लोकोंमें व्याप्त हो रही है वह आपकी कीर्ति ये ईर्ष्यादि गुणोंसे उसी तरह भयभीत हो रहीहै जिस तरह से चन्द्रमा की चांदनी राहु से डरती है ।।१४॥

स्नेहः परः प्राणपतेः प्रियायाः परं धनं चान्य धनं न तस्याः ।।
तद्दर्शितुं किं तु परिचितुम्त्रा मानोहि मान्ये त्यज सर्वथात्वम् ।।१५।।

प्रिया के लिये प्राणपति का परम स्नेह ही श्रेष्ठ धन है और अन्य प्रिया के लिये नहीं है आपने इसी बात को दिखाने के लिये अथवा मेरी परीक्षा करने केलिए ही यह मान मेरी समझ से धारण कर रक्खा है इस लिए तुम इस मान को सर्वथा त्याग दो ।।१५॥

प्राणेशस्य प्रिया वचांसि सततं स्नेहान्वितान्येव सा
श्रुत्वानन्दमवाप्यमन्द हँसितै रुत्थाय प्राणेश्वरम् ।।

Scanned by CamScanner

श्लेस्याप्यथ सुखावहं शंसिमुखी तस्मै मुदं संददौ
सख्योप्येवं तयोर्मुदेन मुदधा श्चक्रुश्च वाद्योत्सवम् ॥१६।

मन्द हँसते हुए प्राणेश्वर के एक रस प्रेम से भरे हुए वचनों को सुनकर वह प्रिया आनन्द को प्राप्त हुई और लो मैं मान को त्याग देती हूँ ऐसा कह कर उठ करके प्राणेश्वर को आलिंगन किया; इस प्रकार चन्द्रमा के सदृश मुख वाली प्रिया ने अपने प्रियतम के लिए सम्यक् प्रकार आनन्द को दिया उन दोनों की प्रसन्नता में प्रसन्न होने वाली उन सब सखियों ने भी बाजा आदिक सङ्गीत का महान् उत्सव किया ॥१६॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने रासप्रकर्णे रति विहार मानोपनयनो नामाष्टत्रिंशत्तमः सर्गः ॥३८॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायाँ रहस्याख्याने रास प्रकर्णे रति विहार मानोपनयनो नामाष्टत्रिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३८॥

पुनश्च रामोरमणी विहारी ससीतया वारिणि सम्प्रविश्य ॥
क्वचिन्निमग्नः क्वचिदुत्ततार क्वचिद्धशन्कर्षति स्वां प्रियाश्च ॥ १ ॥

फिर रमणियों के साथ विहार करने वाले श्री राम जी ने श्रीसीता जी के साथ जल में प्रवेश किया; कहीं बूड़ते हैं; कहीं तैरते हैं, कहीं पर हँसते हुये अपनी प्रिया को खींचते हैं ॥१॥

सरोज नालैः परिताडयन्ति परस्परश्चापि प्रियं हि बालाः ॥
प्रियोपि धृत्वा च करं प्रियायाः जले प्रविश्याननं माचुचुम्ब ॥ २ ॥

कहीं पर परस्पर कमलों के नालों से पीटते हैं और सब सखियाँ भी प्रियतम को और प्रियतम भी सब सखियों का हाथ पकड़ कर खींचते हैं। कोई प्रिया को जल में खींच कर मुख–चन्द्र को चूमते हैं ॥२॥

करं प्रियाप्राणपतेः गृहीत्वा जले समाकृष्य समं निमग्ना ॥
मत्स्याहि पश्यन्ति सुकौतुकं तज्जलान्तरे मङ्गलमाचरन्त्यः ॥ ३ ॥

कोई प्रिया प्राणपति के हाथ को पकड़ कर जल में खींचती है और स्वयं बूड़ती हैं। इस प्रकार के कौतुकों को जल के अन्दर मछलियाँ देखती हैं और मङ्गल विधान के आचरण करती हैं ॥३॥

उद्वीक्ष्यकान्ताः प्रियमुत्प्लवन्तं रामं विशालाम्बुज सुन्दराक्षम् ॥
करे सनालाम्बुज मादधाना धावन्ति हाहेति कोलाहलन्त्यः ॥ ४ ॥

विशाल कमल के सदृश नेत्र वाले प्रियतम श्रीरामजी को इधर से उधर जल में कूदते हुये देख कर सब प्रियाएँ हाथ में नाल सहित कमलों को लेकर महान कोलाहल मचाती हुई हा! हा! इस प्रकार कह कर दौड़ती हैं ॥४॥

रामो रसावेश विनोदकारी कान्ता वनान्तेषु नितान्तचारी ॥
करेसनालाम्बुज गुच्छधारी कान्तानुधावन्नधिकं व्यदीप्यत् ॥ ५ ॥

रस के आवेश में विनोद करने वाले उन कान्ता समूहों के वन में स्वतन्त्र विचरने वाले श्री-राम जी अपने हाथ में नाल के सहित कमलों के गुच्छों को धारण करके उन कान्ताओं के पीछे दौड़ते हुये अधिक सुन्दर प्रकाशमान् हो रहे हैं ॥५॥

Scanned by CamScanner

सुमूर्ति विद्युन्निवहे रराम सुमूर्त्तिमेघोपि च श्रावणीकः ॥
जलेऽमलेविश्य तथा विशेषं रराज रामः प्रमदागणेऽर्णो ॥६॥

मूर्तिमान अनन्त बिजलियों के समूहमें मूर्तिमान श्रावणके मेघ इन दोनों से भी अधिक शोभित सुन्दर आनन्दमय प्रमदागणों के बीच रमण करते हुए श्रीराम जी निर्मल जल वाले विशाल सरोवर में भीतर चले गये॥६॥

कराब्जयोः कापि प्रियं सुपाशे छलेन चानीय प्रिया प्रवीणा ॥
रामं सरो वारिणि सम्प्रविष्टा सा वारुणीसर्व कला प्रलब्धा ॥७॥

कोई अति चातुरी प्रिया वरुणकन्या सब कलाओं में चढ़ी बढ़ी है । वह वरुण कन्या जल के अन्दर प्रवेश करके छल पूर्वक अपने दोनों करकमलों के बन्धन से प्रियतम श्रीराम जी को बांध करके ले आयी ॥७॥

स्वयं विवाहं प्रतिसूचनाय रामेण साकं पट ग्रन्थनञ्च ॥
कृत्वाहि शीघ्रं वरुणालयंसा गतात्र रासे वनिताः शुचन्ति ॥८॥

और शीघ्र श्रीराम जी के वस्त्र के साथ अपने वस्त्र की गांठ बांध करके सबको–इनके साथ मेरा हो विवाह हुआ है ऐसी सूचना देती हुई वह बनिता इस समाज में से प्रियतम को लेकर अपने पिता के घर वरुण लोक को चली गई । इस रास मण्डल की सब बनितायें महान् सोच में पड़ गयीं ॥८॥

मातुः समीपम्प्रथमं गतासा जग्राह पादं शिरसा प्रणम्य ॥
वरः पुनः साच बधू स्तथाहि प्रयोजितौ वाग्भिः शुभेजनन्या ॥९॥

वह वरुण कन्या पहले तो अपनी माता के समीप में गयी, सिर से अपनी माता के चरणों में प्रणाम किया फिर उसी प्रकार दोनों वर–बधुओं को माता ने अपनी वाणी से शुभाशीर्वाद दिया ॥९॥

पुत्र्या वरोस्तीति पटस्य ग्रन्थि विलोक्य मात्रा सहसा प्रतीता ॥
सुखाब्धिमग्ना तु निरीक्ष कान्तिं रामस्य कञ्जायत लोचनस्य ॥१०॥

माता ने वर के साथ कन्या की वस्त्र–ग्रन्थि को देखकर–ये मेरी पुत्री के वर हैं–ऐसा सहसा विश्वास किया । कमल के सदृश विशाल नेत्र वाले श्रीराम जी की अङ्ग कान्ति को देखकर सुख समुद्र में मग्न हो गयी ॥१०॥

ततश्चरित्रं स्वयमात्म मोहनं मात्रे नयानिश्छलतो निवेदितम् ॥
मुदातया तद्वरुणः प्रबोधित स्तदा सहर्षो पितरौ बभूवतुः ॥११॥

उस वरुण कन्या ने निश्छलता पूर्वक अपनी माता से स्वयं अपनी आत्मा से इन प्रियतम जू को मोहित करने का चरित्र निवेदन किया फिर माता ने भी वह सारा समाचार अपने पति वरुण जी को जनाया । इस प्रकार दोनों माता पिता अति हर्ष को प्राप्त हुये ॥११॥

दृष्टिं सहर्षां तु पितु र्विलोक्य मुदंययौ सा वरुणात्मजापि ॥
लज्जावती सा वदनारविन्दम् ननाम दृष्ट्वा पितरं प्रियाग्रे ॥१२॥

Scanned by CamScanner

पिता जी की उस हर्ष मयी दृष्टिको देखकर वह वरुणकन्या भी अति आनन्द को प्राप्त हुई। पिता जी के मुखचन्द्र को देखकर, प्रियतम जू आगे कुछ लज्जित सी होकर, पिता जी के चरणों में प्रणाम किया ॥१२॥

कन्या वरौ दम्पतिना तदा च सिंहाशने रत्नमये मनोज्ञे॥
प्रस्थाप्य चार्घादिक षोडशैश्च प्रपूजितौ धन्य तमेन चाद्यः ॥१३॥

उस समय दोनों माता पिता ने उन दोनों वर कन्याओं को मन रमणीय रत्नमय सिंहासन में बैठाकर अर्घ्य पाद्यादि षोडशोपचार विधि से बर कन्या की पूजाकी और आज अपने को धन्य माना॥१३

निरीक्ष्य पाशी रघुनन्दनस्यरूपं वशीकार करं निमग्नः॥
प्रशंशयन्ना त्मसुलाभ भाग्य मुवाच रामं म्प्रति प्रीति युक्तः ॥१४॥

वरुण राज वश करने वाले श्रीरघुनन्दन जू के रूपको देखकर आदन्दमग्न होगये। अपने मस्तक के सुन्दर भाग्य की प्रशंसा करते हुये प्रेम युक्त श्रीरामजी से बोले ॥१४॥

पुत्र्यो मेभवदंघ्रि रेणु शरणं प्राप्ता निजैः सुकृतैः—
कीर्ति में कृत सर्व लोक धवला लोक त्रयं मूर्च्छिता॥
नो जानामि किमस्ति चात्र सुकृतं धन्यो स्म्यहं श्रीमतं-
दशरथन्दनं बलवतं सम्बन्धिनं प्राप्य च ॥१५॥

हे महाराज ये मेरी पुत्रियां अपने सुन्दर पुण्य के प्रताप से आपके श्रीचरणकमल रज की शरण को प्राप्त हुई हैं मेरी कीर्ति ने सब लोकों में उज्वल होकर तीनों लोकों को मूर्छित कर दिया। मैं नहीं जानता कि इस जगह पर मेरा कौन सा पुण्य है। श्रीमान महाबलवान् दशरथ जी को सम्बन्धी रूप में प्राप्त करके मैं अहो धन्य होगया ॥१५॥

सुलक्षणानामपि राम चन्द्र सर्वाङ्ग सौन्दर्य सुवेषनीनाम्॥
उद्वाह चिन्ता ग्रथितो विधात्रा जानामि तत्वं परिवोधितस्ते ॥१६॥

हे रामचन्द्र जी! सर्वाङ्ग शौन्दय सुन्दर वेष वाली तथा सुन्दर लक्षण वाली इन्हीं कन्याओं की चिन्ता से विधाता ने मुझे ग्रसित कर रक्खा था। आपसे परिवोधित हुआ मैं आपके तत्व को जानता हूँ ॥१६॥

सृजत्यवत्यहरो हरिविधि रेषां परं कारणमेकमेवहि॥
गुणत्रये स्वात्मगति विधायिनां सहस्रपादा क्षिशिरो रु बाहवः ॥१७॥
धर्मादि रक्षण विधौ सुरपालनाय येचा सुरान्दलयितुं वहुशोवतारा:॥
सर्वस्य कारणकला रघुनाथ एको योध्याधिनाथ सुत एव परः परेशः ॥१८

उत्पत्ति, पालन, प्रलय करने वाले ब्रह्मा, विष्णु महेशों के पर कारण अद्वितीय एक आप ही हैं अपनी आत्मगति से इन तीनों को तीन गुणों में विधान करने वाले सहस्र पाद, नेत्र, सिर, ऊरू, बाहु इस प्रकार की वेद वाणियों से आप ही की स्तुति की जाती है धर्मादिकों के रक्षण विधि में देवताओं के पालन के लिए, असुरों को दलन करनेके लिए बहुत से अवतार जिससे होते हैं वे सबके कारण श्रीरघुनाथ जी की एक कला है। इस प्रकार के श्री अयोध्याधिपति कुमार एक आप ही परात्पर पर ईस हैं ॥१८॥

Scanned by CamScanner

वाक्कैतवेन श्रुतयः परिगोपयन्ति यन्निश्चयन्तिमुनयः सततं विचारैः ॥
अन्तर्बहिश्च परिपूर्ण स्वतः प्रकाशं चिन्मात्र रूप रहितं कति चिद्वदन्ति ॥१६॥

वेद की श्रुतियां अपनी वाणी के छल से जिनको छिपाती हैं मुनि लोग एक रस बिचार से जिसका निश्चय करते हैं, जो स्वतः बाहर भीतर परिपूर्ण हैं जिनका रूप रहित चैतन्य प्रकाश है इस प्रकार से कोई २ विद्वान कहते हैं ॥१६॥

भक्त्याबियुक्त मनसो वहुयत्नतोपि–
नोप्राप्नुयु निविड़ वाग्विपिनान्तकेतम् ॥
भाव प्रबोधनिपुणा रसिकाः सुभक्त्या–
बिन्दन्ति वाक्परि गुण्ठित रामतत्वम् ॥२०॥

भक्ति से रहित मन वाले लोग वाणी के सघनता में बहुत यत्न करने पर भी जिनको प्राप्त नहीं कर सकते हैं, केवल भाव-प्रबोध में निपुण, रसिक लोग अपनी सुन्दर भक्ति से शब्दों की सुन्दर गूढ़ता के अन्दर श्रीराम तत्व को प्राप्त करते है ॥२०॥

जन्मान्तरैः परमभाग्यतया सुलब्धः सम्बन्धभाव सुखदो रघुनन्दनेयम् ॥
पुत्रीभिरेव तव तेनविना श्रमेण प्राप्स्यन्ति माशु चवरं विधिना प्रवुद्धः ॥२१॥

हे रघुनन्दन ? जन्मान्तर के परम भाग्य से प्राप्त हुआ यह आपका सम्बन्ध भाव अत्यन्त सुखदायी है। ब्रह्मा ने ही तुम्हारी पुत्रियां बिना परिश्रम के ही सुन्दर वर को शीघ्र प्राप्तकर लेंगे, ऐसा उपदेश मुझे किया था ॥२१॥

तत्वं ते पिच दर्शनं रघुपते सत्साधनैर्दुल्लभम्–
पुत्रीणां हि प्रसादतो द्वयमिदं लब्धं मया सौख्यदम् ॥
किञ्चैकं हृदि लालसा जनकजायुक्त म्भव दर्शनं–
साफल्यश्च तया विना च बिफलं गायन्ति विद्वज्जनाः ॥२२॥

हे रघुपते ! आपका तत्व और दर्शन सत्साधनों से भी अत्यन्त दुर्लभ है। यह पुत्रियों के प्रसाद से मैंने इन दोनों सुखदायियों को प्राप्त कर लिया है, थोड़ी लालसा हृदय में एक और भी है कि आपका दर्शन श्रीजनकजा जी के सहित मिले तब आपका दर्शन सफल हो क्योंकि उनके दर्शन बिना आपका दर्शन विफल ही होता है ऐसा विद्वान लोग कहते हैं ॥२२॥

योगमुद्रोवाच–अन्व गृही चापि तुतोष श्रुत्वा रामो मनोज्ञं बरुणस्य बाक्यम्॥
प्रदर्शि तश्चात्म द्वितीय रूपं वामे बरेण्यं बरुणाय सीता ॥२३॥

योगमुद्रा बोली कि हे सुकान्ति ? श्रीराम जी वरुण जी के मन रमणीय बचनों को सुनकर सन्तुष्ट हुए और स्वीकार भी किये। अपनी आत्मा से भी अधिक सुन्दर दूसरा रूप श्रीसीता जी को वाम भाग में बैठाकर वरुण जी को दर्शन दिया ॥२३॥

प्रपूजितो दम्पतिना च दम्पती सपत्नीकेनैव यथा बिधानकैः ॥
हस्तौ समानीय ह्युपस्थितोग्रके महोत्सबात्तः प्रणतिं चकार सः ॥२४॥

Scanned by CamScanner

वरुणउवाच—नाथैको द्वन्दनामास्ति ममभित्रं पुरातनम् ॥
काश्चित्तस्य गृहे सन्ति कुमार्यो रूपमोहकाः ॥२५॥

वरुण जी बोले कि हे नाथ एक मेरे द्वन्द नाम के पुराने मित्र हैं उनके घर में भी सुन्दर मन मोहक रूप वाली कुछ कन्यायें हैं ॥२५॥

स्वीकारं भवता तासां क्रियतां वचनान्मम ॥
एवमुक्त्वा समाहूय वरुणेन प्रबोधितः ॥२६॥

"आप मेरे वचन से उनको भी स्वीकार करें"—इतना कह कर वरुण जी अपने मित्र को बुलाकर समझाया ॥२६॥

बोधितो वरुणेनासौ रामभक्ति समन्वितः ॥
बभूवनागराजोपि मत्वात्मानं कृतार्थकम् ॥२७॥

इस प्रकार वरुण से प्रबोधित वे नागराज भी अपनी आत्मा को कृतार्थ मान करके श्रीराम भक्ति से पूर्ण हुए ॥२७॥

तदातु नागराजेन नागानां सत्कृतिर्यथा ॥
तथारीत्या कुमार्य्यस्ताः श्रीरामाय समर्पिताः॥२८॥

उस समय नागराज ने अपनी नाग जाति की सुन्दर जैसी क्रियाऐं हैं वैसी रीति से विधान करके उन कन्याओं को श्री राम जी के लिये समर्पण किया ॥२८॥

दत्वारत्न समूहानि प्रणतिश्च पुनः पुनः ॥
कृत्वातुतोष श्रीरामं रामोपिस्वसुरं हितम् ॥२६॥

बहुत रत्नों का समूह दहेज में दिया; बार २ श्रीराम जी को प्रणाम किया, श्री राम जी भी अपने स्वसुर उन नागराज पर अति संतुष्ट हुए ॥२६॥

विमानं वरुणोप्येकं वारिमार्गावगाहिनं ॥
विद्युन्निभश्चरामाय ददौ नम्य पुनः पुनः ॥३०॥

वरुण जी ने एक जल मार्ग से चलने वाले बिजली के समान चमकीले विमान को श्रीराम जी के लिए देकर बार २ प्रणाम किया ॥३०

वारिवारण मेकञ्च वार्य्यश्वमेक मद्भुतम् ॥
षोडसैव पुनः कन्याः रत्नमाणिक्य भूषिताः ॥३१॥

एक जल का हाथी, एक जल का घोड़ा जो कि अद्भुत हैं, फिर सोलह ही कन्याओं को रत्न माणिक्यों से भूषिता श्रीराम जी के लिये दिया ॥३१॥

वध्वाञ्जलिं च रामस्य पटे तेन च ग्रन्थिताः ॥
नागराजं च वरुणं सुवाग्भिराघवः प्रभुः ॥३२॥

श्री राम जी के वस्त्र से उन सबके वस्त्रों से ग्रन्थि बाँध कर नागराज और वरुणराज दोनों जने हाथ जोड़े हुये उन दोनों को श्रीराघव प्रभु सुन्दर वाणी से ॥३२॥

प्रतोष्यदत्तमादाय स्थित्वा दिव्याऽर्णजानकम्॥
क्षणा द्विद्यु दिवा भापन्नाविभूर्तोबिहार के ॥३३॥

संतुष्ट करके उनको दी हुई समस्त वस्तुओं को लेकर दिव्य जल विमान में बैठ कर एक क्षण में विजजी की तरह चमक करके जहां पहले विहार कर रहे थे उस विहार स्थान में प्रकट हो गये ॥३३।

जलेदृष्ट्वातु वनिता महाश्चर्य्यं ययुस्तदा ॥
शरीरेमृतके प्राणा आगताश्च तथा मुदम् ॥३४॥

उन विहार स्थल को बनिताओं ने उन जल यान में बैठे हुये बनिताओं के साथ आए हुये अपने प्रियतम को देखकर महा आश्चर्य चकित हो गयीं; जिस तरह से मरे हुए शरीर में प्राण आ जाते हैं उस तरह से आनन्द हुआ ।।३४।।

अद्भुतं तच्च प्रख्यानात्कथयित्वारघूत्तमः ॥
नार्य्यः प्रतोपिताः सर्वा ययाकारं रगमच ॥३५॥

उस अद्भुत दृश्य को देखकर चकित हुईं उन सब नारियों को श्री रघुत्तम समस्त कथाओं को कहे, सब नारियों को संतुष्ट किया; फिर पहले ही की तरह रमण करने लगे ॥३५।

श्रमिताहं जले गाधे देहि वाह्वम्वलम्वनम् ॥
छलेनाहूय काप्येव मालिंगति मुदाप्रियम् ॥३६॥

मैं अगाध जल में अत्यन्त थक गयी हूँ,'मुझे अपनी भुजा का अवलम्बन दीजिए—इस प्रकार किसी ने छल से बुलाकर प्रियतम जू को आलिंगन किया ॥३६॥

बारिण्या बिंश्य सर्वांगं कृत्वा चोर्द्ध्वं प्रकोष्टकम् ॥
निस्सारय प्रियहे मा मिति व्याजेनश्लिष्यति ॥३७॥

कोई सर्वाङ्ग से पानी में बूड़ कर दोनों हाथों के प्रकोष्ट को ऊपर उठाकरके हे प्रियतम ! मैं बूड़ गयी, मेरे को निकालो-इस वहाने से बुलाकर प्रियतम को आलिंगन कर लिया ॥३७॥

राघवात्र समागच्छ दर्शयामि सुकौतुकम् ॥
समीपे चागते कान्ते बिहस्यालिङ्गति प्रिया ॥३८॥

किसी सखी ने हे राघव ? आप इधर आइए मैं आपको कौतुक दिखाती हूँ—ऐसा कहके बुलाया, कान्त के समीप में जाने पर प्रिया ने हँस कर आलिंगन किया ॥३८॥

एहि एहि भृशं कान्त जलेमां किं श्चकर्षसि ॥
ममञ्जाहूय चाश्लिष्य जले कापि वराङ्गना ॥३६॥

किसी सखी ने हे कान्त ? इधर आइये, इधर आइये, जल में मुझ को कौन खींच रहा है—ऐसा कर कर समीप में बुलाया और प्रियतम को आलिंगन करके वह श्रेष्ठ अङ्गवाली ने जल में डुबकी लगा ली ॥३६॥

कारुण्यान्तः प्रियं रामं मग्ना मग्नेति शब्द्य च ॥
स्वाभिलाप कैतवेन पूजयन्ति जलें गनाः ॥४०॥

Scanned by CamScanner

कोई अङ्गना कारुणिक हृदय वाले प्रियतम राम जी को मैं बूड़ गयी, बूड़ गयी–इस प्रकार की आवाज करके अपने समीप बुलाया और अपनी अभिलाषा पूर्ण करने के लिये छल से प्रियतम जू को आलिंगन करके जल के अन्दर पूजा करती है ॥४०॥

मुदाप्रिया ग्राहितकन्धरप्रियः प्रिया तथा ग्राहित कान्त कन्धरा ॥
प्रतेरतु र्वारिणि वाम लोचनौ श्रीजानकी भानुकुल प्रदीपकौ ॥४१॥

कोई प्रिया आनन्द मग्न होकर प्रियतम जू के कन्धे को पकड़े है उसी प्रकार किसी प्रिया के कन्धा को कान्त पकड़े हुये हैं। इस प्रकार सुन्दर नेत्र वाले दो २ करके जल में तैर रहे हैं इस प्रकार श्री जानकी और सूर्य कुल दीपक प्रियतम दोनों मिलकर जल विहार कर रहे हैं ॥४१॥

अंघ्रि प्रिया प्राणपते गृहीत्वा जलान्तरे कर्षति सापिमग्ना ।
आदाय तस्या बसनं प्रियोपि स्वब्जाननायाः प्रहसन्ततार ।४२॥

कोई प्रिया प्राणपति के चरणों को पकड़ कर जल के अन्दर खींच करके लायी स्वयं भी बूड़ी, प्रियतम भी हंसते हुए उस कमल नेत्री के वस्त्रों को लेकर तैरने लगे ॥४२॥

इत्थं बारिणि बारिजायतदृशाम्वृन्दे मनोजोत्सवम्
कृत्वा कोटि मनोज सुन्दर बपुः श्रीकौशलेशात्मजः
शेषां बीक्ष्यनिशा प्रियालशयुतां स्थित्वारथ स्त्रीगणै
र्गायद्भिः परितो जगाम भवनं स्वापाय सीताप्रियः॥४३॥

इस प्रकार जल में जलज नेत्री स्त्रियों के झुण्ड में मनोजोत्सव करके करोड़ों कामों से अधिक सुन्दर शरीर बाले श्री कौशलेशात्मज रात्रि को कुछ बाकी जानकर आलस्य से भरी हुई प्रिया को लेकर गान करती हुई समस्त स्त्री गणों के साथ रथ में बैठ कर सीता के प्रिय शयन के लिए अपने भवन में गये ॥४३॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां रहस्याख्याने प्रमदाबनगत श्रीसीताराम रास बिहार बर्णनो नामैकोन चत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥३६॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने प्रमदा वनगत श्रीसीताराम रास बिहार वर्णनो नामैकोन चत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥३६॥

अथराज कुमार्य्यू वाच—वयसामृदुलाः स्त्रीणां शीलने चैव तत्पराः ॥
वयस्याः रसिकाग्रस्य राघवस्य भवन्ति ये ॥१॥

राजकुमारी सुकान्ति ? बोली कि हे योग मुद्रे ? जो रसिकेश श्री राघव जी की जो कोमल उम्र बाली स्त्रियायें हैं उनको शील आदि सद्गुणों से युक्त सेवा में तत्पर समवयस्क सखा हैं ॥१॥

तेषां कथय नामानि भावयोग्यानि चाग्रमे ॥
अन्येप्रिय सखायश्च दाशातेषां हिनामच ॥२॥

उनके भावना योग्य सुन्दर नामों को पहले मुझसे कहो और जो उन प्रियतम जू के अन्य सखा है; दास हैं—उनके नामों को भी कहो।

Scanned by CamScanner

श्रीयोगमुद्रोवाच–रसात्मन्यप्रमेयेस्युः श्रीरामेयत मानसाः ॥
मोहना वयवाः शील चक्षुषो पांग दर्शनाः ॥३॥

श्रीयोगमुद्रा बोली कि अप्रमेय रसात्मा श्रीरामजी में सावधान चित्त वाले मन मोहनी अङ्ग शोभा वाले, अपने शील भरी हुई प्रिय नेत्र कटाक्षों से सुन्दर दर्शनीय ॥३॥

रसवन्मृदुवाण्यातु तस्य चित्तापहारकाः–
सोपि तेषां भावशक्त श्चुवना लिङ्गनादिभिः ॥४॥

अत्यन्त कोमल वाणी से रस बरसाते हुए उन प्रियतम जू के चित्त को चुराने वाले उन सखावों के भाव के अधीन होकर के वे प्रियतम भी चुम्बन आलिंगन द्वारा उन सबके चित्त को चुराते हैं ॥४॥

प्रियकाहि सखाय स्ते विट चेट विदूषकाः ॥
पीठ मर्दक एवं हि चत्वारस्तु स्वभावतः ॥५॥

श्रीप्रियतम जू के विट, चेटक विदूषक, पीठमर्दक ये चार प्रकार के सखा हैं जो अपने सुन्दर स्वभावों से प्रियतम जू की सेवा करते हैं ॥५॥

मोहनांगो मयङ्कास्यो मृदुलो मोहन स्वरः ॥
निम्नास्यः शीलनेत्रश्च शीलाक्षः संकुचेक्षणः ॥६॥

उन सखाओं के नाम इस प्रकार हैं—मोहनाङ्ग, मयंकास्य, मृदुल, मोहनस्वर, निम्नास्य, शीलनेत्र, शीलाक्ष, संकुचेक्षण ॥६॥

सुधाधरो, रङ्गनेत्रो, मृताधर, मनोहरो, ॥
सुन्दराक्षः कामतन्त्रो भीरुको भावशीलकः ॥७॥

सुधाधर, रङ्ग नेत्र, अमृताधर, मनोहर, सुन्दराक्ष, कामतन्त्र, भीरुक, भावशीलक ॥७॥

नवलांगो भीरुनेत्रो नवलो नवको पिच ॥
नवशीलो नवांगश्च मृदुस्मेरः स्मिताधरः ॥८॥

नवलाङ्ग, भीरु नेत्र, नवल, नवक, नवशील नवाङ्ग, मृदुस्मेर, स्मिताधर ॥८॥

लज्जिताक्षी लोलहस्तश्चपल श्चुम्बन प्रियः ॥
चित्रदृष्टिः श्नेहकरो हेमांगो हारहेरसौ ॥९॥

लज्जिताक्ष, लोलहस्त, चपल, चुम्बनप्रिय, चित्रदृष्टि, स्नेहकर, हेमाङ्ग, हारहेरस । ९॥

प्रणेयः प्रेमशीलश्च प्रेमवश्यो ऽमृतंवदः ॥
दयालुः सुवदः प्रेयाः प्रिया कारो वशङ्करः ॥१०॥

प्रणेय प्रेमशील, प्रेमवस्य, अमृतंवद, दयालु, सुवद, प्रेया, प्रियाङ्कर, वशङ्कर ॥१०॥

मृदुशीलो जनाक्षश्च ललनेहो ललामकः ॥
मृगाक्षः कञ्जनेत्रोपि प्रेम पालः स्मितम्वदः ॥११॥

Scanned by CamScanner

मृदुशील, जनाक्ष, ललनेय, ललामक, मृगाक्ष, कंजनेत्र, प्रेमपाल, स्मितंवद ॥११॥

प्रियादरो गुप्तकेलिः नव्यांगो नव्यभावुकः ॥
नव्यशीलो, भव्यमाली, नवलाशील सोहलौ ॥१२॥

प्रियादर, गुप्तकेलि, नव्याङ्ग, नव्यभावुक, नव्यशील, भव्यमाली, नवलाशील, सोहल ॥१२॥

भूषणांगो, भूषणेहो भूषणोपि, प्रसंगदः, ॥
श्रमंकरो, विघ्न नाशो. वयः श्रीश्च श्रमाकरः ॥१३॥

भूषणाङ्ग, भूषणेय, भूषण, प्रसंगद, श्रमंकर, विघ्ननाश, वय, श्री, श्रमाकर ॥१३॥

गुप्तरागो, रागशीलः, प्रेयसी, गुण मानधौ ॥
सर्वांगदो, बिशेषज्ञः, संकेतज्ञ, स्तिरस्मितः ॥१४॥

गुप्तराग, रागशील, प्रेयसी, गुणमानध, सर्वाङ्गद, विशेषज्ञ, संकेतज्ञ, स्तिरस्मित ॥१४॥

रमंको, मानशीलः, स्रीबिम्बो, वेणी धरोंगुली ॥
प्रियालकः प्रेमनिधि, हृदयालु, हृदिस्पृकः ॥१५॥

रमङ्क, मानशील, स्त्री बिम्ब, वेणीधर अंगुली, प्रियालक, प्रेमनिधि, हृदयालु, हृद-पृक ॥१५॥

लवङ्ग नामा ललितो, लावण्य, श्च मनोरमः ॥
मोहनाक्षो, मोहनास्य, सुकेशः, सुरमः, शुकः ॥१६॥

लवङ्ग, ललित, लावण्य मनोरम, मोहनाक्ष, सुकेश, सुरम, शुक ॥१६॥

एते चान्येपि मृदुलाः श्रीरामस्य विहारिणः ॥
नर्म्माः नर्मरसेभिज्ञा मानिनीनाश्च मानहाः ॥१७॥

इतने सखा तथा और भी बहुत से विहार के सहायता करने वाले श्रीरामजी के नरम सखा हैं, ये लोग नरम स्वभाव, नरम रस मर्मज्ञ, माननीयों के मान को नाश करने वाले हैं ॥१७॥

अन्ये वीररसावेशाः शस्त्रबिद्या विशारदाः ॥
मृगया क्रीडने श्रीमद्राघवस्य सहायकाः ॥१८॥

अन्य जो सखा हैं वे वीर रस के आवेशी, शास्त्र विद्या में विशारद, शिकारादि खेलों में श्री राम जी के सहायक हैं ॥१८॥

लोकवीरो, वीरभानुः, रत्नसेषर, वीरभौ ॥
यशोमत्तः, कीर्तिबाहुः, कुलशेखर, भीरवौ ॥१६॥

उन सबके नाम बताते हैं— लोक बीर, वीरभानु, रत्नशेखर, वीरभा, यशोमत्त, कीर्ति बाहु, कुलशेखर, भीरवा ॥१६॥

रणकेलि शुद्धतश्च वीरसीदो, महारथः ॥
सारबाहु, दीर्घबाहुः, रणधीर, महाबलौ ॥२०॥

रणकेलि शुद्धत, वीरसीद, महारथ, सार बाहू, दीर्घबाहु, रणधीर, महाबल ॥२०॥

Scanned by CamScanner

बीरशेनो, यशोमाली, महोजाः रणनर्तकः ॥
खड्गबाहु, खड्गखेली, रणकोपी, बलाकरः ॥२१॥
वीरशेन, यशोमाली, महातेजा, रणनर्तक, खड्गबाहु, खड्गखेलि, रणकोपि, बलाकर ॥२१॥
युद्धशीलो, युद्धलाशी, सत्रुसीदन, सज्जयौ ॥
कीर्त्तिराजो, यशोराजो, रणार्कः कुलमण्डनः ॥२२॥
युद्धशील, युद्धलासी, शत्रुसीदन, सज्जय, कीर्तिराज, यशोराज, रणार्क, कुल मण्डन ॥२२॥
विजयी, जयशीलश्च, कीर्त्तिहारो, यशोध्वजः, ॥
कीर्तिध्वजो मानशीलो, दृढमुष्टिः सुकन्धरः ॥२३॥
विजयी, जयशील, कीर्तिहार, यशोध्वज, कीर्तिध्वज, मानशील, दृढ़मुष्टि, सुकन्धर ॥२३॥
रुक्ममौलिः रणेसिहः, समिञ्जय, श्च सज्जयौ ॥
बीरर्षभः, कुलमौलिः, कुलपाला रिभञ्जकौ ॥२४॥
रुक्ममौली, रणसिंह समिंजय, सज्जय, वीरर्षभ, कुलमौलि, कुलपाल, अरिभंजक ॥२४॥
जयशीलो, बीरसिंहो, बिप्रसेवक, गोत्रपौ ॥
कुलरत्नः, कुलेन्दुश्च मन्त्रधी, नीति गोपनौ ॥२५॥
बलाम्बुधि, बीर्य्यबाहुः वलबाहुः कुलर्षभः ॥
दानशीलः, कालकुन्तो, वलराजि, वलार्णवः ॥२६॥
जयशील, वीरसिंह, विप्रसेवक गोत्रप, कुलरत्न, कुलेन्द्र, मन्त्रधी, नीतिगोपन, बलाम्बुधि, वीर्य वाहु, कुलर्षभ दानशील, कालकुन्त, वलराजी बलार्णव ॥२५-२६॥
परान्तकः, कान्तिराजः, कुलभानुः, सुबिक्रमः ॥
जगतीशो, दानशौण्डो, जनपालो, लमन्तकः ॥२७॥
परान्तक कान्तिराज, कुलभानु सुविक्रम, जगतीश, दानशौण्ड, जनपाल लमन्तक ॥२७॥
रणरुद्धो, महीरत्नः, शीघ्रञ्जय, रणोद्भवौ ॥
बन्शरत्नो, दग्रबाहू, रबिकुण्डल, भानुभौ ॥२८॥
रणरुद्ध महीरत्न, शीघ्रञ्जय, रणोद्भव, वंशरत्न, उदग्रबाहु, रविकुण्डल, भानुभ ॥२८॥
कीर्त्तिशीलः, प्रजापालः, प्रभाशीलो, बलौघकः ॥
रणेहर्षो, भीमकुन्तो, ह्यमोघासुगश्रीकरौ ॥२९॥
कीर्तिशील, प्रजापाल, प्रभाशील, बलौघक रणहर्ष, भीमकुन्त अमोघा, आसुग श्रीकर ॥२९॥
एतेचा न्येपिरामस्य वयस्या राजकन्यके ॥
तेजस्विनी राजपुत्रा वलबुद्धि समन्विताः ॥३०॥
हे राजकन्यके ! ये तथा और श्रीरामजी के समान अवस्था वाले बड़े तेजस्वी राजकुल में उत्पन्न हुए, बलबुद्धि में परिपूर्ण राजकुमार हैं ॥३०॥

Scanned by CamScanner

वयसा मृदुला नम्रा दासा स्तत्सेवनेरताः ॥
अनिशं सविधस्था ये तेषां नामानि मे शृणु ॥३१॥

जो अवस्था से बड़े कोमल इनकी सेवा में स्थिर रहने वाले उनके नामों को भी मुझसे सुनो ॥३१॥

चन्द्रको, भद्र, सौभद्रौ, सात्विको, नन्दकस्तथा ॥
नवलो, नवनीतश्च, प्रेयकः, सुमुख, स्तथा ॥३२॥

चन्द्रक, भद्र, सौभद्र, सात्विक, नन्दक, वनल, नवनीत, प्रेयक, सुमुख, ॥३२॥

सुरेखः, सुगणो हेली हरितो बहु भायकौ ॥
वर्णको, विधुक, श्चैव वञ्जुलो, वोधक, स्तथा ॥३३॥

सुरेख, सुगण हेलि, हरित, बहुभाग्यक, वर्णक, विधुक, बंजुल, बोधक ॥३३॥

सुपेषः, परमो, मत्तो, मधुको, मेनको, मुखी ॥
शृङ्खलो, गिरिक, श्चैव, गौरो, गोलेख, गानगो ॥३४॥

सुपेख, परम, मत्त, मधुक मेनक मुखीं, शृङ्खल, गिरिक गौर; गोलेख, गानग ॥३४॥

परञ्जुः, पूरको, मेनो, भूरसो, भानुको, दकौ ॥
नवलेखो, नागरीको, नौतमो, गौरवो, पिच ॥ ३५॥

पर जू, पूरक, सेन, भूरस, भानुक, उदक, नवलेख, नागरिक, नौतम, गौरव ॥३५॥

भ्राजक्क, राजिको, प्यंशुः रसालुश्च, मनोलकः ॥
सालिकः, सेचकः, शोभी, संकुलो मेकलो, भुजी ॥३६॥

भ्राजक्क, राजिक, भंसु, रसालु, मनोलक, सालिक, सेचक, शोभी, संकुल, मेकल, भुजी ॥३६॥

पारमी, परमी, सञ्चुः, सुलच्छी, कलधीः, सुधीः ॥
धीरसेकी, सोलकश्च परभू, रमको, वसुः ॥३७॥

पारमी, परमी, सञ्चु, सुलच्छी, कलधी, सुधी, धीरसेकी, सोलक, परभू, रमक, वसु ॥३७॥

बल्लु,श्च धरसुः, कान्तः, ठोभी, तारक, तन्तुकौ ॥
तुङ्गभो मालुभो. भोगी, भौरको गुणभो गरुः, ॥३८॥

वल्ल, वरसु कन्त, ठोभी तारक, तन्तुक तुङ्गभ, मालुभ, भोगी, भौरक, गुणभ, गरू ॥३८॥

प्रातिमा, नक्रलो, कामो, मधुरो, मधुको, मधुः ॥
सौरमो, बन्धुको, वागी, मालसो जूपकः सुखी ॥३९॥

प्रांतमा, नक्रल, काम, मधुर, मधुक, मधु, सौरम बन्धुक, वागी, मालस, जूपक, सुखी ॥३९॥

रन्तिको, रासिको, शान्तिः सौकरो, बाहुलो, द्रुसिः ॥
रत्नलो, रसक्क, गुण्ठी, कण्ठी, लोवर, लोलको ॥४०॥

रन्तिक, राशिक, शान्ति, सौकर, वाहुल, दुसि, रत्नक, रसक्क, गुण्ठी, कण्ठी, लोवर, लोलक ॥४१॥

Scanned by CamScanner

मोदको, मेरुको, मंसी, मनोली, मुद केलिकौ ॥
सारको सुरभो, भाली परागी, पारगी, ललुः ॥४१॥
मोदक, मेरुक; मन्सी, मनोली मुदक, केलिक, सारक, सुरभ, भाली, पारगी परागी लल्लू ।४१॥
दोलको, दलको, दामी, दाशिको, दाकभो, दली ॥
दूरभो' रलको' रङ्गी' तरङ्गी' तरलो' मनी ॥४२॥
दोलक, दलक, दामी, दासिक, दाकभ, दली, दूरभ, रत्नक, रङ्गी, तरङ्गी, तरल, मनी ॥४२॥
अंशको' ह्यारसीना भुनैंपको' नर्म्म' कुन्तलो ॥
कौमुदो' नवली' भृङ्गो' भाजुः' सञ्चव' चन्दभौ ॥४३॥
असक, ह्यरसी नाभु नैपक, नर्म, कुन्तल, कौमुद, नवली, भृङ्ग, भ्राजु, सञ्चव, चन्दव ॥४३॥
भासु' रासुग' रम्भोली' रसुक' स्तिथिको' रकुः ॥
कुवलो' कुम्वरी' सानु' मतिलो' सार' मेखलौ ॥४४॥
भासू, आसुग, रम्भोली, रसुक, तिथिक, रकू, कुवल, कुम्वरी सानु, मतिल, सार, मेखल ॥४४॥
मृदको' ऋजु' पालूकौ' पल्पशी' कञ्जु पानकौ ॥
मञ्जुलो' रूपको' भागी' तेजस्वी' वीर' माघजौ ॥४५॥
मृदुक, ऋजु, पालुक, पल्पसी, कंजु, पानक, मञ्जुल, रूपक, भागी, तेजस्वी, बीर, माघज ॥४५॥
सुरलो' वरलो' सिंचो' भानुको' भावरो' धुनी ॥
व्रतकः' पाणवो; नन्दुः; कोकिलो' धुवको' मिनुः ।४६॥
सुरल, वरल, सिञ्च, भानुक, भावर, धुनी, व्रतक, पाणव, नन्दु, कोकिल, धुवक, मिनु ॥४६॥
मयूरो; मेधुरो' मेधो; वेदी; वीणो; वरालकः ॥
अनशीलः; पीवरो पिरणको; नूपुरो; रसः ॥४७॥
मयूर, मेधुर, मेध, वेदी- वीण- वरालक- अनसील- पीवर- पिरणक- नूपुर- रस ॥४७॥
सुरसो; भारलो; भावुः कल्याणः; चेमलो दशी ॥
सुनीरो; मुक्तको; मल्लो; मण्डनी; भूषणो;भरूः ॥४८॥
सुरस- भारल- भावु- कल्याण- चेमल- दसी- सुनीर- मुक्तक- मल्ल- मण्डनी- भूषण- भरू ॥४८॥
चात्रकः; श्चित्रक; श्चित्र; श्चम्पको; रुचको; रसुः ॥
चञ्चरीक; श्चन्दनश्च; चन्दकः; कोरकः कली ॥४९॥
चात्रक- चित्रक- चित्र- चम्पक रुचक- रसू- चञ्चरीक- चन्दन, चन्दक, कोरक, कली ॥४९॥
हंशश्च; सारस' श्चैव' कन्दुको; गुच्छ गुम्मफको ।
केयूर' मण्डलो केशी; कुण्डलो मौलि पाटुकौ ॥५०॥
हंस, सारस' कन्दुक' गुच्छ, गुम्फक' केयूर, मण्डल' केसी' कुण्डल, मौलि' पटुक ॥५०॥

Scanned by CamScanner

आनन्दो, हर्ष, रागीणौ, लग्नको, माधुरी, व्रतः ॥
सुधाकरो, गौरकश्च, गम्भीर, सुमुखो, नदुः ॥५१॥

आनन्द- हर्ष- रागीण- लग्नक- माधुरी' माधुरी- व्रत' सुधारक' गौरक' गम्भीर' सुमुखी नदु ॥५१॥

रत्नको, रसलो, भोगी, मनुपी, काशिकः, सुखी ॥
वृन्दी, वृन्दक, वृन्दारो, बिन्दुको, बिदुको, वदो ॥५२॥

रत्नक' रसल' भोगी' मनुपी' काशिक' सुखी' वृन्दी' वृन्दक' वृन्दार' विन्दुक' विदुकवदी ॥५२॥

एते चान्येपि लावण्यालशङ्काक् देश कालवित् ॥
श्रीरामे भक्तियुक्ताश्च सेवन्ते सर्वदा सुखम् ॥५३॥

ये सब तथा और भी बहुत से श्रीराम जी में सुन्दर भक्ति वाले' बड़े सुन्दर' सुकुमार' मीठा बोलने वाले' देशकाल अवस्था को समझने वाले' सदा सुखपूर्वक श्रीराम जी की सेवा करते हैं ॥५३॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां उत्तराख्याने वयस्यानां दाशानां नाम संज्ञा कथनं नाम चत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४०॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां रहस्याख्याने वयस्यानां दासानाँ नाम संज्ञा कथनं नाम चत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४०॥

राजपुत्र्युवाच—अयोध्याया मध्यभागे वर्णितः पूर्णतस्त्वया ॥
बाह्यतश्च तथा तस्या वर्णनं पूर्णतः कुरु ॥१॥

सुकान्ति बोली कि हे योग मुद्रे श्री अयोध्या जी के भीतरी भाग का तो तुमने पूर्ण वर्णन किया उसी तरह से बाहरी भाग का भी पूर्ण रूप से वर्णन करो ॥१॥

योगमुद्रोवाच—शृणु राज पुत्री दानिं यत्पृष्टन्तद्वदाम्यहम् ॥
त्वत्प्रीत्या परमं शोभा मैश्वर्य्यं च तथापरम् ॥२॥

योगमुद्रा बोली कि हे राजपुत्री! तुमने जो कुछ पूछा वह तुम्हारी प्रसन्नता के लिये मैं बताती हूँ सुनो; श्री अयोध्या जी के बाहरी भाग की परम शोभा तथा परम ऐश्वर्य का भी वर्णन करूँगी ॥२॥

ब्रह्म ज्योति रयोध्यायाः प्रथमा वरणं शुभम् ॥
यत्र गच्छन्ति कैवल्याः सोहमस्मीतिवादिनः ॥३॥

श्री अयोध्या जी के बाहर में प्रथम आवरण बहुत सुन्दर ब्रह्म ज्योति का मण्डल है जहाँ पर सोहमस्मि मन्त्र का जप करने वाले विद्वान् कैवल्य मुक्ति को प्राप्त होते हैं ॥३॥

द्वितीयं तु देश द्वीपाद्या पगव्धयग संयुतम् ॥
वासुदेवादि लोकैश्च राजते तत्ततीयकम् ॥४॥

दूसरे आवरण में दिव्य देश सातों द्वीप तथा सातों समुद्र भी हैं और तीसरे आवरण में वासुदेव आदिक अनन्त विष्णुओं के लोक हैं ॥४॥

तेषां मध्ये तु शाकेतं मण्डितं मणि मन्दिरैः ॥
प्रमोद विपिनं यस्य चतुर्दिक्षु विराजते ॥५॥

Scanned by CamScanner

इन तीन आवरणों के बीच में चारों दिशाओं में मणिमय भूषित पर्वतों के सहित तथा भीतर में चारों तरफ में प्रमोदवन आदि बारह वनों के सहित श्री साकेत धाम है ॥५॥

पुरतः पञ्च क्रोशश्च बिशालं दश योजनम् ।
तस्यो भयतः सरयुः सप्त दुर्गा नुबाहिनी ॥६॥

श्री साकेत नगर से पाँचकोश बाहर चारों तरफ में चालीस कोश पर्यन्त चौड़ाई में— इस मैदान के दोनों किनारे श्री सरजू जी सात आवरण दुर्गों के बीच सप्तस्रोत होकर के चारों तरफ बहती हैं ॥६॥

शालैस्तालैस्तमालैश्च रसालै द्रुम शंकुलम् ॥
मन्दारैः कल्प जातीयैर्देव बृक्षैश्च शोभितम ॥७॥

सातों आवरण वाली श्री सरजू जी के दोनों किनारों की भूमियों पर साल, ताड़, तमाल आम आदि बृक्षों की सघनता छाई हुई हैं; बीच २ में मन्दार कल्पवृक्ष आदिक जातियों के देव बृक्षों से वह भूमि शोभित हैं ॥७॥

तड़ाग बापिकाश्चैव मणि बद्धतटाः शुभाः ॥
स्फटिकै र्वद्ध नीबाह कूपैश्च परि शोभितम् ॥८॥

जहाँ तहाँ तालाब बावड़ी मणिमय बँधे हुये घाट वाले, तथा कहीं २ स्फटिक मणि से बने हुए किनारे वाले कुंआ अतिशोभित हैं ॥८॥

मृग यूथानि रम्यानि चरन्ति च रमन्तिच ॥
नादितं द्विज संघैश्च कूजितं भ्रमरा कुलैः ॥९॥

उन बनों में मृगाओं के झुण्ड अति सुन्दर चरते हैं और रमण करते हैं। पक्षियों के समूहों ने कल्लोल मचा रक्खा है; भ्रमरों के झुण्ड गूँज रहे हैं ॥९॥

नृत्य कृत्केकिनां युग्मै र्गानकृत पिक यूथकैः ॥
निर्वैर गज सिंहानां यूथैश्चापि विराजितम् ॥१०॥

मोर दो २ होकर नृत्य कर रहे हैं; कोकिलाएं झुण्ड की झुण्ड गा रही हैं; हाथियों के झुण्ड और सिंहों के झुण्ड निर्वैर होकर वन में घूमते हुए शोभित हो रहे हैं ॥१०॥

युग्मकै राज हंशाना सारसाना श्चयुग्मकैः ॥
कपोतानाश्च युग्मैश्च मनोज्ञं मोहनं परम् ॥११॥

राजहंस दो २ होकर सारस भी दो २ होकर, कपोत भी दो २ होकर मन रमणीय विलासों को करते हुये सबके मन को मोहित कर रहे हैं ॥११॥

भूमि प्रदेशकास्तत्र नाना मणिभिरञ्चिताः ॥
कुत्राचिन्नील वर्णाश्च कुत्राचित्पीत वर्णकाः ॥१२॥

उन प्रत्येक आवरणों की भूमि प्रदेश विविध प्रकार की मणियों से चित्र विचित्र रचित हैं। बीच २ में कहीं २ नील, पीत आदि बहुत रंगों की वेदियाँ बनी हैं ॥१२॥

Scanned by CamScanner



❊ टीकाकार के श्री गुरुदेव जी ❊

श्री श्री१०८ श्रीसियाशरण जी (श्रीमधुकरजी) महाराज

श्री चारुशीला मन्दिर, श्री चारुशीला बाग

श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी



श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट - बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

विषय सूची

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृ-लोक का दर्शन । द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४०१ ॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम । चतुष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम । पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ।।पृष्ठ ४२६।।

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह । षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ।।पृष्ठ ४५२।।

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४६२ ॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत। अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६६ ॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति । एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४८२ ॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना । षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ।।पृष्ठ ४६१।।

माणवक नगरीके राजा उद्धविक्रमकी कन्याओं से विवाह। एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ।।पृष्ठ ५०३।।

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह। द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ५१६ ॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जी की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये। फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये।

॥ इति शुभम् ॥



❀ श्री अमर रामायण ❀

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❀ बन्दना ❀

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, पुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'बागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
बन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❀:—



※ श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः ※

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

स्फटिकैः सित वर्णाश्च क्वचिच्चामीकराः शुभाः ॥
चित्रवर्णैर्मयूरैस्तु विजिन्मार्तण्डमण्डला ॥१३॥

कहीं २ पर स्फटिक मणि के सफेद वर्ण वाले कहीं स्वर्ण के सुन्दर महल बने हैं जिनमें चित्र रङ्ग के मोरों का नृत्य हो रहा है। इस प्रकार के वे महल अपने प्रकाश से सूर्य मण्डल को जीत रहे हैं ॥१३॥

देव सद्मानि राजन्ते तत्र तीर्थ जलाश्रये ।
रमन्त्यो प्सरसो नन्ता गन्धर्वा मधुर स्वराः ॥१४॥

जहां तहां जलाश्रयों के निकट तीर्थ हैं बहां पर देवताओं के मन्दिर शोभित हो रहे हैं। उन बनों में अनन्त अप्सराएं नृत्य कर रही हैं; अनन्त गन्धर्व मधुर स्वर से गा रहे हैं ॥१४॥

श्रीमद्दशरथस्यापि राजन्ते साङ्गकानि च ।
सद्मानि सन्मयूषानि तोरणैर्मण्डितानि च ॥१५॥

जहाँ तहाँ महाराज श्री दशरथ जी के भी वड़े २ महल उपवन, सरोवर आदि अङ्गों से पूर्ण अपने तोरण कलशादिक भूषणों के प्रकाश से दशों दिशाओं को प्रकाशित कर रहे हैं ॥१५॥

वीराणाञ्च सहस्राणि तिष्ठन्ति प्रतिगोपुरम् ॥
राज्ञस्तत्र च रक्षार्थं यत्नाय परिचारकाः ॥१६॥

जिनके प्रत्येक फाटकों पर हजारों बीर सुन्दर तरह से रक्षा कर रहे हैं महाराज ने उन महलों की रक्षा के लिए उन सब नौकरों को वड़े यत्न पूर्वक रक्खा है ॥१६॥

समयेदेवयात्रार्थं पौरः परिजनैः सह ॥
तत्रोषित्वा त्रिरात्रञ्च राजा गच्छति स्वां पुरीम् ॥१७॥

कभी २ समय पर उन तीर्थ और देवताओं के दर्शन के लिए पुरजन और परिजनों के साथ यात्रा करके महाराज उन महलों में तीन रात्रि वास करके तव अपने अयोध्या नगर में चले आते हैं॥१७॥

अथातः सप्त प्राकाराः भ्राजन्ते भिन्न नामकाः ।
लसद्दाकाश शिखराः स्फटिकादि विनिर्मिताः ॥१८॥

अब ये सातों प्रकाशमान आवर्णों के प्रत्येक परकोटा का नाम अलग २ हैं; स्फटिक मणि से बने हुए इन परकोटाओं के शिखर बहुत ऊपर आकाश में शोभित हो रहे हैं ॥१८॥

प्रथमं दुर्जयो नामा विजयश्च द्वितीयकः ॥
तृतीयो विकटश्चैव तुर्य्यः सुविकटो महान् ॥१९॥

प्रथम परकोटा का नाम दुर्जय है, दूसरे का नाम विजय है, तीसरे दुर्ग का नाम विकट है; चौथे महान् दुर्ग का नाम सुविकट है ॥१९॥

पञ्चमो नभ कण्ठश्च षष्ठस्तु स्यात्सुतालकः ॥
सप्तमस्तालको नाम सर्वे तेऽरिभय प्रदाः ॥२०॥

पांचवे दुर्ग का नाम नभकण्ठ है; छटवे का नाम सुतालक है; सांतवे दुर्ग का नाम तालक है। ये सब दुर्ग शत्रुओं को भय देने वाले हैं ॥२०॥

कपाट तोरणै र्जाल गवाक्षे र्मणि मण्डितेः ॥
गोपुराणि विराजन्ते सप्त स्वावरणेषु च ॥२१॥

प्रत्येक दुर्ग के चारों दिशाओं के फाटक मणिमय तोरण; जाली; छज्जे; झरोखाओं से भूषित हीरा आदिक मणि जड़े हुए वड़े २ किवाड़ शोभित हैं। इन सातों आवरणों के प्रत्येक फाटकों में गोपुर बहुत ऊँचे प्रकाशमान शोभित हो रहे हैं ॥२१॥

वीराणाश्च सहस्राणि रक्षितुं प्रतिगोपुरम् ॥
महाविक्रम युक्तानां धनुश्शक्त्यसि धारिणाम् ॥२२॥

प्रत्येक गोपुरों में उनकी रक्षा के लिये धनुष शक्ति आदि अस्त्र शस्त्रों से कसे हुए महा पराक्रमी वीर निवास करते हैं ॥२२॥

योजनानां द्वादशैव विस्तारः प्रथमस्यतु ॥
द्वाभ्यां द्वाभ्यां वाधिकान्य पराणि विद्धितत्क्रमात् ॥२३॥

इन सातों आवरणों में से प्रथमावरण ४८ कोश का विस्तार वाला है; दूसरा इससे दुगुना; तीसरा चौगुना इसी क्रम से सब आवरण हैं ऐसा जानो ॥२३॥

दुर्गस्योपरि गेहानि दुर्गागाराणि संज्ञया ॥
योजनैके षोडशैव तल क्रमेणैव सर्वतः ॥२४॥

उन दुर्गों के ऊपर जो महल हैं उनका नाम दुर्गागार है वे दुर्गागार प्रथम आवरण के ऊपर सोलह तल वाले एक योजन ऊँचे हैं इसी क्रम से सब में जानो ॥२४॥

दुर्गेषु च लघून्येवं राजन्ते सप्तसु क्रमात् ॥
दिशं प्रति चत्वार्येव द्वाराणि संस्कृतानि च ॥२५॥

सातों दुर्गों में इसी क्रम से छोटे २ करके शोभित हैं; प्रत्येक दुर्गागारों के चारों दिशाओं में फाटक हैं जो सुन्दर रचना से बने हैं ॥२५।

द्वारेषु च तद्गेहेषु काण्ड पृष्टाशतं शतं ॥
रक्षन्ति तेषु तेष्वेको मुख्यो जन बिराजकः ॥२६॥

उन दुर्गागारों के प्रत्येक फाटकों में शस्त्रों से जीविका करके रक्षा करने वाले सैकड़ों हैं प्रांत-द्वार के सौ में एक मुख्य है जो जन विराजक पदवी से उन सबकी रक्षा करता है ॥२६॥

तत्र तत्र दुन्दुभिस्स्या स्शतघ्नी तु दशोन्मिताः ॥
बृहद्द्वाराणि चत्वारि दुर्गाणाश्च सुतोरणैः ॥२७॥

उन प्रत्येक फाटकों में दुन्दुभी आदि बाजे हैं तथा तोप मशीनगन आदि तो दशों दिशाओं की तरफ मुख करके रक्खी हैं। इसी प्रकार प्रत्येक दुर्गों के चारो दिशा वाले द्वार बहुत ऊँचे बने हुये तोरणों से शोभित हैं ॥२७॥

अक्षौहिण्य श्चतस्रश्च साधिक्षास्तत्र तत्रवै ॥
द्वाराद्वहि प्रतिष्ठन्ति वस्र गेहेपि सद्मसु ॥२८॥

हर दुर्गों के फाटकों पर चतुरंगिणी अक्षौहिणी सेना अपने अध्यक्षों के सहित द्वारों से बाहर वस्त्रों के महलों में ठहरी हुई है ॥२८॥

तिष्ठन्त्यहर्निशं चान्ये वहुशो द्वार पालकाः ॥
नबियुक्ता स्तेपि शस्त्रैः राज्ञि स्नेहान्विताश्च ते ॥२९॥

उनके शिविर के भी चारों फाटकों पर बहुत से द्वारपाल रात दिन रक्षा करते हैं। इस प्रकार की सेनाऐं भी महाराज में स्नेह रखती हुईं अपने अस्त्र शस्त्रों से कभी वियुक्त नहीं होती हैं ॥२९॥

शाकेत पुर वाद्यानां गोपुरो परिवर्तिनाम् ॥
श्रृण्वन्ति पथिका नादं योजन द्वयतोवहि ॥३०॥

शाकेत नगर के इन परकेटाओं वाले फाटकों के बाजाओं का नाद आठ कोस बाहर तक की जनता को सुन पड़ती हैं ॥३०॥

गोपुराणां वहिर्भागे चत्वारि पीठकानि च ॥
रत्न प्राकार द्वाराणि विभ्राजत्तोरणानि च ॥३१॥

प्रत्येक दिशा के दुर्ग फाटकों से बाहर चारों दिशाओं में हाट लगते हैं उन हाटों के भी रत्नमय परकोटाओं के चारों दिशाओं में फाटक हैं जो तोरणादिकों से शोभित हैं ॥३१॥

दिग्संज्ञकानि सर्वाणि पूर्वस्यां पूर्व पीठकम् ॥
तेषु सर्वेषु सन्दर्भैः सद्मनहट्टाट्ट मालिकाः ॥३२॥

उन हाटों का दिशाओं के भेद से नाम है जैसे पूर्व पीठ, दक्षिण पीठादि। उन सब हाटों में ऊँचे अट्टालिका वाले सवन महलों की पंक्तियाँ हैं ॥३२॥

बसन्ति नैगमा स्तत्र विक्रये दूर देशिकाः ॥
राज्ञिप्रियपराः सर्वे श्रीराम मुख दर्शिनः ॥३३॥

उन महलों में दूर देशिक व्यापारियों से लेन देन व्यापार करने वाले बनिया (साहूकार) लोग निवास करते हैं ये सब बनिया लोग महाराज से प्रेम करने वाले श्रीराम मुख चन्द्र दर्शन के लोभी हैं ॥३३॥

यस्यां दिशः समायान्ति वाणिजा वस्तु नीतकाः ॥
निवसन्ति तद्दिग्पीठे नृपदत्तापणे गृहे ॥३४॥

बहुत बस्तुओं को लिये हुए जो बनिया जिस दिशा से आते हैं वे उसी दिशा के हाटमें महाराज श्री दशरथजी द्वारा दिए हुए घर में निवास करते हैं ॥३४॥

विपणास्ति चन्द्रवारे पूर्व पीठे तु वस्तुनः ॥
दक्षिणे तद्द्वितीये च पश्चिमे तत्तृतीय के ॥३५॥

सोमवार को पूर्व पीठ में बाजार लगता है। मंगल को दक्षिण दिशा में, बुध को पश्चिम दिशा में ॥३५॥

उत्तरे तच्चतुर्थस्या देवं त्रिदिवसान्तरम् ॥
विक्रेत्तॄणां क्रायकाणां समाजश्चाद्भुतो भवेत् ।३६॥

बृहस्पति को उत्तर दिशा में बाजार लगता है इसी प्रकार तीन दिन का अन्तर देकर चारों दिशाओं में बाजार लगता है। इस प्रकार उन बाजारों में क्रेता—विक्रेताओं का अद्भुत समाज होता है ॥३६॥

विक्रेतारश्च ते सर्वे वस्तुनः स्वस्य स्वस्य च ॥
हट्टे हट्टाग्र भागे च कुर्वन्ति विस्तरं तदा ॥३७॥

सब के सब विक्रेता लोग अपने २ हाटों में अपनी २ दुकानों के आगे भाग में वस्तुओं को फैला कर लगाते हैं ।।३७।

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुत्तरखण्डे
श्रीरामधाम आवर्णबहिर्भाग वर्णनोनामएकचत्वारिंशत्तमःसर्गः ॥४१॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायाँ उत्तरखण्डे श्रीरामधाम वहिर्भाग वर्णनो
नाम एकचत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४१॥

भिन्नत्वेन च हट्टानां संहट्टाभिन्न वस्तुनः ॥
तांस्तान्संघट्टकान्सर्वे पृच्छन्नगच्छन्ति क्रायकाः ॥ १ ॥

हाटों में प्रत्येक वस्तुओं के बाजार अलग २ हैं, क्रेता लोग उन प्रत्येक वस्तुओं के वाजारों को पूछते हुये जाते हैं ॥१॥

गजानामश्वकानाञ्च विनीताना तथापरे ॥
वाल्हिकानां सिन्धुजानां काम्वोजानां सुवाहिनाम्॥ २ ॥

विनीत (साधे हुये) हाथियों और घोड़ाओं के जो कोई वाल्हिक तथा सामुद्रिक व काम्वोज देशिक सुन्दर वहन करने वाले ॥२॥

कुत्र चित्पारशीकाणामुच्चकानां सुवर्णिनाम् ॥
पारावारोद्भवानाञ्च मध्यदेशेषु जायिनाम् ॥ ३ ॥

तथा कहीं पर बहुत ऊंचे पारसी--घोड़े प्रत्येक रङ्ग के, दूर देशिक तथा मध्य देशिक उत्पन्न हुये ॥ ३ ॥

उष्ट्राणा म्वृषभाणाञ्च मृगाणाञ्च तथापरे ॥
महिषी माहिषाणाञ्च गवां मेषा जखदुगिनाम् ॥४॥

उसी तरह से देश २ के ऊंट और बैल, मृग इसी प्रकार भैंसी, भैंसा, गौ बकरी गेंडा ॥४॥

पाठितानां सुकानाञ्च कोकिलानां कलापिनाम् ॥
सारसानाञ्च हंशानां कादम्वानाञ्च युग्मतः ॥५॥

पढ़ाए हुए सुग्गा कोकिला मोर सारस हंस कल हंस जोड़े २ ॥५॥

चक्रवाक चकोरगणांतित्तिराणां तथापरे ॥
कुक्कुभाणां वर्तिकाणां मद्गुकानां सुवर्णिनाम् ॥६॥

चकवा चकोर तीतर वन मुर्गा वतख जलकाग सुन्दर रङ्ग वाले ॥६॥

एतेषां गृह्यकाणाञ्च दूरदेशेषु जन्मिनाम् ॥
विक्रेतारः समादाय पीठे विस्तारयन्ति च ॥७॥

ये सब और इन सबके रक्षक जो दूर देश से बेचने के लिए आये हुए हैं उन सबने उस हाट में अपने कायदे से अलग २ विस्तार कर रक्खा है ॥७॥

विस्तारं हट्ट संहट्टे कुर्वन्ति सद्विभागतः ॥
नासत्यम्भाषमाणा स्ते सत्यायाः पीठकायने । ८॥

जो जिस वस्तु के बाजार जिस हाट के जिस खण्ड में सुन्दर विभाग पूर्वक दुकान खोले हुए हैं वे कोई असत्य बोलने वाले नहीं हैं क्योंकि यह बाजार ही सत्यानगरी का है ॥८॥

अथ च क्षौम वस्त्राणां कौषेयानां तथापरे ।
राङ्कवानाञ्च वस्त्राणां कार्पाशानांच वाणिजाः । ६॥

इसी प्रकार रेशमी वस्त्रों के बाजार में, कटिया; कोसा और कम्बलादिक ऊनी वस्त्रों के बाजार में तथा सूती वस्त्रों के बाजार में प्रत्येक वैश्य सुन्दर सत्यता पूर्वक व्यापार करते हैं ॥६॥

बिक्रेतारो मौक्तिकानां हीरकानां तथापरे ॥
मणीनां विद्रुमाणाञ्च देशतो भार वाहकैः ॥१०॥

जो मौक्तिक हीरा मणि विद्रुम आदि के भार के भार प्रत्येक देशों से ढुवा कर लाते हैं ॥१०॥

तथाहरि नखानाञ्च भिन्नानां तु गजास्थतः ॥
तथा च गजदन्तानां बिक्रेतारः समूहिताः । ११॥
अनाहत सुवर्णानां भारानादाय दूरतः ॥
देशतः सकटैश्चात्र विक्रेतारो महाधनाः ॥१२।

तथा इसी प्रकार बाघों के नख गजास्थि की बस्तु गजदन्तों की बस्तु लेकर विक्रेता लोग झुण्ड केझुण्ड ॥११॥

असीम उत्तम स्वर्णों के भारों को लेकर दूर देशों से बड़े २ धनिक लोग बैलों की गाड़ियों से बेचने के लिए लाते हैं ॥१२॥

बिक्रयार्थं चानयन्ति वहुलाभस्य लिप्सया ॥
नच मार्गेभयं तेषां कौशलेन्द्र प्रभावतः ॥१३।

बहुत लाभ के लालच से बेचने के लिए लाते हैं, महाराज कोशलेन्द्र जो के प्रभाव से किसी को कोई भय मार्ग में नहीं होता है ॥१३॥

पुङ्गीफलानां वहुसोभारानादाय वाणिजाः ॥
एलानाञ्च लवङ्गानां जायिकाना न्तथापरे ॥१४॥

सुपारियों के बहुत भार इलाइची व लौंगों के तथा जायफल आदि के बहुत भारों को बनिया लोग लेकर आते हैं तथा और भी ॥१४॥

जाती फलानां वहुसोऽग्नि शिखानां तथापरे ॥
कर्पूरागरू कस्तूरी कङ्कोलानाञ्चभारकैः ॥१५॥

वहु जाति के कलहारी. इन्द्रपुष्पी केसर आदि तथा कपूर अगरु कस्तूरी कण्कोल इन सबके भी भार ढो ढोकर बाजार में लाते हैं ॥१५॥

शकटैः पुर साकेत मृद्धिम त्परमं प्रजम् ।
उच्चध्वजो च्चप्राकारम् नेयन्ति वाणिजाश्चते ॥१६॥

बैलगाड़ी आदिकों से महान् ऐश्वर्यमान साकेतपुरके बाजार में जहां ऊचे ध्वजा परकोटा महल हैं वहां बनिया लोग लाते हैं ॥१६॥

गजानां गज संघट्टे नवानां यूथकानिच ॥
विक्रेतृणां विराजन्तेसमानि मेघ पंक्तिभिः ॥१७॥

नवीन हाथियों के झुण्ड नवीन हाथियों के बाजार में तथा इसी प्रकार व्यापारियों के हाथियों की पंक्ति मेघमाला के समान शोभित होती है ॥१७॥

घोटकाना ञ्च संघट्टे घोटकानां सुपंक्तयः-
काम्बो जवाह्लिकादीनां विक्रेत्रीणां पृथक् पृथक् ॥१८॥

घोड़ाओं के हाट में घोड़ाओं की पंक्तियां सुन्दर तरह से काम्बोज वाल्हीक आदि जाति भेद से बनियों ने अलग २ पंक्ति सजा रक्खी है ॥१८॥

एवं वृषभसंघट्टे बिक्रेत्रीणां पृथक् पृथक् ॥
समूहा भिन्न वर्णाश्च शोभन्ते पीठकायने ॥१९॥

इसी प्रकार बैलों के हाट में भिन्न-भिन्न जाति के बैलों को पंक्ति की पंक्ति (पैठ) में व्यापारियों ने शोभित कर रक्खा है ॥१९॥

गोसंघट्टे गवामेव मध्यमोत्तमभेदतः ॥
पङ्क्तयः परिभ्राजन्ते बिक्रेत्रीणां पृथक् पृथक् ॥२०॥

इसी तरह से गायों के हाट में गायों के उत्तम माध्यम भेद से पंक्तियां अलग २ प्रकाशमान हो रही हैं ॥२०॥

तथैव गृह्यकानाञ्च संघट्टे मृगपक्षिणाम् ॥
पञ्जरस्थायन्त्रिताश्चराजन्ते बहु पंक्तयः ॥२१॥

इसी प्रकार मृग पक्षियों को भी उनके पकड़ने वाले लोग पिंजड़ाओं में रखकर के पंक्ति के पंक्ति शोभित हो रहे हैं ॥२१॥

तथाच स्वर्ण संघट्टे स्वर्णाद्रेः पाद सन्निभाः ॥
आहतानाहतस्यैव भ्राजन्ते वहुशश्चयाः ॥२२॥

उसी प्रकार स्वर्ण के भी बस्तु बने हुए तथा विना बने हुए वहुत ढेर दूर ही से प्रकाशमान हो रहे हैं ॥२२॥

भ्राजन्ते रजतस्यैवं कैलाश पाद सन्निभाः ॥
वहुशश्च विक्रेत्रीणां समूहास्ते पृथक् पृथक् ॥२३॥

इसी प्रकार चांदी के भी कैलाश पर्वतसदृश बहुत ढेर तथा उनके व्यापारियों के सहित अलग अलग पंक्तियां शोभित हैं ॥२३॥

तथाहि वस्त्र संघट्टे वस्त्राणां सन्तिप्रस्तराः ॥
कलितानां स्वर्ण सूत्रैः राजार्हाणां महोच्चकाः ॥२४॥

इसी प्रकार वस्त्रों के हाट में बस्त्रों के बिछावन बिछे हुए हैं जो कि स्वर्ण सूत्रों से बने महान् महाराजाओं के योग्य हैं ॥२४॥

तथा च वित्त संघट्टे विस्तरो योजनायते ॥
विस्तस्य कुरु बिस्तस्य रजताद्या श्चराशयः ॥२५॥

इसी प्रकार धन के हाट में कोसों के विस्तार तक विस्त (८० रत्ती भर सोना), कुरुविस्त (१२८ मासा सोना) नामक सोने तथा चांदी के भूषणों की पंक्ति के पंक्ति ढेर लगे हैं ॥२५॥

कोटचर्व खर्व संख्यानां धनदस्य मदापहा ॥
अनन्ताः परि राजन्ते साकेतपुर वासिनाम् ॥२६॥

कुवेर के मद को अपहरण करने वाले करोड़ों अर्बों खर्बों की संख्या में सम्पत्ति वाले अनन्त वैश्य श्रीसाकेतपुर के इस बाजार में शोभित हैं ॥२६॥

पादुका पीठ पर्यङ्क द्वारांग तोरणादिच ॥
मयूर पिक हंशादि वालक्रीडार्थकादि यत् ॥२७॥

कहीं चरण पादुकाओं के बाजार, कहीं सिंहासन पीढ़ा पर्यंकों के बाजार, कहीं पर तोरण खूटी आदिक काठ की वस्तुओं के बाजार, कहीं पर मोर कोकिल हंसादि खिलौने काठ स्वर्णादि के बने हुए के बाजार ॥२७॥

स्वर्णेन रचित ञ्चैव क्वचिद्रजतनिर्मितम् ॥
क्वचित्ताम्रादि काष्टादि निर्मितं हट्ट पंक्तिषु ॥२८॥

स्वर्ण के कहीं चांदी के कहीं तांबा के कहीं काष्ठ के खिलौने आदि वस्तुओंकी बहुत सी पंक्तियां लगी हुई हैं ॥२८॥

सूत्र चारित क्रीडार्थाः दर्शयन्तश्च कौतुकम् ॥
तेतुकौतुक संघट्टे भ्राजन्ते पीठकायने ॥२६॥

बहुत से खिलौने सूत्रों के द्वारा चलाकर दुकान्दार अद्भुत कौतुकों को दिखाते हैं। ऐसे खिलौने वाले भी पंक्ति की पंक्ति बाजार में कौतुकों को दिखा रहे हैं ॥२९॥

एवञ्च वस्तु संघट्टा बर्तन्ते शतकोटयः ॥
एकैकानां तु विस्तारो योजनानां चतुष्टयम् ।३०॥

इस प्रकार की वस्तुयें करोड़ों की संख्या में बाजारमें शोभित हैं। ऐसी प्रत्येक वस्तुओं का विस्तार बाजार में चार योजन तक है ॥३०॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां मुत्तराख्याने बस्तु विपण हट्ट संघट्ट पीठस्थ वर्णनो नाम द्विचत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४२॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने वस्तु विपण हट्ठ संटट्ट पीठस्थ वर्णनो नाम द्विचत्त्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४२॥

देशीयाश्च विदेशीयाः क्रयकाः सर्व वस्तुनां ॥
आगता धन मादाय हयेभरथ वाहनाः ॥१॥

इन बस्तुओं के खरीदने वाले लोग देश विदेश के बड़े दूर दूर तक के बहुत धन लेकर के घोड़े, हाथी, रथ, वाहनों में बैठकर आते हैं ॥१॥

वहवः कौतुकं द्रष्टुं यत्र जानपदा जनाः ॥
भूषिता वाहनै र्युक्ताः विचरन्ति दिदृक्षवः ॥२॥

तथा प्रजा (जनता) भी विविध प्रकार की भूषित सवारियों द्वारा बाजार के कौतुक को देखने के लिए आये हुये बाजार में इधर से उधर बिचरते हैं ॥२॥

रथानांकिङ्किणीजालै र्गज घण्टोच नादितैः ॥
परस्परंभाषमाणाः शृण्वन्ति वर्णभाषणैः ॥३॥

उनके रथ आदिकों के किंकिणी समूह तथा हाथियों के घण्टा-नाद-इस प्रकार की सवारियों में बैठकर परस्पर बात करते हुए साफ अक्षरों में सुन्दर शब्द सुन पड़ते हैं ॥३॥

नियमा नधिकं किञ्चि द्विक्रेत्रीणां सुवस्तु षु ।
रक्षितुञ्च वणीजानां भागधेयो विशाम्पतेः ॥४॥

कोई भी व्यापारी नियम से अधिक दाम न बढ़ा दे इसकी रक्षा के लिए महाराज श्री चक्रवर्ती जी का कर उगाहने वाला जिस महल में रहता है ॥४॥

तस्यार्ज कोस्त्यमात्य श्च पीठस्य मध्यभाग के ॥
योजनायत कक्षेतु सूचक ध्वजे गृहे ॥५॥

वह मन्त्री का घर उस बाजार के ठीक के मध्य भाग में है जो मध्यभाग एक योजन चौड़ा है उसके बीच में वह मन्त्री का महल प्रत्येक बाजारों को भाव सूचित करते हुए इस अनुकूल ध्वजा पताकादिकों से शोभित हैं ॥५॥

तद्गृहं हेमप्राकारं खचिद्रत्न सुतोरणम् ॥
दृढ वज्र कपाटञ्च गवाक्षै र्द्वार मण्डितम् ॥६॥

उस मन्त्री घर के बाहरी भाग में एक स्वर्ण का परकोटा है जो रत्नों से खचित सुन्दर ध्वजा तोरणादिवाला छज्जा झरोखाओं सहित हीरादिक रत्नोंसे भूषित वज्र-सदृश मजबूत किवाड़ वाला है ।६।

रत्नस्तम्भालिकाभाषं चित्रभित्ति चमत्कृतम् ॥
दीव्य त्पट पिधानैश्च वितानैः खण्डमण्डितम् । ७॥

वह महल रत्नों की खम्भावलियों से प्रकाशमान चित्रों से रचित दिवाल बड़े चमत्कार वाला है। जहांतहां कोठाओंपर कमरेमें वितान परदे बिछावन आदिक दिव्य वस्त्रों से प्रत्येक खंड भूषितहैं॥७॥

सोमात्य स्तत्सभागारे भ्राजमानो जनै र्वृतः ॥
पीठस्था ।बाणिजाय।वत्तन्निर्देशात्प्रवर्त्तकाः ॥८॥

उस सभागार में अपनी फौज पलटन नौकर चाकर आदि जनों से मन्त्री महोदय अत्यन्त प्रकाशमान हैं । उस बाजार का प्रत्येक बनिया उन्हीं मन्त्री महोदय के निर्देश से चलते हैं ।।८॥

कौतुकं दिदृक्षु राजा कौशलेन्द्रो सनातनः ॥
तद्गृहे भागधेयाख्ये समागत्य बिराजते ॥९॥

कभी २ सनातन महाराज श्री कोशलेन्द्र जी कौतुक देखने की इच्छा से उस बाजार में आते हैं तो उसी भाग धेय [तहसिल] नामक महल में निवास करते हैं ॥९॥

बिपणस्य दिने दिव्यै राजवृन्दै सुसेबितः ॥
बशिष्ठ प्रमुखैर्दिव्यै र्ब्राह्मणैश्च समावृतः ॥१०॥

दिव्य राजाओं के झुण्ड से सुसेवित तथा श्री वसिष्ठादि प्रमुख्य ब्राह्मणों से घिरे हुए महाराज श्री दशरथ जी बाजार के दिन पैठ देखने आते हैं ॥१०॥

खचिद्रत्न रथारूढ़ा दिव्या भरण भूषिताः ॥
स्वर्णदण्ड धरै र्भृत्यैः काण्ड पृष्टैः परिवृत्ताः ॥११॥

दिव्य रत्नों से खचित रथों पर बैठ करके दिव्य भूषणों से भूषित, स्वर्ण दण्ड धारण किये हुए नौकरों से तथा अस्त्र शस्त्र धारण किये हुए नौकरों से घिरे हुए ॥११॥

पैठे तु कौतुकं द्रष्टु मागतास्ते पीतस्ततः ॥
भ्रमन्ति भ्राजमाणास्ते वैश्या वैश्रवणाधिकाः॥१२॥

कुबेर से अधिक ऐश्वर्य वाले बनिया लोग कौतुक देखने के लिए आये हुए इधर से उधर सवारियों द्वारा घूमते हुए प्रकाशमान हो रहे हैं ॥१२॥

तेजसार्कं समाश्चार्क बन्श्या विक्रम शालिनः॥
गजारूढा हयारूढा रथारूढा विभूषिताः ॥१३॥

तेज में सूर्य के समान महान् पराक्रम शाली सूर्यवंश में उत्पन्न हुये बहुत से राजा लोग कोई हाथियों पर चढ़े हुए; कोई घोड़ाओं पर चढ़े हुए, कोई रथों पर सवार सुन्दर भूषित अङ्ग वाले ॥१३॥

स्वसैन्यै श्चावृताः सर्वे द्रष्टुं पीठोत्सवं तदा ॥
समागत्य विराजन्ते भ्रमन्तो विस्तृते चणाः ॥१४॥

अपनी सेना से घिरे हुए उस पैठ के उत्सव को देखने के लिये आए हुए विशाल नेत्रों से देखते हुए बाजार में घूम रहे हैं ॥१४॥

श्रीमन्महेन्द्र मुकुटा नत पादाब्ज पीठकः ॥
कौशलेन्द्रो पंक्तिरथः पार्थिवैर्बहुभिर्वृतः ॥१५॥

इस प्रकार के बहुत राजाओं से घिरे हुये महेन्द्र से पूजित चरण पादुका वाले श्री मान कोसलेन्द्र श्री दशरथ जी ॥१५॥

देवाभिलषिते दिव्ये विमाने सुविशालके ॥
कल्पितान्तर खण्डे च रत्नस्तम्भावलिचरावृते ॥१६॥

देवता भी जिसकी अभिलाषा करते हैं ऐसे बहुत विशाल दिव्य विमान के अन्दर रत्न खम्भावलियों से सुशोभित महान् रचना युक्त किसी एक खण्ड में बैठे हुये हैं ॥१६॥

तोरणध्वज वितानैश्च शोभिते परमाद्भुते ॥
सहस्रैश्च जनै र्वाह्ये स्थित्वाविद्वत्समाजकैः ॥१७।

जो विमान परम अद्भुत तोरण ध्वजा वितानों से सुशोभित है हजारों जन जिसको ढोतेहैं ऐसे विमान पर बैठ कर विद्वत् समाज ॥१७॥

वशिष्ठ वामदेवाद्यैः शैन्यैश्चापि चतुर्विधैः ॥
छत्र चामर शोभी च किरीटादि विभूषणैः ॥१८॥

श्री वशिष्ठ, वामदेव आदि उसी प्रकार चतुरंगिणी सेना के सहित छत्र चवँर, क्रीट, कुण्डलादि भूषणों से सुशोभित ॥१८॥

भूषितश्च महातेजा दुन्दुभिध्वज सूचितः ॥
स्व नाम जय शब्देन जनैः शृण्वन्यशोच्चकैः ॥१९॥

भूषित दुन्दुभी, ध्वजादिकों से शोभायमान दूर तक है प्रसिद्ध महान् तेज जिनका ऐसे स्व नाम धन्य महाराज श्री अवधेश श्री चक्रवर्ति जी की जय हो—ऐसे ऊँचे शब्दों से जनता के द्वारा अपने यश को सुनते हुए महाराज श्री दशरथ जी चल रहे हैं ॥१९॥

स्वस्याग्रे नृत्य सांगीतं शृण्वन्पीठे सुकौतुकम् ॥
द्रष्टु ङ्गोलोक नाथो सा वाज गाम जगत्प्रभुः ॥२०॥

आप के आगे नृत्य, गान, सङ्गीत हो रहा है उसको सुनते हुए सब जगत के प्रभु गो लोक नाथ ये महाराज श्री दशरथ जी पैठ के कौतुक को देखने के लिये वाजार में आ पहुँचे ॥२०॥

पीठे दर्शयितुं भ्रातृ न्कौतुकं भ्रातृवत्सलः ॥
गमिस्यति गजारूढः श्रीरामो सुन्दरेक्षणः ॥२१॥

अपने भ्रातओं पर वात्सल्य रखने वाले सुन्दर नेत्र श्रीराम जी हाथी पर चढ़ करके भ्राताओं को पैठ का कौतुक दिखाने के लिये चलेंगे ॥२१॥

सुविद्य श्चामात्य पुत्रो विचिन्त्येति तदा भृशम् ॥
सैन्यञ्च वाहनं सर्वं भूषायुक्तमकारि च ॥२२॥

ऐसा विचार कर मंत्री कुमार श्रीसुविद्य जी उस समय शीघ्र सेना, सवारी आदिक सब को भूषण आदि साजों से युक्त कराए ॥२२॥

पुनः क्रमेण विन्यासः स्यन्दने भाश्वपत्तिभिः ।
समवर्णैं भूषणैश्च ध्वजनी पंक्तिभिः कृता ॥२३॥

और क्रमशः हाथी, घोड़े; रथ, पैदल आदि बहुत सी सेनाओं का भी समान रङ्ग से, प्रत्येक के यथा योग्य जाति भेद करके भूषणों से, ध्वजा पताकादि सजावट से सुन्दर पंक्तियों को करके नियुक्त किया ॥२३॥

स्वर्ण सूत्रैर्निर्मितानां वस्त्राणाञ्च बृहद्ध्वजाः॥
रत्न मुक्ताञ्चित प्रान्ताः कुद्दाल द्रुम चिन्हिताः ।२४।

बड़ी ऊँची ध्वजाओं वस्त्र स्वर्ण सूत्रों से बने हुए हैं उनमें रत्न मुक्ता आदिकों से किनारे रचे हुए तथा बीच में भी कुदाल कचनार के वृक्ष स्वस्तिक आदि चिन्ह बने हैं।२४।

तानादाय बृहद्दण्डान् गजारोहाः सुभूषिताः॥
शत सादि समायुक्ताः शक्तिकैश्च परिवृत्ताः ॥२५॥

उन ध्वजाओं के बहुत बड़े दण्डों को पकड़े हुए सेवक सुन्दर वस्त्र भूषणों से भूषित हाथियों पर बैठे हुये हैं। वे ध्वजाएँ सैकड़ों घुड़ सवारों से तथा बहुत से शक्ति धारियों से घिरे हुए सुरक्षित हो रहे हैं ॥२५॥

एतैः प्रथम बिन्यासो दुन्दुभीना मनन्तरम् ॥
घनोच्चघोष युक्तानां निषादीभिरिभोच्चकाः ॥२६॥

इस प्रकार यह पहला बिन्यास खण्ड है दूसरा मेघों के समान महान् गर्जना करने वाला दुन्दुभियों का विन्यास है वह भी ऊंचे हाथियों से शोभित सैकड़ों हाथी सवारों द्वारा सुरक्षित है॥२६॥

शक्तिकानां सतञ्चैव एकस्यैवानुवर्त्तिकम् ॥
शादिनाञ्च शतञ्चैवं यथा पूर्वं प्रवर्त्तते ॥२७॥

एक एक की सैकड़ों शक्ति धारी, तथा सैकड़ों घुड़ सवार पूर्व की ही तरह से वर्ताव करते हुये साथ में चल रहे हैं ॥२७॥

एवमश्वध्वजानाञ्च विशालानां सुभूषिताः ॥
शक्तिकानां गणै युक्ता दुन्दुभीनां गजानुगाः ॥२८॥

इसी प्रकार घोड़ों पर ध्वजाओं का विन्यास महान् शक्तियों के गण से सुरक्षित विशाल तथा सुन्दर भूषित है जो कि दुन्दुभी वाले गज विन्यास के आगे चल रहा है ॥२८॥

एवमश्व दुन्दुभीनां प्रत्येकः शक्तिकान्विताः ॥
पूर्वं द्वे च इमे द्वे च बिन्यासानां चतुष्टयम् ॥२९॥

इसी प्रकार घोड़ाओं पर दुन्दुभी का विन्यास सुन्दर शक्तियों से सुरक्षित है। पहले के दो और पीछे वाले दो इन चार विन्यासों का एक चतुष्टय हुआ ॥२९॥

भेरीध्माश्च शङ्खध्माश्च तथा प्रणव वाद्यकाः ॥

झर्झराणां बाद्यकाश्च वैष्णबानां समूहकम् ॥३०।

भेरी को बजाने वाले, तथा संख को बजाने वाले, उसी प्रकार पणव बजाने वाले; और झर-झरों को बजाने वाले; बंशी बीणा आदिक बाजाओं के बजाने बालों का समूह ॥३०॥

एवमातोद्यकानाञ्च वादकाः दिव्यरूपकाः ॥

बिन्याशः पञ्चमस्तेषां काण्ड पृष्टाग्र बर्तिकाः ॥३१॥

इस प्रकार तत (तारके बाजा) घन (कांशे के बाजा) आनद्ध (चमड़े के बाजा) सुषिर (हवा के बाज) ये चारो प्रकार के अनन्त बाजाओं के बजाने वाले दिव्य रूप धारियों का यह पाँचवा विन्यास है जो शस्त्र धारी सेना के आगे चलता है ॥३१॥

लक्षमेकं शक्तिकानां भूषया शुभ्रवर्णकम् ॥

बादित्राग्रं बिभात्येवं विन्यासः षष्ठमः शुभः ॥३२॥

इन बाजा विन्यास के आगे छटवाँ एक लाख शक्ति धारी, जो सफेद वर्ण के भूषणों को पहने हैं उनका विन्यास शोभित है ॥३२॥

ततः खड्ग धराणाञ्च लक्षैकं शक्तिकानुगम् ॥

भूषया नील बर्णञ्च बिन्यासोयं सुसप्तमः ॥३३॥

उसके आगे एक लाख खड्ग धारियों का सातवां विन्यास है जो अपने भूषण पहिनाव से नील वर्ण का है ॥३३॥

ततो धनुष्मतां लक्षं रक्तवर्णञ्च भूषया ॥

बादित्राग्रंबिभात्येवं बिन्याश श्चाष्टमोमहान् ॥३४॥

उसके आगे एक लाख धनुष धारियों का विन्यास है जो अपने वस्त्र भूषणों से लाल बर्ण का शोभित है। इस प्रकार यह आठवां विन्यास महान् शोभित है ॥३४॥

रूप्य दण्ड धराणाञ्च लक्ष्यैकं पीत वर्णिकम् ॥

भूषयाभ्राजमानञ्च बिन्यासो नबमस्त्वयम् ॥३५॥

उसके आगे एक लाख चांदी के दण्डों को धारण करने वाले अपने भूषण बस्त्रों से पीले रङ्ग के प्रकाशमान हैं यह नौवाँ विन्यास है ॥३५॥

स्वर्ण दण्ड धराणाञ्च लक्ष्यैकं पीत वर्णकम् ॥

भूषयाभ्राजमानञ्च बिन्यासो दशमस्त्वयम् ॥३६॥

उसके आगे एक लाख स्वर्ण दण्ड धारण किये हुए अपने वस्त्र भूषणों से पीले रङ्ग के प्रकाशमान यह दशवाँ विन्यास है ॥३६॥

युक्तानां भूषणैर्युक्ता मुक्तादण्ड धरा वराः ।

लक्षैकं राजते तेषां बिन्यासैकादशीप्यसौ ॥३७॥

मुक्ताओं के भूषणों से युक्त, मुक्ताओं के दण्डों को हाथों में लिये हुए एक लाख सिपाहियों की फौज—यह ग्यारहवां विन्यास है ॥३७॥

एषा मनुगतादिव्यै भूषणैश्च विभूषिताः ।।
गजानां पंक्तयः सन्तिबिमानैः पृष्ट शोभिताः ।।३८।

इनसे आगे दिव्य वस्त्र भूषण से भूषित पीठ (पैठ) में विमानों से शोशित हाथियों की पंक्तियां हैं ।।३८।।

अग्रेपश्चा त्पार्श्वभागे शक्तिकानाङ्गणै र्वृताः ।।
घण्टा संघट्ट नादाश्च बिन्यासोयं तु द्वादशः ।।३९।।

इन गज पंक्तियों के आगे पीछे अगल बगल भागों में शक्ति को धारण किये हुए रक्षा कर रहै हैं इस प्रकार घण्टा समूहके नाद से शोभित यह बारहवां विन्यास है ।।३९।।

एतस्यानुगतं दिव्यं हस्ति स्यन्दन वृन्दकम् ।।
स्वर्णाद्रि शिखराकारं पताका सच्चमत्कृतम् ।।४०।।

इसके आगे दिव्य हाथियों के रथों का झुण्ड स्वर्ण पर्वत के आकार में ध्वजा पताका चमत्कार कर रहे हैं।।४०।।

रत्न स्तम्भार्चिषाम्वृन्दै रातन्वन्मुक्त तोरणम् ।।
झंकृतं किंकिणी जालै र्द्वात्रिंश च लसत्क्रमम् ।।४१।।

वे हाथियों के रत्न खम्भावलियों से प्रकाशमान, मुक्ता तोरणों से भूषित, किंकिणी जालों से झनकार करते हुए शोभित हैं। बत्तीस २ के क्रम से ।।४१।।

शादिनाश्च शक्तिकाना मग्रे पृष्टे च पार्श्वके ।।
गणैर्युक्तं बिभात्येवं विन्याश स्तत्त्रयोदशः ।।४२।।

आगे, पीछे, अगल, बगल घुड़सवारों के गण तथा शक्ति लिए हुए फौज के गण रक्षा कर रहे हैं, इस प्रकार यह तेरहवां विन्यास हुआ ।।४२।।

एतस्यानुगता श्चात्र हयाः काम्बोज देशिकाः ।।
रत्न भूषाः सुर्लालिताः ललिता लोल वृत्तयः ।।४३ ।

इसके आगे काम्वोज देशीय घोड़े बड़ी सुन्दर चंचल वृत्ति वाले, सुन्दर रत्नों से भूषित ।।४३।।

लास्ये च साधिता स्ताल कलया नृत्यका यथा ।।
भृत्यैश्चामर हस्तैश्च सेविताः शुभलक्षणाः ।।४४।।

जो विविध प्रकार के भावों को प्रगट करने में सुन्दर ताल से नृत्य की कलाओं को प्रगट करने में सुन्दर सिखाये गये हैं जिन प्रत्येक के अगल बगल सुन्दर लक्षण वाले सेवक हाथ में चँवरलेकर के सेवा कर हैं ।।४४।।

विधानिताश्च प्रत्येकं कौतूहल विधानकाः ।।
चतुर्दशोयं विन्याश एतैरेव प्रपूरितः ।।४५।।

प्रत्येक घोड़ा सुन्दर कौतुकों के विधान से सजाये गये हैं इस प्रकार यह इन घोड़ाओं से भरे हुए कई पंक्तियों का मण्डल-यह चौदहवां विन्यास है ।।४५।।

एतस्या: नुगता: शुभ्राबाल्हिका श्चाविभूषिता: ॥
तेपि नृत्येषु कुशला: सेव्यमानास्तु चामरै: ॥४६॥

इनके आगे वाल्हिक देश के सफेद घोड़ा जो कि विना ही आभूषणों के हैं वे भी पूर्व की तरह सेवकों द्वारा चँवर आदि मौजों से सुसेवित नृत्य कला में बड़े कुशल हैं ॥४६॥

झंकृता: पान सञ्चारै: शाक्तिकै: परिवारिता: ॥
पठिता इति निर्बाधा वन्धुरा: सुन्दरास्यका: ॥४७॥

शक्ति को धारण करने वाले सेवकों से चारों तरफ सुरक्षित सुन्दर मुख वाले बहुत ऊंचे काम पड़ने पर नीचे हो जाने वाले भी, इस प्रकार के नृत्य कला में पढ़ाये हुए अपने चरणों के नूपुरों को सुन्दर ताल पूर्वक बजा रहे हैं ॥४७॥

एवंपञ्च दशो न्याश: पारशीका स्तथा विधा: ।
षोडशोयञ्च विन्याश स्तदनुगा वनायुजा: ।४८॥

इस प्रकार का यह पन्द्रहवां विन्यास हुआ तथा इसके आगे इसी प्रकार पारसी जाति के बनायुज घोड़ों का भी सोलहवां विन्यास है ॥४८॥

एतस्या नुगता दिव्या: हयस्यन्दन शोभना: ।।
रौप्य निर्मित सर्वांगा: पताका: चय संचिता: ॥४९॥

इसके आगे स्वर्ण से सर्वाङ्ग रचित, दिव्य घोड़ा जिनमें लगे हैं, ऐसे ध्वजा पताकादिक सजावटों से युक्त रथ हैं ॥४९॥

किंकिणी जाल झंकारा श्चक्र काष्टक संक्रमा: ॥
नील रत्न ज्वल स्तोम तोरणै: सच्चमत्कृता: ।।५०॥

जिनमें काठ के सुन्दर पहिये सजे हुए हैं, नील रत्नों के ज्वाला सदृश सुन्दर तोरण बहुत जिनमें चमत्कार कर रहे हैं ऐसे वे रथ चलते हुए अपने किंकिणियों जालों का झनकार मचाते हैं ॥५०॥

बिन्यासोयं सप्तदश स्तत: काञ्चन स्यन्दना: ॥
पताका तोरणै र्दिव्यै र्वसु चाक्रै विराजिता: ॥५१॥

यह सत्रहवां विन्यास है इसके आगे स्वर्ण के रथ आठ चक्र वाले अपने पताका तोरणादि दिव्य भूषणों से प्रकाशमान हैं ॥५१॥

भूषिताष्ट हयैर्युक्ता: किंकिणी घण्टिका न्विता: ॥
विद्यु त्पुञ्ज प्रतीकाशा स्तैर्विन्याशो दशाष्टक: ॥५२॥

जिनमें आठ घोड़े लगे हैं तथा किंकिणी और घन्टिका लगे हुए हैं, बिजली के समूहों के समान जो प्रकाश कर रहे हैं इस प्रकार के रथों का यह अठारहवां विन्यास है ॥५२॥

ततश्चा नन्तरं वास्त्रा: स्यन्दना: सद्विभूषिता: ॥
पंक्तिभि र्भिन्न वर्णानांविधानं गणकै र्वृतम् ॥५३॥

उसके आगे सुन्दर विभूषणों से भूषित वस्त्रों से निर्मित रथ हैं जो भिन्न २ रङ्ग की पंक्तियों से सुन्दर विधान पूर्वक तथा अपने सेवक गणों से सुरक्षित हैं ॥५३॥

एवञ्चसुख जानानि भूषितानि सुभूषणैः ॥
एव मुप जान संघा व्यूहेन च विधानिताः ॥५४॥

इसी प्रकार आगे सुन्दर भूषणों से भूषित अपने व्यूहों से विधानित सुखपालों का समूह है इसके आगे उपजानों का भी समूह है ॥५४॥

आरोहणार्थं रामस्य बयस्यानां गजादिकम् ॥
पंक्त्या विधानं कृतवान्सुविद्यः सविधंयतः ॥५५॥

इन प्रत्येक हाथी रथादिक सवारियों में सखाओं के सहित श्रीरामजी आदि सवारों के चढ़ने के लिए सीढ़ी आदि इन्तजाम भी सुन्दर विधान पूर्वक पंक्ति की पंक्ति श्री सुविद्य जी ने रचना कर रक्खी है ॥५५॥

इति श्री शङ्करकृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुत्तराख्याने
शैन्यविन्याश वर्णनं नाम त्रिचत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४३॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने
शैन्य विन्यास वर्णनं नाम त्रिचत्त्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४३॥

कनकभवन खण्डे चित्र हर्म्य प्रकोष्टे—
महिप सुत समाजे तारकानामिवेन्दुः ॥
दिन मणि कुलभानुः सा नुजो रामभद्रो—
बिलशति बिशिषासं बाणमादाय हस्ते ॥१॥

सूर्यकुल के सूर्य श्रीराम जी हाथों में चित्र विचित्र धनुष तथा बाँण को लिए हुए अपने भाइयों के साथ तथा बहुत से राजकुमारों के समाज की भीड़, मध्य, श्री कनक भवन के किसी एक चित्र विचित्र सर्वतोप महल के खण्ड के अन्दर आंगन में बैठे तारा के बीच में चन्द्रमा की तरह से शोभित हैं ॥१॥

इत्यन्तरे चानत नेत्रशोभी सौमित्री रात्मानमपेक्षितं तत् ॥
मन्दं सुमन्दं बिहसञ्च ज्येष्टं समब्रवीत्सौम्य सुभाव रामम् ॥२॥

इसी समय के बीच सुन्दर सुकुमार स्वभाव वाले श्रीराम जी मन्द मुस्कराते हुए जिनका स्म-रण कर ही रहे थे सुशीलता व नम्रता से झुके हुए नेत्र वाले सुन्दर श्री सुमित्रा नन्दन अपने ज्येष्ठ भ्राता श्रीराम जी से मन्द २ मुस्काते हुए सुन्दर बाणी से बोले ॥२॥

आर्य्याद्य एवात्र क्षणं समेतो महेन्द्रनाथो गुरुणाहि द्रष्टुं ॥
जगाम पीठं कुतुकान्वितं तत्साकं समीहे भवताहमेव ॥३॥

हे आर्य्य! आज इसी क्षण ही गुरू महाराज के सहित महेन्द्रनाथ श्री पिता जी विविध प्रकार के कौतुकों से पूर्ण पैठ को देखने के लिए जारहे हैं इस लिए मैं भी आपके साथ जाना चाहता हूँ ॥३॥

भ्रातु र्वचः प्रीति मतस्तु प्रीत्या श्रुत्वा समीपस्थ ममात्यपुत्रम् ।
समब्रवीद्राघव सुन्दराक्षः शीघ्रं कुरु ष्वेति समग्रकारम् ॥४।

इस प्रकार अत्यन्त प्रेम से भरी हुई भाई के बात को सुनकर स्नेह में भरे पास में बैठे मन्त्री कुमार को सुन्दर नेत्र वाले श्रीराम जी बोले कि मेरे चलने का समस्त इन्तजाम शीघ्र करो ॥४॥

श्रवः सुखं श्रूय रघूद्वहस्य बिचक्षणो वाक्य ममात्य पुत्रः ।

उत्थाय वध्द्वाञ्जलिमब्रवीत्त म्महेन्द्रनाथस्य कुमार रामम् ।.५॥

कानों को अत्यन्त सुख देने वाली श्रीराम जी की वाणी को सुनकर बड़ी सूक्ष्म बुद्धि वाले मंत्री कुमार महेन्द्र नाथ कुमार श्रीराम जी को हाथ जोड़ कर बोले ॥५॥

सज्जी कृतं सैन्य सुमन्त नागम्मया तु पूर्वं गमनाय पीठे ॥

त्वंशीलय स्त्श्चित शोभनाङ्गे नवां सु भूषांभुवनेशसूनो ॥६॥

हे भुवनेश कुमार ! मैंने आपके पैठ को देखने को जानेका इन्तजाम सुमन्त (सत्रुञ्जय)नामक हाथी तथा उसकी रक्षा के लिए सेना की सजावट पहले से ही कर रक्खी है आप अपने नवीन सुन्दर अङ्गों में सुन्दर नवीन भूषणों को धारण कराइये ,,६,-

ततस्तद्वचनं श्रुत्वा मात्यपुत्रस्यधीमतः ॥

स्वाबरोधं समागम्य ज्ञापिता प्राणवल्लभा ।.७॥

वड़े बुद्धिमान मन्त्री कुमार के इस बचन को सुनकर श्रीरामजी कनकभवन में गये, अपनी प्राण बल्लभा श्रीकिशोरी जू को सब बात जनायी ॥७॥

सखीगण समाधिष्ठा जानकी शीलसद्व्रता ॥

सा रामं प्रत्युबाचेति गमिष्याभि त्वयासह ॥८॥

सुन्दर शील सद्व्रतों से युक्त सखीगणों के बीच में बैठी हुई श्रीजानकी जी भी श्रीराम जी को बोलीं कि मैं भी आपके साथ चलूंगी ॥८॥

ततः पर्य्यंकमास्थाय परार्द्धै र्वस्त्रभूषणेः ॥

भूषितो रस वत्प्रीत्या जानक्या स्यामल प्रियः ॥९॥

उसके बाद पलँग पर बैठ करके बिस कीमतं य वस्त्र भूषणों से; रसमयी प्रीति से श्रीजानकी जी ने अपने प्रियतम श्याम सुन्दर को भूषित किया ॥९॥

ततः परञ्च तेनापि वल्लभा रसिकात्मना ।

भूषिता रामचन्द्रेण सीता सुन्दर विग्रहा ॥१०॥

उसके बाद रसिकात्मा श्रीरामचन्द्र जी ने भी सुन्दर विग्रह वाली श्रीसीता जी को भूषित किया ॥१०॥

सीता सरोज नयना रामो राजीव लोचनः ॥

मणिपर्य्यंङ्क मास्थाय सखीगण परिवृतौ ।११॥

इस प्रकार कमल नयनी श्रीसीता राजिव लोचन श्रीराम जी सखिगणों से घिरे हुए मणिमय पर्यङ्क पर बैठ गये ॥११॥

सर्वाङ्गादर्शकादर्शे परस्पर विमोहनं ॥
परस्पर श्च पश्यन्तौ लेभाते सुखमद्भुतं ॥१२॥

सर्वाङ्गादर्श दर्पणमें परस्पर अत्यन्त मोहक छविको देखते हुए अद्भुत सुख के लोभ से परस्पर मोहित होगये ॥१२॥

सख्याहस्तात्समादाय पक्व ताम्बूल वीटकाम् ॥
परस्परम्मुखेदत्वा मुदंयातः प्रिया प्रियौ ॥१३॥

सखी के हाथ के पके हुए पान का वीरा लेकर परस्पर मुखमें देते हुए दोनों प्रिया प्रिय आनन्द को प्राप्त हुए ॥१३॥

कृत्वैवं सुरहस्यन्तु प्रियामोद करं परम् ॥
हस्तेहस्तंसमादाय प्रियाया रघुनन्दनः ॥१४॥

हे प्रिय ! वह परम आनन्द को देने वाला रहस्य कौतुक कहां है इस प्रकार पूछती हुई प्रिया जू के हाथ को अपने हाथ से पकड़ कर श्रीरघुनन्दन जी ॥१४॥

समागत्याष्टमं द्वार मवरोधस्य मोहनः ॥
सच प्रियां समाश्लिष्य बचनञ्चाब्रवीत्प्रियम् ॥१५॥

कनकभवन के आठवें द्वार वाले महल में आकर के अपनी प्रिया को आलिंगन किए हुए मन मोहन श्रीराम जी अत्यन्त प्रिय बचन बोले ॥१५॥

यदी च्छसि प्रिये पीठे कौतुकं द्रष्टुमद्भुतम ॥
गमिष्यति यदा माता ममापि त्वं तया समम् ॥१६॥

हे प्रिय ! पैठ के अद्भुत कौतुक को देखना यदि चाहती हो तो जिस समय मेरी माताजी जायेंगी उस समय उनके साथ तुम भी मेरे बराबर में आना ॥१६॥

इत्युक्त्वा बहिरागत्य रोचिष्णू रघुनन्दनः ॥
सखिभिर्भ्रातृभिर्साकमेत्य द्वारं समाययौ ॥१७॥

इतना अपनी प्रिया जू को कहके अत्यन्त सुन्दर श्रीरघुनन्दन जी वहां से कनकभवन के फाटक में आकर अपने सखा और भाइयों के साथ में इकट्ठे होकर ॥१७॥

गजञ्चा धोरणै र्नीतं खचिद्रत्न बिमानकम् ॥
सर्वांग भूषितं प्रांशु मास्थाय भ्रातृ बत्सलः ॥१८॥

पीलवानों से चलाये गये सर्वाङ्ग से भूषित हाथियों के पृष्ठ में रत्नों से खचित विमान पर अगल बगल में अपने भ्राताओं को बैठा करके बीच में आप बैठ गये ॥१८॥

एवं भरत सत्रुघ्न लक्ष्मणै रुचिरा कृतैः ॥
छत्र चामर हस्तै श्चा बृतोगन्तुम्प्रचक्रमे ॥१९॥

इस प्रकार प्रिय सुन्दरता वाले भरत, शत्रुघ्न लक्ष्मण जी के द्वारा छत्र चवँरादि से सेवित हो कर चलने के लिए तैयार हुए ॥१९॥

उच्चप्रासाद द्वारिस्था गजस्थं प्राणवल्लभम् ॥
सीता पश्यति सीतांशु शुभास्या रघुनन्दनम् ॥२०॥

उन ऊंचे महलों के फाटकों पर सखियों के साथ आयी हुई, चन्द्रमा के समान प्रकाशमान सुन्दर मुख वाली श्रीसीता जी ने अपने प्राण वल्लभ श्रीरघुनन्दन जू को हाथी पर बैठाकर चलने के लिये तैयार हुए देखा ॥२०॥

अट्टादट्टान्तरं क्रम्य सखीगण परिवृता ॥
सीतापश्यति शीलाढी पत्युर्गज विमानकम् ॥२१॥

तो अपनी सखिगणों से घिरी हुई महलों की एक छत से दूसरी छत को अतिक्रमण करती हुई सुन्दर शील से भरी नेत्रों से श्रीसीता जी हाथी के विमान में बैठे हुए अपने प्रियतम को देखतीं जा रही हैं ॥२१॥

प्रिये दृष्टयन्तरे जाते जानकी बिरहातुरा ।
तदा प्रिया सखीभिस्ता नीता श्वश्रू गृहंपुनः ॥२२॥

इस प्रकार प्रियतम को दृष्टि से ओझल हो जाने पर श्रीजानकी जी विरह से बेचैन हो गयीं उस समय सखियां स्वामिनी जू को सास के घर में ले आईं ॥२२॥

तदातत्र च कौशल्या सुमित्रा कैकयी च तां ॥
बधूबालां लालयन्ति क्रीडा कौतुक शिक्षया ॥२३॥

वहां पर श्री कौसल्या, सुमित्रा, कैकयीजी अपनी बाल बधूवों को खिलौना, खेल, कौतुक शिक्षा द्वारा लाड़ प्यार कर रही हैं ॥२३॥

इत्यन्तरे रामचन्द्रो महाशैन्य परिवृतः ॥
दुन्दुभीनांमहाघोषै र्मातृ सन्निधिमागतः ॥२४॥

इसी बीच में श्रीरामचन्द्र जी भी महान् सेना से घिरे हुए दुन्दुभी आदि वाजाओं तथा सेवकों के शब्दो से महान् घोष पूर्वक माता जी के समीप में आगये ॥२४॥

तदाश्वश्रूभिः रावृत्तो वधूनांञ्च समाजकः ॥
नीतः श्रुत्वान्य कक्ष्यायां रामागमन दुन्दुभिः ॥२५॥

उस समय सासुओं के समाज से घिरे हुए बधुओं के समाज ने दुन्दुभियों द्वारा स्वागत किए श्रीराम जी दूसरे आवरण में आगए हैं-ऐसा सुना ॥२५॥

मातृवे स्मान्तरेमार्गे मातृभिश्च नीराजितः ॥
दधन्तास्तमाशिषञ्च ततः कक्ष्यान्तरे भवत् ॥२६॥
स स्वयं जननी द्वारं सहस्रांशु शतप्रभम् ॥
समागत्याशु रत्नांशु चित्रितश्चमहीतलम् ॥२७॥

माता के महल के अन्दर जाने वाले मार्ग में माताओं द्वारा आरती हुई, उनके आशीर्वाद को

लेते हुए श्रीराम जी उस आवरण से भीतर गये। भीतरी आवरण में रत्नों से चित्र विचित्र चित्रित हुई भूमि पर हजारों सूर्यों के समान प्रकाश वाले माता के महल के द्वार पर श्रीराम जी शीघ्र आये ॥२७॥

अवतीर्य्य च निश्रेण्या गजतः सहचारिषु ॥
जनेषुत्तम्यतामेव मुच्चरत्सु रघूत्तमः ॥२८॥

हाथी पर से सीढ़ी द्वारा नीचे आंगन में उतर कर अपने सहचर सखा समाज में-आप लोग क्षमा करें, क्षमा करें-ऐसा कहते हुए श्रीरघूत्तम जी ॥२८॥

मत्तशार्दूल गत्यानु विराजभ्दिः पदक्रमैः ॥
द्वार मुल्लंध्य द्वारस्थो मातृ सखी नीराजितः ॥२९॥

प्रकाशमान सुन्दर पाँवड़ों से मतवाले सिंह की तरह गति से एक फाटक को उल्लंघन करके दूसरे फाटक पर खड़े हुए माताओं और सखियों द्वारा आरती हुई ॥२९॥

भ्रातृभिः सखीभिः श्रीमान्कौशल्यानन्दवर्द्धनः ॥
मुक्ता कुशुम माल्यानि वर्षत्सु प्रांगणं ययौ ॥३०॥

उसके बाद अपने भ्राता और सखाओं के सहित आंगन में आते हुए श्रीमान् कौशल्यानन्दवर्धन जी के ऊपर मुक्ताओं तथा फूलों की मालाओं की वर्षा हुई ॥३०॥

कज्जलाञ्चित दीर्घाक्षो दीर्घबाहु र्विभूषितः ॥
रुक्मचित्राञ्चितोष्णीषः कर्णावेष्टित कुण्डलः ॥३१॥

अञ्जन आंजे हुए बड़े २ नेत्र; सुन्दर स्वर्ण रत्न भूषणों से भूषित लम्बी भुजायें, चित्रित वस्त्र की पाग वाले, कानों में सुन्दर स्वर्ण रत्न निर्मित कुण्डल वाले ॥३१॥

काकुत्स्थ कुल दीपोसौ कामकान्तिः कुमारकः ॥
केलिदक्षः कलाभिज्ञः काकपक्षयावृताननः ॥३२॥

महाराज श्री ककुस्थ जी के कुल को प्रकाशित करने के लिए सुन्दर दीपक के समान करोड़ों कामदेवों के सदृश प्रकाश वाले राजकुमार केलि कलाओं में बड़े पण्डित सुन्दर काक पक्ष जुल्फों से शोभित मुखचन्द्र वाले ॥३२॥

खड्ग हस्त श्चर्म्मभृत्तु चासिपुत्रीपरीकरः ॥
भ्रातृभिः सहितोरामो मातृ सन्निधिमागमत् ॥३३॥

ढाल तलवार, कटारी को कसे हुए भ्राताओं के सहित श्रीराम जी माता जी के समीप आये ॥३३॥

जगृहु र्गुरु पत्न्यंघ्रि तत्र चानुक्रमेण च ॥
तया तेभ्रातरः सर्वे ह्याशीर्वाग्भिः प्रयोजिताः ॥३४॥

प्रथम गुरु पत्नी श्री अरुन्धती अम्बा के चरणों में प्रणाम किये इसी क्रम से पीछे से भाई व सखाओं ने भी प्रणाम किया। गुरुपत्नी ने भी सबको आशीर्वाद दिया ॥३४॥

ततोमातुः शभायां याः कुल बृद्धाः परिस्थिताः ॥
पादाभिवन्दनं तासां कृतं सर्वैश्चभ्रातृभिः ॥३५॥

उसके बाद माता जी की सभा में जो अन्य बृद्ध मातायें बैठी थीं उन सबको राम जी ने भी प्रणाम किया पीछे से सब भाई और सखाओं ने भी प्रणाम किया ॥३५॥

यथाक्रमं मातृशभां प्रणम्य ततः परम्मातृगणेनतास्ते ॥
ततो नमन्तस्तु निधाय चाङ्के स्फारं प्रमोदं प्रययुर्जनन्यः ॥३६॥

क्रमशः माता की सभा में सब अपनी माता गणों को भी प्रणाम किया। माताओं ने प्रणाम करते हुए श्री रघुनाथ जी को उठाकर अपनी गोद में बैठा लिया और महान आनन्द को प्राप्त हुईं ॥३६॥

परस्परं वीक्ष्य वदन्ति नो चे ज्जेष्टस्तदामातर मब्रवीच ॥
इमे सकामा खलु पोठकेद्य कौतूहलं द्रष्टु मतो गमिष्ये ॥३७॥

सभी सखा लोग आपस में एक दूसरे को ताकते हुए बोलते नहीं है तब सबके बड़े भ्राता श्री रघुनाथ जी माता जी से बोले कि हे मां! ये सब भाई और सखा लोग आज पैठ के कौतुक को देखने के लिये लालायित होकर जारहे हैं ॥३७॥

तत्रैव साकं गुरुणा गजस्थो मातः पिता मे गमनं चकार ॥
तत्कुत्रचिल्लक्ष्मण एव श्रुत्वा समागतो मे सविधं सहर्षः ॥३८॥

हे माता! मेरे पिता जी भी श्रीगुरु महाराज के साथ हाथी पर बैठ करके उसी पैठ के कौतुक को देखने के लिए जारहे हैं इस समाचार को विधान पूर्वक कहीं से इस लक्ष्मण ने सुना है तो हर्षित होकर यह मेरे पास आया ॥३८॥

तेनाहमुक्तो भरतेंनयुक्तो मातः समीहे किलपीठकेऽद्य ॥
त्वयासमं द्रष्टुमतीव शोभांदिगन्तकानां गजघोटकानाम् ॥३९॥

इसने ही मुझसे हम आपके साथ कौतुक देखने चलेंगे कहा है ये भरत जी भी उस समय मेरे पास ही में बैठे थे। हे माँ! मैं भी कैसा तो वह पीठ का कौतुक है? देखना चाहता हूं। चारों दिशाओं के अन्त तक बहुत दूर २ देश के बड़े २ हाथी घण्टाओं का नाद करते हुए पैठ में आये हुए हैं, अनन्त शोभा हो रही है ॥३९॥

श्रुत्वा तदाशील नतेक्षणेन मन्दस्मितेनातिविनीत मुक्तम् ॥
बाक्यं विनोदा कलितं चमातु र्हृदि प्रकामं सुखमाप माता। ४०॥

शील से नमी हुई दृष्टि वाले श्रीराम जी मन्द हँसते हुए बहुत नम्रता पूर्वक ऐसा कहा तो विनोद से भरे हुए इस बचन को सुनकर माता जी के हृदय में महान् सुख हुआ ॥४०॥

यथासुखं गच्छगजोन्नतेन येनासमन्ता त्परिपश्यतोति ॥
प्रस्थाप्य भ्रातृन्त्वपि स्नेह युक्तान्मातु र्वचः श्रुय सुखं समीयुः॥४१॥

माता जी बोली कि हे वत्स! जिन ऊचे हाथियों पर बैठ करके आप चारों तरफ देख सकते हैं उन पर बैठ कर आप अपने स्नेह रखने वाले इन सब भ्राताओं को भी बैठाकर सुखपूर्वक जाइये। इस प्रकार माता के बचन को सुनकर सभी कुमार बड़े सुखी हुये ॥४१॥

पत्न्या गुरोः पाद युगं पुनस्ते –
श्रीराम पूर्वाश्चप्रणम्य पश्चात् ॥
पूर्वं प्रणम्या स्तु प्रणम्य–
सर्वाः स्वमातु रंघ्रि जग्रहुश्च प्रीत्या ॥४२॥

उठ करके गुरु पत्नी जी के चरणों में प्रथम श्रीरामजी ने उसके पीछे सब भ्राता और सखाओं ने क्रमशः प्रणाम किया। पहले बैठने के समय जिन २ को जैसे प्रणाम किया था वैसे ही फिर प्रणाम कर के अन्त में माता जी चरणों में प्रेम से फिर प्रणाम किया ॥४२॥

प्रस्थाप्य स्वांके पुन रेव मात्रा–
कपोलके कज्जल विन्दुकश्च ॥
दत्तं तदादृष्टि निवारणाय–
मनोहराकार वतां सुतानाम् ॥४३॥

माता ने फिर भी उठा करके गोदी में बैठा लिया, इस मनोहर आकार वाले पुत्रों के दृष्टि दोष के निवारण के लिए गाल में काजल का बिन्दु लगा दिया ॥४३॥

गते समीपा द्भरताग्रजे तु गुणै र्मनोहारिणि मातरो स्य ॥
लावण्यसद्भाषित सुन्दरांगमेनं प्रशंशन्ति मुद ञ्च प्रापुः ॥४४॥

गुणों से मन को हरने वाले श्रीभरत जी के बड़े भाई के समीप से चले जाने पर सब मातायें इन श्रीरघुनाथ जी के बाल स्वभाव से बोले हुए सुन्दर बचनों तथा सुन्दर अङ्गों की प्रशंसा करते हुए आनन्द को प्राप्त हुईं ॥४४॥

उच्चैरिभस्थोऽ रिप्रदर्प्यकै श्च सैन्यः समेतश्च सुभ्रातृभिश्च–
गच्छन्नभौ गौरव गृह्य माणं सपीठके कातुहला भिलाषी॥४५॥

पैठ के कौतुक को देखने की अभिलाषा वाले अपने गौरव को छिपाते हुये सुन्दर भाइयों के साथ तथा शत्रु के दर्प को मिटाने वाले ऊचे हाथी पर बैठे हुए अपना सेना के सहित चलते हुए शोभित हो रहे है ॥४५॥

वामेपि दक्षे च खचिन्मणीनां–
सद्मावलीनान्तु गवाक्ष केभ्यः ॥
रथ्यासुरामं रमणीयवेषं निरीक्ष्य–
नार्य्यः प्रकिरन्ति मुक्ताः ॥४६॥

गलियों के रास्ते में दाहिने बायें मणियों से खचित बहुत ऊचे महलों की पंक्तियां हैं उनके छज्जा झरोखाओं में खड़ी हुई स्त्रियायें सखा और भ्राताओं के साथ सुन्दर श्रृङ्गार किये हुए श्रीराम जी को देख कर मुक्ता मणियों की वर्षा करती हैं ॥४६॥

सरोरुहाणां समृणाल कानां बिलक्षणानां तु तती रकाशे ॥
विवीक्ष सूत्प्रेरित नेत्र शोभी गच्छन्नभौ राघव सुन्दराङ्गः ॥४७॥

सुन्दर नाल के सहित विलक्षण कमलों की पंक्ति आकाश में देखते हुए अपनी शोभा से सबके नेत्रों को आकर्षित करते हुए इस प्रकार अगल बगल के महलों में उन सब स्त्रियों के स्वागत को स्वीकार करते हुए सुन्दर अङ्ग वाले श्रीराम जी चलते हुए शोभित हो रहे हैं ॥४७॥

पद्माक्षीनां सुनयन निचयैः हृन्मताः कामकान्तिः-
स्नेह स्मासां स्वललित हृदये हावभाव प्रकाशे ॥
कुर्वन्कुर्व न्स्मृति मथ रघुराट् मोद सिन्धा वगाधे-
मज्जन्मज्ज न्विलुलित नयनः पीठमार्गे बभौ सः ॥४८॥

करोड़ों कामों के समान कान्ति वाले तथा हरण होगया है मन जिनका ऐसे इन रघुनाथ जी का हमारे से महान् स्नेह है इस प्रकार अपने हृदय में सुन्दर भावना करके हाव भावों का प्रकाश करती हुई उन सब स्त्रियों के कमल सदृश नेत्रों के समूह को स्मरण करते २ रघुश्रेष्ठ श्रीरामजी अगाध आनन्द समुद्र में गोता लगाते २ चंचल नेत्रों से पैठ के मार्ग में जाते हुए शोभित हो रहे हैं ॥४८॥

स्वनेतारं तारं कमल सुदृशो श्चाप्यति हितं-
मनस्येवं मत्वा त्वपि कुशल मस्त्वेव जगदुः ॥
अयोध्या वाशिन्यः सजल जलदाभां रसभरां-
दधाना स्तन्मूर्ति नयनयुगले चैव हृदये ॥४६॥

ये हमारे प्रेरक स्वामी हैं, अत्यन्त हितैषी भी हैं, इस प्रकार मनों में मानती हुई, कमल के सदृश सुन्दर नेत्र वाली अत्यन्त ऊचे स्वर से आपकी जय हो, कुशल हो. ऐसा श्रीराम जी को कहती हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण अयोध्यावासिनी स्त्रियायें सजल मेघ के समान श्याम सुन्दर की स्नेह रस से भरी हुई मूर्ति को अपने दोनों नेत्रों में तथा हृदय में धारण करती हैं॥४६॥

द्वे पद्मे द्वे सुललित विलस न्मौक्तिके नापिशुक्ति-
विम्बद्वन्द्वं शुक सुख सविधं ज्याविहीनं धनुश्च॥
एत त्सर्वं शशिनि च विहितं सोपि पूर्णो विमाने-
पश्यंश्चित्रं रघुकुल तिलको याति तद्वीथिकायाम्।५०

कोई सखी श्रीरघुनाथ के मुखचन्द्र का रूपक बांधकर अपनी सखी से कहती हैं कि हे सखी! देखो दो कमल अपनी गोदियों में दो मुक्ताओं को रखकर सुन्दर ललित विलास कर रहे हैं तथा दो सूक्तिकायें, दो विम्ब, एक सुक तथा एक प्रत्यञ्चा से हीन धनुष सुन्दर सुख पूर्वक विलास कर रहे हैं। ये सबके सब चन्द्रमा के अन्दर सुन्दर विधान पूर्वक शोभित हैं। इस प्रकार के उस चन्द्रमा को देखने वाले दूसरे चन्द्रमा भी अपने विमानमें बैठे हुए पूर्ण होरहे हैं। इस प्रकारकी चित्र विचित्र रचनाओंको देखते हुए तथा बातों को सुनते हुए रघुकुल तिलक श्रीरामजी उन गलियों में जारहे हैं ॥५०॥

मनांस्येवं स्त्रीणां ललित सुकुमारो विजयितुं-
गजारूढो गच्छ त्यनुमित मिदं हे सखि मया ॥
असि र्हास्यं चास्य प्रणतभृकुटीयुग्मधनुषी-
विभृद्वाणौ चाक्षणी सजल जलदाभो रघुवरः ॥५१॥

कोई सखी अपनी सखी से कहती है कि हे सखी ! मैंने यह अनुमान किया है कि यह हाथी पर बैठकर चलने वाले ललित सुकुमार सजल जलद के समान श्याम रघुवर मुसुक्यान रूपी तलवार भृकुटी रूपी झुके हुए दो धनुष कटाक्षरूपी वाणोंको चढ़ाये हुये स्त्रियोंके मनको जीतने के लिये ही जारहे हैं।।५१।।

तरुण्यो हर्म्यस्था तरुण सुकुमारं रघुवरं-
समन्ता त्पश्यन्त्यः सरसमिति चिन्ता मभियुः ।
निविश्यास्याप्यङ्के रहसि निशियामः सुखतरं-
सख्य स्माकंभाले किमुवद विधात्रा विरचितम् ।।५२।

तरुणी स्त्रियायें दोनों तरफ से छज्जाओं पर बैठी हुई तरुण सुकुमार अति सरस श्रीरघुवरजी को देखती हुई एक दूसरे से कहती हुई कि हे सखी ! बताओ तो क्या ब्रह्माने हमारे भालमें, इन रघुनाथ जी के अंक में प्रवेश करके सुखपूर्वक एकान्त रात बितावेंगी ऐसा रचा है ? ।।५२।।

मधुर तर मनोज्ञं मन्द हास्यं मनोमे-
नयन युग विशालं चञ्चलं श्चारुणञ्च ।।
व्यथयति सखिमार्गे गच्छतो हस्तिनास्य-
सजल जलद कान्ते राघवस्य प्रकाशम् ।।५३।।

हे सखि ! इन श्रीरघुनाथजी के अत्यन्त मधुर मन रमणीय मन्द हँसन कुछ अरुणिमा लिए हुए चंचल विशाल दो नेत्र सजल मेघ के समान श्याम वर्ण हाथी पर चढ़कर मार्ग में जाते हुए इन प्रियतम का रमणीय जो प्रकाश है उसने मेरे मन को अत्यन्त व्यथित कर दिया है ।।५३।।

विमाने प्रक्षिप्तः प्रवर मणिमुक्ता सुकलितो-
मया हारो हस्ते सकल गुण शीलो रघुवरः ।।
तमादाय ज्ञात्वा सरस मनुरागं हृदिधृतो-
मयाप्येषः शीघ्रं सखिसरस भावैर्हृदि धृतः ।।५४।।

हे सखी ! मैंने विस कीमतीय मणि मुक्ताओं से बने हार को विमान में फेंका, सुन्दर शीलवान, सकल गुण निधान श्री रघुवर मेरे सरसानुराग को भानकर उस मालाको अपने हाथ से लेकर अपने गले में डालली, हे सखी ! मैंने भी इन प्रियतम जूको सरस भावोंसे शीघ्र अपने हृदयमें धारणकर लिया।।५४

सर्वासां बदन सरोज मञ्जु वृन्दे-,
नारीणां रघुबर एव षट्पदोसौ ।।
तासां स्यु नयन चया स्तथास्य चास्ये-
पद्मभेमधुलिह एव लुब्ध वृत्या ।।५५।

सब नारियों के दिव्य निर्मल मुख-कमल-वन में एक ये श्रीरघुनाथ जी ही भ्रमर बने हुए हैं और इन पद्मनाभ रघुनाथ जी के मुख कमल में उन सब स्त्रियों के नेत्र लोभी भ्रमर की वृत्तिसे मधु की चाहनासे लुभा रहे हैं ।।५५।।

रथ्यासु प्राप्ते रघुराज पुत्रे जातं महत्कौतुक मेक मेव॥
एकाब्जकेनं न मधुव्रताश्च ह्यब्जे ष्वनन्तेषु मधुव्रतौ द्वौ॥५६॥

रघुराज कुमार श्रीराम जी के राजमार्ग में जाते हुए एक महान् अद्भुत कौतुक हुआ, एक ही मुख कमल वाले इन रघुनाथ जी में अनन्त स्त्रियों के नेत्र भ्रमर नहीं होने पाये हैं और अनन्त नारियों के मुख रूप कमलों के वन में इन रघुनाथ जी के दोनों नेत्र रूपी भवँरे पर्याप्त हुये ॥५६॥

मह्यां लसत्पूर्ण कलो मयङ्क स्तथैव खेचास्ति सरोज श्रेणी ॥
तद्दर्शने सा च विकाश माना तत्पश्यतां कौतुहलं जनानाम् ॥५७॥

तथा दूसरा कौतुक यह हुआ कि पूर्णकला वाला पूर्णमासी का चन्द्रमा तो पृथ्वी पर हाथी में बैठकर जारहे हैं उसी प्रकार आकाश में कमलों का वन इस चन्द्रमा के दर्शन के लिये खिला हुआ है। आम जनता के देखते हुये यह कौतुक हुआ ॥५७॥

कापिस्त्री करकमला सुदक्षा श्रीरामं-
शशि वदनं विशाल नेत्रं ॥
पश्यन्ती गज गत मुग्धतो गवाक्षा-
त्सापेक्षं वदति सखि विभाव्य चैनम् ॥५८॥

हे सखी ! हाथों में कमलों को लिये कोई चतुर स्त्री हाथी पर बैठे हुये चन्द्रमा के सदृश मुख-तथा विशाल नेत्र वाले इन श्रीराम जी को लालायित होकर देखती हुई छज्जा पर इन राम जी को सुन्दर भाव मन में रख करके बोलती हैं ॥५८॥

कापिस्त्री प्रणयविलक्षाणस्ति रामे-
नेदिष्टं शशिवदन स्तया सदृष्टः ॥
तच्छाया समगत मागता च तस्याः-
साश्लिष्या त्सुरत सुखं तथा च मेने ॥५९॥

कोई स्त्री अत्यन्त स्नेह प्रणय में भरी हुई श्रीरामजीमें धर्म कीढ़ता को देखकर आश्चर्य चकित हुई है। अत्यन्त समोप में श्रीरामजी के मुख चन्द्र को देखकर श्रीराम जी की छाया जहां पड़ती थी वहां आयी, श्रीरामजी की छाया को ही स्पर्श आश्लेषण से सुरत सुख को प्रत्यक्षकी तरह मानने लगी ॥५९॥

इत्थंराघव राजसूनुर मल स्नेहाम्बुदः सौख्यदः-
कान्तानां हृदये विलास मुदयन्प्राप्तो वहिर्गोपुरम् ॥
हित्वेभं वरवाहनं नवयुवा स्वारुह्य स्वश्वं नवं-
प्रावृत्य न्प्लुतय न्पुनश्च गतिभिः पीठंययौ नर्तयन्॥६०॥

इस प्रकार श्री चक्रवर्ति राजकुमार निर्मल स्नेह रूप जल की वर्षा करने के लिये मेघ के समान महान् सुखदायी समस्त कान्ताओं के हृदयों में विलास सुखको उदय करते हुये बाहरी फाटक पर आये। नवीन युवावस्था वाले अपने हाथी को त्याग करके श्रेष्ठ वाहन नवीन सुन्दर घोड़े पर सवार हुये उस घोड़े को घुमाते, उछालते सुन्दर गति से नृत्य कराते इस प्रकार चलकर पैठ में पहुंच गये ॥६०॥

हित्वा तं चान्य मारुह्य हयभूषाभिशोभनम् ॥
गोपुराणि समुल्लंघ्य संकक्षयाण्येव सप्त च ॥६१॥

उस घोड़े को त्याग करके सुन्दर भूषणों से शोभित दूसरे घोड़े पर बैठ करके राजसभा के सातों आवरण फाटकों को उल्लंघन करके ॥६१॥

भ्रातृभिः सखिभिः सार्द्धं रामो राजीव लोचनः ॥
पितुः शभां समागम्य सद्गुरुं तं प्रणम्य च ॥६२॥

कमल नयन श्रीरामजी अपने सखा और भाइयों के साथ पिता की सभा में आ करके सद्गुरु श्रीवसिष्ठ जी को प्रणाम किया ॥६२॥

पितु राज्ञां समालब्धः पुनश्च पण्यवीथिकाम् ॥
दर्शितु आगतः श्रीमान् भ्रातृन्पीठ कुतूहलम् ॥६३॥

श्रीमान् पिता जी से आज्ञा को पाकर के अपने भाइयों का पैठ के कौतूहल दिखाने के लिये बाजार की गलीमें आये ॥६३॥

इति श्रीशङ्करकृते अमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषाया मुत्तराख्याने
श्रीरामपीठकागमनंनाम चतुश्चत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४४॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने श्रीराम पीठकागमनं नाम चतुश्चत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४४॥

अथप्रथमतः श्रीमद्राघवो मोहनेक्षणः ॥
विवेश चाश्वकं पीठं बिशालं त्वेक योजनम् ॥१॥

मन मोहक कटाक्ष वाले श्रीमद्राघव जी पहले पैठ के घोड़ों वाले बाजार में गये जो एक योजन का विस्तार वाला है ॥१॥

श्रीरामागमनं ते च सौवैश्याः श्रुत्य हर्षिताः ॥
वाग्व्यवशायिनं मुख्य मग्रं कृत्वा च सन्मुखम् ॥२॥

श्रीरघुनाथ जी के आगमन को सुनकर बाजार के सभी सौदागर वैश्य हर्षित हुए, अपने मुख्य वाग्व्यवसायी (दलालों) को आगे करके श्रीरघुनाथ जी के सन्मुख आये ॥२॥

आगताः सम्मताः सर्वे भूषितांङ्गा महाधनाः ॥
गृहीतो पायन कराः काण्डपृष्टैः परिवृताः ॥३॥

जो सब बनियों प्रधान सम्मन् महाधनवान हैं वे सब लोग सुन्दर भूषिताङ्ग होकर हाथोंमें उपायन भेंट ले करके अपने सिपाहियों से घिरे हुए आये ॥३॥

नाग यान समारुढे भ्रातृभिः परिवारितम् ॥
आत्मनामवदन्तश्च प्रणेमुस्ते च राघवम् ॥४॥

हाथी के रथ में बैठे भ्राताओं से घिरे हुए श्रीराम जी को उन सब वैश्यों ने अपना नाम बताते हुए प्रणाम किया ॥४॥

तेषु वाग्भिश्च रामेण कृतप्रणामाश्च वाणिजाः ॥
प्रतोषिताः यथायोग्यं प्रवीणेन च स्वागतैः ॥५॥

उन सब वनियों के वाणी द्वारा प्रणाम करने पर बड़े चतुर श्रीराम जी ने यथा योग्य स्वागत के द्वारा सबको सन्तुष्ट किया ॥५॥

अग्रे चोपरि रामस्य तेषां नत्यासमं यथा ॥
विस्तस्यच मुक्तानां च क्रमाद् वृष्टि र्बभूव च । ६॥

उन वैश्यों ने जैसे प्रणाम किया तुरन्त श्रीराम जी के आगे तथा ऊपर सोनेकी हार और मुक्ता मणियों की हार क्रमशः वर्षा हुई ॥६॥

रूपमासेचनकं तद्राघवस्य विलोक्यते ॥
कुतः कस्मात्के वयंहि स्वागते विस्मृता स्मृतिः ॥७॥

हृदय को सिंचित करने वाले श्रीराम जी के रूप को देख करके तथा श्रीराम जी से स्वागत पा करके वे सब वनियादि हम कहां से आये ? कौन हैं ? कहां पर हैं ? इस स्मरण को भूल गये ॥७॥

पुनश्चानीय स्वास्थ्यं तैर्धैर्य्येण धनिनस्तदा ॥
अनुराग स्खलद्वाण्या रामं प्रत्यूचु राद्रितम् ॥८॥
वयंस्मो राम दूरस्थाइदं ते कान्त दर्शनं ॥
कुतोस्माकं धनाशानां लब्धं तत्कृपया हिते ॥९॥

फिर चित्त को शान्त करके धैर्य को धारण किये हुये वे धनिक लोग श्रीराम जी का आदर कर के अनुराग से गद्‌गद् हुई वाणी द्वारा यह बोले—"हे राम ! हम बहुत दूर देशके रहनेवाले हैं, हे अति कान्त ! आपका यह दर्शन हमको कहाँ कैसे मिल सकता था ? क्योंकि हम लोग तो धन की आशा में लटके हुए थे यह तो आपकी कृपा से दर्शन हुआ है ॥८-९॥

दुस्फलापि धनाशेयं फलिता चोत्तमं फलम् ॥
यस्या श्चाद्या नुषङ्गेन भवता दर्शनं कृतम् ॥१०॥

यद्यपि यह धन की आशा बहुत बुरा फल देने वाली है परन्तु हमारे लिये तो महान उत्तम फल देने वाली हुई जिसके प्रथम अनुसङ्गसे हमको आपका दर्शन हुआ ॥१०॥

देहि वाश मयोध्यायां सरज्वाश्वान पानकम् ॥
भवतां दर्शनं नित्यं किंकरिष्यामि स्वंगृहे ॥११॥

अब हे महाराज ! हम लोगों को श्री अयोध्या जी में बास दीजिये जिससे सरजू जी में स्नान, जल पान, आपका नित्य दर्शन मिले, अब हम अपने घरों में जाकर क्या करेंगे ॥११॥

एवं संभाष्य तेसर्वे वहुभिर्माणिमाल्यकैः ॥
पूर्जायत्वा ययुर्हट्टं रामरूपे मनोर्पिताः ॥१२॥

उन सबने इस प्रकार बात करके मणियों की बहुत मालाओं को अर्पण किया, पूजा की, श्रीराम जी के रूप में मन को अर्पण करके अपनी २ दूकानों पर चले गये ॥१३॥

पश्य न्पश्यंश्च संघट्टा नेवं च तज्जना द्दतः ॥
पर्य्यट त्यनुजै रीम उपनीत प्रदेशतः ॥१३॥

इस प्रकार श्रीराम जी उन बनियों से आद्रित होते हुए बाजार को देखते हुए अपने भ्राताओं के साथ प्रत्येक स्थानों में विचरने लगे ॥१३॥

वस्तुनो वाणिजाः पीठे क्रीतस्यान्तन वाधनम् ॥
रामरूपाकर्षिताक्षा बिस्मृताः क्रयका इति ॥१४॥

प्रत्येक बस्तुओं के बाजार में श्रीराम जी के रूप से आकर्षित दृष्टि वाले बनिया लोग अपने बेचे हुए व खरीदे हुए समान का दाम लेन देन हुआ कि नहीं इस प्रकार विस्मृत हो गये ॥१४॥

हयस्थाश्चमहीस्थाश्च गजास्थाश्च रथ स्थिताः ॥
सर्वे चकोरी भूतास्ते रामं पश्यन्ति सन्मुखाः ॥१५॥

बाजार में चाहे घोड़े पर बैठे हों, चाहे हाथी पर बैठे हों, चाहे रथ पर या पृथ्वीमें ही खड़े हों जो जहां जैसे हैं वह चकोर को तरह से सन्मुख होकर के श्रीराम जी को देख रहे हैं ॥१५॥

यदर्थमागताः पीठं विस्मृत्वा तत्प्रयोजनम् ॥
पश्यन्तश्चानु धावन्ति चैके राम मुख प्रभाम् ॥१६॥

जिस काम के लिए बाजार में आये थे वह प्रयोजन भी भुला गया, केवल श्रीरामचन्द्र जी की मुख चन्द्र प्रभा को देखते हुए पीछे २ दौड़ रहे हैं ॥१६॥

न ददाति न गृह्णाति न वक्ति न च पश्यति ॥
रामे दृष्ट्यान्तरे जाते यो यत्र तत्र वै स्थितः ॥१७॥

कोई न तो कुछ देता है. न लेता है, न बोलता है, न देखता है, श्रीराम जी की दृष्टि से अलग हो जाने पर जो जहां जैसा था तैसे दिशा भ्रमित की तरह से खड़ा रहा ॥१७॥

रामरूपामृतं पीत्वा केचिन्मत्ता बभूविरे ।
हसन्तृत्यन्ति गायन्ति कोश्या नवेति विस्मृताः ॥१८॥

कोई तो श्रीराम जी के रूपामृत को पीकर उन्मत्त होगये, कभी हँसते हैं, कभी नाचते हैं, कभी गाते हैं, कोई पास में है कि नहीं है इसको भूल गये ॥१८॥

अट्टाग्रभागे हट्टानां गवाक्षेषु शुभाननाः ॥
वामे दक्षे च वर्षन्ति रामं दृष्ट्वा मणिस्रजः ॥१६॥

बाजार में महलों के छज्जा अट्टालिकाओं पर सुन्दर मुख वाली दाये बाये से श्रीरामजी को देखकर मणि मालाओं की वर्षा करती हैं ॥१६॥

पीठेथ कौतुकं द्रष्टुं बधूनाञ्च मनोरथम् ॥
हृदि सम्भाव्य कौशल्या राममाता तिवत्सला ॥२०॥

इधर श्रीराम जी की माता श्रीकौशल्या जी अम्बा अपनी पतोहुओं (बन्धुओं) के ऊपर अत्यंत वात्सल्य रखने वाली पैठ के कौतुक को देखने की मन कामना को हृदय से अनुभव करके ॥२०॥

गजस्यन्दन मत्युच्च विशाल ञ्चातिभूषितम् ॥
तदा चारुह्य सचिवै र्महाशैन्य परिवृता ॥२१॥

अत्यन्त भूषित महान् विशाल ऊचे हाथी के रथ में बैठकर अपने मन्त्री और सेनाओं से सुरक्षिता ॥२१॥

अनन्ताभिः सपत्नीभि र्रथाश्वाभिश्च शोभिता ॥
मुर्छद्भिर्वाद्य ध्वानैश्च ययौ कौशल नन्दिनी ॥२२॥

अपनी सपत्नियों के अनन्त रथों से घिरे हुये शोभिता दिशाओं को मूर्छित करने वाली बाजाओं की आवाज से श्रीकौशलनन्दिनी बाजार (पैठ) को देखने को चलीं ॥२२॥

तच्छ्रुत्वा पुरवाशिन्य उत्सहिरेच समन्ततः ॥
शिविकारथमास्थाय वीथ्यां वीथ्यां समास्थिताः ॥२३॥

इस समाचार को सुनकर समस्त नगर वासिनी बड़े उत्साह में भरी हुई चारों तरफ से शिविका और रथों में बैठ करके अम्बा जी (महारानी जी) के साथ चलकर पैठ देखने के लिए मार्ग की गली २ में खड़ी हैं ॥२३॥

कौशल्या प्रीति शौशील्य। ताभिः प्रीत्या सुमेलनम् ॥
वीथिं वीथिं प्रतिकृत्वा कृत्वा मार्गे मनस्तदा ॥२४॥

प्रेम और सुशीलता से भरी श्रीकौशल्या महारानी जी को उन समस्त नगर बासिनियों ने बड़े अनुराग पूर्वक गली २ में भेंट, पूजा, दर्शन किया। अपने मार्ग में मन लगाई हुई श्रीमहारानी जी ने उन समस्त नगर बासिनियों का उचित प्रत्युपकार सत्कार किया ॥२४॥

एवञ्च पीठं रथ्यायां राममाता महीश्वरी ॥
प्राप्ता महा समाजैश्च श्रुत्वा रामो मुदं ययौ ॥२५॥

इस प्रकार पैठ के मार्ग में महीश्वरी श्रीराम जी की माता अपने सपत्नी और बहुओं सहित समाज से पैठ देखने आगई हैं—यह सुनकर श्रीरामजी बड़े आनन्द को प्राप्त हुए ॥२५॥

रथं संस्थाप्य संस्थाप्य गजादीनान्तु पीठके ॥
तर्जन्या श्चानुभावेन पीठ कौतुक वैभवम् ॥२६॥

श्रीकौशल्या अम्बा जी बाजार में रथ को रोक २ करके अपनी तर्जनी अँगुलीसे सुन्दर अनुभाव पूर्वक बाजार के कौतुक बैभव को ॥२६॥

अदर्शय द्वधू श्रीमज्जानकीं गुणवत्तराम् ॥
सा दृष्ट्वापुनरप्रच्छ द्विस्तरेण च तद्वृतम् ॥२७॥

अपनी बहू महान् गुणों में श्रेष्ठ श्रीमती जानकी जी को दिखा रही हैं। श्रीजानकी जी भी देख देखकर के उस बाजार कौतुक के चरित्र को विस्तार पूर्वक पूछ रही हैं ॥२७॥

व्यवसायिनो पीठस्था धनिनी राममातरम् ॥
श्रुत्वागतां प्रधावन्ति गृही त्वोपायनङ्करे ॥२८॥

पैठ के वनियों की सेठानियां श्रीराम जी की माता आरही हैं ऐसा सुन करके अपने २ हाथों में उपायन भेंट लेकर दौड़ती हैं ॥२८॥

रामजाया समेताश्च प्रणम्य राम मातरम् ॥
आत्मानं धन्यमन्वान स्तुतिं कृत्वा पुनः पुनः ॥२९॥

श्रीराम पत्नी जी के सहित श्रीराममाता जी को प्रणाम करके अपनी आत्माको धन्य मानते हुए बार २ स्तुति करने लगी ॥२९॥

राजार्हाणि च वस्त्राणि मणिमाल्या न्युपायनम् ॥
निधाय राममात्राग्रे लब्धानुज्ञां प्रयान्ति ते ॥३०॥

राजाओं के योग्य मणि वस्त्र और मणि मालायें श्रीराम जी की माता के आगे भेंट रूप में रख करके उचित स्वागत पूर्वक महारानी जी से आज्ञा पाकर के अपने महलों में जाती हैं ॥३०॥

एवञ्चाखिल लोकार्च्या राममाता खिलेश्वरी ॥
पीठ पीठान्तरं सर्वं दर्शयित्वा बधूं तदा ॥३१॥

इस प्रकार सकल लोक पूज्या अखिलेश्वरी श्रीराम माता एक पैठ से दूसरे में जाकर सब दृश्यों (कौतुकों) को अपनी बधुओं को दिखाया ॥३१॥

आगताभागधेयाख्ये मन्दिरे ध्वज सूचके ॥
तत्रैवोच्च गवाक्षेच स्थित्वापश्यति कौतुकम् ॥३२॥

सब बाजार घूमने के बाद पैठ के मध्य में ऊची ध्वजा पताका कलशोंसे शोभित भागधेय नामक करादान महल में आयी उस करादान महल के ऊचे खण्ड के छज्जाओं में बैठकर बाजार का कौतुक देखने लगीं ॥३२॥

एवंदृष्ट्वा च पीठानि श्रीरामोऽपि सलक्ष्मणः ॥
आगत्यमातृ सान्निध्यं स्थित्वापश्यति कौतुकम् ॥३३॥

इसी प्रकार श्रीराम जी भी अपने भ्राता लक्ष्मणादि सब सखाओं के साथ पैठ के कौतुकों को देख करके उसी करादान महल में माता जी के समीप आकर कौतुक देखने लगे ॥३३॥

नटै आरोपितो दण्डो डमरूं नादयंस्तदा ॥
शिरसि प्रबह त्कुम्भं त्रयं हस्तेत्वसि द्वयम् ॥३४॥

उस करादान महल के आगे में एक नट रस्ते में एक बहुत बड़े लम्बे दण्डा को गाड़ करके बाजा बजाने लगा, धीरे २ अपने सिर पर उसने तीन घड़े रख लिये दोनों हाथोंमें दो तलवार ले ली ॥३४॥

मन्तीर बद्ध पादोऽ सौगायन्दण्ड महोच्चकम् ॥
भूमितः कुर्दयित्वातु तदारुह्य ननर्तच ॥३५॥

अपने दोनों पैरों को डोरी से बांध करके गान करते हुए वह बहुत ऊचे दण्ड पर पृथ्वी से कूद करके ऊपर चढ़कर दण्डे के सिर पर नृत्य करने लगा ॥३५॥

भार्य्या तस्यापि भूमौ च स्वयं गायति नर्तती ॥
पुनः सापि च संकुर्व न्नटस्य सविधंगता ॥३६॥

थोड़ी देर बाद उसकी पत्नी भ पृथ्वी में स्वयं नृत्य व गान करने लगी फिर वह भी कूदती हुई उसी विधान से नट के समीप गयी ॥३६॥

दण्डस्योपरि द्वावेव नृत्यन्तौ दर्शितौ जनैः ॥
शिष्या वाद्यन्ति वाद्यानि जनासंख्य समूहिताः । ३७।

दोनों जने उस दण्डा के ऊपर नृत्य करने लगे, सब जनता देखती है । वे दोनों नट और नटिनी बड़े प्रसन्न होकर नृत्य करने लगे तथा उनके शिष्यगण नीचे से खड़े होकर बहुत से वाजाओं को बजाते हैं, नृत्य करते हैं, गाते हैं। जनता की असंख्य भीड़ इकट्ठी होगयी इस दृश्य को देखने लगी ॥३७॥

एकन्तु रामरूपस्य द्वितीयं नट कौतुकम् ॥
यावन्त श्च महा पीठे जनाः श्रुत्वा समाययुः ॥३८॥

एक तो श्रीराम जी के अद्‌भुत रूप का दर्शन दूसरा वह नट का कौतुक—यह दोनों समाचार सुनकर पैठ में जितनी भी जनता थी सब देखने को आयी ॥३८॥

भार्य्या वतारिता वंशा त्सोवदं जनसं सदि ।।
भुज मुत्थाया स्यूच्चेश्च श्रूयतां जन संसदि । ३६॥

उस नट ने अपनी भार्य्या को उस बांस के दण्डे पर से नीचे उतरवा दिया और स्वयं उस बांसके ऊपरसे आम जनताकी भीड़में दोनों भुजाओंसे खंग ऊची उठा करके जनसमूह से कहने लगा॥३६॥

सद्भिः किमादृतं लोके कस्मिस्तेषां भवे त्स्थितिः ॥
इति द्वयं शभायान्तु पृच्छामि खलु सज्जनाम् ॥४०॥

हे भाइयों ! लोक में सज्जन लोग किसका आदर करते हैं और किसमें उनकी स्थिति होती है ? इन मेरे दो प्रश्नों का उत्तर दो यह मेरा प्रश्न आम जनता सबके लिए है ॥४०॥

एता दृशी शभाजाता मत्प्रश्नस्यापि नोत्तरम् ॥
दत्त केनापि ह्यार्य्येण मारिषोहि बदाम्यहम् ॥४१॥

थोड़ी देर में कहने लगा कि अहो ! आश्चर्य है इतने बड़े महान पुरुषों की भीड़ में मेरे एक भी प्रश्न का उत्तर किसी भी महान् पुरुष ने नहीं दिया, अच्छा हे पुरुषों ! अब मैं ही अपना उत्तर देता हूँ।४१॥

सत्यमेवा दृतं सद्भिः सतां सत्ये स्थिति र्भवेत् ॥
असत्या श्रयणा त्सर्वं पाण्डित्यं हि पलायते ॥४२॥

सज्जन लोग सत्य का ही आदर करते हैं सत्य में ही सज्जनों की स्थिति भी होती है क्योंकि असत्य का आश्रयण करने से पण्डितों का सम्पूर्ण पाण्डित्य भाग जाता है यह निश्चय है ॥४२॥

अन्य त्प्रच्छामि लोकेभ्यो वदिष्यामि स्वयं नवा ॥
आत्मानं बोधयिष्यामि किं कस्यापि परीक्षया ॥४३॥

अब मैं सब महापुरुषोंके बीच में एक और प्रश्न करता हुँ उसका उत्तर मैं स्वयं नहीं दूंगा और मैं अपनी आत्मा को प्रबोधित कर रहा हूँ किसी को परीक्षा नहीं कर रहा हूँ ॥४३॥

कोवा महाशनो लोके कोवास्त्यनशन स्तथा ।
सन्तोषोऽनशनो वैस्या ल्लोभएव महाशनः ॥४४॥

अच्छा अब आप लोग बताइये कि लोकमें सबसे बड़ा भोजन करने वाला कौन है तथा अनसन करके रहने वाला कौन है ? थोड़ी देर बाद इन दोनों प्रश्नों का उत्तर नट ने स्वयं दिया। सन्तोष ही अनशन करके रहने वाला और लोभ ही महान् भोजन करने वाला है॥४४॥

किमे कश्च द्वयं लोक ह्येकस्मिन्पञ्च विंशतिः ॥
ईश्वरैक श्चन्द्र सूर्य्यो देहेस्मिन्पञ्च विंशतिः ।४५॥

फिर नट ने प्रश्न किया कि लोक में एक कौन है, दो कौन है, एक साथ २५ कौन है । थोड़ी देर बाद इसका भी उत्तर नट ही ने उत्तर दिया—ईश्वर एक है चन्द्रमा सूर्य दो हैं इस शरीर के अन्दर २५ तत्व इकट्ठे हैं ॥४५॥

लोके लघुतरं किं स्यात् किं महत्तर मुच्यते ।
भिक्षू लघुतरो लोके दाता खलु महत्तरः ॥४६॥

फिर नट ने प्रश्न किया—लोक में सबसे छोटापना क्या है, सबसे बड़ापना क्या कहा जाता है ? फिर इन प्रश्नों का उत्तर भी नट ने स्वयं दिया—भिक्षुक लोक में सबसे छोटा है, दाता बहुत बड़ा है ॥४६॥

कोवा त्यजति सर्वञ्च को वा गृह्णाति सर्वकम् ॥
सर्वंत्य जति वैराग्यंलोभो गृह्णाति सर्वकम् ।४७॥

फिर प्रश्न किया—कौन सबको त्यागता है और कौन सर्वग्राही है ? फिर नट ने स्वयं ही उत्तर दिया—वैराग्य सबको त्यागता है, लोभ सबको ग्रहण करता है ॥४७॥

कोवा ष्यन्धोहि बधिरः कोवास्ति नेत्र श्रोत्रवान् ॥
धनवान्बधिरो ह्यन्धश्चौरोस्ति नेत्र श्रोत्रवान् ॥४८॥

फिर नट ने प्रश्न किया—लोक में अन्धा और बहिरा कौन है तथा नेत्र और कान वाला कौन है ? फिर नट ने ही उत्तर दिया—लोक में धनवान बहिरे और अन्धे हैं, चोर नेत्र और कानवाला है॥४८॥

असिता च सिता काच सर्वे जानन्ति ते जनाः ॥
कीर्तिः सिताहि विख्याता त्वसिताऽकीर्ति रुच्यते ॥४९॥

फिर नट ने प्रश्न किया—लोक में समेद क्या बस्तु है और काला क्या है ! अब आप सब लोग जानते हैं मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिये। थोड़ी देर में नट ने ही उत्तर दिया—लोक में कीर्ति ही सफेद है और अपकीर्ति ही काला है इस बात को सब जानते हैं ॥४९॥

कौ द्वौ तेजस्विनौ लोके तथा कौच धनुर्भृतौ ॥
रामार्कौ राम कामौ च तृतीयो नान्वित स्तयोः ।५०॥

फिर नट ने प्रश्न किया—लोक में दो तेजस्वी कौन हैं, धनुषधारी कौन हैं ? थोड़ी देर में दो नट ने ही उत्तर दिया श्रीराम जी और सूर्य भगवान दो तेजस्वी हैं। श्रीराम जी और कामदेव ये दो धनुषधारी हैं। इन दोनों के समान तीसरा कोई नहीं है ॥५०॥

एवमुक्त वतो रामे प्रशंसा पूर्वकां गिरम् ॥
ववर्षु रत्न माल्यानि नटस्योपरि तत्क्षणात् ॥५१॥

इस प्रकार श्रीराम जी की प्रशंसा पूर्वक वाणी कहने पर नट के ऊपर उसी समय रत्नों की मालाओं की वर्षा होने लगी ॥५१॥

मातैका च पिता कः स्या त्तद्ब्रूहि किम्वदाम्यहम् ॥
कौशल्येकाहि माता स्या त्पिताकौशल पालकः॥५२॥

नट ने फिर प्रश्न किया—जगत में एक माता कौन है; एक पिता कौन है ? आप लोग कहिये। थोड़ी देर में नट ने कहा अच्छा मैं ही कहता हूँ—श्री कौसल्या जी एक माता हैं, श्री कौशल पाल ही एक पिता हैं ॥५२॥

चन्द्रत्रयं मया दृष्टं कथ्यतां नु वदाम्यहम् ॥
खेचरैको भूचरौद्वौ श्रीरामस्य मुखं यशः ॥५३॥

थोड़ी देर में नट ने कहा अरे भाई ! बड़े आश्चर्य की बात कि मैंने तीन चन्द्रमा देखे हैं आप लोग बतायेंगे कि मैं ही बताऊँ ? थोड़ा देर में बोला कि अच्छा मैं ही बताता हूँ—एक चन्द्रमा तो आकाश में चलते हैं, दो चन्द्रमा पृथ्वी पर—एक श्रीराम जी का मुख दूसरा—श्रीरामजी की कीर्ति यश है॥५३॥

इत्थं व्याहरत स्तस्य राम पित्रोः प्रशंशिनीं ।
गिरं गिरि रभूदग्रे नटस्य कलधौतकः ॥५४॥

इस प्रकार नट के कहने पर श्रीराम जी माता पिताओं की प्रशंसनीय वाणी को सुनकर नट के आगे सोने का पहाड़ लग गया ॥५४॥

वीरौ द्वौ जगति ख्यातौ तद्वद प्रवदाम्यहम् ॥
लक्ष्मणो वैच सत्रूघ्नो न लोकेत त्प्रति प्रभः ॥५५॥

फिर प्रश्न किया कि लोक में प्रसिद्ध दो वीर कौन हैं ? आप लोग बताइये नहीं तो मैं ही बताये देता हूँ। एक लक्ष्मण एक शत्रुघ्न ये ही दो लोक में असदृस वीर हैं ॥५५॥

पारं गन्तास्ति कोवात्र शस्त्रशास्त्रार्थ वारिधेः ॥
उच्यतां हि वदिष्यामि भरतोऽपर एवकः ॥५६॥

फिर नट ने प्रश्न किया कि लोक में शस्त्र और शास्त्र रूप समुद्र से सम्यक् प्रकार पार गया हुआ कौन है ? आप लोग कहिये अथवा मैं ही कहे देता हूँ—महान् विद्वान एक भरत जी से दूसरा कौन है ॥५६॥

नटे त्वेवं चोक्तवति श्रीरामे विद्यावारिधौ ॥
भ्रातृ सम्पादिनीं वाणीं महत्यूर्म्मि प्रवर्तिनी ॥५७॥

नट के इस प्रकार कहने पर श्रीराम जी रूप धन के समुद्र में भ्राताओं की प्रशंसा सम्पादिनी वाणी से महान लहर निकलने लगी ॥५७॥

इत्यन्तरे कुतः कस्मादाक्रम्य शतसोजनान् ।
नटाग्रे पतितो व्याघ्रो दीर्घकायो भयप्रदः ॥५८॥

इस प्रकार नट के कौतुक समाज के बीच अकस्मात कहीं से समाज की जनता को हटाते हुए नट के आगे एक बहुत बड़ा शरीर वाला बाघ आ पहुँचा और सबको भयभीत कर दिया ॥५८॥

तं हत्वा तस्य भार्य्यां च सर्बान्तस्य जनानपि ॥
हाहेति शब्द सञ्जाते दुद्राव घोर शब्दयन् ॥५९॥

उस बाघ ने नट को तथा उसकी स्त्री तथा नट के सब परिवार को तुरन्त मार कर खा गया जनता हा ! हा ! चिल्लाती हुई घोर शब्द करके भागने लगी ॥५९।

जानन्तोपि च तन्मायां दृष्ट्वा भ्रम मुपाययुः ॥
तत्रस्था श्च जनाः सर्वे साक्षात्सर्वंविलोक्य च ॥६०॥

यह नट की माया है ऐसा जानते हुए भी सबको भ्रम उत्पन्न हो गया। वहाँ पर ठहरी हुई सब जनता ने इस सब दृश्य को साक्षात् देखा ॥६०॥

इत्यन्तरे हि वाऽकस्मात् कामधेनु रुपागता ॥
चकार पयसां बृष्टिं जिजीवुश्च समन्ततः ॥६१॥

इसी बीच में अकस्मात कहीं से कामधेनु गौ उसी जगह पर आगई उसने अपने थन (पयद) से चारों तरफ दूध की वर्षा करके सबको जिला दिया ॥६१॥

पुन नृत्यं कृतं तेन नाना कौतुक दर्शनैः ॥
चतस्रो घटिका रात्री व्यतीतान विदुः कचित्॥६२॥

फिर उस नट ने नाना प्रकार के बहुत से कौतुकों को दिखाया तथा नृत्य किया इस प्रकार चार घड़ी रात्रि बीत गयी किसी को कुछ भी मालुम न पड़ा ॥६२॥

पुनस्तं कौशलेन्द्रेण स्वादृतं वहुशोधनैः ॥
विनिवृत्य नट्टं सर्वे वाणिजा दर्शनोत्सुकाः ॥६३॥

फिर महाराज श्री कोसलेन्द्र जी ने उस नट को बहुत सुन्दर आदर पूर्वक धन दिया। इस प्रकार नट को निवृत्त करके दर्शन की उत्सुकता वाले सब बनिया लोग ॥६३॥

धनिनो देश कालज्ञा विदेशियाः समन्ततः ॥
मिलितुं राजराजेन्द्रं समाजग्मु रूपायनैः ॥६४॥

जो कि दूर देश के रहने वाले देश, काल को समझने वाले बड़े २ धनिक लोग राज राजेन्द्र से मिलने के लिए हाथों में भेंट लेकर के चारों तरफ से आ पहुंचे ॥६४।

तेचादृताः पृच्छ्य नामानि कुशलादिभिः ॥
मुदिताश्च पुनर्जग्मुः राजागन्तुं प्रचक्रमे ॥६५।

महाराज ने उन सबके नाम और कुशल को पूछ २ करके सबको आदर दिया, वे सब प्रसन्न होकर के अपने २ स्थानों में चले गये। महाराज भी अपने घर आने की तैयारी किये ॥६५॥

कौसिल्या प्रीतिशौशिल्या राममाता महीश्वरी ॥
तस्यादर्शन कांक्षिण्यो वाणिजानां स्त्रियो वराः ॥६६॥

सुन्दर शील और स्नेह वती राममाता महीश्वरी श्री कौशल्या जी के दर्शन की इच्छा वाली बनियों की उत्तम स्त्रियायें ॥६६॥

समाययुः मिलित्वाता देशभाषा स्वबोधकाः ॥
करान्तोपायनाः सर्वा मिलितुं दूर देशिकाः ॥६७॥

सब देशों की भाषा जानने वाली दुभाषिया लोगों के साथ मिलकर के हाथों में उपायन भेंट लेकर जो कि दूर देश को रहने वाली हैं, श्री महारानी जी के पास आयीं ॥६७॥

बहुशो रत्न माल्यानिधृत्वाचाग्रे ह्युपायनं ॥
संस्पृस्य चरणौ राज्ञा आदराप्ता समास्थिताः॥६८॥

बहुत सी रत्नों की माला उपायन भेंट रूप में महारानी जी के आगे रक्खी, महारानी जी के चरणों का स्पर्श किया और महारानी जी ने भी आदर दिया, अपनी २ उचित जगहों पर बैठ गयीं॥६८॥

अन्यथाच द्विभाषिण्या कृतं सम्भाषणं पुनः ॥
जानकी चांक मारोप्य वृद्धाभि र्लालितां हितत् ॥६९॥

अन्य दुभाषियों के द्वारा महारानी जी से बातें की और श्रीजानकी जी से बातें कीं और श्री जानकी जी को अङ्क से लगाकर अपनी गोदी में बैठाकर दूर देश की वृद्धायें प्रसन्न हुई ॥६९॥

सानिध्यं राम मालोक्य कामिन्यः कामसुन्दरम् ॥
विकुर्वाणा निरीक्षन्ति लज्योत्कण्ठा समालयाः ॥७०॥

पास में ही खड़े काम से अधिक सुन्दर श्रीरामजी को देखकर लज्जा और उत्कण्ठा से भरी कामिनी स्त्रियायें समीप आती हुई देख रही हैं ॥७०॥

जग्मुः सर्वा मुदं प्राप्य कौशल्यांश्च प्रणम्यताः॥
निध्यायरामचन्द्रास्ये चित्तं चन्द्र चमत्कृते ॥७१॥

इसके बाद सबकी सब आनन्द मग्न हुई श्रीकौसल्या अम्बा जी के चरणों में प्रणाम करके बड़े चमत्कार वाले श्रीरामचन्द्र जी के मुखचन्द्र में अपने चित्त को निवेशित करके चली गयी ॥७१॥

कौशल्याराम मादाय ससैन्यं भ्रातृभिः सह ॥
प्रदीपानां प्रकाशैश्च प्रविवेशपुरं तदा ॥७२॥

श्रीकौसल्या अम्बा जी भ्राताओं के सहित श्रीराम जी को लेकर के सेना से सुरक्षित, दीपों के सुन्दर इन्तजाम पूर्वक अपने नगर श्रीअयोध्या जी में आई ॥७२॥

रथ्याया मट्ट मारुह्य पुरस्त्री बाल वृद्धकाः ॥
पश्यन्ति वाहिनी शोभां विन्यासानि चमत्कृताम्॥७३॥

रास्ते में नगर की बाल वृद्ध सब स्त्रियायें अपने महल की छत पर तथा छज्जाओं पर खड़ी हो कर बड़ी चमत्कार वाली फौज पलटन की शोभा देख रही हैं ॥७३॥

ध्वजतुर्य्य हयेभाग्रां नृत्यकौतुक संयुताम् ॥
प्रदीपानां पक्तिभिश्च राजमार्ग प्रकासिताम् ॥७४॥

ध्वजा, पताका, तूरी आदिक बाजाओं का शोर, उत्तम घोड़े हाथियों का नृत्य तथा और भी बहुत से नृत्य कौतुक संयुक्त दीप वृक्षों की पंक्तियों से सुशोभित राजमार्ग प्रकाशमान हो रहा है ॥७४॥

निषादिभिः शादिभिश्च नग्न खड्ग करान्तकैः ॥
शक्ति यन्त्रातकै श्चैव खड्गोत्थपाद चारिभिः ॥७५॥

हाथियों तथा पीलवानों से, दण्ड लिए हुए सिपाहियों से, नंगी तलवार हाथों में लिए हुए तथा शक्ति, वज्र आदि नंगे औजारों को हाथों में लिये हुए तथा हाथ उठाकर चमकाते हुए ॥७५॥

स्वर्ण माणिक्य दण्डाद्यै रौप्यदण्डभृतैस्तथा ॥
उच्चरद्भिरुच्चकार जयसंशाब्दिकै र्जनैः ॥७६॥

मणि जड़ित स्वर्ण दण्डों को हाथों में लिये हुये तथा केवल स्वर्ण दण्डों को हाथों में लिए हुये इस प्रकार की फौजों से सुरक्षित ऊचे स्वर से जय जयकार शब्द बोलने वाले सूत मागध आदि लोगों के सहित ॥७६॥

छत्र चामर हस्तैश्चभूषितांगैश्च किंकरैः ॥
वीटिकादि सम्पुटान्त करैश्च परिवारितः ॥७७॥

तथा छत्र चँवर हाथों में लिये हुये सुन्दर भूषित अङ्ग वाले नौकर तथा पान के डिब्बाओं को हाथों में लिये हुये सेवकों से घिरे ॥७७॥

ताम्बूलं चर्वं यन्मन्दं हसँन्स्त्रीणां मनोहरः ॥
भूषितेभरथारूढो बभौगच्छन्रघूत्तमः ॥७८॥

पान के बीड़ा को चबाते हुए, मन्द २ हँसते हुए, स्त्रियों के मन को चुराते हुए, सुन्दर भूषित हाथी के रथ में बैठे हुये इस प्रकार चलते हुये रघुश्रेष्ठ ॥७८॥

पार्श्वद्वयोच्च हर्म्याणां गवाक्षेषु समन्ततः ॥
स्वात्मन श्चोन्मुखा पात्रे काञ्चने स्थापिताः शुभे॥७९॥

राजमार्ग के दोनों तरफ ऊचे महलों के छज्जाओं में बैठी स्त्रियों स्वर्ण थालों में आरती को सजाकर हाथों में लिए हुए रघुनाथ जी के सामने आने पर आरती करती हैं ॥७९॥

सुदृशां हस्त पद्मेषुभूषितेषु विराजिताः ॥
पश्यन्पंक्ति श्च दीपानां मगा दूर्वाश्च पञ्चमम् ॥८०॥

इस प्रक र सुन्दर नेत्र वाली भूषित करकमलों में दीपों को ली हुई पंक्ति की पंक्ति सुशोभित हैं। उन सबको देखते हुये श्रीराम जी नगर के पाँच परकोटा तक भीतर चले आये ।।८०।।

तत्रैको वैश्यराजोस्ति वयश्योपि विशाम्पपेः ॥

पितुः शखाहि रामस्य सतांमान्यो धनाधिपः ॥८१॥

वहां पर महाराज श्री चक्रवर्ती जी के सखा एक वैश्यराज कहाते हैं जो कि श्रीराम जी के पिता के सखा सज्जनों (सन्तों) के मान्य बड़े धनवान हैं ॥-१॥

राजपुत्रस्य वाहिन्या तूर्य्याणां दिक्षु मूर्च्छितम् ॥

श्रुत्वा नादं परीक्षन्ते समानेतुं स्वमन्दिरे ॥८२॥

वे राजपुत्र श्रीराम जी की सेना का दिशाओं को मूर्छित करने वाले तूरी आदि बाजाओं की नाद सुनकर ये श्रीराम जी की ही सवारी हैं ऐसा निश्चय पाकर श्रीराम जी को अपने घर में लिवा लाने के लिये ॥८२॥

औरस्या दपितेनैव श्रीरामं चाधिकम्मतम् ॥

स्वात्मजः प्रेषितोवुध्या गजमारुह्य सो गमतः ॥८३॥

अपने पुत्र से भी अधिक श्रीराम जी को मानने वाले उन वैश्यराज ने अपने पुत्र को भेजा वह वैश्यकुमार हाथी पर बैठ करके श्रीराम जी को लिवा लाने गये ॥८३॥

तम्मान्यभ्रातरं रामः श्रुत्वा सान्निध्य मागतम् ॥

मार्गं कर्तुम्मनुष्याणा मावृतौ प्रेरिता जनाः ॥८४॥

श्रीराम जी ने अपने मान्य भ्राता को मेरे पास आरहे हैं ऐसा सुना तो अपने को घेरी हुई फौज के लिये आज्ञा दी कि यह मेरे मान्य भ्राता के आने का रास्ता बनाओ॥८४॥

उक्तं प्रथमतस्तेन कौशल्यां मान्य मातरि ॥

आशीर्वादश्च संस्पृश्य श्रीरामेभाग्र मागतः ।८५॥

वह मान्य भ्राता प्रथम अपनी मान्य माता श्रीकौसल्या जी को प्रणाम किया और आशीर्वाद लिया उसके बाद श्रीराम जी के हाथी रथ के पास आया ॥८५॥

समयोचित मानस्य वाचिकं पितु रादतः ॥

प्रतिश्रुत्य च रामाय स्वीकारोक्तिः प्रलभ्य सः ।८६॥

बड़े आदर पूर्वक श्रीरामजी के लिए कही हुई श्रीपिताजी की बात को समयानुसार श्रीरामजीसे कहकर स्वीकृति को भी प्राप्त किया ॥-६॥

लब्धानुज्ञस्तु श्रीरामा त्समातु र्मुदमाप्नुवान् ॥

गत्वा ग्रभग्र्यं शैन्यस्य कान्त मण्डल कोन्मुखम् ।८७॥

माता के सहित श्रीराम जी से आज्ञा प्राप्त होने पर बड़े आनन्द मग्न हुए वैश्यकुमार श्रीरामजी की सेना के आगे होकर अपने निवास स्थान कान्त मण्डलकी तरफ सेना मुख को घुमाया ॥८७॥

प्रवर्तितं तदानेनमुखं दुन्दुभि नादितम् ॥
विशालध्वज संशोधि प्रदीपाग्रप्रकाशितम् ॥८८॥

विशाल ध्वजा से सुशोभित, दीप वृक्षों से प्रकाशित, दुन्दुभी आदिक बाजाओं से सुघोषित इस प्रकार के सेनामुख को उस वैश्य कुमार ने अपने घर की तरफ घुमाया ॥८८॥

मार्गस्वभवनान्तेन परार्द्धेन सुगन्धिना ॥
मित्रेण कौशलेन्द्रस्य साम्प्रतं गोपुरा वधिः ॥८९॥

अपने महल पर्यन्त मार्ग में बिसकीमतीय सुगन्धों से तथा पुष्प पावड़ों के सजावटों से अपने महल के फाटक पर्यन्त कोसलेन्द्र महाराज के सखा ने स्वागत किया ॥८९॥

मण्डलस्य कान्त नाम्नः सिञ्चयित्वा सुपुष्पकैः ॥
स्वाच्छादितः सुभक्तयातु रामागमन हेतवे ॥९०॥

वैश्यराज के निवास स्थान उस मण्डल का कान्त नाम है जिसके मार्ग पुष्पादिकों से सिंचित हैं श्रीराम जी के आने के लिये सुन्दर भक्ति पूर्वक सजा हुआ है ॥९०॥

वहुदीपावलीभिश्च चतुर्दिक्षु चकासितः ॥
मुक्तानां तोरणै रेवं संस्कृतोति मनोहरः ॥९१॥

दीपों की बहुत पंक्तियों से चारों तरफ प्रकाशमान है। मुक्ताओं के तोरणों से मनोहर सजा है ॥९१॥

सद्मखण्डान्तरं सर्वं वितान तोरणादिभिः ॥
दीपद्रुमैः काञ्चनैश्च शोभाभिः परिपूरितम् ॥९२॥

अपने महल के प्रथमावरण फाटक से कई खन्ड भीतर तक मार्ग वितान तोरणादि स्वर्ण के दीप वृक्षों से महान् शोभा परिपूर्ण है ॥९२॥

तावच्च प्रथमायां श्रीरामो भावात्त मानसः ॥
कक्षायां सद्मनस्तस्य समाजैश्च समागतम् ॥९३॥

तब तक भाव के वश मन वाले श्रीराम जी वैश्यराज के महल के प्रथमावरण में अपने समाज के सहित पहुंच गये ॥९३॥

पूर्वंधृत्वा स्थिताभिश्च कराब्जे भूषणाञ्चिते ।
नीराजन विधितत्र बनिताभि र्नीराजितः ॥९४॥

सुन्दर भूषणों से भूषित करकमलों में सजी हुई आरती की थाली को लेकर पहले ही से खड़ी हुई बनिताओं ने आरती किया ॥९४॥

सीमन्तिनीभिः श्रीरामः प्रतिकक्ष्यां नीराजितः ॥
धृत्वादि व्यांशुके पादावङ्गणञ्च समाययौ ॥९५॥

प्रत्येक आवरणों में सुहागवती स्त्रियों के द्वारा श्रीरामजी की आरती हुई, दिव्य पांवड़ों पर चरण रखते हुए श्रीरामजी इस प्रकार आंगन में आये ॥९५॥

पुत्र भावाप्त हृदया श्रीरामेभावलि शुके ।।
तयानीराजित स्तत्र रामो राजीव लोचनः ।।६६।

श्रीराम जी में पुत्रभाव से स्नेह परिपूर्ण हृदय वाली भावलीशुका नाम की वैश्यराज पत्नी ने राजिव लोचन श्रीराम जी की अपने फाटक पर आरती की ।।६७।।

पुन गृंहान्तरे नीत्वा माङ्गल्यार्थाश्चिताग्रके ।।
दिव्याशने निवेश्याथ सीतया सहशोभनः ।।६७।।

उसके बाद पहले अपने घर के भीतर लायी जहां मङ्गल चिन्हों से चिन्हित मङ्गल साज सजे हुए वहां पर दिव्य आसन पर श्रीसीता जी के साथ श्रीराम जी को सुन्दर शोभा पूर्वक बैठाया ।।६७।

पूजयित्वा षोडशभि र्दम्पतीभ्यां नीराजितः ।।
भ्रातर श्च सखायश्च मातरश्चादृता यथा ।।६८।।

षोडषोपचार विधि से दोनों दम्पत्ति ने पूजा करके आरती की तथा भ्राता और सखाओं का भी इसी प्रकार माताओं का भी यथोचित आदर किया ।।६८।।

प्रोत्थ वात्सल्य हृदयः किम्वादशरथो परः ।।
भार्य्यापि सुव्रतातस्य रामे वात्सल्य निर्भरा ।।६६।।

वात्सल्य भाव से भरे हृदय वाले वैश्यराज मानो महाराज दशरथ हीहों उनकी पतिव्रता भार्य्या भी श्रीराम जी में वात्सल्य भाव से भरी हैं ।।६६।।

पुन गृंहान्तुरे न्येच सीतारामौ निवेश्य च ।।
उभाभ्यामङ्क मारोप्य लालितौ भोजनादिभिः ।।१००।।

उसके बाद सीतारामजी को एक अन्य महल में लेजाकरके दोनों पति पत्नी वैश्यराज ने अपनी गोदियों में बैठाया, लाड़ प्यार पूर्वक भोजन कराया ।।१००।।

परार्द्धभूषणै र्वस्त्रैः स्वयमेव स्वलंकृतौ ।।
तयोश्चभावमत्यन्तं कौशल्या वीक्ष्य विस्मिता ।।१०१।

बिसकीमतीय वस्त्र भूषणों को अपने हाथों से दोनोंको पहिनाया । इन दोनोंके वात्सल्य भावको देखकर श्री कौशल्या अम्बा जी चकित हो गयीं ।।१०१।।

आसीद्वर्ष्यश्च सम्प्राप्य तौमेने स्वान्यविग्रहौ ।।
पुनर्भरत सत्रुघ्नौ लक्ष्मणश्च तथाविधः ।।१०२।।

वैश्यराज दोनों दम्पत्ति अपने को श्री महाराज दशरथ जी और कौशल्या जी के अन्य विग्रह मानकर के श्रीराम जी को बात्सल्य भाव से स्नेह करते हैं इस प्रकार की मान्यता से महान् हर्षित होते हैं, जिस तरह से श्रीराम जी को मानते हैं उसी तरह भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण जी को भी मानकर लाड़प्यार करते हैं ।।१०२।।

सभार्य्या स्तेपि वात्सल्यै रनुभावै निरन्तरैः ॥
लालिताहि सभार्य्येण वस्त्रालङ्कार दानतः ॥१०३॥

जिस वात्सल्य भाव से श्रीसीताराम जी की सेवा की उसी तरह से भरत, शत्रूघ्न आदि को भी वस्त्रालंकार आदि सेवाओं से दुलार किया ॥१०३॥

सखायोपि च रामस्य यथायोग्यानुभावतः ॥
मित्रेण कौशलेन्द्रस्य तोषिताः सन्मतेनवै ॥१०४॥

तथा इसी प्रकार श्रीराम जी के सखाओं का भी यथायोग्य अनुभावों से सज्जनता पूर्वक श्री कोसलेन्द्र सरकार जी के मित्र ने संतुष्ट किया ॥१०४॥

श्रीराममातरः सर्वा वस्त्रालङ्कार भोजनैः ॥
मान्य मात्रा तु रामस्य तोषिता बहुस्वादरैः ॥१०५॥

इसी प्रकार श्रीराम जी की सब माताओं को भी वस्त्र, अलंकार, भोजन आदर मान से उचित स्वागत पूर्वक श्रीराम जी की मान्य माता ने सन्तुष्ट किया ॥१०५॥

इत्थं स्वादरतः प्रवर्द्धे धनिना श्रीराम पुत्रीकृता-
प्रेम्णा निर्भर मानसेन बहुशो रात्रीं गतां पश्यता ॥
उक्तं तथ्य यथा यथेति वचनं हेराम संश्रूयताम्-
यावच्च मदीय मस्ति सकलं त्वय्यर्पितं सर्वथा १०६॥

इस प्रकार श्रीराम जी को पुत्र भाव से मानने वाले महान् धनवान उस वैश्यराज ने प्रेम में मग्न मन होकर के सुन्दर आदर किया। बहुत रात बीत गयी है ऐसा देख करके वैश्यराज श्रीराम जी से ठीक २ निश्चित बात यह कही कि हे राम ! सुनिये मेरा जो कुछ भी है और मैं जो भी हूँ यह सब मैं मेरा सम्यक प्रकार से आपके लिए अर्पण है ॥१०६॥

वृद्धंमां प्रतिपालय प्रतिदिनं मत्वा पितुः किङ्करम् ॥
दासीं मातुरिमां चभृत्य लघुकं पश्य त्वदग्रेऽस्थितम्॥
स्थापश्चात्रविधे हि वा स्वभवनं सस्वत्सुखं गम्यताम् ॥
किं नोयाति मुदं विलोक्य शशिनं दूरे स्थितेप्यम्बुधिः॥१०७॥

मैं बूढ़ा हो गया, आप मुझे अपने पिता का दास मानकर के प्रतिदिन मेरा प्रतिपालन कीजिये और इस मेरी पत्नी को आप अपनी माता की दासी मानिये और ये जो आपके सामने मेरा पुत्र है इसको अपना छोटा नौकर मान करके देखिये। अब आप चाहें इसी मकान में रात्रि में शयन कीजिये अथवा अपने दूसरे घर में जाइये, जिस तरह से आपको प्रसन्नता हो वही कीजिये। क्या समुद्र दूर रहने पर भी अपने पुत्र चन्द्रमा को देख करके प्रसन्न नहीं होता है ? अर्थात् होता ही है ॥१०७॥

त्वात्मन्यात्मज भावकृत्सु मनसः श्रुत्या मनोज्ञं वच-
स्तत्स्वास्य त्रिति शोभनं सुवचनं श्रीरामचन्द्रो ब्रवीत् ॥

त्वं साक्षा दशरथन्द नेन सदृशो माता तथेयं हिमे–
भ्राता यल्लघु लक्ष्मणेन सदृशो ह्यूनं कथं मन्यसे ॥१०८॥

श्रीराम जी सुन्दर मन से अपने में पुत्र भाव से भरे मन रमणीय वचनों को उनके सुनकर के वैश्यराज को आश्वासन देते हुए सुहावन बचन से बोले कि मैं आपको साक्षात् श्रीदशरथ जी के सदृश तथा ये मेरी माता जी के सदृश हैं तथा ये आपके पुत्र मेरे छोटे भाई लक्ष्मण जी के सदृश हैं। आप दोनों जने मनमें न्यूनता को क्यों मान रहे हैं ॥१०८॥

इत्थं वाग्भिरलंकृताभि रधिकं मान्येन मान्यौ सतां–
श्रीरामेण प्रणम्य श्लाघ्य पितरौ संश्लिष्यतं भ्रातरम् ॥
कण्ठात्स्वस्य निः सार्य्यमाल्य रुचिरं भ्रातु र्गलेस्थापितम् ॥
स्वाशी र्वाच मुपेत्यतत्रभवना द्गन्तुं मनः सन्दधे ॥१०९॥

इस प्रकार सुन्दर अलंकारों से भरी बातों को सर्व लोकमान्य श्रीरामजी ने सन्तों में मान्य उन दोनों पति पत्नी वैश्यराज को पिता की तरह से प्रशंसा और प्रणाम किया तथा पास में ही उनके कुमार को भ्राता की तरह आलिंगन किया उसके बाद अपने गले से एक सुन्दर माला निकाल करके मान्य भ्राता के गले में पहिना दी उसके बाद आशीर्वाद के बचनों को प्राप्त करके उस स्थान से अपने महल में जाने के लिए बिचार किया ॥१०९॥

यामितानगतारात्रि र्गच्छ वत्स यथा सुखम् ॥
अनुव्रजार्य्यं ज्येष्टं त्व मितिपुत्रस्च प्रेरितः ॥११०॥

हे वत्स ! अब थोड़ी सी रात्रि बाकी रह गयी है अब आप इन अपने ज्येष्ठ भ्राता को सुखपूर्वक पहुँचाने के लिए इनके पीछे जाओ ऐसा कहकर अपने पुत्र को भेजा ॥११०॥

चलत्स्वर्णाद्रि संकासं तदारुह्य बिमानकम् ॥
नरै र्वाह्यं सहस्रैश्चमान्य भ्रातापि संयुतः ॥१११॥

हजारों मनुष्यों द्वारा ढोया हुआ चलता हुआ स्वर्ण पर्वत के सदृश उस विमान में अपने मान्य भ्राता के सहित श्रीरामजी चढ़े ॥१११॥

एवम्पुत्र बधूभिश्च कौशल्या तत्समादृता ॥
परस्परं समादृत्य ह्याजगामततो गृहात् ॥११२॥

इसी प्रकार पुत्र पतोहुओं के साथ श्री कौशल्या जी ने भी परस्पर सम्यक प्रकार आदर ले दे करके फिर उस घर से अपने घर के लिये चल दीं ॥११२॥

पुरस्त्री पुरुषाणाञ्च नेत्रोत्साह चिकीर्षया ॥
प्रतिहर्म्यं बधूभिश्च परिबर्तिनीराजनम् ॥११३॥

पुर की स्त्री पुरुषों के नेत्र उत्साह प्राप्ति की इच्छा से नगर बधुओं प्रत्येक अपने महल के छज्जा में आरती हाथ में लेकर खड़ी हैं ॥११३॥

रथ्यास्व नु भवन्नामो राजीवायत लोचनः ॥
परिवृत्य विमानस्थः सर्वन्तु कान्त मण्डलम् ॥११४।

सुन्दर सखादिक समाज से घिरे हुए राजिव लोचन श्रीरामजी विमानमें बैठकर गलियोंमें उन सबकी आरतियों का अनुभव कर रहे हैं ॥१४॥

स्वग्रे वार वधूभिश्च कृतं गानं मनोहरम् ॥
विमाने नर्त्तिताभिश्च हावभावाङ्ग दर्शनैः ॥११५॥

आगे २ वैश्याओं का मनोहर गान तथा हाव भाव अङ्ग दर्शनों से विमान में नृत्य हो रहा है ॥१५॥

शृण्वन् शृण्वन् गुणज्ञोसौ सखीभि र्भ्रातृभिः समम् ॥
शनैः शनैः राजगाम महोच्चं पितृ मन्दिरम् ॥११६॥

अपने सखा और भ्राताओं के साथ बड़े गुणज्ञ श्रीराम जी उस नृत्य गान को सुनते देखते धीरे २ बहुत ऊँचे अपने पिताजी के मन्दिर में आ पहुंचे ॥११६॥

क्षम्यतां क्षम्यता मेव मुच्चरत्सु जनेषु च ॥
विमाना दवतीर्य्या थ विवेश भवनान्तरम् ॥११७॥

विमान से नीचे उतर कर जनता को भीड़ में आप लोग क्षमा करें, क्षमा करें—ऐसा कह करके रास्ता पाये महल के अन्दर प्रवेश किये ॥११७॥

इति श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां सुत्तराख्याने पीठकागमनं समाज वर्णनोनाम पञ्च चत्वारिंशत्तमः सर्गः ।४५॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने पीठकागमन समाज वर्णनो नाम पंच चत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४५॥

कक्षान्सर्वान्तथा क्रम्य सखिभ्रातृभिरावृतः ॥
खचि द्रत्नाङ्गणं प्राप्य तत्र स्थं पितरं पुनः ॥१॥

सखा भ्राताओं से घिरे हुए पिता के भवन के सब आवरणों का अतिक्रमण करके भीतर रत्न खचित आंगन में बैठे हुये पिताजी को प्राप्त करके ॥१॥

प्रणम्य भ्रातृभिर्युक्तः सान्निध्य श्चादितः स्थितः ॥
तदा विलम्ब माप्रृच्छ न्पिता हर्षसमन्वितः ॥२॥

भ्राताओं के सहित प्रणाम किया तथा पिताजी से आद्रित होकर बैठे, बड़े हर्षसे भरे हुए पिता जी ने विलम्ब होनेका कारण पूछा ॥२॥

शीलानते क्षणेनाथ तन्मित्र कृतसतादरम् ॥
वर्णितं विधिना सम्य ग्विलम्बस्य हिकारणम् ॥३॥

बड़े सुशील श्रीराम जी ने नम्र दृष्टि से उन पिताजी के मित्र द्वारा किये स्वागत सत्कार के हेतु विलम्ब होने के कारणको विधि पूर्वक सब वर्णन किया ॥३॥

साकं रामेण राजापि मित्र पुत्रं विलोक्य च ॥
तदाद्रितो यथाकारं राम मात्रापि चाद्रितः ॥४॥

महाराज ने भी श्रीरामजी के साथ मित्र के पुत्र को देखकर उसका यथा योग्य आदर किया तथा श्रीराम माता ने भी उसका आदर किया ॥४॥

बहु रात्रीं गतां वीक्ष्यामात्य पुत्रान्यसज्जनैः ॥
अन्यै राम सखीभिश्च साकं स प्रेषितो गृहम् ॥५॥

रात्रि बहुत बीत गई ऐसा देखकर मन्त्री युक्त तथा अन्य सज्जनों और श्रीरामजी के सखाओं द्वारा उस वैश्य कुमार को उसके घर भेजा ॥५॥

आहूय सादरान्माता रामं भ्रातृ समन्वितम् ॥
भोजनाय तदा पृच्छन्नाम्ना लालितकेनच ॥६॥

तत्पश्चात् भ्राताओं के सहित श्रीरामजीको माता जी ने आदर पूर्वक बुलाया उस समय ललितक नाम के रसोइया ने भोजन के लिए पूछा ॥६॥

मिष्ट मिष्ट ममिष्टम्वा युक्त सैन्धव सौंधकम् ॥
मधुरं चातिमिष्टम्वा भुंक्ष्वतात यदीच्छसि ॥७॥

हे तात ! चाहे मीठा ही मीठा अथवा विना मीठेका (दूध मलाई आदि पदार्थ) अथवा नमकीन आदि मधुर वस्तु मधुर वस्तु जो भी आपकी इच्छा हो भोजन कीजिये ॥७॥

श्रुत्वामातु र्वचो रामो वात्सल्यरस स्पन्दितम् ॥
उवाच मातरं मौग्ध्यै र्वचनं प्रीति वर्द्धकम् ॥८॥

माता के वात्सल्य रस से भरे बचन को सुनकर बड़ी मुग्धता पूर्वक श्रीरामजी माता को प्रेम वर्द्धक बचन बोले ॥८॥

वारम्वारं हठान्मान मुपास्थायानुरागतः ॥
प्राशितो मान्य मात्राह तुष्टो नेच्छामि भोजनम् ॥९॥

हे माता ! मान्य माताने मेरेको अपनी गोदीमें बैठाकर बड़े अनुरागसे वार२ हठ करके भोजन कराया है इसलिए मैं सन्तुष्ट हूँ भोजनकी इच्छा नहीं है ॥९॥

एवम्वदति श्रीरामे मात्रा वीक्ष्यालसम्मुखे ॥
वधूश्च शिविकां स्थाप्यभवनाय नियोगितः ॥१०॥

इस प्रकार श्रीराम जी के कहने पर माता ने मुख में आलस्य को देखा। वधुओं को शिविका में बैठा करके श्रीकनकभवनमें भेजा ॥१०॥

प्रणम्य पितरारामो मातृन्सर्वा स्तथापराः ॥
भ्रातृभिश्चा नुव्रजितः सुखजानं समाश्रितः ॥११॥

श्रीराम जी भी माता पिता तथा और सब पूज्य वर्गों को प्रणाम करके भ्रातादि सबके सहित सुखयानमें बैठकर ॥११॥

छत्र चामर हस्तैश्च सेव्यमानोपि सेवकैः ॥
राजपुत्रै रनन्तैश्च शोभतेपरिवारितः ॥१२॥

छत्र, चँवर धारी आदि सेवकों से सेवित होकर अनन्त राजकुमारों से चारों तरफ शोभित॥१२॥

नग्न खड्ग धरैर्भृत्यैः शक्तिकैः परिगामिभिः ॥
स्वर्णदण्डधृतैश्चापि शोभते पूर्व गामिभिः ॥१३॥

नंगी तलवार लिए सेवकों से तथा शक्ति लिये, स्वर्ण दण्ड लिये अगल बगल आगे पीछे सेवकों से सुरक्षित ॥१३॥

गायकैः सोरठं रागं सुषिरे मधुरस्वरैः ॥
शृण्वन् शृण्व नाजगाम भवनं कनकाह्वयम् ॥१४॥

तथा गाने वालों द्वारा सुषिर (वंशी) आदि बाजाओं के ताल पूर्वक मधुर स्वर से सोरठ राग सुनते २ कनकभवन के दरवाजे तक आ पहुँचे ॥१४॥

यामेकक्षणमम्बुजायतदृशीं प्राणप्रिया मङ्कतो ॥
भिन्नां कर्तु मपि क्षमो न विदितः श्नेहाम्बुधी राघवः ॥
तस्या मुत्सुक इत्यलं सपदितान् वन्धू न्सुहृत्सङ्गता ॥
न्विसृ ज्याथ विवेश सौविद गणैः संरक्षितं द्वारकम् ॥१५॥

जिन कमल सदृश विशाल नेत्री प्राण प्रिया को एक क्षण के लिए भी गोदी से अलग करना नहीं सहन कर सकते हैं इस प्रकार प्रसिद्ध स्नेह के समुद्र श्रीराम जी अपनी प्रिया के लिए उत्सुक हुये साथ के भाई और सुहृद जनों को शीघ्र विसर्जन करके द्वार रक्षक गणों से सुरक्षित फाटक के अन्दर प्रवेश कर गये ॥१५॥

अथानु व्रजितं सर्वा भगिन्यश्चापि मैथिली ॥
प्रासाद द्वार पर्यन्त मागता स्ता निवर्त्य च ॥१६॥

सखाओं के विदा होने पर इधर श्रीमैथिली जी भी अपनी सब बहिनियों के साथ कनकभवन के फाटक तक आयीं उसके बाद सब बहिनियों को विदा किया ॥१६॥

वयस्यानां गणैः पार्श्वे छत्रचामर धारिभिः ॥
सेव्यमाना भ्यन्तरायां कक्षायाञ्च समाययौ ॥१७॥

अपनी समानावस्था वाली सखियों ने अगल बगल छत्र चँवरादिक धारण करने वालियों से सेविता श्रीकनकभवन के भीतरी आवरण में आयीं ॥१७॥

दृग्भ्यां राघव सुन्दरेण प्रथमं प्राणप्रिया लिंगिता ॥
बाहुभ्यां तदनु प्रकाम सुखदा मालिग्य तोषं ययौ ॥
अन्याश्चा प्युपलेभिरे ऽभिलषितं रामान्मनोहारिणः ॥
सीतापादरजः प्रसाद फलितं रामस्यकान्ताः स्वकम् ॥१८॥

श्रीराघव सुन्दर जी से दृष्टि मेल हुआ, प्रीतम ने अपनी दोनों भुजाओंसे सुख पूर्वक प्राणप्रिया को आलिंगन करके मनमाना सुख पाकर सन्तुष्ट हुए। अन्य सब रामकान्ता सखियों की भी श्रीसीताजी के चरणरज प्रसादसे फलित अभिलाषायें मन को हरने वाले प्रीतम रामजी से पूर्ण हुईं ॥१८॥

दर्शन स्पर्शनाभ्याञ्च मैथिली रघुनन्दनौ ॥
परस्परं मुदं प्राप्य भुजालम्बि परस्परौ ॥१६॥

परस्पर भुजाओं से आलम्बित (गलबाहीं दिये हुए)श्रीमैथिली रघुनन्दन जू दर्शन स्पर्श द्वारा परस्पर आनन्द को प्राप्त हुये ॥१६॥

ततोभ्यन्तर कक्ष्याया माययौ वनितागणैः ॥
सिंहाशने समास्थाय कृत्वा सम्भाषणं क्वचित् ॥२०॥

उसके बाद अपनी बनितागणों के साथ दोनों जने कनकभवन के भीतर आगे आवरण में सिंहासन पर बैठ करके परस्पर कुछ बात चीत की ॥२०॥

प्रचक्रमेऽ ष्टापदाख्यां क्रीडां सार्द्धं सखीगणैः ॥
स्पर्द्धा प्रवर्द्धकां लाभे कश्चिज्जय पराजये ॥२१॥

बाद को सखिगणों के साथ अष्टापद (चौपड़) नामक खेल को आरम्भ किया। परस्पर जय पराजय की स्पर्धा से प्रतिद्वन्द को प्राप्त हुये ॥२१॥

सारी विहारेतु परस्परश्च जया जयौ प्राप्य प्रियाप्रियौस्तः ॥
सख्य ब्रवीच्चाति गताश्चरात्रि विलोक्य स्वापाय विहस्य वाक्यं २२।

पाशा के खेल में परस्पर जय पराजय की आशा से दोनों प्रिया प्रिय उमग रहे थे, सखियों ने इस द्वन्द को देख कर शयन के लिये हँसकर रात बहुत बीत गई है ऐसा शब्द कहा ॥२२॥

दीपायनाना मचलि प्रकाश मिभ्या यथा मत्त गजोऽम्बुराशिम् ॥
विवेश रामो मिथिलेन्द्र पुत्र्यारते गृहं स्मृद्धि समग्रभाषम् ॥२३॥

मणि दीपावलियों के अचल प्रकाश में हथिनियों के साथ मत्त हाथी जिस प्रकार जलाशय में प्रवेश करता है उसी प्रकार महान् ऐश्वर्य से प्रकाशमान अपने विलास महल के अन्दर श्रीमैथिलीजी के साथ श्रीराम जी प्रवेश किये ॥२३॥

पर्य्यंक मास्थाय तदा सुदम्पती सितोपलौषध्यभि संस्कृतं पयः ॥
पीत्वा समाचम्य मनोज्ञ वीटिकाम् समादतुः सौरभसञ्चितामुदा।२४

भीतर पर्यङ्क पर दोनों सरकार विराजे, सखियों ने मिश्री आदि औषधियों से संस्कृत दूध पिलाया, आचमन कराया, आनन्द मग्न हुई सखियों ने सुगन्धित मनरमणीय बना हुआ पान का बीरा दोनों सरकारों को दिया ॥२४॥

परस्परं भाव मनन्त मुत्सवं निशेवयन्तौ नितरां परस्परौ ॥
अज्ञातिका स्तौ शुभगा सिषेविरे ताबूल बारि व्यजनैःसमन्ततः।२५॥

दोनों सरकार परस्पर अनन्त भावों के उत्सवों को निवेशित कराने करने लगे, उस एकान्तिकी स्थान में अत्यन्त परस्पर आसक्त हुए दोनों सरकार को पान, जल पंखा आदि से कोई अज्ञात सखी सुभगा (बड़ी बड़भागिनी) सब तरह से सेवा करने लगी ॥२५॥

स्वरै रतारै धृंतहस्त वीणाया कृतः स्वलापो मधुरः प्रवीणया ॥
निशीथकार्हं प्रतिराग वर्द्धनः सख्या कयाचिद्धृदि तत्सुखाप्तया २६

उन जुगल सरकार को सुख बढ़े ऐसी हृदय में चाहने वाली कोई चतुरी सखी वीणा को हाथ में लेकर क्षण २ रागों को बढ़ाने वाला रात्रि में शयन के योग्य बिना तार का मधुर स्वर से सुन्दर राग अलाप किया ॥२६॥

शिव उवाच–बाला समस्ता म्परिश्रूय वार्त्तां सा योगमुद्रां प्रतिदीर्घकालम् ॥
योगाय योगेश गतेः स्वनेतु र्योगंसमारभ्य पितुं समीहे ॥२७॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि वह बालिका राजकन्या सुकान्ति नामकी सम्पूर्ण बातों को योगमुद्रा से सुनकर के बड़े २ योगेशों के गति स्वरूप अपने प्रेरक प्रियतम के दीर्घकालिक संयोग को विचार करके प्रियतम की प्राप्ति के लिए अपने पिता के अधीन है ऐसा निश्चय किया, समाधि द्वारा योग की प्राप्ति के लिये स्तुति की ॥२७॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषाया मुत्तराख्याने राजकन्या म्प्रति योगमुद्रा कथनप्रसंगे श्रीअयोध्यायाः वहिप्रदेश वर्णनोनाम षड्चत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४६॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने राजकन्यां प्रति योगमुद्रा कथन प्रसंगे श्रीअयोध्यायाः वहि प्रदेश वर्णनं नाम षडचत्वारिंशत्तमः सर्ग. समाप्तः॥४६॥

राजकन्योवाच—हेकान्त कान्त गुण रूप स्वरूप शील–
लावण्य लोक बल वारिधि वाग्दिनेश ॥
त्वय्येक तान मति मुद्वह मां कृपालो –
देहं त्यजामि नभजामि बरं त्वदन्यम् ॥१॥

श्रीसुकान्ति जी स्तुति करती हैं—हे कान्त ! आप रमणीय गुण, रूप, स्वरूप, शीलवान हैं तथा सुन्दर सुन्दर सुकुमार हैं और बल में तो सर्वलोक को बल देने वाले बल के समुद्र हैं। आपकी वाणी सूर्य के समान प्रकाश करती है। हे कृपालो ! मेरी बुद्धि एक रस आप में लगी है आप मेरे को विवाह कर स्वीकार कर लीजिये नहीं तो मैं शरीर को त्याग दूंगी आपसे अतिरिक्त दूसरे पति की सेवा में नहीं करूंगी ॥१॥

नेता सुखस्य दुःखभिद्भजतामिति त्वां गायन्तिसर्व श्रुतयः स्वमति प्रयुक्ताः॥
भावानुगं त्वमपिते च श्रुति प्रणीतं तत्संस्मरामि सततं स्वसुखायनाथ ॥२॥

दुख से संतप्त हुए जीव जो आपका भजन करते हैं उनको आप ही सुखों को देते हैं ऐसा सभी वेद की श्रुतियाँ तथा आप में बुद्धि लगाये हुये महात्मा लोग गान करते हैं और आप भाव के वश में हैं

यह भी उन महात्मा और श्रुतियों से निश्चित है इसलिए हे नाथ ! मैं अपने सहज स्वरूप के अनुसार आपके सुख के लिये हूँ ऐसा हमेशा अपने को स्मरण करती हूँ ॥२॥

सालोक सद्गति रिहा प्यति दुर्ल्लभाते त्वद्भक्तिहीन मनसा मजितात्मनाम्वै ॥
स्यान्मे नतुष्टि रनये तिविचित्रभावे तद्राग रञ्जितमति स्त्वमसि प्रवीणः ॥३॥

इस लोक में आपकी भक्ति से हीन मन वाले विषयाशक्त जीवों के लिये अन्याय पूर्वक आपकी सालोक्य गति भी अत्यन्त दुर्ल्लभ है। सो यह आपके विचित्र भाव वाली सालोक्य गति प्राप्त होने पर भी मुझे आपके दर्शन के बिना सन्तोष नही देती ॥३॥

नीतास्मि नाथ करुणानिधिना त्वयाहं–
लोकं त्वदंघ्रि परिशीलन तत्पराणाम् ।।
अत्राप्रयोग मपिहन्तु मुदार शील –
त्वंस्या त्त्वमो हि किल प्रेषित योग मुद्रः॥४॥

हे नाथ ! आपके चरण कमलों की सेवा में सावधान हुए भक्तों के लोक में आप ही करुणा करके मुझे लाये हैं। इस आपकी दयालुता के अन्दर मेरा इस प्रकार कहना अनुचित भी है तो भी आप इस अनुचित को दूर करने के लिए कुशल हैं क्योंकि हे उदारशील ! आप ही ने तो योगमुद्रा को भेजा था॥४॥

सामान्यतः सर्वजगतपति स्त्वं विशेषतोऽनन्यगते र्ममास्तु ।
स्वसौभागाया स्मर किंकरीं मां सौशील्य वात्सल्य गुणाधिकायाः ॥५॥

आप सामान्य रूप से तो समस्त जगत के पति हैं विशेष करके आप अनन्य गति जो मैं हूँ मेरे पति हैं। आप मुझे अपनी सौभाग्यवती सुन्दर सौशील्य वात्सल्य आदि गुणों में अत्यन्त चढ़ा बढ़ी अपनी प्रिया की दासी रूप में स्मरण कीजिये ॥५॥

विद्या विद्याभिधेते किल सुख मसुखंदायिके जन्ममृत्यो–
र्नोबैमुश्चन्ति ताभ्यां विरहित कृपकाः कान्तते नन्त यत्नैः ॥
सेयंनस्या ददश्रा मयिननु कथने त्वत्कृषा लक्षितायां –
दोषापत्ति स्तदा स्या त्कृत विदि सुगुणे नाथत्व त्प्राप्तिरोधः ॥६॥

हे कान्त ! आपकी विद्या और अविद्या नाम की सुख और दुख को देने वाली क्या तो दो शक्ति हैं ? आपकी कृपा से रहित जो जीव है वे अनन्त यत्नों को करने पर भी जन्म मरण के चक्र रूप उन दो शक्तियों से नहीं मुक्त हो सकते हैं वह यह आपकी दासी नहीं है आपकी कृपा से लक्षिता जो मैं हूँ इस समय मेरा इस प्रकार बहुत कहना दोषापत्ति है क्योंकि आपके उपकार विरुदावल व सुन्दर गुणों को जानने वाली मेरे लिये आपकी प्राप्ति की रुकावट हो जायगी इस लिए बहुत क्या कहूँ ॥६॥

टिप्पणीः—यह सुकान्ति भगवत् कृपा पात्र वैष्णवों के स्थान को भगवान का लोक मानती है।

प्राप्स्यामि हेकान्त कथं कदात्वां मदालसा घूर्णित पङ्कजाक्षम् ॥
प्राणप्रिया कण्ठ विलम्बि बाहुं चिन्तेति चित्तं परिक्रन्ततिस्म ॥७॥

हे कान्त ! मैं आपको प्राणप्रिया के कण्ठ में लपटे भुजाओं से मदारूण आलस्य से घूमे हुए कमल के सदृश विशाल नेत्र वाले इस प्रकार पलँग पर बैठे हुए कब किस प्रकार आपको प्राप्तकर सकूंगी। यह चिन्ता मेरे चित्त को बेचैन कर रही है ॥७॥

अन्तर्गतं प्राणभृतां समस्तं नवेत्सि किं सर्वगतो न्तरात्मा ।
गुणावलि दोंष मुपैति नाथ ज्ञात्वा न मे शोक मपा करोषि ॥८॥

आप सम्पूर्ण प्राणियों के अन्तरात्मा में रहने वाले सर्वगत होने पर भी क्या मेरे इस दुख को नहीं जानते हैं ? दे नाथ ! यदि आप मेरे शोक को जानकर भी दूर नहीं करते हैं तो आपके समस्त गुणों की पंक्ति दोषों की पंक्ति हो जायगी ॥८॥

गुरूपदिष्टै र्विविधो पचारैर्भाव प्रयुक्तै रपि भाव सिद्धः ॥
मयार्चितो सीन कुल प्रदीप पतिर्भव त्वं जगतीपते मे ॥९॥

हे सूर्य कुल के प्रकाशक ! मैंने गुरू महाराज के उपदेशानुसार विविध उपचारों से तथा नित्य आपकी भावना करने से भी अपने भाव को सिद्ध कर रक्खा है। हे जगत के पति ! आप मेरे से पूजित हैं इस लिये मेरे पति हो जाइये ९॥

जन्मान्तरैर्भावन याभिरेमे त्वया समं राघव राजपुत्र ॥
साक्षाद्भवत्वं स्वगुणानुवृत्ते रक्षिद्वयं मे परितुष्यतीति ॥१०॥

हे राघव राजपुत्र ! मेरे अनन्त जन्मों की भावनाओंसे सिद्ध हुई मैं आपके साथ रमण करूंगी आप अपने गुण विरुदावली के अनुसार मेरे सामने प्रत्यक्ष हो जाइये, मेरे दोनों नेत्र सम्यक प्रकार तृप्त हो जायेंगे ॥१०॥

यदपि गुणगणाना मब्धिराशी न्सुखात्मा-
दिनमणि कुलभानु र्भावनीयो जनानाम् ॥
निमिकुल कुमुदानां चन्द्रिके चित्रशोमे--
तदपि तव गुणानां दीप्ति राशीत् विशेषात् ॥११॥

यद्यपि सूर्यकुल रूप कमल वन को खिलाने के लिये सूर्य के सदृश प्रियतम जू भक्तों की भावना करने योग्य समस्त गुण गणों के समुद्र यद्यपि सुखमयी आत्मा हैं तो भी हे निमिकुल कुमुद चन्द्रि के श्रीकिशोरी जी ! श्रीप्रियतम जू से शृङ्गार द्वारा चित्रित अङ्ग शोभिता हे सीते ! आपकी गुण पंक्तियों का प्रकाश श्रीप्रियतम जू की गुणपंक्तियों से विशेष है ॥११॥

यया स्वकीयै र्गुण रूप रत्नै क्रीतः स्वकान्तो नृप नाथपुत्रः ॥
मनोरथान् सिद्धतु सा मादीया न्नामप्रयुक्ता न्मिथिलेन्द्रपुत्री॥१२॥

जिसने अपने रूप गुण रूपरत्नों से अपने कान्त चक्रवर्ति कुमार को खरीद लिया है वे मिथिलेन्द्र पुत्री मेरे नाम से प्रभावित मनोरथों को सिद्ध करें ॥१२॥

श्रीराघव प्राणपतीत्सुकानां श्रीजानकी पाद रजः प्रपत्तिम् ॥
विहाय तत्सिद्धिकरं नचान्य त्कालत्रयेलोक त्रयेपि कस्स्यात्॥१३॥

श्रीराघव जू को पति रूप में चाहने वाले भक्तों के लिए श्रीजानकीचरण रज को छोड़ करके अन्य उपायों से तीनों काल तीनों लोकों में भी श्रीराम जी की प्राप्ति के लिए कोई उपाय नही है ॥१३॥

रामाय सत्साधनमेक सीता तस्यै परं साधनमस्ति रामः ॥
एवम्प्रशक्ते परदेवतेद्वे परस्परं सिद्धिप्रदे भजामः ॥१४॥

श्रीराम जी के लिए सुन्दर साधन श्रीसीता जी हैं और श्रीसीता जी के लिए परम सुन्दर साधन श्रीराम जी हैं इस प्रकार के विधान पर परस्पर सिद्धि देने वाले परात्पर देवता श्रीजुगल सरकार को हम भजते हैं ॥१४॥

अस्त्वेव सन्मङ्गल मोदमूलं त्वत्पाद पद्मं मिथिलेन्द्र पुत्रि ॥
भर्त्तुः कराकल्पित लक्तचित्रं पवित्र पोतं भजतां भवाब्धौ ॥१५॥

संसार समुद्र में पड़े हुये जो जीव भजन करते हैं उनके लिये हे मिथिलेन्द्र पुत्री ! सुन्दर मङ्गल और आनन्द के मूल प्रियतम के करकमल से महावर आदि रचनाओं द्वारा चित्रित आपके चरणकमल ही पवित्र जहाज होवें ॥१५॥

कण्ठे विधायात्मभुजां स्वभर्त्तु र्मध्याह्नके भोजको त्तर च ॥
स्वापायने मञ्च समाश्रितायाः सुकल्पवीटिं वर नाग वल्याः॥१६॥

अपने प्रियतम के कन्धे में अपनी भुजा को डाली हुई दोपहर भोजन के बाद मध्याह्न शयनकुञ्ज में शयन करने के लिये पलँग के पास एक मंच में बैठी हुई आपके लिये मैं सुन्दर नागवल्ली वीरी की रचना करके ॥१६॥

विम्वाधरा रक्त विविक्तरागे मुखे प्रदा स्यामि कदा तवाहम् ॥
इत्याभिलाषो हृदये सदामे यदा नुगृह्णासि तदैव सिद्धिः ॥१७॥

विम्वाके फलके समान अलगर दोनों सरकारके लाल अधरहैं जिनके इस प्रकार आपके मुखमें मैं कब वीरा देऊगी, यह मेरी अभिलाषा हमेशा हृदय में रहती है, जब आप कृपा कर स्वीकार करेंगी तभी सिद्धि होगी ॥१७॥

नकामुकी ते परिचारिका वै सम्बन्धमात्रं परिकामयेहम् ॥
कान्ते रमन्तीं परशीलयेत्वां ताम्बूल वारि व्यजनादिभिश्च ॥१८॥

मैं कामुकी नहीं हूँ, आपकी दासी ही हूँ, केवल सम्बन्ध मात्र की मेरी कामना है। प्रियतम के साथ रमण करती हुई आपकी मैं पान जल आदि सेवा उपचारों से सेवा करूंगी ॥१८॥

त्वत्पाद पाथोज पराग सिद्धिं भजे न भाग्यं किल स्वात्म निष्ठम्॥
इष्ट प्रदे राघवपट्ट कान्ते स्वेष्टं मदीयं तव पाद सेवा॥१९॥

मैं केवल आपके चरण कमल पराग की सिद्धिका ही भजन करती हूँ अपने प्रभाव ज्ञान या भाग्य का भजन नहीं करती हूँ। हे मनोरथ को देने वाली श्रीराघव जी की पटरानी ? मेरी इष्ट (अभिलाषा) तो आपकी चरण की सेवा ही है ॥१९॥

गन्धर्व यक्षोरग किन्नराणां वेताल विद्याधर दिक्पतीनाम् ॥
देवाप्सरो भूमिभुजां च पुत्र्यो रामे प्रकामं नितरां रमन्ते ॥२०॥

गन्धर्व, यक्ष, नाग, किन्नर, वेताल, विद्याधर, दिग्पति, देवता, अप्सरायें राजा इन सब लोगों की पुत्रियाँ श्रीरामजी में निरन्तर मनमाना सम्यक प्रकारसे रमण करती हैं ॥२०॥

तत्रास्ति तासां तपसां फलम्वा किमस्ति तासामति रूपसम्पत् ॥
तत्कारणं ते मिथिलेन्द्र पुत्रि कृपा च शीलश्चह्युदारता च ॥२१॥

इस प्रकार की व्यवस्था में क्या उन सबकी तपस्या का फल है अथवा क्या उन सबकी रूप सम्पत्ति ज्यादा हैं? मेरी समझ से तो हे मिथिलेन्द्र पुत्री! आपको कृपा, शील व उदारता ही उन सबके सुख का कारण है ॥२१॥

भविष्य योगोहि भजत्कृपालौ स्यान्मे नरामे खलु तस्य तत्वं ॥
तस्योपदिष्टा किल योगमुद्रा दौर्ल्लभ्यसिद्धिः कथमेव तर्हि ॥२२॥

आप दोनों कृपालुओं का भजन करते हुए मेरा भविष्य में योग होगा क्या? उस भ न का तत्व निश्चय करके राम जी में नही है? (अर्थात् अवश्य है। क्योंकि उन्हीं श्रीराम जी की भेजी हुई योग-मुद्रा क्या तो थी. तब मेरे लिए यह सिद्धि दुर्लभ कैसे हो सकती है? ॥२२॥

पूर्णाहिते राघवपट्ट कान्ते कृपा तिथी चेद् गणितेन याता ॥
कथं नु तावच्च मनोरथेन्दुः पूर्णोभवेन्मे कलया कृपालो ॥२३॥

हे राघव पटरानी जी! मैंने भजन रूप ज्योतिष द्वारा गणना करके आपकी कृपा रूप कलाओं से पूर्ण क्यों नहीं होगा? (अर्थात अवश्य होगा) ॥२३॥

त्व सर्व देश समयेष्वपि विद्यमानः--
सर्वान्त रस्थ मपि त्वां श्रुतयो गृणन्ति ॥
त्वा मर्थयन्ति खलु स्वात्म विदाम्वरिष्टा-
भावाश्रयं नृपकिशोर मनोज्ञ मूर्तिम् ॥२४॥

हे प्रियतम! आप सब देश में सब समय में सब जगह निवास करते हैं आप सबके अन्तःकरण में रहने वाले हैं—ऐसा भी आपको श्रुतियाँ गिड़गिड़ाती हैं (कहती हैं) और आत्मतत्त्व वेत्ता विद्वानों में श्रेष्ठ लोग भी मन रमणीय मूर्ति किशोर अवस्था वाले राजकुमार भाव के अधीन हैं—ऐसा निश्चय करके आप ही की प्रार्थना करते है ॥२४॥

श्रीशिव उवाच--इत्थं योग स्तवेनाथ रामं संस्तूयनिर्भरा ॥
प्रेम्णा निपतिता भूमौ चेतसा तल्लयं गता ॥२५॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती! इस प्रकार सुकान्ति ने योग समाधि में श्रीरामजी की स्तुति करके चित्त से श्रीराम जी में तल्लीन हुई प्रेम विभोरता से पृथ्वी पर गिर पड़ी ॥२५॥

श्रीयोगमुद्रोवाच—विलशसिरघुनायके नायके नवल गुणे नर राज राजपुत्रे ॥
नच कुरु शुभगे वियुक्त भावं मम वचने हि तत्तोषदानुवृत्ते ॥२६॥

श्री योगमुद्रा बोली कि हे सुभगे! नवीन नायक के योग्य उत्तम गुण वाले चक्रवर्ति कुमार श्री

रघुनाथ जी के साथ तुम अवश्य विलास करोगी, अपने भावों को इस प्रकार विक्षिप्त मत करो । मेरे बचनों का अनुशरण करना ही तुमको सम्यक प्रकार सन्तोष देगा ॥२६॥

सम्बोधितापि वचनै रेवं सा योगमुद्रया ॥
जजागार नवा कन्या योगमुद्रापि विस्मिता ॥२७॥

इस प्रकार योगमुद्रा ने सुकान्ति को सम्बोधित करके जगाया भी पर वह राजकन्या न जागी, योगमुद्रा भी आश्चर्य चकित हो गयी ॥२७॥

नदृष्टा वहु कालाच्च मात्रा तस्या हृदि स्मृता ॥
कुत्रवालायोगमुद्रा कुत्रेति प्रति पृच्छति ॥२८॥

सुकान्ती की माता ने बहुत काल से मैंने कन्याको नहीं देखा-ऐसा हृदयसे स्मरण करके दासी से पूछा कि वह बाला सुकान्ति और योगमुद्रा कहां है ? ॥२८॥

अन्वीक्षन्ति तदा दास्यो यत्र तत्र गृहान्तरे ॥
कयाचि त्तत्र मागत्य दृष्टा निपतिताभुवि ॥२६॥

माता के पूछने पर दासियां जहां तहां घरों के अन्दर खोजने लगीं किसी दासी ने उस स्थान पर आकर के भूमि पर वेहोश पड़ी सुकान्ति को देखा ॥२६॥

तयातु कथितं तथ्यं श्रुत्वा माता पि विस्मिता ॥
आगत्य च दृष्ट्वा प्येनां योगमुद्रां पप्रच्छ सा ॥३०॥

दासी से ठीक समाचार सुनकर माता जी भी विस्मित हो गयी और वहाँ पर आकर स्वयं देखा और योगमुद्रा से पूछा ॥३०॥

वद सत्यं योगमुद्रे कथं रुष्टाहि मेसुता ॥
त्वयाकिं कथितं व्यङ्गं मुखरासि स्वभावतः ॥३१॥

हे योगमुद्रे ! सत्य बताओ मेरी यह कन्या किस तरह से रुष्ट होगयी, तुम बहुत बोलने वाली हो, तुमने स्वाभाविक इससे क्या व्यंग कह दिया है ॥३१॥

मात नं कथितं व्यंगं कथितं तु मया यदि ॥
अस्याः प्रश्नोत्तरेणैव सदृशं कथितं यथा ॥३२॥

योगमुद्रा बोली कि हे मां ! मैंने इनको व्यंग कुछ नहीं कहा, यदि कहा तो इसके प्रश्नोंके सदृश ही उत्तरों को कहा ॥३२॥

तद्वृत्तं दूरदेशीयं न शीघ्रं बोधयिष्यसि ॥
परन्तुबोधयिष्यामि धैर्येण जननिसृणु ॥३३॥

वह चरित्र दूर देशका है आप उसको शीघ्र न समझ सकेंगी, परन्तु हे माता! आप धैर्य धारण करके सुनो ता मैं समझा सकती हूँ ॥३३॥

श्रीशिव उवाच—अत्र श्रीकनकागारे रत्न पर्य्यङ्क संस्थितौ ॥
सखीनां मण्डलेसीता रामचन्द्र मनोहरौ ॥३४॥

श्रीशंकर जी बोले कि हे देवि ! इधर वह सुकान्ति की स्तुति, श्रीकनकभवन के शयनकुञ्ज पर्यङ्क में सखियों के समाज में बैठे हुए श्रीसीताराम जी मनोहर शोभित हो रहे थे ॥३४॥

॥ तत्कृता या नुति र्दिव्या दिव्यकन्या स्वरूपिणी ॥
तत्रागत्याञ्जलिं बध्द्वा तयो रास्ये लयं गता ॥३५॥

उनके सामने गयी दिव्य कन्या के स्वरूप से वह दिव्य स्तुति हाथ जोड़कर श्री जुगल सरकार की सुकान्ति के सदृश स्तुति करके श्रीजुगल सरकार के श्रीमुख में प्रवेश कर गयी ॥३५॥

॥ एतच्च कौतुकं दृष्ट्वा पृच्छन्तिस्म परस्परम् ॥
त्वयदृष्टं मयैवैत त्कथ्यतेव परस्परम् ॥३६॥

सखियों ने यह कौतुक जब देखा तब आपस में पूछने लगीं कि यह दृश्य तुमने भी देखा कि केवल मैंने ही देखा इस प्रकार कह कर आपस में सबने निश्चय पाया ॥३६॥

॥ सर्वा अपि च श्रीरामं हृदि विस्मय दायकम् ॥
॥ चरित्रं प्रष्टु मिच्छन्ति न च पृच्छन्ति लज्जया ॥३७॥

सब मिल करके श्रीराम जी से भी यह विस्मयदायक चरित्र को हृदय से पूछना चाहती थीं पर लज्जावश न पूछ सकीं ॥३७।

स्वात्मानं प्रति जिज्ञासां तासां नेत्रानुभावतः ॥
विदित्वा रामचन्द्रेण कृतं चाभ्दुत कौतुकम् ॥३८॥

आपस में ही जिज्ञासा करती हुई सखियों के नेत्र अनुभावों से जानकर श्रीरामचन्द्रजी ने एक अद्भुत कौतुक किया ॥३८॥

या पूर्वं राजकन्याया नुतिः स्वास्ये लयंगता ॥
सा सर्वासां सखीनाञ्च मण्डलेप्रकटी कृता ॥३९॥

जो स्तुति राजकन्या के रूप में श्रीसीतारामजी के मुख में प्रवेश कर गयी थी उस स्तुति रूपा-सखी को सब सखि मण्डल के बीच प्रकट कर दिया ॥३९॥

बर्णशक्त्या वर्ण गर्भं तयाविरह मार्जवम् ॥
स्वरेण करुणा ढ्येन कृतं गानं मनो द्रवम् ॥४०॥

उस स्तुति ने स्वरूपा शक्ति से फिर राजकन्या का रूप धारण करके बड़ी सरलता पूर्वक करुणामयी स्वर से विरह से मन को द्रवित करने वाला गान किया ॥४०॥

श्रीरामस्यापि जानक्याः सर्वासां हृदयं तदा ॥
द्रावितं राजकन्याया विरहा तिशयेन च ॥४१॥

उस समय श्रीराम जानकी जी का भी सब सखियों का भी हृदय उस राजकन्या के विरह में अतिशय द्रवित हुआ ॥४१॥

उद्वाहयित्वा मेनाथ शीघ्रमेतां त्वमानय ॥
इत्थं श्रीरामचन्द्रोपि प्रेरितः सीतया स्वयम् ॥४२॥

हे नाथ ! इस राजकन्या को विवाह करके आप शीघ्र ले आइये इस प्रकार श्री सीता जी ने स्वयं श्रीरामचन्द्र जी को प्रेरणा भी किया ॥४२॥

श्रीशिवउवाच–अथात्रयोगमुद्रापि मातरं श्रावदद्यथा ॥
तच्छृणु प्रवरं देवि स्वात्मबोध प्रकाशकम् ॥४३॥

श्री शंकर जी बोले कि हे पार्वती ! इधर योगमुद्रा ने भी माता जो कहा उसको भी तुम सुनो । हे देवि ! वह प्रसङ्ग भी आत्मा को ज्ञान–प्रकाश देने वाला है ॥४३॥

योनमुद्रोवाच–एकाकिनी मातरत्र स्थितांदृष्ट्वा विचिन्तिताम् ॥
उन्मनाश्चापि ह्येनाश्चाहं सान्निध्यंसमागता ॥४३॥

योगमुद्रा बोली हे माता ! यह सुकान्ति को इस एकान्त स्थान में मैंने चिन्ता में पड़ी देखा इसका मन कुछ खिन्न था । मैं समीप में आयी और पूछा कि ॥४४॥

किं विचारयसी त्येषां मया पृष्टास्वभावतः ॥
तदा नयापि कथितं स्वेच्छितं हृदये यथा ॥४५॥

तुम क्या विचार कर रही हो मेरे इस प्रकार पूछने पर इसने भी स्वाभाविक जो कुछ भी इसके मन में था। जैसा का तैसा कह दिया ॥४५॥

स्वात्म रूप कुलार्हश्च वरम्प्राप्स्याम्यहम्कथम् ॥
उभयं ह्युत्तमं लोके नारीणां दुर्ल्लभं महत् ॥४६॥

मेरे रूप और कुल के अनुकूल वर को मैं कैसे प्राप्त करूंगी इन दोनों का उत्तम होना लोक में स्त्रियों के लिये अत्यन्त दुर्लभ है ॥४६॥

अभिनंद्य च तद्वाक्यं दर्शित श्चोत्तमोबरः ॥
रामो राजकुमारोसौ जगन्नायक नायकः ॥४७॥

इनके प्रश्न की प्रशंसा करते हुये मैंने उत्तम वर इसको दिखा दिया । समस्त जगत के नायक चक्रवर्ति कुमार श्रीराम जी को नायक रूप में इसको बताया ॥४७॥

जन्मान्तरैः साधितश्चाऽन यापि तपसा ब्रतैः ॥
तदेवहि स्मृतिर्जाता सानुरागतया हृदि ॥४८॥

इसका भी अपने जन्मान्तरीय तपस्या व्रतों से साधित अनुराग हृदय में जग आया ॥४८॥

पुनः पृष्ट श्च तद्वृत्तं समग्रन्नाम रूपतः ॥
परिवार समेतस्य मयापि कथितंयथा ॥४९॥

इसने फिर सम्यक प्रकार नाम रूप परिवार समेत उस बृतान्तका प्रश्न किया मैंने भी जैसा का तैसा कह दिया ॥४९॥

श्रुत्वा सर्वं विधानेन रामं राजीव लोचनम् ॥
स्वकान्तं तां संस्तूयाथ प्रेम्णेयं पतिताभुवि ॥५०॥

सम्यक प्रकार विधान में राजिव लोचन रामजी का बृतान्त सुना उसके बाद अपने कान्त रूप में उनकी स्तुति की उसी प्रेम से विभोर होकर यह पृथ्वी पर गिर गयी है ॥५०॥

शिवउवाच--श्रुत्वेति विस्मिताभूत्वा योगमुद्रा स्पप्रच्छसा ॥

कथं जानासि त्वं वाला जन्मतोसि गृहेहिमे ॥५१॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि यह सुनते ही माता विस्मित होकर फिर योगमुद्रा से पूछने लगी कि हे बाले ! तुम तो जनम से ही हमारे घर में रहती हो फिर यह वृत्तान्त कैसे जानती हो ॥५१॥

यथार्थंवद कल्याणि देवता सि न मानुषी ॥

इत्युक्ता योगमुद्राया श्चरणे शिरसानता ॥५२॥

हे कल्याणि ! तुम मनुष्या नहीं हो कोई देवी मालूम होती हो, ठीक २ बताओ—इतना कहकर योगमुद्रा के चरणों में सिर नवाया ॥५२॥

तदा तस्यै स्वयश्चापि कथितं योग मुद्रया ॥

इत्यन्तरे सापि कन्या जजागार समाधितः ॥५३॥

उस समय योगमुद्रा ने भी माता के लिये सब समाचार स्वयं कहा इसी बीच में वह कन्य सुकान्ति भी समाधि से जाग गयी ॥५३॥

अङ्के प्रस्थाप्य तांमाता हस्तौधृत्वा च मस्तके ॥

दुःखितासि कथं पुत्रि वाञ्छितंते भविष्यति ॥५४॥

माता ने उसे अपनी गोदी में बैठाया, मस्तक पर हाथ दिया, हे पुत्री ! दुखी क्यों होगयी ? तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा ॥५४॥

आश्वास्य वचनै पुर्त्रीं योगमुद्रां पुनश्च सा ॥

समब्रवीत्तु जननी वदास्याः यद्भविष्यकम् ॥५५॥

इस प्रकार बचनों से पुत्री को आश्वासन देकर फिर योगमुद्रा से माता बोली कि इस कन्या के भविष्य को भी बताओ ॥५५॥

विश्वास स्त्वयि मे साध्वि मन्येहं देवतां हित्वाम् ॥

प्रशंस्य श्चातिभाग्यम्मे जनिष्ठा यद्गृहे शुभे ॥५६॥

हे साध्वी ! मैं तुमको देवता मानती हूँ, मेरा तुममें विश्वास है । हे शुभे ! तुमने हमारे ही घर में जन्म लिया है, इसलिए हमारा धन्य भाग्य है हम प्रशंसनीय हैं ॥५६॥

उभेच पुण्यकृत्पूर्वं गूढ रूपे नमामहे ॥

अस्या कार्य्यं त्वदाधीनं त्वमेव शरणं शुभे ॥५७॥

तुम दोंनों पूर्व जन्म के महान पुण्य किये हुये फल रूप में छिप कर प्रगट हुई हो । इस कन्या का समस्त कार्य तुम्हारे अधीन है । हे शुभे हम तुम्हारी शरण में हैं ॥५७॥

इत्येवं वचनं श्रुत्वा कन्या मातुः शुभाक्षरं ॥

अब्रवी द्योग मुद्रा तां तस्याः कार्य्य परायणा ॥५८॥

कन्या की मां के शुभ अक्षरों में इस प्रकार बचन सुनकर उसके कार्य में परायण हुई योगमुद्रा बोली ॥५८॥

योगमुद्रोवाच--श्रूयतां वचनं मातः सत्यं वक्ष्यामि त्वां यथा ॥
सर्वेश्वरस्य रामस्य शक्तिरेव मनोभवा ॥५६॥
अस्या हेतोवतीर्णाहं गृहे तव तदिच्छया ॥
विवाहो ध्रुव मस्याश्च श्रीरामेण भविष्यति॥६०॥

हे माता ! सत्य वचन आपसे कहती हूँ सुनो "मैं सर्वेश्वर श्रीरामजीकी मनसे उत्पन्न हुई कृपा शक्ति हूँ, उन श्रीराम जी की इच्छा से इस कन्या के ही लिए तुम्हारे घर में प्रकट हुई हूँ इसका विवाह श्रीराम जी के साथ होना निश्चित है ॥५९-६०॥

अनया राधिता एव जपेन तपसा व्रतैः ॥
अद्य जन्म फलं तेषां प्राप्नोति नात्र शंशयः ॥६१॥

क्योंकि इसने पूर्व जन्म से ही तपस्या व्रतों से आराधना कर रक्खी है सो इस जन्म में उन व्रतों का फल प्राप्त करेगी इसमें संशय नहीं है ॥६१॥

एतावच्च निमित्तम्मे यास्याम्यद्य स्वयं पदम् ॥
मातः पुत्र्य श्चतस्रोपि रामाय दातु मुद्यताम् ॥६२॥

बस मेरा इतना ही काम था अब मैं अपने धाम को जाती हूं । हे माता आप इन चारों कन्याओं को श्रीराम जी के लिये देने का उद्योग करें ॥६२॥

राज्ञे सर्वं प्रतिश्रुत्य सुकान्त्यामे प्रयोगिकम् ॥
पुरोधसं प्रेषयित्वा चायोध्यां कार्यमावह ॥६३॥
एतदुक्त्वा योगमुद्रा समास्वस्य सुकान्ति काम् ॥
विद्युद्विवगताकाशंसुकान्ति रपि विस्मिता ॥६४॥

मैंने सुकान्ति के लिये जो निश्चय बता रक्खा है आप महाराज को इस बात को सुना करके श्री अयोध्या जी में पुरोहित को भेजकर कार्य को निश्चित करें—इतना कहकर योगमुद्रा सुकान्ति को आलिंगन करके बिजलीकी तरह चमक कर आकाशमें चली गयी यह देखकर सुकान्ति भी विस्मित होगई॥६४॥

आश्रावि योगधीराय राज्ञे यद्योग मुद्रया ॥
राज्ञापि कथितं पुत्र्याः विवाहाय निमित्तकम् ॥६५॥

महारानी ने भी योगमुद्रा का यह सब चरित्र महाराज योगधीर जी को पुत्री के विवाह निमित्त सब कह सुनाया ॥६५॥

श्रुत्वा तद्योगधीरोसौ श्रीरामेभावयोगिकः ॥
सान्निध्यं हृदये दृष्ट्वा स्वस्याः भक्तेः फलोदयम् ॥६६

यह सुनकर राजा योगधीर भी श्रीराम जी में भाव योग करने वाले अपनी भक्ति का फल उदय होना अत्यन्त निकट है ऐसा हृदय में निश्चय किये ॥६६॥

जन्मान्तरीय वृत्तान्तं राज्ञि प्रति सुवर्णितम् ॥
यथासत्सङ्ग सम्प्राप्तिः जाता भक्ति र्यथोत्तमा ॥६७॥

अपने जन्मान्तरीय चरित्र को भी जिस प्रकार सतसंग प्राप्त हुआ था, उत्तम भक्ति उत्पन्न हुई थी सब रानी को वर्णन करके सुनाया ॥६७॥

राजोवाच--जन्मानि सप्तमे राज्ञि लोकेसुकृत संश्रयैः ॥
अभूद्राजकुले तत्र त्वञ्चासी त्सहधर्मिणी ॥६८॥

राजा बोले हे रानी! लोक में सुकृत्य आश्रय किये सात जन्म बीत गये हैं मैं पूर्व जन्म में भी राजकुल में ही उत्पन्न हुआ था आप ही मेरी सहधर्मिनी थीं ॥६८॥

जन्मनः सप्तमस्याद्य वार्त्ताम्वदयामि तच्छृणु ॥
प्रभावती पुरीतत्र राजधानी सुभावनी ॥६९॥

अब मैं अपने सातवां जन्म की बात कहता हूँ सुनो एक प्रभावती नगरी में सुभावनी नाम की राजधानी थी वहां पर ॥६९॥

गते तु द्वापरे प्राप्ते कलौ मे जन्म चाभवत् ॥
तथापि भगवद्भक्त्या सतां संसर्गतो मया ॥७०॥

द्वापर के अन्त कलियुग के प्रारम्भ में मेरा जन्म हुआ था तो भी सन्तों के संसर्ग से, मेरी भगवद्भक्ति से ॥७०॥

राज्यं धर्म्मेण नीत्यापि कृतं यज्ञादि सत्कृतैः ॥
त्वयि चैकात्मजे जाते विनीते राज विद्यया ॥७१॥

धर्म पूर्वक नीति युक्त राज्य पालन करते हुए यज्ञादि सत्कृत्यों को किया, आपसे मेरा एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसके राजविद्या में निपुण होने पर ॥७१॥

राज्यभारन्निधायाथ त्यक्तभोगो वभू वच ॥
त्वयासमम्पुन र्देवि गृहीत व्रत आत्मवान् ॥७२॥

मैंने राज्यभार उसको दे दिया और मैं भोगों से निवृत्त होकर के मनस्वी व्रत लेकर तुम्हारे साथ ॥७२॥

व्राह्मणैश्च प्रजावृद्धै र्जगाम तीर्थ दर्शने ॥
यथा शास्त्र विधानेन कृत्वा तीर्थाटनं पुनः ॥७३॥

बहुत से ब्राह्मण तथा बृद्धजनों के साथ तीर्थ दर्शन के लिए शास्त्र विधान के अनुसार गया, तीर्थाटन किया ॥७३॥

सहचारी जनान्प्रेष्य त्वयैकया समास्थितः ॥
गोदावर्य्या स्तटे दिव्ये ह्याश्रमोस्ति महामुनेः ॥७४॥

फिर अपने साथ के जनों को घर भेज दिया। केवल एक तुम्हारे साथ गोदावरी नदी के तट पर निवास करने लगा वहां पर एक महामुनि अगस्त्य जी का एक दिव्य आश्रम था ॥७४॥

अगस्त्यस्याप्त सिद्धे श्च तत्रोवास हरिं भजन् ॥
व्यतीते वहु वर्षेतु भजनस्य फलोदये ॥७५॥

पर्याप्त सिद्ध श्रीअगस्त्यजी भगवानका भजन करते हुए वहाँ वास करते थे मैं भी वहां रहते बहुत वर्ष बीते मेरे भजन का फल उदय होने समय ॥७५॥

एकदा स मुनि स्साक्षा त्समीपे मे समागमत् ॥
ज्वलदग्नि रिवात्मानन्द शर्यं श्च पठन्मुखे ॥७६॥

एक बार वे मुनि साक्षात् मेरे समीप आपहुंचे। जलती हुई अग्नि ज्वाला सदृश दर्शन दिये मुख में पाठ करते हुए ॥७६॥

सीतारामेति रामेति श्रीरामेति पुनः पुनः ॥
प्रणम्य चाशनन्दत्त मज्ञात्वापि मया ततः ॥७७॥

सीताराम राम श्रीराम बार बार कहते हुए मेरे आसन पर आये, मैंने प्रणाम किया, आसन दिया, मैंने उनको पहिचाना भी नहीं ॥७७॥

कृताञ्जलि पुटं दृष्ट्वा मान्तिष्ठे त्यपि सोऽब्रवीत् ॥
कृत प्रश्ने मुनौसर्वंह्यात्म तत्व न्निवेदितम् ॥७८॥

फिर भी दीन होकर हाथ जोड़कर पास में खड़ा था वे मुनि इस प्रकार मेरे को देखकर मुझसे बैठो—ऐसा कहे और मैंने बहुत से प्रश्न मुनिजी से किये, मुनि ने आत्म तत्व मुझे बताया ॥७८॥

श्रुत्वा सोपि महा तेजाः धन्योसिमयि प्रोक्तवान् ॥
तम्प्रसन्नम्मया ज्ञात्वात त्स्वरूपे यथार्थकम् ॥७९॥

मेरे प्रश्नोंको सुनकर महातेजस्वी ऋषि भी राजन् तुम धन्यहो-ऐसा मुझसे कहे। मैंने मुनिजी को प्रसन्न जानकर मुनि जी के सामने यथार्थ स्वरूप में यथार्थ प्रश्न किया ॥७९॥

कृतम्प्रश्न न्तदा तेना गस्त्योह मिति ज्ञापितम् ॥
श्रुत्वा नामंपरम्ख्यातम्म यात्मानम्पर म्मतम्॥८०॥

मेरे प्रश्न को सुनकर मुनि जी ने मैं अगस्त्य हूँ ऐसा बताया। इस परम प्रसिद्ध नाम को सुनकर मैंने अपनी आत्मा को धन्य माना ॥८०॥

कृत्वा दण्ड प्रणामश्च मुनेः पादाव्जमास्पृसम् ॥
दण्डवत्पतितम्भूमौ गृहीत्वातु करम्पुनः ॥८१॥

दण्डवत प्रणाम किया, मुनि के चरणकमलों का मार्जन किया। अन्तिम में मैं पृथ्वीमें दण्ड की तरह गिर गया मुनि मेरे हाथ को पकड़ कर फिर ॥८१॥

उत्थाप्यमांतदा श्लिष्य मुनि रग्रे निवेश्य च ॥
वरम्वृणोष्व पुत्रेति प्रसन्नोह मथाब्रवीत् ॥८२॥

उठाये, मेरे को गले से लगाये, अपने आगे बैठाये। हे पुत्र मैं प्रसन्न हूँ वरदान मांगों ऐसा कहे ॥८२॥

तदोन्मितम्मया सर्व न्नाशयुक्तन्तु प्राकृतम् ॥
तुभ्यंयद्रोचते नाथ यद्धयायसि निरन्तरम् ॥८३॥

तब मैंने अनुमान किया कि सबतो नाशवान् प्राकृत ही है। हे नाथ ! आपको जो रुचिकर हो, जिसका निरन्तर ध्यान करते हैं ॥८३॥

तन्मेदेहिमहादातः मयैवंयाचितो मुनिः ॥
दीनं खत्तत्व हीनम्मांयाचकं सोप्युदारधीः ॥८४॥

हे महान दाता ! वही मुझे दीजिये। इस प्रकार जब मैंने मुनि जी से याञ्चा की तब दीन, सत् तत्व से हीन इस प्रकार याचक मुझको जानकर उदार बुद्धि मुनि भी ॥८४॥

मुनी एडगल्पः श्रीमान्विलोक्य प्रणयान्वितम् ॥
सर्वस्वं हि यदात्मीयंरामतत्वाव्ययम्परम् ॥८५॥

अपने सिर को हिलाये और मेरे को प्रणय में भरे हुये देखकर अपने प्रभाव से मुनि समूह को छोटा करने वाले श्रीमान् अगस्त्य जी अपने सर्वस्व आत्मीय परम अव्यय श्रीराम तत्व को ॥८५॥

संस्कृत्य निहितन्तेन मयि सर्वाति दुर्ल्लभम् ॥
त्वञ्चापि संस्कृता तेन संस्कारेण कृपालुना ॥८६॥

मेरा पञ्च संस्कार करके उस सबको अति दुर्ल्लभ तत्व मेरे में निहित किये और फिर हे देवि ! उन कृपालु अगस्त्य जी ने तुम्हारा भी संस्कार किया ॥८६॥

स्त्री बालाना न्नाधिकार स्तत्व ज्ञाने हि सर्वथा ॥
पुनर्भावात्मकं शास्त्रम्प्रख्यातम्मुनिना तदा ॥८७॥

तत्व ज्ञान में स्त्री और बालकों का सर्वथा अधिकार नहीं है तथा श्रीअगस्त्य जी ने कुछ भावात्मक शास्त्रों को भी कह करके सुनाया ॥८७॥

वात्सल्ये मे रुचिं ज्ञात्वा स दत्तो हर्षितेनवै ॥
मयारामे राजपुत्रे सर्वाराध्ये परे प्रभौ ॥८८॥

सर्वाराध्य परात्पर प्रभु राजपुत्र श्रीरामजीमें मेरी बात्सल्य रुचि जानकर प्रसन्न हुए ऋषि उसी अनुकूल उपदेश किया ८८॥

कृतज्ञामात्रि भावम्वै गुरुणापि शुभम्मतम् ॥
रामात्मक ञ्च सर्वंहि रामः सर्वात्मकस्तथा ॥८९॥

मैंने जो सर्वात्मक तथा जो सबरूप से है राम जी उनमें जामाताभाव किया तो गुरू महाराज उसको अच्छा सम्मत् दिया ॥८९॥

ईश्वराणामीश्वरोपि रामो दाशरथि स्स्वयम् ॥
माधूर्य्यभाव वश्योपिभावै राम स्सदैवहि ॥९०॥

यद्यपि श्रीदाशरथी रामजी ईश्वरों के भी ईश्वर हैं माधुर्यभाव के वश में हो करके सबके भाव से सम्यक प्रकार सदैव सबको प्राप्त होते हैं ॥९०॥

इति ज्ञानम्मयादत्त न्निधाय हृदये स्वयम् ॥
श्रीरामं सीतया युक्तं याव ज्जीवम्भजायतम् ॥६१॥

इस प्रकार श्री गुरू महाराज ने मुझे ज्ञान दिया मैंने अपने हृदय में धारण करके श्रीसीता-सहित श्रीराम जी का जीवन भर भजन किया ॥६१॥

इत्येवम्मांसाधयित्वाप्यन्त र्धीरभन्मुनिः ॥
पुनश्च भुज्यप्रारब्धन्देहे काल वशङ्गते ॥६२॥

इस प्रकार मेरे को शिक्षा देकर मुनि महाराज अन्तर्धान हो गये। मैंने प्रारब्ध को भोगा, शरीर काल के अधीन होने पर फिर ॥६२॥

अन्तरेणाप्यहन्त्वञ्च श्रीमद्गुरुप्रसादतः ॥
तिष्ठे नित्याव्ययं स्थानम्माधूर्य्य लोक संज्ञकम् ॥६३॥

मैं और तुम श्री गुरु महाराज की कृपा से नित्य अव्यय माधुर्य लोक नामक स्थान में अन्तरात्मा से आकर यहां निवास कर रहे हैं ॥६३॥

तदाराधितभावस्य समयो ह्यागमत्प्रिये ॥
पुत्रि प्रदाना द्रामश्च जामाताहि भविष्यति ॥६४।

उस समय के आराधना भाव का फल प्राप्ति समय आगया है हे प्रिये ! इन पुत्रियों के प्रदान से श्रीराम जी हमारे दामाद हो जांयगे ॥६४॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां योगमुद्रा तिरोधान राज्ञिप्रबोधो नाम सप्तचत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४७॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां योगमुद्रा तिरोधान राज्ञि प्रबोधो नाम सप्त चत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४७॥

श्रीशिव उवाच-एवं राज्ञेः प्रति श्रुत्य ह्यात्मनोनुभवात्मकम् ॥
योगधीरोपि नृपति स्तद्योगायोद्य तोभवत् ॥१॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि इस प्रकार रानी के लिये अपनी आत्मा का अनुभवात्मक योग को सुना करके फिर योगधीर राजा भी उन कन्याओं के विवाह उद्योग में लग गये ॥१॥

गुरूमाहूय चादृत्य सर्वं तस्मै निवेद्य च ॥
मुख्यामात्यं समाहूय तस्मै चापि निवेदितम् ॥२॥

अपने गुरु महाराज को बुलाकर सब समाचार निवेदित किये तथा मुख्य मन्त्री को भी बुलाकर सब कुछ कहे ॥२॥

चरित्रेयोगमुद्रायाः सर्वेविस्मितमानसाः ॥
बभूवु नृपते र्वर्ताश्रुत्वा ये ये महाशयाः ॥३॥

योगमुद्रा के चरित्र को जो जो महाशय राजा से सुने सुन करके सब चकित चित हुए ॥३॥

लिखितं योगधीरेण राज्ञा मात्येन मन्त्र्य च ।

पत्रिकां कौशलेन्द्राय विनया च्छतशोधिकाम् ।४।।

महाराज ने मन्त्री से सम्मत् लेकर एक पत्र लिखा। सैकड़ों बार संशोधन करके उस पत्र में कोशलेन्द्र महाराज के लिए विनय लिखा ॥४॥

नत्यो नाना धिधाने न विज्ञानां हृदयंगमाः ।

तां पत्रीं गुरू हस्ते च दत्वा विनय माश्रयन् ।।५।।

उस पत्र में विज्ञ पुरुषों के हृदय को आकर्षण करने वाली नाना प्रकार की स्तुतियां लिखीं थीं उस पत्रिका को बड़े विनय पूर्वक गुरु महाराज के हाथ दिया ।।५।।

अयोध्यां प्रस्थितः सद्यः शुभलग्ने सुदर्शनैः ।

शीघ्रं स्वात्म प्रभावेना योध्यां विप्रः समागतः ।।६।।

सुन्दर लग्न संशोधन करके शीघ्र अयोध्या के लिये चलते भए। आत्म योग के प्रभाव से ब्राह्मण तुरन्त पहुंचे ।।६।।

समागम्य वशिष्टश्च नृपतेन समागमत ॥

अत्र देवि नृपस्यापि श्रीमद्दशरथस्यतु ।।७।

प्रथम श्री बसिष्ठ जी से मिल करके तब महाराज श्रीचक्रवर्ति जी से समागम हुआ। शंकर जी बोले कि हे पार्वती! श्रीमान् दशरथ जी महाराज को भी यह बात ।।७।।

पूर्वमेवहि ज्ञातृत्वे यस्मिन्विप्र गमागतः ।।

निमित्ते तत्प्रवक्ष्यामि कारणं रसवद्यथा ।।८।।

जिस काम के लिए ब्राह्मण आये थे वह बात मालूम थी इसके मालूम होने का कारण को मैं तुमसे कहता हूँ क्योंकि वह रसमयो कथा है।।८।।

श्रीरामस्या नुरागस्या लौकिकत्व म्विशेषतः ।।

यदाप्रभृतिरत्रात्र राजकन्या नुतेः प्रभा ।।९।।

जबसे सुकान्ती की स्तुति श्रीरामजी को प्राप्त हुई तब से श्रीराम जी का भी अलौकिक भक्त वात्सल्य अनुराग अति बढ़ा हुआ था ।।९।।

हृदये रामचन्द्रस्य प्रविष्टा बिस्मयङ्करा ।।

तदाप्रभृति रात्मान मपस्मार्य्य रघूत्तमः ।।१०।।

क्योंकि वह सुकान्ती का अनुराग आश्चर्यजनक था जो श्रीरामजी के हृदय में प्रवेश किया हुआ था तब से श्रीराम जी अपने शरीर को भी भूले रहते थे ।।१०।।

करोति दैहिकं सर्व मभ्यासान्नतु चेतसा ।।

तां गति म्प्रिय पुत्रस्य दृष्ट्वा कौशलपालकः ।।११।।

जितने भी शारीरिक कृत्य हैं वे सब केवल अभ्यास से ही हुआ करते थे मन तो सुकान्ती में ही लगा रहता था। इस प्रकार प्रिय पुत्र की व्यवस्था को देखकर महाराज श्रीदशरथ जी ।।११।।

सततं च्चिन्तया युक्तो वशिष्टोपि ददर्श च ॥

प्रभावं रामचन्द्रस्य भाग्यं दशरथस्य च ॥१२॥

हमेशा चिन्ता में रहते थे श्रीवशिष्ठजी महाराज भी यह दृश्य देख रहे थे और श्रीराम जी का प्रभाव तथा श्रीदशरथ जी का भाग्य दोनों को जानते थे ॥१२॥

तदा चा गम निर्देशै वंशिष्टेन महात्मना ॥

भविष्यं कथितं सर्वं नृपकन्या समागमम् ॥१३॥

श्री महात्मा वशिष्ठ जी ने शास्त्र का उपदेश तथा राजकन्या का भविष्य समागम होना भी कहा ॥१३॥

श्रीवशिष्टोवाच–सदेवाग्र इति ख्यातं श्रुतिभिः परमाभ्दुतम्॥

लक्षणैक तयातच्च द्वयमेकी कृतम्यथा ॥१४॥

श्री वसिष्ठ जी ने कहा कि हे राजन्— सदेव सौम्येद मग्र मासीदिति, छान्दो० अ० ६ खं० २ हे सौम्य यह सत् पद वाच्य ईश्वर सर्वेश्वर परात्पर हैं, इस वेद से परम अद्भुत लक्षणों वाले परात्पर ब्रह्म श्रीरामजी की इस चेतन आत्मा से जिस प्रकार एकता है, वह हम कहते हैं, सुनो ॥१४॥

सन्मात्राच्च चिन्मात्रा च्च लक्षणैक तया तथा ॥

कथितं श्रुतिभिः साक्षा दैक्यं तु जीव ब्राह्मणोः ॥१५

सत् मात्रा से और चित मात्रा से लक्षण कर सकता है इस प्रकार बेदो श्रुतियों द्वारा जीव ब्रह्म की साक्षात एकता को कहा है ॥१५॥

व्यतिरेक म्पुन र्दृष्टा वहुभिश्चान्यलक्षणैः ॥

उक्त तत्वमसीत्येवं वाक्यं द्वैतात्मकं नृप ॥१६॥

बहुत से अन्य लक्षणों द्वारा फिर अलग भी इसको देखा गया है, क्योंकि हे राजन् तत् त्वम् असि इन शब्दों से द्वैतात्मक भेद वाक्य भी मिलते हैं ॥१६॥

तत्पदे ब्रह्म विज्ञेयो जीवो सावस्ति त्वम्पदे ॥

ब्रह्मैक ईश्वर स्वामी दाशः किङ्कर एव सः ॥१७॥

क्योंकि तत् पद से ब्रह्म को जानना चाहिये त्वम् पद से जीव को जानना चाहिये—इस प्रकार के पद से स्वामी ईश्वर एक ब्रह्म हैं दास, सेवक भोग्य इन भेदों से ॥१७॥

जाति वाचि तयैकत्वं वहुत्वं रूप व्यक्तितः ॥

चतुष्टय मवस्थाभि र्जीवेषूक्तं महात्मभिः ॥१८॥

अलग २ जाति वाचक होने से जीव में वहुरूपत्व दर्शित हुआ । महात्माओंने जीवोंमें अवस्था भेद द्वारा चार जाति बतायीं हैं ॥१८॥

नित्यावस्थातथा मुक्ता वध्दा स्तत्र मुमुक्षवः॥

नित्याः मुक्ताः परेधाम्नि मर्त्ये वध्दाः नुमुक्षवः॥१६।

एक तो नित्य पार्षद, दूसरे मुक्त पार्षद, तीसरे बद्ध जीव, चौथे मुमुक्षु जीव हैं। नित्य और मुक्त जीव तो पर धाम में पार्षद रूप से हैं, बद्ध और मुमुक्षू इस मृत्यु लोक में हैं ॥१६॥

वध्देषु सुकृतैः कश्चिद् गुरूं लव्ध्वामुमुत्तुषु ॥
संसर्ग प्राप्नुया त्काले ततोभक्तिः प्रजायते ॥२०॥

बह्वों के महान पुण्य द्वारा किसी को यदि गुरू मिल गये तो वह गुरु-संसर्ग से मुमुक्षता को प्राप्त कर लेता है तब समय पाकर के भक्ति उत्पन्न होती है ॥२०॥

भक्ते र्भावाहि चत्वारो दाश्यो वात्सल्यक स्तथा ॥
सख्य स्तथा च श्रृंगारः केषां शान्तोपि सम्मतः॥२१॥

भक्ति के दास्य, बात्सल्य, सख्य, श्रृङ्गार चार भाव हैं। किन्हीं २ ने शान्त को भी मान लिया है ॥२१॥

तेतु भावाहि भक्तस्य सिद्ध कालेऽङ्कुरायते ॥
प्राप्ते चतुर्दशे वर्षे नारीणां यौवनाङ्ग वत् ॥२२॥

वे चारों भाव भक्त के सिद्ध काल में जिस प्रकार स्त्रियों का १४ वाँ वर्ष का उम्र होने पर युवा वस्था अंकुरित होती है उसी तरह से अंकुरित होते हैं ॥२२॥

तदा तस्मिस्तु श्रीरामो दृढ सम्वन्धभावतः ॥
द्रवत्या त्मतया साक्षा त्स्वीकारं प्रकरोति च ॥२३॥

इस प्रकार सम्बन्ध भावों के दृढ़ हो जाने पर उसी भाव के अनुकूल द्रवित होकर श्रीराम जी साक्षात् स्वीकार कर लेते हैं ॥२३॥

पूर्वन्तु सत्पदैक्येन सम्वन्धो जीव ब्रह्मणोः ॥
तथाप्यप्राप्तभावस्तु न रामं लभते क्वचित् ॥२४॥
वयंसर्वे कौशलेन्द्र भावसिद्धाहि ज्ञायताम् ॥
श्रीरामेप्राप्त सम्वन्धा अस्मिन्नित्ये निवासिनः ॥२५॥

प्रथम तो इस जीव का परमात्मा से सत्य पद में एक सम्बन्ध है तो भी भाव की प्राप्ति न होने से यह चेतन आत्मा किसी तरह से भी राम जी को नहीं पासका। हे राजन! हम सब लोग पहले से ही श्रीरामजी में सम्बन्ध भाव को प्राप्त कर सिद्ध होकर के इस नित्य धाम में निवास कर रहे हैं ॥२४-२५॥

केचित्प्राप्ताः प्राप्नुवन्ति प्रापयिष्यन्ति केचन ॥
सम्वन्धैस्तु चतुर्भिश्च नान्योपायो नराधिप ॥२६॥

और कोई प्राप्तकर लिए, कर रहे हैं तथा आगे भी करेंगे। हे नराधिप इन चार सम्बन्धों के बिना और कोई उपाय श्रीराम जी की प्राप्ति के लिये नहीं है ॥ ६॥

लोके मानुष्यके भक्ताः श्रृंगार रस सम्मताः ॥
आत्मानं प्रेयसी भावं श्रीरामे भावयन्तिये ॥२७॥

इस मनुष्य लोक में जो भक्त अपनी आत्मा को श्रीरामजी में प्रेयसी भाव से भावना करते हैं उनका भाव श्रृङ्गार रस में मान्य है ॥२७॥

प्राप्तकाले स्वकीयन्ते त्यक्त्वा कलेवर त्रयम् ॥
प्राप्नुवन्तिवरग्राम म्निधिनो पयमेन च ॥२८॥

समय पाकर वे महात्मा स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीरों को त्याग करके प्रियतम भाव में रमणशील श्रीराम जी को विवाह विधि से प्राप्त कर लेंगे।।२८॥

प्राप्य श्रीराम संसर्गं सगुणंनिर्गुणम्भवेत् ॥
अपवित्रम्यथा वारि गङ्गायां सुचिकारकम् ॥२९॥

श्रीरामजी को प्राप्त हुआ चेतन आत्मा को मायिक सगुणता मिट करके प्रकृति से परे निर्गुणत्व प्राप्त हो जायगा जिस प्रकार अपवित्र जल गंगा में पड़ने से पवित्र हो जाता है ॥२९॥

नित्योत्सवस्य रामस्य ब्रह्मलोकेत्विहापि च ॥
सन्ति नित्यं विवाहाश्च भाविका फल माययुः ॥३०॥

श्रीरामजी के विवाहादि उत्सव दिव्य धामों में तथा प्रकृती मण्डल में सर्वत्र हुआ करते हैं भक्तजन अपने अनुभवों से फल नुभव करते रहते हैं ॥३०॥

इत्थमेव नृपाधीश दक्षिणायनकेश्वरः ॥
नन्दनाख्य पुरेणात्र योगधीरः प्रमाणवित् ॥३१॥

हे राज राजेश्वर ! इस प्रकार की व्यवस्था में दक्षिण दिशा नन्दन नाम की नगरीके एक योगधीर नामक राजा प्रमाणित हैं ॥३१॥

रामेवात्सल्य वृत्योपि तस्यपत्नीतथाविधा ॥
नाम्ना सा रत्नं कान्तिस्स्या त्पति सेवा परायणा ॥३२॥

जो श्रीरामजी में वात्सल्य भाव रखते हैं उसी प्रकार उनकी पत्नी रत्नकान्ति भी पति सेवा परायण श्रीरामजी में वात्सल्य भाव रखती हैं ॥३२॥

तस्यां पुत्री त्रयं राज्ञस्तास्तिश्रः कौशलेश्वर ॥
श्रीरामेभावसिद्धाश्च वहु जन्मातरैरपि ॥३३॥

इन्हीं योगधीर की अपनी पत्नी से तीन कन्यायें हैं जो श्रीरामजी में कई जन्मों से भावमें सिद्ध हुई हैं ॥३३॥

नाम्ना त्वेका सुकान्तिस्तु तिसृणां श्रेष्ट भावगा ॥
तया रामस्यात्मभक्त्या वशी कारेण मानसम् ॥३४॥

उन तीनों में से एक सुकान्ति नाम की श्रेष्ठ भाव वाली है उसने अपनी आत्म भक्ति से श्रीराम जी को वश में कर लिया है ॥३४॥

हृतं स्वाभाविक शिनग्धविरहातुरया किल ॥
चिन्ता माकुरु राजेन्द्र विकारो नान्य विद्यते ॥३५॥

हे राजेन्द्र उस विरह व्यथित कन्या ने सहज सनेही श्रीरामजी का हृदय हरण कर लिया है और कोई विकार नहीं है आप चिन्ता न करें ॥३४॥

तारात पुत्र्यः सर्वाश्च स्वात्मसाधन सञ्चयैः ॥
प्रापयिष्यन्ति श्रीरामं नात्र सन्दिग्धता नृप ॥३६॥

हे राजन वे सब राजकन्यायें अपने आत्म-साधन सञ्चय से श्रीरामजी को प्राप्त करेंगी इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥३६॥

एवं श्रुत्वा वशिष्टस्य वाक्यानितु नरेश्वरः ॥
तोषं लब्धा पुनस्तस्यो पाये प्रश्नश्चकार सः ॥३७॥

इस प्रकार श्रीवसिष्ठ जी के बचन को सुनकर महाराज श्रीचक्रवर्ति जो सन्तुष्ट हुए और उन कन्याओं के प्राप्ति का उपाय पूछे ॥३७॥

राजोवाच-त्वम्भिज्ञोसि समर्थोसि विधाने तु विधातृ वत्॥
अतः प्रच्छामि वितेन्द्र भविष्यन्ति कथङ्कदा ॥३८॥

हे गुरुदेव ! आप हर एक विधानों के सम्हालने में विधाता की तरह से विज्ञ हैं अतः हे विपेन्द्र ! वे राजकन्यायें कब, कैसे प्राप्त होंगी ? इसलिए ऐसा पूछ रहा हूँ ॥३८॥

माम्प्रयोजय मद्योग्य मन्येषा मपि सर्वथा ॥
ये नाथ राम आत्मान मवेक्षण मवाप्नुयात् ॥३९॥

जो मेरे योग्य हो, अथवा अन्य किसी के योग्य हो, आप मुझे प्रेरणा करें। हे नाथ ! जिससे श्रीराम जी अपने मन की चिन्ता से निवृत्त होकर होश को प्राप्त होवें ॥३९॥

वशिष्टोवाच-भविष्यं यन्निमित्तं तद्धि नोपायंभविष्यति ॥
विधिना रचितं राजं स्तत्रचिन्तात्तु नोचिता ॥४०॥

श्रीवसिष्ठ जी बोले कि हे राजन विधाता से रचित जो भी भविष्य विधान है वह बिना उपाय का ही सिद्ध हो जायगा उस विषयमें चिन्ता करना उचित नहीहै॥४०॥

इत्थंहि मुनिना देवि वशिष्टेन नराधिपः ॥
भविष्य कथनेनैवपूर्वमेव सुसाधितः ॥४१॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती ! इस प्रकार श्रीवसिष्ठ जी ने महाराज दशरथ जी से पहले से ही भविष्य कथा कह रक्खी थी ॥४१॥

अतः समागतं विप्र मविचार्य्य समादृतः ॥
तध्दस्तात्पत्रिकांशीघ्र मादायमुदमा ययौ ॥४२॥

इसलिए योगधीर के भेजे हुए ब्राह्मण आने पर बिना ही बिचारे सम्यक प्रकार आदर किया, उनके हाथ से शीघ्र पत्रिका लेकर बड़े प्रसन्न हुए ॥४२॥

पुनः सुमन्त माहूय वाचयित्वा सुपत्रिकाम् ॥
मन्त्रं कृत्वा पुन विप्रः प्रेपितश्चाति सादरात् ॥४३॥

फिर सुमंत्र जी को बुलाकर पत्रिका पढ़वायी, आपस में बैठकर विचार किया फिर ब्राह्मण को आदर पूर्वक बिदा किया ॥४३॥

तदाप्रभृति श्रीरामो स्वात्मान स्मृतिमाययौ ॥
सखीभिर्मैथिली मोदं सम्प्राप्ता भक्त वत्सला ॥४४॥

तब से श्रीराम जी होश में आये, सखियों के सहित भक्तवत्सला श्रीमैथिली जी प्रसन्न हुई॥४४॥

पुनः श्रीकौशलेन्द्रेणमण्डलीका नराधिपाः ॥
निमन्त्रिता हर्षिता श्च तेपिसर्वेसमागताः ॥४५॥

इसके बाद महाराज कोशलेन्द्र जी ने अपने माण्डलिक राजाओं को आमन्त्रित किया, वे सब के सब भी बड़े हर्ष से आये ॥४५॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां श्रीदशरथ प्रबोधोनाम अष्टचत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४८॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्रीदशरथ प्रबोधो नाम अष्ट चत्त्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४८॥

श्रीशिव उवाच–अनन्तरं सुमन्तेनमंतृणातु नृपाग्यया ॥
सज्जना वरजानस्य कृत्तिमैः कृत सञ्चयैः ॥१॥

श्रीशङ्करजी बोले कि हे पार्वती ! इसके बाद चक्रवर्ति महाराजकी आज्ञासे श्रीसुमंत्रजीने विविध प्रकार के कृत्रिय सञ्चयों से बारात को सजाया ॥१॥

कृतादिनद्वयेनैव रथेभाश्वैः सुभूषितैः ॥
ततो दृष्ट्वा महाराजोमुद मङ्गल माययौ ॥२॥

दो ही दिन के अन्दर हाथी घोड़ाओंके रथ आदि सवारियां सुन्दर भूषणों से भूषित कीं। सारी सजावट को देखकर महाराज मङ्गल को प्राप्त हुए ॥२॥

दुन्दुभीनाञ्च भेरीणां पणवानाञ्च नादितैः ॥
नादितैः गंज घण्ट्टानां गजसंघट्ट गर्जितैः ॥३॥

दुन्दुभी, भेरी, पणव आदि बाजाओंके नाद से तथा गजघण्टा हाथी घोड़ा समूह गर्जनासे ॥३॥

हयानां खुर शब्दैश्चपाद कङ्कण संयुतैः ॥
रथानांकिङ्कणी नादैः प्रतिहारोच शब्दकैः ॥४॥

तथा घोड़ाओं की किंङ्कणी सहित टाप की आवाज, रथों के किङ्किणी की आवाज, प्रतिहारियों की ऊँची आवाज से ॥४॥

अन्येषाञ्च मनुष्याणाम्परस्पर श्रभाषणैः ॥
दिगन्त मूर्च्छिते घोषेप्रस्थितं वरजानकम् ॥५॥

अन्य मनुष्यों के परस्पर भाषण से इस प्रकार बरात की सामूहिक आवाज से दिशायें मूर्छित हो रही हैं ॥५॥

वशिष्टोपि सुमन्तश्च भ्रातृभिस्सखिभि र्युतम् ॥
वहूभिर्राजभिस्सेव्यं वहुभूषण भूषितम् ॥६॥

श्रीवसिष्ठ जी, श्रीसुमंत्र जी तथा सब भ्राता सखा संयुक्त भूषणों से भूषित बहुत राजओं के समूह से सेवित हैं ॥६॥

भूषिताश्च समारूढ़म्प्रसन्नास्य मनोहरम् ॥
शोभते राम मादाय वरजानेपि ते बचः ॥७॥

बारात में जाने के उत्साह से प्रसन्न मन हैं इस प्रकार शोभित बारात श्रीरामजी को लेकर गये ॥७॥

एवञ्चलतिरामस्य वरजाने वलोद्धते ॥
समुद्राः क्षोभमापन्ना रेणुतांमार्ग पर्वताः ॥८॥

बल में बढ़ी हुई इस प्रकार श्रीराम जी की बारात के चलने पर समुद्र क्षुभित हो गये, धूल से मार्ग और पर्वत ढक गये ॥८॥

शेषस्य शिरसोभूमि श्चलिता कम्पितस्य वै ॥
स्तम्भमाना वायवश्च रेणुभिः पूरितादिशः ॥६॥

कम्पित हुये शेष जी के सिर की भूमि चञ्चल हो गयी। दशों दिशाओं में भरे रेणु से वायु स्तम्भित हो गया। (इस प्रकार श्री अयोध्या जी से बरात चली) ॥६॥

अत्र राजा योगधीरो नन्दनाख्य पुरेश्वरः ॥
चिन्तया चिन्तय न्नास्तेप्रेषितागमनं गुरोः ॥१०॥

अब उधर नन्दन पुरी में नन्दन पुरी के ईश्वर राजा योगधीर जी भेजे हुए श्रीगुरू जी के विषय में चिन्तित थे ॥१०॥

तावत्तंश्च समायान्तं ददर्शनृपतिर्मुनिम् ॥
प्रसन्न वदनं तेन कार्य्यं सिद्धिः परीक्षता ॥११॥

तब तक मुनि महाराज को आते हुये प्रसन्न वदन [मुख] देखकर महाराज योगधीर जी ने लक्षणों से ही कार्यसिद्धि की परीक्षा की ॥११॥

पुनः संस्पृश्य तत्पादौ कृत्वाचार्घादिकम्विधिम् ॥
आशने काञ्चनेस्थाप्य प्रेम्णा विप्रः समर्चितः ॥१२॥

अर्घ्यादिक बिधि से गुरू महाराज के दोनों चरण स्पर्श करके फिर स्वर्ण सिंहासन पर बैठाये प्रेम से ब्राह्मण जी का पूजन किया ॥१२॥

राजोवाच–कथ्यतां कुशलन्देव सर्वांगेन समन्ततः ॥
श्रीमत्कौशल नाथस्य मयिचानुग्रहो यथा ॥१३॥

महाराज बोले हे गुरुदेव ! सर्वाङ्ग से चारों तरफ से कुशल को कहिये और श्रीमत्कौशलनाथ जी के मेरे ऊपर अनुग्रहको भी जैसा हो तैसा कहिये ॥१३॥

यन्नामस्मरणा त्प्रात र्नराणां कुशलम्भवेत् ॥
तस्यकिं कुशल म्प्रच्छा परन्तुलोक सम्मतः ॥१४॥

जिनके प्रातः स्मरण से नरों को कुशल प्राप्त होती है उनके लिए क्या कुशल पूछूं परन्तु लोक-रीति से पूछना उचित है ।१४॥

मुनि रुवाच–सर्वांगेन समन्ताच्च कुशलः कौशलेश्वरः ॥
त्वयि चानुग्रहो त्यन्तो नान्यथा वचनंहि मे ॥१५॥

मुनि महाराज बोले सर्वाङ्ग से चारों तरफ से कुशल है महाराज कोशलेन्द्रजी का आपमें अत्यन्त अनुग्रह है मेरा वचन अन्यथा नहीं है ॥१५॥

तस्येयं पत्रिकाराज न्सर्वदा सत्य वादिनः ।
आशीर्वाक् च वशिष्ठस्य त्वयि चोक्तस्तु साम्प्रति ॥१६॥

हे राजन सर्वदा सत्य बोलने वाले उन महाराज की यह पत्रिका है और श्रीवसिष्ठ जी ने आपके लिए आशीर्वाद कहा है ॥१६॥

आश्लेषणं सुमन्तेन महामात्येन तस्यवै ॥
उक्तश्च परया प्रीत्या ह्येतत्सर्वं प्रगृह्यताम् ॥१७॥

उन महाराज प्रधान मन्त्री श्री सुमन्त्र जी ने आपको आलिंगन कहा है इस प्रकार प्रेममयी समाचार को आप ग्रहण करें ॥१७॥

शिव उवाच–एवं श्रुत्वायोग धीरो वाचिकं हृदय ङ्गमम् ॥
ब्रह्मानन्दश्चा नुभवन्नागतम्वचनम्मुखे ॥१८॥

श्रीशिव जी बोले कि इस प्रकार हृदयेंगम इन शब्दों को सुनकर राजा योगधीर ब्रह्मानन्द का अनुभव करने लगे, मुख से वचन नहीं आया ॥१८॥

क्षणेनधैर्य्यमाधाय स्वात्मभाग्यं प्रशंश्यच ॥
उन्मितं हृदये श्रीमदगस्त्यस्य कृपाफलम् ॥१६॥

एक क्षण में धैर्य को धारण कर अपने आत्म भाग्य की प्रशंसा करने लगे और पूर्व जन्म के गुरु श्री अगस्त्य जी की कृपा का फल हृदय से अनुमान करने लगे ॥१६॥

पुनस्तोत्रेण संस्तर्प्य कोशलादागतङ्गुरुम् ॥
नारीणाम्मङ्गलैर्गानै रुद्वाहोत्सव मादधत् ॥२०॥

उसके बाद कौशलपुरी से आए हुए गुरू महाराज को स्तुति से सन्तुष्ट करके नारियों के मङ्गल गान से विवाह का उत्सव किया ॥२०॥

श्रुत्वा पुरजनाः सर्वे नार्य्यश्चैव प्रतिगृहम् ॥
चकारोद्वाह गानेनमहामङ्गल मुत्सवम् ॥२१॥

यह समाचार सुनकर नन्दनपुरी में सब जनता के घर प्रत्येक नारियां विवाह के गान मङ्गलोत्सव को करने लगीं ॥२१॥

राज्ञाप्रधान माहूयमहाकार्य्ये प्रवर्तितः ॥
सद्य प्रासादका स्सर्वे तोरणादि सुमण्डिताः ॥२२॥

श्री योगधीर जो ने प्रधान मन्त्री को बुलाकर तोरण कलशादि से नगर महलों को शीघ्र भूषित किया ॥२२॥

चतु र्दिक्षु पुरस्यान्त मुपचारै र्नवैस्तथा ॥
रमणीयं कृतं सर्वम्मनो नेत्रहरम्परम् ॥२३॥

नगर के चारों तरफ नवीन उपचारों से सबके मन और नेत्रों को हरण करने वाली रमणीय सजावट की ॥२३॥

वरजाननिवाशाय स्वर्ण सूत्रांशुका गृहाः ॥
पुरस्यच वहि र्देशे पञ्च क्रोशेषु रोपिताः । २४॥

वरातियों के निवास के लिये नगर से पांच कोश बाहर में स्वर्ण सूत्र निर्मित वस्त्रों से विशाल महल बनवाये गये हैं ॥२४॥

बृहज्जवनिकाभिस्तु प्राकारै स्सप्त भिर्वृताः ॥
ध्वजैश्च तोरणै र्दिव्यैः कलशैश्च परिस्कृताः ॥२५॥

जिनमें सात परकोटा, बहुत बड़ी कनात बनी हुई तथा ध्वज, पताक, तोरण कलशादि से सजे बहुत बड़े सुन्दर महल बनाये गये ॥२५॥

सज्जा स्तरणादिभिश्च पानभोग सुगन्धिभिः ॥
विचक्षणै स्सेवकैश्च संयुतास्तु समन्ततः॥२६॥

शय्या, बिछावन पान भोग की सामग्री सुगन्धि आदिक इन सब वस्तुओं को उचित रूप में सेवा के लिए देने वाले अलग २ सबके बड़े बुद्धिमान सेवकों सहित वे महल सुखभोग सम्पत्ति से परि-पूर्ण हैं ॥२६॥

तावच्छुभदिने देवि पुरतः पञ्च क्रोशतः ॥
समायातम्वरजानं श्रुत्वा नृपो मुदं ययौ ॥२७॥
उपायनं मन्त्रिभिश्च प्रेषितम्बहुरत्नकम् ॥
घृत पक्वान्न मिष्टान्न म्वाहनानि वहूनिच ॥२८॥

हे पार्वती ! तब तक नगर से बाहर पांच कोश की दूरी पर बरात आगई है यह सुनकर राजा योगधीर आनन्द मग्न हो गये । बहुत रत्नों से युक्त तथा घृत की पकी मिठाइयों की कांवर तथा अनेक प्रकार की सवारी आदि भेट सामग्रियों को लेके प्रधान मन्त्री को भेजा ॥२७-२८॥

विचार्य्याति सुलग्नञ्च समानेतु म्महोत्सवैः ॥
वरजानं प्रधानेन सज्जना वहुशः कृताः ॥२९॥

सुन्दर लग्न विचार करके महान् उत्सव पूर्वक वरात को लाने के लिये प्रधान मन्त्री के साथ बहुत से सज्जन लोग भी गये ॥२९॥

अश्वेभाश्च रथानन्ता दिव्यालङ्कार भूषिताः ॥
तथैव सुखयानानि भूषितानि सुभूषणैः ॥३०॥

घोड़ों के रथ, हाथियों के रथ दिव्य अलंकारों से भूषित इसी प्रकार सुख पाल भूषित सेवकों द्वारा सजे हुये भेजे गये ॥३०॥

भूषणाढ्याः किशोराश्च सुन्दराङ्गा स्सुधन्विनः ॥
अश्वारूढागजारूढ़ा रथारूढाश्च केचनः ॥३१॥

बहुत से राजकुमार किशोरावस्था सुन्दर अङ्ग भूषणों से सजे धनुष बाण कसे घोड़ाओं पर हाथियों पर और रथों पर सवार हुये तथा औरभी लोग अगवानी के लिए गये ॥३१॥

मिलित्वा सत्समावृत्ता वादित्राग्राति शोभनाः ॥
कौतुकाग्राविरा जन्ते श्रीराम दर्शनोत्सुकाः ॥३२॥

आगे २ बाजा, अनेक प्रकारके कौतुक सजे हुए पीछेसे ये सब राजकुमारादि श्रीरामजी के दर्शन उत्साह से उमग कर गये ॥३२॥

वंश दीपा ह्यनन्ताश्च प्रदीपानाञ्च पंक्तयः ॥
उद्वृत्त्यश्चैव दीपानां कृत्तिमा वाटिकासुच ॥३३॥

अगल बगल दोनों तरफ अनन्त वंश-दीपक, दीप-वृत्तों को पंक्तियां और सादे दीपकों की पंक्तियां तथा कृत्रिम वाटिकायें ॥३३॥

वहुशोप्याकाशदीपाः पक्षिणा न्तुण्ड ग्राहिताः ॥
नर्तकीनाञ्चिमानानि शोभन्ते चाग्रगानितु ॥३४॥

बहुत से पक्षियों के तुण्ड [चौंच] द्वारा पकड़े हुए आकाश दीप और नृत्य करने वाली अप्स-राओं के विमान ये सब अगवानी के आगे में सुन्दर शोभित हो रहे हैं ॥३४॥

विदूषकाश्च वहुशः कृता कल्पा श्च शोभनाः ॥
दर्शका विस्मयं यान्तिपुन र्ज्ञात्वा हशन्तिच ॥३५॥
एवं सर्वे समाजैस्तु पुरतो वहिरागताः ॥
पुनस्सर्वे मिलित्वाच कोशार्द्ध मग्रमाययुः ॥३६॥

अनेक प्रकार किस कल्पनाओंसे शोभित विदूषक बहुत हैं जो आश्चर्य पैदा करने वाले कौतुकों करने वाले खेलों से सबको हँसाते हैं इस प्रकार अगवानी बरात सज करके नगर से मिलकर आधा कोश पर्यन्त बाहर आये ॥३५-३६॥

दृष्ट्वा ततो वर जानम्मुदश्च विस्मयङ्गताः ॥
परस्पर म्वाहनाद्धि प्रणम्य प्रीतिमाययुः ॥३७॥

दूर से बारात को देखकर आनन्दित चकित हुए परस्पर वाहनों को मिलाकर प्रणाम किये, प्रेम में भर गए ॥३७॥

मुख्यायेत्र प्रधानादि वाहनादवतीर्य्यंच ॥
वशिष्ठन्तु सरामश्च प्रणम्य पाद मास्पृशत् ।।३८॥

अगवानी में जो प्रधान मन्त्री आदि मुख्य थे वे अपनी सवारियों से उतर कर श्री वसिष्ठ जी को चरणस्पर्श करके प्रणाम किए ॥३८॥

आश्लेषणंसुमन्तेन कृतश्च प्रेम संयुतम् ॥
यथोचितंसमागम्य निवाश न्दर्शितुम्पुनः ॥३९॥

श्री सुमंत्र जी ने प्रधान मन्त्री का आलिंगन किया। यथोचित समागम करके जनवासा दिखाए ॥३९॥

वरजान जना याव दृष्ट्वा वाशम्मनोहरम् ॥
गत श्रमाः सुखम्प्राप्ता रामोपि सुख माप्नुयात् ॥४०॥

बरातियों ने मनोहर जनवासा को देखा। सब परिश्रम से मुक्त होकर सुख प्राप्त किये। इस प्रकार श्रीराम जी भी बड़े सुखी हुये ॥४०॥

ततः स्वयं योगधीरो ब्राह्मणै स्साधुभिस्तथा ॥
अन्येश्च मण्डलाधीशै रमात्यैः परिवारितः ।४१॥

उसके बाद बहुत से ब्राह्मणों से घिरे तथा माण्डलिक राजाओं से और मन्त्रियों से घिरे राजा योगधीर ॥४१॥

वरजान निवाशेच समागत्य मुदान्वितः ॥
प्रथमं श्रीवशिष्ठम्वै प्रणम्य निर्भरम्मुदा ।४२॥

जनवासे में आये। आनन्द मग्न होकर प्रथम श्रीवसिष्ठ जी को प्रणाम किये ॥४२॥

पतितोदण्डवद्भूमौ मुनिनोत्थाय श्लेषितः ॥
ततः परम्सुमन्तेन श्लेषितः प्रीति संयुतः ॥४३॥

पृथ्वी में साष्टांग दण्डवत करते हुए पड़े हुये राजा को श्रीवसिष्ठ जी ने उठाया गले से लगाया उसके बाद सुमंत्र जी ने भी प्रेम से आलिंगन किया ॥४३॥

पुनः सर्वान्यथायोग्यम् प्रणामं श्लेषणङ्कृतम् ॥
श्रीरामेणैव श्वसुरो भ्रातृयुक्तेन सादरात् ॥४४॥

फिर यथा योग्य सबको प्रणाम और आलिंगन किया श्रीरामजी ने भी भ्राताओं के सहित आदर पूर्वक अपने श्वसुर को ॥४४॥

प्रेम्णा प्रणमितस्सोपि दृष्ट्वा वैदेहताङ्गतः ॥
कुतः कोहञ्च कुत्रस्थ एवमात्मान मध्रुवम् ॥४५॥

प्रेम से प्रणाम किया इस प्रकार श्रीरामजी को देखकर राजा योगधीर मैं कौन हूँ ? कहां पर हूँ ? किधर से आया हूँ ? इस प्रकार अपनी आत्मा को भूलकर विदेह दशा को प्राप्त हो गये ॥४५॥

मुहूर्तमात्रमासीत्स श्रीरामेणावलम्बितः ।।
मुनिनाहि वशिष्टेन सन्मुखं स्वाशने शुभे ।।४६।।

इस प्रकार एक मुहूर्त श्रीराम जी से अवलम्बित होकर विदेह रहे फिर मुनि श्रीवसिष्ठ जी ने सन्मुख सुन्दर आसन पर ।।४६।।

संस्थाप्य कुशलम्प्रश्न म्पृच्छाप्रेम्णा प्रचारितो ।।
राजोवाच-आजन्मत स्त्वद्य नाथ भवतां दर्शनेनवै ।।४७।

बैठ कर प्रेम से कुशल प्रश्न किया। राजा बोले हे नाथ ! जीवन भर में आपके दर्शनको चाहा ।।४७।।

सत्यं हि कुशलम्प्राप्त श्चान्यथा कुशलंकुतः ।।
नाहमेत द्वैभवाय योग्यो नाथ स्वसाधनैः ।।४८।।

अब मेरी लोक परलोक दोनों कुशल सत्य होगयी अन्यथा मेरे लिये कुशल कहां थी ? अपने साधन से मैं इस वैभव के योग्य नहीं था ।।४८।।

परन्तु भवतां रीतिः कृपायास्तु विलक्षणा ।।
महाराजः कौशलेन्द्र श्चक्रवर्ति शिरोमणिः ।।४६।।

परन्तु आप बड़े लोगों की कृपा की रीति बड़ी विलक्षण है। कहां तो महाराज श्रीकोशलेन्द्र चक्रवर्ति शिरोमणि ।।४६।।

रविवन्शरविस्सोहं खद्योत इव पश्यताम् ।।
तेनाहं यत्समानीत स्तत्तु स्वार्य्यस्वभावतः ।५०।।

जोकि सूर्य वंश में साक्षात् सूर्य के समान हैं उनके सामने मैं सबके देखने के लिए जुगुनू के समान हूँ इस प्रकार मेरे को उन्होंने समानता से अपनाया यह बड़े लागों का स्वभाव है ।।५०।।

तृणानिशिरसाधत्तेगिरि स्स्वात्माश्रयानिच ।।
एवमुक्तवतं स्वात्म लघुत्वं नन्दनेश्वरम् ।।५१।।

क्योंकि पर्वत अपने आश्रित तृण को सिर पर रखता है इस प्रकार अपनी आत्मा को कार्पण्यता से छोटा करते हुये नन्दनपुरी के राजा योगवीर को ।।५१।।

तम्प्रशस्य वशिष्टोवै दर्शयं विगता न्निशाम् ।।
गम्यता म्मन्दिर म्राज न्कर्तव्यम्पुनरात्मना ।।५२।।

श्रीवसिष्ठ जी ने प्रशंसा की और रात्रि का बहुत बीतना दिखाया राजन आप अपने महल में जांय ।।५२।।

त्वयापिचमहत्कार्य्यं म्विवाहस्य नरेश्वर ।।
ततोनिधाय हृदये श्रीराम म्मोहनेक्षणम् ।।५३।।

क्योंकि आपको इस विवाह के विषय में बहुत काम करना है। इस प्रकार बसिष्ठ जी के कहने पर मन मोहिनो कटाक्ष वाले श्रीरामजी को हृदय में धारण करके ।।५३।।

संस्पृश्य मुने श्चरणौ सुमन्तेन परस्परम् ॥
सभ्यान्सर्बान्यथाकारंकृत्प्रणामो नरेश्वरः ॥५४॥

श्रीवसिष्ठ जी के चरणों को स्पर्श करके श्रीसुमंत्रजी द्वारा परस्पर आलिंगन पाकर तथा सभी सभ्यजनों को यथा योग्य प्रणाम करके ॥५४॥

योगधीरो जगामात्म मन्दिरम्समहोत्सवम् ॥
दूराद्व हिस्थितस्यापि शौन्दर्य्य चरितन्तदा ॥५५॥

राजा योगधीर अपने महल में गये जहां महान उत्सव हो रहा था और दूर से ही अद्भुत शौन्दर्य चरित्र दीख रहा था ॥५५॥

रामस्यपुर वालानाम्विकुर्वन्ति मनोभ्दुतम् ॥
नायके प्रतिकूलाना म्मुग्धानामप्यभीकृते ॥५६॥
सुखमा रामचन्द्रस्य दूत्याश्चातुर्य्यकङ्गता ॥
राज्ञस्तु योग धीरस्य राज्ञा सम्भाषणेन वै ॥५७॥

नगर की बालिकायें श्रीराम जी के मन प्रसन्नकारक अद्भुत कौतुक करती हैं जो दूतियों द्वारा श्रीरामजी की परमा शोभा अनुभव करने वाली बड़ी चतुरता पूर्वक प्रतिकूल नायक में मुग्ध हैं महाराज योगधीर रानी के साथ बात करते हुए में ॥५६--५७॥

समस्त विगता रात्रिः रामरूप स्वभाग्ययोः ॥
पुनश्च प्रात रूत्थाय कृत्वा श्नानादि सत्क्रियाम् ॥५८॥

रात बीत गयी ; श्रीरामजी का रूप और अपने भाग्य की प्रशंसा करते हुए प्रातःकाल उठे, स्नानादिक सत्क्रियाओं को किया ॥५८॥

वरजान निवाशे स ह्यागतो मात्य वन्धुभिः ॥
पूर्वंकृत्वासुमन्तेन समागम न्नम स्तुतिः ॥५९॥

अपने मन्त्रियों और भाइयों के सहित जनवासे में आये। प्रथम श्री सुमन्त्र जी से समागम, नमस्कार, स्तुति करके ॥५९॥

तेन समम्वशिष्टस्य मुनेः सन्निधमाययौ ॥
आदरेण वशिष्टेन मुनिनाग्रे निवेशितः ॥६०॥

श्री सुमन्त्र जी द्वारा मुनि श्रीवसिष्ठ जी के पास आये प्रणाम किये। श्रीवसिष्ठ जी ने आदर पूर्वक आगे बैठाया ॥६०॥

सप्रीत्या कृत्प्रणामोसौ योगधीरो जने श्वरः ॥
सभ्रात्रा रामचन्द्रेणतदोत्थाय नरेश्वरः ॥६१॥

प्रेमसे आशीर्वाद प्रणाम होकर राजा योगधीर जोने भ्राताओंके सहित श्रीरामजीको जगाया॥६१॥

वन्दितः शिरसा प्रीत्या तेनाशिर्वाग्भिरर्श्चितः ॥
श्रीरामस्याति शौन्दर्य्यं दृष्ट्वा सोप्यनिमेषताम् ॥६२॥

श्रीराम जी ने भी प्रणाम किया, प्रेम से आशीर्वाद पाया। श्रीरामजी का अद्भुत शौन्दर्य देख कर निमेष रहित ॥६२॥

ययौराजा योगधीरो मोद सिन्धौवगाहितम् ॥
इत्थं सुख समाजेन राजा पुर जनैस्तथा ।६३॥

राजा योगधीर आनन्द समुद्र में मग्न होगये इस प्रकार अपने मन्त्री पुरजन समाज सहित राजा ॥६३॥

सभ्रात्रा परिवारैश्च नजानाति गतंदिनम् ॥
अजस्त्रन्तेतु नेत्राभ्याम्राम रूपामृतज्जनाः ।।६४॥

अपने भ्राता और परिवारोंके सहित ऐसे आनन्द मग्न हुएकि दिन कब गया पता नहीं लगता। एक रस श्रीराम जी के रूपामृत नेत्रों से पीते हुये ॥६४॥

पपुर्न लेभिरे तृप्ति म्पीत्वा पीत्वा पुनः पुनः ॥
पुनश्च ज्योतिर्वित्मवै र्निर्णितं शुभ लग्नकम् ॥६५॥

तृप्त नहीं होते। बार २ पीते २ विभोर रहते हैं फिर सब ज्योतिषियों द्वारा शुभ लग्नका निर्णय होनेपर ॥६५॥

विवाहाय तु रामस्य सुकान्त्याः शुभदायकम् ॥
तद्दिने वर वेलायां योगधीरेण धीमता ॥६६॥

सुकान्ति के साथ अत्यन्त सुखदायक श्रीरामजीका विवाह हो इस प्रकार बुद्धिमान श्रीयोगधीर जी ने सुन्दर दिन और समय का निश्चय पाया ॥६६॥

रामः नर वरः श्रीमान्वरो नीतः स्व मन्दिरे ॥
रथ्यां रथ्यां पुरस्त्रीभि र्नीराजितः शुभेक्षणः ॥६७॥

देवताओं से भी अधिक सुन्दर श्रीमान राम जी को दुल्हा वेष में अपने मन्दिर के अन्दर ले जाते हुए गली २ नगर की स्त्रियों ने सुन्दर कटाक्ष पूर्वक आरती की ॥६७॥

श्वश्रूभिरर्चितो द्वारे मण्डपाङ्गण मागमत् ॥
राज्ञाश्रीयोगधीरेण श्रीरामपाद पङ्कजौ ॥६८॥

इस प्रकार द्वार में आने पर सासुओं ने पूजा किया। आँगके बीच मण्डप में लाईं। महाराज योगधीर जी ने श्रीराम जी के चरणकमलों को ॥६८॥

प्रीत्या प्रक्षयालितौ प्रेम्णा मण्डपे च निवेशितः ॥६९॥

प्रेम से धोए फिर बड़े प्रेम से मण्डप के भीतर प्रवेश कराया ॥६९॥

गानैश्च वाद्यैश्च सुवासिनीभिः परिस्कृताङ्गाति मनोहराङ्गा ॥
मात्रा समेता च तदा सुकान्ति र्नीतामहामण्डप मध्यभागे । ७०॥

और इधर माता ने भी सुहागिनी स्त्री तथा विवाहिता बेटियों द्वारा गान वाद्य मङ्गलकृत्य पूर्वक स्नान श्रृङ्गार आदि सत्कृत्यों से सजी हुई मनोहर अङ्ग वाली सुकान्ति को उस महामण्डपके मध्य भाग में लिवा लायीं ॥७०॥

प्रस्थापितासा गुरूणा तदा तु वरस्य रामस्यहि दक्षिणांगे ॥
कृत्वा विधानं विधिना समस्तं कन्या सुहस्तं वर हस्तकेवै॥७१॥

उपरोहित ने वेद के समस्त विधानों से दुल्हा श्रीराम जी के दक्षिण अंग (भाग) में कन्या को बैठाकर कन्या के हाथ को वर के हाथमें पकड़ा कर ॥७१॥

श्रीयोगधीरेण कुशंगृहीत्वा समर्पिता सा रघुराज पुत्रे ॥
वामेकृता सा च वरस्य वामा हस्तग्रहो भू ज्जय शब्दकोचैः॥७२॥

श्री योगधीर जी ने कुशा को ग्रहण करके उस पुत्री को रघुराज कुमार के लिए समर्पित किया। इस प्रकार वर के वरण करने पर कन्या के वामभाग में बैठते ही पाणिग्रहण के समय ऊँचे स्वर से जय-ध्वनि हुई॥७२॥

कन्या त्रयं तत्पुनरेव तस्मिलग्ने प्रदत्तं रघुनन्दनाय॥
ताभिश्च रामस्तिसृभिर्रराज महामनोज्ञे मणिमण्डपे च ।।७३॥

उसके बाद उसी लग्न में तीनों कन्याओं का श्रीरघुनाथ जी के लिए पाणिग्रहण प्रदान हुआ। उन तीनों कन्याओं के साथ श्रीरामजी वह महामनरमणीय मणि मण्डप में सुशोभित हुए ॥७३॥

तासां सुदायेतु नराधिपेनगावः सवत्साश्चित पुच्छ शृङ्गाः ॥
तथा महिष्यो वहुशः पयोदा स्त्वेकैक लक्षेन मिता प्रदत्ताः॥७४॥

उसके बाद उन कन्याओं को सुन्दर दामाद के लिए महाराज ने बछड़ों के साथ गौयें जो कि शृङ्ग और खुरों से सुन्दर सजे हुए हैं इसी प्रकार बहुत दूध देने वाली भैंसे भी एक २ लाख की संख्या में प्रदान कीं ॥७४॥

पात्राणि दिव्यानि सुवर्णकानि सौवर्ण सूत्राश्चित वस्त्र जातम् ॥
चतुर्विधङ्कञ्चुक धौतकाद्य मुष्णीषपाटाम्वर पादुका द्यम् ॥७५॥

दिव्य स्वर्ण के पात्र तथा स्वर्ण सूत्र निर्मित वस्त्र जो कि पाट, कृमि ऊन सूती भेद से चतुर्विध और भी वस्त्र पाग धोती चरण पादुका ये सब दिये॥७५॥

सर्वाङ्ग नैपथ्य करण्ड कानि वहूनि दत्तानि नरेश्वरेण ॥
पत्राङ्ग रागाम्वर भूषणानि स्वादर्श सौगन्धिचकङ्कतीकाः॥७६॥

तथा और भी सर्वाङ्ग शृङ्गार करने की करण्डी महाराज ने बहुत दीं। पात्र, अंगराग, वस्त्र, भूषण, दर्पण सुगन्धित पदार्थ तथा कंघी आदिक ये सब वस्तुयें बहुत दीं॥७६॥

युक्ताहयैः काञ्चन स्पन्दनाश्च विभूषितै स्सूत सुसेवकैश्च ॥
एवम्विधा नागरथाः प्रदीप्ता आरोहणार्थाश्च गजापराश्च॥७७॥

सुन्दर घोड़ों से नद्दे स्वर्ण रथ, सुन्दर भूषित सूत, और सेवकों के सहित दिये, इसी प्रकार हाथियों के रथ तथा दीप वृक्ष, ढोने वाले हाथी ये सब तथा और बहुत भी समान दिया॥७७॥

प्रवालपाटीर विनिर्मितानि हेम्नश्च शय्याशन पीठकानि–
तथातपत्राणि च चामराणि सौवर्ण चित्रास्तरणानि चित्रैः॥७८॥

चन्दन की बनी हुई स्वर्ण सूत्र की, निवाड़ वाली मूंगा मणि जड़ी पर्यङ्क तथा स्वर्ण रत्नों के सिंहासन इसी प्रकार पात्र चँवर और स्वर्ण चित्रित बिछावन और भी अनेक गलीचे महाराज ने कन्या के दहेज में दिये ॥७८॥

अष्टापदाद्यन्तु सुक्रीडनार्थं यत्नैः कृतं कृत्तिम शोभनञ्च ।
सूत्रात्मक म्विस्मयकार कञ्च स्वाक्षेपविक्षेप करन्तु यच्च ॥७९॥

और सुन्दर यत्नों से रचे हुए पाशा चौपड़ खेलने के लिएदिए तथा कृत्रिम खिलौने जोकि सूत्रों से नृत्यादि विस्मयकारक करने वाले आक्षेप विक्षेप प्रसंगों को पैदा करने वाले ऐसे खिलौने दिये ॥७९॥

अहीभशुक्त्य ब्ध्यवनी प्रजाता नृपेण दत्ता मणयोप्यनन्ताः ।
नानामणीना म्मिश्रिताश्चहाराः विस्तस्यभाराः शकटेश्चनीताः ॥८०

सर्प, हाथी, सूक्तिका तथा पृथ्वी से पैदा होने वाले बहुत जाति के मणियों को भी और मिश्रित मणियों के तथा स्वर्ण के हारों के भार गाड़ियों को भर-भर करके महाराज ने दिया ॥८०॥

लक्षत्रयङ्किङ्कर किङ्करीणां दिव्याम्बराभूषणभूषितानाम् ।
तथा वयस्याः सुखयानकस्थाः समान शीला गुण रूप तोपि ॥८१॥

तीन लाख दास दासी दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषित अङ्ग इसी प्रकार बहुत सी सखियां जो कि सुकान्ति के समान शील गुण रूप वाली सुखपालों में बैठा करके सुकान्ति के लिए दिया ॥८१॥

सुगायका तोद्यकला सुदक्षाः सुचित्रकारादिक शिल्पिनोपि ।
तथापणाः सञ्चल सद्मकाश्च वस्त्रान्न वित्तादि समस्त वस्तुकाः ॥८२

हावभाव कलाओं में बड़ी पण्डिता सुन्दर गाने वाली सखियों को तथा मान कराने और छुड़ाने की कला में कुशला चित्रकारी आदिक शिल्पो कला कुशला तथा चौपड़ खेल कला में कुशला ऐसी सखियों को और चलायमान महल तथा वस्त्रान्नादियुक्त बजार धन भो बहुत दिया ॥८२॥

अनश्वकोष्ट्रा बहुभारधाश्च गोस्कन्धजानानि तथा विधानि ॥
हस्त्यश्वपादातिरथैः समाङ्गसैन्यञ्च त्र्यक्षौहिणि सन्मितञ्च ।८३।

खच्चर, ऊँट बैल आदि बहुत बोझा को ढोने वाले जानवरोंको तथा विविध प्रकारकी बैलगाड़ियां भी दिया। हाथी, घोड़े, पैदल रथो—इस प्रकार चतुरङ्गिणी तीन अक्षौहिणी सेनाओं को भी दिया ॥८३॥

समर्प्यरामाय समस्तमेत त्पुत्र्याः प्रदाने शुभश्रध्दयाच ॥
बध्वाञ्जलिस्त्रात्मलघुत्व मुद्वह न्नुवाच राजा स बृहत्स भायाम् ॥८४

इस प्रकार पुत्री के विवाह काल में समस्त वस्तुओं का श्रीरामजी के लिये समर्पण करके फिर कार्पण्यता पूर्वक हाथ जोड़ करके विशाल सभा के बीच राजा योगधीर जी बोले ॥८४॥

राजोवाच-श्रीराजराजेन्द्र कुमाररा म नस्यात्समत्वं त्वयि मे कदाचित्।
अङ्गीकृतो यत्कृपया त्वयाह मुद्वाह कार्य्यन्तुभवेद्विशाम्ये ॥८५॥

कि हे राजेन्द्रकुमार श्रीरामजी मेरेमें आपको पूर्ण करनेकी समता बिल्कुल नहीं है। यहजो श्रीचक्रवर्ति जी महाराज से विवाह विधि पूर्वक सम्बन्ध हुआ है । यह केवल आपकी अहैतु की कृपा ने ही मुझे अंगीकार किया है ॥८५॥

शक्ति र्नमे राम तवार्च नार्हा किंपल्वलस्यार्णव माप्नुवन्तु ॥
खद्योतकैः किन्तु रवेः सहायम्मेरोः सहार्याङ्कमुरेणुभिस्स्यात् ॥८६॥

हे राम! मेरे में आपकी पूजा कर सकने की कोई शक्ति नहीं है क्योंकि एक छोटी तलाई समुद्रको क्या पूरण कर सकेगी? एक जुगुनू सूर्य को क्या प्रकाश की सहायता कर सकेगा? एक रेणुका सुमेरु की क्या समता कर सकेगी?॥८६॥

परन्तु त्वां तोषयितुश्च साधुभिः शुद्धैक भावः प्रकटी कृतः श्रुतौ॥
तेनैव त्वत्तोषण मावहाम्यह न्नदश्यते तद्विरहे प्यलौकिके॥८७॥

परन्तु आपको सन्तुष्ट करने के लिये वेदों और महात्माओं ने केवल एक शुद्ध भाव को ही प्रकट किया है। मैं भी इसी से आपको सन्तुष्ट कर रहा हूँ इसके अतिरिक्त मेरे में कोई भा लौकिक साधन नहीं है ॥८७।

इत्थश्च राम श्वशुरेण दैन्यैः प्रतोषितोभावभृतै सुवाक्यैः ॥
रामोऽपि तं वाक्कुसुमै स्सम्मर्च्य चकार गण्यंगुरुणां समाजे॥८८॥

इस प्रकार कार्पण्यता से भावमयी अमृत वाणियों से श्वसुर ने श्रीरामजी को सन्तुष्ट किया। श्रीरामजी ने भी अपने वचन रूपी पुष्पों से सम्यक पूजा किया गुरू महाराज ने भी सभा में अग्रगण्य प्रतिष्ठित किया ॥८८॥

वशिष्टश्च सुमन्तश्च श्रीमद्दशरथेण वै ॥
समम्मत्वा पूजितौ तौ योगधीरेण सक्रमैः ॥८६॥

महाराज श्रीयोगधीर जी ने भी श्रीवसिष्ठ जी को और श्रीसुमन्त्र जी को श्रीमहाराज दशरथ जी के बराबर मान करके दोनों की क्रमशः पूजा किया ॥८६॥

अर्चयित्वा मण्डलीं तु वशिष्टादि महात्मनाम् ॥
याचिका वृत्तिका स्तोद्य वादकाश्चप्रतोषिताः ॥६०॥

उसके बाद बरात की समस्त मण्डलियों को तथा बसिष्ठ जी के बाद सब ऋषि महात्माओं को और याचक वृत्ति वाले भाट आदिको तथा बाजा वालों को भो सम्यक् प्रकार सन्तुष्ट किया ॥६०॥

गजाश्व रथ दानैश्च वस्त्र भूषण विस्तकैः ।
आदरो ज्वल सद्वाग्भि र्योगधीर महीक्षिता ॥६१॥

हाथी घोड़े रथ वस्त्र भूषण स्वर्ण सबको पर्याप्त दिया तथा आदरणीय शब्दों से भी सबको तृप्त किया ॥६१॥

ततः शुभातु पुरुषाणाम्मण्डपाङ्गणतोवहिः ।
ययौ तत्र च नारीणां तरुणीनां समागता ॥६२॥
सर्वाश्च पुरवासिन्य स्तथा राजकुलाङ्गनाः ॥
समावृत्य स्थिता सर्वाः श्रीरामं मोहनेक्षणम् ॥६३॥

इस प्रकार सम्पूर्ण बराती समाज को मण्डप के अन्दर पूज करके फिर वह सभा तरुणी स्त्रियों के मङ्गल वैवाहिक गान पूर्वक मण्डप के आंगन से बाहर आई। पुर की स्त्रियायें तथा राजकुल की स्त्रियायें मन मोहिनी कटाक्ष वाले श्रीरामजी को घेर करके ॥६२-६३॥

निरीक्ष्य वरवेषं श्रीरामङ्कामाति सुन्दरम् ॥
वर्जनायात्मनौदृष्टे दोंष नार्य्यों विचक्षणाः ॥६४॥

काम से भी अधिक सुन्दर श्रीरामजी को दुल्हा वेष में देख करके दृष्टि दोष के डर से सूक्ष्म बुद्धि वाली स्त्रियां राई लोन उतारती हैं ॥६४॥

परिवार्य्यपरिवार्य्य मुक्तानाश्चान्य रत्नकाः ।
मालाश्चांशुक दिव्यानि क्षिपन्त्यानन्द निर्भराः ॥६५॥

तथा रत्न मुक्ताओं की मालाओं को और दिव्य वस्त्रोंको प्रेम आनन्द विभोर होकर न्यौछावर कर करके फेंक देती हैं ॥६५॥

गानं कुर्वन्ति सर्वास्ताः सम्बन्धो क्त्या कलस्वरैः॥
काचित्कपोलं संस्पर्श्य ददात्यामोद वीटिकाम्॥६६॥

और कोकिल कण्ठ से सबकी सब सम्बन्ध रीति के अनुसार गान करती हैं कोई स्त्रायें आनन्दमयी पान बीड़ा पवाती हूई कपोलों का स्पर्श करती हैं ॥६६॥

अर्घपाद्यादि विधिना वनिताभि र्नीराजानम् ॥
सर्वांगसुन्दरस्यास्य कृतम्वाद्य स्वरोध्द्तैः॥६७॥

फिर अर्घ्य पाद्यादि विधियों से सर्वाङ्ग सुन्दर श्याम श्रीरामजी की बाजाओं की ध्वनि ऊंचे स्वर से गान पूर्वक आरती करती हैं ॥६७॥

एवंकृत्वा सखीत्वेका प्रगल्भा राजवन्शजा ॥
मन्दस्मितोवाचरामं कटाक्षैश्चित्त कर्षयन् ॥६८॥

इस प्रकार आरती होने पर कोई सुन्दर प्रतिभा वाली राजवंशीय कन्या श्रीरामजी को कटाक्ष करके चित्त टुराती हुई मन्द मुस्क्या कर बोली ॥६८॥

राजपुत्राधुना त्वंहि लोकरीत्या सुखाय वै ।
अस्माकं कुल् देवीया तांसमर्च्चयभावतः ॥६९॥

हे राजकुमार ? एक हमारे कुल की देवी है आप लोक रीति के अनुसार सुख प्राप्ति के लिये उस देवी की भाव पूर्वक पूजा करें ॥६९॥

आगच्छात्र मयासार्ध्दं दर्शयामि गृहान्तरे ॥
एवमुक्त्वा वरो रामो वधूभिः पट ग्रन्थितः ॥१००॥

इस लिए आप मेरे साथ आइये मैं आपको उस देवी का दर्शन कराऊगी—ऐसा कह कर वर-दुल्हिन परस्पर पट-ग्रन्थि बांध करके ॥१००॥

मण्डपादन्य गेहान्ते समानीतः स कौतुकम् ॥
यत्र चैका कुमारी तु हास्यायतनतः शुभाः ॥१०१॥

मण्डप से अलग एक घर में लिवा लायी जहां पर बहुत सी कुमारिकाओं ने सुन्दर हास्यकारक बहुत से यत्नों की रचना कर रक्खी थी, वहां लिवा लायी ॥१०१॥

प्रकल्पिता महाकाली कज्जलांग विलेपनैः ॥
अर्च्चयस्वेति सर्वाभिः प्रेरितो रघुनन्दनः ॥१०२॥

उन कौतुकों में एक कज्जलसे परिलिप्त अङ्गवाली कुमारीको महाकाली रूपमें कल्पित कर रक्खा था सब सखियां मिल करके श्रीरघुनन्दन जू को इनकी पूजा कीजिये ऐसा कहकर प्रेरित किये ॥१०२॥

श्रीरामचन्द्र उवाच–यूयन्तु गच्छत वहि स्तदैकान्ते यथेच्छया ॥
मूर्त्ति मिमा मर्च्चयामी त्येवम्रामो ब्रवीद्धसन् ॥१०३॥

श्रीरामजी बोले कि आप सब बाहर चली जाओ मैं इन देवी जी को एकान्त में इच्छा पूर्वक पूजा करूंगा, इतना कहकर हंसते हुए श्रीरामजी को ॥१०३॥

कथमेवं राजपुत्र लज्जास्माकं तवोचिता ॥
समत्तंपूजय स्वात्म सुख वर्द्धन कारणम् ॥१०४॥

सब सखियां हे राजपुत्र ! हमसे आप इतनी लज्जा क्यों करते हैं यह उचित नहीं है। हम लोगों के सामने सबकी आत्मा को सुख देने के कारण इस पूजा को कीजिये ॥१०४॥

तदा विचक्षणे नैव रामेणाश्लिष्य द्वौ करौ ॥
उत्थापिता कल्पमाना नेवम्मैवम्ब्रु वत्यपि ॥१०५॥

ऐसा सबके कहने पर सूक्ष्म बुद्धि वाले श्रीरामजी उस देवी को दोनों हाथों से आलिंगन करके उठाने लगे। सखियां उस कल्पित देवी को उठाते देखकर नहीं २ ऐसा मत करो, इस प्रकार बोलीं ॥१०५

सात्विकेन स्तम्भमाना सम्पर्का त्पुरुषस्यसा ॥
प्लायितुश्च न शक्ताहि लज्जया धो मुखीस्थिता ॥१०६॥

श्रीरामजी के आलिगन करने पर पुरुष के सम्पर्क से स्तम्भ, कम्प आदिक सात्विक भाव उस कल्पित देवी अर्थात् वास्तविक सखी के अङ्ग में उत्पन्न हुए। वह लज्जा से नीचे को मुख की हुई भाग भी न सकी ॥१०६॥

इत्थं हास्यादि यद्रीतिङ्कृत्वा तु प्रमदागणैः ॥
वधूवरौ सपर्यंके स्वापितौ मण्डपायने ॥१०७॥

इस प्रकार हास्य की बहुत सी रीतियों द्वारा प्रमदा गणों ने वर-वधू को मण्डप के अन्दर पर्यङ्क पर शयन कराया ॥१०७॥

पुनः प्रभाते ताभिश्च श्नापितौ लालितै र्यथा ॥
कारितं भाजनं दिव्यैरसैः षड्भिः समन्वितम् ॥१०८॥

इस प्रकार रात बीतने पर प्रातःकाल ललित गान पूर्वक जगाये, स्नान आदिक कृत्य कराये, दिव्य षटरसों के पदार्थों का भोजन कराए ॥१०८॥

अत्यादरेण राज्ञातु वशिष्टश्च सुमन्तकम् ॥
आहूय गुरुणा साक्षा द्विनयाद्वहु वन्दनैः ॥१०६॥

उधर महाराज योगधीर जी ने अत्यन्त आदर पूर्वक श्रीवसिष्ठ जी सुमंत्र जी को गुरु महाराज द्वारा बुलाकर साक्षात् बिनय पूर्वक प्रणाम करके ॥१०६॥

स्वर्ण पीठे च संस्थाप्य कोमलास्तरणेशुभे ।
समस्तै र्वरजानस्य जनैरुत्तम मध्यमैः ॥११०॥

स्वर्ण सिंहासनों में कोमल सुन्दर बिछावनों में समस्त बरातीजनों के सहित उत्ताम मध्यम उचित विभाग पूर्वक बैठा करके ॥११०॥

सार्द्ध श्चाकारी सत्प्रेम्णा रसैः षड्भिश्चतुर्विधम् ।
भोजनं योगधीरेण वस्त्रादि दक्षिणोत्तरम् ॥१११॥

बड़े प्रेम से सब बरातियों को एक साथ षटरस चार प्रकार के भोजन को पवाकर बाद में श्री योगधीर जी ने वस्त्र दक्षिणादि दिया ॥१११॥

भोजनानन्तरं राज्ञा दिव्यागारे मनोहरे ॥
सुमन्तेन समं देवो वशिष्टः काञ्चनाशने ॥११२॥

इस प्रकार भोजन के बाद श्रीवसिष्ठजी और श्रीसुमन्त्रजी को एकान्त मनोहर दिव्य महल के अन्दर दो स्वर्ण सिंहासनों में साथ बैठाया ॥११२॥

प्रतिष्ठाप्य यथायोग्ये पूजितौ वस्त्रभूषणैः ॥
ताम्बूल वीटिकाभिश्च सभ्याश्चान्ये पिभावतः ।११३॥

और यथा योग्य विधि से वस्त्र भूषण पान सुगन्धि आदिक पदार्थों द्वारा भाव पूर्वक पूजा की ॥११३॥

ततश्चान्ये जनाये च वरजाने समाहितः ॥
सेवकैः पूजिताः सर्वे ताम्बूलै र्वस्त्रभूषणैः ॥११४॥

इस प्रकार बरात में सभी जनोंको यथा योग्य विधि से सावधान सेवकों द्वारा वस्त्र भूषण पानादि से पूजा की ॥११४॥

अतः परं वरोरामो वधूभिश्च मनोहरः ॥
भूषयित्वा वशिष्टाग्रे समानीयसमर्पितः ॥११५॥

इसके बाद मनोहर मूर्ति दुल्हा श्रीरामजी को सब स्त्रियों ने भूषित करके वधुओं सहित लाकर श्रीवसिष्ठजी के आगे समर्पित किया ॥११५॥

तमादाय मुनीशस्तु सत शैन्यैः समन्वितः ॥
वाद्यानाञ्च महानादैः स्वनिवाशं समागमत् ॥११६॥

इस प्रकार श्रीरामजी को लेकर मुनीश्वर श्रीवसिष्ठ जी भी सेना के सहित गान बजान महानाद पूर्वक अपने निवास स्थान में आए ॥११६॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां शिवाशिवसम्वादे सुकान्त्या विवाहोनामैकोनपञ्चशत्तमः सर्गः ।।४९।।

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सुकान्त्या विवाहो नामैकोन पञ्चाशत्तमः सर्गः शमाप्तः ।।४९।।

सार्द्धं दिनत्रयं राजा योगधीरः सुप्रीतिमान ।।
मार्गे तु वर जानेन ह्युषित्वापुर माविषत् ।।१।।

बड़े अनुरागी महाराज श्रीयोगधीर जी भी तीन दिन तक बरातियों के साथ पहुँचाने के लिये जाते हुए मार्ग में निवास किये उसके बाद अपनी नगरी में लौट आए ।।१।।

गच्छन्मार्गे वभौराम वर वेषो मनोहरः ।।
मार्गस्थ स्त्री पुरुषाणां वहुसैन्यैः समावृतः ।।२।।

दुल्हा बेश में अति मनोहर श्रीराम जी मार्ग में बहुत सेना बरातियों से घिरे हुए मार्गस्थ स्त्री पुरुषों के मनों को चुराते हुए जारहे हैं ।।२।।

योजन त्रयमेवासु लंघयित्वा दिनंप्रति ।।
रात्रौतु निवशन्नित्य माजगाम स्वयं पुरीम् ।।३।।

इस प्रकार तीन योजन रोज चलते हुए कुछ रात्रि रास्ते में ठहर कर श्रीअयोध्या पुरी में पहुँच गये ।।३।।

अथ शुभ दिने देवि श्रीरामः पितृ मन्दिरम् ।।
आज्ञापितो वशिष्टेन विवेश मातृमोददः ।।४।।

उसके बाद हे पार्वती ? श्रीरामजी सुन्दर दिन मुहूर्त में श्रीवसिष्ठजी की आज्ञासे माता पिताओं के महल में आनन्द देते हुए प्रवेश किये ।।४।।

श्वश्रूणांतु वधू सर्वाः पादौ संस्पृश्य मोदिताः ।।
सुवाक्यै स्तोषिता स्ताश्च श्वश्रु भिश्च मनोहरा ।।५।।

सब बधुओं ने सासुओं के चरणों को आनन्द मग्न होकर स्पर्श किया, सासुओं ने भी मनोहर बधुओं को सुन्दर बचनों से सन्तुष्ट किया ।।५।।

सीतायास्तु स्व स्वामिन्याः सुकान्ती चरण द्वयम् ।।
संस्पृशन्ती कुतः कस्मा द्विस्मृताः सर्वशः स्मृति ।।६।।

उसके बाद सुकान्ति ने अपनी स्वामिनी श्रीसीताजी के दोनों चरणकमलों को स्पर्श किया। मैं कौन हूँ ? कहां पर हूँ ? सब स्मरण भूल गयी ।।६।।

सीता सौशील्य हृदया ताम्वीक्ष प्रेम निर्भराम् ।।
सूत्थायानीय हृदये प्रीति वाग्भिः प्रतोषिता ।।७।।

सुन्दर सुशील हृदया श्रीसीताजी प्रेम वेहोश सुकान्ति को देखकर उठाकर हृदय से लगायी सुन्दर प्रेम भरी वाणी से सन्तुष्ट किया ।।७।।

अनीयभवने तत्र कनकाख्ये परार्द्धके ॥
निवाशाय रहस्यार्थं दत्तं दिव्यं सुमन्दिरम् ॥८॥

इस प्रकार विसकीमतीय रत्नों से निर्मित कनकभवन नामक अपने महल में लाकर रहने के लिए एकान्त सुन्दर दिव्य भवन दिया ॥८॥

सुकान्ति रुवाच–हेसीते जनकात्मजे रघुवर प्राणप्रिये श्रूयताम्॥
पादौ पद्म मनोहरौ भवति ते सन्मन्दिरम्मे सदा ॥
तद्वैदेहि प्रदेहि निश्चल धिया सद्भिश्च संसेवितम् ॥
नान्य मस्ति मान्तु सुखद स्त्वत्पादभिन्नं गृहम् ॥९॥

सुकान्ति बोली कि हे सीते ! हे जनक तनये ! हे रघुवर प्राणप्रिये ! सुनिये । कमल सदृश सुन्दर मनोहर आपके चरण ही मेरे हमेशा के लिए मन्दिर हैं । हे वैदेही ! निश्चल बुद्धि से सज्जनों द्वारा सुसेवित उन अपने चरणकमलों को ही मुझे सेवा के लिए दीजिये यही मेरी इच्छा है इसके अतिरिक्त महल मुझे सुखदायी नहीं हैं ॥९॥

या या मे हृदये मनोरथ तती दुर्घट्यमाना प्यसौ–
त्वत्पाद स्मरणा त्समस्तविधिना सम्पूजिता सत्फलैः॥
साक्षात्स्वामिनि तत्पदाब्ज युगलं सद्भक्तिभाव्यञ्जनै–
र्द्रष्टुंच्छामि नदृश्यतेति सुखदं लोकत्रये वस्तु तत् ॥१०॥

हे स्वामिनी जी मेरे हृदय में जो २ मनोरथ थे वे अघटित होने पर भी आपके चरण स्मरण से सम्यक् विधि से उत्तम फल प्राप्त होकर पूर्ण हुये । साक्षात् पवित्र भक्ति से भक्तों द्वारा भावित आपके जुगल चरणकमलों को ही मैं साक्षात् देखना चाहती हूँ । इन चरणों से अतिरिक्त मुझे तीनों लोक में कोई भी सुखदाई नहीं दीखता है ॥१०॥

श्रीशिव उवाच–यथार्थं वचस्तस्या प्रीतियुक्तं मनोहरम् ॥
श्रुत्वा त्वास्वास्य जानक्या ह्याश्लिष्य वाग्भिस्तोषिता ॥११॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती सुकान्ति के प्रेम से भरे यथार्थ मनोहर शब्दों को सुनकर श्री जानकी जी ने सुकान्ति को हृदय से लगाया । सुन्दर शब्दों से सन्तुष्ट किया ॥११॥

मुख्याः सख्यस्तु सीताया स्तासां म्मुख्यत्वमण्डले ॥
स्थापिता चाभिषेकेन कृत्वा मङ्गल मुत्सवम् ॥१२॥

श्रीसीताजी की जो मुख्य सखियां हैं उनके भी मुख्यों के मण्डल में सुन्दर मङ्गल उत्सव पूर्वक यूथेश्वरी पद के आसन में अभिषेक करके बैठाया ॥१२॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां शिवाशिवसम्वादे सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नाम पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५०॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नाम पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५०॥

श्रीशिवउवाच–एवं येरसिकाभक्ताः शृङ्गारभाव संश्रया ॥
सिद्ध काले प्राप्नुवन्ति जानक्याः कृपयान्विता ॥१॥

श्रीशिव जी बोले हे पार्वती ! श्रीरामजी के शृङ्गार भाव वाले रसिक भक्तों को सिद्ध काल में श्रीजानकी जी की कृपा से प्राप्ति होती है ॥१॥

अथातो योग धीरस्य पुरतो वामभागके ॥
देशो नाम्ना सैकलस्स्या द्राजा तत्र सुयोधनः ॥२॥

इसके बाद योगधीर जी की नगरी के बाम भाग में एक सैकल नामक देश है वहां राजा सुयोधन ॥२॥

भार्य्या स्तस्य महाभागा अष्टाविंशति सद्व्रताः ॥
भ्राता राज्ञोधवल्लाद्यः प्रीतिमाश्च सुयोधने ॥३॥

उनकी महाभाग शालिनी अट्ठाईस स्त्रियां यें बड़ी पतिव्रतायें थीं उसी प्रकार सुयोधनके एक भाई धवलाद्य नाम के थे जो सुयोधन में बड़ी प्रीति रखते थे ॥३॥

तस्यापि पत्नी सद्रूपा अष्टावेव गुणोत्तराः ॥
द्वे द्वे सुते च सर्वासु जाते तस्य महात्मनः ॥४॥

उनकी सुन्दर उत्तम गुण रूपवती आठ स्त्रियायें थीं उनसे महाराज धवलाद्य जी के दो दो कन्यायें उत्पन्न हुईं ॥४॥

सुयोधनस्यया भार्य्यास्तत्राष्टासु त्रयं त्रयम् ॥
द्वयं द्वय श्चापरासु पुत्रीणां जातमद्भुतम् ॥५॥

राजा सुयोधनके आठ स्त्रियों से तो तीन २ कन्यायें उत्पन्न हुई अन्य सबसे दो २ कन्यायें उत्पन्न हुई जोकि सभी अद्भुत थीं ॥५॥

उपदेशा न्नारदस्य तासाञ्च पूर्व साधनैः ॥
विवाहिताः राघवाय सुदायैगु ण वत्तराः ॥६॥

श्रीनारद जी के उपदेश से तथा पूर्वजन्मों के साधनों से उत्तम दामाद श्रीरामजी के लिये ही इन सब उत्तम गुण वाली कन्याओंका विवाह हुआ ॥६॥

एतस्याग्रे महादेवि देशः कज्जल नामकः ॥
तत्रासी त्क्षत्रियो राजा नाम्ना तीव्रौजसोवली ॥७॥

हे पार्वती ! इस सैकल देश से आगे एक कज्जल नामक देश है वहां के राजा तीव्रौज नाम के बड़े बलवान थे ॥७॥

बिल्वकाश्चपुरीतस्य सुप्रजाभिश्च संकुला ॥
दुर्गत्रय समावृत्ता रक्षितापि महाभटैः ॥८॥

उनकी नगरी का नाम बिल्वकापुरी है जो उत्तम धार्मिक प्रजा से भरी है उस नगरी में प्रजा तीन परकोटाओं से सुरक्षित है फाटकों पर पहलवान रक्षा करते हैं ॥८॥

तस्यराज्ञस्तु पत्नीनां सहस्रम्मनोहरम् ॥
तासाञ्च कौतुक न्देवि श्रूयताम्यद्बभूवच ॥९॥

उन महाराज तीव्रौज की उत्तम मनोहर एक हजार स्त्रियायें थीं। हे पार्वती! उन सबके साथ एक अद्भुत कौतुक हुआ है सो सुनो ॥९॥

एकदा मिलिताः सर्वाः श्चातुम्प्रासाद वाटिकाम् ॥
तड़ाग मागता स्ताश्चसखी दासी परिवृताः ॥१०॥

वे सब एक हजार स्त्रियायें मिल करके एक बार अपनी वाटिका के सरोवर में स्नान करने गयी थी। सरोवर के किनारे अपनी दासी सखियों से घिरो हुई ॥१०॥

जले प्रविश्य ताभिश्च कृता क्रीडा कुतूहलैः ॥
कौतूहलेन स्नात्वा वै विवस्त्रा स्तट माश्रिताः ॥११॥

इकट्ठे जल में प्रवेश किये। स्नान करते हुये उन्होंने बहुत क्रीड़ा कौतुक करने पर अङ्ग से विवस्त्रा होगयीं इसी प्रकार किनारे पर चली आयीं ॥११॥

ताः दृष्ट्वाच सुन्दराङ्गी मुह्यमानो दिवाकरः ॥
अवतीर्य्य महीं साक्षात्संस्पृश्य मुदमाययौ ॥१२॥

उन सुन्दर अङ्ग वालियों को देखकर सूर्य मोहित हो नर रूपसे साक्षात् पृथ्वीमें उतर करके उन सबका स्पर्श किया आनन्दित हुए ॥१२॥

प्रसन्नेन पुन स्ताभ्यो वरो दत्तोति सौख्यदः ॥
रविरुवाच-भवत्यः श्रूयतांसर्वाः मम संस्पर्शक म्फलम्॥१३॥

फिर प्रसन्न होकर उन सबके लिए एक सुखदायी वरदान दिए। रवि बोले कि आप सब सुन मेरे स्पर्श का फल ॥१३॥

यूयम्भविष्यथ प्राप्ते काले सुकृत मूर्तयः ॥
सुतास्तासाम्मातरोहि यशः कीर्त्ति सुखादिकाः ॥१४॥

आप लोग भविष्य में पुण्य की मूर्ति होकर फल प्राप्त करोगी। तुम्हारी पुण्य मूर्ति कन्यायें महान सुखदायी यश कीर्तिमती होंगी उनकी तुम माता होओगो ॥१४॥

एकैकस्याम्मम नाम्ना भविष्यन्ति सुतादश ॥
ताषाम्विवाहो योध्यायां रामचन्द्र मनोहरे ॥१५॥

आप सबमें एक २ से दस २ कन्यायें मेरे नाम से होंगी उन सबका विवाह श्रीअयोध्या में मनोहरमूर्ति श्रीरामचन्द्र जी के साथ ॥१५॥

भविष्यति मनोज्ञानां सत्यंसत्यं वचोमम ॥
एव मुक्त्वातु दिव्यानांमणीनां तेजसा वृतम् ॥१६॥

होगा। यह मेरा वचन तुम सत्य समझना। इस प्रकार उन मनरमणीया स्त्रियों के लिए वरदान देकर दिनमणि अपने तेज से प्रकाशमान हो कर आकाश मार्ग से चल गये ॥१६॥

ताभ्यश्च दत्तवान्हारं खञ्जगाम दिवस्पतिः ॥
राजानम्प्रति ताभिश्च चरित्रञ्चि चमत्कृतम् ॥१७॥

उन सब स्त्रियों के लिए सुन्दर प्रकाशमान एक २ हार दे गये वे सब स्त्रियायें भी राजा के समक्ष आ करके उस चमत्कारमयी चरित्र को सब सुनाया ॥१७॥

कथित निश्छलत्वाद्धि कालोत्तर सुख प्रदम् ॥
एकान्तेच समाहूय नृपेण स विवेकिना ॥१८॥

भविष्य में सुख देनेवाली निश्छलता पूर्वक कही हुई उन स्त्रियोंकी बातों को सुनकर बड़े विवेकी राजा ने एकान्त में ॥१८॥

त्रिकालज्ञे गुरौसर्वंयभ्दूत न्तन्निवेदितम् ॥
तदाभूतम्भविष्येननिमित्त कथनेन वै ॥१९॥

अपने त्रिकालज्ञ गुरू को बुलाकर यह जो कुछ हुआ था सारा समाचार गुरु जी के लिये निवेदन किया। भविष्य के निमित्त यह जो कुछ भी हुआ था इसको राजा के कहने पर ॥१९॥

गुरुणा बोधितो राजा श्रुत्वासोपि सुखम्ययौ ॥
पुन वर्षेव्यतीतेच राज्ञी सुलग्नकेशुभे ॥२०॥

गुरू जी ने राजा को समझाया। राजा भी सुन समझकर सुख को प्राप्त होगये। एक वर्ष बीतने पर उन सब रानियों से सुन्दर सुलग्न में ॥२०॥

शुभयोगेग्रहे चापि रवेर्वाक्य प्रमाणतः ॥
तेजसा पूरिताङ्गाश्च लक्षणाढ्या मनोहराः ॥२१॥

शुभ योग और उत्तम ग्रहों में सूर्य के वचन प्रमाणानुसार महान् तेज से प्रकाशमान अङ्गवाली सत्लक्षण सम्पन्ना मनोहराङ्गी ॥२१॥

सर्वाः सुकण्ठ रत्नाश्च सुता जाताः शुभाननाः ॥
प्राप्त कालेतु ताः कन्याः महोत्सव विधानतः ॥२२

कण्ठों में सुन्दर रत्नों को पहनी हुई इसी प्रकार सुन्दर मुख वाली सब कन्यायें पैदा हुईं। समय आने पर महान उत्सव विधान पूर्वक उन सब कन्याओं का ॥२२॥

महतापि सुदायेन रामेराज्ञा सुयोजिताः ॥२३॥

महान सुन्दर दामाद श्रीरामजी के लिए राजा तीब्रौज ने विवाह कर दिया ॥२३॥

इति श्रीशङ्कर कृते अमररामायणे श्रीसीतारामरत्नमञ्जूषायां शिवाशिव सम्वादे सूर्य्य कन्या विवाहो नामैकपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५१॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सूर्यकन्या विवाहोनामैक पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५१॥

ताभ्यश्च दत्तवान्हारं खञ्जगाम दिवस्पतिः ॥
राजानम्प्रति ताभिश्च चरित्रञ्चि चमत्कृतम् ॥१७॥

उन सब स्त्रियों के लिए सुन्दर प्रकाशमान एक २ हार दे गये वे सब स्त्रियायें भी राजा के समक्ष आ करके उस चमत्कारमयी चरित्र को सब सुनाया ॥१७॥

कथित न्निश्छलत्वाद्धि कालोत्तर सुख प्रदम् ॥
एकान्तेच समाहूय नृपेण च विवेकिना ॥१८॥

भविष्य में सुख देनेवाली निश्छलता पूर्वक कही हुई उन स्त्रियोंकी बातों को सुनकर बड़े विवेकी राजा ने एकान्त में ॥१८॥

त्रिकालज्ञे गुरौसर्वंयभ्दूत न्तन्निवेदितम् ॥
तदाभूतम्भविष्येननिमित्त कथनेन वै ॥१९॥

अपने त्रिकालज्ञ गुरू को बुलाकर यह जो कुछ हुआ था सारा समाचार गुरु जी के लिये निवेदन किया। भविष्य के निमित्त यह जो कुछ भी हुआ था इसको राजा के कहने पर ॥१९॥

गुरुणा बोधितो राजा श्रुत्वासोपि सुखम्ययौ ॥
पुन र्वर्षेव्यतीतेच राज्ञी सु लग्नकेशुभे ॥२०॥

गुरू जी ने राजा को समझाया। राजा भी सुन समझकर सुख को प्राप्त होगये। एक वर्ष बीतने पर उन सब रानियों से सुन्दर सुलग्न में ॥२०॥

शुभयोगेग्रहे चापि रवेर्वाक्य प्रमाणतः ॥
तेजसा पूरिताङ्गाश्च लक्षणाढ्या मनोहराः ॥२१॥

शुभ योग और उत्तम ग्रहों में सूर्य के वचन प्रमाणानुसार महान् तेज से प्रकाशमान अङ्गवाली सत्लक्षण सम्पन्ना मनोहराङ्गी ॥२१॥

सर्वाः सुकण्ठ रत्नाश्च सुता जाताः शुभाननाः ॥
प्राप्त कालेतु ताः कन्याः महोत्सव विधानतः ॥२२

कण्ठों में सुन्दर रत्नों को पहनी हुई इसी प्रकार सुन्दर मुख वाली सब कन्यायें पैदा हुईं। समय आने पर महान उत्सव विधान पूर्वक उन सब कन्याओं का ॥२२॥

महतापि सुदायेन रामेराज्ञा सुयोजिताः ॥२३॥

महान सुन्दर दामाद श्रीरामजी के लिए राजा तीब्रौज ने विवाह कर दिया ॥२३॥

इति श्रीशङ्कर कृते अमररामायणे श्रीसीतारामरत्नमञ्जूषायां शिवाशिव सम्वादे सूर्य्य कन्या विवाहो नामैकपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५१॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सूर्यकन्या विवाहोनामैक पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५१॥

अतः परन्तु देशोऽस्ति नाम्ना कोशालको वृहत् ॥
तत्र राजपुरी नाम्ना नन्दकाशालपञ्चकाः ॥१॥

इससे आगे एक बहुत बड़ा कौशल नाम का देश है वहाँ उस देश में नन्दका नाम की नगरी पांच परकोटा वाली है ॥१॥

राजा तत्रास्ति देवोजा देवता तुल्य ओजसा ॥
सुवली नाम तस्यास्ति भ्राता राज्ञस्तु सन्मतः ॥२॥

उस नगरी के राजा श्री देवौजा जी देवताओं के समाम पराक्रमी हैं उन देवौजा के एक सुवली नामक भ्रात। राजा के अत्यन्त प्रिय हैं ॥२॥

त्रिशत ञ्चैवत्रिंशच्च भार्य्या राज्ञः शुभाननाः ॥
भ्रातुश्चापि त्रयस्त्रिंशत्तस्यराज्ञो वराननाः ॥३॥

उन महाराज देवौज जी के तीन सौ तीस स्त्रियायें सुन्दर मुखचन्द्र वाली हैं उनके भ्राता सुवली के भी तैंसीस सुन्दर मुखचन्द्रवती स्त्रियायें है ॥३॥

द्वयो श्चापि द्वौ द्वौ पुत्रौ ह्येकैकायाम्बभूवतुः ॥
विद्यावन्तौ च बलिनौ प्रजानांहिमुद प्रदौ ॥४॥

उन दोनों भाइयों के दो दो पुत्र एक २ स्त्री से उत्पन्न हुए जो बड़े विद्वान, बलवान, प्रजा को आनन्द देने वाले हुए ॥४॥

प्रजाश्चापि धर्म्मरताः सद्गुणैर्विभवैर्युताः ॥
राष्ट्रेऽपि कुशलन्तस्य धन धान्यैश्च सर्वदा । ५॥

सुन्दर धर्मात्मा ऐश्वर्य मान, प्रजा से अत्यन्त मान्य इस प्रकार उन महाराज के राज्य में धन धान्य से सर्वदा कुशल रहती थी ॥५॥

तस्य राज्ञश्चैकदाहिभार्य्या अत्यन्त शोभनाः ॥
क्रीडनार्थं शरद्रात्रौ मिलिताः च्चोममागताः ॥६॥

उन महाराज की अत्यन्त सुन्दरी पत्नियां एक समय शरदपूर्णिमा की रात्रि में सब मिल करके खेलने के लिए अपने महल के छत पर गयीं ॥६॥

ताभिरुच्चस्वरैर्गानं कृतं चित्तापकर्षकम् ॥
तद्गान हृत चित्तोपि पूर्ण एव कलानिधिः । ७॥
आकाशादवतीर्य्याथ नारीणां मण्डलेस्वयम् ॥
सकामेनागतस्तत्र ताश्च तस्मिन्विमोहिताः ॥८॥

और ऊँचे स्वर से चित्ताकर्षक गान किया इस प्रकार उन स्त्रियों के गान को सुनकर सोलह कला सम्पन्न चन्द्रमा का चित्त हरण होगया। वह चन्द्रमा आकाश से उतर करके नारियों के मण्डल में स्वयं आया। सकामी उस चन्द्रमा ने उन स्त्रियों को विमोहित किया ॥७-८॥

शौन्दर्यातिशयेनासा मसावस्याति रूपतः ॥
इमा नार्य्यश्च सद्रूपाः प्रीति र्जाता परस्परम् ॥६॥

शौन्दर्य की अतिशयता से परस्पर मोहित हूए चन्द्रमा और वे सब स्त्रियां परस्पर स्नेह में भर गयी ॥६॥

तासु रेमे मृगाङ्कोपि रेमिरेचशुभाननाः ॥
तस्मिन्कलानिधावेवं तोषं लब्ध्वा परस्परम् ॥१०॥

मृगाङ्क चन्द्रमा उन सुन्दर चन्द्रमुखियों के साथ रमण करके परस्पर सन्तुष्ट हुए ॥१०॥

न ज्ञातं तच्चरित्रं हि केनापि देव मायया ॥
तद्योगजा ह्यमानुष्याः सुषमाति मनोहराः ॥११॥

देवमाया की वजह से यह चरित्र किसी ने भी नहीं जाना चन्द्रमा के योग्य सुन्दरी सुषमा से मनको हरने वाली अमनुष्या सदृश ही थी ॥११॥

तासु सर्वासु सञ्जाताः प्रत्येकं कन्यका दश–
शुभलग्ने शुभेयोगे सूतिका गृह द्योतका ॥१२॥

इस प्रकार उन सब स्त्रियों में प्रत्येक से दस २ कन्यायें शुभ लग्न शुभ योग में सूतिका घर को प्रकाशित करने वाली उत्पन्न हुई ॥१२॥

प्राप्ते वै चाष्टमे वर्षे तासा मुद्वाह चिन्तया ॥
युक्तो बभूव राजापि कुल रूपेण सादृशे ॥१३॥

इस प्रकार उन सब कन्याओं के आठ वर्ष पूरे होने पर राजा अपने कुल और रूप के सदृश उन कन्याओं के विवाह के लिए चिन्ता युक्त हुए ॥१३॥

गुरू राज्ञस्त्रिकालज्ञ स्तमाहूय पप्रच्छ स ॥
कथितन्तेन वै तासां जन्मतो भावितव्यकम् ॥१४॥

राजा ने अपने त्रिकालदर्शी गुरू जी को बुला करके पूछा तो गुरू जी ने भी उन सब कन्याओं के लिये जन्म से ही सब भविष्य कह सुनाया ॥१४॥

श्रुत्वा गुरु वचः सत्यं महाहर्षं समाप्तवान ॥
चकार सहसा कार्य्ये प्रवृतिं सचिवै स्तदा ॥१५॥

गुरू महाराज की सत्यवाणी को सुनकर राजा महाराजा हर्षित हो करके उन सब कन्याओं के विवाह के लिए सब मन्त्रियों से मिलकर सहसा कार्य आरम्भ कर दिए ॥१५॥

लग्न पत्रीत्वयोध्यायां प्रेषिता शुभकेदिने ॥
सचिवै श्चतुरैर्दूतै ब्राह्मणैः पण्डितैः समम् ॥१६॥

मासैकेनापि ते शीघ्रं सचिवावेगिभिहयैः ॥
प्राप्ता श्रीराम नगरीं द्युत्सव करीं शुभाम् ॥१७॥

लग्नपत्रिका लिखकर शुभ दिन में पण्डित ब्राह्मण चतुर मन्त्रियों को दूत बनाकर पत्रिका ले के श्रीअयोध्या जी में भेजे। वे सब दूत भी अपने शीघ्रगामी घोड़ों से एक महीनाके अन्दर नेत्रोत्सवस्वरूपा श्रीरामनगरी में पहुंच गये ॥१६-१७॥

पुनः प्रविश्य नगरं वशिष्टस्य शुभायने ॥
समागम्य वशिष्ठश्चतेन युक्ताश्च संस्कृताः ॥१८॥

नगर में प्रवेश करके श्रीवसिष्ठ जी के सुन्दर महल में गये। श्रीवसिष्ठ जी से समागम करके उनके सहित सत्कार पूर्वक ॥१८॥

राजराजस्य सदसि प्रसन्नानन शोभनाः ॥
आजग्मुर्नियतात्मानः सभां दृष्ट्वा सुविस्मिताः ॥१९॥

राजराजेश्वर महाराज दशरथजी की सभा में प्रसन्न मन होकर के आये। सावधान मन हुए वे सब महाराज की सभा को देखकर के चकित होगये ॥१९॥

निवेदिता वशिष्टेन कृतप्रणामा नराधिपे ॥
देशतो नामत श्चापि कार्य्यं ज्ञापनयापरम् ॥२०॥

महाराज को सब ने प्रणाम किया, उनके देश नाम कार्य का ज्ञापन श्रीवसिष्ठ जी ने महाराज को निवेदित किया ॥२०॥

सागरं सरितोन्यायान्नराणां धर्मशालिनाम् ॥
सम्पदोऽपि समायन्ति स्वत एवोत्तमा गृहम् ॥२१॥

श्रीवसिष्ठ जी बोले कि हे राजन धर्मशील पुरुषों के लिए सम्पत्ति दशो दिशाओं से अपने आप ऐसे चली आती है जैसे नदियाँ समुद्रं में जाती हैं॥२१॥

श्रीमद्दशरथउवाच-तवराज्यंगृहं ते च कर्तृत्वश्च त्वयि प्रभो ॥
क्रीयतामुत्तमं यद्धि दृश्यते चात्मनोमते ॥२२॥

श्री चक्रवर्ति दशरथ जी बोले कि हे प्रभो ! यह राज्य और घर सब आपका है जो भी उचित उत्तम कार्य आपको दीखता हो वह सब आप अपने मन के अनुसार कीजिये मैं आपका अनुचर हूँ॥२२॥

वशिष्टउवाच-धर्मशीलोसि राजेन्द्र कथम्वै नोच्यते त्वया ॥
स्वत आगन्तु मोहन्ते भूतयोपिभवादृशे ॥२३॥

श्रीवसिष्ठजी बोले कि हे राजेन्द्र ! क्यों न आप ऐसा कहेंगे ? आप धर्मशील ऐसे आप सरीखे धर्मात्माओं के लिये ऐश्वर्य अपने आप मोहित होकर के स्वतः आता है ॥२३॥

शिवउवाच-इत्थं प्रशंस्य राजानं वशिष्टेन महात्मना ॥
स्थित्वाहि व्यजन स्थानं सुमन्त्रेण चमन्त्रिणा ॥२४॥

श्रीशिवजी बोले कि इस प्रकार महात्मा श्री वसिष्ठ जी ने महाराज की प्रशंसा की और मन्त्री सुमन्त्र जी के साथ एकान्त स्थान में बैठकर ॥२४॥

निर्णित्य ज्ञापितो राजा लिखित्वा प्रति पत्रिकाम् ॥
प्रेषिताः स्वादरेणैव दूता ये दूर देशिकाः ॥२५॥

निर्णय करके एक पत्र लिखा। दूर देशिक दूतों के हाथ देकर बड़े आदर से भेजा ॥२५॥

शीघ्रं गता स्वदेशन्ते सुमन्त्रोप्यत्र शीघ्रकम् ॥
वशिष्टेन दर्शिते तु समये कार्यमावहत् ॥२६॥

वे दूत भी शीघ्र अपने देश को गये। इधर श्रीसुमन्त्र जी भी शीघ्र श्रीवशिष्ठ जी के कहने पर निश्चित समय में शीघ्र कार्य किया ॥२६॥

माङ्गल्यं च ध्वजारोप्यराजानश्च निमन्त्रिताः ॥
सर्वंहि सज्जना कारं प्रदीप्तं कृतवान्यथा ॥२७॥

एक माङ्गलिक कृत्यसहित ध्वजा को आरोपित किये। बहुत से माण्डलिक राजाओंको निमन्त्रित किया। बरात की यथार्थ सजावट सब किये जैसे कि ॥२७॥

रथेभाश्वागजा श्चैव विमानानि सहस्रशः ॥
तथैवसुखयानानि भिन्नाकाराणि कोटिशः ॥२८॥

हाथियों के रथ घोड़ों के रथ, हाथियों की सजावट उनके हौदाओं की सजावट इस प्रकार हजारों की संख्या में सजे। इसी प्रकार सुखयान आदि भी भिन्न २ आकार वाले करोड़ों की संख्या में सजे ॥२८॥

तत्स्थाना द्बहि रानीय मेलनम्व्यूह संहतौ ॥
आमात्येन कृतं सर्वम्परिस्कृत्वा विभूषणैः ॥२९॥

उन सब सेना व सामानोंको निवास स्थान से बाहर लाकर सबका मिलान करके अलग२ खण्ड मिला करके व्यूहाकार बारात को उचित अङ्ग भूषणों से सजे ॥२९॥

कोटिशः सेवकानाम्वैभूषणानि समन्ततः ॥
तथाविधानि वस्त्राणि शस्त्राणि च शुभानिवै ॥३०॥

करोड़ों की संख्या में सेवकों के भूषण तथा उसी प्रकार वस्त्र, शस्त्र, सेवा सामग्री चारों तरफ से सजावट की ॥३०॥

वाहनानि तथा तेषांभूषितानि सुभास्वरैः
विशेष वरयोग्यानि विशेष शोभनान्यपि ॥३१॥

उसी प्रकार सवारियां उनके भूषण जो कि सुन्दर स्वरों से बोलने वाले बरात में वर के योग्य विशेष शोभा देने वाले सब सजाये गये ॥३१॥

दण्डाश्च काञ्चना रौप्या खचिता श्चापि स्वर्णकाः ॥
स्वर्ण पुष्पाञ्चिताश्चापि खेलका भ्रमणार्थकाः ॥३२॥

सादे स्वर्ण दण्ड, रत्न खचित स्वर्ण दण्ड चांदी के दण्ड इन सबकी भी सेवकों सहित खण्डों की सजावट हुई। इसी प्रकार स्वर्ण पुष्पोंसे रचित बगीचा तथा खेलनेके घोड़ादिखिलौने जो कि यन्त्रों से भ्रमण करने वाले इनका खण्ड सबकी रचना की ॥३२॥

दीपगृहादीपवृक्षा दीपदण्डाप्यसंख्यकाः ॥
आदर्शा कलसूत्राश्च क्रीडार्थाष्टापदादिकम् ॥३३॥

इन सब खण्डों को प्रकाशित करने के लिये बीच २ दीप-गृह तथा दीपवृक्ष और अगल-बगल में दीप दण्ड सुन्दर पंक्ति पूर्वक असंख्य रचना किये। दर्पणों की सजावट, सूत्रों से चलने वाले खिलौनाओं की सजावट तथा तख्तों में चौपड़ादि खेलने की सजावट अलग विभाग पूर्वक सजाए गये ॥३३॥

अन्ये पदार्थाराजार्हा वेषवार विधा अपि ॥
लेपनार्थाश्च सौगन्धाः पानार्थाभक्षणार्थकाः ॥३४॥

तथा राजाओं के योग्य अन्य भोजनादि पदार्थ नमकीन मसालेदार तथा मीठे सुगन्धित भक्ष्य भोज्यादि विधि से इनकी सजावट की गयी और अङ्गराग सुगन्धि आदि पदार्थ भी ॥३४॥

अंशुकाख्याभूषणाख्या छत्रादि चामरादिकम् ॥
मृगाश्च पक्षिणयेच क्रीडार्थासख्यं भूषिताः ॥३५॥

तथा इसी प्रकार वस्त्र भूषण छत्र चंवरादिक और मृग पक्षी खेलने योग्य भूषणों से भूषित असंख्य रचना किये ॥३५॥

तत्तद्गृहात्समाहृत्य सुमन्तेन स्वसाधकैः ॥
सुखायरामचन्द्रस्य स्वभावज्ञेन सर्वदा ॥३६॥

उन वस्तुओं के रहने का और सेवा का भी सुमन्त्र जी ने श्रीरामचन्द्रजी के स्वभाव को जान कर उनके सुख के लिये सब रचना की ॥३६॥

सुधार्य्य सकलं याने सम्भार्य्य सेवकेष्वपि ॥
प्रतीत्य प्रथमंमार्गे कृतम्पादाति संहतिः ॥३७॥

इन सब पदार्थों को सुन्दर यानों में सुधार करके इनके सेवकों के सहित सम्हाल भी किया। इस प्रकार सब सजावट करके बरात के आगे २ मार्ग संशोधनके लिए प्रथम विश्वस्त पदाति सेना को चलने का इन्तजाम किया ॥३७॥

वाह्यानि शकटैरेव बृहद्भाण्डानिवारिणः ॥
नोष्णतामातपैर्याति येष्वेव वारिशीतलम् ॥३८॥

मार्ग में बगीचा सिंचन पशु पक्षी आदि सबके प्यास निवृत्ति वास्ते बड़ी २ जल की टंकिया सटकियों में रक्खी हुई चलने के लिये सजाई गई। इसी प्रकार धूप से उष्णता न प्राप्त हो इस लिए जल की शीतलता का भी इन्तजाम किया ॥३८॥

उशीरका गृहा सीता अन्ये चाप्यंशुकागृहाः ॥
स्वर्ण सूत्राश्रिता एव वस्त्र प्राकार संयुताः ॥३९॥

खसखस के महल अन्य शीत उपचारक वस्त्रों के महल तथा स्वर्ण सूत्र निर्मित वस्त्रों की बड़ी २ कनातें वस्त्र महल को घेरने के लिए सजायी गयीं ॥३९॥

चलद्गृहा मणीनाश्च वैद्रुमा मलयैः कृताः ॥
स्फाटिका वाटिकाश्चैव महातपनिवारिकाः ॥४०॥

बहुत से विद्रुम आदि मणियों के सचल महल तथा मलय चन्दन के सचल महल इसी प्रकार स्फटिक मणियों के महाताप निवारक बगीचायें यन्त्रों द्वारा चलने वाले सब सजाये गये ॥४०॥

ध्वजाश्च केतनाश्चैव विशाला दूर दर्शनाः ॥
पताका श्चैव ते सर्वे स्वर्णका बहुबर्णकाः ।४१।

निवास स्थान के सहित दूर से दीख पड़ने वाली बड़ी ध्वजायें तथा पताका निशान वे भी बहुत रङ्गों के रचित सजाये गये ॥४१॥

अपरेशिल्पिनः सर्वे काष्ठधात्वादि कारकाः ।
शुभाशुभसूचकाश्च शब्दं श्रुत्वा च पक्षिणाम् ॥४२॥

इन सबकी रक्षाके लिए काष्ठका काम करनेवाले शिल्पी तथा धातुओंका काम करनेवाले शिल्पी तथा और भी बहुत से कार्यकर्ता शिल्पियों को साथ चलने का इन्तजाम किया गया। इसी प्रकार पक्षी पशु आदिकों की बोली सुनकर शुभाशुभ बिचार करने वाले लाक्षणिक लोगों को भी चलने का इन्तजाम किया ॥४२॥

ज्योतिर्विदोघाण्टिकाश्च जागरूकास्तथा परे ॥
निम्नोच्च भूमिका मार्गे कुद्दालेन समङ्कराः ॥४३॥

इसी प्रकार ज्योतिषियों को तथा समयकी घडी का विचार करनेवालों को तथा और भी जागरुक लोगों को तथा मार्ग के ऊंच नीच को सम करने वाले कुदाल आदिक औजारों को लिए हुए सेवकों को चलने का इन्तजाम किया ॥४३॥

पन्थाज्ञाश्चापि वहुश स्तथा च महिमार्ज्जकाः ॥
वस्त्रगृह स्थापकाश्च शतघ्नीनाश्च दग्धकाः ॥४४।

और मार्ग दर्शक तथा पड़ाव पर भूमि मार्जक और वस्त्रों के महलों को स्थापित करने वाले इसी प्रकार तोप मशीन गन आदि दागने वाले सेवकों को साथ लिया ॥४४॥

क्षेपका श्चाग्नि वाणानां स्फुलिंग चित्ररोपकाः ॥
विदूषका नटाश्चैव नर्त क्योपि ह्यसंख्यकाः ॥४५॥

और अग्निवाण के प्रहार करने वाले आतशवाजी आदि तथा चित्रों को रोपने वाले इसी प्रकार विदूषक नट नटियों (नर्तकियों) का भी असंख्य संख्या में साथ चलने का इन्तजाम किया ॥४५॥

विमाने नर्तका श्चैव हयोपरि च नर्तकाः ॥
गजोपरि नर्तकाश्च उड्डीन नर्त्तका अपि ॥४६॥

विमानों में नृत्य करने वाले घोड़ाओं पर नृत्य करने हाथियों पर नृत्य करने वाले पक्षियोंकी तरह आकाश में नृत्य करने वाले भी सजाये गये ॥४६॥

पक्षिणां शब्द कुर्वाणाः पशूनां शब्द कारकाः ॥
सदृशंशब्द कर्तारो बहुरूप प्रदर्शकाः ॥४७॥

पक्षियों के सदृश शब्द करने वाले तथा पशुओं के सदृश शब्द करने वाले और एक दूसरे के सदृश शब्द करने वाले तथा बहुरूपिया लोगों के भी चलने का साज सजे ॥४७॥

पशुयुद्ध करा श्चैव पशुयुद्ध विधायकाः ॥
मल्ला इभ कर्षकाश्च विपुलं लंघका अपि ।४८॥

पशुओं का युद्ध कराने वाले पशुओं की तरह युद्ध करने वाले मल्ल युद्ध वाले हाथी को खींचने वाले बहुत चौड़े स्थान को लांघने वाले ॥४८॥

वहु वारं वारिविश्य तिष्ठन्त्यपि च तेजनाः ॥
प्रधावन्तश्च ये वृक्षमारुह्यन्ति तथा विधाः ॥४६॥

इसी प्रकार बहुत देर तक जल में पैठने वाले इसी प्रकार एक आसन से बैठने वाले और बहुत दौड़ने वाले तथा दौड़ते हुए वृक्ष पर चढ़ने वाले ॥४६॥

उत्क्षिप्य कङ्कणं हस्ते धारयन्ति तथापरे ॥
अंगुल्यग्रे बहुभारंधारयन्ति तथा विधाः ॥५०॥

इसी प्रकार हाथ के कंगन को फेंक कर पुनः हाथ में धारण करने वाले इसी प्रकार उङ्गली के अग्रभाग से बहुत भार उठाने वाले ॥५०॥

नाशाग्रं कम्पयन्तश्च श्रवणश्च तथाविधम् ॥
बालभारम्पुच्छमिव चालयन्ति तथापरे ॥५१॥

नासिका अग्रभाग को कपाने वाले तथा कान हिलाने वाले और बालों के भार को पूंछ की तरह से हिलाने वाले ॥५१॥

कण्ठेन वाद्य नादश्च कुर्वन्ति च तथा विधाः ॥
इन्द्रजालविदाश्चैव महाश्चर्य्य विधायकाः ॥५२॥

कण्ठ से ही बाजाओं की आवाज निकालने वाले जादू और खेल जानने वाले आश्चर्यजनक काम करने वाले ॥५२॥

धावदश्वं समारुह्य धाव दश्वोपरिस्थिताः ॥
आनम्य भूमिगं वस्तु गृह्णन्ति च तथापरे ॥५३॥

दौड़ते हुए घोड़े पर चढ़ जाने वाले और घोड़ा को दौड़ाने वाले दौड़ते हुए घोड़े पर खड़े रहने वाले दौड़ते हुए घोड़ा पर से जमीन की वस्तु उठा लेने वाले ॥५३॥

जङ्घयोः पाद तलयोः कक्षयो र्वक्षणद्वये ॥
नालकेरि फलान्यष्टौ त्रोटयन्त्येक बारकम् ॥५४॥

तथा इसी प्रकार जंघाओं पर तथा पांव तले और अगल बगल कुक्षियों में नारियल के आठ फलों को एक बार में तोड़ने वाले ॥५४॥

एवम्भूत्या कौतुकिनो जनाः कौतुक हेतवे ॥
समानीताः सुमन्तेन श्रीराम बरजानके ॥५५॥

इस प्रकार के कौतुकी जनों को श्री राम जी की बरात में कौतुक करने के लिए सुमन्त्र जी ने सजवाया ॥५५॥

चलाचल वस्तु मयं गुणिनो हास्य कौतुकाः ॥
भूभुजाम्वैभवञ्चैषतद्द्वारे च श्रियं लभेत् ॥५६॥

हास्य करने वाले गुणी लोग कौतुक के लिये चल अचल वस्तुमय वैभव को साथ लेकर चल रहे हैं उन्हीं वस्तुओं द्वारा राजाओं के सदृश श्री वैभव] को प्राप्त करेंगे ॥५६॥

अतः परं सुमन्तेन ह्युपयानानि सुव्रते ॥
व्यूहेनैव रचनया कृतो विन्यास शोभनः ॥५७॥

इसके अलावा श्री सुमन्त्र जी ने उपयानों को भी व्यूहाकार रचना करके सुन्दर विन्यास बनाया ॥५७॥

तत्रोत्तर क्रमेणैव द्रष्टव्या शुभ वाहनैः ॥
विन्यासानां सुरचना महारस्मिभिरावृता ॥५८॥

इसके आगे एक से एक ऊँचाई क्रमसे सुन्दर वाहनों का महान् प्रकाश मण्डलसे घिरा विन्यास रचना किया ॥५८॥

प्रथमं सुखयानानि राजार्हाणि लसन्ति च ॥
पराध्यं रत्न चित्राणि नील वर्णानि पश्यताम् ॥५९॥

प्रथम राजाओं के योज्य सुखयान शोभित हैं जो विसकोमतीय रत्नों से देखने वालों के लिए नीलादि रङ्गों से शोभित है ॥५९॥

पताकाभिश्च कलशैः किङ्किणीनाञ्च झंकृतैः ॥
चलभ्दिस्तु जनैर्वाह्ये स्तानि शोभाम्प्रलेभिरे ॥६०॥

जिनमें पताका कलश किङ्किणी का झनकार मचा है इस प्रकार मनुष्योंके द्वारा ढोये जाते हुए सुन्दर शोभित हो रहे हैं ॥६०॥

शतैकं संख्यया तानि स्वर्णदण्ड करेधृतैः ॥
परिवारितानि भृत्यैरेष विन्यास आदितः ॥६१॥

जिनके अगल बगल एक सौ सेवक स्वर्ण दण्ड हाथों में लिये हुए घेरे हैं यह प्रथम विन्यस आरम्भ हुआ ॥६१॥

पीतवर्णानि यानानि तेषामग्रे लसन्तिच ॥
छायांसुक युतान्येवं गुम्फकुम्भाश्चितानि च ॥६२॥

इस विन्यास के आगे का मार्ग पीत वरण के यानों से शोभित हैं;जिनमें वस्त्रों की छाया जल कुम्भों से गुम्फित है ॥६२॥



* टीकाकार के श्री गुरुदेव जी *

श्री श्री१०८ श्रीसियाशरण जी (श्रीमधुकरजी) महाराज

श्री चारुशीला मन्दिर, श्री चारुशीला बाग

श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी



श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट - बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

विषय सूची

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृ-लोक का दर्शन। द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४०१ ॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम। चतुष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम। पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४२६॥

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह। षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४५२॥

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४६२ ॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत। अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६६ ॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति। एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४८२ ॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना। षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४९१॥

माणवक नगरीके राजा उद्ध्वविक्रमकी कन्याओं से विवाह। एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ५०३॥

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह। द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ५१६ ॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जी की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये। फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये।

॥ इति शुभम् ॥



❋ श्री अमर रामायण ❋

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❋ बन्दना ❋

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, पुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'बागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
वन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❋:—



※ श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः ※

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

रुक्मदण्ड करेधृत्वाभृत्यैः सम्वेष्टितानि च ॥
शक्तिकाग्राणि शोभन्ते ह्युपधान युतानिवै ॥६३॥

अगल बगल सेवक लोग स्वर्ण दण्ड लिये घेरे हैं, कोई शक्तियों को हाथों में लिये आगे पीछे शोभित हैं उन यानों में तकियादि सजे हुए हैं ॥६३॥

पश्यतान्तु जनानाम्वै मनो नेत्र हराणि च ॥
शतैकं संख्ययातानि वाहकैः शोभितान्यपि ॥६४॥

सैकड़ों की संख्या में सुन्दर भूषित वाहक लोग उन यानों को ढो रहे हैं इस प्रकार अति सुन्दर वे यान देखने वालों जनों के मन नेत्रों को हरण कर रहे हैं ॥६४॥

अग्रेतेषां हरिद्वर्ण समन्ताच्छोभितानिवै ॥
विचित्राशन युक्तानिमुक्ता जाल विलम्बितैः ॥६५॥

इस प्रकार इसके आगे हरित वरण के यान शोभित हैं जिनमें विचित्र आसन विछे हैं, मुक्तावों की जालियां लटकी हैं चारों तरफ से अत्यन्त शोभायमान हैं ॥६५॥

वक्र मस्करयानानि मुक्ता गुम्फाश्चितानि च ॥
रुक्मार्क चन्द्र प्रतिमा शोभितानि सुप्रान्तके ॥६६॥

टेढ़े बांस लगे हैं, मुक्ताओं के झुमके लगे हैं स्वर्ण की सूर्य चन्द्रमाओं की प्रतिमायें बनी हुई हैं इस प्रकार सुन्दर किनारा वाले ये बहुत से यान ॥६६॥

दिव्यालंकार वस्त्रैश्चभूतितैस्तु जनैः शुभैः ॥
स्वर्णदण्ड करेधृत्वाभृत्यैः सम्वर्तितानि वै ॥६७॥

दिव्य अलंकारों से भूषित सुन्दर जनों द्वारा ढोये जाते हैं वथा इसी प्रकार स्वर्ण दण्ड हाथ में लिये हुये सेवक इनको चारों तरफ से घेरे हुए हैं ॥६७॥

एतेषामग्रतो देवि वेष्टितानि सुरस्मिभिः ॥
सोभन्ते रक्तवर्णानि सुखयानानि संघटैः ॥६८॥

हे पार्वती ! इसके आगे सुन्दर प्रकाश से घिरे हुये लाल रङ्ग के सुखयानों का संघट शोभित है ॥६८॥

कुब्ज वञ्शेन चित्रेण विचित्राणि लसत्त्विषा ॥
मुक्ताजाल कुम्भगुम्फैः-श्रेणिभिश्शोभितानि च ॥६६॥

जिन यानों में कूबड़े बांस चित्र विचित्र प्रकाश वाले लगे हैं, मुक्ताओं की जालियां लटकी हैं तथा ऊपर में मुक्ताओं का गुम्फित कलश प्रत्येक यानों में पंक्ति के पंक्ति शोभित हैं ॥६६॥

एषाश्चाप्यग्रगान्येत्र भृत्यैः सम्परितानिच ॥
सित वर्णानि शोभन्ते सुखयानानि पंक्तिभिः ॥७०॥

इनके भी सुन्दर सेवकों से पूर्ण सफेद वर्ण के सुखयानों की पंक्तियां शोभित हैं ॥७०॥

प्रदीप्त पञ्च वर्णाना मेवं यनानि श्रेणिभिः ॥
विन्यासे प्रथमे चात्र शोभाधिक्य म्प्रवर्तितम् ॥७१॥

इन यानों के चारों तरफ पांच रङ्ग के दीपक पंक्ति के पंक्ति शोभित हैं। इस प्रकार यह कई खण्ड वाले रङ्ग २ के यानों का प्रथम विन्यास शोभा में अत्यन्त चढ़ा बढ़ा है ॥७१॥

ततश्चाग्रे विराजन्ते रथा नीलाभ्रवर्णका ॥
नीलेन्द्रमणिभिश्चित्रैर्निर्मिताश्चक्रकाष्टकैः ॥७२॥

इस यान विन्यास [खण्ड] के आगे नील मेघ के समान बड़े २ रथ जिनमें आठ २ पहिये लगे हैं नीलमणि के बने शोभित हैं ॥७२॥

पताका कलशै दिव्यैः किंकिणी घण्टिका रणाः ॥
उपधानास्तरणैश्च शोभिता रस्मि विस्तृताः ॥७३॥

इन रथों में पताका-कलश दिव्यकिंकिणी घण्टिका शोभित हैं। रथों के भीतर गद्दियां मसलन्द बिछावन प्रकाश से विस्तृत शोभित हैं ॥७३॥

खचिद्रत्न रुक्म दण्ड धृतै र्दाशैश्च भूषितैः ॥
विचक्षणै रूपवद्भिः समन्तात्परिवारिताः ॥७४॥

इन रथों के खण्ड के चारों तरफ सुन्दर भूषित सेवक हाथों में स्वर्ण दण्ड लिए रत्न खचित दण्ड लिए चारों तरफ शोभित हैं। सबके सब बड़ी तीव्र बुद्धि वाले शोभित हैं ॥७४॥

एषामग्रे हरिद्रत्न निर्मितांशु चमत्कृताः ॥
पंक्तिभिश्चाति शोभन्ते किंकिणीनां सुझंकृतैः ॥७५॥

इन नील रथों के खण्ड के आगे हरित रत्नों से रचित वस्त्र वाले चमकीले प्रकाश वाले किंकिणियों की झनकार करते हुए पंक्ति के पंक्ति रथ शोभित हैं ॥७५॥

ततो ग्रगास्तु शोभन्ते स्यन्दना रक्त रत्नकैः ॥
निर्मिता विविधाकारैः कलशध्वज शोभनाः ॥७६॥

इसके आगे लालरङ्ग के रथ लाल रत्नों से निर्मित बिविध आकार प्रकार वाले कलश ध्वजाओं से शोभित हैं ॥७६॥

वसनै रथ वर्णैश्च तेषाञ्च पार्श्व वर्तिनः ॥
भूषिताः परिराजन्ते रुक्म दण्ड करान्तकाः ॥७७॥

इनके अगल बगल में चलने वाले सेवक भी लाल रङ्ग के ही वस्त्र भूषण धारण किये हुये रुक्म दण्ड हाथ में लिए हुए शोभित हैं ॥७७॥

तेषामग्रे विराजन्ते रथास्तु पीतरत्नकाः ॥
भूषिताश्च समायुक्ता रक्षकैश्च तथा विधैः ॥७८॥

इस लाल खण्ड के आगे पीत रत्नों से निर्मित पीत रथ सुन्दर भूषित घोड़ाओं से युक्त विविध प्रकार के भूषणों से भूषित सेवक रक्षा कर रहे हैं ॥७८॥

अंशुकैर्भूषितैः सर्वैश्चतुर्दिक्षु समावृताः ॥
चक्राष्टाश्वैर्विराजन्ते वेग वद्भिर्मनोहरैः ॥७६॥

इन रथों के भीतर पीत गद्दियां मसलन्द वितान परदे शोभित हैं। चारों तरफ से प्रकाशमान इन रथों में आठ चक्र हैं। बड़े बेग वाले आठ घोड़े प्रत्येक रथ में भूषित शोभित हैं ॥७६॥

रथाः केचि च्छित वर्णैः किंकिणी काण शंकुलाः ॥
घण्टिकानां नाद युक्ताः महारस्मिभिरावृताः ॥८०॥

इसके आगे सफेद वर्ण के रथ किंकिणी और घण्टिकाओं के नाद से गूँजते हुए महान् प्रकाश मण्डल से घिरे हैं ॥८०॥

एवञ्च पञ्च वर्णानां स्यन्दनाना श्चसंतति: ॥
ततश्चाग्रे ह्युपयाना हयाः सस्वच्छुभालिभिः ॥८१॥

इस प्रकार पांच रङ्ग के पांच खण्ड रथों के है इनसे आगे सुन्दर सजे हुए घोड़ाओं की पंक्तियां हैं ॥८१॥

खचिभ्दूषाभिराजन्ते मुक्ता गुम्फ ललाटकाः ॥
मुक्तागुम्फित केशाश्च स्कन्ध देशोऽतिशोभनाः॥८२॥

जो रत्न खचित भूषणों से प्रकाशमान मस्तक में मुक्ताओं के गुम्फे लगे हुए तथा कन्धा पूछ में भी मुक्ता गुम्फित केश अति शोभित हो रहे हैं ॥८२॥

दोव्यदासन पीठाश्च पाद मञ्जीर कङ्कणाः ॥
चामरैः सेविताभृत्यैः सम्वीता बसनैरपि ॥८३॥

पृष्ठ [पीठ] पर प्रकाशमान जीन कसी हुई घोड़ों के पैरों में मंजीर युक्त कंकण लगे हुए दो दो नौकरों से चँवर द्वारा प्रत्येक घोड़ा सेवित हैं। पीठों में वस्त्र रत्न जड़े हैं ॥८३॥

ताण्डवेन क्रमत्पादास्ताल वन्धप्रमाणकैः ॥
विनीतानि रर्गलास्ते स्वतः पंक्ति समाश्रिताः॥८४॥

इस प्रकार के घोड़े अपने पैरों से ताल बन्ध प्रमाणों करके ताण्डव नृत्य कर रहे हैं। आगे में कुछ झुके हुये सुन्दर नीति युक्त चाल से ठीक अपनी पंक्ति पर चलने वाले ॥८४॥

नीलाः पीताश्च हरिता रक्ताश्च शुक्ल वर्णकाः ॥
पीतस्कन्धा नीलकायाः पीतास्ते नील कन्धराः ॥८५॥

इस प्रकार के घोड़ों की कोई नील पंक्तियां इसी प्रकार पीत हरित लाल सफेद बरण की पंक्तियां और कोई पीले कन्धा वाले नील शरीर वाले कोई पीत शरीर वाले नील कन्धा वाले अलग ३ पंक्तियों से शोभित हैं ॥८५॥

स्वेतस्कन्धाः नीलकायाः नीलास्ते शितकन्धराः ॥
केचिद्रक्ताः हरित्कण्टाः हरिता रक्त कन्धराः ॥८६॥

कोई सफेद कन्धा वाले नील शरीर के नील कन्धा वाले सफेद शरीर के कोई लाल शरीर के हरित कण्ठ हरित शरीर के लाल कन्धा वाले हैं ॥८६॥

पीताः केचिन्नील कण्ठा नीलाश्चपीतकन्धराः ॥
केचित्तु हरिता दिव्याः रक्तकन्धर शोभनाः ॥८७॥

कोई पीले शरीर नील कण्ठ के नील शरीर पीत कन्धा के कोई हरित शरीर लाल कन्धा के दिव्य शोभित हैं ॥८७॥

पीताङ्गा नील चित्राश्च नीलाङ्गा पीत चित्रकाः ॥
श्वेताः केचिन्नील चित्रा नीलास्ते श्वेतचित्रकाः॥८८॥

पीत अङ्ग वाले नील चित्र के नील शरीर वाले पीत चित्र के श्वेत शरीर वाले नील चित्र के नील शरीर वाले श्वेत चित्र के ॥८८॥

रक्ताः हया नीलचित्रा नीलास्तेरक्त चित्रकाः ।
पीता केचिद्धरि चित्राः हरिताः पीतचित्रकाः ॥८९॥

लाल शरीर वाले नील चित्र के नील शरीर वाले लाल चित्र के पीत शरीर वाले हरित चित्र के हरिताङ्ग वाले पीत चित्र के घोड़े शोभित हैं ॥८९॥

ललाटे शित पुन्ड्राश्च केचितु नीलपुण्ड्रकाः ॥
हरित्पुड्रा विराजन्ते पीतपुण्ड्रास्तु केचन ॥९०॥

किसी के मस्तक में सफेद उर्ध्व पुण्ड्र किसी का नील तिलक किसी का हरित किसी का पीत तिलक ॥९०॥

रक्तपुण्ड्रा हरिद्वर्णा हयाः केचित्समायुते ॥
केचिद्वज्राभदन्ताश्च विद्रुमाभाद्विजाः परे ॥९१॥

किसी का लाल तिलक हरे घोड़े इस प्रकार शरीर रङ्ग के अनुकूल अङ्गचित्र तथा कन्धे और मस्तक में उर्ध्व पुण्ड्र तिलक से शोभित। कोई घोड़े हीरे सदृश दाँत वाले कोई मूंगा मणि के लाल दांत वाले ॥९१॥

नील रत्नाभदशनाः पीत रत्नाभ दन्तकाः ॥
हरिद्रत्नाभ दन्ताश्चपीताधरमनोहराः ॥९२॥

कोई नील रत्नों के दांत वाले कोई पीत रत्नों के दांत वाले कोई हरित रत्नों के सदृश दांत वाले घोड़े पीले अधर के मनोहर शोभित हैं ॥९२॥

काञ्चनाभखुराः केचि द्विद्रुमाभखुरा अपि ॥
नीलरत्नखुराः केचित्पीतरत्न लसत्खुराः ॥९३॥

किन्हीं घोड़ों के स्वर्ण खुर किन्हीं के विद्रुममणि सदृश प्रकाश वाले खुर किन्हीं के नील रत्नों के खुर किन्हीं के पीत रङ्ग के शोभित हैं ॥९३॥

वायु वेगा मनो वेगा स्तार्क्ष्यवेगाः सुपृष्टकाः ॥
सुलक्षणशतैर्युक्ता रणे नृत्य कराश्चते ॥९४॥

कोई वायु के समान वेग वाले कोई मन के समाम वेग वाले कोई गरुड़ के समान वेग वाले सुन्दर लक्षण युक्त पीठ वाले रणभूमि में नृत्य करने वाले सैकड़ों लक्षण युक्त घोड़े पंक्ति के पंक्ति शोभित हैं ॥६४॥

भद्र मन्द्रामन्द्रभद्राः कवराटा इति जातयः ॥
पारशीकाश्च वा वरटा वल्लिका सिन्धुजा अपि ॥६५॥

कोई भद्र मन्द्र जाति के कोई मन्द्र भद्र जाति के कोई कवराट जाति के कोई पारशिक जाति के कोई वरटा कोई बल्लिका कोई सिन्धुज कोई जाति २ के भी पंक्ति की पंक्ति घोड़े शोभित हैं ॥६५॥

सौरठाश्च पाणिपथाः काण्ठाल देशिकाः पराः ॥
शिङ्गलाश्चैव नान्देया उत्कलाश्च भुटंत काः ॥६६॥

सौरठ जाति के पाणिपथ तथा कण्ठाल और देशिक जाति के इसी प्रकार सिंगल व नान्देय तथा उत्कल, भुटन्तक जाति के घोड़े और ॥६६॥

वनायुजा बृण्ट्टकाश्च नैवटाः पाण्डुका अपि ॥
कश्मीर देश सम्भूता राट देश समुद्भवाः ॥६७॥

वनायुज तथा बृण्ट्टक जाति के एवं नैवट व पाण्डुक जाति के और काश्मीर देश के पैदा हुए इसी प्रकार राट देश के पैदा हुए ॥६७॥

ध्रुवटा भाल देशीया नारान्तक समुद्भवाः ॥
दामल्लका जटालाश्च मोटन्ता धोल देशकाः ॥६८॥

ध्रुवट और भाल देश के वं नरान्तक देश के पैदा हुए घोड़े हैं कोई दामल्लक देश के जटाल देश के मोटन्त व धोल देश के ॥६८॥

प्रवेकानां सन्धतिस्तु भूषितानां मनोहरा ॥
चामरैः सेवितानाश्च नृत्येनपाद चारिणाम् ॥६९॥

एक २ जाति के घोड़ों की पंक्ति सुन्दर भूषणों से भूषित अङ्ग मनोहर शोभित हैं। प्रत्येक घोड़ा दोनों तरफ नौकरों से चवर द्वारा सेवित अपनी नृत्य कला से पैरों को चलाने वाले हैं ॥६९॥

परिवार्य्य शक्तिकैश्च प्रत्येकं शत शोभिनाम ॥
राजते वै हयानाश्चपूर्वोक्तानांयथाक्रमम् ॥१००॥

शक्ति को हाथों में लिये हुए प्रत्येक खण्ड को सैकड़ों सेवक रक्षा करते हुए शोभित हैं। इस प्रकार घोड़ाओं के रङ्ग भेद जाति भेद चाल भेद देश भेद के क्रम से अलग २ पंक्तियां खण्ड २ करके शोभित हैं ॥१००॥

संघताः योगजानाश्च भिन्नाभिन्नाः स्वजातिभिः ॥
द्विचक्र लक्षणाः केचि त्केचि त्त्रिचक्र लक्ष्मकाः॥१०१॥

एक २ जातिके अलग २ समूह अपनी योग्यता से मिले हुए हैं। कोई दो चक्रके लक्षण वाले कोई तीन चक्र के लक्षण वाले ॥१०१॥

चतुश्चक्र लक्षणाश्च पञ्च चक्राहि केपि च ॥
अपरेश्युः षट् चक्राश्च सप्त चक्रा स्तथा परे ॥१०२॥

कोई चार चक्र के लक्षण वाले कोई पांच चक्र के लक्षण वाले तथा इसी प्रकार कोई छः चक्र के लक्षण वाले कोई सात चक्र के लक्षण वाले ॥१०२॥

अष्ट चक्र लक्षणाः स्यु र्नव चक्रैस्समन्विता ॥
एवं नाग लक्षणज्ञाः वदन्ति भिन्नभावतः ॥१०३॥

कोई आठ चक्र के कोई नौ चक्र के लक्षण वाले इस प्रकार हाथियोंके लक्षणों को जानने वाले भिन्न २ भाव पूर्वक हाथियों के लक्षणों को कहते हैं १०३॥

ललाटे यस्य चक्रैकं लक्षणं भव्यकंभवेत् ॥
सतु साक्षाद्गणाधीशो राज्ञां विजय सिद्धिदः ॥१०४॥

जिसके ललाट में एक चक्र हो वह भव्यक (मांगलिक) लक्षण वाला होता है। वह हाथी राजाओं को विजय सिद्धि देने वाला हाथियों के गणों का साक्षात् अधोश होता है ॥१०४॥

अत्यन्त दुर्ल्लभो सौ स्याद्राज्ञा श्चासंख्यं सिद्धिदः ॥
लक्ष्मी गजो ह्यसौदेवि ह्येकदन्तो गुणायतः॥१०५॥

परन्तु वह अत्यन्त दुर्लभ है और राजाओं को असंख्य सिद्धि देने वाला है। हे पार्वती इसी को लक्ष्मी गज भी कहा जाता है। महान् गुणों से भरा यह हाथी एक ही दांत वाला होता है ॥१०५॥

चतुर्दन्तो भवेत्सोपि विष्णुगजः समाहितः ॥
द्वि चक्रोधर्म्म रूपश्च त्रिचक्रस्त्रयवर्गदः ॥१०६॥

यदि इस प्रकार का हाथी चार दांत वाला हो जाय तो विष्णुगज उसको कहा जाता है। यदि वह हाथी दो चक्र का हो तो वह धर्म रूप तथा तीन चक्र मस्तक वाला हो तो अर्थ, धर्म, काम त्रैवर्ग को देने वाला समझा जाता है ॥१०६॥

एवम्भूतोत्तमा नागा मातङ्गाश्च मदोद्गताः ॥
स्वर्ण सूत्राञ्चितास्तीर्णा रत्न काञ्चनभूषणाः ॥१०७॥

इस प्रकार के उत्तम हाथी मतवाले मस्तकों से मद चुवाते हुए स्वर्ण सूत्रों से रचित वस्त्र पीठ में बिछे रत्न खचित स्वर्ण के भूषण सजे ॥१०७॥

धृतपृष्ट विमानाञ्च मञ्चपृष्टाञ्च केचन ॥
पंक्तिभिः परिशोभन्ते घण्टानाद दिगुच्छिताः॥१०८

इस प्रकार विमान पीठों में रक्खे हुये हैं। किसी हाथी के पीठ पर मंच रक्खे हुए घन्टाओं के नाद को करते भूषणों के लच्छे हिलाते पंक्ति के पंक्ति शोभित हैं ॥१०८॥

सुखयानादयो न्यासाः सर्वे वादित्र संयुताः ॥
पादातिभिःपरिवृताः मनो नेत्रापकर्षकाः ॥१०९॥

इस प्रकार इन हाथियों के खण्ड के मन और नेत्रों को आकर्षित करने वाले सब प्रकार के बाजाओं के संयुक्त पैदल सेना से घिरे हुए सुखयानों का खण्ड (न्यास) है ॥१०६॥

तेषामग्रे पृथक्त्वेन पञ्चवर्णांशुकाञ्चिताः ॥
पादातीनांसंघतयो राजन्ते खड्गहस्तकाः ॥११०॥

इस खण्ड के आगे पांच रङ्गके वस्त्रों को पहिने हुए एक २ रङ्गके वस्त्र वाले अलगर करके पैदल सेना का समूह है जो हाथों में तलवार लिए हुए हैं ॥११०॥

सम्पाद्य मन्त्रिणा चैवं सुमन्तेन महात्मना ॥
आहूयसैन्यकानन्ताः प्रेरिताः सज्जना विधौ ॥१११॥

इस प्रकार महात्मा सुमन्त्र मन्त्री जी ने अनन्त सेनापतियों को बुला करके बरात के साथ सज कर चलने की प्रेरणा किया ॥१११॥

तेपिसर्वे च वाहिन्यो ज्वलदस्त्र विभूषणैः ॥
सज्जीकृताः सुमन्तस्य नियोगाच्छीघ्रमागताः ॥११२॥

वे सब सेनापति भी प्रकाश ज्योति से जगमगाते वस्त्रों को पहने हुये इसी प्रकार शस्त्रोंको धारण किये हुए अपनी २ सेना से संयुक्त सुसज्जित होकर के सुमन्त्र जी के नियोग से शीघ्र आकर तैयार होगये ॥११२॥

एवं सम्पाद्य सज्जानं रामारोहण हेतवे ॥
नाम्ना रिपुञ्जयो नागः महाप्रांशुर्महात्मना ॥११३॥

इसी प्रकार महात्मा श्रीसुमन्त्रजी ने श्रीराम जी की सवारीके लिये महान् प्रकाशमान शत्रुञ्जय हाथी को सुन्दर सजा करके तैयार करवाया ॥११३॥

अलङ्कारै रास्तरणै विमानेनाति शोभितः ॥
सज्जीकृत्य समानीतो नृपमन्दिरगोपुरे ॥११४॥

दिव्य अलंकार और बिछावनों से अति शोभित विमान हाथी के ऊपर सज करके उस हाथी को राज मन्दिर के फाटक पर खड़ा किया ॥११४॥

पुनस्तेन वशिष्ठोपि ह्यनुनीतो विधानवित् ॥
तदा श्रीमद्वशिष्टेन शुभलग्नं विचार्य्य च ॥११५॥

उसके बाद सुमन्त्र जी ने बड़े विधान के जानने वाले श्री वसिष्ठ जी को अनुनय-विनय किया। श्रीवसिष्ठ जी ने भी शुभलग्न को विचार करके ॥११५॥

नृपागारे समागत्य ज्ञापितः कोशलेश्वरः ॥
तनुवाच तदा राजा स्वामिन्कर्ता त्वमेवहि ॥११६॥

राज दरबार में आकर श्रीकोशलेश्वर जी के पास आकर सब जनाया। महाराज ने भी श्री वसिष्ठजी को हे स्वामिन्! आप ही कर्त्ता हैं ऐसा कहा ॥११६॥

तदाप्रशंस्य राजानं वशिष्टोपिमहामतिः ॥
श्रीराम मातृ सा न्निध्यमाजगाम सहर्षितः ॥११७ ॥

यह सुनकर महाबुद्धिमान श्रीवसिष्ठ जी भी महाराज की प्रशंसा करके प्रसन्न होकर श्रीरामजी की माताके पास आए ॥११७॥

राममाताकुल गुरुं दृष्ट्वा सद्यः समागतम् ॥
प्रणम्यशिरसा पादौवध्वाञ्जलिं पुरःस्थिता ॥११८॥

श्रीराम माता जी भी कुल गुरू जी को आते हुए देखकर शीघ्र उठ करके प्रणाम किया, आसन दिया, हाथ जोड़कर खड़ी होगयी ॥११८॥

ससख्याह्यासनन्दत्वा स्थापितो विनयान्मुनिः ॥
मुनिनाप्याशीर्वचनैराज्ञीसा सम्प्रयोजिता ॥११९॥

सखियों के सहित आसन पर बैठे हुये कुल गुरू जी को विनय किया, मुनिजीने भी आशीर्वाद वचनों से महारानी जी का सन्मान किया ॥११९॥

श्रीवशिष्टउवाच—आहूयात्म मन्दिराच्च रामं सुन्दर विग्रहम् ॥
मह्यं देहि दश रात्रं कार्य्ये चाद्यः शुभावहे ॥१२०॥

श्रीवसिष्ठ जी बोले कि सुन्दर विग्रह श्रीरामजी को अपने महल से बुला करके दस रात्रिके लिए शुभकार्य वास्ते हमको दे दीजिये ॥१२०॥

इत्थं वचनमाकर्ण्यमुने राज्ञी मनोगमम् ॥
लज्जया नत नेत्रा सा राममाताह्यु वाचतम् ॥१२१॥

इस प्रकार मुनि महाराजके वचन सुनकर लज्जा से नीचे नेत्र की हुई बोली ॥१२१॥

श्रीकौशल्योवाच—कौशलेश गृहेदेवयच्च यावत्सध्वास्तकम् ॥
आशीर्वादस्यभवतां नान्यद्धे तु परं कचित् ॥१२२॥

हे देव ! महाराज श्रीकोसलेश जी के घर में जितनी भी जो सुन्दरता है वह सब आपके आशीर्वादसे हमको प्राप्त है। आपके आशीर्वाद के अतिरिक्त और कोई सुन्दरता हममें नहीं है ॥१२२॥

आबलतोद्य पर्य्यन्तं सभ्रातृ रघुनन्दनः ॥
नानाविघ्न भयेभ्यस्तुभवद्भि रक्षितः स्वयम् ॥१२३॥

भ्राताओं के सहित ये रघुनन्दनजी जन्म से आज पर्यन्त विविध प्रकार के विघ्न भयों से स्वयं आपने ही रक्षाकी ॥१२३॥

त्वं देव रविवन्शानां साक्षात्परम् देवता ॥
भुक्ति मुक्ति प्रदो नान्यस्त्वाम्विना स्वाश्रयः परः॥१२४

हे देव ! सूर्यवंशीय राजाओं के साक्षात परम देवता भुक्ति और मुक्ति को भी प्रदान करनेवाले आप ही हैं आपके विना हम लोगों का और कोइ आश्रय नहीं है ॥१२४॥

Scanned by CamScanner

वाक्पुष्पैः पुजयित्वातु राममात्रा मुनीश्वरम् ॥
आनेतुं रामचन्द्राय प्रवोध्य प्रेषिता सखी ॥१२५॥

इस प्रकार मुनि महाराज को वचनरूपी पुष्पों से पूजा करके फिर श्रीराममाताजी ने श्रीरामचन्द्रजीको बुलाने के लिये अपनी सखीको समझाकर भेजा ॥१२५॥

दिव्य स्यनन्दन मारुह्य दासोभिः परितोवृता ॥
महाकान्तोच्चशिखिरं पताका ध्वजसंकुलम् ॥१२६॥

वह सखी अपनी दासियोंसे घिरी हुई दिव्य रथमें बैठकर महान् प्रकाशमान ऊँचे शिखर वाले ध्वजा पताकाओं से भरा ॥१२६॥

वहुकक्ष्यान्तरं दिव्य न्मन्दिरालिभिरावृतम् ॥
कृत्रिमारण्य सम्विद्धम् तड़ागवापिका न्वितम् ॥१२७

कई आवरणों के भीतर दिव्य सखियों से भरे हुए तथा अनन्त कृत्रिम बगीचा वन तालाव वावड़ी सजावट वाले ॥१२७॥

गोपुरैः सदृशै द्वारैः दिव्यतोरण चित्रितैः ॥
वीरै वंर्म वरै दिंव्यैर्दासिकाभिश्चरक्षितैः ॥११८॥

ऊँचे गोपुर और फाटक उनके सदृश दिव्य कपाट वाले चित्र विचित्र दिव्य तोरणोंवाले कवचों को कसे हुए वीरों से रक्षित भीतर की तरफ दिव्य दासियों से सुरक्षित ॥१२८॥

शोभितं हि चतुर्दिक्षु विशालं विश्वभावितम् ॥
विवेशराम भवनं सासखी कनकाह्वयम् ॥१२९॥

दशो दिशाओं में प्रकाश करते हुए अत्यन्त शोभित समस्त विश्वसे भावित बहुत बड़े विशाल श्रीकनकभवन नाम से प्रसिद्ध श्रीरामभवन में उस सखीने प्रवेश किया ॥१२९॥

कक्ष्याः सर्वा लंघयित्वा मध्यभागं मनोहरम् ॥
अनन्तार्क प्रभाप्रख्यं प्राप्तासा वनिता कुलम् ॥१३०॥

समस्त आवरणों को उल्लंघन करके मध्यमें अनन्त सूर्यों के समान प्रकाशमान मनोहर महल में पहुँची जहाँ पर अनन्त स्त्रियाओं की भीड़ लगी है ॥१३०॥

श्रुत्वा तदागमं रामः प्रियां शय्यां विहायवै ॥
तस्याश्च सन्निधिं शीघ्रं सम्प्राप्तः सु नताननः ॥१३१॥

उप माताजीका आगमन सुनकर श्रीरामजी अपनी प्रियाव शय्या को छोड़ कर उन उपमाताजी के समीप शीघ्र आकर नतमस्तक हुए ॥१३१॥

कथं नाहूतदूतेन स्वयं मातः समागता ॥
इत्थं तामब्रवीद्रामः समानीय करद्वयम् ॥१३२॥

हे माता ! दूत के द्वारा मुझे क्यों नहीं बुला लिया था ? आप स्वयं क्यों आयीं ? इस प्रकार माता जी को कहते हुये श्रीरामजी माता जी के दोनों हाथों को पकड़कर उचित आसन पर बैठाये ॥१३२॥

शील सर्व गुणानांहि कारणं शृणु पार्वती ॥
यद्राम सदृशं लोके नापरे दृश्यते मया ॥१३३॥

श्री शङ्कर जी बोले हे पार्वती ? सुनो सर्वगुणों का कारण शील है। मैंने श्री राम जी के सदृश शीलवान ऐसा कहीं किसी लोक मे किसी को नहीं देखा है ॥१३३॥

ततः सीतापि सुमुखी सखीभिः परिवारिता ॥
आगत्य वन्दितौ तस्याः पादौ मन्दिरमागता ॥१३४॥

इसके बाद सुन्दर मुख वाली श्रीसीताजी भी अपनी सखियों से घिरी हुई आकर के अपनी सासु को सखी के चरणों में प्रणाम कर भीतर महल में चली गयी ॥ १३४ ॥

सागममङ्कमारोप्य स्वस्याश्चागम कारणम् ॥
कथितं विधिवत्सर्वं श्रीकौशल्या प्रबोधितम् ॥१३५॥

वह उपमाता श्री राम जी को अपनी गोदी में बैठाकर अपने आने का कारण श्रीकौसल्या माता की कही हुई बात को विधि पूर्वक सब कह सुनायी ॥ १३५ ॥

मन्दिरान्तरमागम्य तदाश्रीरघुनन्दनः ॥
प्रियायैः श्रावितं सर्वं प्रेम निर्भर मानसा ॥१३६॥

सुनकर श्री रघुनन्दन जी भीतर आकर अपनी प्रिया को प्रेम पूर्ण होकर के सब सुनाए ॥ १३६

प्रबोधिता पिरामेण स्वात्मछायेव जानकी ॥
साध्वीपति हितकरा रामस्तस्याहिते रतः ॥१३७॥

अपनी छाया के सदृश साधु स्वभाव वाली प्रियाजू को जानकर श्री राम जी ने पति हितकारा प्रिया के हित के लिए प्रबोधित किया ॥ १३७ ॥

पुन धांत्र्यासमंराम आगत्य पितृ मन्दिरम् ॥
संस्पृश्य गुरु पादाब्जं मातुश्च चरणे नतः ॥१३८॥

उसके बाद श्री राम जी उन अपनी धाई के साथ पिता जी के महल में आए। गुरू महाराज के चरण स्पर्श किए। माता जी के चरणों में प्रणाम किए ॥ १३८ ॥

यात्रापिगुरुणा सर्वं पितुरादेशितं हियत् ॥
श्रावितं रामचन्द्राय तेनवै शिरसा धृतम् ॥१३९॥

श्री माता जी और गुरू महाराज ने भी कोसलेश महाराज की कही हुई सब बातोंको श्री रामचन्द्र जी के लिए सुनाया। श्री रामजी ने भी सिर से धारण किया ॥ १३९ ॥

एतस्मिन्नन्तरे देवि कौशलेन्द्रो महा द्युतिः ॥
सुमन्तादि मंत्रिभिश्च पुत्रैस्तु लक्ष्मणादिभिः ॥१४०॥

श्री शङ्कर जी बोले हे देवि ? इसी बीच में महान् प्रकाशमान श्रीकोशलेन्द्रजी अपने मंत्री और लक्ष्मणादिक पुत्रों के सहित ॥१४०॥

हर्षितो ह्यागत स्तत्र द्रष्टुं रामाभिषेचनम् ॥
ततो गानश्च वाद्यैश्च वेदानांहि विधानतः ॥१४१॥

अत्यन्त हर्षित होकर श्री राम जी के विवाहिक अभिषेचन को देखने के लिए वही स्थान पर आ पहुँचे जहाँ पर श्रीराम जी का सुन्दर गान बजान वेदध्वनि विधान पूर्वक होरहा था ॥ १४१ ॥

हरिद्रा चूर्ण स्नेहाभ्यामुद्वर्त्य रघुनन्दनः ॥
स्नापितः स्त्री जनैर्दिव्यै र्वस्त्रेश्चापिह्यलंकृतः ॥१४२॥

हरिद्राचूर्ण और तेल आदि से श्री रघुनन्दन जू का उबटन हो रहा था। उसके बाद स्नान हुआ स्त्रियों ने दिव्य वस्त्रों से श्रीराम जी का शृंगार भी किया ॥ १४२ ॥

अकारि भोजनं मात्रा मिष्ठं मोदक पूपकम् ॥
भ्रातृभिः सहितः पश्चाद्भूषणेश्च विभूषितः ॥१४३॥

बाद को माता ने लड्डू और पुआ आदिक मिष्ठान्न पदार्थोंको भाइयों सहित भोजन कराया पश्चात फिर भूषण सजाए गये ॥ १४३ ॥

गुरु पत्नी नमस्कृत्य मातृ पादाभि वन्दनम् ॥
अभिवंद्य पितुः पादौ समर्च्याथ गणाधिपम् ॥१४४॥

इस प्रकार श्री राम जी गुरू पत्नी को नमस्कार किए माता पिता जी के चरणों में अभिवन्दन तथा गणेश जी का पूजन किए ॥ १४४ ॥

आज्ञापितो वसिष्ठेन स्वारुरोह गतोच्चकम् ॥
तदा गज विमानस्थः सुशुभे रघुनन्दनः ॥१४५॥

बाद को श्री वसिष्टजी की आज्ञा से शत्रुञ्जय हाथी की पीठ पर बहुत ऊचे विमानमें चढ़कर अत्यन्त शोभित हुए ॥१४५ ॥

सौवर्ण सूत्रांचित कञ्चुक श्रीः किरीट कोट्यर्क प्रभाजितः श्रीः॥
मुक्ता लशत्कुण्डल कर्णयोः श्रीर्विभाति रामो वर वेष कुच्छ्री॥१४६

स्वर्ण सूत्र से वने कञ्चुकको अङ्ग में पहिने हुए सुन्दर शोभायमान करोड़ोंसूर्यों के समान प्रकाशमान मुकुट को मस्तक में पहिने हुए नासार्माण दोनों कानों में कुन्डल पहिने हुए दुल्हा बेष में श्री राभ जी अत्यन्त शोभायमान हो रहे हैं ॥१४६ ॥

पीनोल्लशद्बाहु स कङ्कण श्रीः केयूर मुक्ताञ्चित मण्डल श्रीः ॥
करांगुली मुद्रिकयालशच्छ्री र्विभाति रामो वर भूषण श्रीः॥१४७॥

हृष्ट पुष्ट हाथों में कङ्कण तथा बाहुओंमें बिजायठ, अँगुलियों में मुद्रिकाऐं इस प्रकार मणि मुक्ताओं के भूषणों में सजे हुए दुल्हा वेष श्रीराम जी अति सुन्दर लग रहे हैं ॥ १४७॥

लशत्कपोलान्तर कुण्डल श्रीर्भाले विशाले तिलकालक श्रीः ॥
नासैक मुक्ताधर लम्बित श्रीर्विभाति रामोक्षि युगायत श्रीः॥१४८॥

कपोलों पर सुन्दर कुण्डल झलझला रहे हैं। विशाल मस्तक में श्रीतिलक शोभित है नासिका में मुक्ता अधरों तक झूल रही है दोनों विशाल नेत्रोंके कटाक्ष आद्भुत शोभित हो रहे हैं ॥१४८॥

वक्षोज्वल द्रत्न गुणांचित श्रीनिष्कादि हारान्वित भूषण श्रीः ।

गम्भीर नाभ्या छवि गर्त्तक श्री विभाति रामो वर वेषकृच्छ्रीः॥१४९

वक्षस्थल में उत्तम रत्नों की लर लटकी हैं। विसकोमतीय स्वर्ण रत्नों के हार आदिक भूषण और नाभि की गम्भीरता मानो छवि का कुण्ड हो। इस प्रकार दुलहा वेष श्रीराम जी अति शोभित हो रहे है ॥१४९॥

कराङ्घ्रि जावाञ्जन स्रग्वक श्रीः काश्मीर जन्माङ्ग विलेपन श्रीः॥

पादाङ्ग ठेनाति विमोहन श्रीर्विभाति रामोंघ्रि नखायत श्रीः ॥१५०

हाथों में मेंहदी चरणों में महावर, नेत्रों में अञ्जन सर्वांग में केशर आदि अङ्गराग का लेपन, चरणों में नूपुर और चरण अंगूठादि नखों के प्रकाश इन सब सजावटों से अत्यन्त मनमोहन सजे हुए श्रीरामजीअत्यन्त शोभायमान हो रहे हैं ॥१५०॥

इत्थं नाग विमान रत्न खचिते सौमित्रिणा सेवितः,

पश्चाच्चामरग्राहिणा विलशिते मार्त्तण्ड कोटि प्रभे ॥

नाना देश निवासिभि नृप सुतैर्दासैर्वयस्यैस्तथा,

रामः काम कलाप सुन्दर वपुः सद्भूषणैः संबभौ ॥१५१॥

इस प्रकार हाथी के ऊपर रत्न खचित विमान में चवर लिए हुए लक्ष्मणजी से सेवित श्री राम जी करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशमान हो रहे हैं नाना देशों के रहने वाले राजकुमार दास सखा आदि सद्भूषणों से सजे उन सब सेवकों से सेवित श्रीरामजी काम की कला को विजय करने वाले शोभित हो रहे हैं ॥१५१॥

किं शृंगार रसा संख्यैर्गजे रूपं प्रकल्पितम् ॥

असंख्य सुखमाभिः किंधृतं रूपं विमानवत् ॥१५२ ॥

क्या असंख्य शृंगार रसों ने ही हाथी के रूप को धारण कर रक्खा है? अथवा क्या असंख्य प्रभा शोभाओं ने ही विमान का रूप धारण कर रक्खा है? ॥१५२॥

काम कोट्यैक मूर्त्तिः किं राजते रघुनन्दनः ॥

उत्प्रेक्षतंतुकविभिर्गजा रूढे रघूत्तमे ॥१५३।

क्या करोड़ों कामदेवों की छवि हो मूर्ति होकर रघुनन्दन जी ही शोभित हो रहे हैं। इस प्रकार हाथी पर बैठे हुए श्री राम जी के लिए कवियों ने अनेक प्रकार उत्प्रेक्षा किया ॥१५३॥

आज्ञया राज राजस्य श्री मद्दशरथस्यतु ॥

चचालासंख्य से नाङ्ग महा दुन्दुभि नोदिते ॥१५४।

महाराजराजेश्वर महाराज श्री मद्दशरथ जी की आज्ञा से असंख्य सेनाओं सजी बराद महा दुन्दुभी का नाद करते हुए चल पड़ी ॥१५४॥

शतघ्नीनां महाशब्दैर्गर्ज्जिताश्च दिशोदश ॥
रथाश्वानां किङ्किणीभिर्भंकृता सर्वतो दिशः ॥१५५॥

तोप मशीनगनों की महान आवाज से दशों दिशाऐं गुञ्जित हो गयीं तथा इसी प्रकार रथ घोड़े आदिकों के किंकिणियों का झनकार भी सब दिशाओं में फैल गया ॥१५५॥

तथैव गज घण्टैश्च नादितास्तु दिगंतकाः ॥
अन्येपांतु वादित्राणां शब्दैश्च पूरितं वियत् ॥१५६॥

उसी तरह से हाथियों के घण्टे दिशाओं को गुञ्जित कर रहे हैं। अन्य बाजाओं की आवाज ने आकाश को भर दिया है ॥१५६॥

विगतोर्मि विलाशाश्च बभूवुः सागराअपि ॥
तथावाता अपि प्राप्ता शान्तिर्वार्य्युद्धतंच्चि तेः ॥१५७॥
इत्थं चमत्कृते यानकंपयन्य र्वतान्महीम् ॥
प्रस्थितं रामचन्द्रस्य घर यान सुदर्शनैः ॥१५८॥

इस प्रकार के चमत्कार से पर्वतों और पृथ्वी को कपाते हुए दर्शकों की भीड़ के देखते हुए रामचन्द्र जी की बरात चलने पर समुद्र अपली लहरों के विधान को त्याग दिये ? वायु भी पृथ्वी की उड़ी हुई धूल के आधार शान्त हो गयी ॥१५७-१५८॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां शिवाशिवसम्वादे सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नामद्विपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५२॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नामद्वि पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५२॥

शिव उवाच--वासस्तुवर जानस्योल्लंघ्य दुर्गाणि सप्तच ॥
बभूव प्रथमः श्रीमत्प्रमोदारण्य सन्निधौ ॥१॥

श्री शङ्कर जी बोले कि इस प्रकार श्री राम जी की बरात श्री तयोध्या जी से चलकर नगर के सातों आवरण बाहर सातों परकोटाओं से भी बाहर श्री मत्प्रमोदवन के समीप में प्रथम रात्रि का निवास हुआ ॥१॥

पुनः प्रभाते त्वरुणोत्थ काले नेदुर्महादुन्दुभि सूच्चनादम् ॥
श्रुत्वा जनास्तत्र निवर्त्य निद्रां स्व सज्जना यांहि प्रवर्त्ति तास्ते ॥२॥

फिर प्रातः काल होने पर महान् दुन्दुभी का ऊँचा नाद हुआ यह सुनकर बरातियों की नीद निवृत्त हुई ? अपनेर कार्यो में लग गए ॥२॥

द्वितीय नादे तुदिगंत मूर्च्छिते वबन्ध व्यूहानि यथा क्रमेणवै ॥
चचाल यानं तु तृतीय नादिते मार्गे प्रदीपैर्बहुभिः प्रदर्शिते ॥३॥

फिर दूसरी वार दुन्दुभी के नाद होने पर वरात अपनेर सजावटों से सजकर चलने को तैयार हुई। तीसरी वार के दुन्दुभी नाद होने पर दीप वृक्षों सजे हुए मार्ग में वरात आगे के लिए चल पड़ी॥३॥

अतः परं शृणु श्री मज्जानकी पादशीलके ॥
चरितं चाद्भूतं गोप्यं यंन जानाति कोपि च ॥४॥

हे जानकी पाद शीले! इसके आगे बड़ा अभ्दुत गुप्त चरित्र हुआ जिसको सब कोई नहीं जानते हैं उसको मैं कहता हूँ, सुनो ॥४॥

सेना मुखेत्वग्रसरा महावीराः समाहिताः ॥
तैर्दृष्टं गोपुरं मार्गे विशालं तेजसांचयम् ॥५॥

वरात के आगेर चलने वाली महान् धीर सिपाहियोंकी जो सेना उन्होंने आगे चलते हुए मार्ग में एक बहुत बड़ा फाटक अभ्दुत प्रकाशमान देखा ॥५॥

अन्तर्द्वार सहस्रञ्च नीम्न मार्गं तथोत्तरं ॥
विविशुस्ते तु रामस्य स्वेच्छया नाद्रिजे क्वचित् ॥६॥

उसके भीतर में हजारों द्वार सुन्दर विस्तार वाले मार्ग बड़ी सजावट से सजे देखे। हे पर्वत कन्यके! श्री राम जी की स्वतंत्र इच्छा से प्रेरित होकर वह बरात उस फाटक के भीतर प्रवेश कर गयी॥६॥

ततो नु विविशः सर्वा अक्षौहिण्योप्यनेकशः ॥
चरित्रे तद्वशिष्टश्च रामो जानाति नापरः ॥७॥

अगुआ लोगों के प्रवेश करने पर सारी अक्षौहिणी सेना सब बरात उसमें प्रवेश कर गयी परन्तु इस चरित्र को श्री राम जी और वसिष्ट ची के सिवाय दूसरा कोई भी न जानपाया ॥७॥

ततश्चाग्रे सरैर्दृष्टं वनं गम्भीर मद्भुतम् ॥
वहुवर्णैः पादपैश्च सफलैः संकुलं महत् ॥८॥

फाटक के भीतर कुछ दूर आगे जाने पर एक गम्भीर वन बहुत से अभ्दुत सरोवर रङ्गर के बहुत से वृक्ष महान् फलों से लदे हुए ॥८॥

प्रफुल्ल गुल्म लतिकं फलपक्क रसाश्रयम् ॥
तडाग वापिका युक्तं पुष्प वाटी समन्वितम् ॥९॥

तथा छोटेर खिले हुए वृक्ष और लताऐं रस टपकते हुए पके फल झुके हुए इस प्रकार वन तालाब वावड़ी पुष्प वाटिकाऐं अभ्दुत शोभा देखी ॥९॥

सर्वत्र काञ्चनी भूमि द्रुम कक्ष्या विभाविता ॥
यत्र तत्र भवनानि मनोज्ञानि जनैः सहः ॥१०॥

सर्वत्र स्वर्णमयी भूमि सुन्दर विभाग पूवक जहां तहां वृक्षों की पंक्तियां जहाँ तहां उचित स्थानों पर सत जनों से भरेहुए मन रमणीय महल सब दीख पड़े ॥१०॥

एतद्वनान्तरे दृष्टं दुर्गं दुर्गान्तरं बृहत् ॥
स्फाटिकै रँचितं दिव्यं दीप्ति मत्परमाभ्दुतम् ॥११॥

इस प्राकर के बहुत बड़े वन के भीतर भी एक बहुत बड़ा फाटक परकोटा के सहित दिव्य स्फटिक मणि से रचित परम अद्भुत देखा ।।११।।

गो पुराणितु चत्वारि चतुर्दिक्षु समन्ततः ।।
रक्षितानि महावीरै र्महेष्वासैर्दृढ़ व्रतैः ।।१२।।

उस परकोटे में चारों दिशाओं में बड़े २ फाटक, फाटकों के ऊपर बड़े२ गोपुर, द्वारोंपर बड़े २ बलवान दृढ़ व्रत महा धनुषधारी वीर रक्षा करते हुए दीख पड़े ।।१२।।

आगच्छन्ति प्रगच्छन्ति चातुर्वर्ण्या जना अपि ।।
विलक्षण दिव्य रूपा दिव्य वाहन संस्थिताः ।।१३।।

उन फाटकों में चारो वर्ण की जनता विलक्षण दिव्यरूप, दिव्य वाहनों पर बैठे आते जाते दीख पड़ते हैं ।।१३।।

एवं दृष्ट्वा वशिष्ठं तु सुमन्तश्चाब्रवीन्मुनिम ।।
कुत्रागता वयं नाथ को लोक इति विस्मितः ।।१४।।

इस दृश्य को देखकर महामंत्री श्री सुमंत्र जी श्री वसिष्ट जी से चकित होकर पूछे कि हे नाथ यह किस लोक में हम लोग आ गए हैं ।।१४।।

पश्याम्यत्र जनाः सर्वे वृद्धाश्च पलितालकाः ।।
न बालाश्च युवानोपि दृष्ट पूर्वा इव भ्रमाः ।।१५।

हमको यहां की जनता सब बूढ़े ही बूढ़े पके बाल वाले ही दीख पड़ते हैं यहां कोई बालक या जवान नहीं दीख पड़ता । अपूर्व की तरह यह भ्रम पैदा करता है ।।१५।।

हित्वा मार्गं भ्रमेणैव पाताल लोक मागताः ।।
किं करोमि क्व गच्छामि त्वं समर्थोसि तद्वद ।।१६।।

क्या हम लोग भ्रम से मार्ग छोड़ करके पाताल लोक में आ गये हैं ? अब मैं क्या करूं ? इस बरात को लेकर कहां जऊँ आप ही सब बात में समर्थ हैं इसलिए कहिए ।।१६।।

इत्थं चाकुलतां दृष्ट्वा सुमन्तस्य महामुनिः ।।
मागाः भयंत्वं मतिमान सुमन्तमिति चाब्रवीत् ।।१७।।

सुमंत्र जी की इस प्रकार की व्याकुलता को देखकर महामुनि वसिष्ठ जी बोले कि तुम भय को मत प्राप्त हो ओ ।।१७।।

सुमन्त गोप्यं चरितमहं जानामि नापरः ।।
रहस्ये कथनीयं स्यान्न सर्वेषांहि शृण्वताम् ।।१८।।

हे सुमंत्र इस गुप्त चरित्र को मैं जानता हूँ और कोई नहीं जानता इसलिए सबके सामने कहने लायक नहीं है मैं तुम से एकान्त में कहूँगा ।।१८।।

संस्तभ्य सेना सुखमायतं तदावतार्य रामं गजतः सलक्ष्मणम्।।
घने वने वीक्ष्य विशाल वेदिकां तस्थौ वशिष्टोप्यथ मंत्रिणासह ।।१९

इतना वसिष्ट जी के कहते बहुत बड़ी बरात के अगुए लोग स्तम्भित हो गए। श्री राम जी और लछमण जी को हाथी पर से जमीन में उतार दिया। अगल बगल बहुत बड़े बन के बीच एक विशाल वेदी पर सुमन्त्र जी के सहित श्री वसिष्ठ जी बैठ कर के बोले। ॥१६॥

वशिष्ठउवाच—शृणुसुत कुलाम्भोज दिनेशस्त्वं महामतिः ॥
श्री मद्दशरथा दूद्धा इक्ष्वाकोरूत्तराश्चये ॥२०॥

हे सूत ? सूर्य कुल कमल के खिलाने वाले तुम महान बुद्धिमान हो। श्री मद्दशरथ जी से ऊपर और इक्ष्वाकु महाराज के बाद बीच में जितने भी राजा हुए ॥२०॥

तेषां पद मयं लोकोयोध्यायाश्चरणाव्हयः ॥
पुरोयत्पश्यसि पुरं तत्तु सुकृत शालिनः ॥२१॥

वे सब इस श्री अयोध्या जी के चरण स्थान नामक इस लोक में जिस नगर को आप सामने देख रहे हैं वे पुण्यशाली राजा इसी नगर में वास करते हैं ॥२१॥

ज्ञान शक्ति बलैश्वर्य्य तेजो वीर्य्य वतस्तथा ॥
भोगैश्वर्य्याधिक स्यास्ति श्री मतो जस्य काञ्चनम् ॥२२॥

इन लोगों का ज्ञान, शक्ति बल, ऐश्वर्य तेज, वीर्य छऔ भगशब्द वाच्य ऐश्वर्यों के भोगों को भोगते हुए निवास करते हैं। उन्ही श्री मान् अज महाराज का यह अपूर्व महल है ॥२२॥

अस्य पूर्व तराण्येवं पूर्वजानां पुराणि च ॥
सन्ति दिव्य तराण्यात्मवतां सच्चित्स्वरूपिणाम् ॥२३॥

इसी प्रकार इनके पूर्वजों के भी नगर दिव्य से भी दिव्य महान् प्रकाशमान हैं जिनमें सच्चिदानन्द स्वरूप मनस्वी महान् प्रतापी लोग निवास करते हैं ॥२३॥

सपत्नीकाः प्रजाभिश्च वृध्दाभिश्च समन्ततः ॥
परस्परं स्नेह बद्धावसन्ति स्यात्मनः स्थलम् ॥२४॥

ये इक्ष्वाकु वंशीय राजा लोग अपनी पत्नी और प्रजा के सहित सब बूढ़े परस्पर स्नेह में बँधे हुए अपने२ अधिकार के अनुसार स्थलों पर निवास करते हैं ॥२४॥

सर्वे ते वेदसारज्ञा वेदै गीता महाशयाः ॥
श्री रामेवत्सलाः सर्वे योगध्यान परायणाः ॥२५॥

ये सबके सब वेद के मर्म को जानने वाले महान् विचार वान श्री राम जी में वात्सल्य भाव रखने वाले योगध्यान परायण वेदों से स्तुत्य हैं ॥२५॥

शित केशादिव्य रूपा भूषणांगा मनोहराः ॥
क्रीड़ा केलिसमायुक्ताः श्री रामोत्सव संभृताः ॥२६॥

ये सबके सब सफेद ही बाल वाले दिव्य स्वरूप सब प्रकार भूषणों से सजे मनोहर अङ्ग विविध प्रकार के क्रीड़ा विलासों में आसक्त बाल भाव से श्री राम जी के लिए उत्सव करते हैं ॥२६॥

अयन्ति राग रागिण्यो वसन्ता घर्त्तवस्तथा ॥
देवा अपि महेन्द्राद्या अप्सरो नाग किन्नराः ॥२७॥

इस लोक में रहने वाले इन सबकी राग रागिनियां बसन्त आदिक ऋतु तथा महेन्द्र देवता अप्सरागण नाग किन्नर सब कोई सेवा करते हैं।।२७॥

ऋद्धयः सिद्धयः सर्वानिधयोपि सुखानि च ॥
श्री राम पूर्वजांस्तांश्चवद्धांजल्यः पुरः श्रिताः ॥२८॥

इसी प्रकार ऋद्धि सिद्धि सर्व निधियां सब सुख भी हाथ जोड़करके श्री राम जी के पूर्वजों के आगे खड़े रहते हैं।।२८॥

इत्थं व्यवोध यद्यावद्वशिष्ठो भगवान्मुनिः ॥
मंत्रिणंहि ददर्शाग्रे प्रसरत्प्रलयांवुवत् ॥२९॥

इस प्रकार भगवान मुनि श्री बसिष्ठ जी मंत्री जी को प्रबोधित कर ही रहे थे कि तब तक आगे में प्रलय के समुद्र उमड़ते सरीखा दीख पड़ा है ॥२९॥

महा कोलाहले नैव मनुष्याणां प्रधावताम् ॥
शूलासि शक्ति हस्तानां कोटिर सहस्र शः ॥३०॥

दौड़ते हुए मनुष्यों का महान् कोलाहल आ रहा है कोई सूल लिए कोई शक्ति को हाथों में लिए करोड़ों अर्बो की संख्या में चले आ रहे हैं ॥३०॥

सेनाग्रास्तत्समालोक्य भ्रमापन्नाः समन्ततः ॥
समीपेतु वाशिष्ठस्य समाजग्मुद्रु ता वहुः ॥३१॥

• श्री राम जी के बरात के सेनापति लोग चारों तरफ से इस अभ्दुत दृश्य को देखकर भ्रम में पड़ गये। सब सेनापति श्री वसिष्ठ जी के समीप में दौड़ पड़े ॥३१॥

मागुर्भयं क्वाचि द्विरा ममदर्शन हेतवे ॥
आयाति नृप शार्दूल इति ते मुनिनोदिताः ॥३२॥

श्री वसिष्ठ जी ने सब सेनापतियों को कहा कि हे वीरों ? तुम लोग डरो मत। ये सब भीड़ महाराज राजशार्दूल श्री अज जी की ? मेरे दर्शन के लिए आ रहे हैं ॥३२॥

इत्यंतरे चतुर्दिक्षु पूरितेतु जनार्णवे ॥
नौकेव दर्शितं दिव्यं विमानं तेजसाश्चयम् ।३३॥

इतना मुनि महाराज के कहते२ चारों तरफ से जन समूह रूप समुद्र उमड़ आया इस जन समुद्र के मध्य में नौका की तरह महान् प्रकाशमान विमान दीख पड़ ॥३३॥

हस्त्यश्व रथ पादाति नरजान पुरः सरम् ॥
कोटिभिः प्रतिहाराणां रत्न दण्ड भृतांतदाः ।।३४॥

हाथी घोड़े रथ पैदल तथा सुखपाल आदि हवारियाँ करोड़ों की संख्या में प्रतिहारियों से और रत्न दण्ड धारियों तथा ॥३४॥

वादित्राणां महानादै र्गज घण्ट सुनादितैः॥
पूरयत्सर्व दिग्भ्रान्त शोभते परमाभ्दूतम् ॥३५॥

बाजा वालों से और महाघन्टाओं का नाद करते हाथियों के समूह से समस्त दिशाऐं भरी हुई परम अभ्दुत शोभित हो रही हैं ॥३५॥

चत्वारः प्रतिहारास्तु चतुरा दण्ड धारिणः॥
समागत्य मुनेरग्रे वद्धांजलि समास्थिताः ३६॥

चार प्रतिहारी लोग हाथों में रत्न दण्डों को लिए हुए बड़े चतुर श्री मुनि महाराज के आगे आकर हाथ जोड़कर के खड़े हो गए ॥३६॥

तांश्चारानाहतै र्वाग्भिः पप्रच्छ मुनि पुङ्गवः ॥
के भवन्तः कस्य राज्ञ इति मां प्रति कथ्यताम् ॥३७॥

उन चारों प्रतिहारियों का मुनिश्रेष्ठ वसिष्ठ जी ने वचन से आदर किया और पूछा कि आप किस राजा के कौन लोग हैं, हमारे से कहिए ॥३७॥

प्रणम्य चारास्तु मुनेः पदाब्जयो-
तस्त्रैक मुख्यः समुचाव निर्भरः ॥
चारा महाराज तवैव सर्वदा-
भवान्नवेत्सीति त्रिकाल दर्शनः ॥३८॥

उन प्रतिहारियों ने मुनि महाराज के चरणों में प्रणाम किया, एक मुख्य ने प्रेम में भरकरके कहा कि हे महाराज हम आपके ही सब दिनके प्रतिहारी (दूत) हैं आप त्रिकाल दर्शी हैं क्या हमको नहीं जानते हैं ? ॥३८॥

सर्वार्थ सिद्धो महिपाल मौलिर्जिताखिवर्गस्तुभवत्प्र सादात् ॥
अजोजितस्त्वच्चरणारविन्दं समर्च्चितु हर्षित मागतः सः ॥३९॥

सब प्रकार के अर्थों में सिद्ध महिपाल मुकुठ मणि आपकी कृपा से शत्रुओं की विजय करने वाले अजेय महाराज श्री अजजी आपके चरण कमलों का दर्शन और पूजा के लिए बड़े हर्ष में भरे आ रहे हैं ॥३९॥

तेन महेन्द्रेण च प्रेषिता वयं विज्ञापनागमनं हि स्वात्मनः ॥
तत्कि न जानीथ त्रिकालदर्शना स्तथापिनीतिः कथिता महात्मभिः ॥४०

उन्हीने हमको अपना आगमन जनाने के लिए भेजा है। क्या त्रिकालदर्शी आप नहीं जानते हैं ? महात्माओं की यह निती है अतः हमने कहके भी सुनाया है ॥४०॥

इति सम्भाष्यस दूतः पुनश्च मुनिमब्रवीत् ॥
लभामहे चेदनुज्ञां भवतां दूतका वयम् ॥४१॥

इतना कहनेके वाद फिर उन दूतों ने मुनिजी से हम लोग आपके दूत हैं अब आप यदि हमको आज्ञा दें तो ॥४१॥

पश्यामो राम सत्पौत्रं रवेर्वंश विवर्द्धनम् ।।
वर वेष विराजंतं नेत्र तृप्ति करं परम् ।।४२

सूर्य वंश को बढ़ाने वाले सत् पौत्र श्री राम जो का नेत्रोंको तृप्त करनेवाला परम सुन्दर दुल्हा वेषका शृंगार किए हुए श्री राम जी का दर्शन करें ।।४२।।

इत्युक्त्वा विह्वलदशां प्रेम्णा तेषां मुनिश्वरः ।।
समीपे रामचन्द्रस्य प्रेषितास्तु जनैः सह ।।४३।।

इस प्रकार प्रेम में अत्यन्त विह्वल दशा को प्राप्त हुए उन दूतों की बातों को सुनकर श्री वसिष्ट जी ने सब साथियों के सहित उन दूतों को श्री राम जी के पास भेजा ।।४३।।

प्रेमांकित जड़ीभूता दूतास्ते राम सन्निधौ ।।
जनै नींतास्तु रामेण स्वय मुत्थायश्लेपिताः ।।४४।।

श्री राम जी के पास पहुँच कर वे दूत प्रेम की विचित्र दशा में जड़ की तरह हो गए उनके अनुनायी जन उठाकरके उनको श्री राम जी के पास ले गए श्री राम जी भी स्वयं उठकरके आगे आये उन दूतों को गले से लगाया ।।४४।।

निवेश्यांकेतु श्री रामं चुचुंव वदनंहिसः ।।
उवाच धन्य धन्योस्मि पौत्रमं के निधायवै ।।४५।।

उन दूतों ने श्रीरामजी को गोदी में रखकर मुख का चुम्बन किया और अपने पौत्र को गोदी में रखने से हम धन्य हैं, हम धन्य हैं- ऐसा कहने लगे ।।४५।।

क्रीडि तस्ते पिता तात स्वस्मिन्नंकेनिधाय च ।।
अद्य धर्म्य तमः स्यामश्चुम्वना त्पौत्रते मुखम् ।।४६।।

हे वत्स ? हमने तुम्हारे पिता को भी इसी प्रकार गोदी में रख करके खेल खिलाया है। आज हम लोग धन्य हो गए जो पौत्र के मुख चुम्बन करने मिल गया ।।४६।।

दर्शितुं गुरु पादाव्जं मुखंते मङ्गलास्पदम् ।।
आयाति ते महार्य्यो सावजोयो लोक विश्रुतः ।।४७।।

हे वत्स श्री गुरु महाराज के चरण कमल दर्शन के लिए और मङ्गल के निवास स्थान आपके मुख चन्द्र के दर्शन लिए तुम्हारे दादा जी आ रहे हैं जो अजनाम से सम्पूर्ण लोक में प्रसिद्ध हैं ।।४७।।

पिता महया समेतस्ते त्वयि वात्सल्य निर्भरौ ।।
पिता महौ समायातौ यौ लोकानन्त पूजितौ ।।४८।।

वात्सल्य प्रेम में भरे हुए आपके दादी के सहित दादा आ रहे हैं जो अनन्त लोकों पूजित हैं।।४८।।

माधूर्य्ये संज्ञानका ये श्रुत्वैवं वचनं सतां ।।
बभ्रमु र्विस्मयं प्राप्य कथं संभाव्यते त्वयम् ।।४९।।

इस प्रकार उन सज्जन दूतों के माधुर्य देशिक अनुराग में भीजे हुए बचनों को सुनकर श्री राम

जी के जो प्राकृतिक साथी थे वे सब के सब विस्मय को प्राप्त हो गए कि इन महान् दूतों का किस प्रकार से आदर किया जाय और ये लोग किस तरह से श्री राम जी में भाव रख रहे हैं ॥४९॥

तान्बोधितुं तु श्री रामो विस्मितं चेष्टयन्नपि ॥
पिता महौ कुतौ मेऽत्र धर्मज्ञौ स्वर्ग संगतौ ।५०॥

उन सबको समझाने के लिए आश्चर्य चकित चेष्टाओं को दिखाते हुए श्री राम जी उन दूतों से पूछने लगे कि स्वर्ग में गए हुए बड़े धर्मात्मा मेरे पितामह इस समय कहाँ पर हैं ॥५०॥

जन उवाच॥ शृणु वत्स पूर्वजास्ते त्वयि वात्सल्य भावुकाः
आवैकुण्ठा दूगतयोपि नित्यैक रूप संस्थिताः ॥५१॥

वे दूत बोले कि हे वत्स सुनो तुम्हारे में वात्सल्य भाव से भरे हुए तुम्हारे पूर्वज वैकुण्ठ से लेकर जितने भी गति वाले हैं वे सब नित्य एक रूप होकर के इसी स्थान पर रहते हैं ॥५१॥

नित्यैः परिछदैयु क्ता वयस्तुल्यैश्च सेवकैः ॥
वयस्तुल्यैः प्रजाभिश्च राजते स्वात्म वैभवैः ॥५२॥

अपने नित्य परिकरों के साथ अपनी एक सदृश अवस्थाओं से सेवक सेवा समानावस्था वाले तथा राजा प्रजा रूप से समान वैभववाले ॥५२॥

वयस्तुल्येः परिजनैः काल कर्म्म विवर्जितैः ॥
ब्रह्मानन्द सदाभ्यासात् महार्य्यास्ते सनातनाः ।५३॥

और जितने भी परिजन हैं वे सब भी काल कर्म के बन्धन से मुक्त हुए अपने राजा सदृश समानावस्था होकर ब्रह्मानन्द के सहज स्वभाव वाले सनातन महान् श्रेष्ट वे सब अपने२ महाराज के साथ समानावस्था होकर इसी स्थान पर निवास करते हैं ॥५३॥

शास्तारः सर्व लोकानां रक्षितारः स्वतेजसाः ॥
वेदज्ञा वेद गीताश्च गो ब्राह्मण सुसेवकाः ॥५४॥

अपने तेज से सम्पूर्ण लोकों के शासन करने वाले वेद के मर्मज्ञ, वेद का गान करने गौ और ब्राह्मणों के सुन्दर सेवक॥५४॥

सर्व विद्या भिः सम्पन्नाः सर्वशास्त्र विशारदाः ॥
नितिज्ञाः परमोदारा धर्म्म वद्धा धनायताः ॥५५॥

सब विद्याओं में सम्यक्र प्रकार सम्पन्न सब शास्त्र पारङ्गत नीति को जानने वाले परम उदार धर्म से सुन्दर तरह बँधे हुए इच्छा भर के धन वाले ॥५५॥

तेजो वलैश्वर्य युक्ताः सर्वदा दीन वत्सलाः ॥
प्रजासुपुत्रवद्भावा दाने देव द्रुमैः समाः ।५६॥

तेज बल ऐश्वर्य से युक्त हमेशा दीनों पर वात्सल्य रखने वाले, प्रजा पर पुत्र की तरह भाव रखने वाले, दान में कल्प वृक्ष के समान ॥५६॥

सदा प्रसन्न वदनानिर्दोषगुणनिर्म्मलाः ॥
वाक् पटुज्ञान विज्ञाना मधुवाचास्मिताधराः ॥५७॥

सदा प्रसन्न वदन सब दोषों से रहित निर्मल गुण वाले बोलने में बड़े चतुर जड़ चेतन विभाग को जानने वाले और अपने सहज स्वरूप के कर्तव्य को जानने वाले, मीठा बोलने वाले मन्द मुस्क्याते हुए मुखचन्द्र अधर वाले ॥५७॥

आवृद्ध शुभ शोभाङ्गा सवलाजानु बाहुकाः ॥
अनालस्योत्साह युक्ताः पञ्च रूपेण वर्त्तिनः ॥५८॥

अपने पूर्वजों के सहित सब सुन्दर शोभायमान अङ्ग वाले महान बलवान जंघा पर्यन्त भुजा वाले आलस्य से सहित सुन्दर उत्साह वाले अग्नि इन्द्र चन्द्रमा यमराज वरुण ये पांच देवताओं के रूप धारण करके बर्ताव करने वाले ॥५८॥

आत्मकार्य्य समं मत्वा प्रजानां कार्य्य संभृताः ॥
प्रजाभिः प्रिय माणाश्च सर्वलोक प्रियङ्कराः ॥५९॥

अपनी आत्मा के कार्य के समान प्रजा के काय को जानकर करने वाले प्रजा जनता के सहित अत्यन्त प्रसन्न मन हुये, सम्पूर्ण लोकों को प्रिय करते हुये सर्वलोक प्रिय ॥५६॥

चारु नेत्राः प्रजानां च दर्शने सुख दुःखयोः ॥
प्रजा मोदेन मुदिता स्तथा दुःखेन दुःखिताः ॥६०॥

प्रजा जनता को अपने गुप्तचरों द्वारा देखने वाले अपनी समस्त जनता के दुखसुख को जानने वाले प्रजा की प्रसन्नता से प्रसन्न होने वाले तथा प्रजा के दुख से दुखित होने वाले ॥६०॥

पितरौ सेवकानां च स्वात्मानो बान्धवेष्वपि ॥
पालका ब्रह्म सृष्टीना मन्यत्किं वर्णयाम्यहम् ॥६१॥

अपने पितरों में और सेवकों में तथा अपनी आत्मा व बन्धु वर्गों में भी कहाँ तक हम वर्णन करें सम्पूर्ण ब्रह्म सृष्टि भरके पालन करने वाले ॥६१॥

तपस्सु महर्षितुल्या विज्ञाने मुनिभिः समाः ॥
कलासुविश्वकर्म्माणस्त्वगाधाश्च यथार्णवाः ॥६२॥

तपस्याओं में महर्षियों के समान विज्ञान में मुनियों के समान कलाओं में विश्वकर्मा के समान गम्भीरता में समुद्र के समान ॥६२॥

मेरुतुल्या चल गुणैः क्षमा तुल्याः क्षमागुणैः ॥
तत्सद्ब्रह्मे व सत्यास्ते किमन्यद्वर्णयामिते ॥६३॥

सुमेरु पर्वत के समान अचल गुण वाले, पृथ्वी के समान क्षमा गुण वाले, सत्य में तत् सत् ब्रह्म के समान और हम कहाँ तक वर्णन करें ॥६३॥

शक्तो नवक्तुं रवि वंशजानां गुणानहीशो वदनैः सहस्रैः ॥
वाग्देवता व्यास कवीश्वरोपि कथंतदेतानहमातनोमि ॥६४॥

सूर्यवंश में जितने भी राजा हुए उनके गुणों को वर्णन करने में मैं समर्थ नहीं हूँ। हजार मुख शेष जी भी नहीं वर्णन कर सकते हैं। सरस्वती, व्यास, कवीश्वर भी नहीं वर्णन कर सकते तब हम उनके गुणों को कैसे बिस्तार वर्णन कर सकते हैं ॥६४॥

ऐक्ष्वाकवश्च काकुत्स्था राघवाश्च महोदयाः ॥
महात्मानोपिते सर्वे बृद्धाबृद्ध प्रजा समाः ॥६५॥

इक्ष्वाकु वंशीय ककुस्थ रघु सरीखे महान प्रतापी राजा उदय हुए। सबके सब महात्मा, वे भी सबके सब बृद्ध ही अपने सदृश बृद्ध स्वरूप प्रजा के सहित ॥६५॥

बृद्धैस्तु परिवारैश्च नारी पुरुष रूपकैः ॥
तथा सेवक संघैश्च स्वात्म धर्म्म विशारदैः ॥६६॥

बृद्ध परिवार वाले स्त्री पुरुष रूप में तथा सब सेवक समूह में सबके सब बृद्ध सबके सब अपने अपने धर्म में निपुण ॥६६॥

अयोध्या चरणेत्वत्र महाभोग समन्विताः ॥
पृथक्पुरेनित्य दिव्ये वसन्ति च समाहिताः ॥६७॥

यह श्रीअयोध्या जी का चरण स्थान महान ऐश्वर्य भोग से पूर्ण लोक है इसमें अलग २ पुरी करके नित्य दिव्य सावधानता से परस्पर स्नेह पूर्वक निवास करने वाले ॥६७॥

त्वां पौत्र रत्नं परमं ध्यायंतः सुख निर्भराः ॥
धन्यधन्य तमा द्धन्या वय मेवेति सन्मताः ॥६८॥

उत्तम पौत्रों में रत्न स्वरूप आपको ध्यान करते हुए सुख में भरे रहते हैं। जितने भी धन्य हैं उनमें धन्यतम हम धन्य हैं इस प्रकार हृदय में भाव रखने वाले सज्जनों से सम्मत हैं ॥६८॥

तत्र शंङ्का बाल भावात्कुरुषे रघुनन्दन ॥
सत्वंतल्लोक भिन्नत्वे केषां शंका न जायते ॥६९॥

हे रघुनन्दन ! आप बालक स्वभाव से जो प्रश्न कर रहे हैं सो यह आपकी बाल लीला है। इस लोक से भिन्न जो वह दिव्य लोक है उसके विषय में किसको शंका न हो जायगी ॥६९॥

अलौकिकाः पूर्वजास्ते लोके लोके न वर्त्तकाः ॥
दुर्विज्ञेयं तु चरितं तेषां विद्वज्जनैरपि ॥७०॥

आपके पूर्वज अलौकिक हैं वे हर लोक में व्यवहार नहीं करते हैं क्योंकि उनका चरित्र बड़ा ही दुर्ज्ञेय है। विद्वान जन भी उनके चरित्र को नहीं जान पाते ॥७०॥

अनाद्यन्ताः पूर्वजास्ते लोके चाद्यन्त दर्शकाः ॥
नवं नवं दर्शयन्ति कुलो भय विधायकाः ॥७१॥

आपके पूर्वज आदि अन्त से रहित हैं और इस लोक के आदि अन्त को दिखाने वाले हैं। मातृ कुल-पितृ कुल दोनों को सुन्दर विधान करके नवीन २ चरित्रों को दिखाते हैं ॥७१॥

लोकानां धारणे साक्षात्सहस्र शिर सेवते ॥
महात्म्यं श्रुतयस्तेषां गायन्ति ऋषयस्तथा ॥७२॥

सब लोकों को धारण करने के लिये साक्षात हजार सिर वाले शेष जी के समान बलवान हैं उन आपके पूर्वजों के महात्म को वेद और ऋषि महात्मा लोग गान करते हैं ॥७२॥

शिवोवाच—अत्युच्छ्रितं स्वात्म पितामहानां महत्व माकर्ण्य रघूद्वहस्तु॥
स्वस्मिन्हि वात्सल्य निबद्ध भावं प्रणम्य चारं च चचार शंसाम्। ७३

श्रीरामोवाच--अहं न जानामि पितामहानां-
जानासि यत्वं महतां प्रभावम् ॥
पितामहेनापि समंहि मन्ये-
द्वैधं न जानामि वदामि सत्यम् ॥७४॥

श्रीशंकर जी बोले कि हे पार्वती ! इस प्रकार श्रीरामजी ने अपने पूर्वजों के महान् महत्व को सुन करके और अपने में उन लोगों का वात्सल्य भाव जान करके उन दूतों को प्रणाम किया और इस प्रकार श्रीरामजी बोले—हे दूतों ! अपने दादा परदादा उनके लोगों के महत्व प्रभाव को मैं नही जानता । आप लोग जो महत्व प्रभाव जानते हैं इस नाते मेरे दादा जी के सदृश ही आप लोग हैं दूसरे नहीं हैं यही मै जानता हूँ अत: आपसे सत्य कहता हूँ ॥७३-७४॥

सत्यं वदाम्यात्म स्वभाव याद्दक्किमन्यथा वादकृतेन लोके ॥
पितुयर्वस्यानपि दास वर्गं पश्यामि पित्रा सदृशं सदैव ॥७५॥

मेरा जैसा स्वभाव है उस अनुसार मैं आप लोगों से सत्य कह रहा हूँ लोक में अन्यथा बात करने से क्या फायदा । मेरे दादा जी के आप लोग सखा भी हैं दास भी हैं अतः मेरे पिता जी के सदृश ही आप हैं ऐसा हमेशा मैं देखता हूँ ॥७५॥

मातुश्च दास्योममातरः स्युर्दास स्तु मन्ये सममातुलेन ॥
तथा सखा यस्तु सहोदरा मे न चान्य भावो हृदये कदाचित् ॥७६

मेरी दादी की जो दासो हैं वे मेरी माँ के सदृश हैं । मेरी दादी के जो दास हैं वे मेरे मामा के सदृश हैं उनके जो बाल बच्चे हैं वे मेरे ममुहर भाई बहिनों के सदृश हैं और उनके जो सखा लोग हैं वे मेरे सहोदर भाईके समान हैं इसी प्रकार मेरे हृदयमें भाव रहता है और तरह से नहीं ॥७६॥

श्रीरामचन्द्रानन तच्छ्रुतं परं वाक्यामृत कर्ण पुटे निपीयसः॥
उवाच दूतोंप्यति प्रेम निर्भरः प्रशंसयन्भाग्यं परं महोदयम् ॥७७॥

श्रीरामजी के मुख रूपी चन्द्रमा से इस प्रकार की बोली रूपी अमृत कान रूपी दोना से पान करके अत्यन्त प्रेम में निर्भर हुए दूत अपने भाग्य के महान् उदय को परम प्रशंसा करते हुए इस प्रकार बोले ॥७७॥

धन्योस्मि धन्योस्म्यहमद्यतात श्रुत्वा वचस्ते वदनं च दृष्ट्वा ॥
आजन्म तोद्य क्षणमेव लब्धा कर्ण द्वयेनाक्षि द्वये न तृप्तिः॥७८

हम धन्य हैं, हम धन्य हैं। हे तात ! आज आपके बचनों को सुन करके और आपके मुख-चन्द्र को देख करके अपने जीवन भर में आज के ही क्षण को हम धन्य मानते हैं जो अपने दोनों कानों और नेत्रों से मन भर के बोली सुने, रूप देखे, तृप्त हुए ॥७८॥

सरस्त्वयोध्या परमोत्तमं स्यादीक्ष्वाकवस्तत्र सरोजकानि ॥
तेषां प्रबोधाय रविस्त्वमासीत्तत्ते गुणानां कथने प्रभू कः ॥७६॥

हे तात ! श्रीअयोध्या जी एक सरोवर है ये जितने भी इक्ष्वाकु वंशीय राजा हुए सबके सब कमल हैं। इन सब कमलों को खिलाने के लिए आप सूर्य के समान हैं इस प्रकार के आप, अब आपके गुणों को कथन करने में कौन समर्थ है ॥७६॥

हरिर्न ब्रह्मा न हरः शरास्यो न सर्पराजो द्वि सहस्र जिह्वः ॥
मुनिस्तुयत्कोटिशतं विधायन लब्धवान्सोऽपि परंहि पारम् ॥८०॥

आपके गुणों को वर्णन करने के लिये तो न विष्णु, ब्रह्मा शंकर, जी समर्थ हैं जो कि चार हाथ चार मुख व पांच मुख वाले हैं और न तो दो हजार जिह्वा वाले शेष जी ही समर्थ हैं और जिन्होंने सौ करोड़ की संख्या के विस्तार में रामचरित्र को लिखा वे मुनि वाल्मीकि जी भी आपके चरित्र का पार नहीं पाये ॥८०॥

संस्थाप्य वीणा जघने घन स्वरां-
ब्राह्मी तु हर्षा श्रुप्पृषत्पयोधरा ॥
कीर्तिं च ते गायति धातृसद्मनि -
वीणाधरो नारद उद्धृत स्वरैः ॥८१॥

और जो अपने जघन में वीणा को स्थापित करके अपने पयोधरों में स्पर्श करते हुये वीणा के गम्भीर नाद के साथ आँखों से स्नेहमयी अश्रुधारा बहाती हुई ब्रह्मा जी के लोक में बैठकर ब्राह्मणी और वीणा को धारण किये हुए श्रीनारद जी भी सातों स्वरों से अलाप लेकर आपकी कीर्ति का गान करते हुए भी पार न पाये ॥८१॥

स्फीता गुणास्ते रघुराज सूनो स्फीतश्च रूपं मुनि मोहनं ते ॥
स्फीतश्च स्नेहोऽप्यति दास वर्गे स्फीताः श्रियस्ते सकलाङ्ग भूताः॥८१

हे रघुराज सुनो ! मुनियों के मन को मोहित करने वाला आपका अद्भुत रूप और अद्भुत विस्तार गुण ये सब अतिशय महानता के साथ आपके सेवकों में अतिशय अनुराग उत्पन्न करने वाला महान् है जिस आपकी कीर्ति के अङ्गभूत अनन्त ऐश्वय सब है ॥८२॥

रूपार्णवे ते च गुणार्णवेऽपि मनांसि मीनाः सुविदां निमग्नाः ॥
चरित्र चिन्त मणि भूषिता ये तेत्यक्त भूषा विचरन्ति लोके ॥८३

हे राम ! आपके रूप समुद्र में और गुण समुद्र में जिन विद्वानों का मन मछली की तरह से मगन मन होगया है वे विद्वान आपके चरित्र रूपी चिन्तामणियोंकी मालाओं से भूषित हुए अन्य भूषणों को त्याग करके आनन्द मग्न हुए लोकों में विचरते हैं ॥८३॥

यैः स्वाम्बके अम्बक भोगरूपं शौन्दर्य शीलं निहितं तदैव ।।
अनन्त कन्दर्प विदर्पकारंतेमुद्रिताक्षाहि चरन्ति लोके ।।८४।।

जिन्होंने शंकर जी के भोग स्वरूप आपके रूप शौन्दर्य शील को अपने नेत्र से पीकर हृदय में रख लिया है वे अनन्त कोटि कन्दर्प के दर्प को नाश करने वाले आपकी सुन्दरता को देखकर आंख वन्द किये सर्वलोक में विचरते हैं ।।८४।।

इत्थं दूतस्तु श्री रामगुणान्वक्ति मनोहरान् ।
तावच्छ्रीम दजो राजा मुनेः सानिध्यमाप्तवान् ।।८५।।

श्रीशङ्करजी बोले कि इस प्रकार दूतों ने श्रीराम जी के मनोहर गुणों का वर्णन किया तब तक महाराज श्री अज जी श्रीवसिष्ठ जी के समीप आ पहुँचे ।।८५।।

दूरादवतीर्य्य यानात्संस्पृशन्पादयोर्मु नेः ।।
स पुनःस्थापितश्चाग्रेह्याशीर्वाग्भिः प्रपूजितः । ८६।।
अयोध्या वासिनो विप्रास्तान्ववन्दे नरेश्वरः ।।
अन्ये सभा सदा ये च सुमन्ताद्याः सुविस्मिताः ।।८७

दूर से ही अपनी सवारी से नीचे उतर करके मुनि महाराज के चरणों का स्पर्श किये और श्री वसिष्ठ जी ने भी आशीर्वाद दिया, अपने आगे आसन दिया, वचन से स्वागत किया। और अयोध्या-वासी जितने भी ब्राह्मण थे उन सबको महाराज ने प्रणाम किया और भी जितने सभासद थे तथा सुमंत आदिक मन्त्री थे सबके सब आश्चर्य चकित हुए ।।८६-८७।।

पुनः प्रभावं विज्ञाय ववन्दिरे महेश्वरम् ।।
महाराज्ञापि सहितं देव्या परम वृद्धया ।।८८।।

*फिर महाराज अज के प्रभाव को जानकर प्रणाम किया। परम वृद्धा महारानी जी के साथ महेश्वर महाराज श्री अज भी सबको आशीर्वाद आश्वासन दिये ।।८८।।

पुनश्च सुस्थिरां कृत्वा वशिष्ठो वृहती सभाम् ।।
आपृच्छत्कुशलं प्रश्नं ते नोक्तं दर्शनात्तव ।।८९।।

इसके बाद श्रीवसिष्ठ जी ने उस महान सभा के कोलाहल को शान्त करके महाराज अज से कुशल प्रश्न किये। श्रीअज महाराज ने भी आपके दर्शन से सब कुशल है ऐसा उत्तर दिया ।।८९।।

राज्ञोऽजस्य प्रजाः सर्वा वृद्धानुगाश्च वान्धवाः ।।
ववन्दिरे मुनेः पादौददृशुर्ह्यात्मजान्पुनः ।।९०।।

महाराज अज जी के साथी जितने भी सब वृद्ध २ प्रजा और साथी संगी बान्धव सब वृद्धों ने श्रीवसिष्ठ जी के चरणों में प्रणाम किया फिर और अपने वंशज कुमार श्रीरामजी का दर्शन किया ।।९०।।

श्रीमदजस्य सभायां पितरं च स्वकं स्वकम् ।।
प्रलेभिरे महाश्चर्य्यं दृष्ट्वा सर्वे मुदा अपि ।।९१।

महाराज अज जी की सभा में अपने २ पितरों को भी देख करके सभी बराती लोग आनन्द मग्न हुए महा आश्चर्य को प्राप्त किए ।।९१।।

श्रीराम लक्ष्मणौ चाथ समाहूय मुनीश्वरः ॥
प्रेरयित्वात्मना तौ च पातितौ पदयोस्तयोः ॥६२॥

और श्री बसिष्ठ जी ने भी श्रीराम-लक्ष्मण जी को बुलाकर फिर स्वयं आज्ञा देकर के महाराज अजजीके चरणोंमें प्रणाम कराया ॥६२॥

द्वाभ्यां च स्थापितावंके श्रीराम लक्ष्मणौ सुतौ ॥
तदा चाघ्राय मूर्धानं ययतुः परमं सुखम् ॥६३॥

और श्री अज जी ने भी दोनों पति पत्नी ने श्री राम जी व लक्ष्मण जी दोनों पौत्रों को गोदी में बैठाकर सिर सूँघे महान सुखको प्राप्त हुए ॥६३॥

मनोहरं सुवदनं पौत्रयो र्वीक्ष्य वीक्ष्यतौ ॥
पितामहौ महात्मानौ लेभाते सुखमद्भुतम् ॥६४॥

पौत्रों के मनोहर मुखचन्द्रों को देख देखकर दादा दादी दोनों महात्मा अभ्दुत सुख को प्राप्त किए ॥६४॥

चुचुम्बतुश्च वदनं राम लक्ष्मणयो मुर्हुः ॥
पादयोर्हस्तयो रेषाः सौभाग्य सूचकाहिया ॥६५॥

श्री राम लक्ष्मण जी के मुखचन्द्र का बार२ मुख चुम्बन किए। कर चरणों के सौभाग्य सूचक रेखाओं को देख देखकर अति हर्षित हुए ॥६५॥

ताः पश्यन्तौ महाग्यौं तौ स्वभाग्यं च प्रशंसतु ॥
दृष्ट्वा सर्वाङ्गं सुखमां महानन्दे ममज्जतुः ॥६६॥

महान् श्रेष्ठ दोनों दम्पति अपने पोताओं के सर्वाङ्ग परमा शोभा को देखर कर महा आनन्दमें मग्न हुए और अपने भाग्यकी प्रशंसा करने लगे ॥६६॥

वारं वारं पौत्रपौत्र प्रेम्णा वदति सुस्वरः ॥
आनीय हृदये गाढं चिबुकं चुम्ब्य पश्यति ॥६७॥

बार२ अनुराग से हे पौत्र ? हे पौत्र ? ऐसा कहते हुए सुन्दर स्वर से बिनोद किए हृदय से लगाए। चिबुक को पकड़कर बड़े गाढ़से चुम्बन किए और मुखचन्द्र देखे ॥६७॥

देवि रामो लक्ष्मणोपि तयोरंके महार्ययोः ॥
अभूदापञ्च वयसा बाल चेष्टां दधन्नपि ॥६८॥

महाराज अज जी और उनकी पत्नी श्रीराम लक्ष्मणजीको अपनी गोदीमें लिए हुए पाँच बर्षकी उम्र से बालक सदृश चेष्टा करते हुए श्री राम लक्ष्मण जी ने भी अपने दादा दादी को अति सुखी किया ॥६८॥

तयो रानन्द मादातु श्रीरामो लक्ष्मणस्तथा ॥
अभवद्बाल रूपेण तत्र जानन्ति केचनः ॥६९॥

उन दोनों को आनन्द देने के लिए श्रीराम लक्ष्मण जी बालक सरीखे पाँच वर्ष के हो गए यह बात कोई भी नहीं जानने पाया ॥६६॥

आनन्दजाश्रु सिक्तास्यो वशिष्ठं प्रत्युवाचसः ॥
प्रशंसयन्नात्म पुत्रं श्रीमद्दशरथं विभुम् ॥१००॥

आनन्द से आखों में आँसू बहाते हुए महाराज अज जी श्रीवसिष्ठजी के सामने महान ऐश्वर्यमान अपने पुत्र श्री दशरथ जी की प्रशंसा करने लगे ॥१००॥

मुनिराज प्रसादात्ते सर्व सिद्धि प्रदस्यवै ॥
अभवद्धि महाभागः पुत्रो मे दशस्यन्दनः ॥१०१॥

हे मुनिराज ? सब सिद्धियों को देने वाली आपकी कृपा से मेरा महान् भाग्यशाली दशरथ नाम का बेटा हुआ ॥१०१॥

यस्य चैवोच्छ्रितां कीर्तिं वीणया नारदो मुनिः ॥
गायति ब्रह्म लोकेऽपि ह्यानन्दाश्रु प्लुताननः ॥१०२॥

जिनकी बढ़ी हुई कीर्तिका वीणाधारी नारद मुनि आनन्द अश्रुओंकी मुख पर धारा बहाते हुए ब्रह्मलोक मेगीत गाते हैं ॥१०२॥

मुखाद्यस्य चतुर्वेदा निःसृता लोक विश्रुताः ॥
तस्यात्मजो भवान्साक्षात्पुरोधा यस्य सोभवत् ॥१०३॥

क्यों न हो जिन ब्रह्मा जी के चारों मुख से चार वेद उत्पन्न हुए जो लोक में प्रसिद्ध हैं उन्ह ब्रह्मा जी के श्रेष्ठ पुत्र आप साक्षात् जिसके उपरोहित हो गए ॥१०३॥

तस्य लोकोत्तरं यद्यत्सुखं सिद्धि जयो यशः ॥
भवेत्तत्र किमाश्चर्यं प्रभावो वार्क सादृशः ॥१०४॥

उसके भाग्य में जो२ लोकोतर सुख, सिद्धि,जय, यस प्राप्त हो तथा सूर्य के सदृश प्रभाव लोकमें प्रकाशित हो इसमें आश्चर्य ही क्या है ?॥१०४॥

यद्भूतं यद्भविष्यन्ति यच्च वृत्तं हि दृश्यते ॥
तत्सर्वं भवतः पाद पूजाया फल मेवहि ॥१०५॥

हे महाराज ! जो आज तक हुआ और आगे होगा और जो दृश्य प्रतक्ष्य दीखरहा है वह सब आपकी चरण पूजा का फल है ॥१०५॥

विना श्रीमद्गुरोरंघ्रेः सर्व भावेन पूजनं ॥
कृत्वा सुखं कुतो लभ्येदन्योपायैः सहस्र कैः ॥१०६॥

श्रीसद्गुरु जी के चरण कमलों की सर्वभाव से विना पूजा किए अन्य हजारों उपाय करने पर भी कहाँ मिल सकता है ॥१०६॥

दण्डवत्पतिता भूमौ गुरोरग्रे तुये नराः ॥
न तेषां हि भयं लोके कालोपि मन्यते भयम् ॥१०७॥

जो मनुष्य गुरू महाराज के आगे पृथ्वी में दण्ड की तरह गिर पड़ते हैं उनको लोक में कोई भय नहीं है ऐसे भक्त से काल भी डरता है ॥१०७॥

गुरोरंघ्रि जलं येन धृतं शिरसि भावतः ॥
सर्व तीर्थेषु निस्नातं तेन वै विधि पूर्वकम् ॥१०८॥

जिसने भावपूर्वक गुरु महाराजके चरणामृत को सिर से धारण किया उसने विधि पूर्वक सब तीर्थोंका स्नान कर लिया ॥१०८॥

येनार्पितं तु गुरवे सर्वं यत्स्वात्मकं धनम् ॥
अक्षयं च धनं प्राप्य पुनर्मोक्षं स गच्छति ॥१०९॥

जिसने अपने आत्मीय सर्वस्व धन को गुरु महाराज के लिए अर्पण कर दिया है वह अक्षय धन को प्राप्त करके अन्तिम में मोक्षधाम में जाता है ॥१०९॥

ये तु षोड़श विधिना कुर्वन्ति गुरु पूजनम् ॥
पूर्ण चन्द्र इवा भांति ते लोके नात्र संशय ॥११०॥

जो षोडशोपचार विधि से गुरु महाराज का पूजन करते हैं वे चन्द्रमा की तरह लोक में प्रकाशित होते हुए सर्वलोक में प्रकाशमान होते हैं इसमें कोई संशय नहीं है ॥११०॥

ब्रह्मादयोपि पूतां स्तान् गुरु पादाब्ज सेवकान् ॥
प्रशंसया पूजयन्ति स्वलोका गमनेच्छया ॥१११॥

इस प्रकार गुरु चरण कमल के सेवकों को अपने लोक में ले जाने की इच्छा से ब्रह्मादिक देवता लोग उन भक्तों की प्रशंसा और पूजा करके प्रसन्न करते हैं इस तरह करने पर स्वयं अपने को पवित्र मानते हैं ॥१११॥

गुरूत्सवं प्रकुर्वन्ति प्रेम्णा वित्त व्ययेनये ॥
नित्योत्सवो गृहे तेषां न विघ्नानिवसन्ति च ॥११२॥

जो प्रेम पूर्वक महान् वित्त व्यय करके गुरु महाराज का उत्सव करते हैं उनके घर में नित्य उत्सव हुआ करते हैं ऐसे भक्तों को कभी विघ्न बाधा नहीं करते ॥११२॥

दधन्ति च गुरोः पाद रजांसि मस्तके नराः ॥
तान्सुराहि नमस्यन्ति तत्रान्येषान्तुका कथा ॥११३॥

जो मनुष्य गुरु महाराजके चरणरज को सिर पर धारण करते हैं उन भक्तों को देवता लोग भी नमस्कार करते हैं और की क्या कथा है ॥११३॥

ये चाश्नन्ति गुरुत्सृष्टं भावेन भक्तितः सदा ॥
तेतु वाह्यांतरः पूतास्तरन्ति भव सागरम् ॥११४॥

जो भाव पूर्वक नित्य भक्ति से गुरोच्छिष्ट सेवन करते हैं वे बाहर भीतर सब तरह से पवित्र होकर भव सागर से तर जाते हैं ॥११४॥

पूजयन्ति तु हर्य्यर्चां ये विना गुरु पूजनम् ।।
न प्रसीदति हरिस्तेषु कल्पकोटि शतैरपि ।।११५।।

जो विना गुरु महाराजकी पूजा किये भगवान् की पूजा करते हैं उनसे भगवान सौ करोड़ कल्प में भी प्रसन्न नहीं होते हैं ।।११५।।

विना गुरुं नमस्कृत्वा हरिं नमस्करोति यः ।।
न पश्यतिहरिस्तस्य मुख मागस्कृतस्य वै ।।११६।।

गुरु महाराज को बिना नमस्कार किए ही जो भगवान को नमस्कार करते हैं भगवान उनके मुख को नहीं देखते हैं भले हीं वह भगवान के सामने बैठा हो ।।११६।।

श्री गुरोर्भुक्ति शेषं तु प्रथमं यो भुनक्तिवै ।
पश्चाद्धरि प्रसादं च महापुन्यं प्रजायते ।।११७।।

जा प्रथम गुरु महाराज के भोग शेष प्रसाद को पाकर तब पीछे भगवान का प्रसाद पाते हैं तब उनको महान् पुण्य होता है ।।११७।।

गुरु प्रसाद माहात्म्यं न वक्तुं कोपि शक्तये ।।
व्यति क्रमेण पापस्य न संख्या मीयते नरः ।।११८।।

श्रीगुरू महाराज के प्रसाद के महात्म को कहनेके लिये कोई भी समर्थ नहीं है। इससे विपरीत मनुष्य कितना पापको प्राप्त होता है इसकी कोई संख्या नहीं है।।११८।।

श्रीमद्गुरुःपाद पांशु मूलाधर्माः समंततः ।।
तद्विना निर्मूलास्ते कथं फल प्रदानृणाम् ।।११९।।

•समस्त धर्म चारों तरफ से श्रीमद्गुरु चरण धूलि से ही मूल उत्पन्न होते हैं। गुरु चरण धूलि के विना मूल रहित सब धर्म कैसे मनुष्यों को फल देने वाले होंगे? अर्थात् नहीं होंगे ।।११९।।

श्रुतिमूलं गुरोर्वाक्यं पूजा मूलं गुरोः पदम् ।।
धर्म मूलं गुरोः सेवा शुभमूलं गुरोः कृपा ।।१२०।।

वेद का मूल गुरु की वाणी है। पूजा का मूल गुरु महाराज के चरण हैं. धर्म का मूल गुरु महाराज की सेवा है। कल्याण का मूल गुरु महाराजको कृपा है ।।१२०।।

श्रीमद्गुरु विहीना ये गुरौस्नेह विवर्जिताः ।।
न द्रष्टव्यं मुखं तेषां संगतिस्तु कुतः शुभा ।।१२१।।

जो गुरु नहीं किये अथवा गुरु महाराज के चरणों में जिनका स्नेह नहीं है उनका तो मुख भी नहीं देखना चाहिये संगति को कहना ही क्या ।।१२१।।

राजा विवेकशाली यो दृष्ट्वा चैतादृश नरम् ।।
श्रुत्वा वा गर्धभेस्थाप्य स्वदेशादाशु प्रक्षिपेत् ।।१२२

इस प्रकार के गुरु विमुख मनुष्यों को देखकर अथवा सुनकर विवेकशाली राजा को चाहिए कि उसे गधे पर बैठाकर अपने देश से शीघ्र निकाल दे ।।१२२।।

अहोभाग्यमहोभाग्यं जानाति गुरु मीश्वरम् ॥
निषेवेत्सततं प्रीत्या सोप्यन्येषां शुभ प्रदः ।।१२३।।

अहोभाग्य है कि जो गुरू को ईश्वर मान करके सावधान होकर बड़े अनुराग से सेवा करता है। वह अपना कल्याण तो करता ही है उसके दर्शन से अन्य सब जीवोंका कल्याण होता है ॥१२३॥

ना वैष्णवं गुरुं कुर्य्यान्ना नीतेर्मार्गं संसरेत् ॥
न द्रोहं प्राणिनां कुर्य्यान्न च पापं समारभेत् ।१२४।।

परन्तु गुरु अवैष्वण अन्यायी नहीं होना चाहिये। जो वैष्णव नहीं है, नीति मार्ग से नहीं चलता, समस्त प्राणियों से द्रोह करता है और पापाचारी है उसे गुरू नहीं बनना चाहिये।।१२४।।

स्तुति व्याजाद्गुरो राज्ञा कथिता नीतिरुत्तमा ॥
नीति व्याजा त्स्तुस्तिस्तस्य कृता सद्गुणशालिना।।१२५

इस प्रकार श्रीशंकर जी बोले कि हे पार्वती! महाराज श्रीअज जी ने श्रीगुरु महाराज की स्तुति के बहाने गुरूको आज्ञा पालन और उत्तम नीतिकी शिक्षा दिया और इस गुरू अनुकूलता नीतिके बहाने श्रीगुरु महाराज की स्तुति भी की। इस प्रकार सद्‌गुणशाली महाराज श्रीअजजी को ॥१२५॥

ततः परं सतां श्रेष्ठं तं स्तुवंश्च मुनि प्रभुः ।
उवाच सततं देवि वचनं लोक शीक्षकम् ।।१२६।।
कथं न वदसी त्येवं सर्व लोक गुरुर्भवान् ॥
धर्म्मेषु सर्व वर्णानां बोधं कृत्वा प्रवर्त्तकः ।१२७।।

गुरु स्तुति करते हुए सन्तोंमें श्रेष्ठमान करके श्रीवसिष्ठजी लोक शिक्षामयवचन बोले—हे राजन! क्यों न आप ऐसा कहेंगे क्योंकि आप सर्व लोक गुरू हैं और सब वर्णों के धर्म बोध कराने वाले लोक शिक्षक और धर्म प्रर्वतक हैं ॥१२६–१२७॥

त्वं साक्षाद्धर्म्म मूर्तिः स्यान्नीति रूपो विशांपते ॥
तत्फलं पश्यत्वं स्वां के लब्धं के न च लभ्यते ॥१२८

हे पृथ्वीपते! आप साक्षात् धर्मकी मूर्ति और नीति के स्वरूप हैं इस धर्म नीति के फल स्वरूप ये आपकी गोदी में बैठे हुए जैसे आपने पाए ऐसा कौन प्राप्त कर सकता है।।१२८।।

त्रयाणां जनकस्यापि जनकः कोऽपि निर्णितः ॥
परं ज्योतिः परं धाम तस्य त्वं जन को महान् ॥१२९

ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीनों देवताओं का भी कोई पिता है जो परम ज्योति परमधाम इस प्रकार से वेदों द्वारा कहा गया है उनके पिता श्रीदशरथ जी और उन दशरथ जी के भी पिता आपहैं अतः आप महान् हैं ॥१२९॥

कष्टेन पूर्वजैस्ते च मार्गो धर्म्मेण साधितः ॥
नीत्यापितपसातस्य फलं स्वां के धृतं त्वया ॥१३०॥

आपके पूर्वजों ने बड़े कष्ट के साथ धर्म का पालन किया तथा नीति पूर्वक तपस्या भी की उसी का फल स्वरूप आज आपने अपनी गोदी में इन श्रीरामजी को बैठाया ॥१३०॥

शिव उवाच–इत्थं देवि वशिष्ठस्य गर्भितं वचनं नृपः ॥
श्रुत्वा चां के स्थितं रामं लक्ष्मणं च मनोहरम् ॥१३१

श्रीशंकर जी बोले कि हे पार्वती जी ! श्रीवसिष्ठ जो ने गूढ़ तत्व गर्भित वचन जब महाराज को कहे तब श्रीअज जी महाराज अपनी गोदी में बैठे हुए मनोहर मूर्ति श्रीरामजी और लक्ष्मणजी को ॥१३१॥

प्रेम्णा गद्गदात्मा सौ दृष्ट्वादृष्ट्वा मुहुर्मुहुः ॥
प्रेमाश्रूणां सुनेत्राभ्यां मुमुञ्च विन्दु मालिकाम् ।१३२

प्रेम से गद्गद आत्मा होकर बार २ देख २ कर नेत्रों से प्रेममयी अश्रु विन्दुओं की माला बरसाने लगे ॥१३२॥

ततो धैर्यं समाश्रित्य समवीक्ष्य राम लक्ष्मणौ ।।
अनयोर्जन्म योगं यज्ज्योतिर्विद्भिः सुभाषितम् ॥१३३

कुछ देर के बाद धैर्य धारण करके श्रीराम लक्ष्मण जी को देख करके इन दोनों के जन्म योगको जो ज्योतिषियों द्वारा कहा गया है ॥१३३॥

सामुद्रिकं च रेषाभिजङ्गुलेन समस्तकम् ॥
पप्रच्छ नृप शार्दूल स्त्रि कालज्ञ मुनीश्वरम् ॥१३४॥

तथा सामुद्रिक शास्त्र द्वारा रेखाओं का और अङ्ग के तिलादि चिन्हों का भी त्रिकालज्ञ मुनीश्वर श्रीवसिष्ठ जी से राज शार्दूल महाराज श्रीअज जो ने प्रश्न किया॥१३४॥

श्रीअजोवाच-वद योगनिधे सर्वं वालयो र्भावि यत्फलम् ॥
लग्न ग्रहादि योगाना मायुः कीर्तिं च शौरताम् ।१३५

श्रीअज जी बोले ! हे योगनिधे इन बालकों के भविष्य होनहार जो फल हो लग्न ग्रह योगादिकों का भी जो फल हो तथा इनके भविष्य का पराक्रम कीर्ति जो भी हो सब कहिये ॥१३५॥

शिवोवाच–एवं पृष्टो नृपेन्द्रेण वशिष्ठो योग भास्करः ॥
प्रति नंद्य वचस्तस्य प्रति वक्तुं प्रचक्रमे ॥१३६॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि इस प्रकार महाराज अज जी के प्रश्न करने पर योगियों में सूर्य के समान श्रीवसिष्ठ जी महाराज के बचन का स्वागत करके प्रश्न का उत्तर देना आरम्भ किये ॥१३६॥

वशिष्ठोवाच--शृणु राजन्महाभागद्वाविमावपरौ चद्वौ ॥
एतौ राम लक्ष्मणौ च शत्रुघ्न भरतौ पुनः ॥१३७॥

श्रीवसिष्ठ जी बोले—हे महाभागशालिन् राजन् ! सुनिये । दो पौत्र तो आपके श्रीराम लक्ष्मण नाम के ये हैं और दो पौत्र और हैं उनका नाम श्रीभरत शत्रुघन जी है ॥१३७॥

चत्वारस्ते महाभागाः पौत्राः लोकेषु विश्रुताः। ॥
गृहाशुभ गुणानां च जाता लग्न महोदये ॥१३८॥

ये चारो महाभागशाली आपके पौत्र सर्वलोकों में प्रसिद्ध होवेंगे क्योंकि ये सद्गुणों के धाम स्वरूप सुन्दर महान् लग्नयोग में प्रगट हुए हैं ॥१३८॥

भवतां सुकृत संख्या न च तेषां फलस्य च ॥
गङ्गा साक्षात्समुद्रश्च येषां पूर्तादि कर्मसु ॥१३९॥

यज्ञ पूर्तादिक (कुआ बावड़ी, बगीचा आदि बनाना) कर्मों में जो कर्म का प्रवाह है वह साक्षात् गंगा-धारा के समान आपके सुकृत रूप समुद्रमें जिस प्रकार असंख्य रूपसे गया है उसी प्रकार उनके फलोंकी भी कोई संख्या नहीं है ।।१३९॥

तेषां गृहे जन्म यस्य महा सुकृत शालिनां ॥
तस्य जन्म ग्रहावल्यां किं प्रष्टव्यं सुभार्थकम् ॥१४०॥

इस प्रकार के सत्कर्म करने वाले महापुण्यात्मा लोगों के घर में जिनका जन्म हुआ हो उनके जन्म नक्षत्र ग्रहों को क्या देखना उसके जन्म नक्षत्र तो सब सुन्दर ही फल देनेवाले होंगे ।।१४०।

तथापि ह्यनु मोदाय कथयामि महामते ॥
यदुद्यतं ग्रहाणां च फलं मङ्गल दायकम् ॥१४१॥
प्रथमं तु नृप श्रेष्ठ पुष्पर्चं परमं शुभम् ।।
दिनस्य मध्य भागस्तु परं मंगल दायकः ।१४२॥

तो भी हे महाबुद्धिमान् अज जी आपकी मन प्रसन्नता के लिए जो उत्तम लग्न ग्रह मंगलदायक इन श्रीरामजी के जन्मकाल में हुए हैं उनका फल मैं तुमसे कहता हूँ। हे राज श्रेष्ठ! प्रथम तो इन श्रीराम जी के जन्म में पुष्य नक्षत्र से पूजित परम सुन्दर फलदायक पुनर्वसु नक्षत्र और दिन के मध्य भाग ये सब परम मंगलदायक हैं ॥१४१-१४२॥

अतः परं चैत्र मासो महा मङ्गल दायकः ।।
राजातूनां वसन्तोपि पूर्वावस्थां समाश्रितः ॥१४३॥

इससे भी आगे चैत्र का महीना महान् मंगलदायक है। इससे भी उत्तम सब ऋतुओं का राजा वसन्त भी किशोरावस्था को प्राप्त हुआ है ॥१४३॥

वृषेचार्क समापन्ने लग्न कर्के समुद्यते ॥
उच्चस्थाने ग्रहापञ्च समये त्वस्य जन्मनः ॥१४४॥
दिग्सरित्स्वं च भूर्वायुस्तथा सर्वे च प्राणिनः ।।
प्रसन्नादेव जातिश्च समये राम जन्मनः ॥१४५॥

वृष लग्न में सूर्य उदय हुए कर्क लग्न तक पहुँचे हुए हैं पांचों ग्रह ऊँचे स्थान में हैं इस प्रकार अद्भुत उत्तम समय में इन श्रीरामजी का जन्म हुआ है और श्रीराम जी के जन्म समय में दिशायें नदियां आकाश और पृथ्वी वायु तथा सभी प्राणियां और सब देव जाति उस समय सब प्रसन्न और निर्मल थे ।।१४४-१४५॥

अभूत पूर्वं सर्वं च जातं श्रीराम जन्मनि ॥
किं वर्णयामि राजेन्द्र तस्य चाग्रं महोदयम् ॥१४६॥

श्रीराम जी के जन्मकाल में जो उत्तम नक्षत्र, ग्रह वार, तिथि उत्पन्न हुए ऐसा न पहले कभी हुआ था। और न आगे होगा। इस प्रकार जन्म लेने वाले इन श्रीराम जी का भविष्य हे राजेन्द्र मैं क्या वर्णन करूं ॥१४६॥

ईश्वराणामीश्वरस्येश्वरो हीत्थं भवेद्यतः ॥
सामुद्रिके लक्षणानि मुनीन्द्रै र्दर्शितानियैः ॥१४७॥

इस प्रकार का जन्म लेने वाला तो ईश्वरों का भी जो ईश्वर हो उसका भी वह ईश्वर होगा इस प्रकार सामुद्रिक शास्त्र के जानने वाले मुनीन्द्र लोग इन चिन्हों का लक्षण बताते हैं ॥१४७॥

सौन्दर्य्याति च सौन्दर्य्यं शीलाधिक्याति शीलता॥
वीर्याधिक्याति वीर्य्यं च विक्रमाधिक विक्रमम् ॥१४८

इस लिए हे राजेन्द्र इन श्रीरामजी के लक्षणों से यह निश्चय है कि ये रामजी सुन्दरों में सर्वोत्तम सुन्दर, शीलवानों में सर्वोत्तम शीलवान, बलवानों में सर्वोत्तम बलवान, पराक्रमियों में सर्वोत्तम पराक्रमी, वीर्यवानों में सर्वोत्तम वीर्यवान ॥१४८॥

तेजसा मधिकं तेजः प्रतापाधिक्यत स्तथा ॥
प्रतापो भू यशश्चैव कृपाधिक्यं कृपा परा ॥१४९॥

तेजस्वियों में सर्वोत्तम तेजस्वी, प्रतापियों में सर्वोत्तम प्रतापी, यशस्वियों में सर्वोत्तम यशस्वी कृपालुओं में सर्वोत्तम कृपालु ये श्रीरामजी होंगे ॥१४९॥

वैभवो वैभवाधिक्यो भोगो भोगाधिकः परः ॥
सिद्धिभ्यश्च परा सर्वाः सिद्धयो लक्षणोन्मिता ॥१५०

धनवानों में सर्वोत्तम धनवान, ऐश्वर्यवानों में सर्वोत्तम ऐश्वर्यवान, भोगियों में सर्वोत्तम भोक्ता सिद्धियों में सर्वोत्तम परा सर्व सिद्धियां- ये लक्षण बता रहे हैं ॥१५०॥

वात्सल्याधिक वात्सल्यं स्वात्मीयेषु मनोहरम् ॥
कारुण्याधिक कारुण्यं दयाधिक्या दया परा ॥१५१

वात्सल्यवानों में सर्वोत्तम वात्सल्यवान, अपने आश्रितों के मन को चुराने वाले, कारुणिकों में सर्वोत्तम करुणा सागर दयावानों में सर्वोत्तम परम दयालु ॥१५१॥

स्नेहाधिकतम स्नेहः प्रीत्याधिक्यं च प्रीति ता ॥
प्रेमाधिक्यः पर प्रेम्णो रागाधिक्यस्तु रागवान् ॥१५२

स्नेहियों में सर्वोत्तम सनेही, प्रीति में भी सर्वोत्तम प्रीतिता, प्रेमाधिक्यता में परम प्रेमी, अनुरागियों में परम अनुरागवान ॥१५२॥

ख्यातेश्चैवाधिका ख्यातिः सर्व लोक प्रवर्त्तिनी ॥
कीर्तेश्चैवाधिका कीर्ति धवली कृत दिग्मुखा ॥१५३॥

प्रसिद्धिवानों में सर्वोत्तम सर्व लोक प्रवर्तिनी सिद्धि इन श्रीरामजी की होगी। कीर्तिमानों में सर्वोत्तम उज्ज्वल कीर्ति दशों दिशाओं को प्रकाशित करने वाली होगी ॥१५३॥

औदार्य्याधिक मौदार्य्यं यश सोप्यधिकं यशः ॥
माधूर्य्याधिक माधूर्य्यं सौम्यंसौम्याधिकं परम् ॥१५४॥

उदारों में सर्वोत्तम उदार, यशस्वियों में सबसे अधिक यश माधुर्यता में सबसे अधिक माधुर्य, सुन्दरता सुकुमारता में सबसे अधिक सुन्दर सुकुमार ॥१५४॥

बलाधिकं बलं यस्य सारं साराति सारकम् ॥
स्थैर्य्यं तु स्थैर्य्यादधिकं धैर्य्यद्धै र्य्याधिकं परम् ॥१५५

बलवानों में सबसे अधिक बलवान, सारवानों में सर्वोत्तम सारवान स्थिरता में सर्वोत्तम स्थिर, धैर्यवानों में सर्वोत्तम धैर्यवान ॥१५५॥

सामर्थ्याधिक सामर्थ्यं धारणाधिक धारणा ॥
पालनादधिकं यस्मिन्पालनं परिवर्त्तते ॥१५६॥

सामर्थ्यवानों में सबसे अधिक सामर्थ्यवान, धारण करने वालों में सबसे अधिक धारणकर्ता, पालन कर्ताओं में सर्वोत्तम पालनकर्ता ॥१५६॥

शरण्याधिक शारण्यं दानं दानाधिकं परम् ॥
मानं मानाधिकं तस्य सेवा सेवाधिका तथा ॥१५७॥

शरण्यों में सर्वोत्तम शरण्य देवता, दानियों में सर्वोत्तम दानी, मानियों में सर्वोत्तम मान्य जिनका सेव्यों में सर्वोत्तम सेव्य ॥१५७।

ज्ञानं ज्ञानाधिकं चैव शक्तिः शक्तिः शताधिका ॥
काठिन्याधिक काठिन्यं मार्दवं मार्दवाधिकम् ॥१५८॥
गाम्भीर्य्याधिक गाम्भीर्य्यं मार्जवाधिक मार्ज्जवम् ॥
आर्द्दवाधिकार्द्दवं च सौहार्दाधिक सौहृदम् ॥१५९॥

ज्ञानियों में सर्वोत्तम ज्ञानी, शक्तिमानों में सर्वोत्तम अधिक शक्तिमान, कठिनता में सर्वोत्तम कठिन, कोमलों में सर्वोत्तम कोमल, गम्भीरों में सर्वोत्तम गम्भीर, सरलता में सबसे अधिक सरल, नम्रों में सर्वोत्तम नम्र, सौहार्दता में सर्वोत्तम सौहार्द वाले ॥१५८-१५९॥

दूरत्वाधिक दूरत्वं नैकट्यं निकटाधिकम् ॥
आत्मीयाधिक मात्मीयं ममत्वं ममताधिकम् ॥१६०

दूर रहने वालों में सर्वोत्तम दूर, निकट वालों में सर्वोत्तम निकट, मनस्वियों में सर्वोत्तम मनस्वी, बुद्धिमानों में सर्वोत्तम बुद्धिमान, ममता करने वालों में सर्वोत्तम ममता करने वाले ॥१६०॥

सौलभ्यं तु सौलभ्याश्च दौर्ल्लभ्यं दुर्ल्लभात्परम् ॥
ऐश्वर्य्याधिक मैश्वर्य्यं माधूर्य्यं मधुरात्परं ॥१६१॥

सौलभ्यों में सर्वोत्तम सुलभ, दुर्लभों में सर्वोत्तम दुर्लभ, ऐश्वर्यवानों में सर्वोत्तम ऐश्वर्यमान, माधुर्यमानों में सर्वोत्तम परम मधुर ॥१६१॥

रम्यं रम्यात्परं यस्य काम्यं काम्यात्परं च है ॥
धर्म्यं धर्म्यात्परं सर्वं दीव्यं दीव्यात्परं तथा ॥१६२॥

रमण करने वालों में सर्वोत्तम रमणीय, कामना करने योग्यों में सर्वोत्तम कामना करने योग्य धर्मात्माओं में सर्वोत्तम धर्मात्मा, दिव्यों में दिव्यतर परात्पर दिव्य ॥१६२॥

रूपं रूपात्परं यस्य सुषमा सुषमा परा ॥
क्रीडाक्रीडा परायस्य लीलालीला परा पुनः ॥१६३

रूपवानों में परात्पर रूपवान, सुषमा में सुषमा वाले, खिलाड़ियों में परम खिलाड़ी, लीलाधारियों में परात्पर लीलाधारी ॥१६३॥

उत्साहादप्युत्साहोवै गानं गानात्परं- विदुः ॥
विनोदा दपि विनोदश्च स्वातंत्र्यं परमं विदुः ॥१६४॥

उत्साहियों में सर्वोत्तम उत्साही, गाने वालों में परात्पर गन्धर्व, विनोदियो में परात्पर विनोदी स्वतन्त्रों में परात्पर स्वतन्त्र ॥१६४॥

आधीनत्वाधिक तस्या धीनत्वं शोभनं परम् ॥
लज्ययाधिक लज्यात्वं प्रौढत्वं प्रौढ़ताधिकम् ॥१६५॥

अधीन रहने वालों में सबसे उत्तम अधीन—इस प्रकार श्रीरामजी का अधीन रहना अति परम शोभायमान है। लज्जावानों सर्वोत्तम लज्जावान, प्रौढ़ता में सर्वोत्तम प्रौढ़ ॥१६५॥

लावण्यादधिकं तस्मिल्लावण्यं चैव शोभनम् ॥
लालित्याधिक लालित्यं वाग्दृष्टयादिषु शोभनम् ॥१६६॥

लावण्यता में सर्वोत्तम लावण्य, ललितता में सर्वोत्तम अति शोभायमान ललित, वाणी और दृष्टि में भी अत्यन्त शोभायमान लालित्य भरा है ॥१६६॥

शाठ्यं धार्ष्ट्यं व दाक्षिण्य मानुकुल्यादिकं परम् ॥
रमणा त्वाधिकं तस्मिन्नमणत्वं विराजते ॥१६७॥

सठता, धृष्टता चतुरता, अनुकूलता आदिक रमणशीलों के गुणों में सर्वोत्तम रमणशील गुण वाले श्रीराम जी विराजते हैं ॥१६७॥

सच्चिदानन्दकत्वं यत्सच्चिदानन्दतः परम् ॥
आराध्याधिक माराध्यः फलाधिक फल प्रदः ॥१६८॥

सच्चिदानन्दों में परात्पर सच्चिदानन्द, आराध्य देवों में परात्पर आराध्य देव, फल देने वालों मे परात्पर फल दाता ॥१६८॥

दर्शनाधिक दर्शनं च प्राप्ति प्राप्तेः परापरा ॥
स्वीकारादपि स्वीकारो रसादपि रसाः पराः ॥१६९॥

दार्शनिकों में सर्वोत्तम दर्शन के योग्य, प्राप्यों में सर्वोत्तम पर अपर प्राप्य, स्वीकारों में परात्पर स्वीकारता, रसों मे परात्पर रसस्वरूप ॥१६९।

गूढाद्गूढाद्गूढ तमो वेद्याद्वेद्याच्च सत्तमः ॥
अखण्डादप्य खण्डोऽपि ज्ञेयाद्ज्ञेय तरः पुमाम् । १७०॥

गूढ़ों में गूढ़तम गूढ़, जानने योग्यों में परात्पर जानने योग्य, अखण्डों में परात्पर अखण्ड जानने योग्यों में परात्पर जानने योग्य उत्तम पुरुष ॥१७०॥

ध्येयाद्ध्येयाद्ध्येयतमः सेव्यात्सेव्यात्परोप्ययम् ॥
गाय मानो गाय मानै गौरवात्पर गौरवैः ।।१७१॥

ध्येयों में परात्पर ध्येय, समस्त सेव्यों के सेव्य परात्पर ये श्रीरामजी हैं, सभी गाने वालों से गाने योग्य, गौरिवों में परात्पर गौरववान ॥१७१॥

वंद्यं वंद्य तमो वंद्यो योग्यो योग्यतमादपि ॥
स्वाद्य स्वाद्यतमः स्वाद्यो भव्यो भव्यतमादपि ।।१७२
सागरो गुण रत्नानां श्रीरामो नृपसत्तमः ॥
गण्यां कत्त समर्थस्तु नशेषो न च भारती ॥१७३॥

वन्द्यों मे परात्पर वन्द्य, योग्यों में परात्पर योग्य, स्वाद्यों में परात्पर स्वाद्यतम, भव्यों में परात्पर भव्यतम, दिव्य गुण रूप रत्नों के समूह ये श्रीरामजी सब राजाओं में सर्वोत्तम परात्पर राजा हैं इनके गुणों की गणना करने में न तो शेष जी समर्थ हैं न सरस्वती समर्थ हैं ॥१७२-१७३॥

प्रजा परिजनानां तु समत्वेन मनोहरः ॥
कृतज्ञत्वेन भृत्यानां वृद्धानां मरजादया ॥१७४॥

प्रजा और परिजनों में समान रूप से सबके मनों को हरने वाले, सेवकोंकी सेवा को जानने में परम कृतज्ञ, मर्यादा में परम वृद्ध ॥१७४॥

विप्राणां मान तो दानात्पण्डितानां प्रशंसया ॥
कार्य्येषु योजितानां तु क्षमया रघुनन्दनः ॥१७५॥

ब्राह्मणों को मान दान से, पण्डितों को प्रशंसा से हर कार्यों को नियोजित करने की कुशलता श्रीरघुनन्दन जी में है ॥१७५॥

अनुज्ञावाहकत्वेन शीलेन गुरुणा तथा ॥
गुरूणां च मनोहारी मित्राणां मृदुभाषणैः ॥१७६॥

आज्ञा पालन से और शीलादिक सद्गुणों से गुरु वर्गों के मनों को चुराने वाले, मीठी बोली से मित्रों के मनों को चुराने वाले ॥१७६॥

श्रीरामो लघुभ्रातृणामक्रोधेन च शीक्षया ॥
मनोहरति सर्वेषा मौदार्य्य गुण भूषणः ॥१७७॥

क्षमा शीलता से तथा शिक्षा से अपने छोटे भाइयोंके मनोंको चुराने वाले इस प्रकार श्रीराम जी अपनी उदारता आदिक गुणोंके भूषणों से सब के मन को चुराने वाले हैं ॥१७७॥

राज्ञां विदेश संस्थाना मागतानां सुश्रूषया॥
अत्यादरेण तेषां च मनोहरति राघवः ॥१७८॥

विदेश से आये हुए राजाओंकी अत्यन्त आदर पूर्वक सेवा करने से सबके मनको राघव हर लेते हैं ॥१७८॥

चातूर्य्यस्य ज्ञातृत्वेन गुणज्ञत्वेन राघवः ॥
शिल्पिनां गुण वादानां मनोहरति सर्वदा ॥१७६॥

अपनी विद्वता गुणज्ञता और चतुराई से अपने २ गुणों और कलाओ के अभिमानी शिल्पियो के मन को श्रीराघव सर्वदा हरण करते हैं ॥१७६॥

अतिरूपा द्वैदग्धया च सौकुमार्य्य पराश्रयात् ॥
सुन्दरीणां मनोहारी पशूनां पालनादपि ॥१८०॥

अतिशय रूप से और विलास विदग्धता से तथा मुग्धता पूर्वक अधीनतासे और सुन्दर सुकुमारता से सुन्दरियो के मन को हरण कर लेते हैं, पालन करने से पशुओ के मन को हरण कर लेते हैं ॥१८०॥

रामस्य दीव्यद्गुण मौक्तिकानि –
मनीषया चैव सुबोधितानि ॥
स्नेहार्ति सूत्रे परि ग्रन्थितानि –
दधाति योधन्य तमोहि लोके ॥१८१॥

जो कोई मन को जीतने वाला महात्मा श्रीरामजी के दिव्य गुणरूपी मुक्ताओ को अतिशय स्नेहरूपी रेशमी धागेमें पोह करके कण्ठमे धारण करते हैं वेही बुद्धिमान सन्त सर्वलोकमें धन्यहैं॥१८१॥

चत्वार एषां प्रथिता गुणैश्च–
पौत्राहिते लोक नृपाधिपस्य ॥
तत्रास्ति रामो गुणतोपि ज्येष्ठो–
यो दक्षिणां केतव शोभनाङ्गः ॥१८२॥

हे राजन् ! यद्यपि ये आपके चारो पौत्र इन सब गुणों से लोक में प्रसिद्ध हैं परन्तु उन चारों में भी ये चक्रवर्ति कुमार श्रीरामजी उम्र से भी गुण से भी सबमें ज्येष्ठ हैं ये जो आपके दक्षिण अङ्ग में अतिशय शोभायमान अङ्ग वाले बैठे हैं ॥१८२॥

श्रुत्वा श्रुत्वा पौत्र गुणान्नराधियः –
प्रेम्णः परां सोपि दशां च प्राप्तवान् ॥
धन्योसि धन्योसि वशिष्ठ उक्त–
वान्सभ्याश्च सर्वेहितथा प्रशंशिरे ॥१८३॥

राज राजेश्वर महाराज श्रीअजजी अपने पौत्र के दिव्य गुणों को सुनते २ प्रेम की परावशा को प्राप्त हो गये। इस प्रकार प्रेम विभोर हुए श्रीअज महाराज को आप धन्य हैं, धन्य हैं—ऐसा श्रीवशिष्ठजी ने कहा इसी प्रकार अन्य सभी सज्जनों ने भी प्रशंसा किया ॥१८३॥

स्तोत्रं यन्मुनिना चोक्तं श्रीरामस्य मनोहरम् ॥
गुणानामति दिव्यानां वशिष्ठेन महात्मनः ॥१८४॥

श्रीवसिष्ठ जी ने श्रीरामजी का मनोहर स्तोत्र कहा है सो महात्मा श्रीवशिष्ठजी द्वारा कहा हुआ अतिशय दिव्य गुणों का पुञ्ज ॥१८४॥

मनोहरं तु नाम्ना पि यः पठेद्भावतो नरः ॥
न बाध्यते कदाचिद्वै मायकै र्दुर्जयैर्गुणैः ॥१८५॥

उस स्तोत्र का नाम "मनोहर स्तोत्र" है। जो मनुष्य भाव पूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करेगा उसको माया के दुर्जय गुण भी किसी प्रकार बाधा न पहुँचा सकेंगे ॥१८५॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम · रत्नमञ्जूषायां शिवाशिवसम्वादे
सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नामद्विपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५२॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति
कथनो नामद्वि पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५२॥

शिवोवाच--इत्थं प्रेमोत्सवे जाते श्रीराम वर जानकैः ॥
केवयं कश्च देशोयं विस्मृताश्चात्मनो गतिः ॥१॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती ! इस प्रकार श्रीरामजी के बरात के जाने पर रास्ते में यह महा प्रेममयी उत्सव उत्पन्न हुआ जिस उत्सव में सभी बराती लोग हम कौन हैं ? कहां जारहे हैं ? अपनी सारी स्थित को भूल गए ॥१॥

क्षणं सर्वे मुद्रिताक्षाः पुनश्चोन्मीलितेक्षणाः ॥
यथा तथ्यं ददृशुस्ते स्वात्मानं मार्ग वर्त्तिनम् ॥२॥

एक क्षण के लिए सभी बरातियों ने प्रेम विभोरता से मूर्छित होकर अपनी आँखों को बन्द कर लिया। थोड़ी देर मे आँख खुलने पर सभी बराती लोग जैसे पहले मार्ग में जारहे थे उसी तरह से जाते हुए प्रतीत हुए (बीच मे वह जो पितरों का लोक दीख पड़ा वह सारा दृश्य अदृश्य होगया) ॥२॥

सर्वे च विस्मिता देवि पृच्छन्ति च परस्परं ॥
त्वया दृष्टं मयैवैकं किं चारित्रं बभूवह ॥३॥

हे पार्वती ! पूर्व स्थिति प्राप्त होने पर सभी बराती लोग चकित हो गये। एक दूसरे से पूछ रहे हैं कि यह स्वप्न केवल मैंने ही देखा है कि तुमने भी देखा है। क्या अद्भुत यह चरित्र हुआ। ? अहो आश्चर्य है ॥३॥

पृच्छंत्येके कथंत्येके मार्गं गच्छन्ति हर्षिताः ॥
स्वप्न रूपं स्मरंत्येके मौनं मौनं पथं गताः ॥४॥

इस प्रकार कोई पूछते हुए कोई कहते हुए अत्यन्त हर्षित होकर स्वप्न सरीखा बार २ इस दृश्य को स्मरण करते हुए बहुत से लोग मौन ही मौन जैसे के तैसे रास्ते मे चले जारहे हैं ।।४।।

पठंत्येके पाठयन्ति शृन्वन्ति श्रावयन्ति च ।।
श्रीरामस्य गुणादीव्या वर्णिता मुनिना यथा ।।५।।

बहुत से इसी बात की कथा कहते हुए जारहे हैं बहुतसे सुनते हुए जारहे हैं बहुत से एक दूसरे को सुनाते हुए जारहे हैं। श्री वसिष्ठ जी ने जिस प्रकार श्रीराम जी के गुणों का वर्णन किया था उसको सुन समझ कर ।।५।।

वदन्त्येके वयंधन्याः येद्दृष्टः स्वात्मनः प्रभुः ।।
स्वर्गस्थोपि महाराजा किं शुभं स्यादतः परम् ।।६।।

एक दूसरे से हम धन्य हैं, हम धन्य हैं जो हम लोगों ने स्वर्ग मे गये हुए भी अपने स्वामी का इस प्रकार प्रत्यक्ष दर्शन किया। इससे बढ़ करके अब और क्या सुख हो सकता है ? ।।६।।

प्रेम्णा तु निर्भराः केचित् केपि केपितु विस्मिताः ।।
सनैः सनैः जना मार्गं चरन्ति शिथिलक्रमम् ।।७।।

कोई २ प्रेम में विभोर हुए हैं, कोई २ आश्चर्य चकित हुए हैं। इस प्रकार मार्ग मे अत्यन्त शिथिल गति से धीरे २ चल रहे हैं ।।७।।

निश्चितात्मा मुनिस्त्वेकः प्रभावज्ञो महात्मनाम् ।।
तथा मात्यः सुमन्तोपि चान्ये विस्मित मानसाः।।८।।

इस सारे दृश्य का ठीक २ निश्चय प्रभाव को महात्मा श्रीवसिष्ठ जी जानते हैं तथा सुमन्त्र जी भी जानते हैं और सब तो विस्मित मन होकर चल रहे हैं ।।८।।

अग्रमग्र ममात्यौ द्वौ नाम्ना विदग सन्नतौ ।।
शकटा नश्वाः सैरभा वृषभा भारवाहकाः ।।९।।

बरातियों के आगे २ विदग और सन्नत नाम के दो मन्त्री चल रहे हैं उनके साथ बैलगाड़ी तथा बोझा ढोने वाले घोड़े, खच्चर, बैल आदि चल रहे हैं ।।९।।

अक्षौहिणीनां शतैश्च दिनान्ते यत्र संस्थितिः ।।
प्राप्यते तत्र ह्यताभ्यां रोप्यन्ते वस्त्र शालकाः ।।१०।।

उन सबकी रक्षाके लिए सैकड़ों अक्षोहिणी सेनायें साथ चलरही हैं। एक दिन मे बरात जितना दूर चल सकती है उतनी दूरी मे पहले ही जाकर के ये दोनों मन्त्री लोग वस्त्रों के महलों को सबके लिए उचित रूप में स्थापित करते हैं ।।१०।।

सप्ते व च चतुर्द्वारा विशालाश्च गृहान्तराः ।।
दूरतो सप्त प्राकाराच्छत घ्नीनां च स्थापनम् ।।११।।

यह बरातियों के वस्त्रों का महल सात आवरण चार दिशा द्वार वाले भीतर मे बड़े २ महल जो बहुत दूर से सातो आवरण बहुत सुन्दर क्रम से दीख पड़ते हैं। प्रत्येक द्वार के फाटकों पर तोप मशीनगन स्थापित किये हैं ।।११।।

रक्षार्थं चैव वीराणां शूल शक्त्यसि धारिणाम् ॥
प्रत्यागारं यथा योग्यं सय्या मंच विधायिनाम्। १२

और इन सप्त वरण वाले महलो की रक्षा के लिये बाहरी भाग मे चारों तरफ वीरों को सूल शक्ति तलवार आदि आयुधों को अङ्ग मे कसे हुए फौज को नियुक्त किये हैं तथा प्रत्येक महलों के फाटकों पर पहरा पड़ा है। हर एक महल में यथा योग्य पर्यंक, कुर्सियां तथा और भी सभी सामान उचित रूप में विधान किये गये हैं ॥१२॥

गत्वा तु क्रीयते नित्यं कुशलाभ्यां ततः परम् ॥
आभ्यांनिर्दिष्ट मानेतु वस्त्रागारे समन्ततः ॥१३॥

बरात के जाने पर पहले से गये हुए चतुर लोग बरातियों को यथा योग्य स्थानोंको बता करके इस वस्त्रागारमें चारों तरफ सब बरातियों को ठहराया ॥१३॥

सर्व भोग समाकरे सेवकैश्चापि संयुते ॥
प्रविशन्ति जनाः सर्वे यथा योग्यं मुदामनाः ॥१४॥

हर एक महल सब प्रकार की भोग सामग्री और सेवकों से परिपूर्ण हैं जो बराती जन जिस उचित स्थान में प्रवेश किया वह सब सुपास पाकर के अति प्रसन्न मन हुआ ॥१४॥

तन्निवासे तु संप्राप्ते मार्गाद्रामे वरा कृतौ ॥
शतघ्नीनां गर्ज्जितैश्च दुन्दुभीनां विनादितैः ॥१५॥

बराती के मार्ग निवास में पहूँचने पर फाटकों पर तोप मशीन गनें छूटती हैं दुल्हा वेष में श्रीरामजी के सामने नृत्यगान मंगल कृत्य होते हैं। दुन्दुभी आदि के अनेक प्रकारके बाजे बजते हैं॥१५॥

हयानां च गजानां च घण्ट नादाभि गर्ज्जितैः ॥
कोलाहलै मनुष्याणां पूर्य्यते च दिशोदश ॥१६॥

घोड़ों की हाथियों की हिनहिनाहट और घन्टा आदिक बाजाओं की गर्जना तथा मनुष्यों के पारस्परिक भाषण से कोलाहल दशो दिशाओं को भर रहे हैं ॥१६॥

पुनर्दीपावलीभिश्च दीपौषध्या महावनं ॥
तथा विराजते शश्वत्त न्निवास मनोहरम् ॥१७॥

उसी प्रकार दीप वृक्षों की पंक्ति तथा दीप औषधि का महावन इसी प्रकार पक्षियों के द्वारा आकाश दीप इन सब सजावटों से वह मार्ग का निवास स्थान नित्य प्रति बड़ा ही सुन्दर मनोहर शोभित होता है ॥१७॥

मनुष्याः कौतुकं द्रष्टुं ग्राम्यास्तु कोटि कोटिशः ॥
पश्चाच्च पूर्वतश्चैव पार्श्वाभ्यां च समंततः ॥१८॥

जहाँ भी पड़ाव टिके आस पास की ग्रामीण जनता दूर २ से कौतुक देखने के लिए करोड़ों की संख्या में भीड़ लगा करके पश्चिम, पूर्व, उत्तर, दक्षिण चारों तरफ से आती है ॥१८॥

आयान्ति सत्समाजैश्च गायन्तस्तु नटन्नटन् ॥
समुद्राभि मुखा नद्यस्तथा शोभां प्रपेदिरे ॥१९॥

वह ग्रामीण जन सुन्दर समाज बांध करके गान बजान नृत्य करते हुये श्रीरामजी की बरात को देखने के लिए आरहे हैं। जिस प्रकार सब नदियां समुद्रमें जाती हों उसी प्रकार चारों तरफ से जनता की भीड़ शोभा दे रही है॥१९॥

वाद्यानि वाद्यन्ति च यत्रतत्र वाराङ्गणा नृत्यन्ति यत्रतत्र॥
विदूषकाः कौतुक मादधन्तो हसन्ति नृत्यन्ति च हासयन्त ॥२०॥

जहां तहां विविध प्रकार के बाजा बज रहे हैं, अप्सरायें नृत्य कर रही हैं विदूषक लोक अनेक प्रकार हास विलास नृत्य कौतुक करके सबको हँसा रहे हैं॥२०॥

महा सभा मध्य विराजित श्रीः –
विवाह वेषो रघुनन्दन श्रीः ॥
राज्ञां समाजैः परिषेवितः श्रीः –
सच्चामरैश्छत्र परिभ्रम च्छ्री ॥२१॥

इस प्रकार उस निवास स्थानके सातों आवरण महलों के बीच में महान सभा मण्डप के मध्य सभी देशों के राज समाज से छत्र चवरादिक द्वारा सेवित सुन्दर दुल्हा के भेष में वि वाह के उमङ्ग से शोभित श्रीरघुनन्दन जू को देख करके सभी लोग अति प्रसन्न हो रहे हैं ॥२१॥

यामैक शेषे समये रजन्याः पानानि भारे रथयोजयित्वा ॥
सैन्यैः समाजैश्च प्रदीप दीप्त्या मार्गं प्रवर्त्तौ प्रथमं तदेतौ॥२२॥

इस प्रकार रात्रि में निवास करके प्रातःकाल एक याम रात्रि के शेष रहने पर वे दोनों मन्त्री बरात की अगवानी में अपने साज समाज सेना के सहित दीप वृत्तों से प्रकाशित मार्ग से पहले ही चल देते हैं ॥२२॥

अथोदये चोशनः सः प्रभाते --
प्रमाण घट्यो घटितोच्च नादे ॥
महन्महा दुन्दुभि नादिते च –
जजागरुः सर्व जनानिवासे ॥२३॥

इधर सम्पूर्ण बराती प्रातःकाल अरुणोदय के समय ऊँचे नाद से बजे हुए दुन्दुभी द्वारा समय का निश्चय करके सब बराती लोग जगे। । अपने २ स्थानों में नित्य कर्म से निवृत्त होकर ॥२३॥

स्नात्वासुभूषां परिधाय चांगे समाजबद्धाश्च नृपाधिवासं ॥
गत्वा च गत्वा च मुनिं प्रणम्य निरीक्ष्य रामं मुदमाययुस्ते॥२४

स्नान करके भूषण वस्त्र अङ्गों में धारण करके अपने २ समाजों से बद्ध होकर राज निवास में आये मुख्य लोग महाराज श्रीवशिष्ठ जी को प्रणाम किए। दुल्हा वेष में श्रीरामजी को देखकर अतिशय प्रसन्न हुए ॥२४॥

तथा सुमन्तं सचिवं महान्तं नत्वा तदाज्ञां परिलभ्य सर्वे ॥
आरुह्य सद्भूषित वाहनं च परीक्षयन्ते प्रतिहार दीक्षाम्॥२५

उसके बाद प्रधान मन्त्री श्रीसुमन्त्र जी को प्रणाम किये उनकी आज्ञा पाकर अपनी २ सुन्दर भूषित सवारियों में बैठ करके चलने को तैयार हुए। प्रतिहारियों की प्रतीक्षा कर रहे हैं ॥२५॥

तदोच्च शब्दं प्रतिहारकाणां समाज बद्धा परिश्रु य सर्वे ॥
जयत्ययोध्याधिप राज राज इत्युद्‌गृणन्त स्तुक्रमेण चेरुः ॥२६॥

तब तक समाज बद्ध प्रति हारियों के श्री राज राजेश्वर महाराज श्रीअयोध्यापति जय हो"– इस प्रकार ऊँचे शब्दों को सुनकर सभी बराती लोग क्रमशः चलने लगे ॥२६॥

विचित्र भूषाङ्ग विराजित श्रीः श्रीराज राजेन्द्रकुमार रामः ॥
महोच्चमात्तंग विमान कस्थंः सुमेरु सानो विबभाति सूर्य्यः॥ २७

उस बरात के बीच में सुमेरु पर्वत के समान महान् मतवाले ऊँचे हाथी की पीठ में विमानके ऊपर विचित्र वस्त्र भूषणों से सोभित श्री राज राजेन्द्र कुमार श्रीराम जी उसी तरह से सोभित हैं जिस तरह से सुनेरु पर्वत के शिखर पर सूर्य शोभित होते हैं ॥२७॥

देशाधिपत्यात्मज कोटिभिश्च परिस्कृताङ्गाति मनोहरैश्च ॥
परिवृतो राजति रामचन्द्रोरवि र्यथा लौकिक बाल खिल्यैः।२८

श्री राम जी के हाथी के अगल बगल में सभी देश के करोड़ों राज कुमार सुन्दर सजावटों से सजे हुए मनोहर अङ्ग शोभित हो रहे हैं उन राज कुमारों के बीच में श्री राम जी बाल खिल्य ऋषियों के समाज के बीच में सूर्य की तरह से प्रतात हो रहे हैं ॥२८॥

पश्चात्सुमन्तः सचिवाधि राजो राज्ञां समाजैः परि सेव्य मानः ॥
अग्रे वशिष्ठः सुखजानकस्थो महामुनीनां विलशत्समाजे ॥२९॥

श्रीरामजी की सवारी के पीछे प्रधान मन्त्री श्रीसुमन्त्र जी की सवारी देश २ के राजाओं की सवारियों से घिरी हुई है। सब राजा लोग श्रीसुमन्त्र जी की सेवा कर रहे हैं। श्रीरामजी की सवारी के आगे श्रीवसिष्ठ जी की सवारी बहुत से मुनियों के विशाल समाज के मध्य में श्रीवसिष्ठ जी की अद्‌भुत शोभा हो रही है ॥२९॥

ततो यमग्रंतु जनैः समस्त्रं वाह्यं सुमंचं विसदं विशालम् ॥
तस्मिन्प्रनृत्यन्ति च वार मुख्यो वाद्यन्ति वाद्यानि मधुस्वराणि॥३०

श्रीवसिष्ठ जी की सवारी के आगे हजारों मनुष्यों के कन्धाओं पर एक बहुत विशाल सुन्दर मञ्च है उसमें अप्सराओं का नृत्य, मधुर स्वर से गान बजान हो रहा है ॥३०॥

नोच्चैर्वदे त्कोपि परस्परं च हया गजा नैव नदन्ति केचित् ॥
शृण्वन्ति सर्वेमधुरान्सुरागा न्विमोहिताश्चैः पशवो मृगाश्च॥३१

बराती लोग परस्पर कोई ऊँचे स्वर से नहीं बोलते हैं। हाथी घोड़ा भी नहीं हिनहिनाते हैं क्योंकि सभी लोग सुन्दर मधुर रागोंके गीत को सुनते हुये पशु पक्षी सभी मोहित होरहे हैं ॥३१॥

ततः सुदूरं प्रलयाब्धि घोषं तिरस्कृता दुन्दुभयो नदन्ति ॥
ततः क्षितेरुच्चैः प्रतिहार कारणां गिरोऽपि मूर्च्छन्ति दिशो दशैव ॥३२
सार्द्धं तथा ते रवि वंशजानां प्रोद्यन्दुणानामपि गायकार्ये ॥
तेषां गिरः सूच्चतराः सवीणाः कांस्यैः समंदिग्दश बृंहमाणाः ॥३३

इस तरह दूर चलने पर दशों दिशाओं को मूर्छित करने वाला प्रलय के समुद्र को तिरस्कृत करते हुए दुन्दुभियों का नाद सुन पड़ने लगा और प्रतिहारियों के स्वागत के शब्द बहुत ऊँचे आवाज से सुन पड़ने लगे। और उनके साथ सूर्य वंशीय कुमारों के जो गायक उनके भी गीतों की आवाज तथा वीणा आदि तार के बाजा, कांसे के बाजा, हवा के बाजा इन सबसे मिश्रित बहुत ऊँचे संगीत के आवाज दशों दिशाओं को घेरती हुई सुन पड़ती है ॥३२-३३॥

शृन्वन्ति दूरात्सुखदा मनोज्ञा मार्गं न विदुश्च ते न ॥
इत्थं यथोत्साहवतां जनानां सुखस्य संख्यां कमयामि कुत्र ॥३४॥

इस प्रकार इन गीतों की आवाज को दूर से सुनते हुए मार्ग में चलने वालों को कुछ भी चलने का परिश्रम प्रतीत नहीं होता। महान् उत्साह में भरे हुए सभी बराती जनता असंख्य सुखों को पाकर मैं कौन हूँ ? कहाँ जारहा हूँ ? कहाँ पर हूँ:? इसको नहीं जान रहे हैं ॥३४॥

इति श्रीशङ्कुर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुमा महेश्वर
सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम चतुः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५४॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम
चतुःपञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५४॥

यथा नांदिकेश्वरेण शुभ लग्न स्व पत्रिका ॥
विवाहोद्दिश्य पुत्रीणां लिखिता स्व करेणवै ॥१॥

जिस प्रकार नन्दिकेश्वर महाराज देवीज ने शुभ लग्न पत्रिका को अपनी कन्याओं के विवाह निमित्त अपने हाथ से लिख करके श्रीअयोध्या जी के लिए भेजा था ॥१॥

तथैवः कौशलेन्द्रेण तत्प्रीतिज्ञेन चात्मना ॥
स्वीकार पत्रिका प्रेम्णा दत्ता विप्र करे मुदा ॥२॥

उसी तरह से श्रीकोशलेन्द्र महाराज ने भी उनके प्रेम को जान करके अपने आत्म विरद गौरव से स्वीकार पत्रिका को भी अपने हाथ से लिख करके बड़ी प्रसन्नता से ब्राह्मण के हाथ भेजा ॥२॥

विप्रेण सचिवे नाथ सा पत्री स्वस्त्य प्रदा ॥
देवीजस्य करे दत्ता गृहीत्वा मस्तके दधौ ॥३॥

उस महान् उत्सव को पैदा करने वाली पत्रिका को लेकर मन्त्री और ब्राह्मण अपने देश में गये महाराज देवीज जी के हाथ में दिया। राजा ने भी उस पत्रिका को मस्तक से लगाकर लिया ॥३॥

पुन राज्ञो सचिवेन वाचयित्वा च श्राविता ॥
श्रुत्वा राजा महा मोद माप्तवान्कथनाधिकम् ॥४॥

उसके बाद मन्त्री जी ने उस पत्रिका को बाँच करके राजा को सुनाया। राजा भी सुनकर कहने से अधिक आनन्द को प्राप्त हुए ॥४॥

स्वयं पुरोधसा गत्वा यशोधं वाचिकं तथा ॥
राज्ञीभ्यः श्रावितं सर्वं ताश्च सर्वा मुदं ययुः ॥५॥

और अपने उपरोहित को साथ लेकर रनिवास में गये, सब रानियों को भी पत्र सुनाया सुनकर सभी रानियां अति आनन्द को प्राप्त हुईं ॥५॥

पुनः पुरोधसं पूज्य पुरस्थान्ब्राह्मणानपि ॥
गौरीं गणपतिं पूज्य नार्य्यो गानं च चक्रि रे ॥६॥

फिर गुरुदेव जी की पूजा की और बहुत से ब्राह्मणों की भी पूजा की तथा गौरी गणेश पूजन पूर्वक स्त्रियों के माङ्गलिक गीत होने लगे ॥६॥

अथ सर्वेषु कार्य्येषु विवाहोद्दिश्य वस्तुषु ॥
महा मात्येनोप मात्याः प्रेरिताये यथोचिताः ॥७॥

और भी विवाह के उद्देश्य बहुत से कर्म होने लगे। महामन्त्री जी ने अपने उपमन्त्रियों को यथोचित कार्यों में प्रेरणा करके ॥७।

पुरस्थाश्च नरनार्य्यो बाल वृद्धाः समन्ततः ॥
राजगृहे महोत्साहं श्रुत्वा हर्षेण आगता ॥८॥

तथा और भी नौकर-चाकर, नर-नारी, बाल-वृद्ध सबको प्रेरणा करके विवाह के योग्य बहुत से कार्य राजमहल में होने लगे। सभी लोग इस उत्सव के समाचार को सुनकर महान् उत्साह और हर्ष से भर करके जहां तहां से राजमहल में आने लगे ॥८॥

पुरोधसं च सचिवा नयोध्यायाः समागतान् ॥
एकान्ते च समास्थाय प्रेम्णात्यन्त मुदान्विता ॥९॥

नगर की जनता प्रधान लोग सब इकट्ठा होकर के श्रीअयोध्या जी से आए हुए उपरोहित और मन्त्री जी को एकान्त में बैठा करके प्रेम से प्रसन्न होकर पूछने लगे ॥९॥

देवौजा देव तुल्यस्तु श्रीमद्दशरथस्य च ॥
स्वभावो वैभवश्चैव समाजश्च बलादिकम् ॥१०॥

देवताओं के समान प्रभावशाली महाराज देवौज जी इनके सम्बन्धी चक्रवर्ति महाराज दशरथ जी का स्वभाव, वैभव, समाज सेनादिक ॥१०॥

आपृच्छद्विधि वत्सर्वं तैश्चापि मुदितात्मभिः ॥
व्यासेन कथितुं सर्वैः सोद्युक्तं मानसं कृतम् ॥११॥

और भी बहुत सा प्रसङ्ग विधिवत सब लोग पूछने लगे। प्रसन्न होकर के पूछते हुए उन सबको उपरोहित जी ने विस्तार पूर्वक अयोध्याजी का सारा समाचार कहना आरम्भ किया सब नगरवासी भी सुनने के लिये सावधान मन होकर बैठे हैं ॥११॥

पुरोधा उवाच—किं वर्णयामि महिपाल मणेर्महत्वं--
यस्या ज्ञयापरिसरेत्सुर लोक नाथः ॥
दिग्पालकाः करपुटं च विधाय चान्ये -
तिष्ठन्ति वदनं सुवि लोकयन्तः ॥१२॥

उपरोहित जी बोले कि चक्रवर्ति महाराज समस्त राज राजेश्वर के महत्व का मैं क्या वर्णन करूं ? जिनकी आज्ञा के लिये देव लोक का नायक इन्द्र भी तथा दिकपाल लोग भी हाथ जोड़ करके सामने खड़े रहते हैं तथा अन्य सभी लोकपाल लोग जिनके मुखचन्द्र को हाथ जोड़कर देखते रहते हैं ॥१२॥

अन्ये नृपाः शत सहस्र समूहताश्च--
तस्यांघ्रि सेवन रता विभवेषु वस्तु ॥
स बान्धवाः सतत यस्य हिते रताश्च --
स द्वै भवेन परि पूरित मोद युक्ताः ॥१३॥

और भी सैकड़ों हजारों राजा लोग जिनके चरण की सेवा में निरत होकर अपने को सुखी ऐश्वर्यमान होना चाहते हैं। अपने बन्धु वर्गों के साथ महाराज चक्रवर्ति जी के हित के लिए सुन्दर और वैभव से परिपूर्ण आनन्द युक्त होकर खड़े रहते हैं ॥१३॥

राज्येऽष्ट मंत्रिण उदार गुण प्रभावाः-
क्षेमं करा सकल शास्त्र विदाम्वराश्च ॥
मुख्योस्ति तेषु सकलेषु सुमन्तएक --
स्तस्याज्ञया सकल कार्य्यं विधायकास्ते॥१४॥

तथा प्रधान आठ मन्त्री बड़े उदार गुण प्रभाव वाले सब शास्त्रों को जानने वाले राज्य में सब प्रकार की कुशल को पैदा करने वाले महान् हैं उन सबमें प्रधान श्रीसुमन्त्र जी हैं जिनकी आज्ञा से सभ मन्त्री लोग हर प्रकार के कार्यों का विधान करते हैं ॥१४॥

वह्नेः प्रभाव मति नम्य सुवर्त्तमाना--
अर्क्क प्रताप मति नम्य सुवर्त्तकाश्च ॥
सैन्याधिपा अरि विदर्य्यकरा स्तु यस्य--
शास्त्रास्त्र वेद निपुणाः शुचि शील युक्ताः ॥१५॥

अग्नि के समान प्रभाव वाले अत्यन्त नम्रता पूर्वक वर्ताव करने वाले सूर्य के समान प्रतापवाले बड़े नम्र सुशील इसी प्रकार सेनापति जो शत्रुओं के हृदय को विदीर्ण करने वाले अस्त्र शस्त्र और शास्त्रों के जानने में अति निपुण परम पवित्र सुन्दर शील से युक्त हैं ॥१५॥

ये शास्त्रिणोप्यनुग वर्ग गताश्च यस्य--
सौन्दर्य्य शील गुण रत्न विभूषितास्ते ॥

सम्बन्ध दोष मणु मात्र मसार वत्तां-
नो विन्दते पशुपुयस्य जनेषु किं स्यात् । १६॥

और जो सेना के सिपाही हैं अन्य वीर पहलवान अस्त्र शस्त्रों को धारण करने वाले हैं वे भी सब अति सुन्दर रूप, शील, गुण रत्नों से भूषित हैं जिनमें दोष असार का सम्बन्ध अणु मात्र भी नहीं है जिनके पशु पक्षी छोटे जन भी किसी प्रकार के दोष असार सम्बन्ध से रहित हैं ॥१६॥

किं वर्णयामि नृपतेः प्रति हार काये-
दीव्यां म्बराविविधि रत्न विभूषिताश्च ॥
तेषां नृपेषु कर दण्ड धृतेन भेद-
श्चान्यत्समं सरस रूप सुभाव कौस्तु ॥१७॥

ऐसे महाराज श्रीअवधेश जी का मैं क्या वर्णन करूं जिनके द्वार पर प्रतिहारी लोग विविध रत्न भूषित दिव्य भूषण वस्त्रों को धारण किए हुए उनमें और राजाओं में केवल हाथ में दण्ड लेने से भेद है और किसी भी सरस रूप स्वभाव गुण मे कोई भेद नहीं है। सब राजाओं के समान हैं ॥१७॥

यस्या पते जन पदे च' निवासिनो -
ये तेषां च सुरपतिः स्वयमीहमानम् ॥
ये सुव्रतातिशय लब्ध फलानगर्य्या-
राज्ञोव सन्ति कथ मुन्मित भोगभोग्याः॥१८॥

जिन अयोध्यापति महाराज के जनपद में निवास करने वाले उनकी स्पृहा देवलोक में इन्द्र भी स्वयं करता है जो सुन्दर व्रत वाले अतिशय सुन्दर फल को प्राप्त किये हुए श्रीअयोध्या नगर में निवास करते हैं उनके सामने अन्य देश के राजा लोग क्या विशेष भोगों को भोग सकते हैं ॥१८॥

दुर्गाणि दुर्गम तराणि महोच्चकानि-
पुर्य्याहि सप्त विलशन्त्यरि दर्प्प काणि ॥
शक्त्यासि शूल धर वीर वलोच्चकैश्च-
संरक्षितानि सततं गण वद्धकैश्च ॥१९॥

श्रीअयोध्या नगरके बाहरी भागमें नगर रक्षा वास्ते जो सात दुर्ग बने हुए हैं वे अत्यन्त दुर्गम और महान ऊँचे शत्रुओं के अभिमान को चूर करने वाले अतिशय शोभित हैं। उन दुर्गों में रक्षा करने वाले वीर शक्ति तलवार शूल आदि आयुधों को धारण किये हुये अत्यन्त बलवान हमेशा समाज बद्ध होकर के रक्षा करते हैं ॥१९॥

खातानि सप्त परितोप्यति निम्न कानि-
कूल द्वये ललित घट्ट विराजि तानि ॥
कंजानि यत्र विलशन्ति चतुर्विधानि -
क्रीडन्ति हंस जल कुक्कुट सारसाश्च ॥२०॥

सातों परकोटाओं के बीच २ सात खाई भी चारों तरफमें हैं जिनके किनारे मणिमय रचनाओं

से युक्त घाट बने हुए प्रकाश कर रहे हैं। जल के बीच रङ्ग २ के चतुर्विध कमल खिले हुए हैं। हंस, जल कुक्कुट, सारसादि पक्षी उस जल में और किनारों पर विहार कर रहे हैं ॥२०॥

चत्वारि सन्ति विलशन्ति मुखानि पुर्य्याः-
सद्गोपुराणि वर तोरण संयुतानि ॥
चत्वार्य्य लौकिक विभांत्यपि पीठकानि ॥
सद्वैभवेन परि पूरित चित्र कानि ॥२१॥

श्रीअयोध्या नगर के सातों परकोटा चारों दिशाओं में चार राजमार्ग बने हुए हैं। परकोटाओं के चारों दिशाओं वाले फाटकों के ऊपर ऊँचे गोपुर बने हुए हैं। जिनमें ध्वजा, कलश, तोरणादि बहुत दूर से दीख रहे हैं। इन चारों दिशाओं के फाटकों से बाहर चार पैठ महान् ऐश्वर्य से परिपूर्ण चित्र विचित्र रङ्ग के महलों से सुन्दर बने हुए हैं ॥२१॥

पीठेषु तेषु क्रय विक्रय--जीवितो ये -
प्यायान्तिवैश्रवण तुल्य धना महान्तः ॥
दीव्यत्समस्त मणि घोटक नाग जातं--
दूरान्न यन्ति परितों सुक दिव्य कान्तम् ॥२२॥

उस अयोध्या नगर के बाहर वाले चारों दिशा के पैठों में बेचने और खरीदने वाले बड़े २ महाधनिक लोग कुबेर के सदृश ऐश्वर्य को लेकर आते हैं, व्यापार करते हैं। हाथियों से उत्पन्न हुए गज मुक्तादि बहुत जाति की मणियां हाथो और घोड़ाओं पर लद करके दिव्य प्रकाशमय वस्त्रों से सजे हुए हाथी घोड़ाओं पर दूर से लाते हैं और ले जाते हैं ॥२२॥

नो भाषते विपण केतु जनाः कदाचिल्लाभाय चा नृतवचोंनृपतेः प्रतिज्ञात्॥
श्रीमत्समस्त विभवं परिवारितश्च ह्या गत्य पश्यति नृपो विपणं महद्धम्॥२३

बाजार में कोई भी मनुष्य अपने लाभ के लिए किसी प्रकार से भी असत्य नहीं बोलते हैं क्यों कि महाराज को प्रतिज्ञा से व्यापार का जो भाव बना हुआ है उसी अनुसार सब व्यापार करते हैं कभी कभी श्रीमान् महेन्द्र मुकुट महाराज भी अपने महान् ऐश्वय विभव से घिरे हुए उस पैठ में आते हैं। महान् बढ़ते हुए उस बाजार के व्यापार को देखते है ॥२३॥

पुर्य्यं तरं परम चित्र विचित्र कारै रष्टापदेन कृत भाग मतीव शोभम् ॥
हर्म्याणि हेमकलशै र्ध्वज सूचितानि किं वर्णयामि भवनं भुवनेश्वरस्य ॥२४

श्री अयोध्या नगर के अन्दर परम चित्र विचित्र अष्ट कोणाकार आठ आवरण सारी फल की तरह से खण्ड २ विभाग बने हुए अत्यन्त शोभायमान नगर की शोभा को और नगर के महलों में छज्जे स्वर्ण कलश, ध्वजा इन सबको शोभा को तो मैं क्या वर्णन करू जिस नगर के अधिपति समस्त ब्रह्माण्ड भर के अधिपति महाराज श्री दशरथ जी हैं उनके भवन को कौन कह सकता है ॥२४॥

नैतादृशी सुरपते र्नच विश्व धातु र्दृष्टा मयाकिल सभात्वज नन्दनस्य ॥
यत्रेन्द्र पाशियम वैश्रवणादयोपि वध्वां जलिं कृपण पेचणं मादधानाः॥२५॥

जिस प्रकार महाराज दशरथ की नगरी है इस तरह की नगरी तो न स्वर्ग में इन्द्र के पास है न ब्रह्माण्ड सृष्टिकर्ता ब्रह्मा जी के पास है जैसा कि श्रीअजनन्दन महाराज दशरथ जीका नगर मैंने देखा है जिन महाराज के सामने इन्द्र, वरुण, यम, कुबेरादि समस्त लोकपाल हाथ जोड़ करके दीन हीन होकर के महाराज की आज्ञा को चाहते रहते है ॥२५॥

श्रीराम नीरदवपुःस्तु वनैक वीरः कंदर्प्प कोटि सुखमाङ्ग विशाल नेत्रः ॥
कारुण्यशील सुवदप्रणयाति नम्रो विद्या विलाश निपुणः कृत विन्महात्मा॥२६

उन महाराज के कुमार श्रीरामजी नील मेघ के समान श्याम, चौदहों भुवन में एक वीर, करोड़ कामदेव की सुषमा युक्त अङ्ग वाले विशाल नेत्र, कारुणिक हृदय, सुन्दर सुशीलता पूर्वक बोलने वाले स्नेह प्रणय से नम्र स्वभाव वाले हर प्रकार की विद्यानों के विलासों में निपुण, दूसरे के किये उपकारों को खूब जानने वाले महात्मा है ॥२६॥

इत्थं विभाति भरतोऽनुज एव तस्य श्रीलक्ष्मणो ललित गौर वपुर्गुणज्ञः॥
तस्यानुजस्तु रिपुसूदन काञ्चनाभः शीलातिशील सरलः प्रतिबीर हीनः॥२७

इसी प्रकार उनके छोटे भाई श्रीभरत जो और ललित गौर वर्ण वाले बड़े गुणज्ञ श्रीलक्ष्मणजी उनके भी छोटे भाई स्वर्ण के समान प्रकाशमान अङ्ग वाले श्रीशत्रुघ्न जी ये सबके सब अति शीलवानों में भी अधिक शीलवान सरल स्वभाव वाले अपने सदृश पराक्रमी वीरों से हीन अद्भुत है ॥२७॥

चत्वार एव नृप कौशल पालकस्य लोकोत्तरायत गुणाः सुखदाः सुपुत्राः ॥
स्नेहार्ज्जवांतर परस्पर लग्न चित्तानित्यानुगत्व मतय स्त्र य एवजेष्ठे ॥२८।

ये चारों कुमार महाराज अवधेश जी के जैसे उत्तम गुणवान है सबको सुख देने वाले है ऐसे पुत्र लोक में किसी के नहीं है परस्पर अत्यन्त स्नेह रखने वाले सरल स्वभाव के यद्यपि चारों भाई है तो भी तीन भाई परस्पर एक चित्त वाले नित्य अपने ज्येष्ठ भ्राता श्रीरामजी में अपने छोटे भाईपने का भाव बराबर निर्वाह करते है ॥२८॥

पत्नी गणास्तु नृपते नृप सेवितांघ्रेः सम्बन्धिन स्तव बहु शुचि शीलयुक्ताः॥
तिस्रस्तु तत्र गुण रूप विशेष मान्यास्तत्रापि रामजननी कुल कीर्तिरूपा॥२९

इसी प्रकार महाराज श्रीदशरथ जी की स्त्रीगण यद्यपि सभी राज राजेश्वर महाराजके चरणों की सेवा करने वाली है तो भी उन सबमें तीन विशेष रूप गुण वाली महाराज की आदरणीय है उन तीनों में भी श्रीरामजी की माता तो सूर्यकुल की कीर्ति स्वरूपा ही है। इस प्रकार के महाराज अवधेश बड़े पवित्र शील वाले सब राजाओं से सेवित चरण वाले आप सबके सम्बन्धी होवेंगे ॥२९॥

रामस्य सुन्दर बधू र्जनकात्मजासीत्तस्याः प्रभाव मतुलं किमुवर्णयामि ॥
गन्धर्व नाग सुर किन्नर राजपुत्र्यः सापत्न्यकं परिविहाय नयन्ति सौख्यम् ३०

उन श्री महाराज दशरथ जी के बेटा श्रीरामजी की पत्नी श्रीजनकात्मजा जी बहुत ही सुन्दर है उनका प्रभाव भी अतुल है, गन्धर्व, नाग, देवता, राजाओं की कन्यायें सब उन श्री जनकात्मजा जी की सौत भाव को मिटा करके सेवा भाव से नित्य सुख देती हैं उन श्रीजनकात्मजा जी का मैं क्या वर्णन कर सकता हूँ ॥३०॥

यो योग भोग सम वर्त्तत शुद्ध कीर्ति मान्यः सतां सतत शाश्वत रूपनिष्ठः॥
तस्यात्मजानिजजनेषु कृपाल चित्तासौशील्य सन्ति हृदया बिनयाति युक्ता॥३१

जो महाराज श्रीमिथिलेस जी योग के अन्दर प्रवेश करके भोग का व्यवहार करते हैं इस प्रकार सन्तों में मान्य सुन्दर जिनकी कीर्ति हैं। सनातन परात्पर ब्रह्म के रूप में निष्ठा वाले उन मिथिलेस महाराज की कन्या श्रीसीता जी हैं जो अपने आश्रित जनों पर अत्यन्त कृपालु चित्त वाली सौशील्य वात्सल्य आदि सद्गुणों से भरी शान्त हृदय वाली बड़ी कोमल स्वभाव की हैं ॥३१॥

पौरास्त्रियश्च पुरुषाश्च बिशाल रूपा –
दिव्याम्बरा कनक रत्न बिभूषिताङ्गाः ॥
धर्मार्थ काम परि पूर्ण सुधर्म निष्ठा –
बिज्ञान धाम हरि भक्ति युताः समस्ताः ॥३२॥

इसी प्रकार श्रीअयोध्या नगर के स्त्री पुरुष महान् सुन्दर रूप दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषित अङ्ग वाले धर्म, अर्थ, कामसे परिपूर्ण सुन्दर धर्ममें निष्ठावान विज्ञान के तो धाम ही हैं और सभी जनता भगवद् भक्ति से परिपूर्ण हैं ॥३२॥

चक्राधिपे दशरथे परिपूर्ण भावास्तेषां–
तथैव नृपतेः सुत एव दृष्टिः ॥
इत्थं परस्पर गतिं नृपते जनानां --
किं बर्णयामिं नृपतेः क्रियया यथैव ॥३३॥

चक्रवर्ति महाराज दशरथजीमें पूर्ण भाव रखने वाले उस जनता पर महाराज की भी दृष्टि अपने पुत्रों के समान ही है इस प्रकार महाराज और जनता की परस्पर भावना और परस्पर सौहार्दमय क्रियायें इसका मैं क्या वर्णन करूं ? ॥३३॥

नीचोत्तमासु शुचि धर्म प्रजा सुराज्ञः –
प्रीतिः समानि च विभक्ति रथाति हीने ॥
श्रीराम सांद्रघने चातक वर्हिणस्ते –
श्रीरामचन्द्र मसितेपि चकोरका श्च ॥३४॥

नगर की जनता सभी ऊँच नीच जाति के पवित्र आचरण वाले हैं इस प्रकार की धर्मात्मा जनता में महाराजकी भी महान प्रीति है। ऊँच नीच सबको सब प्रकार समान रूपसे महाराज व्यवहार करते हैं और उन जनता की भी महाराज कुमार श्रीरामजी में चातक की तरह से दृष्टि नील मेघ को देख कर के मोर की तरह से श्याम सुन्दर श्रीराम जी को देखकरके जनता नृत्य करती हैं और चकोर की तरह से दर्शन करते हैं ॥३४॥

उद्वाह मंगल महोत्सव आसुयद्वै–
तच्चिंतनं नृपपतेनं च यस्य कार्य्यम् ॥
नाहूत कोपि गृहमेत्य नृपः कृपालुः –
कार्य्यं करोति सततं सुखदः प्रजानाम् ॥३५।

प्रजा जनता को सतत सुख देने वाले परम कृपालु महाराज के घर में मङ्गल उत्सव कार्य होने पर भी महाराज को कुछ भी चिन्ता न होकर के अन्य किसी को कार्यों में विशेष न बुलाकरके स्वयं इस को करने लगे ॥३५॥

कोशादि रक्षक जना भुवनेशतुर्ये –
सद्व्रता नृप हिता अपि नीति युक्ताः ॥
आमन्यते नृप गृहं गृहमात्म नस्तैः –
कार्य्याधिकं वसु नरांत्यपि राज दत्तम् ॥३६॥

परन्तु सम्पूर्ण भुवन के एक ईश्वर महाराज दशरथ जी के कोषादि रक्षक जितने भी सेवक हैं वे सब सुन्दर व्रत वाले, सुन्दर नीति युक्त महाराज का हित करने में सावधान हैं। महाराज के घर को अपना घर सरीखा मान करके सभी लोग अपने २ कार्य में स्वयं लग जाते हैं। यद्यपि कार्य बहुत ज्यादा हैं धनादिक का खर्च बहुत ज्यादा है। सब लोग अपना सरीखा कार्य अपने और महाराज के धन में कुछ भेद न रखकरके कार्य करते हैं ॥३६॥

अत्युत्तमा नृप कुले कुशला स्वधात्री –
शोभाधिकाति सरयू सरितां वरां च ॥
तस्यां निमज्य नृपति गुरुणा प्रयुक्तो --
दानं करोति बहुल परिपूज्य विप्रान् ॥३७॥

महाराज श्री अवधेश जी के अति उत्तम कुल में सब प्रकार की कुशल का विधान करने वाली अत्यन्त शोभा सम्पन्ना श्री अयोध्या नगरी के चारों तरफ सब नदियों में श्रेष्ठ श्री सरजू जी की धारा बहती है। महाराज श्री चक्रवर्ति जी अपने गुरु श्री बसिष्ट जी के सहित उन श्रीसरजू जी में स्नान करके ब्राह्मणोंका सम्यक प्रकार पूजन करके बहुत दान देते हैं ॥३७॥

संध्या त्रयं विबुध विप्र गुरूंश्च –
पूर्वान्संपूजये च्छ्रुति विधान गुरूपदीष्टः॥
आगन्तु भिक्षुक जनै मुनि विप्र वृन्दै–
रश्नाति नित्य नृपतिः सुरस प्रकारम् ॥३८॥

और गुरू महाराज के उपदेश से तीनों काल में संध्या, देवता, ब्राह्मणों का पूजन, सुन्दर पवित्र विधान पूर्वक आदि अन्त में गुरु महाराज का पूजन तथा आगन्तुक भिक्षुकों को और मुनि ब्राह्मण समूहों को सुन्दर रसीले बहु प्रकार पदार्थों से नित्य भोजन कराते हैं ॥३८॥

दीनान्धनैः क्षुधितकान्परि भोजनेन --
शीते न पीडित जनानपि वस्त्र दानैः ॥
विद्या चतुर्दश विराजित पूर्ण बोधो–
विद्या वतां गुण वतां कृत सादरोऽपि ॥३९॥

गरीबों को धन से भूखे लोगों को भोजन से, ठन्डी से पीड़ित जनों को वस्त्रों से दान सन्मान

देकर प्रसन्न करते हैं। चौदहों विद्याओं का पूर्ण बोध रखदे वाले विद्यावान गुणवान सज्जनों में पूर्ण आदरणीय सबका आदर करने वाले महाराज प्रकाशित रहते हैं ॥३६॥

दूरान्मणीन्द्र कलशध्वज लचितैश्च-
दुर्गौ तराप्तसदनैः परितः प्रपूर्णा ॥
रत्नाकरः किमुसुरत्न समस्त साचा-
न्कत्वे व कौशल पुरी महती सुदृष्टा ॥४०॥

दूरसे उत्तम मणियों के कलशध्वजादिकों द्वारा दीख पड़ने वाली सातों आवरण दुर्गों से प्रत्येक आवरण में महलों चारों तरफ से परिपूर्ण श्री अयोध्या नगरी उत्तम समस्त सुन्दर रत्नों से परिपूर्ण क्य। साक्षात् रत्नाकर समुद्र है ? अथवा महान् पुरियों की ईश्वरी समस्त देखने वालों की दृष्टि में साक्षात् ब्रह्मा जी के लोक सदृश लगती है ॥४०॥

पूर्वं प्रविश्य नगरीं तु विचार्य्य कार्य्यं-
यानै र्जनैश्च परि संकुल राज मार्गाम् ॥
गेहं गुरोर्महिप मौलि मणेश्च गत्वा ॥
सं पर्चिचतो मुनि वरः स उदार तेजाः ॥४१॥

मैं जब यहाँ से पत्रिका लेकर श्री अयोध्या जी में गया तो पहले तो नगर में प्रवेश किया। रथ पालकी आदिक सवारियों से तथा पैदल जनता से भरी हुई नगर के राजमार्ग से चलते हुए अपने कार्य को विचार करके पहले तो मैं महिपाल मौलिमणि महाराज दशरथ जी के गुरु महाराज के घर में गया और उदार तेजस्वी मुनिवर श्री वसिष्ठ जी से परिचय किया। ॥४१॥

दृष्ट्वा नतं तु भवतः सचिवं च मां च-
मुत्थाय तेन मुनिना परि रंभिता च।
दत्वासनं कुशल मस्ति मुनिस्त्ववोच-
त्सर्वं मयापि कथितं समयं सुलब्ध्वा ॥४२॥

श्री वसिष्ठ जी का दर्शन करके प्रणाम किया। आपके मंत्री के सहित मेरे को देख करके श्री वसिष्ठ जी ने उठाकरके गले से लगाया उसके बाद आसन दिया; कुशल पूछे और मैंने भी मुनि महाराज को सब समाचार समय पाकर के सुनाया ॥४२॥

अस्माभिरेव मुनिराज नृपतेः सभायां -
गत्वा समस्त मुचितं कृतवा न्सुकार्य्यम् ॥
किं वर्णयामि तव भाग्य महादयंय-
त्सम्बन्ध एषकुल कीर्त्तिकरः प्रलब्धः ॥४३॥

हम लोगों के सहित मुनिराज श्री वसिष्ठ जी महाराज श्री दशरथ जी की सभा में गए। समस्त उचित कार्यों को श्री वसिष्ठ जी ने स्वयं किया। हे राजन आपके भाग्य के महान् उदय को मैं क्या वर्णन करूँ जो आपका यह श्री अवधेश महाराज से सम्बन्ध हो रहा है यह सम्बन्ध आपके कुल की महान कीर्ति को बढ़ाने वाला प्राप्त हुआ है ॥४३॥

किं विर्णयामि नृपतेहि कुमारिकानां -
भाग्यं तपोव्रत यमैः कृत संचितं यत् ॥
राज्ञां किरीट कलशाङ्कित पादपीठ -
स्तस्यात्मजो रघुवरो वर आसु लब्धः ॥४४॥

हे राजन् ? आपकी इन कुमारियों के तपस्या व्रत यम नियम द्वारा उत्पन्न हुए पुण्य के सञ्चय से पैदा हुए भाग्य का मैं क्या वर्णन करूँ ? जिनके पति राजाओं के मुकुट के मणियों से चिन्हित है चरण के जूते जिनके उन महाराज चक्रवर्ति जी के प्रधान पुत्र श्री रघुनाथ जी दुल्हा प्राप्त हो रहे हैं ॥४४॥

शिवोवाच-इत्येवं गुण गौरवं गुणनिधेस्तेजः प्रतापायतं-
सौख्यं वैभवदान धर्म्म विहितं, भृत्येषु कारुण्यकम् ॥
देवौजा दशदिक्पतेश्च परितः श्रुत्वातु सम्बन्धिनो-
सानन्दं परमं ययौ स्वहृदये प्रेमाश्रु नेत्राच्छ्रवन् ।४५॥

श्री शंकर जी बोले कि उपरोहित की इस प्रकार की गुणगौरव से भरी हुई बातों को महाराज श्री देवौज जी ने और उनकी सम्बन्धी जनता ने चारों तरफ से जब सुना तो गुणों के समुद्र तेज और प्रताप के निवास स्थान, सुख और वैभव के घर, दान और धम से पूर्ण, सेवकों पर करुणा करने वाले दशों दिशाओं के एक पति महाराज श्री दशरथ जी महाराज श्री देवौज जी के सम्बन्धो होवगे इस बात पर सभी लोग महान् आनन्दित होकर के अपने नेत्रों से प्रेम की धारा को बहाने लगे ॥४५॥

एतादृशं तं कथमर्च्चयामि प्रक्षीण वित्तो महतां महान्तम्॥
इत्येक शङ्का हृदये ममैव राजेति वार्त्ता हृदये चकार॥४६

इस प्राकर के महानोंमें भी महान् उन महाराज चक्रवर्ति दशरथ जी की अल्पधन वाला मैं कैसे सम्यक् प्रकार ठीक रूप से पूजा कर सकूँगा इस तरह की शंका से ग्रसित हृदय वाले राजा उपरोहित की बातों को सुने ॥४६॥

एतत्काले महादेवि चन्द्रेण प्रेषितः स्वयम् ॥
छद्मना स नृप द्वारं विप्र रूपेण चा गतः ॥४७॥

शङ्कर जी बोले-हे पार्वती ? इसी समय स्वयं चन्द्रमा से भेजा हुआ ब्राह्मण के रूप में छिपा हुआ दूत देवौज जी के दरवाजे पर आ पहुँचा ॥४७॥

निवेदयेति राज्ञे मां प्रतिहारं बभाष सः ॥
तदानु प्रति हारोऽपि ज्ञात्वा कंचिन्मुर्नि परम् ॥
अंतः पुरं प्रविश्याथ श्रावयामास वाचिकम् ॥४८॥

दूत ने द्वारपाल से कहा कि मेरे को महाराज के प्रति निवेदन कर दो, ऐसा कहा। द्वारपाल ने भी यह कोइ मुनि है ऐसा जानकर अंतः पुर में प्रवेश करके महाराज को जनाए ॥४८॥

श्रुत्वा शीघ्रं समाहूतो राज्ञापि संनिधिं मुनिः ॥
अर्घ पाद्यादिकं कृत्वा पूजयामास भावतः ॥४६॥

राजा ने सुनकरके मुनि को शीघ्र अपने समीप बुलवाया। अर्घ्य पाद्यादिक भाव पूर्वक पूजा करके ॥४६॥

कारयित्वा भोजन ञ्च संस्थाप्य पुनरासने ॥
तं प्रसन्न मुखं दृष्ट्वा बध्वाञ्जलि मुवाच सः ॥५०॥

भोजन कराया फिर आसन पर बैठाकरके प्रसन्न मुख उन ऋषि जी को देखकर हाथ जोड़कर राजा बोले ॥५०॥

राजोवाच-अकारणं सतां नाथ गृहस्थान्वद्ध चेतसः ॥
स्वनुग्राहयितुं नित्यं लोके पर्यटनं शुभम् ॥५१॥

हे नाथ ? सन्तों का हम गृहस्थी में बँधे हुए चित्त वाले गृहस्थों के घर में जीव पर अनुग्रह करते हुए लोक में पर्यटन करने वाले महात्माओं का अकारण आ जाना महान् कल्याण कारक है ॥५१॥

तत्र वै नोचिता प्रच्छा कारणो हिरय चागमे ॥
मादृशे नुग्रहायाथ भवतां भुवि संसरः ॥५२॥

ऐसी अवस्था में आपके आने का कारण क्या है ऐसा पूछना शास्त्रों की दृष्टि से उचित नहीं है क्यों कि आप महान् पुरुषों का पृथ्वी में विचरना मेरे सरीखे बद्धचित्त वालों के ऊपर अनुग्रह करना ही है ॥५२॥

मुनिरुवाच-कथं नो वदसीष्ये वं केवलं श्रुति पद्धतौ ॥
ईश्वरांशः प्रवर्त्यर्थं प्राणिनां हि नृपो भवेत् ॥५३॥

मुनि महाराज बोले कि ईश्वर के अंश जो राजा लोग हैं वे प्राणियों को प्रवृत्ति मार्ग में केवल वेद पद्धति से चलाकर अर्थ प्रदान करने वाले होते हैं तो आप ऐसा क्यों न कहें ॥५३॥

परन्तु श्रूयतां राजन्यदर्थ मागतोऽप्यहम् ॥
गुरुणा प्रेषितो गेहं गुप्तं ते ज्ञापितुं धनम् ॥५४॥

परन्तु हे राजन् मैं जिसलिए आया हूँ उसको सुनिए। मेरे गुरु महाराज ने तुम्हारे घर में छिपे हुए धन को बताने के लिए मुझे भेजा है ॥५४॥

गुरुणा ते गर्त्तके च निहितं पुर्व मेवहि ॥
तदहं दर्शयाम्यद्य सुतानां कार्य्यहेतवे ॥५५॥

तुम्हारे पूर्वजों ने प्राचीन काल में बहुत सा धन गड्ढे में छिपाकर रक्खा है उस धन को मैं इस समय आपको कन्याओं के विवाह खर्च के वास्ते दिखाने के लिए आया हूँ ॥५५॥

वित्तव्ययोयाच केषु कौशलेशस्य नित्यशः ॥
तावद्वित्तं कुबेरस्य भवने नास्ति सर्वशः ॥५६॥

महाराज श्रीकौशलेश जीके याचकों में नित्य खर्च होने वाला जितना धन है कुबेर के सम्पूर्ण भवन में भी नहीं है ॥५६॥

तेन सम्बन्ध मासाद्य कथं कारं करिष्यसि ॥
यादृशं दैवतं देव तादृशं तस्य पूजनम् ॥५७॥

उन अवधेश महाराज से सम्बन्ध प्राप्त करके अब आप कैसे कार्य कर सकेंगे ! जिस प्रकार के देवता होते हैं उसी प्रकार की उनकी पूजा भी होनी चाहिये ॥५७॥

दानोत्सव स्तु पुत्रीणां विशेषे संपदा गुणैः ॥
भाग्येन लभ्यते किं च शोभते बहुभि र्धनैः ॥५८॥

पुत्रियों के विवाह में तो विशेष कर सम्पत्ति रूप गुण से ही दान उत्सव होता है परन्तु इस प्रकार के धन से शोभित हुआ दान उत्सव ऐसे सम्बन्ध में बड़े भाग्य से प्राप्त होता है ॥५८॥

तत्सिद्धये हि नृपते प्रसन्न मनसा त्वपि ॥
प्रेषितोस्मीह गुरुणा तेन चिन्तां परित्यज ॥५९॥

उसी बात की सिद्धि के लिये हे राजन् मेरे गुरु महाराज तुम्हारे में प्रसन्न होकर के मुझे यहां आपके पास भेजे हैं इस लिए अब आप इस धन विषयक चिन्ता को त्याग दीजिये ॥५९॥

राजोवाच--इत्येवं चिंतयन्तं मां प्राप्तोसि शुभ दर्शन॥
एतत्कौतुक मासाद्य कथं चिन्तां करोम्यहम् ॥६०॥

राजा देवौज बोले कि हे सुन्दर दर्शन मुनि महाराज मैं इसी बातकी चिन्ता मनमें कर रहा था सो यह आपका सुन्दर दर्श प्राप्त हो गया। इस प्रकार के कौतुक करने वाले आपको प्राप्त करके अब मैं किस लिये चिन्ता करूंगा ? ॥६०॥

परन्तु भवतां यो वै गुरुः सिद्धिभि र्रर्चितः ॥
जिज्ञासा मेत त्स्वरूपे तं मां बोधितु मर्हसि ॥६१॥

परन्तु आपके जो गुरू महाराज इस प्रकार की सिद्ध से पूजित हैं उनके स्वरूप को जानने की मेरी जिज्ञासा है सो आप मुझे बतावें ॥६१॥

शिवोवाच–एवं श्रुत्वा वचोराज्ञो गोपयन्कैतवो मुनिः॥
आदर्यस्य स्वात्मनो रूपं श्लेष्यकर्णो ह्यु वाचसः॥६२॥

श्री शङ्कर जी बोले वह छिपा हुआ मुनि रूप चन्द्रमा का दूत राजा की बात इस प्रकार सुन करके अपना परिचय छिपाता हुआ अपने स्वामी चन्द्रमा के स्वरूप के गुणों का आश्लेषण करके बोला ॥६२॥

मुनिरुवाच-जानंतिस्म पूर्वजा स्ते तापसं चिरजीविनम्॥
जगद्दीपं तापहरं गुरुं मे हि नराधिप ॥६३॥

कि हे राजन् ? मेरे चिरंजीवी तपस्वी गुरू महाराज को तुम्हारे सब पूर्वज जानते हैं क्यों कि मेरे गुरू महाराज संसार के पाप को हरण करने वाले जगत के दीपक स्वरूप हैं ॥६३॥

वनेशजं मोक्ष पूरं शीलं शान्ति प्रदं परम् ॥
मृगचर्मा कं दधं तंनौमि नित्यं गुरुं स्वयम् ॥६४॥

वन (जल, जंगल) के ईश्वर से पैदा हुआ मोक्ष को पूर्ण करने वाले शील और परम शान्ति को देने वाले मृग के चर्म को अङ्क में धारण करनेवाले ऐसे अपने श्रीगुरुजी को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ ।।६४।।

शिवोवाच-एवमुक्त्वा तु राजनं दर्शयामास कौतुकम् ॥
भूम्यन्तरालमाविश्य नृपेण सहवै मुनिः ।।६५।।

श्रीशङ्करजी बोले कि इस प्रकार राजा को कह करके भूमि के अन्दर विवर में राजा के सहित वह मुनि प्रवेश करके एक अद्भुत कौतुक को दिखाया ।।६५।।

सकाशाल्लब्धवा नेषः पूर्वं तेहि पितामहः ।।
चन्द्रमसो वैभवस्तु पालयामो नियोजिताः ।।६६।।

प्राचीन समय में इस धन वैभव को तुम्हारे दादा ने चन्द्रमा से प्राप्त किया था सो हमको इस धन की रक्षाके लिये इस स्थान पर नियोजित किया गया है ।।६६।।

हस्ताञ्जलि पुटं वध्वा तत्र भूम्यन्तरालकाः ।।
विनीता नृपतिं देवि समूचुश्च समाहिताः ।।६७।।

इस प्रकार हे देवि ! उस पृथ्वी के अन्दर गुफा में रहने वाले सम्पत्ति के रक्षक नौकरों ने बड़ी नम्रता पूर्वक हाथ जोड़ करके सावधानता से राजा को प्रार्थना की ।।६७।।

भवनान्तर मानीयदर्शयामासु रद्भुतम् ।।
पृथक् पृथक् समस्तं च राज्ञे च मुनये च वै ।।६८।।

इसके बाद वे सब गुफा के अन्दर रहने वाले सेवक उस मुनि के सहित राजा को एक घर से दूसरे घर में ले जाकर के समस्त अद्भुत वैभव को अलग २ स्थानों में महाराज के लिए दिखाया ।।६८।।

हयेभरथ रत्नानां विस्तरोपचयाय च ।।
कोशेषु कौशलेन्द्रस्य भविष्यं यच्च भास्वरम् ।।६९।।

कहीं पर घोड़े, कहीं पर हाथी तथा इसी प्रकार रथ रत्न सुवर्ण आदि सामग्रियों को सब दिखाया जो भविष्य में महाराज कोसलेन्द्र जी के खजाना में प्रकाश करेगा वह सब धनको दिखाया ।।६९।।

पूर्णेन्दुना समस्याथवीजं देवौजसः परम् ।।
यश सो नृपते नित्यं भोग्यं रामस्य तच्छृणु ।।७०।।

अब पूर्ण चन्द्रमा के समान महाराज देवौजस के परम यश का बीज श्रीरामजी का नित्य भोग्य उस सम्पत्ति का हम वर्णन करते हैं उसको सुनो ।।७०।।

यं नैव पूरयेत्प्राविड् यं निदाघो न शोषयेत् ।।
इत्थं रामः स्वयं पूर्णः समुद्र इव सम्पदा ।।७१।।

जिस समुद्र को वर्षा ऋतु पूर्ण नहीं कर सकती है, ग्रीष्म ऋतु सुखा नहीं सकता है, स्वयं पूर्ण हुए उस समुद्र के समान इस प्रकार अपनी सम्पत्ति से श्रीरामजी स्वयं पूर्ण हैं ।।७१।।

तथा पीव ङ्भावुकैस्तु भाविर्दत्तम् च भास्वरम् ॥
तद्धि दीनो रत्न मिव गृह्णाति रघुनन्दनः॥७२॥

तो भी भावुकों के द्वारा भाव पूर्वक दिया हुआ थोड़े से प्रकाशमान धन को जैसे कोई गरीब पारसमणि को पाकर खुश होता है इस तरह से श्रीरामजी उस धन को स्वीकार करते हैं ॥७२॥

एवं गुणास्तु श्रीरामे नान्यस्मिन् गिरजे स्वतः ॥
तेतु दाशरथे रंघ्री मनो मे भ्रमरायते ॥७३॥

हे गिरजे ! इस प्रकार के गुण श्री राम जी में ही हैं अन्य किसी में नहीं हैं मेरा मन श्री दशरथ नन्दन श्री राम जी के चरण कमलों में भौंरे की तरह से लटर पटर (अथवच) रहता है। ७३॥

अथा गारे तु प्रथमे योजनान्ते सुविस्तरे ॥
हया काम्बोज वाह्लीका वनायुजाः समन्ततः ॥७४॥

हे पार्वती ? वे मुनि के साथ राजा उस गुफा के अन्दर प्रथम तो एक योजन विस्तार वाले महल में काम्बोज और बाल्हिक तथा वनायुज जाति के घोड़े पंक्ति बँधे हुए देखे ॥७४॥

पारशीकाः कच्छ देश्याः कांठालाः सिन्धुजास्तथा ॥
भूषिता पालिताश्चैव साधिता नर्त्तकाश्चते ॥७५॥

तथा पारसिक और कच्छ देशीय, कन्डाल जातीय, सिन्धु जातीय सुन्दर घोड़े जो सेवकों द्वारा पाले गए भूषित हैं जिनको ताल पूर्वक नृत्य करते हुए चलना सिखाया गया है उन सब घोड़ों को ॥७५॥

दृष्ट्वा देवौजस श्चेतद्विस्मयं हर्ष मापयौ ॥
ततोऽग्रे चापरे गेहे हास्तिकं च तथाविधम् ॥७६॥

राजा देवौजस ने देखा महान आश्चर्य और हर्ष को प्राप्त हुए फिर उस घर से आगे दूसरे घर में जाने पर उसी प्रकार हाथियों की भी बहुत जाति की पंक्तियों को देखा ॥७६॥

भूषितं विविधै रत्नैः पालितैः साधितैः जनैः ॥
ददर्श नृपति स्तत्र ततश्चाग्रे जनैः सह ॥
मुनिनापि विवेशाथ ःदृष्टवान्कौतुकं परम् ॥७७॥

जो सेवकों के द्वारा पालित और विविध रत्नों से भूषित और सुन्दर चाल से चलना सिखाया गया है वहाँ के सेवकों ने यह वहाँ का दृश्य दिखाया और भी ःआगे मुनि के साथ राजा परम कौतुक देखते हुए जा रहे हैं ॥७७॥

नाना विधानि रत्नानि नाना वर्णैः समानिवै ॥
काञ्चनानां करण्डेषु संचितानि समन्ततः ॥७८॥

आगे चलने पर नाना वर्ण के विविध रत्न और स्वर्ण की करण्डियों में सुन्दर सजा करके चारों तरफ रक्खे गए हैं ॥७८॥

ग्रन्थिता हेम सूत्रैश्चाहाराश्चापि सुरत्नकाः ।
देवछान्दादयश्चैव गुत्स गुत्साद्धं गोस्तनाः ॥७६॥

और स्वर्ण सूत्रों पर गुथे हुए भी बहुत से सुन्दर रत्नों के हार जिनका नाम देव छन्दादि (सौलरों वाले मोथियों के हार) गुत्स (लता के भेद से ३२ लरों के हार) गुत्सार्ध (चौबीस लरों वाले हार) गोस्तन (चौंसठ लरों वाले हार) ऐसा नाम है ॥७६॥

शृङ्गार सम्पुटाश्चापि सिन्दूर कज्जलादिभिः ॥
सर्वाङ्ग भूषणान्येव खचितानि सुरत्नकैः ॥८०॥

और भी बहुतसे श्रृंगारके संपुट कोई सुन्दर सिन्दूर के कोइ काजलके डिव्बे इसी प्रकार सर्वाङ्गके भूषण सुन्दर रत्नों से खचे हुए सब रक्खे हुए हैं ॥८०॥

स्त्रीपुंसोश्चापि भेदेन मंजीर नूपुरादिभिः ॥
किरीट कुण्डलाग्रैश्च शिरो रत्नादिभिस्तथा ॥८१॥

स्त्री और पुरुषों के भेद से कटि मेखला नूपुर क्रीट, कुण्डल, कण्ठभूषण, सिरो रत्न आदि बहुत से भूषण अलग अलग सजाकरके ढेरी के ढेरी रक्खे हैं ॥८१॥

पात्राणां च समूहास्तु रौप्य सौवर्णका स्तथा ।
भृङ्गारकाश्च स्थाल्योऽपि कुम्भाश्च कानकायताः । ८२

इसी प्रकार चाँदी और स्वर्ण के पात्र झारी थालो तथा घड़ा भी और अनेक प्रकार के स्वर्ण पात्र बहुत रक्खे हैं ॥८२॥

सौवर्ण विस्त जातं च रजताद्याणि तत्र च ॥
रक्षकै र्दर्शितं चैतत्पुनरग्रे प्रविश्य च ॥८३॥

दिव्य सुवर्ण के बने अथा चाँदी के बने अनेक पदार्थ तथा चौपड़ादिक खेलने की सामग्री इन सबको वहाँ पर रक्षकों ने मुनि और राजा को दिखाए फिर आगे प्रवेश किए ॥८३॥

महार्ह रत्नैः खचिता मञ्जूषाश्च करण्डकाः ॥
चतुर्विधानां वस्त्राणां दर्शितास्तै र्नृपाय च ॥८४

विसकीमतीय रत्नोंसे खचे सन्दूक तथा इसी प्रकार करण्डी इन सबमें रेशमी, ऊनी, सूती, कोड़ेके बने कटियादि चार प्रकार के अनन्त वस्त्रों के भन्डारोंको भी वहाँ के रक्षकों ने राजा को दिखाया ॥८४॥

नाना वर्णानि वस्त्राणि बहु मौल्यानि भेदतः ॥
स्त्री पुंसोर्वयसाश्चेव भास्वराणि समंततः ॥८५॥

विविध रङ्ग के बहुत मोल वाले बहुत बस्त्रों को जो स्त्री और पुरुषों के योग्य हैं महान प्रकाश करते हुए चारों तरफ सजाए । सब दिखाया ॥८५॥

ततोऽग्रे रथ कोट्यश्च रत्नानां बहु वर्णकाः ॥
सौवर्ण राजताश्चैव चतुश्चक्राष्ट चक्रकाः । ८६॥

उसके आगे बहुत रङ्गके विलकीमनीय रत्नों से खचे करोड़ों रथ किन्हीं के चार पहिया, किन्ही के आठ पहिया इस प्रकार सोना चाँदी के बने हुए दिखाये ॥८६॥

तत्र तेषां हया श्चैव भूषिताः शुभ लक्षणैः ॥
तत्रैव च विमानानि उप यानानि बहूनि च ॥८७॥

उन रथों के घोड़े सुन्दर लक्षण वाले सुन्दर रत्नों से भूषित हैं और उसी स्थान पर बहुत से विमान और उपायन भेंट की बहुत सी सामग्री सब है ॥८७॥

ततश्चाग्रेऽन्य पशवो मृगाद्या बहु जातिभिः ॥
एतत्सर्वं दर्शयित्वा तत्रै को मुख्य रक्षकः ॥८८॥

उसके आगे मृगादि बहुत जाति के अन्य पशु भी सब अपने २ रक्षकों से सुरक्षित हैं उन सब रक्षकों से सुरक्षित हैं उन सब रक्षकों के मुख्य एक रक्षक ने यह सब दृश्य (सम्पत्ति) को दिखाया ॥८८॥

राजानं प्रत्युवाचेति यदा यद्यभिकांक्षसे ॥
तदा तत्ते च सांनिध्यं करिष्यामि नरेश्वर ॥८६॥

और वह बोला कि हे राजन्! जो जो आपकी अकांक्षा हो वह सब आपके समीप में तुरन्त हम लोग पहुँचा देंगे ॥८६॥

पुत्रीणां च सुदायै तद्दातव्यं दिव्य कीर्त्तये ॥
पूर्वं चन्द्रमसास्मा भिरेतदर्थं च रक्षितम् ॥६०॥

आप अपनी कन्या और दामाद के लिए इस सम्पत्ति का दान करें यह आपकी महान् कीर्ति को बढ़ाने वाला होगा। चन्द्रमा ने पहले से ही हमको इस सम्पत्ति की रक्षा हेतु नियुक्त किया है हमने भी इस सबकी रक्षा की है ॥६०॥

तदयं मुनि जानाति कृपया यस्य भूपते ॥
दृष्टं त्वयापि लब्धं च धन शंकांनिवारय ॥६१॥

ये जो आपके साथ में मुनि महाराज हैं ये सब जानते हैं जिनकी कृपा से आपने इस सम्पत्ति को देखा अब आप अपने धन की शका को त्याग दें ॥६१॥

पुत्र्युत्सव विधानं तु वित्त शंका विवर्ज्जितम् ॥
मुदाहि कुरु शीघ्रं च योग्यं योग्याय दीयताम् ॥६२॥

धन की शंका से रहित पुत्रियों के विवाह के उत्सव विधान को महान धन के दान पूर्वक प्रसन्न हो कर यथा योग्य जितना जिसको चाहिए उतना उसको दान दीजिये इस तरहसे विवाहोत्सव कीजिए॥६२॥

शिवोवाच-एवं तस्य वचः श्रुत्वा रक्षकस्य नराधिपः॥
देवौजा हर्षितोऽप्यासीन्मुनिरंतर्दधौहि सः ॥६३॥

श्रीशङ्कर जो बोले कि इस प्रकार उन रक्षकों में मुख्य की बात सुनकर महाराज देवौजजी महान् हर्षित हो गये और साथ में जो मुनि रहे वे अन्तर्धान होगये ॥९३॥

तं हि चन्द्रमसो दूतं प्रणम्य च नराधिपः ॥
तेनैव दर्शित द्वाराद्वहिः शीघ्र मुपागमत ॥९४॥

उन रक्षकों में मुख्य जो उसको महाराज ने प्रणाम किया और उसी रक्षक के बताये हुए द्वार से शीघ्र उस गुफा से बाहर आये ॥९४॥

पूर्वां चिंतां निवर्त्त्यासौय दार्ध्यस्य कृपा मयं ॥
चरित्रं चिन्तयत्येव नितान्तं हर्षमानसः ॥९५॥

अब पहले महाराज को धन की जो चिन्ता थी वह अब निवृत्त हो गयी अपने पूर्वजों की महान् कृपामय इस अद्भुत चरित्र का चिंतवन करने लगे, नितान्त हर्षित मन हो गये ॥९५॥

अतर्कणीयं महिमान मेवमहाशयानां महतां सतां च॥
यैरुधृतोऽहं विपुलाम्बुधारात्तेषां पदाब्जं शरणं प्रपद्ये।९६

महात्माओं की महान महिमा अतर्कनीय है। अहो! महात्मा सन्त बड़े गम्भीर आशय के होते हैं जिन्होंने इस विशाल चिन्ताके समुद्रमें से मेरा उद्धार किया। ऐसे सन्तोंके चरणकी मैं शरण हूँ॥९६॥

गणयन्तं गुणानीत्थं पूर्वजानां नरेश्वरम् ॥
उपाजग्मुः प्रधानेन विवाहाय सु सज्जनाः ॥९७॥

इस प्रकार सन्तों के गुणों को गुनते हुए और अपने पूर्वजों के पुण्य प्रताप का स्मरण करते हुए अपने प्रधान मन्त्री के साथ कन्याओं के विबाहोत्सव सजावट के लिये उद्यत होगये ॥९७॥

कार्य्येषु योजिता पूर्वंतद्विधाय समस्तकम् ॥
यथा योग्यं तत्र तत्र निपुणः कार्य्य कारिणः ॥९८॥

जिन सेवकों को पहले ही से विवाह के कार्यों में नियोजित किये थे वे होशियार कार्यकर्ता लोग बड़ी योग्यता से यथा योग्य कार्य को ठीक २ करके आये ॥९८॥

कृत प्रणामा द्दता राज्ञः यथा योग्यं समास्थिताः ॥
प्रसन्न वदनं दृष्ट्वायत्कृतं तन्नि वेदितम् ॥९९॥

महाराज ने भी प्रणाम करते हुए उन अपने सेवकोंको यथा योग्य सन्मानित किया। महाराजको प्रसन्न मन देखकर के सब सेवकों ने अपने २ किये हुये कृत्यों को निवेदन किया ॥९९॥

प्रसस्त मिति राजापि कृतज्ञस्ता न्समब्रवीत् ॥
पुनश्च स्मित शोभास्यः प्रधानं चावलोक्य च॥ १००

महाराज ने भी "बहुत अच्छा किया" ऐसा कहा और सबके उपकार का स्मरण किया। मन्द मुसुकाते हुए सुन्दर मुख चन्द्रसे अपने प्रधान मन्त्री को देखे ॥१००॥

लोकोत्तरं कीर्तिमूलं पूर्वजानांहि सत्कृतैः ॥
ईश्वरस्यानुकूलेन सखे सर्वत्वया कृतम् ॥१०१॥

अहो ! पूर्वजों की लोकोत्तर कीर्ति का मूल ईश्वर से भी जो सत्कृत है हे सखे ! वह कार्य अब आपके करने योग्य है ॥१०१॥

श्रीमद्दशरथो राजा सेव्योऽसंख्य नराधिपैः॥
वर जाने कुमारस्य तस्या संख्य महीश्वराः ॥१०२॥

असंख्य राजाओं से सेवित श्रीमान् महाराज श्रीदशरथ जी अपने कुमार की बारातमें असंख्य राजाओं को भेजे होंगे ॥१०२॥

पूजार्हास्तेऽप्य वश्यं मे रथ रत्न गजादिभिः ॥
तेन वै जायते कीर्त्ति रकीर्त्ति स्तद्विपर्य्यये ॥१०३॥

उन सबकी मुझे रथ रत्न गजादिकों द्वारा अवश्य पूजा करनी चाहिये इसी से हमारी कीर्ति इसके विपरीत भारी अपकीर्ति होगी ॥१०३॥

तादृशं वित्त मालोक्य कोशेषु नगरेष्वपि ॥
प्रजोद्वेगं विना सर्वं यत्नं कुरु सखेशुभम् ॥१०४॥

उन राजाओं के सत्कार के योग्य अपने खजानामें और नगर में जिससे किसी प्रकार प्रजा को उद्वेग न हो इस प्रकार के समस्त यत्नों से धन को देखकर के विवाह के शुभ उत्सव को कीजिये ॥१०४॥

प्रधानोवाच-अस्माभिः किं नदाकारै र्वापीभिः किं सपूर्य्यते
सागरस्तु प्रजाभिश्चह्यु पायानां शतै रपि ॥१०५॥

प्रधान मन्त्री बोले कि महाराज हम नदी और बावड़ी के समान साधारण प्रजा की उपायन भेंटसे सैकड़ों प्रकार भेंट होने पर भी क्या समुद्रके समान महाराज दशरथजीको पूर्ण होसकते हैं?॥१०५॥

परन्तु मुनिभिः शास्त्रै र्यज्ञे योगे सु तीर्थके ॥
यथा शक्ति तपस्त्यागो निर्णीतश्च विवेकिभिः ॥१०६

पर मुनियों ने और शास्त्रों ने विवेक पूर्वक यज्ञ योग तीर्थों में यथा योग्य तपस्या और त्याग करने को कहा है ॥१०६॥

ततः परं नात्म तुल्यं दानं वेदेषु कीर्त्तितम् ॥
तद्दास्यामो वयं सर्वे दासा स्तस्मै भवामहे ॥१०७॥

इससे अतिरिक्त दान का वेदों में कीर्तन नहीं है इस लिए अपनी योग्यता के अनुसार हम सब लोग महाराज को भेंट देंगे उसके अतिरिक्त उनके दास हम लोग हो जायेंगे ॥१०७॥

दुर्ल्लभे लब्ध सम्बन्धे किमेतच्चिंतनं प्रभो ॥
त्वं लघुश्चापि दाता सौ दान पात्रोऽप्यसौ महान्॥१०८

हे प्रभो ! दुर्लभ स्थान पर सम्बन्ध प्राप्त होने से आप इस प्रकार की चिन्ता क्यों कर रहे हैं आप यदि छोटे भी हैं तो भी आप दाता हैं।-वे महाराज यदि महान् भी है तो भी दानके पात्र हैं ॥१०८॥

शिवोवाच-इत्थं विवेक हास्येन चातुर्य्येणाति शीलितम्॥
नृपः श्रुत्वा प्रधानस्य वचनं च सभासदाः ॥१०९॥

श्रीशङ्कर जी बोले की इस प्रकार प्रधानमन्त्री ने वड़े विवेक पूर्वक हास्य करते हुए वड़ी चतुरता अति शीलवान शब्द कहा। प्रधान मंत्री के इस बचन को सव सभासद और महाराज ने सुना ॥१०६॥

विहसन्तः प्रशंशुश्च मुमुहुश्च परस्परम् ॥
इत्यन्तरे धनै वृद्धा वयो वृद्धाः प्रजासु ये ॥११०॥

हँसते हुए सबने मंत्री की प्रशंसा परस्पर बार२ की। इसी बीच में प्रजा के वड़े२ धनवान लोग और और अवस्था के भी बूढ़े लोग ॥११०॥

हयारूढा गजा रूढाः स्वर्णस्यंदन संस्थिताः ॥
नर वाहना स्तु केचिद्दिव्याम्बर विभूषणाः ॥१११॥

कोई हाथी पर चढ़े कोई घोड़ा पर चढ़े, कोई रिक्सा पालकी पर चढ़े दिव्य वस्त्रभूषणों से सजे ॥१११॥

नृप द्वारं समागत्य ज्ञापितः प्रति हारकः ॥
राज्ञेपि शूचितं तेनाभ्यन्तरं चाद्दता ययुः ॥११२
नाम्नां निवेदनैः कृत्वा प्रणामं सन्मुखं स्थिताः॥११३

महाराज के दरबार में आए। द्वार पाल ने उनका समाचार महाराज को दिया। महाराज भी उन सबका उचित आदर किए भीतर लिवा ले गये अपने नामों को निवेदन करके सबने प्रणाम किया सन्मुख विराजे॥११२-११३॥

तान्दृष्ट्वा सुखिनो राजा स्व पुत्रा निवधर्मिणः ॥
हर्हंययौ च धर्म्मात्मा पप्रच्छ कुशलोचितम् ॥११४॥

उन सबको देखकर महाराज वड़े सुखी हुए अपने धार्मिक पुत्र के समान उन सबके आचरण देख के बड़े हर्षित हुए। धर्मात्मा महाराज ने भी उन सवसे कुशल पूछी ॥११४॥

तदेको धनिनां मुख्यः कृत्वाकर पुटं सुधीः ॥
प्रत्युवाच नृपं प्रीत्या शीलेनाधः कृतेक्षणः ॥११५॥

उन धानिकों में जो मुख्य था उस वुद्धिमान ने हाथ जोड़कर बड़े प्रेम से सुशीलता पूर्वक नीचे को दृष्टिकरके महाराज को कहा ॥११५॥

आप्त योगे भृत्य पुत्र शिष्यै श्चैव स्वसाधितैः ॥
स्वामिन्स्वामी पिता श्रीमान्गुरुश्चैव न सेवितः॥११६

हे स्वामिन ? पर्याप्त समपत्ति होनेपर सेवक पुत्र शिष्य अपने साधनों से श्री मान पिता स्वामी गुरू इन सबकी यदि सेवा न की तो ॥११६॥

तदा तेषां कथं लोके कीर्त्तिधवलतां व्रजेत् ॥
वृथा गुणाः सम्पदोपि कथमात्मनिभाति वै ॥११७॥

तब उनकी कीर्ति लोक में किस प्रकार से उज्वलता को प्राप्त होगी तथा उनकी विद्या गुण सम्पत्ति भी कैसे अपने को अनुकूल होगी ॥११७॥

वाक्ये प्रीतिं प्रजानां च परीक्ष्य नृप सत्तमः ॥
प्रीत्यापि नीति संयुक्तं समुवाच श्रवः सुखम् ॥११८

इस प्रकार प्रजा की प्रेममयी वाणियों को सुनकर महाराज बड़े प्रेम से नीति युक्त कानों में अति सुख देनेवाले प्रिय शब्दों से बोले ॥११८॥

भृत्यं पुत्रं च शिष्यं च बृहत्कार्य्ये प्रयोजयेत् ॥
अनालोकित सामर्थ्यं स च कार्य्यं विनश्यति ॥११९

कि जो कोई अपने नौकर, पुत्र, शिष्य को उसकी सामर्थ्य को न देखकर बहुत बड़े कार्य में यदि नियोजित कर दे तो वह काम अवश्य नष्ट हो जायगा ॥११९॥

आप्त कार्य्य गृहो राजा प्रजाभ्योधन माहरेत् ॥
सकातरो जम्बुकश्च सुकृतं तस्य पापकम् ॥१२०॥

अपने मनमाना धन को प्रजा से हरण करने वाला राजा वह कातर है और गीदड़ है उसके सब पुण्य पापमयी हो जाते हैं ॥१२०॥

यत्परं परमा योग्यः करो राज्ञस्तु सत्कृतम् ॥
अन्यथा तु प्रजाहारी राजा दुष्टो हि पापभुक् ॥१२१॥

जो राजा के योग्य कर है वही राजा का सत्कार करने वाला परम धन है अन्यथा वह दुष्ट राजा प्रजा को लूटने वाला पाप का भागी होता है ॥१२१॥

प्रजासु निर्दयो राजा भवेत्संतान वर्ज्जितः ॥
कदाचिज्जायते पुत्रः सभवेत्पितृ घातकः ॥१२२॥

प्रजा में निर्दयता रखने वाला राजा सन्तानसे हीन होता है यदि उसकी कहीं सन्तान हो भी गयी तो वह पुत्र पिता को मारने वाला होता है ॥१२२॥

यः प्रजा पुत्रयोरेक दृष्ट्या नैवावलोकयेत् ॥
सदुर्मेधाहि नृपति र्जार जन्मीविचार्य्य तां ॥१२३॥

जो राजा प्रजा और पुत्र को एक दृष्टि से नहीं देखता है वह दुर्बुद्धि है ; वर्ण शङ्कर है ; ऐसा उसको जानना चाहिए ॥१२३॥

तद्दूष्ये त्प्रजा भूपः शीक्षार्थं भय दर्शनम् ॥
कारयेत्पुत्र वात्सल्याद्धर्म्म शीलस्तु कथ्यते ॥१२४॥

जो राजा प्रजा को शिक्षा के लिए दूषित करके भय दिखाता है और अन्तरात्मा से पुत्र की तरह से प्रजा पर वात्सलय करता है वह राजा धर्मशील कहा जाता है ॥१२४॥

प्रजा सु वत्सलो यो वै धर्म्मशीलो महीश्वरः ॥
ईश्वरांशः सविज्ञेयश्चान्यथा पाप भाजनः ॥१२५॥

जो प्रजा पर वात्सल्य रखने वाला धर्मशील राजा है उसको ईश्वर का अंश जानना चाहिए अन्यथा वह पाप का पात्र है ॥१२५॥

शिवोवाच-इत्थं प्रिय वचः श्रुत्वा कर्त्तव्यार्थं महीचितः ॥
स मुख्योहि प्रजानां य उवाचात्मान मास्तुवन् ॥१२६

श्री शङ्कर जी बोले कि इस प्रकार प्रजा जनता ने महाराज के प्रिय वचनों को सुन करके अपने कर्त्तव्य पूवक धन को महाराज के सामने रखकर उन धनिकों में मुख्य प्रजा की तरफ से स्तुति करते हुए, बोला ॥१२६॥

धन्या वयं महाराज प्रजा जाता तव प्रभो ॥
एतत्प्रजा सु वात्सल्यं त्वां विना दृश्यते कुतः ॥१२७॥

हे महाराज ? हम लोग आपकी प्रजा होकरके सब धन्य हो गये जो आपका हम प्रजा जनता पर इस प्रकार का वात्सल्य है ऐसा अन्य प्रजा को कहाँ दीख पड़ता है ॥१२७॥

स्वामी गुरुश्च जनकः कृतज्ञो विज्ञ साम्यदृक् ॥
लभ्यते सुकृतैरेव परत्रेहाध्व दर्शकः ॥१२८॥

आप हमारे स्वामी है ; गुरू हैं ; पिता हैं ; सब तत्व के जानने वाले हैं सम दृष्टि वाले हैं लोक परलोक दोनों देखने वाले हैं ऐसे राजा बड़े पुण्य के फल से मिलते हैं ॥१२८॥

पालनात्त्वं पिता साक्षाद्विनेता गुरुरेव हि ॥
न्यामकस्त्वपरः स्वामी शुभधर्म प्रवर्त्तकः ॥१२९॥

पालन करने से आप पिता होते हैं ; शासन करने से और शिक्षा देने से आप साक्षात गुरू होते हैं ; आज्ञा देने से आप स्वामी होते हैं और धर्म प्रेरक होते हैं ॥१२९॥

इत्थं प्रजास्तुत्य प्रजाधिनाथं प्रजासु वात्सल्य निधिं कृपालुम् ॥
स्वं स्वं समागत्य गृहोत्थ ताकं नृपं प्रशंसंति परस्परश्च च ॥१३०॥

इस प्रकार महाराज की प्रजा जनता ने स्तुति की। अपने पर वात्सल्ल रखने वाले कृपानिधान राजा को प्रणाम करके परस्पर महाराज की प्रशंसा करते हुए सब लोग अपने२ घरों को गए॥१३०॥

राजा प्रधानेन ततो महीतलं गत्वा ददर्शाथ समस्त वैभवम् ॥
दृष्ट्वा प्रसन्नोऽपि विमोहितान्तर स्थितिं न लेभे कृत तर्क तार्किकः॥१५३

महाराज भी अपने प्रधान मंत्री के साथ उस पृथ्वी के अन्दर जब गुफा में गए तो मंत्री को अपना समस्त वैभव दिखाए। मंत्री भी देखकर अति प्रसन्न भी हुए और विमोहित भी हुए। अन्तरात्मा से स्थिति को न प्राप्त करके तर्क वितर्क करने लगे ॥१३१॥

समागमं मुने राजा वर्णयित्वा यथात्मनः ॥
अभूत पूर्वं सचिवोऽपि श्रुत्वा सौ द्बोध माप्तवान् ॥१३२॥

राजा ने भी मुनिके समागमको यथार्थ रूप में वर्णन किया मंत्री भी अपूर्व घटना को सुनकर तब आत्मबोध को प्राप्त हुए ॥१३२॥

राजा पुनः प्रधानेन समं जाने समास्थितः ॥
रचनां मण्डपादीनां दर्शितुं हर्षितो ययौ ॥१३३॥

महाराज फिर अपने प्रधान मंत्री के साथ पालकी में बैठकर बाहर आए; मण्डप आदिकों की जो रचना की गई थी उसको दिखाए ; बड़े हर्ष को प्राप्त हुए ॥१३३॥

योजनैकेन विस्तारो मण्डपस्य विराजते ॥
खण्डान्तर विभागेन लशदुच्चतरं महत् ॥१३४॥

एक योजज के विस्तार में वना हुआ वह विवाह मण्डप बहुत खन्ड खण्डान्तरों के विभागसे महान् उचचतर वना हुआ शोभित होरहा है ॥१३४॥

चतुरस्रं वहु द्वारे श्चतुर्दिक्ष्वपि शोभते ॥
मुख्य द्वाराणि चत्वारि कलशै स्तोरण ध्वजैः ॥१३५॥

उस मण्डप के चारों दिशा बहुत द्वार; अत्यन्त शोभायमान हैं मुख्य द्वार चार ही हैं जिन द्वारों के ऊपर गोपुरों में कलश, तोरण, ध्वजा शोभित हो रहे हैं ॥१३५॥

पक्षिभिर्द्रुम जातैश्च क्रित्रिमैः शोभितानि च ॥
स्तम्भेषु मूर्त्तयः साक्षाद्राजन्ते कामिनी यथा ॥१३६

वृक्षों पर बैठे हुए पक्षी तथा बहुत सी कृत्रिम रचना शोभित हो रही हैं। मण्डप के खम्भाओं में साक्षात् स्त्रियों की मूर्तियाँ मंङ्गलथार लिए हुए शोभित हो रही हैं ॥१३६॥

नाना वर्णैःस्थलं भूम्याः शोभते परमाद्भुतम् ॥
क्वचिज्जलं स्थलं क्वापि भाषते मणिभिः कृतम् ॥१३७

उस मण्डप के अन्दर और बाहर की भूमि नाना रङ्ग की परम अम्दुत शोभित होरही है। कहीं पर जल की तरह कहीं पर थल की तरह मणियों से वनाए गए प्रकाश कर रहे हैं ॥१३७।

स्वर्ण सुक्र वितानैश्च खण्ड खण्डान्तराणि च ॥
पिधान पट जालैश्च द्वाराणि संवृतानि च ॥१३८॥

जहाँ तहाँ स्वर्ण सूत्रों के वने कपड़ों से खण्डर प्रति कमरों में वितान तने हैं; बिछावन बिछे हैं; गद्दियाँ बिछी हैं; जहाँ तहाँ जालियाँ वनी हैं; किसीर खन्ड में कोई किवाड़ बन्द हैं, कोई खुले हैं। ॥१३८॥

सप्तावर्णानि वर्णैश्च शोभन्ते सप्तभिस्तथा ॥
मध्य भागो विशालोऽपि विशेष रचनान्वितः ॥१३९

ये सब दरवाजे और महल समान रङ्ग के सुन्दर शोभित हैं इस प्रकार के सात आवरण वाले महलों से यह मण्डप शोभित है। मध्य के विशालभाग के विशेष रचना की गई है ॥१३९॥

दीपायनै महादीप्तै वितान मणि गुम्फकैः ॥
शोभितेऽति पक्षि संघैर्माणिभिः क्रित्रिमैस्तथा ॥१४०॥

दीपों के वृक्ष, दीपदण्ड दीपावली की तरह से शोभित हैं। मणियों से गुम्फित वितान स्वयं प्रकाशमान हो रहे हैं इसी प्रकार पक्षियों के समूह तथा मणियों की चित्र विचित्र रचना अति शोभित हो रही है ॥१४०॥

स्तम्भानां श्रेणयो दिव्या बहुभिर्वर्णकैः शुभाः॥
शोभन्ते मूर्तिभिः सर्वा कर कञ्ज कला युताः॥१४१॥

मणियों के जो दिव्य बहुत रङ्ग के स्तम्भ लगे हैं अतिशय सुन्दर शोभित हो रहे हैं उन स्तम्भों में जो मूर्तियाँ हैं उनके हाथों में यंत्र लगा हुआ जिनके द्वारा कृत्रिम रचनाऐं कार्यकलाप युक्त हो रही हैं॥१४१॥

तत्र सिंहासनं रत्नै र्महार्हैः खचितं शुभम्॥
विशालं बहु वर्णाभिः स्तम्भ श्रेणिभिरा कुलम्॥१४२॥

उस मण्डप के भीतर रत्नों से खचित सुन्दर सिंहासन बहुत विशाल बहुत रङ्ग की स्तम्भों की पंक्तियों से घिरा हुआ है॥१४२॥

तोरणै र्गज मुक्तानां मणि जालैः प्रकाशितम्॥
विशाल दर्पणैः कान्त प्रतिविम्बदधच्छविः॥१४३॥

गजमुक्ताओं के तोरण मणियों की जालियों प्रकाशित बड़ेर दर्पणों से बहुत प्रकार प्रतिबिम्बों द्वारा शोभित है सुन्दर छवि हो रही है॥१४३॥

विवाह भूषणैर्भ्राज त्कोटि कन्दर्प सच्छविः॥
यत्रस्थास्यति रामस्तु वधुभिरभिषेकितः॥१४४॥

विवाह के भूषणों से प्रकाशमान करोड़ों कामदेव की छवि वाले अपनी वधुओं से पाणिग्रहण अभिषिक्त श्री राम जी उस स्थान पर विराजेंगे॥१४४

तत् - सिंहासनान्ते स्यात्पद्मासनं सुकाञ्चनम्॥
षोडशाद्य गुणारंच चतुरावृत रञ्जितम्॥१४५॥

उस सिंहासन के अन्दर स्वर्ण का कमल आठ सोलह, बत्तीस, चौंसठ दल वाला चार आवरण का अति शोभित है॥१४५॥

कृत्रिमैः सारसैः हंसैः कादम्ब शुक कोकिलैः॥
कृत्रिमैर्गुल्म लेखाभिश्च तुर्दिक्ष्वपि शोभनम्॥१४६॥

कृत्रिम पक्षी सारस, हंस, कलहंस जलकुक्कुट, शुक, कोकिलादिकों से और कृत्रिम वृक्ष लितौने आदिक उस मण्डप के चारों तरफ अति शोभित हैं॥१४६॥

वर जान निवासाय स्वर्ण स्तम्भावलम्बिताः॥
स्वर्ण सूत्रैश्चित्रिताश्च खण्डान्तर्वि दायताः॥१४७॥

और बरातियों के निवास के लिए जनवासा भी स्वर्ण स्तम्भावलियों से तथा स्वर्ण सूत्रों से चित्रित कई खण्डों वाले महल बनाए हुए तैयार हैं॥१४७॥

गृहास्ते सचिवेनाथ स्वनाथा पेक्षणायिताः ॥
एवं नृपा ज्ञया यच्चरचितं रचनान्वितम् ॥१४८॥

इस प्रकार के बहुत से महल जिनको देखकर इन्द्र ललचाता है महाराज देवौज जी की आज्ञा से दिव्य रचनायुक्त महलोंको प्रधान मंत्री ने बनवाया ॥१४८॥

दृष्ट्वा गृहं समागत्य पुनश्च मण्डलेश्वरान् ॥
नृप नामाश्वितुं लिख्य प्रेषिता बहु पत्रिका ॥१४६

इह प्रकार के महलों की देखकरके फिर महाराज देवौज जी फिर अपने मण्डलिक बहुत से राजाओं को आमंत्रित करने के लिए बहुत पत्रों को लिखर कर दूतों को भेजा ॥१४६॥

एवं राजानुकूलेन विवाहोदिश्य सार्वकं ॥
महामात्येन तत्सर्वं कृत्वा राज्ञे निवेदितम् ॥१५०॥

इस प्रकार महाराज ने विवाह के योग्य बहुत से अनुकूल कृत्यों को प्रधान मंत्रीके द्वारा कराया प्रधान मंत्री ने भी शीघ्र सब कार्यो को तैयार करके महाराज के लिए निवेदन किया ॥१५०॥

केवलं वर जानस्या गमने शेष चिन्तनम् ॥
नान्यचिंता नृपस्या सीत्सचिवो हि विचक्षणः ॥१५१

अब केवल बरातियों के आने की चिन्ता बाकी है और कोई चिन्ता बड़े होशियार मंत्री के होने से महाराज देवौज जी को नहीं है ॥१५१॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुमा महेश्वर सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम पञ्चः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५५॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम पञ्च पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तम् ॥५५

शिवोवाच—अथ प्रातः समुत्थाय शास्त्र निर्दिष्ट सत्क्रियाम्
कृत्वा देव समाकारो देवौजा उन्मनाः शिवे ॥१॥

श्री शङ्कर जी बोले कि महाराज देवौज जो रात्रि में शयन करने के वाद प्रातः काल उठे। शास्त्र विहित सत्कर्मों को किए। देवताओं के समान दिव्य दर्शन महाराज देवौज जी प्रशन्नमन होकर ॥१॥

आगत्य च सभायां स वरजाना गमं मुदा ॥
चिन्तयन्कथय नास्ते सभ्यै र्बंधु जनैस्तदा ॥२॥

अपनी सभा में आए। बरात के आने के प्रसङ्ग में चिन्तित अपने बन्धु वर्ग सज्जनों के समाज में कुछ आपसी विचार कर रहे थे ॥२।

तावच्च प्रेषित स्तस्य दूतो ग्रामाधि कारिणा ॥
आगत्य पत्रिकातेन दत्ता हर्ष प्रचारिका ॥३॥

उसी समय महाराज देवौज जी के राज्य में रहने वाला जिलाधीस ने दूत को भेजा था वह त पत्रिका लेकर राजसभा में महाराज के हाथ दी उस पत्र को पढ़कर बड़ा हर्ष उत्पन्न हुआ ॥३॥

तदा शीघ्रं महात्मात्य उत्थाय शकटान्वहून् ॥
मिष्ठान्नेन च संभार्य्यदधि भाराड समूहकं ॥४॥
फलानि वहु विधान्ये वं वेसवाराभिधं तथा ॥
रसाभिधं समग्रश्च ताम्बूलादि समस्तकम् ॥
वहु मौल्या न्यंसुकानि भूषणान्यपि वाहनम् ॥५॥

उस समय शीघ्र महामंत्री उठकरके वहुत सी बैल गाड़ियों को सज करके उन गाड़ियों में अनेक प्रकार के मिष्ठान, दही के वर्तन समूह भर करके तथा बहुत प्रकार के फलों को भी और मसाला आदिकों को भी इसी प्रकार रसीले पदार्थों को भी पांन आदिक सामग्रियों से युक्त और विविध प्रकार के बिसकीमतीय वस्त्रों को तथा भूषणों कै और अनेक प्रकार की सवारियों को ॥४-५॥

एवं वहुवस्तु जात मसंख्यै भार वाहकैः ॥
शकटैश्चाप्य संख्यैश्च वरजानस्य सन्मुखं ॥६॥

और भी बहुत सी सामग्रियों को असंख्य भार बाहकों द्वारा तथा बैलगाड़ियों के द्वारा वरात के सन्मुख भेजा ॥६॥

मङ्गलार्थान्काञ्चनांश्च वारि पूरितकान्घटान् ॥
मस्तके वारमुख्यानां तथा चान्यो पचारकम् ॥७॥

और माङ्गलिक स्वर्ण कलश जल से भरे हुए वैश्याओं के सिरों पर रक्खे हुए आम पल्लव स्वस्तिक चिन्हें से चिन्हित, जवांकुर और भी माङ्गलिक सामान लिए हुए ॥७॥

निपुणैः सचिवैश्चान्यैर्यत्नेन ह्यादरार्थकम् ॥
प्रेषितं तत्सुमन्तेन प्रशंस्यांगीकृतं मुदा ॥८॥

साथ में वहुत से होशियार मंत्रियों को देखकर वरात के मङ्गल दर्शनार्थ भेजा गया। इधर श्री सुमंत्र जी ने भी बड़ी प्रशंसा पूर्वक उत्सव सामान को स्वीकार करके प्रसन्न हुए ॥८॥

दर्शितं वर वेषाय श्रीरामाय समस्तकम् ॥
वशिष्ठोऽपि समालोक्य वस्तु सर्वं मुदं ययौ ॥९॥

दुल्हा वेष में श्री राम जी के लिए वह सब सामान मङ्गल दर्शन दिखाया गया। महाराज श्री बसिष्ठ जी उन सब वस्तुओं को देखकर बड़े प्रसन्न हुए ॥९॥

पार्वत्युवाच-कयातैश्च सुमन्ताय सुरीत्या मुनये जनैः ॥
निवेदितं वस्तु यत्र द्विस्तरेण वदप्रभो ॥१०॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि उन देवीज जी के द्वारा भेजे हुए सामान को उनके मंत्रियों ने श्री सुमंत्र जी और वसिष्ठ जी के लिए किसरीति से निवेदन किया हे प्रभो ? इस प्रसङ्ग को विस्तार से कहिए ॥१०॥

दाने दैन्यं श्च लावण्यं विनयं प्रीति रुत्तमा ॥
सम्बन्धिनी हि दीप्यं ते महतीश्च परस्परम् ॥११॥

क्योंकि दान में दीनता, लावण्यता, परस्पर उत्तम प्रीति, विनय सन्बन्धिनी ही महान् प्रकाशमान अच्छी होती है ॥११॥

शिवोवाच-नान्दिकायाः पञ्च क्रोशं दूरं तु वरजानकम् ॥
स्थितं श्रीरामचन्द्रस्य योजनाष्ट परिवृतम् ॥१२॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती नन्दिका नगरी से पांच कोश की दूरी में ठहरी है वह बरात पांचवा कोश से लेकर ३७ वें कोस पर्यन्त ३२ कोस में श्रीरामजी की बरात ठहरी है ॥१२॥

पार्वत्युवाच--किंचावात्सु रयोध्यायां केवले वरजानके ॥
आगता रामचन्द्रस्य जना यदि समूहिताः ॥१३॥

पार्वती जी बोलीं कि यदि इतनी जनता श्रीरामजी की बरात में चली आयी तो तब श्रीअयोध्या जी में कितने लोग रहने के वास्ते बच गये ॥१३॥

स्थितेर्येषां तु विस्तारो योजनाष्ट परिक्रमन ॥
एतन्मे विस्मयो देव कथयस्व कथं हितत् ॥१४॥

क्योंकि जिनका बत्तीस कोस के बिस्तार में पड़ाव पड़ा है अब अयोध्या जी में कितनी जनता बच जायगी। यह मेरा विस्मय है कि वह कैसे होगया, कृपा करके इस प्रसंगको कहिये ॥१४॥

शिवोवाच-प्रभावो न त्वया ज्ञातो मुनीनां विस्मयं करः॥
अयोध्यायास्ते न चात्रशङ्का वै वरि वर्त्तते ॥१५॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती जी ! तुमने श्रीअयोध्या जी के महत्व को नहीं समझा क्योंकि वह तो मुनियों को भी विस्मय पैदा करता है। यह श्रीअयोध्या जी का प्रसंग अद्भुत है इसीलिए सबको शंका हो जाती है ॥१५॥

अधउर्द्धैक ब्रह्माण्डं पूर्यंते चान्न कोष्टवत् ॥
सूक्ष्मैश्च जन्तुभि र्यावद योध्यायां शिवे शृणु ॥१६॥

जिस तरह कोठा में अन्न भरा जाता है उसी तरह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के जितने जीव हैं वे सब श्रीअयोध्या जी में ॥१६॥

एकैवमण्डले तावद्दिव्या नार्य्यो नरा स्तथा ॥
स्वात्म वैभव संयुक्ता असम्बाधा वसन्ति वै ॥१७॥

एक ही मण्डल के अन्दर उतने जीव दिव्य नर-नारी रूप में अपने आत्मीय वैभव विस्तार तथा अपने निवास विलास सुपास पूर्वक बिस्तार से रहते हैं ॥१७॥

वायोश्च मनसश्चैव वेगेन गरुडस्य च ॥
अयोध्यायां भ्रमन्कल्पशतं पारं न लभ्यते ॥१८॥

श्रीअयोध्या जी का सम्पूर्ण बिस्तार पता लगाने के लिए वायु की गति से और मन की गति से तथा गरुड़ की गति से सौकल्प तक भी घूमा जाय तो भी आदि अन्त पता नहीं लगेगा ॥१८॥

न चैव नाम्नो हि न चैव धाम्नो-
रामस्य सौन्दर्य्य गुणाधिकानाम् ॥
लीला विलाशस्य च वैभवस्य-
पारन्तु गन्तुं प्रभुरेव काश्चित् ॥१६॥

श्रीरामजी के नाम, रूप, लीला, धाम का बिलास लीलाओं का तथा वैभव सम्पत्ति का इसी प्रकार शौन्दर्य गुणादिकों का यदि कोई पार पाना चाहे तो कोई भी इसमें समर्थ नहीं है । इस लिए इस बिषय में तुमको शंका नहीं करनी चाहिये ॥१६॥

योजनानि च तान्यष्ट परिवर्त्य विराजते ॥
वस्त्रैः रचित प्राकारो रत्नैः खचित दीप्तमान् ॥२०॥

बत्तीस कोस के मण्डल में जो बराती लोग ठहरे हैं उनके चारों तरफ वस्त्रों से बना रत्नों से खचित महान मणिमय परकोटा प्रकाश कर रहा है ॥२०॥

तस्यान्तरेऽन्य प्राकाराः विभागेन विरोपिताः ॥
यथा योग्यं जनाः सर्वे चातुर्वर्ण्यास्तु तत्र च ॥२१॥

उसके भीतर में एक और परकोटा है जिसके अन्दर कई बिभाग बने हुए चारों वर्णों की जनता के लिये यथा योग्य स्थान बने हुये हैं ॥२१॥

वस्त्रागारे विशालेहि सुखेननिवसन्ति ते ॥
उच्च ध्वजैश्च कलशैः शोभते नगरं यथा ।२२॥

उन चारों बर्णों की जनता की जनता के लिये जो सुख पूर्वक रहने के लिए वस्त्रों के बिशाल महल बने हैं, वे ऊँचे ध्वजा कलशादि से एक बिशाल नगर के आकार में शोभित हुए ॥२२॥

सर्वेषां मध्यवर्त्ती तु राज्ञां निवसतिर्यथा ॥
तेषामपि मध्यभागे महोच्च कलशैः ध्वजैः ।।२३॥

उन सब बरातियों के मध्य भाग में जिस तरह राजा का राजकिला होता है उसी तरह का एक कोट बना हुआ है उस काट के मध्य भाग महान् ऊचे कलश ध्वजाओं से शोभित हुए ॥२३॥

निर्मिताः स्वर्ण सूत्रैस्तु नाना रत्नैश्च शिल्पिभिः ॥
चित्रिता वस्त्र प्रासादास्त्रय एवातिशोभनाः ।२४॥

स्वर्ण सूत्र के बने हुए वस्त्र के तीन महल अति शोभायमान शिल्पियों द्वारा नाना प्रकार के रत्नों के चित्र विचित्र रचना युक्त बने हैं वे तीनों महल अति शोभायमान हैं ॥२४॥

तत्रै कस्मिन्वशिष्ठस्तु मुनिराट मुनिभिः सह ॥
एकस्मिन्सचिवोद्यास्ते वहुभिः सचिवैः सह । २५॥

उन तीनों में से एक में सब मुनियोंके साथ मुनियों के राजा श्रीवसिष्ठ जी निवास करते हैं और एक में बहुत से मन्त्रियों के साथ प्रधान मन्त्री श्रीसुमन्त्र जी निवास करते हैं ॥२५॥

विराजते सुमन्तश्च श्रीमद्दशरथेन सः ॥
सममान्ये जनै र्योग्यो राजभि र्बहुभिस्तथा ॥२६॥

जो सुमन्त्र जी सब मन्त्रियों के द्वारा और बहुत से देश के आये हुये राजाओं द्वारा महाराज श्रीदशरथ जी की तरह से सर्वमान्य हो रहे हैं ॥२६॥

द्वयोर्मध्ये प्युच्चतमो विशेष रचनान्वितः ॥
तस्मिस्तु सखिभिः सार्द्धं वर वेषो महाद्युतिः ॥२७॥

इन दोनों के मध्य भाग में दोनों से ऊँचा रचना में सबसे अधिक एक महल है जिसमें बहुत से सखा राजकुमारों के साथ दुल्हा वेश में महान् प्रकाश करते हुए श्री राम जी निवास करते हैं ॥२७॥

अत्रापि लक्ष्मणो नैव खचितेसिंहासनो परि ॥
राजते चामरैश्छत्रैः सेवितो रघुनन्दनः ॥२८॥

उस महल के भीतर रत्न खचित सिंहासन के ऊपर बैठे हुए श्री राम जी की श्री लक्ष्मण जी आदि सब सखा वर्ग छत्र चँवरादि से सेवा करते हैं ॥२८॥

तत्र प्रातः समुत्थाय पूर्वां संध्या मुपास्य च ॥
सुमन्तो राम मालोक्य दृष्ट्या वात्सल्य वृत्तयः ॥२९

इस प्रकार महल में निवास करते हुए श्री सुमंत्र जी प्रात काल उठे; स्नान सन्ध्योपासनादि नित्य कर्म करके वात्सल्य स्नेह दृष्टि से श्रीराम जी को देखे ॥२९॥

शीघ्रं प्रयोज्य स्नानादि क्रियासु तस्य सेवकान् ॥
सांनिध्यं हि वशिष्ठस्य कृतप्रणामस्तदादृतः ॥३०॥

और श्री राम जी के स्नानादिक प्रातः कालिक क्रियाओं के लिए सेवकों को प्रेरणाकरके श्री बसिष्ठ जी के पास आए; प्रणाम किए; श्री वसिष्ठ जी ने भी आप का आदर किया ॥३०॥

बध्वाञ्जलिं च संभाष्य लब्धानुज्ञो मुनेस्तदा ॥
राजानश्चैव ये सभ्याः पौराश्चैव सुवान्धवाः ॥३१॥

और बैठनेकी आज्ञा दिए। इस प्रकार हाथ जोड़ करके मुनि महाराजसे आज्ञा पाकरके फिर बरातमें जो राजा लोग तथा सभ्य जन और पुरवासी बन्धु वर्ग सभी बरातियों को उचित कार्यों में नियोजित किए ॥३१॥

प्रतिहारैः समानीत्वा व्यवहाराय तेन च ॥
योजिताहि सभाचाग्रे सभास्थाने सुकल्पते ॥३२॥

महाराज सुमंत्र जी के प्रेरणा से प्रतिहारी लोग सबको बुलाकरके लाए। सबसे पहले एक सभा करके उस सभा स्थान में निश्चित विचार हो जाने पर आगे कार्य के लिए तैयार हो ही रहे थे ॥३२॥

प्रेषितो यायनस्यै व विनयेन निवेदितुं ॥
देवौजसा नृपेणाथ निपुणः सचिवोहियः ॥३३॥

कि उसी समय महाराज देवौज जो ने जो चतुर मंत्री को वरातियों के नम्रतापुर्व स्वागत के लिए नियुक्त किया था वह मंत्री ॥३३॥

तेनै व सचिवेनात्र सादिनः सुभयश्चये ॥
प्रेषिता समयं ज्ञातु मति वेग युतैर्हयैः ॥३४॥

आकर के उस वरायियों के निवास स्थान के वाहरी फाटक से द्वार रक्षकों को सभा में भेजा, वे दूत भी शीघ्र गति के घोड़ों पर वैठ करके सभा स्थान पर आए ॥३४॥

आगत्य निपुणै दूरात्समालोक्य समन्ततः ॥
जनानां पृच्छनवै सर्वं वृत्तंते च ततो गताः ॥३५॥

बड़े चतुर उन दूतों के दूर के आते हुए वरात की जनता ने उनसे पूछा उन दूतों ने भी सम्पूर्ण वृत्तान्त जहाँ से आए सब कहा ॥३५॥

तैश्च विज्ञापितोऽमात्यः सादिभिर्निपुणैस्तदा ॥
शीघ्रं चचाल सद्भिश्च वेष्टितो वहुभिर्जनैः ॥३६॥

उन वराती व्यक्तियों ने प्रधान मंत्री श्री सुमंत्र जी को भेट कराया। उन दूतों ने सव समाचर मंत्री जी से कहा। सुनकर मंत्री जी भी वहुत से सज्जनों को साथ लिए हुए उन मंत्री जी के स्वागत के लिए चञ्चल हुये ॥३६॥

प्राप्तोयदाहि जानस्य वस्त्र दुर्गस्य सत्प्रभम् ॥
द्वारं तदा च द्वारस्थैः शीघ्रमागत्य सूचितः ॥३७॥

और उन दूतों के द्वारा प्रकाशमान दुर्ग के वाहरी फाटक पर खड़े हुए मंत्री को शीघ्र सूचित किया ॥३७॥

तदा चात्र सुमन्तेन सादराय च सन्मुखं ॥
प्रेषिताः सभ्य सचिवास्तैः सभायां सुवेसितः ॥३८॥

तव तक श्री सुमंत्र जी ने भी आदर पूर्वक सन्मुख लाने के लिए अपनी सभा के सभ्य मंत्रियों को भेजा उन मंत्रियों ने देवौज जी के मंत्री का स्वागत सत्कार करके सभा में लिवा लाए ॥३८॥

विचक्षणो बृहत्याहि सभायां सोऽपि सत्क्रमात् ॥
वशिष्ठं च सुमन्तं च बंधश्लेष्य परस्परम् ॥३९॥

वे देवौज जी के मंत्री भी बहुत बड़ी महाराज वसिष्ठ जी और सुमंत्र जी की सभा को देखकर क्रमशः श्री वसिष्ठ जी को और श्री सुमंत्र जी को प्रणाम किए। परस्पर अङ्क आश्लेषण हुआ ॥३९॥

सभ्यान्वहू न्ववं दाथ दृष्ट्या हस्तानु भावतः ॥
समुत्थायादृतः सभ्यैः सुमन्ताग्रे च तिष्ठवान् ।४०॥

तत्पश्चात् बहुत से सभ्यजनों को भी दृष्टि के पात से अनुभावपूर्वक प्रणाम किया उन सज्जनों ने भी उठकर आदर किया उसके बाद सुमन्त्र जी के आगे वैठाए गये ॥४०॥

वध्वांजलिं स मतिमान्प्रणयान्मधुरं वचः ॥
उवाच देश कालज्ञः सुमन्तं सुविलोक्य च ॥४१॥

वे देवौज जो के मन्त्री बड़े बुद्धिमान नम्रता प्रणय शब्दों से देशकाल के अनुसार श्रीसुमन्त्रजी को देखकर बोले ॥४१॥

अमात्योवाच–यूयं खलु सपर्य्यार्हाः कृपया गमनं पुनः।
भवन्तो या दृशो देवा नवयं पूजका स्तथा ॥४२॥

हे महाराज ! आप सब तो महान हैं हम छोटे लोगों के यहां अहैतुकी कृपा से परिवार संयुक्त आपका आगमन हुआ आप जैसे उत्तम देवता हैं हम तैसे पुजारी नहीं हैं ॥४२॥

परन्तु भूषण स्थाने पुष्पैर्देवा न्प्रपूजयेत् ॥
नहि तेषां तु वित्तस्य तृष्णा भाव युषांकिल ॥४३॥

परन्तु जैसे देवताओं के लिये भूषणों के स्थान पर पुष्प दिये जाते हैं देवता भी धन तृष्णाभाव से रहित फूलों से ही भावपूर्वक पूजित हो जाते हैं ॥४३॥

तान्येव शुचि गन्धेन हीनानीश इव प्रभो ॥
गृह्णन्तु मेऽर्क पुष्पाणि स्वामिना ह्यर्पितानिवै ॥४४॥

तथा सुगन्धि व पवित्रता से रहित होने पर भी मदार के फूलों को हे प्रभो ! आप मेरे मदार के फूलों को स्वीकार कीजिये। ऐसा कहने वालों के फूलों को शङ्कर जी स्वीकार करके प्रसन्न हो जाते हैं उसी प्रकार आप सब हमारे स्वामी की सेवा से प्रसन्न होवें ॥४४॥

सुविनोतं वशिष्ठोपि सुमन्तोपि सभाजनाः ॥
अमात्यस्य वचः श्रुत्वा मुदं चैनं प्रसंशिरे ॥४५॥

इस प्रकार महाराज देवौज जी के मन्त्री की नम्रता पूर्वक वाणी को सुनकर श्री वसिष्ठ जी भी तथा सुमन्त्र जी और सभी सभाजन भी प्रसन्न होकर मन्त्री के शब्दों की प्रसंशा करने लगे ॥४५॥

लिपिं करास्तु सचिवा द्रष्टुं वस्तु समग्रकम् ॥
प्रेपिताश्च सुमन्तेन सेवकाश्रपि सुव्रताः ॥४६॥

और श्री सुमन्त्र जी ने आई हुई भेंट की सामग्रीके मैनेजरों से बात करने के लिये अपने सुन्दर व्रत वाले सेवकों को भेजा ॥४६॥

दृष्ट्वा दृष्ट्वा सुपत्रे तु यावत्सर्वं विचक्षणैः ।
लिखित्वा श्रावितं श्रुत्वा सभ्यैश्च वहु नामतम् ॥४७

उन सुन्दर व्रत वाले सेवकों ने भी मैनेजरों द्वारा प्राप्त हुई कापी में जितने भी सामानों को लिखा था उन सब सामानों को कापी के अनुसार मिलाकर देखा और सही दस्तखत देखकर के तथा सज्जनों को उस समाचार को सुनाया ॥४७॥

महार्हाणि सुवस्त्राणि काञ्चनं भूषणादि यत् ॥
खचितं च बहुमूल्यं तच्छभायां निदर्शितम् ॥४८॥

विसकीमतीय सुन्दर वस्त्र रत्न जटित स्वर्ण भूषण जितने भी हों उन सब विसकीमतीय पदार्थों को सभा में लाकर सबको दिखाया ॥४८॥

शिरः सम्पुट विश्लेषाज्जनानां दृष्टि रोधनम् ।
मयूखैर्भूषणानां तु सभायां कृत मद्भुतैः ॥४६॥

अद्भुत भूषणों से भरे हुए संदूक अपने सजावट के प्रकाश से जनों की दृष्टि को रोक रहे हैं ऐसे सन्दूकों को रखकर के सभा में लाये हुए नौकरों की बहुत भीड़ है ॥४६॥

तदा सुमन्तेन समस्त मेतत्प्रदर्शि तुं भूषण वस्त्र जातम् ।
रामः समानीत उपस्थितेन स्वस्यात्म जे नात्मजतः प्रियः सः॥ ५०

उस समय श्री सुमन्त्र जी ने समस्त वस्त्राभूषण सम्पत्ति की सुन्दरता को दिखाने के लिए उसी सभा में उपस्थित श्रीरामजी को पास बुलाया क्योंकि अपने प्रिय पुत्र से भी अधिक श्रीरामजी सुमन्त्रजी को प्रिय लगते हैं ॥५०॥

प्रेम्णां सुमंतेन सलक्ष्मणं च समागतं तु निवेश्य चाङ्के ॥
रामं विशालाम्बुज श्रोणिताक्षं निधाय सांनिध्य निवेदितंतम्॥ ५१

पास में आये हुए लक्ष्मण जी के साथ श्रीरामजी को जी ने प्रेम से गोदी में बैठाया। लाल कमल के सदृश विशाल नेत्र वाले श्रीराम जी के लिए उन आई हुई भेंट की समस्त सामग्रियों को निवेदित किया ॥५१॥

देवौजसोऽमात्य उदार रूपं रामस्य चालोक्य चमत्कृतिं गतः ॥
कस्मात्कुतः कुत्र किमर्थ मित्थं मनोमयं मूर्ति मयं बभूव ॥५२॥

महाराज देवौज जी के मन्त्री रूप की उदारता चमत्कार से चौंक कर श्रीरामजी को देखने लगे और मैं कहां से कहां पर किस लिये आया हूं ? मैं कौन हूँ ? यह सब भूलकर श्रीरामजी के दर्शन तदाकार सुमनोमय मूर्तिमय होगए ॥५२॥

सभा प्रवेशाद्रघुनन्दनस्य यदुत्थितं चोत्थित मेवतेन ॥
पुनर्न चेतः स्थित मुत्थितम्वा निमेषहीनत्व मुपेत्य नेत्रे ॥५३॥

श्रीरघुनन्दन जी के सभा में प्रवेश करने से जो खड़े थे खड़े रह गये फिर उनको मैं खड़ा हूँ या बैठा अपने शरीर की चैतनता न रह गयी, निमेषहीन नेत्रों से श्रीरामजी को देखने लगे ॥५३॥

प्रेम्णो विलोक्यास्य दशां च सद्भिर्जाड्यं तनौ चेतसि मोदमात्रम्॥
विधायिनीं स्थापित आसनेसः करौ गृहीत्वा तु बृहत्सभायाम्॥५४

सज्जनों ने देवौज जी के मन्त्री के शरीर में जड़ता चित्त में केवल आनन्द मात्र इस प्रकार की दशा को देखा तो हाथ पकड़ करके उस महान सभा के बीच में उचित स्थानमें विधान पूर्वक बैठाया ॥५४॥

ततो विलम्बेन सलब्ध संज्ञो विचिंत्य चेवात्मनि कार्य्यभारम्॥
पुनः पुनः प्रांजलिना प्रणम्य मुनिं सुमन्तं च समस्त सम्यान्॥५५

इसके बाद बहुत देरी में मन्त्री जी होश में आये मेरे ऊपर बहुत बड़े कार्य का भार है ऐसा विचार करके बार २ हाथ जोड़ करके श्री वसिष्ठ जी औ श्रीसुमन्त जी को तथा समस्त सभ्यजनों को प्रणाम किया ॥५५॥

विलोकनं स्मेरशुभाषणञ्च हस्तानु भावं पदयोः क्रमश्च ॥
मूर्ति मनोज्ञं रघुनन्दनस्य निधाय स्वान्तःकरणे सु प्रीत्या ॥५६॥

मन्द मुसुकाते हुए प्रसन्न मन सबको देखकर के अपने हाथोंके अनुभाव से सुहराते हुए सबका दर्शन किया, भाषण किया, अपने अंतःकरण में अतिशय अनुराग पूर्वक अतिमन रमणीय श्रीरघुनन्दन जी की मूर्ति को अंतःकरण में धारण किये ॥५६॥

जनैरसंख्यैः परिवारित श्चगजेन शीघ्रं बहु कार्य्य कारी ॥
ययौ महोत्साह मनाः पुरं तद्दिशो दशाप्ते किल तुर्य्यनादे ॥५७

उसके बाद असंख्य सेवकों से घिरे हुए सरलता से बहुत कार्यों को शीघ्र करने वाले मन्त्री जी महान उत्साहित मन होकर के दशो दिशाओं में तूरी आदिक बाजाओं का महान् नाद जहां छा गया है उस अपनी नगरी में प्रवेश किये ॥५७॥

आद्य दृशी यस्य कृतेः प्रवृत्तिः स्वर्णै र्नभश्छादित मात्मशक्त्या ॥
तस्योत्तराकैः किमुवर्णनीया सभ्यास्तदेत्थं नृपतिं प्रशंशुः ॥५८॥

जिनकी आत्मशक्ति से आकाश स्वर्ण से छा गया जिन श्रीरामजी के लिए प्रथम ही इस प्रकार की प्रवृति हो गयी वे राम जिनके घर में आरहे हैं उनके चरित्रों को अब क्या वर्णन किया जा सकता है इस प्रकार सभ्य लोग महाराज देवौज जी की प्रशंसा करने लगे ॥५८॥

उपाय नार्पितोमात्ये गते देवौजसस्ततः ॥
सुमन्तेन च वशिष्ठेन भोजनाय स वेलतः ॥५६॥

मन्त्री जी उपायन भेंट वर के लिए समर्पण करके अपने राज दरबार में लौट जाने पर इधर सुमन्त्र जी और श्रीवशिष्ठ जी ने भोजन का समय जान करके ॥५६॥

प्रयोजिता जनाः सर्वे तेषां तेषां निवासके ॥
प्रेषितं मिष्ठ पक्वान्नं यदद्यैव च ह्यागतम् ॥६०॥

सभी बरातियोंके निवास स्थानमें मिष्ठ स्वादिष्ट पकवान पकवान बहुत प्रकारके जो अभी ताजे आये थे सबके पास स्थान २ में भेज दिये ॥६०॥

ते सर्वेपि च मिष्ठानं स्वादु स्वाद्विति शंशयन् ॥
भुक्त्वा भुक्त्वा च मध्यान्हे ताम्बूल माध्य सुष्वपुः॥६१

वे सब बराती लोग भी बहुत मीठा है बहुत मीठा है ऐसी प्रशंसा कर करके स्वाद ले लेकर के भोजन किये इस प्रकार मध्याह्न कालिक भोजन होने पर पान पाके विश्राम कर गये ॥६१॥

अथ यामैक शेषे तु दिवसे ... सूचनाय च ॥
स्वर्ण दण्ड धरा दासाः प्रतिवासं सहस्रशः ॥६२॥

एक याम दिन शेष रहने पर सबको सूचना देने के लिए स्वर्णदण्ड धारी दास हजारों की संख्या में सब बरातियों के पास प्रत्येक के निवास स्थान में गये ॥६२॥

सज्यतां सज्यता मुच्चैः शीघ्रं शीघ्रं च सज्जनाः ॥
दिव्य भूषाम्बर धराद्गृणन्तोपि च बभ्रमुः ॥६३॥

हे सज्जनों ! शीघ्र तैयार हो जाइये, शीघ्र तैयार हो जाइये,—इस प्रकार ऊँची आवाज देते हुए दिव्य बस्त्र भूषणधारी बोलते हुये भ्रमण कर रहे हैं ॥६३॥

श्रुत्वा श्रुत्वा जनाः सर्वेद्वास्थाना मुच्च शब्दकम् ॥
कृत्वा रथैश्च डयनैरश्वैश्च नाग जानकैः ॥६४॥

सब बराती जन भी इन द्वारपालों के शब्दों को सुन २ करके अपनेर रथ, पालकी, घोड़े, हाथी, यान सबको सज २ करके ॥६४॥

नागैरपि बिमानैश्च नाना भूषण भूषितैः ॥
परितः संस्थिताः सर्वे समैव्यूहं यथा क्रमात् ॥६५॥

हाथियों के ऊपर नाना भूषणों से भूषित हौदाओं को कस २ करके तथा सभी सवारियों से और अपनी सजावटों यथाक्रम व्यूहाकार सबके सब तैयार होगये ॥६५॥

तद्दृष्ट्वा तु सुमन्तेन श्रीरामोवर भूषणः ॥
उच्चैरिभस्थ आनीतो देहे ह्यात्मेव चिद्वृत्तिः ॥६६॥

श्री सुमन्त्र जी ने सबकी इस तैयारी को देखकर दुलहा वेष में शृङ्गार हुए श्रीरामजीको ऊँचे हाथी के हौदा में लाकर बैठाया क्योंकि अपने आत्मज पुत्र की सी वृत्ति से सुमन्त्र जी का स्नेह है ॥६६॥

च चाल यानं सहसा मुखेभ्यः —
शेषस्य जिह्वाद्वि सहस्रमुग्रम् ॥
अतीवभारा न्निसृतो वहिस्तु —
रामस्य नागाश्वरथाकुलं तत् ॥६७॥

बरात के अगुआ लोगों के चलने पर दो हजार उग्र जिह्वा वाले शेष जी का सिर सहसा डोल गया, जीभें मुखों से बाहर निकलीं क्योंकि श्रीरामजी के बरात के हाथी घोड़े रथ आदि सम्पूर्ण बरात के भार शेष के सिर में अतिशय भार होगया ॥६७॥

अश्वानां च खुरैश्चक्रैः रथानां पाद चारिणाम् ॥
आकाशमावृत्तं पादै रुत्थितै र्बहुरेणुभिः ॥६८॥

घोड़ों के खुरों से, रथों के पहियों से, पैदल सेना के चरणोंसे उठे हुए धूल ने आकाश को चारों तरफ घेर लिया ॥६८॥

दिशश्च पूरिताः घोषै र्वाद्यानां घन नादिनाम् ॥
न शृण्वन्ति समापेपि भाषमाणाः पर स्परम् ॥६९॥

बाजाओं की सघन आवाज ने दशों दिशाओं को गुञ्जित कर दिया। परस्पर बातचीत करने वाले समीप में बात करने पर भी नहीं सुन पाते हैं ॥६६॥

जाते वंश प्रदीपानां क्षणैकत्र निशामुखे ॥
क्षितेर्निः सृत्यक्षितिजैः गगने किं कृता सभाः ॥७०॥

शाम के समय वंश दीपों से आकाश में इकट्ठे होने पर ऐसी शोभा होती है कि जैसे मानों पृथ्वी में हजारों मंगल ग्रह उत्पन्न होकर के क्या आकाश में सभा लगाये हैं? ॥७०॥

उत्थाने ज्वलितानां तु बहु क्रोशान्तरे तदा ॥
इत्थं शोभा ह्याविरासी त्तत्किं केनापि कथ्यते ॥७१॥

जलते हुए उन वंश दीपों के उठा लेने पर बहुत दूर कोस पर्यन्त ऐसी अद्भुत शोभा होती है कि उसको कौन क्या कह सकता है ॥७१॥

वंदिनां प्रति हाराणां वाद्य घोषान्महोच्चक नु॥
कोलाहलं मनुष्याणा मतीत्य मूर्छितागिरः ॥७२॥

बन्दी और प्रतिहारियों के वाजाओं का घोष महान् ऊचा उठा हुआ मनुष्यों के कोलाहल को भी अतिक्रमण करके दिशाओं को मूर्छित कर रहा है ॥७२॥

विदधु र्वारवध्वश्च जनैर्वाह्ये सहस्रशः ॥
विमाने काञ्चने शोभां नर्त्यंत्यो यत्र तत्र च ॥७३॥

इसी प्रकार हजारों जनों से ढोये गये यान में वार वधूओं का संगीत कल्लोल उस स्वर्णविमान में अत्यन्त शोभित हो रहा है इस प्रकार के वार वधुओं का नृत्य उस बरात में जहां तहां होरहा है ॥७३॥

जटादि संस्कृताश्चान्ये चतुराणां भ्रमंकराः ॥
यानस्थाश्च कौतुकेन पश्यतां बहुरूपिणः ॥७४॥

और इसी प्रकार जटा आदिकों से सजे हुए अंग वाले, चतुरों को भी भ्रमित करने वाले बहु-रूपिया लोग भी इसी प्रकार विमानों में बैठे हुए कौतुक कर रहे हैं। सभी बराती लोग देख करके अति प्रसन्न हो रहे हैं ॥७४॥

अथेत्थ मुच्च हर्म्याणां भूषिताया मनोहाराः ॥
कलशैर्ध्वज संघेश्च पुर्य्याः परम हर्षिताः ॥७५॥

इस प्रकार आती हुई बरात के नन्दिका नगरी के ऊचे महलों में कलस ध्वजा समूहों से सजी हुई नगरी में सुन्दर भूषित अङ्ग वाली मनोहर स्त्रियायें देखकर अतिशय हर्षित हुई ॥७५॥

सन्मुखं तु समाने तु निः सृताः वर जानकम् ॥
सुसज्य कौतुका संख्ये राज्ञः पौराश्च बान्धवाः ॥७६

बरात के सन्मुख स्वागत करने के लिए महाराज देवौज जी ने तथा पुरवासी बन्धु वर्गों ने असंख्य कौतुकों को सजा करके सामने रक्खा है ॥७६॥

भ्रातादेवौजसः साक्षात्सुबली गज वाहनः ॥
पुत्रौ स्वयं च भ्रातुश्च यो मुख्यः सचिवो महान् ॥७७

महाराज देवौज जी के साक्षात भाई श्री सुखेली जी हाथी पर चढ़ करके और अपने भ्राता के पुत्रों को तथा प्रधान मन्त्रीको साथ लेकरके ॥७७॥

सुवाहना भूषिताश्च पौराये राज मान्यलाः ॥
वाग्मितः शोभनाः सर्वेस्वादरे निपुणः सताम् ॥७८॥

और भी राजमान्य लोगों को तथा नागरिक के प्रधान लोगों और विद्वान् चतुर बोलने वालों को जो कि सबके आदर करने में निपुण सन्त हैं उनको साथ लेकर ॥७८॥

स्वयं देवौजसा राज्ञा महता माद्दतु यथा ॥
तथा कारं प्रेषितास्ते सम्यग्व्यवसिताहिये ॥७९॥

जिनका महाराज देवौज जी को स्वयं स्वागत करना चाहिये इस प्रकार के अपने आत्मीय जनों को सम्यक प्रकार सब इन्तजाम के साथ निश्चित होकर देवौज जी भेजा ॥७९॥

अथ दूरादुभयतो मुदा चन्द्र करा इव ॥
दृष्ट्वा च दृष्टय स्तेषां प्रसृताश्च परस्परम् ॥८०॥

इन भेजे हुए लोगों ने तथा उधर से वराती लोगों ने दोनों तरफ की दोनों तरफ जनता ने चन्द्रमा के किरणों की तरह प्रकाश करते हुए देखा। देखने वालों की परस्पर चकाचौंधी हो रही है ॥८०

क्षणेन सविधं प्राप्ताः शीघ्रं प्रेरित वाहनाः ॥
अवतीर्य्यावतीर्य्याथ मिमेलुश्च परस्परम् ॥८१॥

अपने समाज की सवारियों को शीघ्र प्रेरणा करते हुए एक क्षण में दोनों बरातें परस्पर विधान पूर्वक प्राप्त होगयी। अपनी सवारियों से उतर २ करके परस्पर दोनों पार्टियों के लोग मिल रहे हैं ॥८१॥

द्वयोर्मध्ये सेनयो स्तु विस्तृता स्तरणं वृहत् ॥
विस्तारितं च तत्रैव मुख्या येऽत्र च तत्र च ॥८२॥

दोनों तरफ के वरातियों के मध्य विस्तार पूर्वक भूमि में बिछावन बिछे हुए हैं। उन बिछावनों पर मुख्य लोग जो जो जहां के हैं अपने २ समाज का विस्तार विधान उचित रूप में कर रहे हैं ॥८२॥

मुहूर्त्तमेक मास्थाय सं स्वज्यैव परस्परम् ॥
आप्रच्छ्य कुशले प्रष्ण मनु मोदेन वार्त्तया ॥८३॥

परस्पर आलिंगन करके एक मुहूर्त तक तो प्रसन्न स्थिर रहकर फिर परस्पर कुशल प्रश्न अति अति आनन्द पूर्वक बातें हुई ॥८३॥

ततः सर्वे मिलित्वातु चचालाग्रे सुवाहिनी ॥
प्रदीपानां महज्जाते प्रकाशे चाति विस्तृते ॥८४॥

इसके बाद सब कोई मिल जुल करके बरात को आगे चलाये मार्ग में दीप वृक्षों का महान प्रकाश अति विस्तार है ॥८४॥

अथोच्च हर्म्येषु च हेम पात्रे निरीक्ष्य रामं गज संस्थितं च॥
नार्य्यास्तु वामेपि च दक्षिणे तेलाजान्ववषुश्च नीराजयंति ॥८५॥

इस प्रकार नन्दिका नगर में बरात के पहुँचने पर ऊँचे २ दोनों तरफ के स्वर्ण महलों में स्वर्ण पात्रों में मांगलिक साजों को सजी हुई नारी गज हाथी पर चढ़े हुए दुलहा वेष में श्रीरामजी को देखकर दाहिनी और बायीं तरफ से लावा बरषाती हैं, आरती करती हैं ॥८५॥

इत्थं पुरस्त्रीभिरनंगएव नीराजितस्तद्धृदयानु भावैः॥
विवेशवासं श्वसुरेण दत्तं महार्हरत्नैः परितः प्रकाशम्॥८६

साक्षात् कामदेव के समान श्रीरामजी को देखकर नगर की स्त्रियों ने अपने हृदय के अनुभाव पूर्वक इस प्रकार आरती करके इसके बाद श्वसुर के द्वारा दिये हुए बिसकीमतीय रत्नों से चारों तरफ से प्रकाशमान जनवासे में प्रवेश किया ॥८६॥

अथामात्यैः प्रतिहारैः सर्वेषां च यथा यथं॥
राज्ञामपि च सर्वेषां निवासायांशुका गृहाः ॥८७॥

मन्त्रियों ने और प्रतिहारियों ने तथा अन्य माण्डलिक राजाओं ने बरात में आये हुये सभी लोगों का यथा योग्य सबका सत्कार करके जनवासे के अन्दर वस्त्रों के महलों में ठहराया ॥८७॥

मञ्चपर्यङ्क पीठादि भोज्य पानादि संभृतः॥
निर्दिष्टाः स्वादरेणव निपुणै सेवकै युताः। ८८॥

प्रत्येक बराती के स्थान पर कुर्सी पर्यंक स्टूल और भक्ष, भोज्य, पानादिक पदार्थ यथा योग्य आदर से चतुर सेवकों द्वारा सब बरातियों को उचित रूप में प्राप्त हुए ।८८॥

सुखेनतेपि सद्वासं लब्ध्वाहि विगतश्रमाः॥
प्रशंसुर्नृपतिं सर्वे महाभागं धनायतम् ॥८६॥

बराती लोग भी सुन्दर निवास स्थान को प्राप्त करके अति सुख पूर्वक श्रम से रहित हुए। सब के सब श्रीदेवौज महाराज के विस्तार धन और महाभाग्य की प्रशंसा करने लगे ॥८६॥

इत्यन्तरे महाराजो महामान्येन साधुभिः॥
देवौजा विप्र वृन्देन सेवितो बहु राजभिः ॥६०॥

इसी बीच में बहुत से सन्त ब्राह्मण वृन्द तथा मान्य वर्गों से और राजाओं से घिरे हुए ॥६०॥

समादतुं समागत्य वर जानेहि सज्जनान्॥
प्रथमं च वशिष्ठं स ववन्दे विनयान्वितः ॥६१॥

बरातियों के स्वागत के लिये जनवासे में आये। प्रथम बड़ी नम्रता पूर्वक श्रीवशिष्ठ जी को प्रणाम किया। ॥६१॥

ततः परं कौशलेश प्रतिमंराम वत्सलं॥
नत्वा सुमन्तं प्रीत्या च समास्वज्य परस्परम् ॥६२॥

उसके बाद महाराज श्रीकोसलेश जी के प्रतिनिधि श्रीरामजी में अत्यन्त वात्सल्य रखने वाले श्रीसुमन्त्र जी को बड़े प्रेम से नमस्कार किये, परस्पर आलिंगन हुआ ॥६२॥

सभ्यानपि यथा योग्यं नत्वा चाश्लिष्य सन्मतः ।
सर्वैश्चै वादृतः श्रीमानासने दिष्टितः स्थितः ॥६३॥

उसके बाद सभी सज्जनों को यथा योग्य आलिंगन, सबके द्वारा सन्मान आदर प्राप्त करके दिव्य महान् शोभा सम्पन्न आसन पर सबके द्वारा आज्ञप्त होकर के बैठे ॥६३॥

ततश्च निपुणो वाग्मी कृतज्ञो गुणवान्कविः ॥
उवाच वचनं राजा समानीय करा वुभौ ॥६४॥

उसके बाद बड़ी निपुणता पूर्वक सुन्दर बोलने वाले बड़े गुणवान कवि दूसरे के उपकार को जानने वाले महाराज देवौज जी दोनों हथ जोड़ करके इस प्रकार बोले ॥६४॥

धृतो हं मूर्ध्नि युष्माभि स्तृण वद्गिरिभि र्यथा ॥
तत्कथं स्तौमि हेदेव वाग्विचै रपि दुर्बलः ॥६५ ।

कि आप लोगों ने मेरे को उसी तरह से अपना लिया जिस तहर से पर्वत अपने सिर पर घास को रख लेते हैं। हे देव ! धन और वाणी से अत्यन्त दुर्बल मैं आपकी कैसे स्तुति करूं ॥६५॥

प्रति कर्तुं प्रभुर्नाहं भवतां मयियत्कृतिः ।
लब्ध प्रकाश पद्मं हि रवे रूपं करोतिकिम् ॥६६ ।

आपने मेरे ऊपर जितनी कृपा की उसका प्रति उपकार करने को मैं समर्थ नहीं हैं। सूर्य से विकाश को प्राप्त हुआ कमल का सूय का क्या उपकार कर सकता है॥६६॥

सतामचिंत्य चरित मनिष्ट मिष्टतां व्रजेत् ॥
चकार योगिनां ध्येयं छारं विषधरं विषम् ।६७॥

सन्तों के चरित्र से तो अनिष्ट भी बहुत मीठेपन को प्राप्त हो जाता है जिस तरह से शङ्करजी ने विषधर सर्पोको और भस्मको अपने शरीरमें लगाकर योगियों से ध्यान करने योग्य बना दिया ॥६७॥

संसर्गे शोच्च तां याति संसर्गेणाध एव च ॥
वायुना मेरु शिषरं रजोधो याति वारिणा ॥६८॥

सज्जनों के संसर्ग से उच्चता और अधमों के संसर्ग से नीचता यह ऊँच नीच का कारण संग ही है। जिस तरह से धूल वायु के संग से सुमेरु पर्वत के शिखर पर और जल के संग से नीचे गडढे में पहुँच जाती है ॥६८॥

मन्नि मित्तं दूर देशा च्छ्रमेण गमनं हि यत् ॥
सेवया सेवकस्यैव तद्यथा हि निवर्त्तते ॥६९॥

मेरे निमित्त बहुत से बड़े परिश्रम करके जो आप लोग आये हैं सेवक का उसी तरह से सेवा करने से प्रति उपकार हो सकता है ॥६९॥

तत्रा हं सेवनेनाथ सर्वथा हीन शक्तिकः ॥
केवलं तुष्यतां देव ह्यपराधस्य भाजने ॥१००॥

परन्तु हे नाथ ! मैं तो उस सेवा के स्थान में भी सर्वथा हीन शक्ति का हूँ। बहुत बड़े अपराध का पात्र मैं हूं हे देव ! केवल अपने स्वभाव से ही मेरे अपराध को क्षमा करके सन्तुष्ट हो जाय ॥१००॥

इत्थं विनीत वचनैः स्वात्म कीर्ति विधावकैः ॥
सभा प्रसादयं स्तैश्च शृण्वन्स्वात्म प्रशंसया ॥१०१॥

इस प्रकार अपनी कीर्ति को बढ़ाने वाले विनीत वचनों से सारी सभा को प्रसन्न कर दिया। सब बरातियां ने भी अपनी प्रशंसा को सुनकर के महाराज देवौज जो की प्रशंसा की ॥१०१॥

पूर्वां गिरं तु नृपतिः समाजेन स्व मन्दिरं ॥
यामैक विगतायां तु रात्रौ सर्वान्प्रणम्य च ॥१०२॥

महाराज देवौज जी भी इस प्रकार सन्मान पा करके सबको प्रणाम करके अपने समाज सहित अपने समाज में चले गये। इस प्रकार एक याम रात्रि बीत गयी ॥१०२॥

आजगाम प्रसन्नात्मा ततः सर्वैर्जनैः सहः ॥
कृत्वा सुभोजनं रामो वशिष्ठेन च बन्धुना ॥१०३॥

इधर बराती लोग भी प्रसन्न मन होकर अपने स्थानों में तथा श्रीराम जी व श्रीवसिष्ठ जी मन्त्री जी आदि बन्धु वर्गों के सहित सुन्दर तरह से भोजन किये ॥१०३॥

सुमन्तेन परं स्वादु श्वशुरेणात्र प्रेषितम् ॥
सुष्वाप नर्म्मशय्यायां सेवकैः परिषेवितः ॥१०४॥

इस प्रकार श्वसुर द्वारा भेजा हुआ स्वादिष्ट भोजन को पाकर के सेवकोंसे सुन्दर से सेवित हो करके सबके सब नर्म शय्याओं में शयन कर गये ॥१०४॥

वैतालि कास्तं गुणीनः प्रभाते स्वरैर्मनोज्ञैर्यशसां सुगानम् ॥
वीणा सुकांश्यै स्त्वरुणोदयेग्रे कुर्वन्ति तालैश्च विनिद्रयंतुम् ॥१०५

प्रातःकाल गाने वाले गुणी लोग विविध प्रकार के मन रमणीय राग तानों से यश कीर्ति का गान करते हुए वीणा मृदंग झाल वंशी आदि बाजाओं से सुन्दर ताल पूर्वक गा करके अरुणोदयके समय में निद्रा रहित किये ॥१०५॥

उत्थाय चा वेद्य नरेन्द्रसूनो दिशं विलंघ्याथ दिनेश व्याजात् ॥
तवानन स्पर्द्धि मयङ्क मल्पम्प्राची प्रतापः प्रबलः समुत्थः॥१०६

गाने वालों ने गीत में यह कहा है कि हे नरेन्द्रकुमार सूर्य के बहाने आपका प्रबल प्रताप आप के मुखचन्द्र की वृद्धि कामना से कुछ देर दिशाओं में रुक करके फिर उदय हो रहा है, आप देखिये॥१०६

दिशः प्रधावन्ति वयोविहाय वृक्षेशयावास गृहान्तु निद्राम् ॥
गायन्ति ते राघव सद्गुणांश्च कञ्जे शयाः षटपद राजयोघः॥१०७

वृक्षों में शयन करने वाले पक्षी लोग अपनी निद्रा और निवास स्थान को त्याग करके दशों दिशाओं में दौड़ रहे हैं और आपके गुणों को गा रहे हैं इसी प्रकार हे राघव ये कमलों पर शयन करने वाले भ्रमर भी आपके सद्गुणों को गा रहे हैं ॥१०७॥

पुष्पाणि संस्पृस्य सुफुल्लितानि प्रशंसरे त्सौरभ शीलिताश्च ॥
तथापि ते पद्म मुखानुसर्गा द्विशेषते चुस्तु विभाति वायुः॥१०८॥

यद्यपि खिले हुये पुष्पों के स्पर्श से पराग और सुगन्धि द्वारा ये भोरों और वायु लथपथ भी हो रहे हैं तो भी आपके मुख कमल के संसर्ग की विशेषता से लालायित हो रहे हैं ॥१०८॥

निशा मयङ्केन सुखं रमन्ती निरीक्ष्य ते राघव सप्रतापम् ॥
भ्रमं विधायेति रविः किमुत्थो द्रुतारुणाख्यं वसनं खलंती॥१०६

हे राघव ! यह अरुण नाम वाली प्रीति रात्रि में चन्द्रमा के साथ सुख पूर्वक रमण करती हुई प्रातःकाल आपके प्रताप को देख रही है और क्या यह सूर्य तो नहीं उदय हो रहा है इस प्रकार के भ्रम को मन में पैदा करके यह अरुण अनुराग रूपी नायिका सूर्य रूप नायक से विलास करने के लिए दिशाये रूप वस्त्रों को खोल रही है ॥१०६॥

सुपालिता दृष्टिकरे स्पृशाभ्यां गजाहया राघव शोभनास्ते ॥
प्रसह्य वन्धान्सुमुमोचयन्ते तान्वीक्ष्य चोत्थाय मनोहराङ्ग॥११०

आपकी दृष्टि और हाथों का स्पर्श प्राप्त किये हुए जो ये हाथी घोड़े हैं ये हे राघव ? आपसे सुन्दर पालित होने से असह्य हुए इस वन्धन से मुक्त हो रहे हैं। हे मनोहराङ्ग ? आप उठिये और इनको देखिये ॥११०॥

ईर्ष्यन्तिशय्या मपि पक्षिणस्ते सूत्रेण हेम्मस्तु निवद्ध पादाः ॥
गृहीत हस्तात्शुचि सेवकानां तान्वीक्ष चोत्थाय सुखेल स्वेलान् ११९

हे मनोहराङ्ग ये ! स्वर्ण के सूत्र से बँधे हुए चरण वाले आपके पवित्र सेवकों से पकड़े गये पक्षियां भी आपको शय्या का डाह कर रहे हैं। आप उठिये इनके खेले हुये खेलों को देखिये ॥१११॥

त्वद्दर्शनस्पर्शन वाक् सुखेन प्रतोपिताः सेवक जातयस्ते ॥
वस्त्राणि दिव्यासन वीटिकाद्यं गृहीतहस्ताहि विलोकयत्वम्॥११२

आपके दर्शन स्पर्श वाणी के स्वाद के सुख से सन्तुष्ट हुए जितने भी आपके सेवक जाति के हैं वे सब दिव्य वस्त्र, दिव्य भोजन, दिव्य पान वीणादिक अपनी २ सेवा की सामग्रियों को हाथों में लिए हुये खड़े हैं आप उठकर इनको देखिये ॥११२॥

सुवर्ण पुंखेपत्र एष चापौ निहत्य शत्रूंश्च करात्मका स्ते ॥
निशा वियोगास्तु करस्य तेद्यः संश्लेषमिच्छन्ति सुभूपितस्य॥११३

यह स्वर्ण की पांख वाले वाण और धनुष आपके करकमल के स्पर्श से सुखी होनेवाले शत्रुओं का नाश करके अब इस रात्रि में आपके करकमलका वियोग पाकर सुन्दर भूषितांग हुये आपसे आश्लेषण चाह रहे हैं ॥११३॥

प्रफुल्ल कञ्जायत लोचनं त्वां पर्वेन्दु दर्पघ्न मनोहरास्यम् ।।
आलिंगितुं स्मेर हँसत्सु वाग्मिश्चोत्कण्ठितास्ते कुशलाः सखायः११४

शरद पूर्ण चन्द्र के मानमर्दन करने वाला आपका महोहर मुखचन्द्र खिले हुए कमल सदृश विशाल नेत्र वाले मन्द मुसुकाते हुए सुन्दर वाणी से बोलते हुए आपको आलिंगन करने के लिए अति कुशल जो आपके सखा वर्ग हैं वे अतिशय उत्कण्ठित हो रहे हैं ।।११४।।

गुरु र्वशिष्ठोऽपि सुमन्त एषः सखापितुस्ते शुचि वत्सलोऽसौ ।।
त्वय्येव तौ तोषय दर्शनेन मान्यौ त्वया शीलवतो पितेव ।।११५।।

ये श्रीगुरू वशिष्ठ जी महाराज तथा आप में जो पवित्र वात्सल्य रखने वाले आपके पिता के सखा ये श्रीसुमन्त्र जी भी आपके द्वारा सुन्दर शील आदिकों से आदरणीय हैं आपके दर्शन से ही ये सब लोग सन्तुष्ट होंगे, आप सबको सन्तुष्ट कीजिये ।।११५।।

सुराधिपस्यापि गतेर्कवंश्याञ्च गीयते स्माभिरसद्यशस्कं ।।
पीत्वा सुधां किं लवणाम्बु पानं करोत्यभद्रं भुवनेश सूनो ।।११६

हे भुवनेशकुमार ! सूर्यवंशियोंके गीतोंको गाने वाले हम लोग आपका गान करने के बाद फिर हम इन्द्र का भी गान नहीं करेंगे क्योंकि अमृत का पीने वाला क्या असत् यश रूप अभद्र खारे समुद्र के जल का पान करेगा ? [अर्थात् नहीं करेगा] ।।११६।।

इत्थं सदर्थाचित पाद बद्धा श्रुत्वा जजागार गिरं च तेषाम् ।।
निर्मीलनोन्मीलन नेत्रशोभी जृंभाङ्ग कृष्ट्या स जयत्यनंगम्।।११७

इस प्रकार सुन्दर अर्थों से भरे हुए पाद बद्ध छन्दों से गाये हुये उन गायकों के गीतों को सुन कर श्रीरामजी जागे । नेत्रों को खोलते बन्द करते हुए तथा अद्भुत शोभित जमुहाई लेते हुए श्रीरामजी कामदेव को आकर्षित करके जीत रहे हैं ।।११७।।

उत्काक पक्षा वृतगण्ड मण्डलं नाशाग्र मुक्ता फल लम्बिताधरम्।।
हँसल्लशद्रक्त रदालि भासं रामो ददर्शात्म मुखं सुदर्पणे।।११८

सिर के काक पक्ष सदृश बालों से भूषित कपोल वाले और नासिका में मुक्ता फल के अधरों में झलकते हुए मन्द मुसुक्यान में दांतों की अरुणिमा भ्रमरों की तरह से झलक रही है । इस प्रकार के अपने मुखचन्द्र को श्रीरामजी सुन्दर दर्पण में देख रहे हैं ।।११८।।

धृत्वा शिरोवेष्टन सुप्रदीप्तं स्कन्धेविधायेकऽनुपीत वासः ।।
साधारणा भूषितपादहस्त स्ते नाधिकं मोहित मोहनाङ्गः ।।११६।।

इसके बाद सिर में सुन्दर प्रकाशमान पाग को धारण किये और कन्धे में सुन्दर पीत वस्त्र को धारण किये तथा साधारण भूषणों को हाथ पांवादि अंगों में धारण किये इस प्रकार अपने अंग से अनङ्ग को भी मोहित किये ।।११६।।

स्मृत्वा वशिष्ठं च सुमन्त मात्मनि सद्वत्सलैकान्त निबद्ध भावकम्।।
तौ वन्दितुं शीघ्र गतिं चचाल सः सलक्ष्मणो संख्य जनानुभावितः।।१२०

और श्रीवसिष्ठ जी को और श्रीसुमन्त्र जी को तथा अपने में वात्सल्य भाव रखने वाले एकान्तिक स्नेह में बँधे हुए भाव वाले स्नेहियों को स्मरण किये, और श्रीवसिष्ठ जी श्रीसुमन्त्र जी दोनों को प्रणाम करने के लिये शीघ्र गति से आसन पर से उठे और श्रीलक्ष्मण जी के सहित बहुत से दौड़ने वाले सखाओं के सहित श्रीरामजी श्रीवशिष्ठ जी को व श्रीसुमन्त्र जी को प्रणाम किये ॥१२०॥

नत्वा सुभावेन गुरोः पदाब्जयो लब्ध्वाशिषं सर्वमनोरथ प्रदाम्।
ततः सुमन्तस्य सुनीउ मंसुकं विवेशगेहं ह्यनुजेन राघवः ॥१२१॥

सुन्दर भाव से गुरु महाराज के चरणों में प्रणाम करके सब मनोरथों को सिद्ध करने वाले आशीर्वाद को प्राप्त करके उसके बाद श्रीसुमन्त्र जी को प्रणाम करने के लिए अपने अनुजों के सहित श्रीरामजी सुन्दर शोभायमान वस्त्र के महल में प्रवेश किये ॥१२१॥

कृतप्रणामं तमवेक्ष्य रामं शीघ्रं समुत्थाय स लक्ष्मणं च ॥
आश्लिष्य तेनापि निधाय चांके सुलालितौ हर्ष भरात्मनातौ॥१२२

श्रीमन्त्री जी ने लक्ष्मण जी के सहित श्रीरामजी को प्रणाम करते देख करके शीघ्र उठाया। अपनें कण्ठ से लगाकर गोदी में बैठाये, आत्मा में महान् हर्ष भरे हुए दोनों कुमारों का खूब लाड़ प्यार किये ॥१२२॥

सुमन्तोवाच—हे राम हृदया कर्षो लाल मे धनिनोधनम् ॥
तथा त्वं लक्ष्मणश्रामी त्सुमित्रानन्द वर्द्धनः॥१२३
कौशल्यानन्दन श्रीमान् सर्वदा तेस्तु मङ्गलम् ॥
अप्रमेयगुणाराम राम राजीव लोचन ॥१२४॥

श्रीसुमन्त्र जी बोले हे लाल! जिस प्रकार से धनिकों के मन को धन आकर्षित करता है उसी तरह सुमित्रीनन्द वर्धन इस लक्ष्मण जी के साथ आप मेरे मन को आकर्षित करते हैं। हे कौशल्यावर्धन आप सर्वदा के लिये श्रीमान् होवें, आपका मङ्गल हो, अनन्त अप्रमेय गुणों में आराम करने वाले हे राजिव लोचन राम! आप सुखी होंवें ॥१२४॥

साध्वी जनक पुत्रो ते करोतु सर्वदा प्रियम् ।
अमत्सरा भ्रातर स्ते निषेवंतु सुभक्तितः ॥१२५॥

सुन्दर साधू स्वभाव वाली श्रीजनकजी की पुत्री आपका सर्वदा प्रिय करें। आपके भ्राता लोग मात्सर्यता से रहित हाकर के सुन्दर भक्ति से आपकी सेवा करें ॥१२५॥

सर्वासु नृप विद्यासु निपुणो भव राघव ॥
वर्त्तन्तु ह्यनुकूलेन त्वयि शक्रा दयोसुराः ॥१२६॥

हे राघव! आप समस्त राज विद्याओं में सुन्दर निपुण होवें। इन्द्रादिक समस्त देवता आपके अनुकूल बर्ताव करने वाले होवें ॥१२६॥

वर्द्धन्तु राष्ट्र कोशैस्त्वां सर्वदा सौ विनायकः ॥
क्षयंयान्तु शत्रवस्ते स्वामीर्ष्यन्ति सतां प्रियम् ॥१२७॥

और ये गणेश जी हमेशा के लिये आपकी और आपके खजाने की तथा आपके राज्य की सदा वृद्धि करें। आपके शत्रु आपमें ईर्ष्या करने वाले वे क्षय को प्राप्त हों आप सन्तों के प्रिय होंवें ॥१२७॥

निवसन्तु सतां येतु हृदये ते प्रियाः गुणाः ॥
मनोरथाश्च विघ्नं ते सिद्धयेन्तु महेश्वरः ॥१२८॥

इस प्रकार के आपके ये प्रिय गुण सन्तों के हृदय में निवास करें और आपके समस्त मनोरथों को महेश्वर निर्विघ्नता पूर्वक सिद्ध करें ॥१२८॥

विलशत्सौ कुमार्य्यं ते सौन्दर्य्यं चाति शोभनम् ॥
नाना क्रुड़ाहि सखिभि वंर्द्धन्तु प्रति वासरम् ॥१२९॥

आपकी सुकुमारता आपमें सुन्दर बिलास करे, आपका शौन्दर्य अतिशय शोभन हो, विविध विविध प्रकारकी क्रीड़ाओं से नित्य प्रति आपमें सुन्दर बिलास करते हुए आपके सखी सखा वर्ग बृद्धिको प्राप्त हों ॥१२९॥

शिवोवाच—आशीर्वाग्भिः प्रयोज्येत्थं प्रेरितास्तेन तस्यते।
निपुणाः सेवका देवि स्नानादिषु विशेषतः ॥१३०॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि इस प्रकार श्रीराम जी को मन्त्री जी ने आशीर्वाद से नियोजित करके उसके बाद चतुर सेवकों को स्नानादिक विशेष सत्कृत्यों के लिये प्रेरित किया ॥१३०॥

अथ कंकोल कर्पूर कास्मीर चन्दनादिभिः ॥
सुगन्ध मिश्रितैश्चूर्णः सेवकैः राम लक्ष्मणौ ॥१३१॥

उसके बाद कंकोल कपूर केशर चन्दनादिक सुगन्धियों से मिश्रित चूर्ण बना करके सेवकों ने श्रीराम लक्ष्मण जी का उबटन किया ॥१३१॥

कृत्वातु कोमलाङ्गे तैः सरोज कोमलैः करैः ॥
उद्वर्त्तनं श्नापितौ च सरज्वा वारिणामुदा ॥१३२॥

अपने कमल सदृश कोमल करकमलों से सेवकों ने श्रीराम लक्ष्मण जी के कोमलाङ्गों में उबटन करके उसके बाद श्रीसरजू जी के जल से आनन्द मग्न होकर स्नान भी कराया ॥१३२॥

इत्यन्तरे तु मिष्ठान्नं पक्व दिव्य धृतेन यत् ॥
देवौजसोवरोधाच्च जनै र्नीतिं हित कृतम् ॥१३३॥

उसके बाद दिव्य घृत से सिद्ध हुए विविध प्रकार के मिष्ठानों को इसी बीच में महाराज देवौज जी के घर से सेवक लोग श्रीरामजी के लिए ले करके आये ॥१३३॥

तत्प्रीत्या रामचन्द्रेण प्रीत्यैक तोपितात्मना ॥
सखिभिर्भ्रातृभिश्चैव कृतं स्वादु सुभोजनम् ॥१३४॥

उन महाराज देवौज जी के स्नेह से केवल प्रीति से ही प्रसन्न मन होने वाले श्रीरामचन्द्र जी सब सखा भ्राताओं के सहित सुन्दर स्वादिष्ट भोजन किये ॥१३४॥

अथ कृत्यं सुमन्तोपि कृत्वा यत्प्रात रान्हिकम् ॥
ययौ गुरु वशिष्ठस्य समीपं षड गुणान्वितः॥१३५॥

इधर सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैध, आश्रय—इन छः राजनैतिक गुणों से पूर्ण श्रीसुमन्त्र जी भी अपने नित्य प्रातःकालिक कृत्यों को करके श्रीगुरु वसिष्ठ जी के समीप गये ॥१३५॥

अयोध्या वासिनः सर्वे राजानो बहुम श्रये ॥
नृत्यादि कौतुके नाथ नभूव महती सभा ॥१३६॥

और बरात में श्री अयोध्या जी से आये हुए जितने भी राजा हैं सब सभा में आये, नृत्यादिक कौतुकों से पूर्ण बहुत बड़ी सभा हुई ॥१३६॥

कोटि कन्दर्प्प शोभाघ्नस्तत् सभायां रघूद्वहः ॥
राजते पूर्ण राकेशो यथा नक्षत्र मण्डले ॥१३७॥

उस सभा में करोड़ों कामदेवों की शोभा को अपने प्रत्येक अङ्ग में लज्जित करने वाले श्रीरघुनाथजी भी करोड़ों नक्षत्रों के बीच में पूर्णमासी के चन्द्रमा की तरह शोभित हैं ॥१३७॥

ये चागताः कौतुकिनोऽयोध्यायाश्चाप्यसंख्यकाः ॥
ते च सर्वे दर्शयन्ति विद्यां विस्मयदांनृणाम् ॥१३८॥

जो श्रीअयोध्या जी से आये हुए कौतुक करने वाले असंख्य गुणी लोग हैं वे भी अपनी २ विद्याओं के प्रभाव से जनता को विस्मय पैदा करनेवाले अपने गुणों को उस सभामें दिखा रहे हैं ॥१३८॥

इत्यन्तरे वरं रामं तत्पौरा दर्शितुं हिये ॥
सभ्या महान्तो धनिनो यानस्थाश्च समाययुः ॥१३९

इसी बीच नन्दिका नगरी के नागरिक सभ्य महान धनिक जन अपनी २ सवारियों में बैठकर श्रीरामजी को देखने के लिये आये ॥१३९॥

ते चादरेण मुनिना सुमन्तेन सभास्थले ॥
कृतप्रणामायथा योग्यं प्रतिहारै निर्वेशिताः ॥१४०॥

मुनि श्री वसिष्ठ जी महाराज और श्रीसुमन्त्र जी ने प्रणाम करते हुए देख उन सब लोगों को यथा योग्य आदर से उचित स्थानों पर प्रतिहारियों द्वारा बैठाया ॥१४०॥

ते सर्वे राम रूपस्य कौतुकानां च कौतुकम् ॥
कुतः कस्मात्कुत्र कोहमिति दृष्ट्वा सुविस्मृताः ॥१४१॥

वे सब नागरिक जन श्रीरामजी के रूप कौतुक को तथा उस सभा के कौतुक को देख करके हम कौन हैं ? कहां पर हैं ? किस लिए आये हुए हैं ? इस बात को भूल गये ॥१४१॥

इत्यन्तरे विप्र वृन्दै गुरू र्देवौजसस्तुयः ॥
समागतो वशिष्ठाय सोधयित्वा सुलग्नकम् ॥१४२॥

इसी बीच में महाराज देवौज जी के गुरू बहुत से ब्राह्मणों को साथ में लेकर के आए । श्री वसिष्ट जी ने सुन्दर लग्न पत्रिका को संशोधित करा के ॥१४२॥

ज्ञापितुं विदुषां श्रेष्ठस्तस्मै वेदविदे स्वयम् ॥
परस्परं ह्यादरेण मिलित्वा तदभाषत ॥१४३॥

विद्वानों में श्रेष्ठ वेद के महान जानने वाले श्री वसिष्ठ जी से जान करके परस्पर आदर पूर्वक मिलन वात के किए ॥४३॥

श्रीरामं भूषितं चक्रे निपुणैः सेवकैस्तदा ॥
दिव्य वस्त्रैरलङ्कारै र्महामात्या नुशासितैः ॥१४४॥

उसके बाद चतुर सेवकों ने महामंत्री जी की आज्ञा से दिव्य वस्त्र भूषणों द्वारा श्री राम जी को भूषित किया ॥१४४॥

वर वाह्य हयश्चापि भूषयित्वा सुभूषणैः ॥
आज्ञयाहि सुमन्तस्य शीघ्रं नीतः सुसेवकैः । १४५॥

दुल्हा के चलने लायक घोड़े भी सुन्दर भूषणों से भूषित किए गए। सुन्दर सेवक लोग श्री सुमंत्र जी की आज्ञा से उन घोड़ों को लिवा लाए १४५॥

वर यान जनाः सर्वे भूषिता वस्त्र भूषणैः ॥
नाना यान समारूढाः स्वस्य स्वस्य समाजकैः ॥१४६॥

और सब बराती लोग भी सुन्दर वस्त्र भूषणोंसे भूषित हुए विविध प्रकारकी अपनीर सवारियों में बैठकरके ॥१४६॥

आगता दीप्ति मन्तस्ते श्रीरामस्य समीपकम् ॥
शतघ्नीनां महाशब्दै भेरी तुर्य्यादि नादितैः ॥१४७॥

अपनी शोभा से प्रकाश करते हुए श्री राम जा के समीप में आए जहाँ पर मशीनगन तोप छूट रहे। भेरी तूरी आदि महान दुन्दुभी नाद हो रहे थे ॥१४७॥

वन्दीनामुच्चकैः शब्दैः कांस्य वीणादिभिः समं ॥
स्वर्ण दण्ड ग्राहितानां द्वाः स्थानां ध्वनिभिस्तथा॥१४८

इसी प्रकार वन्दियों का भी झाल वीणा मृदंग आदि बाजाओं के साथ ऊँचे शब्द से विरद गान हो रहा था। जिस सभा के द्वारों पर प्रतिहारी लोग हाथों में स्वर्ण रत्नों के दण्डों को लिए हुए उचित विधानों को कर रहे हैं ॥१४८॥

रथानां किङ्किणी नादैर्गज घण्टीच्चनादितैः ॥
चचाल रामचन्द्रस्य यानं श्वसुर मन्दिरे ॥१४९॥

रथों की किङ्कणी, हाथियों के घन्टे नृत्यादिक बाजाओं के महान नाद से तथा जन कोलाहल से सजी हुई श्रीरामचन्द्रजी की वरात जनवासे से श्वसुर के महल में जानेके लिये चल पड़ी ॥१४९॥

पूर्य्यां तु हर्म्य मारुह्य प्रति रथ्यां वराङ्गनाः ॥
रामं नीराजितुं हस्ते धृत्वा दीपालि संयुतम् ॥१५०॥

नन्दिका नगरी की प्रत्येक गली में हर एक महल की उत्तम स्त्रियायें अपने २ मकान के छज्जा अट्टालिका द्वारों पर खड़ी हुई श्रीरामजी के दर्शन और आरतीके लिए हाथ में दीपादि मांगलिक वस्तुओं को लिए हुए खड़ी हुई हैं ॥१५०॥

कुमकुमाक्षत दूर्वादि हरिद्रा चूर्ण चित्रितम् ॥
स्थिताः काञ्चन पात्रं च कङ्कणादि विभूषिते ॥१५१॥

कोई उत्तम स्त्रियायें कुमकुम अक्षत दुर्वा हरिद्रा चूर्ण आदि वस्तुओं से चित्रित स्वर्ण पात्रों को अपने कण्कणादि भूषणों से भूषित अपने करकमलों में लिए हुये खड़ी हैं ॥१५१॥

दृष्ट्वा दृष्ट्वा राम मुखेन्दु पूर्णं वराङ्गणा हर्म्य गवाक्ष कस्था ॥
नीराजयन्तो मुदिता मनोज्ञं किरन्ति लाजान्सुमनांसि मुक्ताः॥१५२

इस प्रकार छज्जादिकों पर खड़ी हुई पूर्ण चन्द्र के सदृश प्रकाशमान मुखचन्द्र वाली उत्तम स्त्रियायें श्रीरामचन्द्रजी के मुखचन्द्र को देख २ करके आनन्द मग्न हुई आरती करती है, लावा तथा फूलों को और रत्नों को न्यौछावर करके छिड़कती हैं ॥१५२॥

काश्चिद्धि कुर्व्वन्ति निरीक्ष्यरामं गीतानिगायन्ति तथा विधानि ॥
काश्चिन्निरीक्षंति निमेषहीना विस्मृत्य लज्जां विवृताननाश्च॥१५३॥

कोई श्रीरामजी को देख करके उसी ढंग के सुन्दर गीतों को गाती हैं और बलैया लेती हैं कोई श्रीरामजीके निमेष हीन होकर लज्जा को त्याग करके विकसित मुख हुई देखती हैं। अपने शरीर की सुध भूल रही हैं ॥१५३॥

कुमारिका कापि हठाच्च रामं निरीक्ष्य सर्वाङ्ग मनोज्ञ वेषम् ॥
अहं वरामीति विहस्य चैनं प्रियं प्रियां स्वात्म सखीं बभाषे ॥१५४

कोई कुमारियां सर्वाङ्ग मन रमणीय सुन्दर वेष में श्रीरामजी को देखकर हँस करके मैं उन श्री रामजी के साथ हठ करके बिवाह करूगी। ये श्रीरामजी ही मेरे प्रियतम होंगे इस प्रकार अपनी आत्मा की प्रिय सखी से बोल रही है ॥१५४॥

पूर्णेन्दुना तुल्य मनोहरास्यं प्रफुल्ल कञ्जायत लोचनं च ॥
भाग्यं प्रशंसन्ति कुमारिकाणां नार्य्यो नरेन्द्रस्य निरीक्ष्यरामम्॥१५५

उन कुमारियों की बातों को सुनकर और चक्रवर्ति कुमार श्रीरामजी के पूर्ण चन्द्र सदृश मनोहर मुखचन्द्र को तथा खिले हुये कमल के सदृश विशाल नेत्रोंको देखकर नगरकी नारीगण उन कुमारियों के भाग्य की प्रशंसा करती हैं ॥१५५॥

राजा प्रजानां जनकोध्रुवं स्यात्ते नास्य श्यात्योहि वयं भवामः॥
परस्परञ्चेति प्रियेक्षणंतं निरीक्ष्य रामं प्रमदा वदन्ति ॥१५६

राजा प्रजा जनों का निश्चित पिता होता है अतः ये श्रीरामजी की हम सब लोग साली तो होती ही हैं इस प्रकार विनोद भरी बातों को करती हुई अत्यन्त प्रिय श्रीरामजी से कटाक्षों को मिलाती हुई प्रमदा गण आपस में बातें करती हैं ॥१५६॥

प्रगल्भता हास्य रसेण चैनं परिक्रमन्ते सुरहस्य गेहे ॥
यद्दत्तया तत्र विलाशयामः किं दूषणं लोक समस्त रीत्या॥१५७

इस प्रकार प्रगल्भता पूर्वक हास्य रस से बात करती हुई इन श्रीरामजी को देखने के लिये हम सुन्दर रहस्यों के महलों में इन श्रीरामजी को ले जाकर के घेर करके अपनी इच्छा भर करके इनके साथ विलास करेंगी। सम्पूर्ण लोकों की रीति से क्या यह दोष है? अपितु नही ॥१५७॥

दृष्ट्वा बृष स्कन्ध विशाल वक्षः प्रलम्ब बाहुं तनु मध्यदेशम् ॥
विशाल नेत्रं रविवंश भूषं ययुः कुमार्य्यो तदुद्दिश्य चिन्ताम्॥१५८

इस प्रकार कहती हुई उन सब नगर की कुमारियों को हृष्ट पुष्ट कन्धा वाले विशाल वक्षस्थल वाले, लम्बी भुजा वाले, पतली कमर वाले, विशाल नेत्र वाले सूर्यकुल के भूषण स्वरूप इन श्रीरामजी की प्राप्ति के लिए मनमें अतिशय चिन्ता होगई ॥१५८॥

इत्थं तु रामो वरभूषण श्रीरनन्त कन्दर्प्प विमोहन श्रीः ॥
उत्साह दीपावलि सत्प्रकारं ध्वजैश्च हेम्नः कलशैः प्रभासम्॥१५६

इस प्रकार अनन्त कन्दर्प के मोहन करने वाले दुलहा वेष श्रीरामजी नगर में लोगों के हृदय में उत्सव आनन्द को पैदा करते हुए महान् दीपावली और उत्साहके सुन्दर प्रकाश से तथा स्वर्ण के कलश ध्वजादिकों से सजे ऊँचे २ महलों से शोभित श्वसुर के दरवाजे पर आ पहुँचे ॥१५६॥

असंख्य यानैः श्वसुरस्य गेहं रथ्या सुदक्षेपि च वाम भागे ॥
बराङ्गणानां हृदयेभिलाषं प्रवर्द्धयन्नात्मनि चाप शीघ्रम् ॥१६०॥

श्वसुर के दरबार में दरवाजे पर घर में तथा गलियों में, दाहिने बायें भाग वाले महलों में असंख्य जनों की भीड़ लगी है उत्तम स्त्रियों के हृदय की अभिलाषाको अपनेमें शीघ्र बढ़ाते हुए श्रीरामजी के स्वागत सत्कार करने के लिए ॥१६०॥

पीतादि चूर्णैः कनकस्य पात्रे नीराज संचित्रितके सुधृत्वा ॥
कक्षा सुगङ्गो भवनस्थदीप्ते द्वारे लदूभूषण भूषिताभिः ॥१६१॥

स्वर्ण पात्रों में हर्दी आदिक चूर्णों से चित्र विचित्र चित्रकारी करके मांगलिक सौजों को सजी हुई प्रकाशमान राजमहल के दरवाजे पर सद्भूषणों से भूषित उत्तम स्त्रियायें खड़ी मङ्गल कृत्य कर रही हैं ॥१६१॥

स्थिताभिराकांक्ष वरागमंसः सुवासिनीभि र्मधुरे क्षणाभिः ॥
नीराजमानो मधुरे क्षणोपि तदाङ्गने मण्डपके विवेश ॥१६२॥

इस प्रकार वर के आगमन की अकांक्षा वाली सुवासिनी स्त्रियों के मधुर कटाक्षों द्वारा नीराजित होते हुये मधुर कटाक्ष वाले श्रीराम जी उस राजमहल के दरवाजे से पूजित होकर मध्य आंगन के बीच मण्डप में प्रवेश किये ॥१६२॥

पत्न्या पटेनात्म पटस्यपर्वां दत्वा करे काञ्चन वारि पात्रं ॥
धृत्वा सुरौजाः रघुनन्दनस्य सुकाञ्चेपीठ तलेम्बुजाभौ ॥१६३॥

इसके बाद महाराज श्री देवौज जी अपनी पत्नी के वस्त्र से अपने वस्त्र की ग्रन्थि देकर हाथमें स्वर्ण पात्र में जल लेकर स्वर्ण सिंहासन में बैठे हुए श्रीरामजी के कमलवत सुन्दर चरणों को धोने के लिये उपस्थित हुये ॥१६३॥

बध्वाञ्जलिं पश्यति दीनदृष्ट्या पादाब्जु पाश्यो परमेश्वरैश्च ॥
प्रक्षालनाय प्रतिकृत्य देयं तदा वशिष्ठे न कृताभ्य नुज्ञा॥१६४॥

परम ईश्वरों से उपास्य श्रीरामजी के चरणों को हाथ जोड़ करके दीन दृष्टि से ताक करके महाराज देवौज जी धोने के लिए चाह रहे थे कि उसी समय श्री बसिष्ठ जी ने आज्ञा दी ॥१६४॥

गुरोर्वर स्यापि ततो नृपेण पादौ वशिष्टस्य विशेषभावात् ॥
प्रक्षालितौ देय मथोपकृत्वा ततः सुमन्तस्य पितुः क्रमेण ॥१६५॥
प्रस्थापितौ काञ्चनके सुपीठे सुकोमलेनास्तरणेन शोभे ॥
ततोन्य राज्ञां च प्रजा जनानां प्रजोजिता बन्धु जना प्रवीणाः॥१६६

तब प्रथम श्रीगुरु बसिष्ठ जी महाराज के चरण विशेष भाव से धोये। उसके बाद दुल्हा के भी चरण धोये उसके बाद महाराज चक्रवर्ति श्रीदशरथ जी के समान मानकर सुमन्त्र जी के चरण धोये। इसी क्रम से और भी उचित कृत्यों को करते हुये सबको स्वर्ण सिंहासनों पर कोमल बिछावन बिछे हुये शोभित आसनों पर बैठाये तत्पश्चात् साथ में आये हुये सभी राजाओं को और प्रजाजनों को भी बड़े चतुर देवौज जी के भाइयों ने सबको बैठाया स्वागत किया ॥१६५-१६६॥

न जातुकेषां हृदये समंजसाद्वीनं समाजे महतां महत्यपि ।
इत्यात्म तुल्या निपुणाः सुबान्धवाः सत्कार कार्य्ये परितोनियोजिताः ।१६७॥

यद्यपि समाज बहुत बड़ा है तो भी उस मण्डप में किसी को किसी प्रकार का असमंजस न हो करके सबकी विस्तार स्थानों पर बैठाये क्योंकि महाराज देवौज जी के भ्रातादिक सभी बन्धु वर्गो ने महाराज देवौज जो के ही सदृश स्नेह पूर्वक स्वागत सत्कार करके यथा स्थानोंमें बैठाकर प्रसन्न किया ॥१६७॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां मुमा महेश्वर सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम पञ्चः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५६॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम पञ्च पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तम् ॥५६

शिवोवाच—लक्तारुणांघ्रि तल हस्त तलांञ्जनाक्षो—
राजच्छिखण्डक चयांचित गण्ड युग्मः ॥
ताम्बूल -चर्वित रदाधर रक्त शोभी—
नाशाग्र मौक्तिक दर स्मित मोहनाङ्गः ॥१॥

श्रीशङ्कर जी बोले—लाक्षारंग [महावर] से रंगे हुए चरण तल तथा हस्ततल और अञ्जन से आंजे नेत्र, मोर पंखों से सजे मौर, अलकों से सुशोभित दोनों कपोल, ताम्बूल के चर्वण से रँगे हुए दांत

तथा अधर ओष्ठ अरुणिमा नासा के अग्र भाग में धारण किये हुए नासामणि, शंख के सदृश कण्ठ, मन्द मुसुकाते हुये मुख चन्द्र वाले, अतिशय मोहन अंग वाले श्रीरामजी शोभित हो रहे हैं ॥१॥

राजत्किरीट मणि कुण्डल कंकणाढ्यो केयूर रत्न खचितांगुलि मुद्रिको सौ ॥
सौवर्ण पाद कटको परि सृङ्खलेन निष्कादि भूषिततया सुदृशां मनोहा ॥२।

क्रीट, कुण्डल, कण्कण, केयूर, मुद्रिका, पैर का कण्कण, मेखला, बिसकीमतीय रत्नों से खचे बहुत से भूषणों से भूषिताङ्ग, विशाल सुन्दर नेत्र, मनको हरण करने वाले ॥२॥

कौसुंभ्य कञ्चुक परिस्कृत रुक्म चित्रं पादस्य कञ्चुक हरिद्वसनंदधानः ॥
पाद क्रमै र्विजित नाग मृगाधि राजो रामो विवेश मणिमण्डप मद्रिकन्ये ॥३।

हे पर्वत कन्यके ! कुसुमी रग के कंचुक पहने हुए, असली सोने की जरीदार पाद कंचुक और हरित रंग के बस्त्रों को धारण किये हुए श्रीरामजी अपने पैरों की गति से हाथी और सिंह की गति को बिजय करते हुये मणिमय मण्डप में प्रवेश किये ॥३॥

शिखे व दीपस्य तु रामरूपं तस्मिन्पतङ्गाः सुदृशां मनांसि ॥
धावन्ति उत्काः परितोनिपेतु विस्मृत्य पातिव्रत मात्मरूपम् ॥४॥

इस प्रकार के श्रीरामजी का रूप दीप शिखा के समान है और सुन्दर नेत्रों वाली स्त्रियों का मन फतिंगा होगया। इस प्रकार का मोहित हुई स्त्रियायें अपने पातिव्रत धर्मको तथा अपने लोक मर्यादित स्वरूप को भूलकर दशो दिशाओं से दौड़ करके आकर श्रीरामरूप में आसक्त होगयी ॥४॥

सुवासिनीभिश्च सुवासितांग्यो नीताः कुमार्य्यो मणि मण्डपं ताः॥
मन्दत्व मीयुः परितः प्रदीपाः यासां प्रभाताः किमु वर्णनीयाः॥५॥

इस प्रकार सुन्दर सुगन्धित अङ्ग वाली सुवासिनी स्त्रियायें तथा कुमारिकायें चारों तरफ से घेरे हुए श्रीरामजी को मणि मण्डपके अन्दर लायीं वे सब स्त्रियाओंके अङ्ग प्रकाशसे चारों तरफके दीपों का प्रकाश मन्द पड़ गया। हे पार्वती ! अब मैं उन स्त्रियाओं की सुन्दरता का क्या वर्णन करूं ॥५॥

विधान होमस्य च धूमव्याजा न्निपीड यन्त्यम्बुज चारु नेत्रम् ॥
अपाङ्ग दृष्ट्यात्मपतेः कुमार्य्यो पश्यन्ति रूपं रघुनन्दनस्य ॥६॥

श्रीरामजी के स्नेह से आसक्त हुई स्त्रियायें हवन के धुआं के बहाने से आंखों को बन्द की हुई किञ्चित आखों को खोल करके अपने कटाक्षों से वे कुमारिकायें अपने आत्मपति श्रीरघुनन्दन जी को देखने लगी ॥६॥

गृहार्च्चनं देव समर्च्चनं च कृत्वा यथा वेद विधान मुक्तम् ॥
हस्तग्रहो भूद्रघुनन्दनेन देवौजसोऽनेक सुकन्यकानाम् ॥७॥

गृह पूजन, देवताओं का पूजन, वेदोक्त विधानों से सब कृत्यों को करके महाराज देवौज जी की सुन्दर समस्त कन्याओं का श्रीरघुनन्द जी ने पाणिग्रहण किया ॥७॥

वेदध्वनौ चारु वराङ्गनानां गानध्वनौ वाद्य महा प्रघोषे ॥
जातेष्वर्यकन्या न्नृपति महात्मा स्तुतिं चकारांजलिनाति नम्रः॥८॥

ब्राह्मणों ने वेद ध्वनि समस्त सुवासिनियों के गान की ध्वनि तथा अन्य समस्त बाजाओं के महाघोष पूर्वक कन्याओं के पाणिग्रहण हो जाने पर महात्मा देवौज जी ने हाथ जोड़ करके बड़ी नम्रता पूर्वक स्तुति करके नमस्कार किया ॥८॥

राजोवाच-दूरा दात्मकृते विहाय परितो लज्जामया राघव।
नीतस्त्वं जगतीपते प्रिय सुतः स्वार्थस्तु तत्केवलम् ॥
मन्येहं श्रमकारणं तव परं सौख्यायते सर्वथ ॥
यन्मेशील गुणेन वात्म महता धाष्ट्र्यं परं क्षम्यताम् । ९

महाराज देवौज जी बोले कि हे राघव ! मैंने अपने स्वार्थ के लिये लज्जा को त्याग करके बहुत दूर से आपको बुलाया । सम्पूर्ण जगत के एक पति महाराज दशरथ जी के अत्यन्त प्रिय पुत्र आपको बुलाकर मैंने केवल अपना स्वार्थ ही सिद्ध किया । यद्यपि मैंने आपके ही सुखके लिए आपको इतना बड़ा परिश्रम दिलाया। तो मैंने अपने शील गुण को मिटा करके आपकी आत्म महत्ता पर धृष्टता करके सर्वथा अनुचित किया परन्तु आप मेरे को क्षमा करदें ॥९॥

श्रीरामोवाच-गुरुरसि गुणवान्धीरोमायासिकिमपि हीनत्वम् ॥
तुष्टोहं सकल विधिना दत्तात्मजे लोक विख्याते ॥१०॥

श्रीराम जी बोले कि आप बड़े गुणवान धीर मेरे पूज्य गुरू लगते हैं इस प्रकार की हीनत्व कार्पण्यता को क्यों प्राप्त हो रहे हैं आपने तो समस्त लोक में प्रसिद्ध। अपनी आत्म कन्याओं को सुन्दर सर्वशास्त्र विधि से मुझे दिया है मैं अतिशय प्रसन्न हूँ ॥१०॥

येन चैवात्मना तुल्या दत्ता सत्कृत्य ह्यात्मजा ॥
दत्तं न दत्त मन्यत्किं तेन सर्व प्रदायिना ॥११॥

जिसने अपनी आत्मा के सदृश सुन्दर कन्याओं को बड़े सत्कार पूर्वक मेरे लिये दे दिया उस अपने सर्वस्व दान देने वाले ने अब क्या बाकी रक्खा ॥११॥

सुमन्तं च वशिष्टं च स्तुत्वा देवौजसा तदा ॥
रात्रीं बहुगतां वीक्ष्य भोजनाय समादृतौ ॥१२॥

उसके बाद महाराज देवौज जी ने श्रीसुमन्त्र जी और श्रीवशिष्ठजी की भी स्तुति की फिर रात्रि बहुत बीत गई ऐसा देख करके सबको भोजन के लिये सुन्दर आदर पूर्वक बुलाया ॥१२॥

सुगन्ध सिंचितागारे विशाले मणि चित्रिते ॥
दीपायनै र्विचित्रैश्च भूषिते परमाद्भुते ॥१३॥

सुगन्धि से सिंचित मणिमय विशाल चित्र विचित्र महल में जहां दीपावलियों की भी परम अद्भुत विचित्र सजावट है इस प्रकार के सुन्दर विभूषित महल में ॥१३॥

आसने नर्म वसनैर्वेष्ठिते सम पंक्तिभिः ॥
वशिष्ठादि सुमन्ताद्याः स्थापिता विनयात्पुनः ॥१४॥

सुन्दर पंक्ति पूर्वक कोमल वस्त्रों से बने हुये आसनों पर श्रीवसिष्ठ जी श्रीसुमन्त्र जी आदिक समस्त लोगों को विनय पूर्वक बैठा करके ॥१४॥

पंक्तिश्चातुर वर्ण्यानां सादरा द्विनयेन वै ॥
विभागेन परिस्कृत्वा दत्त्वासन मनुत्तमम् ॥१५॥

चारों वर्णों के समस्त लोगों को भी विनय प्रार्थना करके अलग २ सुन्दर विभाग पूर्वक उत्तम आसनों पर सबको बैठाया ॥१५॥

आज्ञप्ता सूपकाराश्च यथा योग्येषु पंक्तिषु ॥
कोट्यवधि निपुणैस्तैः क्षणे नैवाथ भोजनैः ॥१६॥

उसके बाद यथा योग्य पंक्तियों में उचित रसोइया लोगों को करोड़ों की संख्या में नियुक्त करके एक क्षण में बड़ी चतुरता पूर्वक समस्त पदार्थ भोजन के लिए परसे गये ॥१६॥

व्यञ्जनैश्च रसाधिक्यैः पात्रे काञ्चन रौप्यकैः ॥
पूरिता पंक्तयः सर्वाविधिव द्वचनादृतैः ॥१७॥

पंक्तियों में विविध प्रकारके अतिशय रसीले समस्त व्यंजन स्वर्ण रत्नोंके और चांदी के पात्रों में परसे हुए सुन्दर विधान पूर्वक आदर के वचनों से सब पंक्तियां को पूर्ण किया ॥१७॥

भ्रातृभि स्तु स्वयं राजा काञ्चन व्यजनं करे ॥
धृत्वा समीप मास्थाय कारयामास भोजनम् ॥१८॥

इस प्रकार के ये समस्त कार्यों को तो महाराज देवौज जी के भ्राताओं ने ही कर लिया। स्वयं तो महाराज स्वर्ण जटित व्यंजन को हाथ में लेकर के श्रीराम जी वसिष्ठ जी आदिक के समीप में बैठकर भोजन कराने लगे ॥१८॥

बान्धवा ये ह्यात्म तुल्या निपुणा मधुभाषिणः ॥
योजितास्तेऽपि सर्वेषु सत्कृतौ हि महिक्षिताम् ॥१९॥

महाराजके आत्मा के सदृश स्नेही चतुर भाई लोग मधुर वाणियों से बड़ो चतुरतापूर्वक अन्य समस्त राजाओं के सत्कार के लिये नियोजित किये गये ॥१९॥

सुखेन मधुरं गानं समयोचित शोभनम् ॥
नारीणां सुस्वरै रम्यैः श्रुत्वा श्रुत्वा विलम्बितः॥२०

नारियों के समयानुसार उचित शोभा देने वाले अतिशय सुखदाई मधुर गीत रमणीय सुन्दर स्वर से गाये गये सुनकर भोजन में बड़ी देर लगी ॥२०॥

उत्तमा मध्यमा नीचा स्तोषं प्राप्य सुभोजनैः ॥
प्रसंशं तश्चोत्थितास्ते राजानं हि सुरौजसम् ॥२१॥

इस प्रकार उत्तम मध्यम नीचादि भेदों से समस्त बरातियों को भोजन कराकर सन्तुष्ट किया। सभी बराती लोग महाराज देवौज जी की प्रशंसा करते हुये सन्तुष्ट होकर के उठे ॥२१॥

सुप्रीत्या सखि भिश्चैव रामं लक्ष्मण संयुतम् ॥
सुवासिन्योहि मधुरे गानै हास्य विलासतः ॥२२॥



※ टीकाकार के श्री गुरुदेव जी ※

श्री श्री १०८ श्रीसियाशरण जी (श्रीमधुकरजी) महाराज

श्री चारुशीला मन्दिर, श्री चारुशीला बाग

श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी



श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट - बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

विषय सूची

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृ-लोक का दर्शन। द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४०१ ॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम। चतुष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम। पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४२६॥

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह। षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४५२॥

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४६२ ॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत। अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६६ ॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति। एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४८२ ॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना। षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४६१॥

माणवक नगरीके राजा उद्धविक्रमकी कन्याओं से विवाह। एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ५०३॥

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह। द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ५१६ ॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जी की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये। फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये।

॥ इति शुभम् ॥



❋ श्री अमर रामायण ❋

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❋ बन्दना ❋

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, पुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'बागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
वन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❋:—



* श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः *

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

इधर सखियों ने अतिशय अनुराग पूर्वल श्रीराम जी और लक्ष्मण जी को सुवासिनियों के मधुर गान हास विलास पूवक तथा २२॥

कृत्वाह्यन्योपचारन्तु लोक रीत्यापि सुव्रतम् ॥
दिव्यं च षड्रसैः पूर्वं कारयामासु रादृतेः ॥२३॥

इसी प्रकार सुन्दर व्रत वाले श्रीरामजी को समस्त लोक रीति अन्य उपचारों के सहित बड़े आदर पूर्वक षटरस दिव्य भोजनों को करा रही है ॥२३॥

पृच्छन्त्योपि हँसन्त्योपि कथयन्त्य स्तु पृच्छया ॥
भोजनं विज्ञनायांच नामानि च परिस्कृताम् ॥२४॥

कोई व्यजनों के विविध नामों को पूछती हुई तथा और भी रहस्यों की बातों को पूछती हुई और कुछ कहती हुई भी हँस रही हैं। श्रीरामजी को चारों तरफ घेर कर विनोद कर रही हैं ॥२४॥

प्रीत्या दत्वा च ताम्बूलं गृहे दीपालि भूषिते ॥
स्वापितो नर्मशय्यायां सखिभी र्राघवो मुदा ॥२५॥

इस प्रकार भोजन कराने के बाद दीपावलियों से भूषित महलों में ले जाकर बड़े प्रेम से पान पवाती हैं। नर्म शय्याओं में सखियों ने आनन्द पूर्वक श्रीरघुनाथजी दोनों भाइयोंको शयन कराया ॥२५॥

वशिष्ठोपि सुमन्तश्च तथा सख्य जनैः सह ॥
ययौ तत्र निवासं च लब्ध्वा ताम्बूल दक्षिणाम् ॥२६

इधर श्रीवसिष्ठ जी सुमन्त्र जी आदि असंख्य बराती जन भोजन के बड़े आदर पूर्वक पान दक्षिणा को प्राप्त करके जनवांसे में अपने २ स्थानों पर चले गये ॥२६॥

श्रमितानां विश्रामार्थं न चैवोत्सव कार्य्यकम् ॥
विवाहस्योत्तर दिने कृतं राज्ञा विवेकिना ।२७।

इसके बाद बड़े विवेकी महाराज श्रीदेवौज जी ने बराती और घरातियों को श्रमित जान करके विवाह के दूसरे दिन का जो उत्सव कार्य था उसको उस दिन नहीं किया ॥२७॥

ततश्चान्य दिने देवि पौरास्त्रीपुरुषाश्चये ॥
उपयनोत्सव स्तेषां वभूव महती सभा ॥२८॥

उसके तीसरे दिन नन्दिका नगरी के जितने उत्तम स्त्री पुरुष थे वे सब अपने २ हाथों में उपा-भेटों को लेकर के महाराज देवौज जी के घर में आये। बहुत बड़ी सभा हुई ॥२८॥

साजयित्वा समाजेन आगत्य नृप मन्दिरम् ॥
दृष्ट्वा वरं वधूभिश्च तरुण्यो मण्डपायने २६॥

सभी लोग अपने समाजों से सज करके राजमहल में आये। तरुणी स्त्रियों ने विवाह मण्डप के अन्दर वर वधुओं को देखा ॥२६॥

वृद्धा अपि कुमार्य्यश्च धृत्वा त्वग्रे यथोचितम् ॥
उपायनं भूषणादि नाना वस्तु मयं शुभम् ॥३०॥

वृद्धी और कुमारी समस्त स्त्रियों ने अपनी २ उपायन भेंट उचित विधान पूर्वक नान प्रकार के भूषण आदि मांगलिक बहुत सी वस्तुओं को वर दुलहिन के आगे रक्खा ॥३०॥

पुनर्नीराजनं कृत्वा दृष्ट्यापचारणाय च ॥
क्षिपन्ति वस्त्र मुक्तादि परिभ्राम्य विचक्षणाः ॥३१॥

उसके बाद आरती की दृष्टि दोष निवारण के लिए वस्त्र भूषण मुक्ता रत्न वरदुलिहनके चारों तरफ घुमा करके बाहर दिशाओं में बरषा दिया। इस प्रकार बड़ी सूक्ष्म बुद्धि वाली समस्त स्त्रियोंने ॥३१॥

निरीक्षंतीन्दुवदनं श्रीरामस्या निवारिताः ॥
दीनोति च धनं लब्ध्वा बहुल मोदते यथा ॥३२॥

श्रीरामजी के चन्द्रमा सदृश सुन्दर मुखचन्द्र को बिना रोक टोक के खूब दर्शन किया। जिस प्रकार किसी दरिद्री को बहुत सा धन प्राप्त होने पर प्रसन्नता होती है उसी प्रकार सब खुशी होगयी ॥३२॥

तदुत्तरे तुदिवसे राजानो ये निमंत्रणे ॥
देवौजसो गृहेऽनन्ता आगता महता दरैः ॥३३॥

उसके दूसरे दिन निमन्त्रित हुये जितने भी राजा लोग थे वे अनन्त संख्या में सभी राजा लोग महान आदर पूर्वक महाराज देवौज जी के घर में आये ॥३३॥

सभा तेषां बभूवाथ वशिष्ठेन समन्विता ॥
सुमन्तस्य समीपं हि तत्रायं निर्णयोभवत् ।३४॥

उन सब राजाओं के बीच में श्रीबसिष्ठ जी सुमन्त्र जी आदि समस्त बरातियों के सहित एक बहुत बड़ी सभा हुई जिसमें यह निर्णय हुआ कि ॥३४॥

येषां येषां गृहे राज्ञां कन्यास्तु समयोचिताः ॥
विवाहाय चतैः सर्वैस्तौ विनीय परं यशौ ॥३५॥

जिन २ राजाओं की कन्यायें जिन २ राजाओं के घर में इस समय के योग्य बिबाहने लायक हैं उन सबने परम यशस्वी महाराज बसिष्ठ जी और सुमन्त्र जी से श्रीरामजी के साथ बिवाह के लिये विनय की ॥३५॥

श्रीवशिष्ठ सुमन्तौ चा वनम्य च पुनः पुनः ॥
सम्बन्धं योजयामासु र्दत्तं राम करे फलम् ॥३६॥

श्रीबसिष्ठ जी और सुमन्त्र जी को बार २ नम्रता पूर्वक प्रार्थना करके श्रीरामजी के हाथ में फल देकर के राजाओं ने अपने २ साथ सम्बन्धों को जोड़ा ॥३६॥

ततश्चाप्युत्तर दिने सभाजाता महत्तरा ॥
पुत्रीणां तु सुदाये च देयं यद्वस्तुसर्व कं ॥३७॥

उसके दूसरे दिन फिर एक बहुत बड़ी सभा हुई जिसमें अपने सुन्दर दामाद के लिये तथा कन्याओं के लिए जो २ उत्तम २ समस्त बस्तु देने योग्य थीं ॥३७॥

भूषयित्वा दीप्तिमन्तं ततः स्थानाद्वहिः कृतम् ॥
सहस्रं तु भूपितानां काश्चने श्च विमानकैः ॥
चलद्गिर्युपमानाश्च सुलक्षणवता मपि ॥३८॥

उनको सुन्दर प्रकाशमान भूषणों से भूषित करके महाराज देवीज जी ने अपने स्थान से बाहर किया जिन समस्त वस्तुओं में हजारों की संख्या में तो स्वर्ण के विमान हैं जो पर्वतों के सदृश चलते हुए सुन्दर लक्षण युक्त उत्तम भूषणों से भूषित हैं ॥३८॥

स्यन्दनानां सहस्रं च हयैर्युक्त मनुत्तमैः ॥
उत्तमा सर्वदेशीया हयास्तैस्त्रि गुणी कृताः ॥३९॥

इसी प्रकार हजारों रथ हैं जो अनुत्तम घोड़ाओं से युक्त है । इसी प्रकार तीन हजार की संख्या में सब देश के सब जाति के उत्तम घोड़े हैं जो गुणियों द्वारा सुन्दर पढ़ाये हुये हैं ॥३९॥

उपायनानि भूषितानि ह्युत्तमै र्वाहकैः सह ॥
सौवर्ण रौप्य पत्राणां भाराद्वे विंशती तथा ॥४०॥

और भी बहुत से उपायन भेंट उत्तम भूषणों से भूषित वाहकों के सहित स्वर्ण चांदी के पात्र चालीस भार तथा और भी ॥४०॥

वस्त्राणां वहु विधानां चित्रताश्च मनोहराः ॥
मञ्जूषा विंशतिश्चैव भूषणानां च तन्मिताः ॥४१॥

बहुत प्रकार के चित्र विचित्र मनोहर वस्त्रों के बीस मंजूसा [सन्दूक] तथा बीस भूषणों के मंजूषा दिये ॥४१॥

पीठान्यास्तर पर्य्यङ्का क्रीड नाष्टापदादिकम् ।
सपञ्जराः पाठिताश्च पक्षिणोपि शुकादयः ॥४२॥

सिंहासन, बिस्तर पर्यंक, चौपड़ादि खेल की सामग्रियां, सुक आदिक बहुत से पढ़ाये हुये पक्षी पिंजराओं के सहित ॥४२॥

गावोपि महिष्यश्चैव पयोदा वहुसस्तथा ॥
सवत्सावसना भषा स्वर्ण रौप्य सुश्रृङ्गकाः ॥४३॥

तथा गौ, भैंस भी बछड़ाओं के साथ खुब दूध देने वाले, बस्त्र तथा रत्न रचित भूषणों से रचे स्वर्ण मढ़े सींग वाले ॥४३॥

वृषभाः सित वर्णाश्च भार वाहास्तथा परे ॥
उष्ट्रानश्वा अपि पुष्ठा विस्तादि भार संयुताः ॥४४॥

इसी प्रकार सफेद रंग के बैल तथा और भी बोझा ढोने वाले मजबूत ऊँट घोड़े खच्चर आदिक जो स्वर्ण रत्नादिक दहेज की सामग्री बोझाओंके सहित हैं॥४४॥

सुवस्त्रा भूपिताङ्गाश्च सेवने कुशला स्तथा ॥
दासा दास्यः सुवदनाः सहस्रद्वय सन्मिताः ॥४५॥

इसी प्रकार सुन्दर वस्त्र भूषणों से सजे हुये अङ्ग वाले सेवा में बड़े कुशल मीठा बोलने वाले दो हजार की संख्या में दास दासियां भी ॥४५॥

अपरे गुणिनो ये च कौतुकेन मुदंकराः ॥
पुनश्च देशकालज्ञा एवं बहुजना अपि ॥४६॥

और भी जो बड़े २ गुणवान कौतुकी आनन्द को बढ़ाने वाले गाने बजाने वाले देशकाल को समझाने वाले इस प्रकार के बहुत से जन भी दिये गये ॥४६॥

भार युक्ता स्तु शकटाः पुष्टैश्च वृषभैर्युताः ॥
गन्त्र्योपि बहुशश्चैव वसनैः संवृता शुभैः ॥४७॥

बोझाओं से लदा हुई बैलगाड़ी तथा जिनमें पुष्ट मजबूत बैल लगे हुए हैं सुन्दर बस्त्रों से सजे हुये व्यवाहिक शुभ चिन्हों से युक्त इस प्रकार के बहुत से बैलों के रथ ॥४७॥

वस्त्रा गाराणि बहुशो गुणितानि सुचित्रितैः ॥
ध्वज दीपायनै श्चैव युक्तानि सेवितै स्तथा ॥४८॥

बहुत से बस्त्रों के महल जो सुन्दर चित्रों से बने हुये बाँधने की डोरियां भी जिनमें लगी हुई हैं तथा दीपों की ध्वजायें और भी दीप वृक्षादिक उनकी रक्षा करनेवाले सेवकोंके सहित सब दिये गये ॥४८॥

प्रतिकन्यं विधिनैवं सुदाये दत्तवान्नृपः ॥
बद्धांजलिः पुनश्चासौ सूच यत्यात्मलाघवम् ॥४९॥

इस प्रकार की समस्त विविध सामाग्रियों को प्रत्येक कन्या के लिये और सुन्दर दामाद के लिए महाराज श्री देवौज जीने दहेज दिया फिर अपनी आत्मलघुता सूचक हाथ जोड़ करके प्रार्थना भी की॥४९॥

सुरौजोवाच-अवश्यं पूजकैः पूज्यादानमानाभि वन्दनैः ॥
पूजितव्यास्तत्र शक्तिर शक्तिर्निर्णयोप्यसौ ॥५०॥

महाराज देवौज जी बोले कि हे महाराज ! दान, मान, बन्दनादिकों से पूजा करने वाले लोग आपकी अवश्य पूजा करें परन्तु उस पूजा के अन्दर कौन पूजा में समथ है। कौन पूजा में नहीं समर्थ है इस बात का निर्णय यही है कि ॥५०॥

शक्तौ सौवर्ण रत्नानि ह्यशक्तौ तत्र तादृशे ॥
पुष्पाणि मृण्मयान्येवंतन्मे हीनस्य स्वीकुरु ॥५१॥

जो सामर्थ्यमान हो वह स्वर्ण रत्नों के पुष्पों को चढ़ावे ,जो न समर्थ हो वह उसी प्रकार के पुष्पों से पूजा कर ले परन्तु मैं तो उन पुष्प चढ़ाने वालों में भी हीन हूँ आप मेरी सेवा को स्वीकार करें ॥५१॥

दीयमानं वस्तु यस्य सुतानां तु सुदायके ॥
हस्त्यश्व स्यन्दनाद्यं चविस्तृतं योजन द्वये ॥५२॥

तस्यैवं कृपणां चोक्तिं वशिष्ठो नीतिवेदवित् ॥
श्रुत्वा तथा सुमन्तोपि हर्षं तु परमं ययौ ॥५३॥

जो अपनी कन्याओं के लिए और सुन्दर दामाद के लिये दो योजन के बिस्तार में हाथी घोड़ा रथ पालकी बिस्तार फैलाये हुये इतना दान दे रहे हैं इनके इस प्रकार कृपणता पूर्वक वाणी को सुनकर नीति और वेद केविद्वान श्रीवसिष्ठ जी तथा सुमन्त जी भी परम हर्ष को प्राप्त हुए ॥५२-५३॥

कृतज्ञो नीति मद्राजन्कथं नो वदसीति च ॥
ब्रुवंस्तं शंशयामास तथैव च सभाजनाः ॥५४॥

हे राजन् आप दूसरे के उपकार को मानने वाले इस प्रकार की नीति को प्रगट करने वाली वाणी किस लिए हम लोगों से इस प्रकार बोल रहे हैं ? इस प्रकार श्रीवसिष्ठ जी के कहते हुए सभी सभा- जन भी इसी प्रकार कहने लगे ॥५४॥

पुनः प्रसन्न मनसा दिव्य भूषण वस्त्रकैः ॥
वशिष्ठं तु पृथक् पूज्य विनीय वहुशस्तथा ॥५५॥

इसके बाद प्रसन्न मन होकर के श्रीवसिष्ठजी को भी दिव्य वस्त्र भूषणों से बहुत प्रकारसे अलगर पूजा की ॥५५॥

अयोध्या वासिनः सभ्या मध्यमा लघ्वयोऽपि ये ॥
तत्पक्षका नृपाश्चैव तेषां चैवानुगामिनः ॥५६॥

इसके बाद सभी अयोध्यावासी सभ्य मध्यम तथा साधारण बाल बुड्ढे भी और बरातके पक्ष वाले सभी राजाओं तथा उनके अनुगामियों की भी ॥५६॥

वादित्र वाद काश्चान्ये वाहनानां च सेवकाः ॥
मुख्या मुख्य प्रभेदेन तथा सर्वेऽपि याचकाः ॥५७॥

तथा गाने बजाने वाले केवल बाजा बजाने वाले और सवारियों के सेवक जितने भी मुख्य तथा अमुख्य भेद से तथा और याचक जन ॥५७॥

यथा योग्या दरै दानै र्योग्ये पादाभि वन्दनैः ॥
प्रतोषिताः समन्ताच्च राज्ञादेवौजसा तदा ॥५८॥

यथा योग्य आदर दानमानसे और यथा योग्य पादाभिवन्दनादि से महाराज श्रीदेवौज जी ने उस समय चारों तरफ से सन्तुष्ट किया ॥५८॥

सुयशोपि परं लेभे कृत्येन महतापि च ॥
दृष्ट्वा श्रीरामरूपं च वभूव विगत श्रमः ॥५९॥

इस प्रकार के कृत्य से महान सुन्दर परम यश को भी प्राप्त करके और श्रीराम जी के रूप को देख करके महान परिश्रम से निवृत्त होगये ॥५९॥

श्वश्रुरुवाच–को जानाती दूरत्वाद्दुर्लभं दर्शनं त्वतः ॥
श्रीरामोवाच-संदेहं खलु मायासिमात मां प्रतिसर्वथा॥६०

सासु बोली कि हे राम ! बहुत दूर होने की वजह से आपका इस प्रकार दर्शन फिर होगा ऐसा कौन जानता है ? श्रीरामजी बोले कि हे माता ! आप मेरे प्रति सर्वथा इस प्रकार का सन्देह को क्यों प्राप्त हो रही हैं ? ॥६०॥

सुदूर आपि निकटो सम्बन्धो यत्र चात्मनः ॥
निकटोपि सुदूरः स्यात्सम्बन्धा भावतः स्वतः ॥६१॥

जहां आत्मा का सम्बन्ध हो जाता है यहां दूर होने पर भी निकट ही रहता है और जहां संबंध का अभाव वहां नजदीक में होने पर स्वाभाविक ही दूर है ॥६१॥

किं परं दूर संस्था नौ प्रीय माणौ परस्परौ ॥
महात्माना वब्धि चन्द्रौ वियोगे व्यथते किल ॥६२॥

परस्पर प्रेममयी व्यवहार होने से क्या दूर क्या नजदी वह तो समीप ही है जैसे महात्मा समुद्र और चन्द्रमा अपनी स्नेह भावना से क्या तो वियोग से व्यथित होते हैं ? ॥६२॥

राज्ञीनां हृदि राज्ञश्च वियोगो वर्द्धते किल ॥
सुवाग्मी रामचन्द्रस्य यथा ह्यद्भि र्नवांकुरः ॥६३॥

इस प्रकार राजा रानी के हृदय में अतिशय स्नेह रूप बीज वढ़ती हुई वियोग रूप अग्नि से कबा तो जल रहा था श्रीरामजी की सुन्दर वाणी ने जिस प्रकार जल बीज में नवीन अंकुर पैदा करता है उस प्रकार स्नेह रूप बीज में से नवीन अंकुर पैदा किया ॥६३॥

सुवाग्मि र्बोधितो प्रीत्या श्वसुरौ प्रिय वादिना ॥
श्रवदश्रु मुखौ चाग्रे नहुभि र्राघवेणहि ॥६४॥

इस प्रकार श्रीरामजी ने बड़े प्रेम से अत्यन्त प्रिय वाणी द्वारा दोनों सासु श्वसुरों को प्रबोधित किया दोनों सासु श्वसुर नेत्रों से आँसुओं की धारा बहाते हुए श्रीरामजी के आगे बिराजे हैं ॥६४॥

अथो पदिश्य सद्धर्म्मं नारीणां मातृभिस्तदा ॥
शीलं पातिव्रतं ताभ्योविनीय रघुनन्दनम् ॥६५॥

इसके बाद माताओं ने कन्याओंके लिए नारी धर्म के उद्देश्य से शील पतिव्रतादिक बहुत प्रकार के सत्धर्मों को उपदेश किया जिससे वे सुन्दर रूपवती कन्यायें श्रीरघुनाथ जी में भाव को बढ़ावें ॥६५॥

नियोगिता रूप वत्यः सुतास्ता पटग्रन्थनैः ॥
पौरास्त्री पुरुषा यावद्वान्धवानां स्त्रियोवराः ॥६६॥

इसके बाद उन कन्याओं का वरके साथ पट ग्रन्थि करके अड़ोस पड़ोसकी समस्त स्त्रियें साथ हो करके तथा अन्य पुरुष बन्धु वर्गों के साथ ॥६६॥

समाहूयादरेणैव कृत्वा च सत्समाजकम् ॥
बहुशो वाद्य गानैश्च निवासे तद्वधूवरौ ॥६७॥

सुन्दर समाज करके बड़े आदर के साथ बहुत प्रकार के गान बजान पूर्वक वर बधुओं को जन-वासे में ले गये ॥६७॥

नीतौ देवौजमा राज्ञा वशिष्ठं च सुमन्तकं ॥
नत्वा पुनः पुनस्तेन पूजयित्वा ह्य पायनैः ॥६८॥

इस प्रकार महाराज देवौजजी ने दोनों वर कन्याओं को लाकर के श्रीवसिष्ठ और श्रीसमन्त्रजी इन दोनों को सत् उपायन भेंट द्वारा पूजन करके बार २ नमस्कार किया ॥६८॥

सभ्यान्सर्वान्प्रणम्याथतैः प्रशंसित सत्कृतः ॥
सुखं वियोग जं दुःखं समं लब्धोन्मना तदा ॥६९॥

और सब बराती सभ्यजनों को प्रणाम किये उन सबने भी आपकी प्रशंसा की। इस प्रकार सम्बन्ध का सुख और वियोग जनित दुख दोनों समान रूप से मन के अन्दर व्याप्त हुए ॥६९॥

अनु व्रज्याति दूरं च प्रजा बन्धु जनैश्च सः ॥
आजगाम गृहं राजा श्रीरामं संस्मरन्नपि ॥७०॥

इसके बाद महाराज अवधेशकुमारके साथ तथा और सभी बन्धु बरातियोंके साथ श्रीअयोध्या जी के लिये चलने लगे। महाराज देवौज जी भी बहुत दूर तक अपने प्रजा बन्धुओं के साथ पहुँचाने के लिये आये फिर श्रीरामजी का स्मरण करते हुये अपने घर को लौट गये ॥७०॥

वधूभिस्तत्क्रमेणैव मार्गं चाक्रम्य राघवः ॥
अयोध्यायां प्रदेशस्य सविधं प्राप्त वान्मुदा ॥७१॥

इधर श्रीरामजी भी वधुओं के साथ तथा सभी बरातियों के साथ पूर्व क्रम के ही अनुसार मार्ग में ठहरते हुये सुन्दर बिधान पूर्वक प्रसन्नता से अपने देश श्रीअयोध्या जी में आगये ॥७१॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां उमा महेश्वर सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम सप्तः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५६॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम सप्तः पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तम् ॥५६

व्यतीत कालोद्वहु शोऽत्र पौराद्रष्टुं सरच्चंद्रशत प्रभास्यम्॥
रामस्य वाक् प्रीति विवर्द्ध नस्य नेत्रैर्बभूवुस्तृपिता अतीव॥

इधर श्री अयोध्यावासी बहुत काल बीत जाने से सैकड़ों शरद चन्द्रमाओं के समान प्रकाशमान श्रीमुख चन्द्र वाले और अपनी वाणी से आश्रितों के स्नेह को बढ़ाने वाले नेत्रों से सबकी भूख को तृप्त करने वाले श्रीरामजी के मुखचन्द्र को देखने की प्यास अतिशय बढ़ गयी ॥१॥

पुर प्रदेशान्निकटं त्व वाच्या तमागतं श्रुत्य वरस्य यानम् ॥
रामस्यते पौर जनाश्च सर्वे चक्रुर्महोत्साह मपूर्व हर्षैः ॥२॥

श्रीरामजी की बरात श्रीअयोध्या नगर के समीप आ पहुँच गयी है इस प्रकार अगवानियों द्वारा समाचार सुन करके सभी अयोध्या नगरवासी लोग अपूर्व हर्ष और महान उत्साह से भर गये ॥२॥

निःसृत्य निःसृत्य स्वकात्सुगेहादावासकक्षामधि गम्य मध्याम् ॥
सुवाहना भूषण भूषिताङ्गा व्यूहैः समूहै रचयन्ति सेनाम् ॥३॥

और अपने २ घरों से निकल २ करके सुन्दर भूषणों से भूषिताङ्ग हुए सुन्दर वाहनों में सवार हो २ करके समाज बद्ध सेना समूह रचना करके श्रीअयोध्या जी की गलियों से बाहर आये ॥३।

आवासका स्तोंप सहस्रशश्च ह्युपेत्य तन्मण्डल मध्यकक्ष्याम् ॥
चिन्हैस्तु भिन्ना अपि लक्षमाणाः हयाननन्तुश्च गजान्विचेरुः॥४॥

इस प्रकार श्रीअयोध्या जी की हजारों गलियोंसे सब लोग मण्डल बाँध २ करके अपने २ मण्डल के अलग चिन्हों से चिन्हित अलग २ लक्षणों से सजे हुए समाज वाले अपने मण्डलों के बाहर कक्षाओं में आकर सब मण्डल इकट्ठे हुये प्रत्येक मण्डल घोड़ा और हाथियों को नचाते हुये सुन्दर समाज बाँधे ॥४॥

एवं त्वयोध्यानिवासिनो जना निःसृत्य निःसृत्यनिजाधि मंडलात्॥
द्वारा एयथोलंघ्य पुरस्य शोभना न्यनन्त कक्ष्या मधिगम्यविस्तृताम्। ५।

इस प्रकार समस्त अयोध्या वासी जन समूह अपने २ मण्डलों से निकल २ करके द्वारों का उल्लंघन किये सम्पूर्ण अयोध्या जी अनन्त कक्षाओं में अतिशय विस्तार पूर्वक शोभायमान सजे हुये।५।

एकत्र भूतास्तु समग्र सेनाः कोलाहलैश्चैव दिगन्त विस्तृतैः॥
स्थलैक भूता इव लोक नद्य स्त्वपूर्वशोभां परिणत्य रेजुः ॥६॥

सभी मुहल्ला की सब सेना इकट्ठी होकर अपने कोलाहल से दशों दिशाओं को गुञ्जित करते हुए जिस प्रकार समस्त नदियां इकट्ठी हों इस प्रकार अपूर्व शोभा से सजे हुए॥६॥

ततो प्युदग्रं परितः प्रकाशं वादित्र शब्दो घन गर्जनैश्च ॥
कदापि काले प्रसरन्नि वाब्धिः श्रीराम यानाभिमुखं प्रतस्थे ॥७॥

चारों तरफ अतिशय बढ़े हुये प्रकाश से तथा मेघ की तरह महान् गर्जना से प्रलय कालिक समुद्र की बाढ़ सदृश श्रीअयोध्यावासी श्रीरामजी को लिवा लाने के लिए सम्मुख आये ॥७॥

श्रीरामचन्द्रानन विचक्षणेक्षवः प्राप्तेपि सा ये रुरुधुर्गतिं नते ॥
प्रमोद युक्ताश्च प्रमोदकाननं विलंघ्यते तं समीयुः सुदूरतः ॥८॥

श्रीरामचन्द्र जी के मुखचन्द्र की अतिशय सूक्ष्मबुद्धि से देखने की प्रबल इच्छा वाले श्रीरघुनाथ जी के समीप प्राप्त होने पर भी वियोग के सन्ताप से रुकी है गति जिनकी मिलने की आशा से अत्यन्त बढ़े हुए प्रमोदवन को उल्लंघन करके बहुत दूर तक आये। ८॥

दीपावलीनां परितः प्रकाशतः प्रतीत मे ते रुदयंविभावसोः ॥
वाद्य प्रघोषा त्पुनरेव यानकं केचिच्च केचित्तथापि बभ्रमुः ॥९॥

बरात की दीपावलियों द्वारा चारों तरफ अतिशय प्रकाश की वजह से सबको सूर्य उदय होगए इस प्रकार का अनुभव हुआ और फिर बाजाओं के महान् घोष से और कोई २ बहुत सी सवारियों के देखने से भी भ्रमित होगए॥९॥

ततस्तुकिंचित्सविधं समागते ह्यष्यान्तरं नाग विमान मण्डलम् ॥
समं समंतात्परितः प्रविस्तरं दृष्ट्वा प्रतीतं परमुच्च मन्दिरम् ॥१०

फिर कुछ दूर और आगे चलने पर वस्त्रों के वहुत बड़े२ महलों को देखने से तथा बड़े हाथियों को पीठों पर विमानों के मण्डप को देखने से इसी प्रकार बहुत दूर विस्तार तक चारों तरफ देखने पर तव यह श्री राम जी की ही वरात है ऐसा विश्वास हुआ ।।१०।।

दीपौषधीनां वनमेव केचिदुच्च प्रकाण्ड द्रुम संहतंतत् ॥
एवं वदन्तोपि वितर्कयन्तः पौराः पुरोयान जनैः समं ययुः॥११

और कोई२ ये दीप औषधियोंका बन है जो ऊँचे२ दीप औषधियों के वृक्षोंका समूह उसीका यह वन है इस प्रकार कहते हुए भी अनेक प्रकार की तर्कना करते हुए अयोध्या वासी लोग यह प्रकाश श्री राम जी के बरातियों के पास का है अतः हम लोग आ पहुंच गये हैं ऐसा निश्चय किये ॥११॥

सुवाहना रूढजनाः सहस्रं सन्नद्ध सस्त्राः परितो भ्रमन्ति ॥
बहिर्प्रदेशें सुक दुर्गतश्चतैः प्रज्ञापितं गोपुर माययुस्ते ॥१२॥

हजारों जन सुन्दर सवारियों में बैठे हुए अपने अस्त्र शस्त्रों से कसे हुये बरातियों के निवास के बाहर में बस्त्रों का जो कोट बना है उसके बाहर में चारों तरफ घूम रहे थे उनके द्वारा यह श्रीराम जी की वरात है ऐसा जान फाटकों करके अयोध्यावासी लोग श्रीरामजी के परकोटा फाटक पर आ गये ॥१२॥

तद्रक्षकाश्चापि सहस्रसश्च सतां गुणज्ञा गुणिनश्च सर्वे ॥
तैराद्रितास्ते विविसुश्च पौरा अभ्यन्तरं बस्त्र गृहैः प्रकीर्णम् ॥१३।

फाटकों की रक्षा करने वाले हजारों सेवकों ने सन्तों की सन्तता गुण को जानने वाले हजारों समस्त गुणियों ने उन सबका सुन्दर आदर किया इस प्रकार सभी लोग अयोध्याबासी बहुत विस्तार मे फैले हुए वस्त्रों के घरों में भीतर प्रवेश किये ॥१३॥

पर्यङ्कतोधः पदमादधन्नथ श्रुतं सुमन्तेन समागताः प्रजाः ॥
श्रीराम यानाभिमुखावलम्बिनां स्वयं सुमन्तोभि मुखं जगाम स ॥१४

इधर श्रीसुमन्त्र जी अपने पलँग से नीचे पैर रखते हुए उसी समय सुना कि सब अयोध्यावासी प्रजाजन हम लोगों के स्वागत के लिये आये हुये हैं ये श्रीराम जी की वरात के सन्मुख आये हुए हैं ऐसा जानकर श्री सुमन्त्र जी भी उनके सन्मुख आए ॥१४॥

प्रजा समालोक्य सुमन्त मग्रतः प्रसन्नपूर्णेन्दु मुखं स्मिताधरम् ॥
अतीव हर्षं प्रययुस्तदाहि ते नृपादृतं लोक सुधाधिकं नृणाम् ॥१५

सब प्रजाजनोंने देखा कि श्रीसुमन्त्रजी पूर्णमासी के चन्द्रमाके सदृश प्रसन्नमन मन्द मुसकयाते हुए आरहे हैं ऐसा देखकर उस समय अतिशय हर्ष को प्राप्त हुए क्योंकि ये श्रीसुमन्त्र जी महाराज श्री चक्रवर्ति दशरथ जी से आदरित हैं और हम सब समस्त लोक के मनुष्योंके लिए अमृत से भो अधिक प्रिय करने वाले हैं ऐसा निश्चय किया ॥१५॥

गिरं महिम्नाति गरीयसीं तदा वाद्यैः समं बोधकरैः समाहिताम् ॥
श्रुत्वा जजागार बरो बरेक्षणः रामोरवेर्वंश यशः प्रबद्ध कः ॥१६।

इधर श्रीराम जी पर्वत से भी अधिक वजनदार महिमा वाले बड़ी सावधानता पूर्वक आदर से बजाये गये बाजाओं द्वारा सुन्दर तरह से जगाये गये। सूर्यवंश के यश को बढ़ाने वाले और सुन्दर कटाक्ष वाले दुल्हा वेष में श्रीराम जी भी उन बाजाओं और गीतों को सुनकर जागे ॥१६॥

ततः सुमन्तेन निदेशिताः प्रजास्तद्रूप पानाय पिपासिते क्षणाः ॥
तृप्तिं ययुस्तद्वचनै र्मनोहरैस्तद् रूपपानादनिमेष वीक्षणैः ॥१७

उसके बाद श्रीसुमन्त्र जी ने भी श्रीरामजी के रूपरूपी अमृत को पीने की प्यास से सन्तप्त हुए प्रजाजनों को श्रीरामजी के रूपामृत पीने के लिये अर्थात् दर्शन करने की आज्ञा दी। श्रीसुमन्त्र जी के मनोहर वचनों से और अनिमेष नेत्रों से श्रीरामजी के रूपामृत को पान करने से सब लोग तृप्त हुये ॥१७

ततो भिषेकादि क्रिया यथोत्तरं कृत्वा सुमिष्ठान्न सुभोजनानि च॥
वासश्च तस्मिन् दिवसे प्रकल्पितः प्रजा जनानां श्रमवारणायवै॥१८

उसके बाद स्नानादिक उत्तर नित्य क्रियाओं के लिये तथा सुन्दर मिष्ठ स्वादिष्ट भोजनके लिए और उस दिन सभी प्रजाजन अपने श्रम निवारणार्थ एक दिन वास करें इसके लिए अनेक प्रकार की कल्पना की ॥१८॥

वाद्य प्रघोषै र्गगने विनादिते रथाश्व नागैश्च रजो भिपूरिते ॥
चचाल यानं जनयान संघटैः पुनः प्रभाते वर राघवस्यतत् ॥१९

फिर दूसरे दिन बाजाओं के महान् घोष से तथा रथ घोड़े हाथियों के चरण धूलि के उड़ने से आकाश को भरते हुए सम्पूर्ण जनसमूह और बरातियों के साथ श्रीरामजी की बरात श्री अयोध्या जी के लिये चल पड़ी ॥१९॥

ततश्च साखा नगराधि वासिनो विभूषिताः पुष्कल पुष्ट भूषणैः
नार्य्यः शिरो मङ्गल कुम्भशोभना गायन्त्य एवाभिमुखं समाययुः२०।

इस तरह बरात के श्री अयोध्या जी के समीप में आने पर समस्त अयोध्यावासी साखा वर्ग (नगर के प्रत्येक खण्डों की जनता) विविध प्रकार के भूषणों से भूषित होकर और नगर की स्त्रियायें सिरों पर मांगलिक कलशों को लेकर मांगलिक गीतों को गाते श्रीरामजी के सन्मुख आये ॥२०॥

ताभिः शरच्चन्द्रशत प्रभायुत रामस्य चालोक्य मनोहराननम् ॥
नेत्रै र्निमेषा गतयश्च पादयो र्विश्लेषिता अन्तर मोद वृत्तिभिः॥२१

उन सबने सैकड़ों चन्द्रमाओं के समान प्रकाशमान श्रीरामजी के मनोहर मुखचन्द्र को अनिमेष नेत्रों से देखा, पैर की गति भी रुक गई, अन्तःकरण में आनन्द से विभोरता उत्पन्न हो गयी ॥२१।

वाद्यैश्च साखा नगर प्रजा मुदायामे तु रामस्य जनै समाकुले ।
पादः प्रकीर्णे सरितोयथो दधौ विशन्ति वेगैर्ध्वनिभिश्च शोभनः॥२२॥

नगर से आये हुए जनसमूहों की भीड़में श्रीरामजी के दर्शनानन्द से एक याम में इतनी अधिक भीड़ होगई कि जनता के पाद संचार संघर्ष से और बाजाओं के घोष से और हृदय के उत्साह से जिस तरह नदियाँ बड़ी वेग से आवाज करती हुई समुद्र में प्रवेश करती हों—इस तरह की शोभा हुई ॥२२॥

इत्थं च साखा नगरस्थकैर्जनैर्दक्षे च वामे च पुरः प्रवर्त्तकैः ॥
पश्चात्तथैवं सुशुभे वरस्य तद्रामस्य यानस्य सुसाज वद्धकैः ॥२३॥

इस प्रकार अयोध्या नगरस्थ आई हुई जनता ने श्रीरामजी के दाए, बाँए, आगे, पीछे सुन्दर समाज बद्ध होकर के बरात में सम्मिलित होकर सुशोभित हुई ॥२३॥

अग्रे सरैरेष सरित्सुवारिणा मध्ये चलद्भिस्तु ततो नु कर्दमैः ॥
पश्चाच्च लद्भिस्तु सुतप्तरेणुभि र्वगाहितं वर्त्मनि पर्वतात्मजे॥२४

हे पर्वत पुत्री ! अब इस तरह से यह बरात चलती हुई पहले नदीके मध्य जलसे पार हुई उसके बाद दल २ से पार हुई उसके बाद तपे हुये बालू से पार हुई । इस प्रकार रास्तेको पार करती हुए ॥२४॥

चचालयानं प्रसरत्समागतै र्रामस्य राजध्वज मुत्पताकवत् ॥
सूत्रे यथा प्रोत मणिस्तथा विधं हित्वा क्रमं कोपि न पाद मादधत् ॥२५॥

श्रीरामजी की बरात राजचिन्हों से चिन्हित ध्वजा पताकाओं से चलती हुई शोभित हो रही है। बरात में चलने वाले लोग ठीक लाइन (पंक्ति) बांधकर चल रहे हैं। जिस तरह से माला में दाने सूत में गुथे रहने की वजह से इधर उधर नहीं हो पाते हैं उसी तरह सबके पैर अपनी पंक्ति से इधर उधर नहीं हो पाते हैं ॥२५॥

शिरः प्रदेशे कलधौत सूत्रैके रुष्णीष रत्नांचित धारिभिर्जनैः ॥
उच्चैर्हयस्थैश्च तथा गजस्थके र्यानं त्वपूर्वोपमया विराजते ॥२६॥

बराती लोग जो ऊँचे घोड़ा और हाथियों पर तथा रथों में बैठे हुये हैं उनके सिरों में स्वर्ण सूत्रों से बनी हुई कपड़ों की पगड़ी रत्नों से और सिर पेच आदिकों से रचित ऐसी अपूर्व उपमासे प्रकाश कर रही है ॥२६॥

विभात मार्तण्ड शिरोविभूषिताः कलाभिपूर्णा शरदींदवो यथा ॥
तेषां समूहैः किमु पूरितावनि र्विभूषिताना मुडुमाल भूषणैः ॥२७॥

और अनेक प्रकार के सिर के भूषणों से भूषित ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे अनन्त सूर्य मण्डल उदय हुए हों । मुखचन्द्र के प्रकाश से ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे अनन्त शरदपूर्ण चन्द्रमा उदय हुये हों और उनके प्रत्येक अङ्गों के भूषणों से ऐसी शोभा होती है कि क्या उनके अङ्ग रूप आकाश में सभी ताराओं का समूह मण्डल उदय हुआ है ? ॥२७॥

वाग्भिः स्व सौन्दर्य्य गुणैर्विनिर्मितार्रति श्रमश्चन्द्र सरच्चमत्कृतिः ॥
उवाह्यतास्तत्र समागतेनवैवरेण कस्यापि महीपतेः सुताः ॥२८॥

दुलहा ने किसी राजा की बहुत सी कन्याओं को विवाहा है वे सब कन्यायें इस बरात में आती हुई अतिशय शोभित होती हैं जिन्होंने अपने शौन्दर्य गुण से शरद पूर्णमासी के चन्द्रमा के चमत्कार को तथा रति को निर्माण करना केवल श्रम मात्र कल्पित कर दिया है ॥२८॥

तन्मङ्गलायोच्च ध्वजोत्पताक वस्तुरत्न कुम्भैः परितोविभूषितम् ॥
आगत्य तत्पौर जनैः स्थिताकुलं वाद्य प्रघोषैः प्रतिशब्द नादितम् ॥२९॥

इन बरातियों के स्वागत के लिए अपनी ध्वजा पताका और रत्नों के कलश आदिकों से चारों तरफ विभूषित श्री अयोध्या नगर के रहने वाली जनता ने अपने मांगलिक बाजा और गीत शब्द नाद से अतिशय कोलाहल मचाते हुए भीड़ लगा रक्खी है ॥२६॥

शिरः समादाय घटान्सुवर्णकान् जवांकुरैर्नव्य जलैः प्रपूरितान् ।

पुरां गणाभिः पुरतः समाश्रितं रामेण दृष्टं स्व पुरस्य गोपुरं ।३०॥

कोई अपने शिरों पर स्वर्ण कलशों को लेकर और कोई जौ के अंकुरों को लेकर ताजे जल से पूर्ण पात्रों को लेकर इस प्रकार नगर की स्त्रियायें नगर के द्वारों पर जहाँ तहाँ खड़ी हैं इस प्रकार अपने नगर के प्रत्येक फाटकों को विशेष रूप से शोभित हुए श्रीरामजी ने देखा ॥३०॥

प्रपूज्यद्वारं बलिदानतस्तदा पुरस्य पौरैरभि वीक्षितो मुदा ॥

वरो विवेशात्म पुरस्य गोपुरं वधू गणैः राजसुता भिरन्वितः ॥३१॥

इस प्रकार नगर द्वार पर बरात के पहुँचने पर नगर वासियों ने बलि वैश्वदेव पूजन पूर्वक आनन्दित हुये श्रीरामजी को देखा। इस प्रकार अपने वधूगण राजकन्याओं के सहित दुल्हा अपने नगर के फाटक भीतर प्रवेश किए ॥३१॥

वध्वश्च वध्वाञ्जलि मात्मनः पतेर्हर्म्योच्च कुम्भैः कनकैः प्रकाशिताम् ॥

ध्वजोत्पताका भिरशेष राजितांपुरीमयोध्यां परितो ववन्दिरे ॥३२॥

दुलहिनी सब अपनी आत्मा के पति श्रीरामजी के ऊँचे कलश ध्वजा पताकादिकों से प्रकाशमान महान ऊचे महलों में प्रवेश करते हुए अपने हाथों की अञ्जलि बांध कर सम्यक प्रकार ध्वजा पतादिकों से सुशोभित श्रीअयोध्यापुरी को चारों तरफ से प्रणाम किया ॥३२॥

प्रतोलिकायामुभयत्र काञ्चना प्रासाद राजि र्मणिभि श्चमत्कृताः ॥

तस्या गवाक्षेषु निरीक्ष्य राघवं नार्य्यो ववषु र्मणि मौक्तिकानि च ॥३३॥

नगर में प्रवेश करते हुए नगर की नारियों ने स्वर्णमयी दोनों तरफ की सुन्दर प्रतूलिका वाले जो महल मणियों से चमत्कार करते हुए प्रकाशमान हो रहे हैं उनके छज्जाओं में खड़ी हुई श्रीराघवजी को देखकर मणि और मुक्ताओं की वर्षा की ॥३३॥

अदर्शनेनाति व्यतीत कालतः प्रजा जनानां तृषितानि सांप्रतम् ॥

रामोपि सौन्दर्य्य सुधाभि रात्मनस्ततर्पनेत्रा न्यनुराग वन्ति च ॥३४॥

अत्यन्त अनुरागवती प्रजा जनता के बहुत काल व्यतीत होगया श्रीरामजी के दर्शन न होने पर इस समय दर्शनके लिये अत्यन्त प्यासी थी श्रीरामजी अत्यन्त अनुरागवती अपनीजनताके अपनी आत्मा के शौन्दर्यमयी अनुराग को दिखाकर नेत्र तृप्त किये ॥३४॥

विवाह माङ्गल्य विभूषिताधिकं वाद्यैः सुगानैः प्रतिशब्द नादितम् ॥

द्वारं पितुः पौरजनै रधिष्ठितं महेन्द्रनाथस्य वरो गमत्तदा ॥३५॥

इस प्रकार सबको प्रसन्न करते विवाहके माङ्गलिक भूषणों से भूषिताङ्ग और बरात के बाजा गान व तान से प्रतिध्वनित दिशाओं के सहित समस्त प्रजा जनता से पूजित होते हुए महेन्द्रनाथ श्रीचक्रवर्ति जी महाराज अपने पिता जी के द्वार पर श्रीरामजी आ पहुँच गये ॥३५॥

द्वारे तदा मातृगणै र्नीराजितः साकं वधूभिर्भवनान्तरं ययौ ॥
अर्घ प्रदानैश्च महर्घ्ये वाससि दधन्य यौ मातृ गणं समागमात् ॥३६॥

द्वार पर माताओंने सुन्दर आरती, द्वार परीक्षण, अर्घ्य, पाद्यादिक पूजन विधान पूर्वक बधुओं सहित श्रीरामजी को बिसकीमतीय वस्त्रों के पांवड़ाओं में चलते हुये माताओं के महलों में ले गये ॥३६॥

पौराणां च समस्त वृद्ध वयस श्चातुर्वर्ण्या स्त्रियो,
ज्ञातीनां गुणवत्तरां किलतथा रामस्यवै मातरः ॥
ताश्चा लोक्यशशि प्रभं नतादृशं साध्वींदुजानां मुखं–
तोषं प्राप्यमुदाशिषा सुवचनैः संयोजयंत्यो ययुः॥३७

नगर की चारों वर्ण की वृद्धा उत्तम स्त्रियायें बड़ी गुणवती हैं और श्रीरामजी की मातायें चन्द्रमाके समान प्रकाशमान शीलमयो नम्र दृष्टि वाली चन्द्रपुत्री तथा श्रीरामजीके मुखको देखकर सब उत्तम साध्वी चन्द्रमा के सदृश मुख वाली स्त्रियायें अतिशय सन्तोष को प्राप्त हुई और आनन्द मग्न हुए सुन्दर प्रिय वचनों से श्रीरामजी को आशीर्वादों से संयोजित करके महासुख को प्राप्त हुईं ॥३७॥

विश्लेषितानामथ मातुरंकात्समागतानां श्वसुरस्य गेहम् ॥
निसर्ग मुद्वेजितमानसानां श्वश्रूः समीहेन्मुदये वधूनाम् ॥३८॥

जो बधुयें माताओं की गोदियों से बिछुड़ी हुई हैं और पहले २ श्वसुर के घर में आई हुई हैं जिनका मन अत्यन्त उद्विग्न हो रहा है ऐसी वधुओं को सासुओं ने देखा ॥३८॥

अपूर्व भावं वसनं विभूषणं क्रीडोपचारं विविधं विचित्रकम् ॥
मातुः सखीभिः परिशीक्षिता ददं दृष्ट्वा न लोभं न च विस्मयं दधुः॥३९॥

तब अपनी बधुओं के लिए स्नेह के अपूर्व भाव से विविध प्रकार के वस्त्र और भूषणों को तथा चित्र विचित्र विविध प्रकार के खेलने के उपचारों को बधुओं के लिए दिया और सासुओं ने तथा सखियों ने सुन्दर शिक्षा देते हुए उन सब सामग्रियों को स्वीकार कराया परन्तु उन सब बधुओं ने इन सब सामग्रियों को देखकर न तो लेने का लोभ किया और न कुछ मन में आश्चर्य ही हुआ ॥३९॥

आसां तथावाल लता विशेष रन्यत्र तो न्यत्र विरोपिता नाम् ॥
कृपामृतं केवल जीवनस्या न्नृपात्मजायाः मिथिलेन्द्र पुत्र्याः ॥४०॥

जिस प्रकार कोई लता कहीं से उखाड़ कर दूसरी जगह रोपी जाय उसके लिये रोपने वाले की कृपा ही केवल आधार है उसी प्रकार इन राजकन्याओं के लिए केवल श्रीमिथिलेस राजपुत्री जी की कृपा मृत ही इनके लिए आधार है ॥४०॥

इत्थं जनन्या रघुनन्दनस्य विचार्य्य चैनं परि लालयित्वा ॥
शुभे वधूभि र्भवनाय योगे सं प्रेरितो गान महोत्सवै श्च ॥४१॥

इस प्रकार श्रीरघुनाथ जी की माता ने विचार करके इन बधुओं को अत्यन्त लाड़ प्यार किया और शुभ योग में इन बधुओं के सहित श्रीरामजी को सुन्दर गान बजान महोत्सव पूर्वक भीतर भवन में प्रवेश करने के लिये प्रेरित किया ॥४१॥

उद्वाह्य गौणेन गरीयसींगुरुः शतं सहस्राणि सुता महीपतेः ॥
आयाति रामो रवि वंश भूषणः श्रुत्वेति हर्षं प्रययौ च मैथिली ॥४२॥

महाराज श्रीचक्रवर्ति कुमार सौ हजार राजाओं की कन्याओं को गौण रूप में विवाह करके सूर्यकुल के भूषण सबके गुरू श्रीरामजी महल में आरहे हैं ऐसा सुनकर श्रीमैथिली जी अति हर्ष को प्राप्त हुई ॥४२॥

द्वारं बृहद्वर्षावरैश्च रचितं तदा सखीभिः सहसा समागता ॥
परस्परं वीच्य मनोहराननं सवारि नेत्रौ च परस्परौस्थितौ॥४३॥

और अपनी बहुत सी सखियों के साथ सहसा उठकर राजवर्दी पहनी हुई हजारों दासियों से सुरक्षित अपने बहुत बड़े महल के बृहद् फाटक पर आ पहुँची। इधर बधुओं के सहित श्रीरामजी को देखकर प्रियतम के मनोहर मुखचन्द्र के दर्शन से प्रिया जू के दोनो' नेत्रों में स्नेह का जल भर आया। और प्रिया जू के मुखचन्द्र को देखकर प्रियतम जू के नेत्रों में भी स्नेह का जल भर आया। इस प्रकार परस्पर ॥४३॥

आश्लिष्य चैकासन संस्थिता वुभौ नीराज्य सीता रघुनन्दनौ मुदा ॥
पुनश्चता राजसुता नीराजितुं यतः सखीभिः प्रथमं प्रपेदिरे ॥४४॥

गलबाहीं देकर दोनों सरकार एक सिंहासन पर बिराजे और उन दोनों सरकार की आरती के लिये श्रीकिशोरी जी की सखियों ने इन्तजाम किया और सरकार के साथ में आई हुई राजकन्यायें पहले आरती करें उसके बाद हम करेंगी ऐसा निश्चय किया उन राजकन्याओं को आरती के लिये पहले प्रेरित किया ॥४४॥

नताश्च ता राजसुता यथा क्रमं जन्मान्तरैः प्राप्य च वाञ्छितं किल ॥
पादौ पर प्रेम भरेण जग्रहुः श्रीराम पत्न्याः जन मङ्गल प्रदौ ॥४५॥

उन सब राजकन्याओं ने कई जन्मों से इच्छा करते २ आज ये जुगल सरकार हमको प्राप्त हुए हैं ऐसा मन में निश्चय करके अति अनुराग पूर्वक दोनों सरकारों को प्रणाम किया। परा प्रेम में भरे हुये दोनों श्रीराम सीता जू के चरण पकड़ करके ये ही आश्रितके लिए मङ्गल प्रदान करती हैं ऐसा निश्चय करके स्तुति करने लगीं ॥४५॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां मुमा महेश्वर
सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम अष्टः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५६॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम
अष्टः पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तम् ॥५६

चन्द्रकन्योवाच-हे सीते जनकात्जे रघुवर प्राणप्रिये पाहिनः ॥
पद्माद्यर्चित पद्मरागनिभयोः सम्वाहने नानयोः ॥

चन्द्रकायें बोली कि हे सीते ! जनमात्मजे ! हे रघुवर प्राणप्रिये ! श्रीमहालक्ष्मीसे पूजित आपके इन श्रीकमल सदृश चरणों की सेवा करते हुये हम लोगों की आप रक्षा करें ॥

इत्युक्त्वा प्रथमं चतासु प्रथमा कर्त्तुं स्तुतिं प्रारभेत् ॥
प्रेम्णागद्गदया गिराश्रु नयना छन्दो वृती माश्रिता॥१

इस प्रकार उन सब कन्याओं ने प्रेम से गदगद होकर आखों से आँसुओं की धारा बहाते हुए अपने को श्रीकिशोरी जू की दासी मानती हुई प्रथम सामूहिक स्तुति को किया उसके बाद उन सब कन्याओं की एक जो मुख्य यूथेश्वरी थी उसने विस्तार से स्तुति की ॥१॥

राजसुतोवाच—न तेनुरागो नखर प्रभाशतेर्जितेन्दु शोभे सततं सदंचिते ॥
येषां पदाब्जे रघुनाथ वल्लभे तेषां वृथा कृच्छ्रतमेन साधनैः ॥२॥

राजकन्या बोली कि हे रघुनाथ वल्लभे जिनका अनुराग सैकड़ों चन्द्रमाओं के शोभा को जीतने वाले नखों से युक्त हमेशा सज्जनों से पूजित कमल के सदृश सुन्दर आपके श्रीचरण कमलों में मजबूत नहीं होगया है उन लोगों के लिए कठिनतम साधनों में कष्ट करना व्यर्थ है ॥२॥

अंघ्रेः सरोजाभ हरस्य ते किल जातो शतस्तेन मयङ्क सौभगः ॥
भाले भवानी मुद वर्द्धनः सदा दधाति तं तापहरं सुसेविनाम् ॥३॥

हे स्वामिनी जू ! कमल की आभा को हरण करने वाले आपके चरण कमलों की उङ्गलियों में उत्पन्न हुये जो नख हैं वे सैकड़ों चन्द्रमाओं की शोभा से अधिक सुभग नख भवानीके आनन्द को बढ़ाने वाले शङ्कर जी अपने भाल में रखते हैं जो नख सेवा करने वाले आश्रितों के संतापों को हरण करते हैं ॥३॥

न ते जनानां हृदयास्पदं पदं प्रद्योतितं यन्न खरो त्रिपंक्तिभिः ॥
परार्द्ध रत्नांचित भूषणैां चितं तनो तु नो मङ्गल मुत्सवं किल ॥४॥

आश्रितों का हृदय ही है निवास स्थान जिनका ऐसे आपके चरण कमल उनके अँगुलियों में प्रकाश करने वाले नखों की पंक्ति और विसकीसतोय परार्द्ध भूषणों से भूषित आपके श्रीचरण कमल हम लोगों के लिए क्या अद्भुत मङ्गलमयी उत्सव विस्तार करें ॥४॥

भार्य्यास्वनंतासु सुभार्ग्य कस्यते कुलेन रूपेण गुणैश्च त्वा दृशी ॥
नो दृश्यते तत्र कुतोधिकाभवेत्प्रियस्य रामस्य न चेति शंसनम् ॥५॥

सुन्दर भार्य्यारूप में आपको प्राप्त किए हुए जो आपके प्रियतम हैं उनके यद्यपि उत्तम कुलरूप गुणवती अनन्त स्त्रियायें हैं वे समस्त स्त्रियायें आपके सदृश कोई भी नहीं दीख पड़ती हैं तब आपसे अधिक इन प्रिय श्रीरामजीको अन्य प्रियायें कहाँसे हो सकती हैं यह बात सही है यदि नही है तो आपही कहिये कौन है ॥५॥

त्वत्पाद पद्मे नरतात्मनां विभो न लौकिका नैव परार्द्ध सिद्धयः ॥
त्वत्पाद पद्मे निरतानिरन्तरं तेषा मकृच्छ्रेण समस्त सौलभम् ॥६॥

हे अनन्त सामर्थ्यवती श्रीस्वामिनी जू जिनका अंतःकरण आपके श्रीचरण कमलों में असक्त हो चुका है वे लोग लौकिक ऐश्वर्यको कौन कहे पर अर्थ सिद्धियोंको भी वे नहीं चाहते हैं निरन्तर आपके श्रीचरणकमलों में ही निरत रहने वाले उनके लिए बिना ही परिश्रम के समस्त सिद्धियां सुलभता पूर्वक प्राप्त रहती हैं ॥६॥

यावन्ति रूपाणि हरेः पराणि लोकान्तर स्थानि तवावताराः ॥
तेषांनियन्ता तवकान्त कान्तः सोयं वशस्ते खिल लोकनाथः ॥७॥

इन श्री परात्पर पुरुष प्रियतम जू के जितने भी रूप अनन्त लोकों बैकुण्ठों में रहते हैं तथा जितने इनके अवतार हैं उन सबके नियन्ता उर प्रेरक ये आपके कान्त ही हैं सो इस प्रकार के परात्पर पुरुष अखिल लोकों के नाथ ये श्री प्रियतम जू आपके वश में रहते ॥७॥

रसै रसज्ञं स्मित चेष्टितेन रज्वेव साकिंहि त्वया मनोजः ॥
बवन्धरामं किल ताल गत्या गुणीव रागैः रसिकं प्रियं च ॥८॥

जैसे कोई गुणी अनङ्ग को रस्सी से बाँध देवे इस प्रकार अपने बड़े रसज्ञ रसिक प्रिय इन श्री रामजी को अपनी मन्द मुसुक्यान रसीली चेष्ठाओं से तथा नृत्यगान राग ताल गुण गतियों से श्रीराम जी को आपने बाँध दिया ॥८॥

प्राणादप्यतिकान्त वल्लभ तमेत्येवं महत्वाश्रिते-
सापत्न्यं परि हृत्य तासु विनयं यत्ते विदेहात्मजे ॥
तत्रा सां च महोदयं गणयितुं शेषोपि नस्यात्प्रभुः॥
पत्युश्चैव सुखस्य मूल मितिते कारुण्य धाम्नः सदा ॥६॥

हे श्रीविदेहात्मजे ! आप यह श्रीप्रियतम जू की प्राणों से भी अधिक प्रिया अति वल्लभतमा हैं और महान ऐश्वर्य की मूलभूता हैं इतना होने पर भी आपने सपत्नीभाव को त्याग करके जिनकी सुन्दर विनय को सुन लिया है उनके भाग्य के महान उदय को शेष जी भी गणना करने के लिये समर्थ नहीं हैं। और करुणा के सदा निवास स्थान सुख के मूल आपके पति के सुखों की भी गणना शेष ज नहीं कर सकते हैं ॥६॥

चित्तं छद्म सपत्न एव नितरांधीः सद्गुणालंकृता॥
शीलेनाक्षि युगं समस्त शुभगे भालं तु भाग्याक्षरैः॥
कौटिल्येन भ्रुवौ चत्यक्त मनसा तन्मध्यकं विन्दुना॥
तुण्डे नेव शुकस्य तोपि सदृशी नाशा सुगन्धोन्मिता॥१०

हे स्वामिनीजी ! आपका चित्त सौत भावके छिद्र से रहित है और बुद्धि निरन्तर सुन्दर सद्-गुणों से अलंकृता है और दोनों नेत्र आपके शील गुणों से भरे हैं, आपका भाल सुन्दर शौभाग्य को देने वाले समस्त सौभाग्य के अच्छरों से अलंकृतहैं आपकी भृकुटी कुटिल है पर मन समस्त कुटिलता रहित है। आपके भाल के मध्य में भृकुटी के बीच विन्दु शोभित है आपकी नासिका सुक के तुण्ड के सदृश सुशोभित है जिसमें सुन्दर सुगन्धि भरी है ॥१०॥

सुक्त्या कारतया च कर्ण युगलं सद्भूषणैश्चाप्यदो
गण्डौ वर्तुल दर्प्पणेन सदृशौ मूषाश्रयो मौक्तिकैः॥
दन्तानांवर पक्ति वज्र मणिभा स्ताम्बूल रागारुणा-
मन्द स्मेर तयांचित स्त्वधरयोर्युग्मं जगन्मातृके ॥११

हे जगत की माता! आपके दोनों कान सूक्तिका के आकार के सुन्दर भूषणों से अलंकृत है, कपोल दर्पण के सदृश सिर से झुकी मुक्ताओं की गुच्छियों से शोभित हैं। आपके दांतों की पंक्ति हीराओं के सदृश चमकती हुई पान की लालिमा से रँगे शोभित हैं। मन्द मुसुक्यान से दोनों अधर ओष्ठ शोभित हैं ॥११॥

पत्युर्वर्णक इन्दु पूर्णवदने विन्दुश्चते शोभनो-
गौराङ्गे चिबुके चमत्कृत तया तेनापि चालंकृतम्॥
गीतेन स्वर सप्तकेन ललितः कण्ठ स्वलंकारितो-
रेखाभिः कलकम्बुनापि सदृशी ग्रीवास्व लंकारिता॥१२

आपके पूर्ण चन्द्रमा सदृश मुख चन्द्र के चिबुक में प्रियतम जू के रँग का विन्दु शोभित है जो गौर रँग के चिबुक में श्याम रंग का चमकता हुआ उससे भी चिबुक अलंकृत है और सातों स्वरों से पूर्ण सुन्दर ललित गीत से आपका कण्ठ अलंकृत है इस प्रकार के शंख सदृश कण्ठ में तीन रेखायें भी कण्ठ को अलंकृत की हुई है ॥१२॥

बाहु दौ च विभूषणैः करयुगं स्वार्ग्येषु नत्यं जलौ-
दानेनाभय मुद्रयापि शुभगे शोभां लभेत्सर्वदा ॥
वक्षोयौप्रियमोद कंद मधुरौ हारै र्मनोहारिभि-
मुँक्तानांमणिमिश्रतैः सुरुचिरैर्दिव्यद्भिरालंकृतौ ॥१३॥

आपकी दोनों भुजायें भूषणों से और करकमल पूज्य वर्गों के लिए अञ्जलि वाँधे हुये और आश्रितों के लिये दान से तथा अभय मुद्रा से अतिशय शोभित हैं। हे शुभगे! आपके दोनों वक्षस्थल प्रियतम जू के लिये आनन्द के कन्द मधुर मनोहारी मुक्ताओं के हारों से मणि मिश्रित सुन्दर रुचिर अलंकारों से अलंकृत सर्वदा सुन्दर शोभा को प्राप्त रहते हैं ॥१३॥

दोषाक्रान्त जनेपिते विजयतेहृत्कोमलंसद्व्रतो ॥
स्वानन्देनसुफुल्ल कञ्ज सदृशं वात्सल्यता स्वाश्रयम् ॥
दिव्यानन्त गुणैर्द्विरेफनिवहै रध्यासितं सर्वदा ॥
तेनैव स्मरनः कृपालु हृदये चेटी गणे गौणतः॥ १४॥

हे आश्रितों के लिये सत् विरुदावली युक्त रक्षण व्रत वाली श्रीस्वामिनी जू! आपका हृदय अतिशय कोमल है। दोषों से जकड़े हुये आश्रितों के लिये भी वात्सल्यता के भाव से भरे हुये अपने आनन्द से खिले हुए कमल सदृश दिव्य अनन्त गुणों से परिपूर्ण आपके हृदय की और नेत्र कमलों की जय हो। जो आपका हृदय कमल दिव्य अनन्त सद्‌गुण रूप भवरों से गुञ्जित हुआ ऐसे कृपालु हृदय से हम सब दासी गणों को भी हमेशा गौण रूप से सर्वदा स्मरण करें ॥१४॥

ब्रह्मेव साक्षात्तनु मध्यकाङ्क्षं विलोक्यते चात्मनि तान वन्दधन्
बिवेश पञ्चानन एव पर्वतं माने गते किं महतां जने स्थितिः॥१५॥

हे स्वामिनी जू ! आपका कटि प्रदेश साक्षात् ब्रह्म की तरह से सूक्ष्म देख करके सिंह अपनी आत्मा के अन्दर गौरव की बन्धन से लज्जित होकर पर्वत की गुफा में छिप गया क्योंकि महत् जनों के मान के नष्ट हो जाने पर फिर महत जनों में क्या किसी की स्थिति रह सकती है ? ॥१५॥

दिव्याम्बरै र्दिव्य विभूषणै र्वहिरन्त गुणैर्दिव्यतरै र्विभूषिता ॥
कीर्ति स्त्रिलोकी धवली कृता च ते स्व लंकृतं नित्य कुलं तया द्वयम् ॥१६॥

हे स्वामिनी जू ! आपका शरीर बाहर से दिव्य वस्त्र भूषणों से सुशोभित है और भीतर से दिव्य सद्‌गुणों से भूषित है इस प्रकार की आपने अपनी कीर्ति को तीनों लोकों में उज्ज्वल कर दिया। इसी उज्ज्वल कीर्ति से आपने अपने नैहर श्वसुराल दोनों कुलों को अलंकृत कर दिया ॥१६॥

सौन्दर्य्य शीलेन मुख प्रभामतैः रतिस्तथेंदुश्च तिरस्कृतौ त्वया ॥
हस्तश्रिया चैवयथाहित पादयोस्तिरस्कृतं रक्त सरोज कं वनम् ॥१७॥

और अपने सौन्दर्य और शील से तथा मुख के सैकड़ों पूर्ण चन्द्र सदृश प्रकाश से रति व चन्द्रमा आपसे तिरस्कृत हो गये हैं। इसी प्रकार आपके हस्तकमलों की शोभा से तथा चरणकमलों की शोभा से लाल कमलों का वन तिरस्कृत होगया ॥१७॥

गाम्भीर्य्य भावेन जितोम्बुधि स्त्वयाधृत्या मही वाक् च समस्त धी गुणैः ॥
अद्भिश्च रत्नैश्च तथाहि सागरो धिया गुणैः पूर्णतमासि त्वं सदा ॥१८॥

अपने गम्भीर भाव से समुद्र को आपने जीत लिया। अपने धैर्य से पृथ्वि को जीत लिया। अपनी बुद्धि के सद्‌गुणों से सरस्वती को जीत लिया। जिस प्रकार समुद्र जल से और रत्नों से भरा रहता है उसी प्रकार आप बुद्धि के सद्‌गुणों से स्नेह से पूर्ण रहती हैं ॥१८॥

लोकान्तरं दिव्यतरः सु सेविनां भाले कुवर्णा न पि लोपिभिः शुभैः॥
विराजते राजसुते गुणैः समं रूपं त्व नङ्गे विलशत्प्रकाशितैः ॥१९॥

सुन्दर सेवा करने वाले आश्रितों के मस्तक में कुअङ्कों को भी लुप्त करते हुये अपने दिव्य सद्‌गुणों से आप उनको अपने दिव्य लोकों में भेज देती है इस प्रकार के स्वभाव वाली हे राजपुत्री ! आप अपने दिव्यतर गुणों से प्रकाश करती हुई अपने सदृश स्वभाव वाले अपने अनङ्ग के सदृश प्रियतम में विलास करती हैं ॥१९॥

उच्चैस्तरां लोक सुशांशिते कुले सुरेन्द्र ताधः कृत कोटि वैभवे ॥
जाता पुनः सौभग रूप संशिते न तुल्यता मेति त्वया हरि प्रिया ॥२०॥

सर्व लोक प्रशंसनीय उच्चत्तर उत्तम कुल में प्रकट हो करके अपने कोटि गुने अधिक वैभव से इन्द्र को नीचा कर दिया। इस प्रकार की प्रकट होने वाली अतिशय प्रशंसनीय सौभाग्य रूप वाली आप की तुल्यता में विष्णु की प्रिया लक्ष्मी नहीं आ सकती है ॥२०॥

कथं न पत्यु र्नयनोत्सवा भवेद्वधूगुणै रूप कुलेन त्वादृशी ॥
मनोहरं वस्तु पवित्र जन्मालोके भवेत्तद्धि सुदुर्ल्लभं नृणाम् ॥२१॥

जो कोई बधू अपने गुण रूप व कुल से आपके सदृश हो वह प्रियतम के नेत्र उत्सव के लिए क्यों न होगी ? लोक में मनुष्यों के लिए पवित्रता पूर्वक उत्पन्न हुई मनोहर वस्तु अतिशय दुर्लभ होती है ॥२१॥

सुरेन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र कन्यका यस्या वरोधे प्रिय रूप लक्षणाः ॥
सवाप्त कामोपि त्वया मकामयेत्स्वन्नेन तृप्तोपि यथेच्छत सुधाम् ॥२२॥

जिसके घर में देवेन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र कन्याओं की भीड़ लगी है जो कन्यायें अत्यन्त प्रिय रूप लक्षण वाली हैं उन सबके रहते हुए भी तथा स्वयं पूर्णकाम होते हुए भी श्रीप्रियतमजू आपके लिए हमेशा कामना करते रहते हैं। आपकी बोली से उसी तरह लालायित रहते हैं जैसे—कोई तृप्त हुआ पुरुष फिर भी अमृत की इच्छा करता ही है ॥२२॥

शिल्पां भवत्याः पद पृष्ठ युग्मके प्रकाशितु लक्तक रागचित्रकैः ॥
आदाय रत्नानि वहूनि स्वां जलौ नत्यौ जयन्त्व स्य सखी गणेषु ते ॥२३॥

हे स्वामिनी जू ! सखिगणों के बीच में छिपे हुए आपको भूषित करने के लिए अपनी अञ्जलि विविध प्रकार के बहुत से रत्नों को लिए हुए आपके युगल चरण कमलों के पृष्ठ भाग में अपनी शिल्पविद्या को प्रकाशित करने के लिये लाक्षारंग (महावर) की चित्रकारी करते हुये आपके चरणों में प्रणाम करने वाले (प्रियतम की जय हो ॥२२॥

कान्ता पदाब्जा भरणाति झंकृते त्वया निदाघे प्रमदा वनान्तके ॥
विरच्य पुष्पांचितया सुभूषणै र्गायन्हसन्सद्भि हरन्न यत्यसौ ॥२४॥

गर्मी के दिनों में प्रमदावन के अन्दर युवतियों के चरण कमल नूपुरों के झंकार से झकृत कुञ्जों में पुष्पों से रचना किये हुये सुन्दर भूषणों द्वारा सुन्दर श्रृङ्गार करके और पुष्प पर्यंक आदिकों की रचना करके आपके साथ गाते हँसते अनेक प्रकार के विहार करने वाले हे स्वामिनी जी ! इन आपके प्रियतम की जय हो ॥२४॥

समुत्प्लव न्नाल्पवय न्सुवारिण हस्तेन हस्तं च त्वया नियोजयन् ॥
आर्द्रालका लिप्त कपोल शोभनो जयत्यसौ जानकि वल्लभस्तव ॥२५॥

आपका हाथ पकड़ करके सुन्दर जल से भरे हुये सरोवर में ऊँचे बुर्जों से जल में कूदते हुये आपके साथ जल में बूड़ने वाले फिर दोनों जने जल से ऊपर उतर करके भीजे हुये कपोलों पर चिपके हुये अलकों से शोभित हे श्रीजानकी जी ! ये आपके वल्लभ की जय हो ॥२५॥

क्वचि न्निदाघे जल यंत्र मण्डले प्रफुल्ल पङ्के रुह चारु लोचनः ॥
आर्द्रां सुको यंत्र मुखानि भ्राम यन्त्वा मार्द्रयन्प्राण पति जय त्यसौ ॥२६॥

कहीं २ गर्मी के दिनों में बहुत से जल जंत्रों के मण्डल के अन्दर खिले हुये कमल के समान विशाल नेत्र वाले भीजे हुए कपड़ाओं से लथपथ अङ्ग वाले श्रीप्रियतम जू बहुत सुन्दर जल जंत्र को हाथ में लेकर के घुमाते हुये सब सखियों के और आपके मुख मे फुआरा छोड़ते हुये आपको भिजाने वाले इन प्राणपति की जय हो ॥२६॥

दास्यामि दास्यामि वदन्ददाति नोयथा धनाढ्यो कृपिण स्वभावतः ॥
तथा सुचौ मेघ उपेत्य मण्डलश्चिरान्न वर्षत्यपि गर्ज्जयन्मुहुः ॥२७॥

जो मैं देऊँगा २ कह करके स्वाभाविक कृपण धनिक की तरह से फिर नहीं देते हैं, तथा जैसे आकाश में उदय हुये मेघ मण्डल बहुत देर से बार २ गर्जते हुये भी नहीं बरसता है उसी प्रकार पवित्र विलास स्थानों में सबको बार २ तरसाने वाले इन प्रियतमकी जय हो ।।२७।।

इत्थं वदन् त्वां प्रतिमोदय न्हसन्तद्वाटिकाया भवने त्वया सह ॥
स्थितः सखीनां परिवात्य मण्डले जयत्यसौ जानकि बल्लभस्तव ।।२८।।

देंगे २ यह कह करके और हँस करके आपको आनन्दित करते हुये कभी आपको वाटिका में ले जाने वाले कभी भवन में ले जाने वाले कभी सखियों के मण्डल से घिरे हुए बैठ करके बात करने वाले हे जानकी ! इन आपके प्रियतम की जय हो ! ।।२८।।

स्व मूर्ति दिव्यो पयितु नभस्तलं त्वदंगभा सातडिदेव सादृशी ॥
आसार संजात मृदङ्ग वद्ध्वनिं श्रुत्वानन्तुश्च कल्पायिनां गणाः ।।२९।।

कभी २ आकाश मण्डल में अपने मूर्ति को दिव्य मेघ मण्डल की उपमा में रख करके आपकी अङ्ग शोभा को बिजली सदृश बना करके और इन मृदङ्गादि संगीत की ध्वनि को मेघ की गर्जना बना करके सुनाकर सखि समाज रूप मयूरों के गणों को नचाने वाले आपके प्रीतम की जय हो ।।२९।।

एतन्निरीक्ष्याथ नितान्त कौतुकंमुद प्रदीपं प्रति पश्य मेघः ॥
इत्थं वदन्प्राण पतिस्त्वया सह जयत्यसौ जानकि मोद वर्द्धनः ।।३०।।

और इस आकार के मेघ मण्डल व बिजली की चमक को देख करके अतिशय कौतुक पूर्वक आनन्द को प्रकट करने के लिए श्रीप्रियतम जू प्रिया जू से कहते हैं कि हे प्रिये ! यह देखो, यह मेघमण्डल मेरे से विरोध करते हुये मेरा प्रतिद्वन्द कर रहा है, इस प्रकार कहते हुये आपके साथ आनन्द को बढ़ाते हुये हे जानकी ! यह आपके प्रियतम को जय हो ।।३०।।

उत्पश्यकान्ते परितो वितानकं कृत्वास्थितः श्रावणिकः सुमेघः ।
विद्युद्विलाशस्तु तदन्तरं यन्मद न्तरं कर्षति तत्प्रकामम् ।।३१।।

हे कान्ते ! ये उधर देखिये तो, यह श्रावण का सुन्दर मेघ चारों तरफ से वितान तान करके बैठा है और देखिये तो उस मेघ के भीतर में बिजली का विलास हो रहा है इस प्रकार का यह मेघ मेरे अंतःकरण को अत्यन्त विलासासक्त करके खींच रहा है ।।३१।।

इत्थं वदन्त्वां प्रति हर्म्य जाले पश्य न्नवाम्भोज विशाल नेत्रः ॥
विनोदयन्प्रीति विशेषवाण्या जयत्यसौ जानकि वल्लभस्ते ।।३२।

इस प्रकार कहते हुये महल के प्रत्येक छज्जाओं में आपके साथ जालियों द्वारा आकाश को देखाते हुये कमल के सदृश विशाल नेत्र वाले प्रीति की विशेषता पूर्वक वाणियों से आपको बिनोदित करते हुये हे जानकी ! इन आपके बल्लभ की जय हो ।।३२।।

सजल जलद कान्ति र्दीव्य साटो त्वदङ्गे तदुपरि कलधौते नापि सूत्रेण प्रान्तं ॥
रचित रुचिर शोभंतत्तडिद्भातिकारं प्रिय हृदय सुभूमौ मोदवल्लीं निषिञ्चेत्।।३३

हे स्वामिनी जी! आपके अङ्ग की यह दिव्य साड़ी सजल जलद की सी कान्ति वाली शोभित है और इस साड़ी के ऊपर स्वर्ण सूत्रों से बनी हुई किनारी जो रचना की गई है इसकी अतिशय रुचिर शोभा विजली सा काम करती हुई प्रतीत हो रही है। श्रीप्रियतम जू के हृदय रूपी भूमि में आनन्दमयी लता को सींच रही है ॥३३॥

भूषा मौक्तिक तारकाति सदृशी पूर्णेन्दुनास्यप्रभा –
मंदं मन्द मनोहर स्मित मिदं यन्नेलशत्कौमुदी ॥
नेत्र खञ्जन केलिरङ्ग सुरभि वाचामृतं श्रावयें–
दित्थं त्वां परिपश्यतो रघुपते दृष्टिश्चकोरायते ॥३४॥

हे स्वामिनी जी ! आपके शरीर रूप आकाश में मुक्ताओं के भूषण रूप ताराओं की पंक्ति आप मुख रूप पूर्णमासी का चन्द्रमा इस चन्द्रमा में मन्द २ मनोहर मुसुक्यान रूपी प्रकाश इस प्रकार जो आपके शरीर रूप आकाश में प्रकाशित हो रही है, आपके खञ्जन सदृश चंचल नेत्रों में केलि के रङ्ग रूप सुगन्धि से भरे हुए शोभित हैं। वाणी रूप अमृत की वरषा करने हुये इस प्रकार आपके मुख चन्द्र को सम्यक प्रकार देखने वाले श्री रघुपति जी की दृष्टि चकोर का रूप धारण की हुई है ॥३४॥

त्वदङ्ग संसर्ग सुगन्धि मारुतं स्वाघ्राय नान्येषु मनोदधेत्प्रियः ॥
सम्बन्धिनं चेदधिकं गुणैरपि हित्वा तदन्यं किमुसंश्रयेद्बुधः ॥३५॥

हे स्वामिनी जी ! आपके श्रीअङ्ग सुगन्धि से संसगित वायु का स्वाद लेकर के अब प्रियतम जू अन्य सुगन्धियों के लिये मनको नही बढ़ाते हैं। इसी प्रकार कोई भी प्रियतम जू का सम्बन्धी गुणोंको आपसे अधिक भी हो तो क्या विद्वान इन प्रियतम जू को त्याग करके अन्य आश्रयण कर सकता है ? अपितु नहीं। (अर्थात हम सब आपको ही आश्रिता हैं) ॥३५॥

त वेदं यद्वेदैः प्रचुर भणितं ज्योति रखिलं–
प्रभा सोमेर्केऽग्नौ चरण नख दीपैश्च परित ॥
तदस्माकं सीते प्रसरतु परं भाव हृदयें –
यतः कैंकर्य्याख्यं सतत मव शेषं सुखयते ॥३६॥

हे स्वामिनी जू ! वेदों ने जो आपके अङ्ग प्रकाशको अतिशय बढ़ा हुआ ब्रह्म ज्योति रूप समस्त ज्योतियों का कारण बताया है और चन्द्रमा सूर्य अग्नि में आपके चरणोंके नखो से प्राप्त हुआ प्रकाश बताता है सो हे सीते! यह आपके चरणों का प्रकाश हम लोगों के सुन्दर भावना किये हुए हृदय में परम प्रकाशित हो जिससे हम लोग सतत् कैंकर्य रूप समस्त सुखों की सीमा को प्राप्त हो सकें ॥३६॥

अग्न्यर्क रत्नै रचिता गृहा वहु तूलोर्ण वासांसि महोष्णकानि च ॥
सन्त्येव कान्तस्तु कदाप्युदग्रकं सीते नु सीतं न जयेत्वया विना ॥३७॥

हे स्वामिनी जी ! श्रीकनक भवन में अग्नि सूर्य रत्नों से निर्माण हुए बहुत घरों के रहने पर भी और उन घरों में बहुत प्रकार सूती ऊनी महान् गर्मी को पैदा करने वाले बहुत से वस्त्र ओढ़ने बिछाने के बिछाने के लिए सम्यक प्रकार होते हुए भी कभी २ प्रियतम जू ठण्ढी से अत्यन्त संतप्त होकर आपसे कहते हैं कि हे सीते ! मैं आपके बिना इस ठण्डी को नही जीत सकता हूँ ॥३७॥

ढक्काश्च कांश्यं च मृदङ्ग झर्झरं सखीजने गायति वादपत्यलम् ॥
पक्षे प्रियायाः प्रिय पक्षकाश्चता उच्चारयंत्यो जयशब्द मुच्चकैः ॥३८॥

हे स्वामिनी जी ! ये आपके और श्रीप्रियतम जू के सखिसमाज में ढोलक, झांझ, मृदंग, झर-झर सम्यक प्रकार बजाते हुए दोनों पक्ष की सखियां आप दोनों सरकार की ऊँचे स्वरों से जय बोलती हैं ॥३८॥

गणैः सखीनां शिशिरे प्रिया प्रियौ श्रीजानकी राघव केलि चञ्चलौ ॥
धृत्वा करे कौंकुम वारि जंत्रकं निषिंच यन्तौ जयतः परस्परम् ॥३९॥

हे स्वामिनी जू ! कभी २ शिशिर ऋतु में बहुत सी सखिगणों को साथ लेकर दोनों श्रीजानकी राघव केलि चंचल हुए प्रिया प्रितम के हाथों में फूलों के रंग भरे हुए जल जंत्रों को लेकर परस्पर भिजाते हुए अपनी जय की कामना करते हैं ॥३९॥

प्रिया प्रियस्यो परिकैतवेन च तथा प्रियाया उपरि प्रियो हसन् ॥
क्षिप्तारुणं चूर्ण सितं सुगन्धिना रणन् झणन्प्लायति धावयेत् मुदा ॥४०॥

कभी प्रिया जू ! प्रियतम के ऊपर छल करके रङ्ग डाल देती हैं उसी प्रकार कभी श्रीप्रियतम जू भी हँसते हुए प्रिया जू के ऊपर छल से रङ्ग डाल देते हैं और लाल सफेद सुगन्धित चूर्ण को डालते हुए भूषणों की झनकार करते हुए एक दूसरे को जीतने की इच्छा से आनन्द मग्न होते हुए दौड़ते हैं ॥४०॥

इत्थं तु ते प्राणधनेन केलयो जयन्तु सार्द्धं सकला कलांचिताः ॥
सीते सुधाग्रा भवने सुकानके महानके शब्दति शब्द मुच्चकैः ॥४१॥

इस प्रकार के आपके प्राण धन प्रियतम जू आपके साथ केलि करते हुये सब कलाओं से घिरी हुई पण्डिता आपको जीत लेवें, हे सीते ! इस प्रकार के आप दोनों के विलास में केलिकौतुक होते हुये कभी अमृतमयी महलों में सुन्दर वनों में महान् अमृतीमयी शब्द ऊँचे स्वर से गुञ्जित होता है॥४१

वर्द्धतां जनकात्मजे सुख रसै र्गानैः सखीनां मुदा-
धावन्तीभि रशेष भूषण झणत्कारैः सखीभिस्तथा ॥
वादित्रध्वनिभिश्च खंभुवि तलं कुर्वंश्च चूर्णाऽरुणं -
यंत्रैः कुम्कुम वारि पूर्ण कनकैः कान्तेन ते केलयः॥४२॥

हे जनकात्मजे ! सखियों के गान आनन्द सुख रसों से भीजी हुई और समस्त भूषणों से सजी हुई और प्रियतम जूके साथ होली कौतुक केलि में दौड़ता हुई भूषणोंके झनकार से झंकित तथा बाजाओं के आवाज से आकाश और पृथ्वी को पूर्ण करती हुइ गुलाल के अरुण रंग कुम्कुम और विविध प्रकार के रंगों से भरी हुई पिचकारी आदिक जंत्र लिए हुए प्रियतम जू के साथ विनोद संघर्ष में आपकी केलियां अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त होवें ॥४२॥

प्रियाया भूषितः प्रेम्णा कपोलालक शोभ्यसौ ॥
रत्न दण्डो चितं धृत्वा करे कौतुक माश्रयम् ॥४३॥

ये श्री प्रियतम अत्यन्त अनुराग पूर्वक श्री प्रियाजू के द्वारा भूषित होकर के कपोलों पर अलकों से अत्यन्त शोभायमान आपके साथ कौतुक विनोद करने की इच्छा से उत्तम रत्नों के दण्ड को लेकर ।।४३।।

फाल्गुण्यामथ पर्वण्यां विशेष ललितादिना ।।
जयतिस्म भर्त्सयन्त्वां नति प्रियो नत भ्रुवाम् ।।४४।।

फाल्गुन पूर्णमासी के रोज विशेष करके सुन्दर केलि रंगों के साथ मोर्चा पर खड़े हुए आपको जीतने के लिए यद्यपि ये प्रियतम हमेशा आपको प्रणाम करना ही पसन्द करते हैं तो भी इस समय भर्त्सना दे रहे हैं और आप भी अपने दाव को ताकने के लिए उस समय नम्र दृष्टि से चुपचाप खड़ी हैं ।।४४।।

हास्याय हेमाथ सखीं विधाय तं वेषेण नाम्ना सुख सुन्दरी प्रियम्।।
निसर्ग मौग्ध्यान्न परीक्षितं त्वया सख्योट्ट हास्येन तदा जयन्तु ते ।।४५

इसके बाद एक हेमा नाम की सखी ने हास्य के लिए उन प्रियतम को सखी का वेष बनाकरके उस सखी का सुखसुन्दरी नाम रक्खा और उस सुख सुन्दरी के द्वारा आपके चरणों की सब सेव करायी गयी। परन्तु आपके अतिशय मुग्धता के वस होकर उन प्रियतम जू को परीक्षा न कर पायी। उस समय सखियों ने खूब ताली बजा करके अट्टहास्य किया इस प्रकार की आपकी केलिओं की जय हो ।।४५।।

मयूर वीणा द्यु पलक्षितेन त्वदन्तिकं प्राप्य वदं गुणानपि ।।
सरस्वती वेष उपेत कौतुक स्त्वयापि कान्तस्तु जयत्य लक्षितः ।।४६।।

हे स्वामिनि जू ? मोर की सवारी में बैठे हुए सरस्वती के वेष को धारण किए हुए वीणादिक वस्तुओं को लेकर सरस्वती के योग्य सब सजावटों से सजे हुए आपके समीप आकर आपके दिव्यगुणों को गान करते हुए अपने प्रियतम जू को आपने नहीं पहचाना। इस प्रकार केलि करने वाले की जय हो ।।४६।।

तरोः शाखा मवलंब्य भुजा मे कां परस्परम् ।।
स्थिता वंशे निधायात केल्यंतजयतः प्रियौ ।।४७।।

एक २ भुजा से परस्पर गलबाही दिए हुए और एक २ भुजा से पेड़ की डाल को पकड़े हुए इस प्रकार परस्पर केलि करते हुए आप दोनों प्रियों को जय हो ।।४७।।

प्राप्ते वसन्ते प्रमदा वनान्तके श्रुत्वा निकुञ्जे पिक नादिता मुदा ।।
गिरं त्वदीयां तु तया विशेषय न्प्रतीपयन्त्वां मुदयं जयत्यसौ ।।४८।।

इसी तरह वसन्त ऋतु के प्राप्त होने पर प्रमोद वन के अन्दर एकान्त कुञ्जों में विराजे हुए आप दोनों के उस समय लन में कोकिलादि पक्षियों के कल्लोल को सुनकर प्रियतम जू ने आपकी बोली का कोयल की बोली से मेल किया। इस प्रकार परस्पर आनन्द पूर्वक केलि करते हुए आप दोनों का जय हो ।।४८।।

कुञ्जा न्निकुञ्जं भ्रमरै र्विगुञ्जितं विघं गणैः कूजित मद्भुता यनम् ।।
भ्रमन्भवत्या भुज भंश माद धज्जयत्यमा जानकि वल्लभस्तव ।।४९।।

हे श्री जानकी जी ? आपको गलबाहीं देकर एक कुञ्ज से, दूसरे कुञ्ज में तीसरे कुञ्ज में इस प्रकार भ्रमरपक्षी आदिकों से गुञ्जित कुञ्जों में आपके साथ भ्रमण करते हुए इन आपके वल्लभ को जय हो ॥४९॥

वासन्तिकं पुष्प पराग पल्लवं तथाहि सौरभ्य दिगन्त मुच्छ्रितम् ॥
एतैस्त्वदङ्ग विजयन्विचक्षणो जयत्यसौ जानकि वल्लभ स्तव॥५०॥

हे श्री जानकी जी ? वासन्तिक पुष्पों के पराग से रंगे हुए कोमल पल्लव भी सुगन्धि दिशाओंमें अत्यन्त बढ़ी हुई उस सुगन्धि को भी आपके श्री विग्रह की सुगन्धि जीत रही है इस प्रकार कहते हुए अत्यन्त सूक्ष्म बुद्धि वाले ये आपके प्रियतम की जय हो ॥५०॥

यथा वसन्तेवनराजि मभ्दुतां सरद्दतौद्यौश्च यथा लभेच्छविं ॥
सीते तथात्वं च रघुत्तमे सदा दधासि शोभां चपला घनांतरे ॥५१॥

हे स्वामिनिजू ? जिस प्रकार वसन्त ऋतुमें अद्भुत रंगवाले फूलों से भरी हुई वनोंकी पंक्ति शोभित है। और जिस प्रकार आकाश शरद् ऋतु में शोभित होता है; हे सीते ? जिस प्रकार मेघ के अन्दर बिजली को शोभा होती है उसी प्रकार से आप भी हमेशा श्री रघुनाथ जी में शोभित हैं ॥५१॥

आत्मानं प्रति वेदि तुं जनकजे शक्ता वयं न स्वतः-
त्रैलोक्योत्तर सुकृतै विलसति त्वत्सख्य सांनिध्यकम् ॥
लब्धं यद्वहु जन्मभि र्मुनिवरैः कृच्छ्रेण संभाव्य ते-
तन्नि र्हेतुकत्वत्कृपागुणनिधे सत्कारणं गण्यते॥५२॥

हे गुणनिधे ? जनकजे ! हम लोग स्वतः अपनी आत्मा के स्वरूप को जानने के लिए अत्यन्त असमर्थ थे परन्तु त्रैलोक्य पुण्यसे अतिरिक्त जो एक अद्भुत पुण्य हमको प्राप्त हुआ है निर्हेतुकी आपक कृपा ही मुल कारण समझी जा सकती है । इस प्रकार कीआपकी कृपा से उत्पन्न हुआ जो त्रैलोलोत्तर पुण्य उससे हम लोग आपके उस सानिन्य सख्य सम्बन्ध को प्राप्त करते हैं ॥५२॥

वयन्ते किङ्कर्यो विशद गुण गणं गायमानोंमहद्भिः-
रमाम्यं दासी भी रघुवर नयनांम्भोज भोगायताक्षि ॥
कदाचिन्मन्यध्वे गुण गण सुखमा शील सेवा न ताङ्गा ॥
स्तदास्माकं सीते किमपि शरण तां याति कान्या वरा को ॥५३॥

हे श्री रघुवीर नयन कमलों के भाग्य स्वरूप विशाल नेत्र वाली श्री स्वामिनी ! हम लोग जो निर्मल गुण गणों को गाने वाला आपकी कैङ्कर्य करने वाली दासी है बड़े २ लोग हम लोगों की सम्पन्नता नहीं कर सकते । हे सीते ? कदाचित आप लोगों को गुण युत और परमा शोभा सम्पन्ना परम शीलवती आपकी सेवा नम्र हुई हम लोगों को आप मानलें तो हे सीते ? तब अन्य कौन वराकी (तुच्छ) होगी कि जो हम आपकी शरणागतियों को समता को प्राप्त हो सकेगी ॥५३॥

प्रमादिता तया सीता स्तोत्रेण नृप कन्यया ॥
हृदयालुः कृपापूर्णा सा प्युवाच ततो परम ॥५४॥

इस प्रकार उन समस्त कन्याओं की मुखिया उस राजकन्या ने अपनी स्तुति से श्री किशोरी जू को प्रसन्न कर लिया। उसके बाद सहज स्वाभाविको सरल हृदय वाली श्रीकिशोरी जी भी उसके उत्तरमें अत्यन्त कृपा से पूर्ण वचन बोलीं ॥५४॥

यूयं सर्वा मदीया स्युः कला भक्ति प्रवर्त्तये ॥
कान्तस्य जीव लोके तु जीवान्जीवयितुं सदा ।५५॥

हे सखियों ? आप सब मेरी हो; और जीव लोक में जीवों को हमेशा संजीवनी बूटी रूप मेरे प्रियतम की भक्ति की कला का विस्तार करने के लिए गयी थीं ॥५५॥

भाव भक्ति समायोगात्पुनः प्राप्ता मदीच्छया ॥
तेन सुखयतां कान्तं मत्कृपा सुखमाप्नुयुः ॥५६॥

और फिर मेरी इच्छा से आप लोग भाव भक्ति का सुन्दर योग पाकर के मुझे प्राप्त हुई हो। इसलिए अब मेरी कृपा का फलस्वरूप मेरे प्रियतम को सुखी करो और तुमभी मेरी कृपाके फलस्वरूप सुख को प्राप्त करो ॥५६॥

एव मुक्ता प्यति स्नेहाज्ज्ञानक्या ता अपि प्रभाः ॥
आनीय हृदये सर्वागाढ मालिंगिताश्चिरम् ॥५७॥

इस प्रकार श्री जानकी जी ने उन सबसे जब अति स्नेह पूर्वक कहा और उन सबको अपने हृदय से लगाकर बड़ी देर तक गाढ़ आलिंगन किया इस आलिंगन से वे श्रीकिशोरीजी के अङ्ग प्रकाश स्वरूपा अति ही सुखी हुईं ॥५७॥

यद्यप्येवास्य रामस्य सीता छायेव वर्तते ॥
तथाप्यद्यः मुमोदासौ सीतया स्वीकृता यदा ॥५८॥

यद्यपि श्री सीता जी इन श्री राम जी की छाया की तरह से व्यवहार करती हैं (श्री राम जी के स्वीकार करनेपर तो वे राजकन्याएं स्वीकार हो ही गयीं) तो भी इस समय श्री सीता जी के उन सबके स्वीकार करने से श्री राम जी अति प्रसन्न हुए ॥५८॥

उच्चध्वज पताकाभिः शिखिरैः परितोवृता ॥
भासिताः तोरण द्वारै र्बहु कक्षाभिरंतराः ॥५६॥

और जो श्री कनक भवन ऊँची ध्वजा पताकादि शिखरों से चारों तरफ अतिशय प्रकाशमान शोभित है और तोरण द्वार गली आदिकों से सुन्दर विस्तार पूर्वक सब महल अलग २ शोभित हैं ॥५६॥

ते तु वर्ष्म वरैर्द्वारं रक्षिता सर्वतो दिशः ॥
भोग भोगोप करणैः समन्ता त्परि पूरिताः ॥६०॥

और फाटकों पर सुन्दर शरीर तथा सजावट वाले द्वार पालों से प्रत्येक महल चारों तरफ सुरक्षित है और सभी महल भोग तथा भोग सामग्रियों से सम्पक् प्रकार पूर्ण भी हैं ॥६०॥

दिव्यास्तरणै युक्ताश्च वितानैः परिशोभिताः ॥
प्रसाद सु मुखा ताभ्योददौ प्रासाद राजयः ॥६१॥

और प्रत्येक महलों में दिव्य सब प्रकार के विस्तर बिछे हुए हैं और बितान परदादिकों से सुन्दर शोभित हैं इस प्रकारके श्रीकनकभवनकी स्वामिनी श्री किशोरी जी उन सब चन्द्रमुखियों के साथ महल के भीतर प्रवेश करके बहुत महलों को उन राजकन्याओं के लिए दिया ॥६१॥

आदृतैरासनं ता सां सभायां श्रेष्ठ पंक्तिषु ॥
दिगन्त नृपकन्याभिः संकुलायां ददौ परम् ॥६२॥

उसके बाद श्रीकिशोरी जू ने अपने सभा कुञ्ज में भी समस्त दिशाओं की सब राजकन्याओं को उत्तम पंक्तियों में इन राज कन्याओं को बड़े आदर से परम आसन दिया ॥६२॥

लब्ध्वा रामं पतिं साक्षान्मूला दंकुरितो मुदः ॥
तासां सीता प्रपन्नायां सोऽभवत्फलवान्यथा ॥६३॥

इस प्रकार उन सब राजकन्याओं ने श्री सीता जी की प्रपत्ति करके उस प्रपत्ति का जो उत्तम फल होना चाहिए वह उत्तम फल अपनी आत्मा के कार्य कारण भेद मूल से अंकुरित होकर के साक्षात् श्री राम जी को पति रूप में प्राप्त करके आनन्द की सीमा में प्राप्त हुआ ॥६३॥

सभायां राम कान्ताया विविशुस्ताः शुभे दिने ॥
दृष्ट्वाश्चर्यं महैश्वर्यं भाव बन्धाधिकं ययुः ॥६४॥

सुन्दर दिनमुहूर्त में श्री रमाकान्ता जी की सभा में प्रवेश करके उन सब राजकन्याओं ने भाव को बन्धन देने वाला महान् आश्चर्य मयी ऐश्वर्य को भाव की सीमा से अधिक रूप में देखकर आश्चर्य को प्राप्त हो गयीं ॥६४॥

नत्युन्तरं तत्पदाब्जे सेविते सुर योषिताम् ॥
स्थापिताः प्रतिहारीभिः समीपे मुख्य पंक्तिषु ॥६५

सभा में प्रवेश करके श्री स्वामिनी जी आदि मुख्यों को प्रणाम करने के बाद उमा, रमा, ब्रह्माणी आदिक देवस्त्रियों से सेवित चरणों का दर्शन करके फिर प्रतिहारियों द्वारा श्री किशोरी के समीप मुख्य पंक्तियों में बैठाया गया ॥६५॥

विद्या शिल्प प्रवीणानां विद्या शिल्प परीक्षणम् ॥
कृतं तासां च जानक्याः सखी भिस्तत्समीक्षया ॥६६

इसके बाद श्री किशोरी जू की इच्छा से श्री जानकी जी को सखियों ने उन सब राजकन्याओं की विद्या और शिल्प कला प्रवीणता की परीक्षा की और जितनी विद्या और शिल्प कला में त्रुटि थी उन सबको अपनी शिक्षा से पूर्ण किया ॥६६॥

गुणैर्नैवाधिका प्रीतिः प्रेम्णा सम्बन्धतश्चवा ॥
परस्परं दृढत्वेन जाता चैकत्र योगतः ॥६७॥

प्रीति गुणों की अधिकता से भी नहीं होती है और प्रेममयी सम्बन्ध प्राप्त होने पर भी नहीं होता परन्तु परस्पर एकत्र योग पूर्वक दृढ़ता हो जानेसे प्रीति उत्पन्न होती है ॥६७॥

जानक्याधिक्य संश्लेषात्प्रीत्या स्वात्म जयापि च ॥
विस्मृतं तु पितुर्गेहं मातृणां लालनं तथा ॥६८॥

यद्यपि ये सब सखियाँ श्री किशोरीजी के अनुराग से ही अंश भूता उत्पन्न हुई हैं परन्तु पिता के घर में माताओं के लाड़ प्यार से इन श्री किशोरी जू के अनुराग को भूल गयी थीं इस समय श्री जानकी जी के अधिक संश्लेष को पाकर के वह अनुराग पूर्ण रूप में प्राप्त हो गया ॥६८॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुमा महेश्वर सम्वादे दाक्षिण्य नृप कन्याना मुद्वाहेन श्रीरामप्राप्ति योगो नामैकोनषष्ठितमः सर्गः । ५६॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां दाक्षराय नृप कन्यानां उद्वाहेन श्री राम प्राप्ति योगो नामैकोनष्टष्टित्तमः सर्गः ५६॥

श्रीपार्वत्युवाच—जनक्या सह रामस्य राजपुत्रस्य सर्वदा ॥
तद्रहस्यं कथं ज्ञात मागता भिस्तु सांप्रतम् ॥१॥

श्री पार्वती जो बोलीं कि हे शङ्कर जी ? श्री जानकी जी के सहित राजपुत्र श्री रामजीका अभी तुरन्त की आई हुई इन राजकन्याओं ने यह सर्वदा होने वाले गुप्त रहस्य को कैसे जान लिया ॥१॥

श्रीशिवउवाच—ये देवि मानुषे लोके सतां सङ्ग प्रभावतः॥
सीता रामार्पितधिय स्तेषा चैतादृशी गतिः ॥२॥

श्री शङ्कर जी बोले कि हे देवि ? जो मनुष्य लोक में संतों का सत्संग करते हैं; सत्संग के प्रभाव सेउकी श्री सीताराम जी के प्रति अर्पित बुद्धि होने से उनकी ऐसी ही गति होती है ॥२॥

भावयतां तद्रहस्यं हृदये ब्रह्म लौकिकम् ॥
नित्यं स्फुरति निःशेषं तेषांतज्जीवनं यतः ॥३॥
प्रेम्णा तया च तद्गीतं तत्प्रसन्नाय भावितम् ॥
भव्यं करोतु भक्तानां साधकानां च सिद्धिदम् ॥४।

श्री सीताराम जी के ब्रह्मलौकिक रहस्य को हृदय में हमेशा भावना करने से उस नित्य रहस्य का प्रकाश सम्यक्र प्रकार हृदय में स्फुरित हो जाता है अतः भजन करने वालों के लिए यही स्फुर्णा संजीवनी बूटी हो जाती है ॥३॥

बड़े अनुराग पूर्वक अतिशय प्रसनन्ता से भावना करके जो श्री सीताराम जी का गीत गाता है वह गीत भक्तों का कल्याण करने वाला हो साधकों के लिए सिद्धि देने वाला हो ॥४।

अथ देवौ जसो राज्ञः पुत्र्यु द्वाहे सुयागके ॥
निमंत्रणातु भूपालाः बहुशश्च समागताः ॥५॥

इसके बाद महाराज देवौज जी के कन्याओं के विवाह के समय में जो बहुत से राजाओं ने श्री राम जी के लिए निमंत्रण किया था वे सब राजा आ पहुंचे गए थे ॥५॥

ते सुमन्तं कौशलेश सख्यं विज्ञाप्य भावतः ॥
स्वस्य स्वस्य गृहे नेतुं पुष्पु ह्याह मिषेण च ॥६॥

इन सबने श्री महाराज कोसलेश जी के सखा सुमंत्र जी को अपने भाव से स्नेह का परिचय देकर के अपने २ घरों में कन्याओं के विवाह के बहाने बुला ले जाने को प्रार्थना किए थे ॥६॥

रामं रूप वशीकारं वव्रिरे हि तदैवहि ॥
कुमकुमाक्षत माला भिर्विधाय च विशेषकम् ॥७॥

अपने रूप से मोहित करने वाले श्री राम जी को उसी विवाह प्रसङ्ग में ही कुंकुम अक्षत मालाओं द्वारा तिलक आदि विशेष विधान कराके वरण कर लिया था ॥७॥

पुनस्तत्फलितार्थाय फल योग्यै र्नराधिपैः ॥
बहुशो पायनैश्चैव सहस्र विनयै र्नृप ॥८॥

फिर उसी वरण विधान के फलस्वरूप उत्पन्न करने के लिए उन योग्य राजाओं ने बहुत से उपायनभेटों के सहित हजारों प्रकार की विनय पत्रिकाओं को लिखकर के ॥८॥

विवाह लग्न दिवसं सोधयित्वा महात्मभिः ॥
विद्वद्भिः सचिवै मुख्यैः प्रेषिता पूज्य पत्रिका ॥९॥

महात्माओं द्वारा सुन्दर विवाह लग्न दिवस संसोधन करके और मुख्य मंत्रियों और विद्वानों द्वारा निश्चय करके उस पूज्य पत्रिका को, श्री अयोध्या जी में भेजा ॥९॥

लंघयतः क्रमान मार्ग माययु र्बहुभिर्दिनैः ॥
ते विद्वां सःसचिवाश्च ध्वजन्या ध्वज वत्युग्म् ॥१०॥

वे मुख्य मंत्री और विद्वान मार्ग में बहुत से पर्वत नदियों का उल्लंघन करते हुए सुन्दर ध्वजा पताकाओं से शोभित सर्वोतम श्री अयोध्या पुरी में बहुत दिनों में आ पहुँच गए ॥१०॥

श्रीमद्दशरथस्यै च श्रीनिवासं प्रति श्रुतम् ॥
अयोध्याख्यं महारम्यं रमणीय प्रदेशकम् ॥११॥

महाराज श्री दशरथ जी के श्री अयोध्या नाम की नगरी महा रमणीय साक्षात श्री जी का निवास स्थान जो लोक वेद सर्वत्र प्रसिद्ध है जिस अयोध्या पुरी के प्रत्येक अङ्ग अतिशय रमणीय हैं॥११॥

मण्डलानां सहस्रैश्च सदृशश्चन्द्र सूययोः ॥
दृष्ट्वा योध्या तु दाक्षिण्यैः प्राशादैः परि संकुला ॥१२

जिस अयोध्या पुरी में हजारों मण्डल हैं प्रत्येक मण्डल करोड़ों सूर्य व चन्द्रमाओं के सदृश प्रकाश करते हैं जिसमें अनन्त महल अति सघनता से भरे हैं इस प्रकार को श्री अयोध्या पुरी को उन दक्षिण देश से आए हुए विद्वान और मंत्रियों ने देखा ॥१२॥

अयोध्यायां दूरतस्ते तु लग्न प्रक्षिप्त दृष्टयः ॥
दिदृक्षवो ददृशुश्च रत्न मन्दिर रस्मिभिः ॥१३॥

यद्यपि अभी वे लोग दूर हैं पर एक दम समीप की तरह से श्री अयोध्या जी का सामूहिक दृश्य नेत्रों में चकाचौंधीं दिया। मणिमय महलों की किरणों से शोभित श्री अयोध्या नगरी को देखने की इच्छा हो रही है ॥१३॥

अयोध्याया श्चो पवने चरता मुन्मिता स्तुतैः ॥
मृगाणां कण्ठरत्नैश्च दाक्षिण्योः सम्पदोधिकाः ॥१४

श्री अयोध्या पुरी के बाहरी भाग में जो उपवन हैं उन उपवनों में चरने वाले मृगाओं के कण्ठरत्नों को ही देखकर हमारे राजाओं की सम्पत्ति इनके कण्ठरत्नों के बराबर भी नही है ॥१४॥

द्रुतस्वरैर्गान वाद्यै नृत्यैश्च वर योषिताम् ॥
वाटिका सुविहरतां पौराणा मुन्मितं सुखम् ॥१५॥

और उन बाहरी उपवनों और बाटिकाओं में बिहार करने वाले पुरवासियों के द्वारों पर दूतों द्वारा तथा विलास स्थानों में स्त्रियों के गान वाद्य नृत्य से तथा प्रतिहारियों से समाचार शब्द से और वाटिकाओं के पक्षी भ्रमरादिकों के गुन्जारों से गुन्जित अतिशय बढ़ा हुआ सुख देखा। ॥१५॥

होम धूमैश्च परितः प्रसरत्स्वाज्य गन्धिभिः ॥
बहुशों ब्राह्मणानां च निवासश्चोप लक्षितः ॥१६॥

और हवन के धुँआ से चारों तरफ सुगन्धित विविध प्रकार की सुगन्धित हविष्य सामग्रियों के बहुत से सुन्दर महलों को भी देखा ॥१६॥

पुरस्य व्रिहरंतीभिः प्रत्यंतोपवनेषु च ।
ऋद्धि मतां सुदासीभिश्चातुर्य्येण च विद्यया ॥१७॥

नगर के बाहर की दासियाँ अपने वन उपवनों में विहार करती हुई विविध प्रकार की विद्याओं के चातुर्य से प्रकाश करती हुई अतिशय ऐश्वर्यवतो उनको देखा॥१७॥

तेषां दाक्षिण्य विद्वद्भ्यः सुन्दरीणां समंततः ॥
अधिकाः सुरयोषिद्भ्यः सूचिता रूप संपदः ॥१८॥

उन दासियों के सङ्गीत विद्या की सुन्दरता से (दक्षिणा गाथकाः) इस वार्तिक को झूठा करने वाली देवस्त्रियों से भी अधिक रूप सम्पत्तिवाली ऐसा उनको देखा ॥१८॥

आगच्छद्भिर्दिगन्तेभ्यो धनिभिर्व्यवसायिभिः ॥
पुर प्रवेश मार्गेण संकुलेन नृपस्य वै ॥१६॥

और दशों दिशाओं से बड़े २ धनिक लोग व्यापार के लिए श्री अयोध्या जी के प्रवेश मार्गों में भीड़ लगाए हुए हैं॥१६॥

कथितः कौशलेन्द्रस्य कोशेषु च धना गमः ॥
प्रजानां रक्षणे शक्ति र्दाक्षिण्येभ्यः स्फुटं न यैः ॥२०॥

इस प्रकार जनता के बाहरी दृश्य से ही दाक्षिणीय राजदूतों ने महाराज कोसलेशजीके खजाने में धन का आगमन और महाराज के नीति से प्रजा रक्षण की अद्भुद शक्ति को प्रत्यक्ष देखा ॥२०॥

दृढ द्वार कपाटैश्च स्पृशद्भिः शिखरै र्नभम् ॥
दूराद्दुर्गेण दुर्गेण कौशलेशस्य सर्वदा ॥२१॥

और नगर के बाहरी परकोटाओं के आकाशचुम्बी मजबूत फाटकों को उन फाटकों पर लगे हुए बहुत ऊँचे कलशों को और सर्वदा अति दुर्गम बहुत ऊँचे दुर्गों को दूर से ही देखा ॥२१॥

दुराधर्ष्यं तु शत्रुभ्यो वेष्ठिते नवलैरपि ॥
कथितं सर्वथा चास्य सूच्चागारां तरेणवै ॥२२॥

इन ऊँचे परकोटाओं से ऐसा प्रतीत होता है कि महाराज कोसलेश जी के धर्षणा के लिए अपनी सेना आदिक समस्त शक्तियों से सत्रू कितना ही आक्रमण करे पर महाराज सर्वथा दुराधर्ष हैं ।।२२।

तं च दूरात्प्रपश्यन्तो विद्वां सः सचिवास्तथा ॥
प्राकारं नगरस्यास्य मुदं प्रापुर्महत्तराम् ॥२३॥

इस प्रकार के नगर के परकोटा को दूर से ही देखते हुए दक्षिणीय मंत्री और द्विवान लोग महान् महत्तर आनन्द को प्राप्त हुए ॥२३

तावच्चेतः सुमन्तोपि तेषां . दूतेन ज्ञापितः ॥
विज्ञाप्य कौशलेन्द्रं तु सहर्ष वेष्ठितो जनैः ॥२४॥

इधर नगर के बाहरी संरक्षक दूतों ने शीघ्र जाकर महाराज श्री सुमंत्र जी को जनाया और श्री सुमंत्र जी भी अपने सभासदों से घिरे हुए महाराज कोसलेश जी को उन दक्षिणीय मंत्री और ब्राह्मणों का आगमन जनाए ॥२४॥

सेवितश्चोप सचिवैः रथेन रस्मि शालिना ॥
हर्षस्य कारणं तेषां विदुषां च समाययौ ॥२५॥

महाराज की आज्ञा पाकर बहुत से उपमंत्री आदिक सेवकों से सेवित महाराज सुमंत्र जी प्रकाशमान रथ में बैठकर उन दक्षिणीय द्विवानादिकोके पास आए जो आपका आगमन उन लोगोंके लिए अतिशय हर्ष का कारण हुआ ॥२५॥

प्रणम्य विदुषां पादे समाश्लिष्या परैर्मुदाम् ॥
संस्थाप्य तान् सुवाग्भिश्च तै र्दत्तासन संस्थिताः ॥२६।

श्री सुमंत्र जी ने विद्वानों के चरणों में प्रणाम किया और सबको अलिंगन किया फिर उनके ठहरने के इन्तजाम महल सबको सुन्दर आसन देकर सुन्दर वाणी से आदर पूर्वक बैठाया ॥२६॥

उवाच कुशल प्रच्छा मुक्त तैर्दर्शनादयम् ॥
भवतां कुशलं नो वै समयः शुभ दर्शिनाम् ॥२७॥

सुमंत्र जी ने उन सबसे कुशल पूछी उन सब दक्षिणियों ने कहा कि सुन्दर दर्शनीय आप लोगों की कुशल दर्शन से हम लोगों की सर्वदा कुशल है। समस्त कुशलों का मूल यह इस समय का आपक दर्शन है ॥२७॥

त्वं मनः कौशलेन्द्रस्य सर्व वित्सर्वदा शुचिः ॥
अभिलाषां कुरो स्माकं द्वि दलस्तं सुवर्द्धय ॥२८॥

आप महाराज श्री कोसलेन्द्र जी के सर्वदा सब कुछ जानने वाले पवित्र मन के सदृश हैं और हम लोगों की अभिलाषा दो दलक अङ्कुर की तरह से पैदा हुई सो उस अङ्कुर को आप बढ़ावें ॥२८॥

स्वाति मेघश्चातकानां विबुधानां सुर द्रुमः ॥
शीलादि स्व गुणौदार्यै र्भवत्वं भव्य दर्शनः ॥२९॥

क्योंकि आप मङ्गल मयी हैं अतः हम सबके लिए जैसे चातक के लिए स्वाँति का मेघ और देवताओंके लिए कल्पवृक्ष' ऐसे हो जावें, क्योंकि आप शीलादिक सद्गुणों से भूषित उदार हैं ॥२९॥

सर्वज्ञानां समीपे तु वहुना कथनेन किम् ॥
नेत्रानु भावतो ज्ञात्वा यदा चरसि भूपतेः ॥३०॥

सर्वज्ञ महापुरुषों के नजदीक ज्यादा कहने से क्या फायदा आपतो महाराजके नेत्र अनुभव से ही सब बात जानकर आचरण करने वाले हैं ॥३०॥

कौशलेश पद द्वंद्वं पश्यामो येन केन वै ॥
सर्वार्पणं करिष्यामः मर्वेषामिति वांछितम् ॥३१॥

जैसे भी हो सके हम लोग महाराज श्री कोसलेश जी के चरण कमलों का दर्शन कर सकें तब हम लोग अपना सर्वस्व अर्पण करेंगे यही हम सबकी इच्छा है ॥३१

एत न्निशम्यतेषां च वाक्यं वाक्य विदाम्वरः ॥
कारयित्वांशुका गारे स्थितिं सोपि समागतः ॥३२॥

इस प्रकार उन सबकी बातों को सुनकर बाक्यों को सुन्दर तरह समझने में श्रेष्ठ श्री सुमंत्र जी ने उन सब विद्वान और मंत्रियों को वस्त्रों के महलों में ठहराय करके फिर आप लौट आए ॥३२॥

समीपे कौशलेन्द्रस्य श्रावितां वचनावलिम् ॥
राज्ञापि गुरुसात् कृत्वा प्रत्युक्तश्चोत्तर स्तदा ॥३३॥

महाराज श्री कोलेन्द्र जी के पास आकर उन सबकी बचन रचनावली को सुनाया। सुनकर महाराज ने भी अपने गुरू श्रीवसिष्ठ जी को सब कहा सुनाया ॥३३॥

वहुभि र्वस्तुभिः श्रीमत्कोशलेन्द्रेण चादरः ॥
प्रेपितोपि नांगीकारः कृतस्तै स्तु विवेकिभिः ॥३४।

उसके बाद महाराज श्रीमान कोसलेन्द्र जी ने बहुत सी सामग्रियों को बड़े आदर पूर्वक उन सबके स्वागतके लिए भेजा परन्तु वे सभी बड़े विवेकी हैं इसलिए उनने नहीं स्वीकार किया ॥३४॥

सम्बन्धेन च पुत्रीणा मिति योग्यं सतां मते॥
न च तद्भूमिजं वस्तु तैरादत्तं कदाचन ॥३५॥

क्योंकि सन्तों का मत है कि कन्याओं की सम्बन्धीय भूमि में उत्पन्न हुई वस्तु कन्याके पितृपक्ष वालों के लिए उचित नहीं है ऐसा जानकर किसी तरह से भी उन्होंने नहीं स्वीकार किया ॥३५॥

अथांतरं सभायां च महिता महितात्मनः ॥
दाक्षिण्याः कौशलेन्द्रस्य महत्यान्ते समागताः ॥३६॥

इसके बाद जगत पूज्य महात्मा श्री कोसलेन्द्र जी की महान् सभा में वे दक्षिण से आए हुए पवित्र आत्मा विद्वान मंत्री लोग आ पहुंचे ॥३६॥

यत्स्पृशा लोकपालानां शिरसादुर्ल्लभा किल ॥
दाक्षिण्यास्तु समुत्थाय चादृतास्तेतदासनात् ॥३७॥

जो इन्द्र, कुबेर, वरुण, यमराजों लोक पालों के सिर से भी स्पर्श करने के लिए दुर्लभ सिंहासन से महाराज श्री चक्रवर्ति जी उठ करके उन दक्षिणी विद्वान् और मंत्रियों का आदर किया ॥३६॥

नृपाणां पतिना साक्षात्तत्तु लोके प्रदर्शितम् ॥
अहो सम्बन्ध मात्रस्य फलमुच्चै स्तरां व्रजेत् ॥३८॥

लोक में साक्षात् समस्त राजाओं के पति श्री चक्रवर्ति महाराज ने यह सौहार्द दिखाया अहो? आश्चर्य है कि सम्बन्ध मात्र से ही बहुत उच्चतर फल प्राप्त हो जाता है ॥३८॥

विप्रास्तु सर्वतः पूज्याः पूजयित्वा शुभासने ॥
स्थापिता पतिनाराज्ञां कौशलेन्द्रेण भावतः ॥३९॥

समस्त राजाओं के पति महाराज श्री कोसलेन्द्र जी नें बड़े भाव पूर्वक उन दक्षिणीय ब्राह्मणों को सुन्दर आसनों पर बैठाकरके पूजा की क्योंकि ब्राह्मण तो सर्वत्र पूजित होते ही हैं ॥३९॥

तदा रत्नैश्च बहुभिः कौशलेश पादावुभौ ॥
सचिवैर्दाक्षिण्यानां नृपाणां पूजिता वलम् ॥४०॥

फिर उसके बाद दाक्षिणीय राजाओं के मंत्रियों ने भी बहुत से रत्नवन से महाराज श्री कोसलेश जी के युगल चरण कमलों की सम्यक प्रकार पूजा की ॥४०॥

निः सारिते सम्पुटाच्चैं तद्रत्नानां सुरस्मिभिः ॥
चमत्कृतिमवा पाथ सभ्यानां नेत्र संवतिः ॥४१॥

उस पूजा में चढ़ाने के लिए जो रत्न संपुटों (डिब्बाओं) से निकाले गए उनके प्रकाश से उस सभा में सभी सभ्यजनों के नेत्रों में एक वेग चका चौंधी लग गयी ॥४१॥

वासांसि च नृपार्हाणि यदन्यत्कौतुकादिकम् ॥
प्रीत्या प्रशंसनः सर्वं कौशलेन्द्रेण स्वीकृतम् ॥४२॥

और उसी प्रकार से राजाओं के योग्य उत्तम बहुत वस्त्र और कौतुक पैदा करने वाले उत्तम खिलौने समर्पण किए गए और महाराज श्री कोसलेन्द्र जी ने भी बड़ी प्रशंसा पूर्वक प्रेम से सब स्वीकार किए ॥४२॥

उत्तमाश्वा गजाश्चैव दृष्ट्यग्रं विनयादपि ॥
निवेदिताश्च निपुणैः सचिवैः सुखमानसैः ॥४३॥

और उत्तम घोड़े तथा हाथी भी उन सब उन सब चतुर दाक्षिणीय मंत्रियों ने बड़ी नम्रता पूर्वक मन से अत्यन्त सुखी होकर के दृष्टि के आगे सब समर्पण किए ॥४३॥

रामस्योपरिरत्नानि भ्रातृभिः सहितस्यतु ॥
बहूनि परिवर्त्याथ याचकेभ्योददुश्चते ॥४४॥

इसके बाद भ्राताओं के सहित बैठे हुए श्री राम जी के ऊपरबहुत से रत्नों को न्यौछावर करके उन रत्नों को याचकों के लिए देदिया ॥४४॥

महार्हं वस्त्रभूषादि राज्ञीभिर्यच्च प्रेषितम् ॥
विभागैर्भिन्न माकल्प्य तदुक्त्या तत्र चार्पितम् ॥४५॥

फिर उसके बाद दाक्षिणीय राजाओं की रानियों ने जो बड़ी उत्सुकता पूर्वक बिसकीमतीय भूषण और वस्त्रों को जो भेजा था उनको भी सुन्दर विभाग पूर्वक अलग २ नामों करके मंत्रियों ने श्री राम जी के लिए अर्पण किया ॥४५॥

तथा वशिष्ठं सं पूज्य पूजनीयं सजातिभिः ॥
लग्न पत्रं पवित्राय तस्मै लग्न विदोर्ऽर्पितम् ॥४६॥

फिर उसके बाद उसी तरह से समस्त ब्राह्मण जातियों से पूजित महाराज श्री वसिष्ठ जी की भी पूजा की और उन पवित्र आत्मा श्रीवसिष्ट जी के करकमलोंमें लग्न पत्रिका को भी ब्राह्मणों ने निवेदित किया ॥४६॥

तेन सं श्रावितं राज्ञे श्री मद्दशरथाय च ॥
मंत्रं कृत्वा लिखित्वा सत्सुमन्ते नोत्तरोत्तरम् ॥४७॥

श्रीवसिष्ठ जी ने उस लग्नपत्रिका को श्रीमत्दशरथ जी को सुनाया उसके बाद आपस में मंत्रणा करके एक पत्र लिखा। उस पत्र को सुमन्त्र जी ने उन दक्षिणीय मन्त्रियों के हाथ उत्तर दिया ॥४७॥

सिद्धाभिलाषं राज्ञां च सम्बन्धो त्कण्ठितानांतु यम् ॥
कोविदानां करे दत्तं कुंकुमेनतु चर्चितम् ॥४८॥

उस उत्तर पत्र को कुम्कुम से रँगा करके और पत्र के ऊपर सम्बन्ध के लिये उत्कण्ठित हुए राजाओं की अभिलाषा सिद्ध होगयी यह लिखकर विद्वानों के हाथ दे दिया ॥४८॥

तोषयित्वा सुवाग्भिश्च सादरेण सुहार्दतः ॥
गुरुणाहि वशिष्ठेन स्वदेशाभि मुखी कृताः ॥४९॥

और वाणी से भी सुन्दर सौहार्दता पूर्वक बड़े आदर से बोल करके सबको सन्तुष्ट किया इस प्रकार श्रीवसिष्ठ जी आदि से आद्रित होकर वे सब विद्वान और मन्त्री अपने २ देश जाने के लिए सन्मुख हुये ॥४९॥

मन्दी कृद्दीप पंक्तीनां रत्नानां च समूहकैः ॥
कोशेषूपचयं कृत्वा कौशलेन्द्रस्य ते पुनः ॥५०॥

दीपकों के प्रकाश को मन्द करने वाले उन समस्त रत्नों को महाराज कोसलेन्द्र जी के खजाने में जमा कर दिए गए ॥५०॥

दाक्षिणयानां लब्धकामाः सचिवाश्च पुरोधसः ॥
नृपाणां क्रम तो मार्गं लंघयित्वा च पर्वतान् ॥५१॥

दाक्षिणीय राजाओं के मन्त्री और उपरोहित अपने मनोरथों को सफल पाकर के धीरे २ पर्वत और नदियों को तथा वनों को पार करते हुए ॥५१॥

प्रपेदिरे पुरीं स्वां स्वां हर्ष निर्भर मानसाः ॥
सचिवैः स्वामिनो हस्ते दत्ताः सूत्तर पत्रिकाः ॥५२

बड़े प्रसन्न मन होकर के अपने २ देश नगरियोंमें पहुँच गये और अपनी उत्तर पत्रिका अपने २ स्वामियों को दी ॥५२॥

न्यस्त वर्णा सुमन्तेन राज्ञा तुल्येन तेन च ॥
अत्यादृत किलात्मानं मेनिरेते नरेश्वराः ॥५३॥

वे सब राजा लोग भी सुन्दर साफ अलग २ अक्षरों से मङ्गल चिन्ह से युक्त पत्रिकाओं को पा करके अपने को महाराज चक्रवर्ति जी के योग्य न मानते हुए भी इस स्वीकार पत्रिका से अपनी आत्मा को कृत कृत्य मानने लगे अतः बड़े आदर से पत्रिका लिये॥५३॥

प्रति वाक्यं ह्यु दुगृणंतः सुधा पान मिवात्मनि ॥
सुखन्तेन भवन्तश्च वाचिता सा च पत्रिका ॥५४॥

और मन्त्री तथा ब्राह्मणों के मुख से भी श्रीअवधेश महाराज की सभा की बातों को सुनते हुए मानो अमृत पी रहे हैं। इस प्रकार की आत्मा में प्रसन्नता मानकर सुनते हुए राजाओं को मन्त्रियां ने कहा कि आपकी पत्रिकायें बड़े सुख पूर्वक चक्रवर्ती महाराज ने बचवा कर सुनी हैं॥५४॥

मुहूर्त्तं सुख मग्नास्ते वाह्य दृष्टि विरामिताः ॥
ततः संज्ञां सुलब्धास्ते तत्कार्य्ये च मनो दधुः ॥५५॥

इस प्रकार मन्त्रियों व विद्वानों की बातों को सुनकर वे सभी राजा लोग एक मुहूर्त के लिए तो सुख की समाधि में मग्न होगए उसके बाद समाधि से विराम होकर बाह्य दृष्टि करके सुन्दर होश पाकर अपने २ उचित कार्यों में बड़ी सावधानता से लग गये॥५५॥

प्रथमं ये न मार्गेणागमिष्यति नराधिपः ॥
तन्मार्गं तु निवासैश्च शिल्पिनो भो विरच्यताम् ॥५६

प्रथम तो महाराज जिस मार्ग से आयेंगे उस मार्ग में शिल्पियों के द्वारा सुन्दर निवासों की कल्पना करके आप लोग निवासोंकी रचना करो ऐसी आज्ञा दी ॥५६॥

इति वाक्यं मुखात्तेषां प्रथमे च प्रवर्तितम् ।।
स्वप्नमिव जाग्रतानां च तदेव प्रीति लक्षणम् ।।५७।।

इस प्रकार अपने राजाओं के मुख से आज्ञाको सुनते ही हम लोगों ने पहले से ही सब तिवारी की रचना कर रक्खी है इस प्रकार कहते हुए उन कारीगरों की बातों को मानो कोई सोया हुआ स्वप्न देखा फिर तुरन्त जाग्रत हुआ उठकर कहता हो इस प्रकार सबके उत्साह को देखकर यही प्रेम का लक्षण हैं ऐसा निश्चय किया ।।५७।।

अथात्र च सुमन्तेन सचिवैश्चोप कार्य्यभिः ।।
भूषा रत्नोऽस्त्र सूत्रानां स्यन्दनानां तथा परम् ।।५८।।

अब इधर श्री अयोध्या जी में श्रीसुमन्त्र जी ने अपने इन कार्यकर्त्ताओं के द्वारा सुन्दर रत्नों के भूषण वस्त्र फूल माला तथा रथ आदि ।।५८।।

गजाश्व सुखयानानां सम वर्णैश्च पंक्तिभिः ।।
श्रीराम वरयानाय सज्जनै श्चोपपादितम् ।।५९।।

हाथी, घोड़ा, सुखपाल आदि सवारियां अपने २ रूप रङ्ग से समान वर्णों की पंक्तियां श्रीरामजी की बरात के लिये सज्जन कार्यकर्त्ताओं ने शीघ्रता पूर्वक तैयार कर दिया ।।५९।।

ततः परं शतघ्नीनां भूमा गारेण ज्योतिषाम् ।।
विद्यु त्पात इवा त्युग्र मानकैः सह नादितैः ।।६०।।

उसके बाद तोपों का इन्तजाम तथा आकाश दीपों का इन्तजाम और वज्रपात के सदृश नगाड़ाओं का इन्तजाम और अनेक प्रकार के बाजाओं का भी सुन्दर इन्तजाम किया गया ।।६०।।

आरेणुं भूतलं कुर्वन् रेणु पूर्णं नभस्तलम् ।।
अतिभारात्कूर्म्म पृष्टं मुखैः शेषेन ग्रासितं ।।६१।।

इस प्रकार इन्तजाम पूर्वक चलते हुए बरात के पृथ्वी से धूलि उड़कर आकाश पूर्ण कर दिया गया। बरातियों के सामूहिक भार से कमठको पीठ को शेष ने अपने मुखों से ग्रसित कर लिया ।।६१।।

दिग्गजानां शिरोभिश्चान मितैः सुतरां तथा ।।
कम्पयद्भिश्च कुधरै र्महावारि समुद्गरन् ।।६२।।

दिग्गजों के सिरों से भी भूमि अतिशय नम्र होगई तथा पर्वत भी पृथ्वीको दबाते हुये कांपने लगे इस प्रकार दबती हुई पृथ्वी जहां तहां से पानो की पिचकारियां छोड़ने लगी ।।६२।।

भङ्गै र्हीना न्समुद्रांश्च मरुद्भिष्टम्भयं स्तथा ।।
दिशोन्तं दीप मानेषु सकुन्तेषु समन्ततः ।।६३।।

समुद्र अपनी लहरों से रहित हो गये। वायु रुक गया। दिशाओं में प्रकाश करते हुये चारों तरफ दिव्य पक्षियां दीपों को लेकर प्रकाश कर रहीं हैं ।।६३

प्रकाशितै र्ध्वजैरुच्चैः स्वर्ण सूत्रेण चित्रितैः ॥
गजानां स्वंकुशै श्चैव राज्ञां रत्न किरीटकैः ॥६४॥

और ऊँची ध्वजाएँ भी स्वर्ण सूत्रों से निर्मित चित्रों से विचित्र प्रकाश कर रही हैं। हाथियों की सजावट और उनके अंकुशों की चमक तथा राजाओं के मुकुटों के रत्नों से सब दिशाओं में प्रकाश छाया है ॥६४॥

शब्दयंश्च दिशः सर्वाः प्रतिशब्दै र्महाद्भुतैः ॥
भूमिस्यामायमानां स तु तमस्तोमनिभै र्गजैः ॥६५॥

बरात में बाजा आदिक अनेक प्रकार के महान शब्दों से दिशाएं तथा इस प्रतिध्वनित हो रहे हैं और अंधकार समूह के सदृश बड़े २ हाथियों के झुण्ड से पृथ्वी श्यामता से छा गयी ॥६५॥

परं करतलाभ्यां च कौतुकं द्रष्टु मागतैः ॥
आच्छाददिम स्तु दैवै रनिमेषेस्तुत्र वमौ ॥६६॥

इधर हाथियों के समूह से छाया हुआ अन्धकार और उधर आकाश में निमेष रहित देवताओं के द्वारा भगवान के परत्व को ढाँकने के लिए किया हुआ अन्धकार इस तरह ढकी हुई बरात में चमत्कार को ग्रामीण दर्शकों के देखने के लिए कमल नेत्र श्री रघुनाथ जी ने दोनों करकमल तालुओं से प्रकाश कर दिया ॥६६॥

प्रतस्थे दशरथो राज्ञां राजा कौतुक मावहन् ॥
विवाहितं तु श्रीरामं गौणे नैव गुणाधिकम् ॥६७॥

इस प्रकार के अनेक कौतुकों को रास्ते में अनुभव करते हुए समस्त राजाओं के राजा महाराज श्री दशरथ जी महान् गुणों में बढ़े हुए श्री राम जी यद्यपि विवाहित हैं फिर भी श्री राम जी के गौड़ विवाह के लिए चले जा रहे हैं ॥६७॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां उमा महेश्वर सम्वादे श्रीरामवरयानप्रस्थाने नाम षष्टितमः सर्गः ॥५८॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां दाक्षिणात्य नृप कन्यानां श्रीरामवरयान प्रस्थाने नाम षष्टितमः सर्गः ५८॥

श्रीशिवोवाच-अथ ग्रामां महासैन्यैः कान्तारैश्च शिलोच्चयैः ॥
सरि द्भिश्चावृतं मार्गं दूरं दुर्गमविक्रमः ॥१॥

इस प्रकार मार्ग में घोर जंगलों से तथा भारी पर्वतों से और नदियों से अत्यन्त दुर्गमनीय कठिनाइयों को पार करते हुए महान् सेना के सहित ॥१॥

लंघयित्वा नृपाधीशो देशे दाक्षिणत्यके पुरम् ॥
नाम्ना माणवकं तत्र राजा चोद्धत विक्रमः ॥२॥

महाराज श्री चक्रवर्ती जी बहुत से दाक्षिणात्य देशों और ग्रामों को लाँघते हुए एक माणवक नाम की नगरी को प्राप्त हुए वहाँ पर उद्धतविक्रम राजा के घर पहुँचे ॥२॥

ये नोद्वाहाय पुत्रीणां पूर्वं रामस्तु स्वीकृतः ॥
रूपाधिक्या द्गुणाधिक्या त्सुमन्त मनु नत्य च ॥३॥

जिन उद्धर्तविक्रम ने अपनी कन्याओं के विवाह के लिए पहले ही से श्री राम जी को तिलक कर रक्खा था क्योंकि श्री राम जो जो रूप और गुणों में अतिशय अधिक हैं इस लिए सुमंत्र जी से बड़े अनुनय विनय पूर्वक यह बात निश्चित हो चुकी थी ॥३॥

सज्जी कृत्वा वाहिनीं चा ने तुं स्वस्मिन्पुरे तुतम् ॥
प्रधाने नान्य सचिवाः गान वाद्योत्सवे न च ॥४॥

अतः उद्धत विक्रम ने भी श्री राम जी की बरात के स्वागत के लिए अपनी तरफ सेना स्वागत सामग्री सज करके महान् गान बतान उत्सव पूर्वक अपने प्रधान मंत्री को भेजा ॥४॥

प्रेपिताश्चाति हर्षेण तेपि हर्षितमानसाः ॥
उत्सुकाः पूर्ण चन्द्रास्यं रामं दृष्टुं मनोहरम् ॥५॥

उद्धत विक्रम ने जो अपनी तरफ से बरातियों के स्वागद्के लिए भेजा हैं वे सब अतिशय हर्षित मन होकर पूर्ण चन्द्रसदृश अतिशय मनोहर श्री राम मुख चन्द्र को देखने के लिए बड़ी उत्सुकता से आए ॥५॥

पूर्वमेवाभि रचितं चित्रितैः खण्ड भावितैः ॥
यानस्य कौशलेशस्य निवासाय समुल्वणम् ॥६॥

उधर महाराज उद्धत विक्रम जो ने महाराज कोसलेश जी के बरात के सहित निवास के लिये बड़ी विस्तार पूर्वक चित्र विचित्र खण्ड को भावना से बहुत ही सुन्दर जनवासा पहले से ही बना रक्खा था ॥६॥

आदरेण समागम्य सो पदः सचिवो महान् ॥
निवेश्य च महाराजं तस्मिंश्चित्र निवासके ॥७॥

इधर उद्धत विक्रम जी की भेजी हुई विक्रम जी की अगवानी बरात प्रधान मंत्री के साथ आयी और बड़े आदर पूर्वक परस्पर समागम हुआ। उसके बाद उसी चित्र विचित्र रचना वाले महान् जनवासे में सबको ठहराया ॥७॥

पुनः स्वनाथ निकटं मुदितो हि समाययौ ॥
तदैश्वर्य मृजु त्वं च श्रुत्वा सुख मवाप्नुयात् ॥८॥

उसके बाद प्रधान मंत्री अपने नाथ उद्धतविक्रम जी के पास बड़ी प्रसन्नता से आए और महाराज श्री दशरथ जी के ऐश्वर्य को और उनकी सरलता को अपने राजा से वर्णन करके सुनाया। सुनकर राजा भी अतिशय सुख को प्राप्त हुए ॥८॥

ततः शुभर्क्षे दिवसे सुलग्ने ग्रहे शुभस्थान समागमे च
अत्यादरेणैव महोत्सवेन श्रीकोशलेन्द्रो गुरुणासमाजैः॥९॥

इसके बाद सुन्दर नक्षत्र शुभ दिन में सुन्दर लग्न ग्रह में, शुभ स्थान के समागम में महाराज श्री कोसलेन्द्र जी को गुरू श्री वसिष्ठ जी तथा समाज के सहित बड़े आदर महान् उत्सव पूर्वक ॥९॥

नतिस्तदा माणव के श्वरेण गृहे सु दीप्ते सुविशाल कक्षे ।

प्रक्षाल्य पादौ बहुशः सुवर्णं न्समर्पयित्वोत्तम संश्रया च ॥१०॥

माणवक नाम की नगरी के राजा ने महान् प्रकाशमान कई आवरण वाले अपने बहुत बड़े महल में लिवा लाए और श्री चक्रवर्ति जी महाराज के चरण प्रक्षालन किए तथा बहुत सा स्वर्ण समर्पण किए। बड़ी नम्रतापूर्वक उत्तम विधान से ॥१०॥

लक्षैक दानेन वरस्य पादावम्भोज शीला वतिहर्पितेन ॥

तस्यानुजाना मपितत्सुरीत्या प्रक्षालितौ तेन सपत्निकेन॥११

अतिशय हर्षित होकर के अपनी पत्नी के सहित सुन्दर रीति से बड़े सुशील दुल्हा श्री राम जी के कमल सदृश चरणों को धोकर एक लाख स्वर्ण मुद्रा दान किए उसी रीति से महाराज श्री चक्रवर्तिजी के अन्य पुत्रों के भी चरण धोए॥११॥

यथा क्रमन्तेन निवेशितानां शुभासने चाक्षत पुष्पमाल्यैः ॥

चचार पूजां चतुरास्य वाग्भि र्दीपैश्चतुर्भिश्चनीराजनैश्च । १२॥

उसके बाद महाराज उद्धत विक्रम जी ने श्री चक्रवर्ती जी तथा श्री राम जी आदि सबको क्रमशः सुन्दर आसनों पर बैठा करके अक्षत पुष्प माला आदिकों से तथा ब्रह्मा जी को वाणियां(वेदों) से पूजा करते हुए चार बत्तियों की आरती से नीराजन किया ॥१२॥

राजेतिचर्य्यां चरन्तूसलज्जयः सतूद्य चैतत्प्रकरोति सर्वम् ॥

बभूव तेनातितर प्रशंस्योऽयोध्याधिनाथेन महात्मभिश्च ॥१३॥

इस प्रकार राजाओं के योग्य समस्त कर्मों को सम्यक् प्रकार पूर्ण करते हुए महाराज उद्धत विक्रम जी बड़े संकोच में पड़े रहते हैं इस प्रकार अपनी कार्पण्यता पूर्वक पूजा करते हुए महाराज अयोध्या नाथ जी और सब महात्माओं ने अपनी सेवा रूप भक्ति सेवा रूप की बड़ा प्रशंसा की ॥१३॥

वेदीं परिस्कृत्य हुतासनंच मूर्तीन् ग्रहाणां तुयथार्ह वर्णैः ॥

विधाय वेद्याः परितः पुरोधास्तदानृपस्योद्धत विक्रमस्य ॥१४॥

इसके बाद महाराज उद्धत विक्रम जी के उपरोहित ने सुन्दर वेदी की रचना करके हवन किया नव ग्रहों की मूर्तियों को यथार्थ रंगों से उचित विधान पूर्वक पूजन किया और वेदिका के चारों तरफ अन्य वेदिकाओं पर स्थापन किया ॥१४॥

संप्रेरयामास वधू र्वरं च ततो वशिष्ठेन वरः प्रयोजितः ॥

रामस्तु नाम्ना रविवंश भास्वा न्पौत्र स्त्वजस्येति वचो ब्रवीत्स॥१५॥

तत्पश्चात कन्याओं को बुलवाया गया और श्री वशिष्ठजी ने वर की तरफ से विधान किया इस तरह से वर बधुओं का समागम विधि हुई। ब्रह्मणों ने वर के लिए साखोचार पूर्वक नाम से जो श्रीराम हैं जो सूर्य वंश में प्रकाश करते हैं परम्परा से महाराज अज जी के जो पौत्र हैं इस प्रकार संकल्प पूर्वक ॥१५॥

कान्तानां मधुर स्वरस्य परितो जाते च वेद ध्वनौ,
वाद्यानां च दिगन्त सं प्रसरिते संखादिना सुच्चकैः ॥
दत्तं चोद्धत विक्रमेण विनयै रत्नैः सुवर्णैस्तथा,
कन्यारत्न मनोहरं गुणगणै रामाय रत्नांचितम् ॥१६॥

चारों तरफ से पुर की स्त्रियों के मधुर मङ्गलमयी गान पूर्वक तथा वेद ध्वनि तथा विविध प्रकार के शंखादिक बाजाओं की ध्वनि दशों दिशाओं को गुञ्जित कर रही हैं इस मङ्गलमयी आनन्द ध्वनि के मध्य महाराज उद्धत विक्रम जी ने बड़ी नम्रता पूर्वक महान रत्न और स्वर्ण के साथ मनोहर उत्तम गुण वाली कन्या रूप रत्नों को भी रत्न जटित सुन्दर वस्त्रभूषणों से सुसज्जित करके श्र राम जी के लिए अर्पण किया ॥१६॥

श्रीमद्दशरथस्याग्रे बिनीतः स च पार्थिवः ॥
यद्यद्देयं सुदाये वै पुत्रीणां श्रद्धया हितम् ॥१७॥

उसके बाद चक्रवर्ती महाराज श्री दशरथ जी के आगे बड़ी नम्रता पूर्वक खड़े होकर के प्रार्थना किया कि महाराज सुन्दर दामाद के लिए उत्तम पुत्रियों के साथ बड़ी श्रद्धा पूर्वक जो कुछ देने योग्य था वह अपने स्वरूपानुसार मैंने दिया ॥१७॥

निवेद्य च स नम्रो सावुवाच वचनं वरम् ॥
वध्वांजली मनन्त श्री महाराज वदन्निति ॥१८॥

इस प्रकार बड़ी नम्रता से सब कुछ समर्पण करने के बाद फिर हाथ जोड़ करके महाराज चक्रवर्ती जी को हे महाराज ! ऐसा कह करके ॥१८॥

यथां बुदां बुधेर्वारि वर्षत्यादाय चां बुधौ ॥
नह्यू न त्वं तदा दाने न वृद्धिस्तस्य वर्षणात ॥१९॥

जिस तरह से मेघ समुद्र से ही जल लेकर के फिर समुद्र में ही बरसाते हैं इस प्रकार मेघों के बरषने से न तो समुद्र में न्यूनता आती है और न समुद्र में वृद्धि होती है इसी प्रकार मेरा दान है ॥१९॥

तथेदं स्वीय मे बाद्यः स्वी कुरुष्व कृपानिधे ॥
भवत्सु पूजनं योग्यं दीपनैव दिवस्पते ॥२०॥

हे कृपानिधे ! इसी प्रकार यह आपका ही धन आपको स्वीकार होवे जैसे कोई सूर्य को दीपक से पूजा करता है इसी प्रकार ,आप सुन्दर पूजा करने योग्य हैं ॥२०॥

त्वांलभ्य राजेन्द्र परत्व मुच्चैः सम्बन्धिनं मे जगतां विधाता ॥
भागस्य सं भावयितुं नशक्तो लोकैक नाथं ललितं गुणैश्च ॥२१॥

हे राज राजेन्द्र ! सम्पूर्ण लोकों के एक नाथ ! तथा सुन्दर ललित गुणों की खानि परम उच्च तम आप समस्त जगत के विधाता को सम्बन्धी पाकर के अब मेरे भाग्य की प्रशंसा जगत का विधाता भी सम्यक प्रकार कहने को समर्थ नहीं है ॥२१॥

यद्यच्छुभं मुनिवरैः श्रुतिभिः प्रदिष्टं,
ज्ञानं ततोधिक विलक्षण मात्मनश्च ॥
तच्चोप लब्धि रपि पूर्व फलैर्विहीना,
सम्बन्ध तो फलित भावयतां भवं तः ॥२२॥

वेदों ने और मुनियों ने जो जो उत्तम श्रेष्ठ शुभ ज्ञान को वर्णन किया उससे भी अधिक बिलक्षण आत्मा आनन्द की उपलब्धि आपके सम्बन्ध की भावना करने से हमको सुन्दर तरह फलित हुई जो पूर्व फलों (सांसारिक कामनाओं) से रहित है ॥२२॥

को नोच्च तां व्रजति संश्रय मुच्च माप्य लोके प्रसिद्ध गतिराद्रित सज्जनानाम् ।
वायूद्धता कनक चित्र मनोग्य दण्डं, यद्रेणवोपि निवसन्ति नृपात पत्रम् ॥२३॥

ऊँचे आश्रय को पाकर के कौन उच्चता को नहीं प्राप्त हुआ ? लोक में सज्जनों से आदर किए हुए की गति यह प्रसिद्ध ही है कि वायु के द्वारा उड़ा हुआ धूल स्वर्ण के चित्र विचित्र मन रमणीय दण्ड वाले राजाओं के छत्र पर निवास करता है॥२३॥

इत्थं सुनम्रस्य नृपाधिराजा श्रुत्वा बचां स्युद्धत विक्रमस्य॥
तन्नम्र भावातितरां प्रसन्न उवाच वाचं सुखदां वचोज्ञः॥२४॥

इस प्रकार बड़ी नम्रता पूर्वक वचन महाराज चक्रवर्ती जी ने जब सुने तो उद्धत विक्रम जी की नम्र भावना पर अतिशय प्रसन्न होकर के शब्द को समझने वाले महाराज अत्यन्त सुखदायी मन रमणीय बचन बोले ॥२४॥

नो दीप्यते विविध भूषण भूषितेन नो दीप्यते गज रथाश्वक वाहनैश्च ॥
सन्नम्रता पुरुष भूषणमस्ति नूनं नील स्थलेभ इव सर्व गुणांहि यस्याम् ॥२५॥

हे राजन ! विविध प्रकार के भूषणों से कोई प्रकाशमान् नहीं होता तथा विविध प्रकार के हाथी घोड़ा रथ वाहन आदि महान् सम्पत्तियों से कोई प्रकाशमान् नहीं होता सत्पुरुषों के लिए सुन्दर नम्रता ही सुन्दर भूषण है जिस तरह से नीच स्थान में स्थित होने से जल सब गुणों से सम्पन्न होजाता है (उसी तरह से नम्र पुरुषों में सभी गुण आजाते हैं) ॥२५॥

तद्भूषितानां तु शिरोमणि स्त्वं यशोभिराजन्म सुदीप्य तेद्यः ॥
गुणैः प्रकृत्या नर भूषणत्वं प्राप्तोसि भूपाल मणे महत्वम् । २६॥

हे राजन उस नम्रता रूप भूषण पहिनने वालों में आप शिरोमणि हैं जो जन्म सिद्ध नम्रता आप में यह प्रकाश कर रही है इसलिए आप सहज स्वभाव से सन्तों के सद्गुण रूप भूषणों से भूषित हैं हे राजाओं में उत्तम ! आप सुन्दर राज महत्व को पाए हुए हैं ॥२६॥

इत्थं सुवचनैः श्री मत्कौशलेन्द्रेण मोदितः ॥
प्रतिज्ञान पूजयित्वा तु याचकान्प्रति पाद्य च ॥२७॥

इस प्रकार श्री मत्कौशलेन्द्र जी ने सुन्दर बचनों से उद्धत विक्रम जी को आनन्दित किया उसके बाद दान की प्रतीक्षा करने वाले याचकों को भी सम्यक् प्रकार पूजित करके सबको प्रसन्न किया ॥२७॥

विशष्ठानु ज्ञापितश्च भ्रातृभिः सहितो महान् ॥
अविज्ञात श्रमानन्दो निशीथे मन्दिरं ययौ ॥२८॥

उसके बाद महाराज श्री वशिष्ठ जी की आज्ञा से माताओं के सहित महाराज उद्धत विक्रम जी अपने रात्रि शयन मन्दिर में गए आप इतने आनन्द मग्न थे कि अपनी मेहनत की थकावट का भी आपको पता नहीं था ॥२८॥

ततो विशेष विधिना तेन ह्यादत भावतः ॥
गृहाण राम तडागोर्मी स्पृशा शिशिर मारुतैः ॥२९॥

दूसरे दिन सुन्दर भाव पूर्वक बड़े आदर के साथ विशेष विधियों से महाराज उद्धत विक्रम जी ने नव रत्न भूषण रूप नवग्रहों से सुशोभित श्री राम जी रूपी अमृत भरे सरोवर की लहरों में शिशिर ऋतु के वायु का स्पर्श किया ॥२९॥

प्रसून द्रुम संश्लेषा दतोव घ्राण तर्प्पणे ॥
वातायना त्प्रवर्न्ते च सुख स्पर्श मनोहरे ॥३०॥

और सुन्दर फूलों से भरे हुए वृक्षों के स्पर्श से नासिका को तृप्त करने वाला वायु छज्जाओं से आकर मनोहर सुख स्पर्श करता है ॥३०॥

गृहे काञ्चन पीठे तु निवेश्य विनयात्किल ॥
चतुर्विधं रसैः षड्भिरकारि रुच्य भोजनम् ॥३१॥

इस प्रकार के घर में स्वर्ण के सिंहासन पर बड़ी नम्रता पूर्वक श्री राम जी को उद्धत विक्रम जी ने बैठाया और भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, पेय चार प्रकार के कणुआ, तीखा, मोठा, कसैला, खट्टा, नमकीन ये छः रसों के हजारों प्रकार के व्यंजनों को सुन्दर रुचिकर भोजन कराया ॥३१॥

महार्हस्तरणे चित्रे सौरभ्यांचित भित्तिके ॥
भोजनोत्तर मन्ये तु निवेश्य मन्दिरां तरे ॥३८॥

उस भोजन के बाद चित्र विचित्र रचना से युक्त चित्रसारी में सुन्दर सुगन्धियों से सुगन्धित बिसकीमतीय महान् चित्रित वस्त्रों से बिछे हुए बिछावन पर अपने महल के अन्दर श्री राम जी को शयन कराया ॥३२॥

ताम्बूल पुष्प हारैश्च मनोज्ञैर्घ्राण तर्प्पणैः ॥
दिव्यां सुकै रुत्तरीयै र्महात्मानः समन्ततः ॥३३॥

और पान देकर फूलों की माला पहिना कर नाक को तृप्त करने वाले मन रमणीय अतरादिकों को सूंघाकर उत्तरीय दिव्यवस्त्र को उढ़ाकर चारो तरफ से महान् आत्मा अनुरागमयी हृदय वाली सखियों के गीत विनोद पूर्वक सुनते हुए शयन किए ॥३३॥

दक्षिणाभिश्च तद्योग्यानतेन शिरसा तदा ॥
पूजिता भाविता राज्ञा विक्रमोद्धत केन वै ॥३४॥

इस प्रकार महाराज उद्धत विक्रम जी ने यथा योग्य दक्षिणादिक विधान पूर्वक नम्र सिर होकर के सबकी पूजा की और इस प्रकार शयन को प्राप्त हो गए ॥३४॥

प्रातः सम्बन्धिनातेन पुनः स्वात्म समो महान् ॥
प्रस्थानाभिमुखं श्रीमत्कौशलेशं विशेषतः ॥३५॥

महाराज कोसलेश जी के सम्बन्धी ने अपने महान् प्रतापशाली उद्धत विक्रम जी ने प्रातःकाल महाराज कोशलेश जी को आज प्रस्थान का दिन है ऐसा जान करके विशेष स्वागत नम्रता पूर्वक किया ॥३५॥

विनयित्वाहि स गुरुं वहुशो नतिभि स्तदा ॥
स्वास्थायितुं सखा शिष्यं विसृष्टः स समागतः ॥३६

इसी प्रकार महाराज श्री वसिष्ठ जी को भी गुरु बुद्धि से नमस्कार करके विशेष विनय किया। इतने में ही महाराज श्री उद्धत विक्रम जी के सखा ने शीघ्र आकर चलने को सम्यक् प्रकार तैयारी किये हुए ॥३६॥

तदाद्तस्तो प्रणम्य यथाकारं कृतांजलिः ॥
उवाच शिरसा नम्रो विक्रमोद्धत वाचिकम् ॥३७॥

श्री अवधेश महाराज के लिए अपने महारज उद्धत विक्रम की कही हुई वात बड़ी नम्र शिर होकर कहा ॥३७॥

देवास्माकं तदीच्छायंशाकाशनं तथा विधम् ॥
द्वान्हांगीकार माश्रित्य दर्शनं देहि दुर्ल्लभम् ॥३८॥

हे देव ? आपकी चलने की इच्छा के अन्दर हम लोगों की इच्छा भी स्वीकार करते हुए दो दिन शाक का भोजन करके अपना दुर्लभ दर्शन दीजिए ॥३८॥

अथैतद्वचनं श्रूय तस्य प्रेमरस प्लुतम् ॥
सुमन्तोऽपि मधुस्फीतै रुवाच वर्णकैः शुभैः ॥३९॥

इसके वाद प्रेमरस से भींजे हुए उन उद्धत विक्रम जी के सखा की भी वातों को सुनकर बड़े मधुर और साफ सुन्दर वाणींसे श्री सुमंत्र जी भी बोले ॥३९॥

न शक्ता भवतां प्रेम्णः पारं गतुं सरित्पतेः ॥
वयं चा तिथ्य मश्नन्तो वहूनां प्रेम संग्रहैः ॥४०॥

हम लोग आप लोगों के प्रेम समुद्र से पार होने के लिए असमर्थ हैं आप लोगों के अतिशय स्नेह समूह से महान् अतिथ्य का भोग करते हुए बहुत दिन हो गये ॥४०

परं त्व न नुरोधेन भवतां गंन्तुं नोत्सहे ॥
यत्कार्य्याकार्य्य संप्राप्तिस्तत्समात्तू भयोरपि ॥४१॥

परन्तु आपके इस प्रकार के अनुरोध से हम लोग जाने की हिम्मत नहीं कर सकते। अब क्या कर्तव्य है क्या नहीं कर्त्तव्य है इस विषय में दोनों तरफ विचार होना चाहिए॥४१॥

सुमन्त वाचं श्रुत वोध शीघ्रां सम्वधिनः प्रीति लताम्बुधारात ॥
श्रुत्वा समुत्साह मनाः स्वनाथं ययौ प्रणम्याथ नृपाधि नाथम् ॥४२॥

कानों को शीघ्र बोध देने वाले श्री सुमंत्र जी की वाणी परस्पर सम्बन्ध की प्रेमलता को सींचने वाले अमृत धारा के सदृश सुनकरके अतिशय उत्साहित मन होकर श्री उद्धत विक्रम जी के सखा महाराज अवधेश जी को प्रणाम करके अपने नाथ के पास गए ॥४२॥

सता मथा श्रूयसता प्रणीतां महामनाः चोद्धत विक्रमोसौ ॥
रामं समाव्हाहितुमश्व बृन्दै नियाय नागं सविमान शोभम् ॥४३॥
पादाङ्गदाङ्गद किरीट कुण्डलैश्च माल्योर्म्मिकादि वहु भूषण भूषितो सौ ॥
तस्यानुराग मिव चोद्धत विक्रमस्य मातङ्ग मुन्नत तरं हितमारुरोह ॥४४॥

महामनस्वी उद्धत विक्रम जी ने अपने सखा के मुख से सुन्दर साधुता पूर्वक उत्तर के शब्दों को सुनकर श्री राम जी को बुलवा करके बहुत से घोड़ा हाथी सेना सजावट पूर्वक एक हाथी के ऊँचे महान् शोभायमान विमान को सजाकर और श्री रघुनाथ जी के कीट कुण्डल विविध प्रकार के मालादिक शोभाओं की लहर तथा पदहात्र बिजायठ कंकणादि भूषणों से सुन्दर भूषित हुए मानो साक्षात् उद्धत विक्रम जी के अनुराग ही मूर्तिरूप धारण किए हों इस प्रकार के बहुत ऊँचे उस हाथी पर श्री राम जी सवार हो गए ॥४३-४४॥

अथानकान्मेघ विलंघि निश्वनानाक्रम्यगच्छत्सुदिगन्त दूरतः ॥
संकाश्यं वीणोच्च रवेषु वन्दिनां जगाम रामः श्वसुरस्य मन्दिरम् ॥४५॥

मेघ की आवाज का उल्लंघन करने वाले बहुत बड़े दुन्दुभी के नाद दिशाओं को शब्द से भरते हुए और अनेक प्रकार के झाँझ वीणा वेणु आदिक बाजाओं के गुंजार पूर्वक वंदियों के प्रार्थना श्री राम जी अपने श्वसुर के मन्दिर में गए ॥४५॥

पुरागममश्रूय वरस्य तावत्पुरांगणा पुण्य पुरा कृतस्य ।
फलो दयस्त्वद्य इति प्रतीत्या का सोच्च वातायन संनिविश्य ॥४६॥

पूर्व जन्म के महान् पुण्य से प्रकाशवती नगर की समस्त अंगनाओं ने दुल्हा श्री राम जी नगर में आरहे हैं ऐसा सुनकर हमारे पुराने पुण्यों का फल उदय हो गया ऐसा निश्चय करके अनूप गगन-चुम्बी महलों के ऊँचे छज्जाओं पर चढ़ करके ॥४६॥

उत्क्षिप्य मुक्ता फल जाल रंध्रान्स्थिताश्च तस्यां दिशियो जिताक्षयः ॥
हस्ते समादाय नीराजनार्थं काश्चित् स्थिताः काञ्चन भाजनं च ॥४७॥

दुल्हा श्री राम जी की तरफ दृष्टि को फैलाकर अपने महलों के छज्जाओं पर से तथा बहुत सी जाली वाली खिड़कियोंमें खड़ी होकर मुक्ता मणियोंको न्यौछावर करके बरषा रही हैं और हाथों में कोई आरती का सामान लिए हुए कोई स्वर्ण थालों को मंगलसाजों से सजे हुए लिए हुए हैं ॥४७॥

गायन्ति गीतानि मनोहर स्वरैः सम्बन्ध युक्ता रस व द्विशेषणैः ॥
नामानि संयोज्य परस्परं मुदा तान्ये व रामः श्रुतवान्सहर्षितः ॥४८॥

मनोहर स्वरों अनेक प्रकार के गीतों को गा रही हैं। सम्बन्ध के अनुसार रसीले भाव युत शब्दामृत की वर्षा कर रही हैं अपने और दुल्हा के पक्ष के नर नारियों का नाम योजित करके अनेक प्रकार के विनोद की बातों को उच्चारण करते हुए सुनकर श्री राम जी अतिशय हर्षित होते हैं ॥४८॥

रथ्या सुयोपि हृदये च रामः समं विवेशांग महनोरत्वात् ॥
स्थितागवाक्षे वर भूषणाङ्गा मूर्तिर्मणीना मि व कृत्रिमा च ॥४६॥

अतिशय मनोहर अंग होने से श्री राम जी गलियो से ही उन स्त्रियों के हृदय में सम्यक प्रकार प्रवेश कर जाते हैं। सुन्दर भूषणों से भूषित अंग वाली वे समस्त नगर की उत्तम स्त्रियाऐं अपने महलों के छज्जाओं पर विराजी हुई मणिमय कृत्रिम मूर्ति की तरह से हो गयीं ॥४६॥

पूर्वं तु कोलाहल मुच्चशब्दं ततो जनानां वहुशश्च यूथाः ॥
ततस्तु वाद्यादि क्रमेण वाहास्ततस्तदा रूढ समग्र वीराः। ५०॥

सबसे आगे पहले अनेक प्रकार के शब्दों से कोलाहल मचाते हुए झुण्ड के झुण्ड जनों की बहुत भीड़ सुशोभित है उसके बाद अनेक प्रकार के बाजाओं के क्रम से लाइन लगी हुई इसके बाद अनेक प्रकार की सवारियाँ जिनमें बड़े बलवान समग्र वीर लोग चढ़े हुए थे ॥५०॥

तेषांतु मध्ये चल दद्रिशा नौ रथेन भानुः किरणैः प्रकीर्णः ॥
तथोच्च नागे म विमानके मौविवाह भूषांगवभौच रामः ॥५१॥

इस प्रकार बड़ी भारी चलती हुई बरात के मध्य में पर्वत के समान ऊँचे हाथी पर सैकड़ों सूर्यों क समान प्रकाश करते हुए विमान में विवाह के भूषणोंसे सुसज्जित श्री राम जी महान् सूर्य की तरह से प्रकाश कर रहे हैं।॥५१॥

याभिस्तु रामस्य मुखं मनोज्ञं निरीक्षितं पौर वरांगणाभिः ॥
तासां मनो नेत्र मयानि तेन हृतानि रत्नानि गवाक्ष जालात् ॥५२॥

जिस वराङ्गना ने मन रमणीय श्री राम जी के मुख चन्द्र को देख लिया उसके मन और नेत्र रूप रत्नों को श्री राम जी ने छज्जाओं और झरोखाओं के रास्ते से चुरा लिया ॥५२॥

इति प्रकाशं सुखमाति रेकान्मनो भवस्योद्भिदयौवन श्रीः ॥
पुरांगणानां हृदि दर्शनेन कुर्वन्सुकेतुं कनकोच्च कुम्भम्॥५३॥

सुषमा की अतिशयता से उदय होते हुए यौवन की भी मनोभव (कामदेव) के अतिशय प्रकाश को नगर स्त्रियों के हृदय में दर्शन होने से वह सुषमा के मन्दिर का वक्षस्थल स्वर्ण के उच्च कलश हैं और वे युवतियाँ स्वयं ध्वजा की तरह से प्रकाश कर रही हैं ॥५३॥

प्राप्तं पताकाभिरशेष चित्रैः प्राकार भित्या परितः सुदीप्तम् ॥
वाद्य प्रतिध्वान सुनादितं तत्प्रासादमाप्तः श्वसुरस्य रामः॥५४॥

इस प्रकार नगर में कौतुक करते हुए श्री राम जी श्वसुर के घर में पहुँच गए जो श्वसुर का घर अनन्त प्रकार के चित्र विचित्र पताकाओं से और प्रकाशमान दीवालों पर चारों तरफ से अनेक प्रकार के चित्रों से और विविध प्रकार के बाजाओं के नाद से प्रति ध्वनित अतिशय शोभा संयुक्त हैं ॥५४॥

नवारविन्दाक्ष दर स्मिताधरं पर्व्वेंदु पूर्णादधि कांचितानमम्॥
समोन्नताशं च विशाल वक्षमंलाक्षा रसारक्त करांघ्रि सत्तलम् ॥५५॥

श्वसुर के चर की स्वागत के लिए आयी हुई उत्तम स्त्रियों ने अपने राज महल के दरवाजे पर से नवीन कमल के समान खिले हुए नेत्र वाले मन्द मुसुक्यान से रँगे हुए अधर वाले शरद पूर्ण चन्द्र से भी अधिक प्रकाशमान मुख चन्द्र वाले ऊँचे विशाल कपाट समान वक्षस्थल वाले लाक्षा के रंग से रँगे हुएकर चरण वाले दुल्हा श्री राम जी का दर्शन करके ॥५५॥

तमेत्य नीराजितु मङ्गनानां प्रभा मणी नामिव संस्थितानाम् ॥
सर्वेंद्रियं सत्पारि वर्ज्जयित्वा चैतन्य भावं नयनेष्वदृश्यत् ॥५६

सबकी सब अङ्गनाऐं इकट्ठी होकर आरती के लिए सजे हुए मंगल थारों के सहित मणिमय भूषणादिकों से प्रकाशमान सबकी सब अङ्गनाऐं समस्त इन्द्रियों के व्यापारों को छोड़ करके केवल नेत्रों में चैतन्य भावों को लिए हुए दीख पड़ती हैं ॥५६॥

तं नीराज्य नवाम्वुदाभ रुचिरं कौसुंभ्य सत्कंचुकं
मुक्तागुम्फित सोतरीय विलश त्साम्योन्नतांश द्वयम् ॥
प्रासादान्तर मेत्यरत्न खचिते सिंहासने स्थाप्य च
श्वश्रूभिश्च वधूगणैरिवधनं विद्युद्गणै र्योजितः॥५७

नवीन मेघ सदृश प्रकाशमान अत्यन्त रुचिकर कुसुमी रंग के कंकुक को पहिने हुए मुक्ताओं से गुम्फित एक उत्तरीय बस्त्र को ओढ़े हुये समान उन्नत दोनों कन्धाओं से सुशोभित श्रीरामजी को देखकर के आरती किये फिर महल के अन्दर रत्न खचित सिंहासन में बैठाकर सासुयें तथा अन्य वधूगणों के सहित सासुयें दुल्हा को घेरी हुई सुशोभित होती हैं जैसे बिजलियों का समूह मेघ को घेरा हो ॥५७॥

विधाय चैकारघुराज सूनो रासे दुषो रत्न सदासनं च ॥
श्वश्रुः प्रवेकांजलि मग्रतश्च वचो ब्रवीत्कारुणिकं मनोज्ञम् ॥५८॥

रत्नों से जड़ित सुन्दर सिंहासनों पर दैठे हुए रघुराज कुमार के लिए अनेक प्रकार स्वागत सत्कारों को करके सासु हाथ जोड़ी हुई श्री राम जी के आगे में खड़ी होकर मन रमणीय अत्यन्त करुणा से भरे शब्दों से बोलीं ॥५८॥

पुत्र्यास्त्विमा मे स्वकरेण लालिताः सर्वास्त्वदर्थं बिधिनापि निर्मिताः ॥
ग्रहणीय मा सां प्रियताधि कृत्यं कैङ्कर्य्यं भावं भवता कृपालुना । ५६॥

हे राम ! इन अपने हाथों से लाड़ प्यार से पाली हुई समस्त कन्याओं को मैंने आपके लिए विधान पूर्वक अर्पित कर दिया है जो विधाता से निर्मिता इन कन्याओं के अत्यन्त प्रियतापूर्वक कैंकर्य भावों को परम कृपालु आप से गृहण करने योग्य हैं ॥५६॥

योग्योसि शिक्षन्नु त्वपराध ह्यासां त्वय्येकतानत्व विधायिनी नाम् ॥
येषांत्व दैका गतिरस्ति लोकेंते रक्षणी यास्तु त्वया विशेषम् ॥६०

और आप इनके अपराधों को क्षमा करने योग्य हैं क्योंकि इनको एकमात्र गति लोक में आप ही हैं इससे आपसे विशेष करके रक्षा करने योग्य हैं और इनकी बुद्धि भी एकरस आपही में लगी रहने वाली हैं ॥६०॥

श्वश्रूक्तं वचनं निसम्य नितरां नीत्या सलज्जे क्षणः
प्रोवाचाम्बुज पत्र दीर्घ नयनौ बोधाम्बरा न्वोधितुम् ॥
मातर्मां प्रति पुत्रवन्ममतया सं वर्द्धनीयः सदा,
श्नेहःसान्त रतोपि वारि वसती वांडे शुचिः कूर्म्निका॥६१॥

सासु के कहे हुए इस प्रकार अतिशय नीति युक्त बचनों को लज्जा युक्त नम्र दृष्टि से सुनते हुए कमल दल के समान लिशाल नेत्र वाले सम्यक्र प्रकार बोध के घर सासु को सुबोधित करने के लिऐ बोले-हे माता ! मेरे को पुत्र की तरह से ममता करके आप अपने स्नेह को हमेशा वढ़ाइये जिस तरह से कछुआ जल के अन्दर अपने अण्डों से बहुत दूर रहने पर भी अपने पवित्र स्नेह को याद करके ही अण्डों का पालन करता है उसी तरह से आप मेरी याद किया करें ॥६१॥

गन्तुं सज्जित पद्मि नास गुरुणानुज्ञां प्रति प्रार्थितुं
युष्माकं सविधं स्वयं स्वगुरूणा नीतो स्म्यहं सद्यवै ॥
इत्युक्त्वा प्रणयात्सु नम्र वदनेनानेन चेत्संस्थिते
श्वश्रूभि श्र्वद श्रुभिः सुनयनैः सं वीक्षितेनस्थिते ॥

और मेरे गुरू महाराजने शीघ्र चलने के लिए हाथी को तैयार कर रक्खा है और गुरूमहाराज की आज्ञा से मैं आप सबके सुन्दर विधान पूर्वक प्रार्थना करके आज्ञा लेने आया हूँ। इस प्रकार कह करके इस नम्र मुख चन्द्र से खड़े हुए श्री राम जो को प्रणय कीअतिशयता से अपने सुन्दर नेत्रों से अश्रुओं की धारा बहाते हुए खड़ी हुईं सासुऐं आपको देख रहीं हैं ॥६२॥

अथोभय त्रैव निरोधितां यां भरेण प्रेम्णः पर वाक्यवृतौ॥
नीत्वा विशेषेण सुवासिनी भिर्वधूवरौद्वार वहिंप्रदेशम्। ६३

प्रेम के भार से बँधे हुए दोनों तरफ गुरू महाराज के वजन से परवस होकर मौन हैं और सुवासिनी सब बर बधुओं को विशेष विधान पूर्वक विदाई का इन्जाम करके अपने महल के बाहरी भाग में लाए॥६३॥

नीतौ तदामंगल गान वाद्यै र्वधूस्तु सर्वाश्चतुरस्रवाह्यैः ॥
वरः समारुह्य जनं समुच्चं जाते जनैः कृत्य कोलाहलोच्चै ।६४॥

जिस पालकियों में चारों कोना पर ढोने वाले वाहक लगे हैं ऐसी सुन्दर पालकियों में माङ्गलिक गीत वाद्य विधान पूर्वक बधुओं को बैठाकरके उसके बाद जनता के ऊँचे माङ्गलिक कोलाहल संयुक्त दुल्हा भी हाथी पर चढ़े ॥६४॥

मण्डलै रिव दोपानां तुण्डे र्व्यप्पित पक्षिणाम् ॥
पश्यतां भ्रम मापन्नं द्वितीयं चोडु मण्डलम् ॥६५॥

आकाश में पक्षियों की चोंचों द्वारा दीपों का मण्डल बाँध करके बरात सजायी गयी। यह आकाश दीपों की शोभा दर्शकों को यह दूसरे तारा मण्डलों हैं ऐसा भ्रम हो रहा है ॥६५॥

वेषान्बहू न्समाकल्प्य जनानां विस्मयं कराः ॥
चेष्ट यन्ति समाजेषु विदुषाः तर्क्क पण्डिताः ।.६६।।

बरात में सबके मन को प्रसन्न करने के लिए बड़ी तार्किक बुद्धि वाले बिदूषक लोग विविध प्रकार के वेषों की सुन्दर कल्पना करके जनता को आश्चर्य पैदा कर रहे हैं ॥६६॥

नर्त्तयन्ति विमानेषु रूपवत्यो वराङ्गणाः ॥
दर्शयन्त्यो नुभावाश्च भूषिताः सर्वं भूषणैः ॥६७॥

कहारों के कन्धाओं पर बाँसो पर बने हुए विमानों में सर्वभूषणों से भूपिता उत्तम रूपवती अप्सराएँ विविध प्रकार के नृत्य गान संगीत करके अनेकन अनुभावों को दिखाती है ॥६७॥

जनै र्वाह्याशिरोभिश्च र्दीपान्तर चकाशिताः ॥
मणीनां कृत्रिमा रम्या वाटिकाश्च मनोहराः ॥६८।

और मणियों के फूल फल पत्र बृक्षलताओं की कृत्रिम रचना करके वाहकों के सिरों द्वारा ढुआ करके मनोहर वाटिका की कल्पना की गई है जिस वाटिक में विविध प्रकार रत्नदीपों का प्रकाश छाया हुआ है ॥६८॥

स्फुलिङ्ग कौतुकाश्चित्रं दर्शयन्ति त्वनेकधाः ॥
दण्ड खेला श्चासि खेला उण्डीन कलयान्विताः ।६६।।

और अनेक प्रकार के आतशबाजियों द्वारा अभ्दुत कौतुक अनेक खेल दिखाए गये तथा दण्डों का खेल, तलवार का खेल, कूद फान कलाबाजी का खेल अनेक दिखाए गए ॥६६॥

द्वाराग्र सद्भासित मङ्गलाङ्गै दीपावली द्योतित हेम कुम्भेः ॥
उच्चैः प्रजानां भवनै प्रकीर्णा मि त्थं विनोदा कलिते जनानाम् ॥७०॥

इस प्रकार महाराज उद्धतविक्रम जी ने राजमहल के बाहरी फाटक के आगे अनेक प्रकार के माङ्गलिक दीपावली स्वर्णकलश आदि मंगल अंगों से प्रकाशमान इस कौतुक को आस पास का जनता के ऊँचे महलों पर से दर्शकों की भीड़ इस महाविनोद को देख रही हैं ॥७०॥

रथ्यां परिभ्राम्य वधू चनैश्च राम स्तदा शूद्धतविक्रमेण ॥
प्रजा, जनै र्महभ्दि र्नीतो निवासे वर यान कास्य ॥७१॥

इस प्रकार गलियों में वधूजनों से घिरे हुए श्री उद्धत विक्रम जी के सहित और प्रजाजन वन्धु वर्ग महानों के सहित घिरे हुए श्री राम जी इस महा कौतुक उत्सव पूर्वक जनवासे में आए ॥७१॥

तैरेव सैन्यैश्च, महद्भिःराजा मार्गे त्रिरात्रं तमनुव्रजित्वा ॥
दासांश्च दासींश्च तथैव सेनां नियोज्य देवंत्वपरं सुदाये ॥७२॥

और जनवासे से भी बरात को बिदा करके उसी धुम धाम के साथ तीन दिन तक पीछे चल करके महाराज उद्धतविक्रम जी मार्ग में पहुँचाने को आए। और बहुत सी दास दासियों को महाराज अवधेश के लिए नियोजित करके तथा और भी बहुत सी सुन्दर वस्तुऐं सेना प्रिय दामाद के लिए देकर के ॥७२॥

सुवन्द्य वन्द्यानधिकं सुप्रीत्या श्री कोशलेशं च तथा वशिष्ठम् ॥
श्री राम रूपं हृदये दधानः समागम न्स्वात्म पुरं प्रसन्नः ॥७३॥

प्रणाम करने योग्यों को अतिशय प्रेम पूर्वक विधि से प्रणाम करके इसी प्रकार महाराज कोसलेश जी को और श्री वसिष्ठ जी को बार २ प्रणाम करके श्री राम जी के रूपको हृदय में धारण करके अतिशय प्रसन्न मन हुए श्री उद्धत विक्रम जी अपने घर लौट आए ॥७३॥

इति श्री शङ्कर कृते श्री अमर रामायणे श्री सीताराम रत्न मञ्जूषायां राज्ञो दाक्षिणास्य त्रिक्रमोद्धत स्यै कादश सहस्र कन्या नां श्री रामेणो द्वाहो नाम षष्टित्तमः सर्गः ॥६१॥

इति श्री मधुकर रूपरसास्वादिना कृता टीकायां राज्ञोदाक्षिणास्य विक्रमोद्धतस्यैकादश सहस्र कन्यानां श्री रामेणोद्वाहो नाम एकषष्ट्तितमः सर्गः ॥६१॥

अथोद्धत विक्रमस्य सुता उद्वाह्य राघवः ॥
पित्रा स गुरुणा सैन्यै राजभिः सेवितेन सः ॥१॥

इस प्रकार पिता और गुरू महाराज तथा सेना व बहुत से राजाओं से सेवित श्री राघव जी महाराज उद्धत विक्रम जी की कन्याओं से विवाह करके लाए ॥१॥

उत्कण्ठितानामन्येषां कर ग्राहितु मात्मना ॥
सुतानां विधिना राज्ञां पुरं याने जगाम च ॥२॥

और भी बहुत से राजा अपनी कन्याओं से विधान पूर्वक श्री राम जी के पाणिग्रहण कराने की उत्कण्ठा में आशा लगाए थे । श्री राम जी इसी प्रकार बरात संयुक्त सवारियों से गये॥२॥

यावोहितैः सुप्रतराहि मार्गास्ताश्चापि सैन्याग्ररथाश्व नागैः ।
कुर्वन्त गाधा अपि जानु दघ्नाध्वनीः स सं बंधिन आपसीमाम् ॥३॥

जो मार्ग जहाज और नावों से पार किए जाते थे उन मार्गों को हाथी घाड़ा रथ पदाति आदि बरात की भीड़ द्वारा गाध (पैदल चलने योग्य करके) तथा कहीं पर घुटना भर पानी हेलकर चलने लायक रास्ता बना दिए इस प्रकार अपने राज्य की और अपने सम्बन्धीयों के राज्य की सीमा को प्राप्त हो गये ॥ ३॥

ततो बृहद्वंश विलम्बितानां पंक्तिर्ध्वजानां विपिना वृतानां ॥
दृष्टा पुरोगै रिव मेघ जाले सोड्डीय माना बकराजि रासीत् ॥४॥

बड़े लम्बे बाँस वाले ध्वजाओं की पंक्ति जो सघन वनों के अन्दर आते हुए दूर से बरातियों का समाचार दे रही हैं तथा वंश दीपों की पंक्ति से विशाल बरात की अद्भुद शोभा दूर से दीख रही है । मार्ग में ग्रामीण जनता ने सघन वन के बीच में आता हुई बरात को सघन मेघ मण्डल के ऊपर बगुलाओं की पंक्ति सदृश आते हुए देखा ॥४॥

जवाङ्कु राढ्या न्वट मङ्गलार्थान्शिरो वहन्तीः प्रमदा जनाग्राः ॥
वाद्यैश्च गानैश्च ततः समूहा दृष्टा जनानां वर वाहनैश्च ॥५॥

रास्ते में बरातियों के स्वागत मंगल के लिए स्त्री गण अपने सिरों में रखकर जौ के अंकुर मंगल चिन्हों से चिन्हित कलश लिए हुए गाना बजाना समूह पूर्वक तथा बहुत से लोग सुन्दर सवारियों में बैठकर आए हैं ॥५॥

एतत्समालोक्य वरस्य पक्षे सम्बन्धिनः किं पुर मेत दासीत् ॥
वितर्कयन्तीति जनाः समेता स्तावच्छ्रुतं चाद्दतु मागतो सौ ॥ ६॥

इस प्रकार मार्ग के दृश्य को देखकर वर पक्ष के बराती लोग अनुमान करने लगे कि कन्या पक्ष का नगर यही है इस प्रकार की तर्कना करते हुए आगे चलने पर बराती लोग आ गए ऐसा सुनकर ॥६॥

ग्रामाधिकारी नृप तुल्य गोपो मंत्री स एवास्ति परं च मित्रम् ॥
ताव त्सुगन्धान् जलयंत्रकै श्च सिञ्चन्त एवाग्र जनाः ससंयुः ॥७॥

एक कुछ ग्रामों का अधिकारी गोप जो राजाओं के तुल्य है उसने अपने परम मित्र मंत्री को स्वागत के लिए आगे भेजा तब तक जल यंत्रों से सुगन्धित जल के सिंचाव पूर्वक मार्ग में बरात के आते हुए कुछ लोग दूत बनकर आगे आकर समाचार दिए ॥७॥

स आजि माश्लेषितु मुक्त चेता स्त्रिविष्टपस्याधि पते रधृष्यम् ॥
ऋजुः स्वभावो महतां तथापि आश्लिष्यतं तेन मु मोद गोपम् ॥८॥

वह गोपराज महाराज श्री अजनन्दन जी को आलिगन करने के लिए आगे बढ़े सरल स्वभाव जो महाराज श्री चक्रवर्ति जी की इन्द्र भी धर्षणा नहीं कर सकता ऐसे महाराज बड़े सरल स्वभाव के साथ महान् महात्मा हैं उन महाराज ने उन गोपालराज को गले से लगाकर आलिंगन किया; अतिशय आनन्द हुआ ॥८॥

तदादृतो हर्ष मुपेत्य गोपो बद्धांजलिः सद्गिर मुच्चचार ॥
पतत्रि खर्वेण समो हमेत्र तार्च्यो पमस्त्वं महतो महद्भिः ॥९॥

इस प्रकार महाराज से आदर पाए हुए गोपराज हाथ जोड़कर सुन्दर साधू वाणी से बोले कि मैं तो एक पतंगा के समान हूँ आप महान से भी महान् पक्षिराज विष्णु बाहन गरुड़ के समान हैं ॥९॥

कस्त्वं हिमांशुर्हि दिगन्तरस्मिः कः खर्व खद्योत समो हमेव ॥
वदन्ति विद्या विषयाभिपूर्णाः संवीक्ष्य मत्वा महदंतरेण ॥१०॥

कहाँ तो आप साक्षात् शरद पूर्णमासी के चन्द्रमा के सदृश सर्वलोक दिगंतरों को प्रकाश करने वाले कहाँ मैं एक तुच्छ जुग्नू के समान परन्तु विद्या विषय पारंगत हुए विद्वान लोग कहते है कि बड़े लोगों का यह महान् अन्तर होने पर भी छोटे लोगों से मिलना यह उनकी उदरता ही बड़प्पन है॥१०॥

सजानुलंब्यञ्चित भूषणाभ्या मालिंगितो हं भवता भुजभ्याम् ॥
गुणः सतां सद्भिरलं कृताना मङ्गा गतिः स्यात्फलवद्द्रु माणाम् ॥११॥

सो अपने घुटना पर्यन्त लम्बी दिव्य मणियों की मालाओं से भूषित अपने श्री विग्रह दोनों भुजाओं से मेरे को आलिंगन किया यह सज्जनों के सद्गुण ही अलंकार रूप में अंग में शोभित होते हैं जैसे उत्तम फल वृक्षों पर सुशोभित होते हैं ॥११॥

इत्थं समाजै र्महतां समेतं तंसार्वभौमं प्रणिपत्य गोपः ॥
समर्च्य वाक्पुष्प च यैश्च रत्नै स्ते नाथ ग्रामान्त वनं विवेश ॥१२॥

इस प्रकार गोपराज के महान समाज के सहित उन महाराज सार्वभौम चक्रवर्ति जी को प्रणाम करके अपने वचन रूप पुष्पों से तथा उत्तम रत्नों से महाराज चक्रवर्ति जी का सम्यक प्रकार पूजा करके उस रास्ते में से अपने नगर पर्यन्त विस्तार वाले जंगल में महाराज श्री चक्रवर्ति जी के सहित प्रवेश किया ॥१२॥

नामानि जातिं च मृग द्रुमाणां घने वने हस्त पुट प्रयुक्तः ॥
विलक्षणानां कथयन्सराज्ञे तदोपशल्यं निकटं ह्यु पेतः ॥१३॥

इस प्रकार बरात के सहित जाते हुए श्री चक्रवर्ति जी ने गोपराज से जंगल के वृक्ष और मृगाओं का तथा सघन वनों के नाम और जातियों को पूछते हुए घोर वन में प्रवेश कर रहे हैं साथ गोपराज अपने दोनों करकमलों की अञ्जलि बाँधकर विलक्षण रूप आकृति वाले वन मृग पक्षियों के नामों को महाराज चक्रवर्ति जी के लिए बताते हुए अपने ग्राम के समीप में आ पहुँचे ॥१३॥

पर्य्यंङ्क-पीठासन संभृताना मन्योपचाराश्रित संग्रहाणाम् ॥
अथां सुकाप्यन्य समूहकानां विभक्त पंक्ति प्रवर प्रकीर्णे ॥१४॥

जहाँ पर बड़े २ महलों का समूह बस्त्रों से बना हुए पंक्ति की पंक्ति अलग २ विस्तार बने हैं जिन बस्त्रों के महलों में पर्यंक सिंहासन आदि सभी उपचार सामग्री सम्यक् प्रकार संग्रह करके सजायीं गयीं हैं ॥१४॥

श्रीरामयाना गमनं विचिन्त्य विरोपितेवास्त्र विशाल दुर्गे ॥
निवेश्य श्रीकौशल राज राजं मुमोद गोपः कृततत्प्रणामः ॥१५॥

और इस प्रकार के जनवासा के बाहरी भाग में बहुत विशाल वस्त्रों का परकोटा बना है इस प्रकार के जनवासा को श्री राम जी की बरात आवेगी इस विचार से पहले से तैयार रक्खा था सो उसी जनवासे में राजराजेश्वर महाराज श्री कोसलेश जू को बरात सहित ठहराकर तब गोपराज अत्यन्त आनन्द मग्न होकरके प्रणाम किए ॥१५॥

स्थिरं प्रसन्नं नितरां निरीक्ष्य प्रोवाच गोपः कर सम्पुटेन ॥
दिनैक मात्रं तु गृहे मदीये संप्रेषितुं देवसबन्धु रामम् ॥१६॥

जब महाराज बरात के सहित जनबासे में विराजे। सब प्रकार इन्तजाम होने के बाद चित्त स्थिर प्रसन्न मन हुए देखकर श्री गोपराज जी हाथ जोड़कर बोले-हे देव ? आप अपने बन्धु वर्ग तथा श्रीरामजीके सहित एक दिनके लिये मेरे घरमें ठहरनेकी आज्ञादें उसके बाद मैं आपको विदा करूँगा ॥१६॥

आर्य्येण सार्द्धं हि सुमन्तकेन ससेवकं मङ्गल भूषणाङ्गम् ॥
प्रमीद कुत्रैव पुनः समाजैः समागमः स्यादति दूर देशात् ॥१७॥

आज कैसा सुन्दर मंगल का दिन है कि श्रीरामजी मांगलिक भूषणोंको अंगों में पहने हुए तथा सेवक सुमन्त आदिकों के तथा अपने पिताजीके साथ आये हुए हैं ऐसे मौका में यदि आपका स्वागत न

कर सकूं तो फिर ऐसा समय अति दूर देश होने की वजह से कहाँ मिलेगा इसलिए हे देव आप प्रसन्न होवें ॥१७॥

इत्थं प्रीति मतस्तस्य वचः श्रुत्वा विहंस्य च ॥
गोप्ता लोकस्य गोपस्य तथेत्युक्त' शुभं पुनः ॥१८॥

इस प्रकार श्रीगोपराज जो के अति अनुरागमयी बचनों को सुनकर समस्त लोकों के संरक्षक महाराज श्रीचक्रवर्ति जी हँस करके बोले कि ऐसा ही होगा॥१८॥

तथेत्युक्ते महाराजे सेवकाः कार्य्यकारिणः ॥
चक्षुर्भाव विदा शीघ्रं सुमन्तेन च व्यापृताः ॥१६॥

महाराज की इस प्रकार की प्रार्थना स्वीकृति पर जितने भी कार्यकर्ता सेवकगण थे सबके सब नेत्रों के इशाराओं को समझाने वाले शीघ्र श्रीसुमन्त जी की आज्ञा से जैसे के तैसे ठहराये गये ॥१६॥

उच्च मातङ्ग मास्थाय हर्म्यस्थाणां स्व दर्शनम् ॥
सन्निकर्षं विधातुं तद्ग्रामाभिमुख माययौ ॥२०॥

दुल्हा के नगर में प्रवेश करने के लिए बहुत ऊंचे हाथी को सुन्दर दर्शनीय शृङ्गार करके बैठाये और अपने को दर्शन की लालसा वाली ग्राम की स्त्रियों के दर्शन सुपास के लिए सुन्दर बरात के सहित गोपराज के घर जाने के लिये ग्राम के सन्मुख आये ॥२०॥

नीलेन्द्र रत्न परिभावित कान्तिकाय-
मुद्भिन्न यौवन वयः श्रियमम्बुजाक्षम् ॥
वासोरुणं परिदधान मपार शोभं-
नार्य्यश्चमत्कृति मवापुरवेक्ष्य रामम् ॥२१॥

ऊंचे हाथी पर बैठे हुये श्रीरामजी इन्द्र नील मणि के समान श्याम सुन्दर विविध प्रकार के सुन्दर भावों से शृङ्गार किये हुए प्रकाशमान शृङ्ग वाले नवीन उत्पन्न हुये यौवन अवस्था वाले अतिशय शोभा से भरे हुए कज्जलित नेत्र वाले अरुण वस्त्रों को धारण किये हुये अपार शोभा सम्पन्न श्रीरामजी को पुरमें प्रवेश करते जब ग्रामकी स्त्रियोंने देखा तो अतियश चमत्कार वाले रूपको देखकरचकाचौधा को प्राप्त होगये ॥२१॥

झटितं चाप्यधो गेहा दूर्द्ध्वस्थे समागमात् ॥
सोपाने ष्वधिरोहराया दधतीनां पतत्पदम् ॥२२॥

जो स्त्रियायें मकान के नीचे थीं वे झट से अपने मकानों की सीढ़ियों पर चढ़ करके ऊपरी खण्डों से हाथी पर बैठे हुए श्रीराम जी की बराबरी में छज्जाओं पर आकर बैठ गयीं जिससे श्रीरामजी का सम्यक प्रकार दर्शन हो सके॥२२॥

रामं द्रष्टुं विव्हलानां प्रमदानां समन्ततः ॥
गृहाझणत्कृतिं चापुः कङ्कणै र्नूपुरै रपि ॥२३॥

श्रीरामजी को देखने के लिये अतिशय विह्वल हुई स्त्रियायें अपने मकानों में इधरसे उधर चारों तरफ दौड़ रही है इस प्रकार उनके दौड़ने से नूपुर कंकण किंकिनी आदि भूषणों का झनकार चारों तरफ मकानों में छाया हुआ है ॥२३॥

तद्ग्राम वनितानान्तु रामे ग्रामं समागते ॥
तपः साधनभूयोभि भूँमिः संपूतिताङ्कता ॥२४॥

इस प्रकार श्रीरामजी के ग्राम में आने पर ग्राम की वनितायें अपने तपस्यादिक पुण्य साधनों की मन में सराहना करती हुई अतिशय पवित्र अपनी आत्मा को मानकर भूमिको पवित्र कर रही हैं॥२४॥

इत्थं ग्रामाङ्गणानां स हृदियोगान्मनोहराम् ॥
निवेशयन्नात्म मूर्तिं प्राप्तो गोपस्य सद्गृहम् ॥२५॥

इस प्रकार ग्राम को अङ्गनाओं के पवित्र मनोहर हृदयोंमें अपनी श्यामल मूर्ति को प्रवेश कराते हुए श्रीरामजी गोपराज के सुन्दर घर में प्राप्त हुए ॥२५॥

द्वारं गृहस्य गोपोपि समासाद्य सहर्षितः ॥
हस्तंदत्वा सुमन्तादीन् गजादवततार च ॥२६॥

अपने घर के दरवाजे पर बरात सहित श्रीरामजी को आये हुए देखकर गोपराज भी अतिशय हर्ष में भरे हुए अपने हाथ से सुमन्त आदिकों का हाथ पकड़कर हाथियों पर से नीचे उतार रहे हैं ॥२६॥

ततः कक्षान्तरे तेन यथा योग्यं महासने ॥
संस्थापिता स्वादरेण पूर्व योगास्तु योगिना ॥२७॥

इसके बाद गोपराज ने कई आवरण भीतर ले जा करके सबको यथा योग्य आसनों पर बड़े आदर से बैठाया क्योंकि गोपराज पूर्वजन्म से कोई बड़े योगीराज थे ॥२७॥

ततः कान्ता गणं गानै र्वाद्यैः रामं नीराजितुं ॥
प्राप्त चाभ्यन्तरे गेहे रणयन्पादभूषणाम् ॥२८॥

अन्तःपुरमें स्त्रियों ने गान वाद्य पूर्वक अपने पाद आदि भूषणों के झनकारों सहित श्रीरामजीकी आरती के लिए इन्तजाम किया ॥२८॥

नीराजन पात्रहस्ता रूपेणाकृष्ट मानसा ॥
अपूर्वेणैव रामस्य मूर्ति भूताग्र मास्थिता ॥२९॥

श्रीरामजी के रूप से आकर्षित मन वाली हाथों में आरती के पात्रों को लिये हुये श्रीरामजी के अपूर्व रूप को देखकर शिलाविग्रह मूर्तियों की तरह एक टक देखती रह गयी ॥२९॥

सामूहूर्त्तं विचिन्त्याथ सुकृतैः सादितः स्वयं ॥
तं नीराज्य परं प्रीत्या निवेश्य च गृहान्तरम् ॥३०॥

उन सबने अपने सुन्दर पुण्यों से प्राप्त किये हुये श्रीरामजी का दर्शन करके एक मुहूर्त समाधिस्थ होगयीं उसके बाद अतिशय अनुराग पूर्वक आरती की तत्पश्चात् अपने महल के भीतर श्रीरामजी को लिवा ले गयीं ॥३०॥

भोजयित्वातु मातेव संनिधिस्था सुभोजनम् ॥
वार्त्ताजन्मांतरां स्मृत्य चकार विस्मयान्विता ॥३१॥

माता की तरह से श्रीरामजी के समीप में बैठकर सुन्दर पदार्थों को पवायीं और अपने जन्मान्तरीय बातों को स्मरण कर के आश्चर्य चकित होकर के श्रीरामजी को देख रही हैं ॥३१॥

इत्थं नाथ निजार्चितांघ्रि शरणान्प्रीरयानिव श्रीशसे-
दूरं जन्म मिषं कदापि वदसीत्यत्रापि कः कर्त्तृ भाक् ॥
न्यूनाधिक्य मथा परं च वदसि प्रीत्या च हेतौ यदा-
तत्राप्यन्तर मात्मनां हि करणं त्वं सर्वथा दृश्यते ॥३२॥

और यह बोलीं कि हे नाथ! आप हम सब आपके चरण आश्रिताओं को त्यागने योग्य अयोग्यों की तरह से हमारा दूर देश में जन्म है इस बहाने से आप दूर कर रहे हैं। अपने को मैं दूर का रहने वाला हूँ ऐसा कह रहे हैं बताइये तो इस स्थान पर विधानकर्ता कौन है। और इसके अलावा आप न्यूनाधिक्य भेद को भी बता रहे हैं इस स्थान पर जब अनुराग ही कारण है और सभी प्राणियों की अन्तरात्मा में उर प्रेरणा करने वाले आप ही सर्वथा देखे जाते हैं तब बताइये आपके हमारे दूर होनेका कारण क्या है? ॥३२॥

रोम्णा मुद्गम सूचितांतर गतिः प्राकट्य पारि प्लवात्-
प्रेम्णां सांहि विलंध्यतां च विसदा मासंज्य चाग्रा स्थिता॥
रामेणात्म समान्तपाद युगला गोपस्य गोप्तांगना ॥
वाग्भिः प्रीति मतीभिराशु शुचिभिः संशोलिता वैवधूः ॥३३॥

इस प्रकार कहती हुई वे गोप स्त्रियायें अनुराग की अतिशय विभोरता से अन्तरात्मा की दशाओं को अपने रोमाञ्च अश्रुपात आदिक चिन्हों से सूचित कर रहा हैं और अतिशय विभोरावस्था में निर्मल आत्मदृष्टि प्रकाश को प्राप्ति की हुई श्रीरामजी की सेवा में लगी हुई हैं। श्रीरामजी ने भी अपनी आत्म प्रसन्नता से शान्त भाव देकर उनको प्रसन्न किया। अपनी आत्मा के अतिशय सुन्दरता के किरण जालों से उनके हृदयों को ऐसे प्रकाशित कर दिया जैसे चन्द्रमा अन्धकार रात्रि में प्रकाश कर देता है ॥३३॥

रामेणात्म प्रमादेन शान्त भावा प्रमादिता ॥
आत्मनः रस्मि जालेन शशिना शर्वरी यथा ॥३४॥

और श्रीरामजी ने अपने आत्मप्रसाद से और अपनी वाणी से अत्यन्त अनुरागवती पवित्र विचार वाली उन गोप स्त्रियों को अपने चरणकमलों का सुन्दर भक्ति युक्त बुद्धि देकर सुन्दर शील स भर दिया ॥३४॥

ततो वशिष्ठ माहूय सुमन्तमभिमत्य च ॥
आत्मनो गुरुणा तेन पुत्र्य श्चैका दशत्रिकाः ॥३५॥

इसके बाद गोपराज ने श्रीसुमन्त्र जी से सम्मत लेकर श्रीवशिष्ठ जी महाराज को बुलवाया। अपनी तैंतीस कन्याओं के साथ अपने उपरोहित के द्वारा विधान करा करके ॥३॥५

सुदाये भूषिताङ्गाश्च गुणैः रूप विलक्षणाः ॥
श्रीरामायार्पिताः शीघ्रं गोपेन पूर्व योगिकाः ॥३६॥

सुन्दर दामाद के लिये गुण रूप भूषित अंगवाली विलक्षण कन्याओं का विवाह कराया इस प्रकार पूर्व जन्म के योग से वे सब कन्यायें गोपराज के द्वारा श्रीरामजी के लिए शीघ्र अर्पण हुई ॥३६॥

ततस्ते नोत्तर दिने पूजितांघ्रि महात्मना ॥
चतुर्विधं रसैः षड्भिरकारि सर्व भोजनम् ॥३७॥

उसके बाद दूसरे दिन महात्मा गोपराज ने पूजित चरण श्रीरामजी की सब बरात को चतुर्विध षटरस पदार्थों से सबको सुन्दर भोजन कराया ॥३७।

प्रति पुत्र्यष्ट दास्योपि दासाश्चापि शुभांगिनः ॥
अतिनम्र तया नून मूनं मत्वा समर्पिताः ॥३८॥

अपनी प्रत्येक कन्या के साथ आठ २ दासी सुन्दर अङ्ग वाली तथा बहुत से सेवकों को भी दिया और अति नम्रता पूर्वक अपने को अत्यन्त न्यून मानते हुए प्रार्थना करके श्रीरामजी से स्वीकार कराया ॥३८॥

श्रीपार्वत्युवाच–कथं गोपं गृहे देवक्षत्रियाणां परीणयः॥
कदाचित्स्त्रो रत्नमेव न तु योग्यो कर गृहः ॥३९॥

श्री पार्वती जी बोली कि हे महाराज ! क्षत्रिय जाति के होकर भी गोप जाति के घर में कैसे पाणिग्रहण हो गया यदि कहो कि स्त्रियायें उत्तम थीं तो भी पाणिग्रहण करना तो योग्य नहीं था ॥३९॥

श्रीशिवोवाच–नैव गोपलको गोपचन्द्र वंशावतंशकः॥
गोपो ग्रामाधिकारित्वा द्राज्ञा मादरणीयतः ॥४०॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि वे गोपराज गायों के पालन करने वाले नहीं थे अपितु चन्द्रवंशीय क्षत्री केवल गौ पालने वालों के ग्राम के राजा थे और राजाओं के बीच में आदरणीय थे ॥४०॥

सुतानां स्वामिनः पूर्वं मात्मनः कथ मुद्वहः ॥
शूची कटाह न्याये नेत्यपनीता तिसाध्वसः ॥४१॥

महाराज चक्रवर्ती जी के अनुपस्थिति पर श्रीसुमन्त जी और श्रीवसिष्ठ जी ने महाराज चक्रवर्ती जी के कुमारों का विवाह कैसे कर दिया इस प्रश्न के उत्तर में सूची-कटाह-न्याय से निर्भयता पूर्वक कर दिया ॥४१॥

तमादाय सार्वभौमं कौशलेशं निवेदयम् ॥
सैन्ये नापि प्रवर्त्तो सौत्तत्पुरस्यो पवर्त्मनि ॥४२॥

इस प्रकार कुमारों का गोप कुमारियों के साथ विवाह करके सेना के सहित आकर सार्वभौम महाराज श्रीकौशलेश जू को सब समाचारों के सहित वर दुलहिन सम्पत्ति को निवेदन किया। महाराज अवधेश जी भी अपनी सेना के सहित उसी गोप नगर के उप मार्ग से श्रीअयोध्या जी को चल पड़े ॥४२॥

सात पत्रो नातपत्रं सतं प्रच्छंश्च वर्त्मनि ।
मृगाद्रि द्रूणां नामानि गजस्थो गज वाहनम् ॥४३॥

छत्र चमरादि राज उपकरणों से सुशोभित महाराज श्री चक्रवर्ती जी चलते हुए मार्ग में बिना छत्र वाले हाथी पर चढ़ हुए गोपराज से प्रश्नोत्तर करते हुए मृगाद्रि द्रुम नाम के वन को देख करके उन गोपराज से पूछने लगे कि ॥४३॥

विलक्षणानां सम्पद्भिर्वर्णैश्चा कृति भिस्तथा ॥
यत्तौहि जगतां नाथः पुरा दृष्टाग्र यातिनां ॥४४॥

हे गोपराज विलक्षण सम्पत्ति पत्र पुष्प फल आदिक रंग २ के महाऐश्वर्य से पूर्ण वह वन जिसका कि आपने बहुत बड़ा महत्व बताया है वह वन जो कि बड़ा ही सुन्दर है सो कैसे है, इतना प्रश्न करते ही आगे बढ़ने पर जगतपति महाराज चक्रवर्ती जी अपने दृष्टि के सामने उस वन को देखे ॥४४॥

इत्यन्तरे चाभ्र वृन्दै रिवावृत्त विभावसुम् ॥
बहु शोनोरुहावृन्तं शिखराकाश लम्बितम् ॥४५॥

जो कि घनघोर मेघ मण्डल के सदृश अथवा अग्नि ज्वाला के मण्डल सदृश विविध प्रकार के पर्वतों के आकाश चुम्बिशिखरों के सदृश ॥४५॥

अभूत्पूर्वं द्रुमा लोक्य पार्थिवेणोक्त एव सः ॥
सविस्तरं तदै तिह्यं वर्णि तुं च प्रचक्रमे ॥४६॥

अद्भुत वृक्षों का समूह चमत्कार युक्त देखकर महाराज श्रीचक्रवर्तीजी को गोप ा ज ने उस वन के नजदीक आते हुये वन की महिमा तथा इतिहास को वर्णन विस्तार किया ॥४६॥

गान्धर्वो सौ महाराज दृश्यते ज्योतिषा वृतः ॥
द्रुम राजो भवद्भिस्तु गन्धर्वेणा भिरोपितः ॥४७॥
आकाश लम्बितो प्यासी योजने परिवर्तितः ॥
वेदिको विदितो लोके चिरन्तन समाश्रयः ॥४८॥

कि हे महाराज यह जो चमत्कार युक्त ज्योति मण्डल से घिरा हुआ वन आप लोगों को दीख पड़ रहा है वह एक योजन के विस्तार में फैला हुआ वन स्वर्ग के गन्धवराज का लगाया हुआ है इस नदन के बीच में एक विशाल वेदी के मध्य मण्डप है जो कि सर्व लोक चिरन्तन प्रसिद्ध है ॥४७-४८॥

गूढ़ जाति पर्णफलैः पीतारुण प्रवर्तते ॥
बुध्नतः शिखरां तोसौ शाखा भिश्च समाङ्कुः ॥४९॥

महान पत्र पुष्प फलों से युक्त भवरों से पिया हुआ रस परागादि वाला तथा वृक्षों के ऊँचे शिखरों से देखने वालों को यह वन पर्वत शिखरों के सदृश प्रतीत होता है ॥४९॥

अस्यास्ति पश्चिमे भागे नाम्ना नाग ह्रदो महाम् ॥
तत्रापि वर्तते नागो नाम्ना सौज्जल केलिकः ॥५०॥

इस वन के भीतर मण्डप के पश्चिम भाग में एक बहुत बड़ा नाग सरोवर नाम का तालाब है उस तालाब में जल केलिक नाम से प्रसिद्ध वह नागराज स्वयं निवास करता है ॥५०॥

सखायौता वुभौ देव ह्येकत्रैव कुटुम्बिनौ ॥
वनेस्मिन्नाव सत्येवं पूर्वेन्द्रेणा वरीडितः ॥५१॥

वह गन्धर्वराज तथा नागराज दो जने हैं दोनों का आपसमें परम मित्रता है और प्राचीनकाल में इन्द्रसे पीड़ित होकर ये दोनों जने कुटुम्ब सहित इस वनमें वास करते हैं ।।५१।।

स्वर्तोचित सौरभाङ्गः प्रसूनस्या स्य सौरभैः ॥
देशोपि वासितां याति वसन्तर्त्तौ शुभां सुकैः ॥५२॥

इस वन के पुष्प फल पत्रों की सहज सुन्दर सुगन्धी स्वाद इस वन के आस पास बाहरी वनों में भी वसन्त ऋतु के तरह से अंग वस्त्र सदृश फैली रहती है ।।५२।।

विधते दुर्दिनं दूराद्धनाना मिव योजनात् ॥
मरन्दा कर्षिता यस्य माला सांघ्रालिनां किल ॥५३

बहुत दिनों से अपने दुःखमयी दिनों को विताता हुआ यह गंधर्वराज एक योजन में फैले हुए मेघ मण्डल के सदृश फैले हुये इस वन के द्वारा पराग और मालाओं की सुगन्ध वर्षा करता हुआ बाहर के भवरों को भी अपनी तरफ खींचता है ।।५३।।

पृष्टि चित्रार्पितादर्श प्रतिमं छदनं हितत् ॥
नागवल्ल्या कृति कांत्या तुल्यं पर्वेन्दुनापि च ॥५४

यह वन शरदपूर्ण चन्द्रकी तरह से प्रकाश और गोलाई में सदृश है और इस वन का पृष्ठ भाग दर्पण की तरह से प्रतिविम्ब देने वाला चित्र विचित्र रंग का कान्ति में नागवल्ली के सदृश आकार वाला है ।।५४।।

लम्बितं हस्त मात्रं च पृथुलं तु वितस्तिना ॥
अरुणा मञ्जरी चास्य वहु वर्ण फलांचिता ॥५५॥

इस वन के वृक्षों की मञ्जरी फल पण कोई तो एक हाथ के कोई एक वितस्ती के लम्बे मोटे रंग रंग के पेड़ों को भरे हैं ।।५५।।

प्रतिशाखं फलं तस्मिन्भिन्नं पुष्पं तथैव च ॥
स्वादु वर्णा कृति गन्धैर्भिन्नं सर्वं विलक्षणैः ।५६॥

उस वन के प्रत्येक वृक्षों की शाखा तथा फल उसी प्रकार पुष्प और पत्र भी अपने स्वाद रूप रंग गन्ध आकार आदि से सब अलग २ विलक्षण हैं ।।५६।।

लता जालान्यनेकानि कृत कुञ्जान्य नेकशः ॥
फल पुष्प द्रुमाश्चैव वाटिकाः सुमनोहराः ॥५७॥

इसी प्रकार उस वन के वाटिकादि अनेक प्रकार के लताओं का फल पुष्प पत्र वृक्षादिकों से अनेक प्रकार के कुञ्जे आदि के रूप में सुन्दर मनोहर जाल बिछ ।।५७।।

रक्षंन्त्यस्य च पर्य्यन्तं निश्वास विष वृंहिताः ॥
दीर्घ काया दार्वीकरा दूरान्निद्रां विधायिनः ॥५८॥

इस बनके चारों तरफ विशाल शरीर वाले महान् विषैले स्वाँस वाले बड़े २ क्रोधित सांप अपने निद्रा को त्याग कर इस बन की रक्षा करते हैं ॥५८॥

तेन हित्वा योजनार्द्धं पथिका विदंति ह्यकाः ॥
निः सरन्त्यत्र मार्गेतु राज राजेश्वर श्रृणु ॥५९॥

हे राज राजेश्वर सुनिये इस बन के मरमग्य पथिक लोग इस बन से दो कोस की दूरी से अपनी यात्रा करते हैं ॥५९॥

श्रृन्वन्श्रृन्वन्स चैतिह्यमथ गोपान्नराधिपः ॥
आपो पां तं तद्वनस्य वार्त्तां वार्त्ताज्ञ यष्टिकः ॥६०॥

इस प्रकार गोपराज से कथा सुनते २ महाराज चक्रवर्ती जी वातो की पंक्ति के भूल में रड़ कर उस नाग कुण्ड के अत्यन्त समीप में आ पहुँच गये ॥६०॥

उपकण्ठे नक्त मस्याः सरोयुक्ते वनान्विते ॥
ध्रुवमर्थं प्रदायास्तु वाटिकाया वसेश्वर ॥६१॥

तो अकस्मात इस सरोवर से युक्त बन के समीप से निश्चित महान् अर्थ को देने वाला यह अस्थान है। हे ईश्वर आप इसी बाटिका में रात्रि भर ठहरिये ॥६१॥

इत्थं सगोः सकाशाच्च श्रुत्वा गांध्रुव मर्थदाम् ॥
तत्रव वस्तुं चकमे चक्रवर्ति नृपाधिपः ॥६२॥

इस प्रकार आकाशवाणी से एक गऊ की आवाज सुनकर गऊ तो महान सुन्दर निश्चित अर्थ को देने वालो होतो है ऐसा निश्चय करके रात्रि में श्रीचक्रवर्ती जी ने इसी जगह ठपरने का निश्चय किया ॥६२॥

अथोच्चैः प्रतिहाराणां शब्दैश्च प्रेरिताग्रगैः ॥
सैन्यके राजराजो सौ विशालं रोपित ध्वजम् ॥६३॥

इसके बाद प्रतिहारियों के द्वारा बरात के फौज पलटन का अगुआ ध्वजा वाले को सूचना दी गई कि आज बरात यहाँ पर ठहरेगी राज राजेश्वर चक्रवर्ती जी की आज्ञा से ध्वजारोपित होगई बरात ठहर गई ॥६३॥

स्थलं वनान्तरं रम्य मुपकण्ठं सरोग्रकम् ।
विभक्तं द्रुम पंक्त्या च विवेश विसद प्रभः ॥६४॥

जब सेना ठहर गई तो कुछ रात्रि बीतने पर आकाशवाणी हुई कि इस बन के अन्दर एक रमणीय सुन्दर सरोवर है उसके समीप में ही सुन्दर वृक्षों की पंक्ति से सुन्दर विभाग वाले प्रकाशमान बन में प्रवेश करके ॥६४॥

भवन्तुद्यु घताः सर्वे भवन्तो भोजनायवै ॥
यामेक विगतां यां च रात्रा वित्युच्च शद्वितम् ॥६५

आप लोग सब कोई भोजन के लिए तैयार हो जाइये क्योंकि रात्रि एक याम बीत गई है ऐसी आकाशवाणी को महाराज चक्रवर्ती जो ने सुना ॥६५॥

ततः स्थाल्यां काञ्चनस्य भोजनं हि चतुर्विधम् ॥
हस्तेन वनितानां च झणत्कारेण कङ्कणैः ॥६६॥

इसके बाद बहुत सी स्त्रियों का झुण्ड अपनी सुन्दर सिंगार सजावट से नूपुर किंकिनी कङ्कण के झनकार पूर्वक हाथों में स्वर्ण थालियों के ऊपर भक्ष्य भोज्य लेह्य पेय लिए चतुर्विध पदार्थों को लेकर।।६६

कटाक्षेण समं सर्वैं जनैश्चलघु मध्यमैः ॥
युक्तं षड्रसैर्लब्धं विधि वद्विस्मय प्रदम् ।६७॥

अपनी कटाक्षों से बरात के ऊँच नीच सभी जनों को सुन्दर आदर पूर्वक षटरस विविध प्रकार के आश्चर्य देने वाले पदार्थ भोजन के लिये दिया ॥६७॥

दिव्यां शुके कोत्तरीयं विधिना भोजनोत्तरम् ॥
प्रसन्नेन्दु मुखीनां च दत्त माननवीक्षणैः ॥६८॥

इस प्रकार विविध विधी से भोजन कराके बरातियों को उन चन्द्रमुखियों ने अनेक प्रकार सुन्दर कटाक्ष करके दिव्य ओढ़ना बिछवना आदि देकर ॥६८॥

अथाहि वल्लि दलकं गन्ध चूर्ण पुटी कृतम् ॥
सहमन्दार मालाभिस्तासां हस्तात्समंततः ॥७०॥

उसके बाद नागवल्ली दलक नाम के पान बीड़ा को सुगन्धित चूर्ण आदि तथा मंदार पुष्पों की मालायें उन चन्द्रमुखियों के हाथ से सब बरातियों को दिया गया ॥६९॥

वृतान्त मिति न ज्ञातं केनापि तत्र सज्जनैः ॥
कस्मादागता चैताः पुनः कुत्र गता अपि ॥७१॥

परन्तु यह चन्द्रमुखी कहाँ से आई फिर कहां गई बरात के किसी सज्जन ने भी यह वृतान्त नहीं समझ पाया ॥७०॥

परं जिज्ञास मानं च चरितं जन मण्डलम् ॥
श्रीराम वरयानस्य न शिश्येपि श्रमान्वितम् ॥७२॥

परन्तु श्रीराम जी के बराती सब रास्ते के श्रम से श्रमित भी थे परन्तु इस चरित्र के समझने के लिये सजग रहे ॥७१॥

अथ प्राप्त निसीथेतु कौशलेशस्य सन्निधौ ॥
गन्धर्व नाग राजौ चतेजसावृत्त विग्रहौ ॥७२॥

इसके बाद रात्रि बीतने के वक्त महाराज कौसलेश जी के पास में महान्प्रकाशमान विग्रह वाले गन्धर्वराज और नागराज आये ॥७२॥

अदृश्यौ रक्षकै द्वारे प्रभावन्तो प कार्य्यके ।
रामे चैवात्मजायोक्तु मीचकौ समवायतुः ॥७३॥

वे गन्धर्वराज और नागराज अत्यन्त प्रकाशमान विग्रह वाले होने पर भी द्वारपालों से अदृश होकर अपनी कन्याओं के लायक श्रीरामजी को देखने के लिए श्रीरामजी के समीप में आ पहुँचे ॥७३॥

अविस्मयेन राज्ञापि न भोगां स्मृति चेतसा ॥
नत्युत्तरं चादृतौ तौ स्थापितौ चाशने शुभे ॥७४॥

महाराज कौशलेश जी ने भी उन नाग गन्धर्वराजों के प्रभाव पर कुछ भी आश्चर्य न करके उन दोनों को नमस्कार करके सुन्दर आसन में बैठाकर आदर किया ॥७४॥

तदा गंधर्व राजापि वृत्तान्तं चात्मनो यथा ॥
राज्ञे निवेदया मास यथेन्द्रेण तिरस्कृतः ॥७५॥

इसके बाद उन गन्धर्वराज ने भी जिस प्रकार इन्द्र से तिरस्कृत होकर यहां आये थे सब समाचार महाराज से निवेदन जिया ॥७५॥

श्रीपार्वत्यूवाच-कस्मात्तिरस्कृतो देव गायको गुणवत्तरः ॥
गुणज्ञेन सुरेशेन कथं नागे-हितस्यवै ॥७६॥

श्रीपार्वती जी बोली कि हे देव बड़े गायक अति गुणवान गन्धर्व को इन्द्र ने किस लिये तिरस्कार किया और नागराज से उनकी ॥७६॥

सख्यं हि परमं यातं कृतज्ञस्य कृतज्ञके ॥
कथयस्व कथां तद्धि कौतुकेन समासतः ॥७७॥

मित्रता कैसे हुईये दोनों तो परम कृतज्ञ हैं अतः संक्षेप से कौतुक पुर्वक इस कथा को कहिये ॥७७॥

शिवोवाच–महाभागस्य तस्यैव गंधर्वस्य गृहेशिवे ॥
जाताः पुत्र्यो महाभागा गुणरूप विलक्षणाः ॥७८॥

श्रीशंकर जी बोले कि हे शिवे महा भागशाली गन्धर्वराज के घर में महा भागशालिनी दिव्य गुण रूप विलक्षण कन्यायें उत्पन्न हुई थी ॥७८॥

मुग्ध यौवन काले ता देव राज्ञाप्य भीप्सिताः ॥
पराङ्मुखी वभूवुस्ता स्तस्मैतातं निषिध्यवै ॥७९॥

जब वे कन्यायें मुग्ध युवावस्था वाली हुई तो देवराज इन्द्र ने उनकी चाहना किया परन्तु उन कन्याओं ने अपने पिता के द्वारा इन्द्र का तिरस्कार किया ॥७९॥

भविष्यामो वयं तात श्रीरामस्यैवह्य ॥ंगनाः
नियन्तुर्देव देवानां को वराकः सुरेश्वरः ॥८०॥

कन्याओं ने कहा कि हे पिता हम लोग तो सर्वलोक नियन्ता देवाधिदेव श्रीरामजी की अंगना होवेंगी उन श्रीरामजी के आगे यह देवताओं का राजा कौन टोढ़ी जानवर है? ॥८०॥

निर्दिश्य मानः सोप्येवं सुरेशेना वमानितः ॥
पूर्व कृन्मित्र नागस्य चकार वसतिं वने । ८१॥

गन्धर्वराज ने भी कन्याओं को देने से इनकार किया तो इन्द्र ने गन्धर्वराज का अपमान किया तब गन्धर्वराज अपने मित्र नागराज की पहले से बनाई हुई इस भूमि के निवास स्थान में आकर बसने लगे ॥८१॥

निवेदयित्वा तत्सर्वं श्रीमद्दशरथे नृपे ॥
नाग गन्धर्व राजाभ्यां श्रीरामे योजिताः सुताः॥८२॥

इस प्रकार उन नागराज के कथा को महाराज ने सुना फिर श्रीनागराज और गन्धर्वराज ने अपनी कन्याओं का श्रीरामजी के साथ विवाह कर दिया ॥८२॥

ताभ्यां दत्तानि रत्नानि कन्या रत्नान्यपि प्रभुः ॥
श्रीमद्दशरथः श्रीमान् गोपेन गुणवत्तरः ॥८३॥

दहेज में बहुत सा रत्नादिक धन उन कन्या रत्नों के साथ उन गन्धर्व नाग राजाओं से प्राप्त करके श्रीमान् गुणवान श्रीदशरथ जो महाराज का श्रीमान गोपराज के साथ ॥८३॥

पुरीं पुष्पवतीं प्राप्य राज्ञा रत्न ध्वजेन च ॥
आदराभि गम्यमानो विवेश विसदां पुरीम् ॥८४॥

पुष्पवती नगरी में आये वहां के राजा रत्नध्वज ने बहुत बड़ा आदर किया श्रीचक्रवर्ती जी महाराज उनकी सुन्दर नगरी में प्रवेश किये ॥८४॥

तस्य कन्याः शोभनाङ्गी समादाय सुदायकैः ॥
सुवाग्भिः परितोष्यैन मन्येषां कांक्षिते ययौ ॥८५॥

और रत्नध्वज ने भी अपनी सुन्दर अङ्ग वाली कन्याओं को सुन्दर दामाद के लिए सुन्दर वाणियों तथा सन्मान से सन्तुष्ट करके विवाह कर दिया इस प्रकार चक्रवर्ती श्रीदशरथ जी अन्य राजाओं के मनोरथों को पूर्ण करते हुए चले ॥८५॥

इत्थं बहु नृपाणां च सुता रामे नियोज्य च ॥
श्रीमत्कौशलाधीशः पौरै दूरात्म मागतः ॥८६॥

इस प्रकार बहुत से राजाओं के कन्याओं से श्रीरामजो का नियोग करके श्रीमत्कौशलाधीश्वर श्री अयोध्या जी के नजदीक आये और अयोध्यावासी जनता भी बहुत दूर तक श्रीराम जी के बरात के स्वागत करने के लिए आयी ॥८६॥

श्रीराम दर्शनोत्कण्ठै र्हस्तोपायन शोभनैः ॥
रथ्या प्रति शरन्नाथ विवेश स्वात्म मन्दिरम् ॥८७॥

क्योंकि श्रीअयोध्या नागरिक जनता को श्रीरामजी के दर्शन की अत्यन्त उत्कन्ठा थी अतः हाथों में सुन्दर शोभा युक्त उपायन भेट लेकर प्रत्येक गलियों में स्वागत किया इस प्रकार अयोध्या आकर अपने मन्दिर में प्रवेश किये ॥८७॥

श्रीपार्वत्युवाच-नाथ ते वदन चन्द्र धर्मिणः स्पन्द मान म मृताधिका मृतम् ॥
पीय पीय न च तृप्ति मायर्यो मे मनो रघुपतेः कथात्कम् ॥८८॥

श्रीपारवती जी बोलीं कि हे नाथ बड़े धार्मिक आपके वदन चन्द्र से श्रीरघुनाथ जी के कथा रूपी अमृत का भी अमृत वर्षा होते हुये पीते २ मेरा मन तृप्ति को नही प्राप्त होता है ॥८८॥

श्रीयाज्ञवल्क्योवाच-श्रूयमाण उमयोपचारितं शङ्करः सतत् भाव संभृतम् ॥
राम मूर्ति हृदयो त्तमेस्फुटं संस्यन्प्रियतमां मुदं गतः ॥८६॥

श्रीयाज्ञवल्क्य जो बोले कि हे भरद्वाज सुनती हुई पार्वती के अत्यन्त श्रद्धा युक्त प्रश्न पर श्री शंकर जी हमेशा भाव को सम्पुष्ट करने वाला तथा श्रीराम मूर्ति को उत्तम हृदय में प्रकाश करने वाला श्रीराम कथा को कह करके प्रियतमा श्रीपारवती जी को आनन्दित करने लगे ॥८९॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां श्रीरामस्य
गौणोपयम वर्णनो नाम द्वाषष्टितमः सर्गः ॥६२॥

इति श्रीमधुकर रूपरसा स्वादिना कृता टीकायां श्रीरामस्य गौणो पयम
वर्णनो नाम द्वाषष्ठितमः सर्गः ॥६२॥

श्रीयाज्ञवल्क्योवाच-राजवंत पश्चिमायां दिशि देशाः शुभाशुने ॥
पुर्य्यश्च तत्र राजानः श्रीरामे स्वानु बन्धिनः ॥१॥

श्रीयाज्ञवल्क्य जी बोले कि हे मुने ! पश्चिम दिशा के सर्वदेशीय राजाओं की प्रत्येक पुरियों में जहाँ २ श्रीरामजी से स्वानुबन्ध हुआ है ॥१॥

तेषां चात्र समासेन नामानि कथयाम्यहं ॥
दत्ता यैः स्वात्मजा दिव्याः श्रीरामाय सुदायकैः ॥२॥

उन २ अपनी कन्याओं को सुन्दर दमाद श्रीरामजी के देने वाले दिव्य राजाओं के नामों को भी मैं कहता हूँ सुनिये ॥२॥

संस्पृश्य दक्षिण प्रान्तं देशो मालवकः शुभः ।
अवन्तिकापुरी ख्याता राजा तत्र महाबलः ॥३॥

दक्षिण दिशा को स्पर्श करने वाला मालवक नामक सुन्दर देश में प्रसिद्ध अवन्तिकापुरी नामक नगरी के राजा महाबलवान ॥३॥

स नाम्ना श्चन्द्र मौलीय श्चन्द्र मौलेश्च सेवकः ॥
तस्या व रोधे पत्नीनां सहस्रै कं तु मुख्यतः ॥४॥

वे राजा श्रीचन्द्र मौली जी शंकर जी के परम भक्त थे उन चन्द्रमौली जी के घर में मुख्य एक हजार पत्नी थी ॥४॥

श्रीरामं पति मुद्दिश्य याभिः पूर्वं कृतं तपः ॥
ताश्च सर्वास्तस्य राज्ञो गृहे जाताः सुलक्षणाः ।५।

श्रीरामजी के पती होने की कामना से जिन्होंने पूर्व जन्ममें कठिन तपस्या की थी वे सब महाराज चन्द्रमौली जी के घर में उन सब स्त्रियों से पैदा हुई ॥५॥

तासु सर्वासु पत्नीषु शङ्करस्य प्रसादतः ॥
महोच्चर्खे सुमाङ्गल्य तासां सूचित सत्सुखे ॥६॥

महाराज चन्द्रमौलीजीकी उन एक हजार पत्नियों में शंकरजीकी कृपा थी इस लिए उच्च नक्षत्र में सुन्दर मंगलमयी उन कन्याओं का जन्म सत्य सुखका सूचक था ॥६॥

राजन्मम प्रसादेन जातास्तेहि गृहे सुताः ॥
श्रीरामं स्वपतिं प्राप्तुं ताभिः पूर्वं कृतं तपः ॥७॥

हे राजन् मेरी कृपा से ये सब कन्यायें तुम्हारे घर में पैदा हुई है क्योंकि इन्होंने पूर्वजन्ममें श्रीरामजी हमारे पती हों इस भाव से मेरे लिए घोर तप किया था ॥७॥

तेन श्रीरामचन्द्राय देयाः सर्वा विधानतः ॥
इत्थं स शङ्करेणाथ स्वप्ने रात्रौ सुबोधितः ॥८॥

इस लिए उन कन्याओं को सुन्दर वैदिक विधी से विवाह करके श्रीरामजीको दे दो इस प्रकार राजा को स्वप्नमें शंकर जी ने समझाया ॥८॥

तत्स्वप्नं हृदये धृत्वा मंत्रं कृत्वा शुभे दिने ॥
सचिवोपि पुरोधाश्च कोशलायां सुप्रेषितौ ॥९॥

यही स्वप्न को मन में रखकर सुन्दर दिन में अपने राजसभा में निश्चय करके मन्त्री और उपरोहित को श्रीअयोध्या जी में भेजा ॥९॥

स्व हस्तन्यस्त वर्णां तु कौशलेशस्य पत्रिकाम् ॥
संप्राप्य तेन राज्ञावै पुत्रीणां सुमहोत्सवे ॥१०॥

वे मन्त्री और उपरोहित अपने राजा के हस्तलिखित कन्याओं के विवाह विषयक पत्र को महाराज अवधेश जी के लिये समर्पण किया ॥१०॥

: आ समुद्रान्महीपाला बान्धवा श्चापि दूरतः ॥
निमंत्रिता स्वादरेण ते च सर्वे समागताः ॥११॥

तथा उसी पत्रिका के अनुसार तुरन्त बरात के स्वागत के लिए समुद्र पर्यन्त सम्पूर्ण पृथ्वी के राजाओं तथा बन्धु वर्गों को निमन्त्रित किया सभी लोग दूर २ से बड़े आदर पूर्वक आये ॥११॥

आसादित पुर प्रान्तं श्रुत्वा श्रीकौशलेश्वरम् ॥
नागाश्व रथ यानैश्च दिव्याम्बर विभूषणैः ॥
उपायनैः पूजयित्वा चानेतुं सांनवासके ॥१२॥

महाराज अवधेश जी बरात के सहित हमारी नगरी के समीप आ पहुंच गये हैं सुन करके अगुवानी के लिये हाथी घोड़े रथ पालकी दिव्य वस्त्र भूषण अनेक प्रकार की पूजा के लिए उपायन भेटों सहित ॥१२॥

वान्धवा अपि राजानो प्यादरे कुशला हिये ॥
प्रेषिताः सज्जनाभिश्च दिव्य गान महोत्सवैः ॥१३॥

अपने वन्धु वर्ग तथा सर्वदेशीय राजाओं द्वारा स्वागत की बड़ी कुशलता के लिये दिव्य गान उत्सब पूर्वक जनवासे में लाने के लिये भेजा ॥१३॥

तैस्तं यथा समादृत्य श्रीराम दर्शनोत्सवैः ॥
सुनिवासे निवेश्याथ मुदेनाति समागताः ॥१४॥

श्रीराम जी के दर्शन की अत्यन्त उत्सुकता से यथा योग्य सबका आदर करके जनवासे में ठहराया स्वयं अति आनन्दमग्न होकर महाराज चन्द्रमौली जी के पास आये ॥१४॥

वर्णयन्ति च ते सर्वे रामरूपं मनोहरम् ॥
अन्यच्च विस्मृतं सर्वं दैहिकं चाप्य वश्यकम् ॥१५॥

मनोहर श्रीरामजीके रूपको देखकर सभी लोग आपसमें वर्णन करने लगे अपने शरीर सम्वन्धी समस्त कृत्यों को भूल गये ॥१५॥

ततः सुलग्ने वहुशः समाजैः सम्वन्धिनं कोशलराज राजम्॥
अश्लेषितुं सोपि जगाम राजा ह्यु पायनै र्हर्षितमानसोपि॥१६॥

इसके बाद महाराज चन्द्रमौली जी भी सुन्दर लग्न मुहूर्त को जान करके बहुत बड़ा साज समाज उपायन भेंट सहित सत्यन्त हर्षित मन होकर के अपने प्रति सम्वन्धित महाराज श्रीकौशलपाज जी से आश्लेषण भेट करने के लिये चले ॥१६॥

अपूर्व रूपं परिदृश्य चांगे श्रीरामचन्द्रस्य मनश्च चक्षुः ॥
दत्वाहि सर्वे च समागतास्ते तद्वर्ण यन्तोहि परस्परं च।१७

दर्शन के बाद श्रीरघुनाथ जी के श्रीविग्रह में अतिशय सुन्दर अपूर्व रूप को देखकर मन तथा नेत्रों को श्रीरामजी के लिये भेट चढ़ाकर दुल्हा के रूप का परस्पर वर्णन करते हुए अपने २ घरों में आये ॥१७॥

हस्त ग्रहार्थं सुदिनं समेत्य पुरोधसा मात्य समाजकैश्च ॥
आनीय श्रीकोशल राज राजं निवेश्य कक्ष्यांतर मादरेण ॥१८॥

फिर कन्याओं के पाणिग्रहण के लिए सुन्दर दिन निश्चित करके मन्त्री और उपरोतादिक समस्त समाज के सहित महाराज श्रीकौशलराज जी को अपने महल के भीतरी भाग में बड़े आदर पूर्वक बुला करके ॥१८॥

प्रक्षाल्य पादौ वहु शोर्हणाभिः पूर्वं वशिष्ठस्य ततो नृपस्य ॥
संस्थापिता वासन विस्तराढ्ये ह्यवन्तिकेशेन सुनम्र भावात् ॥१९॥

चरण प्रक्षालन तथा बहुत सामग्रियों द्वारा पूजन विधियों से बड़ी नम्रता पूर्वक अवन्तिकादेश के राजा चन्द्रमौली जी ने प्रथम श्री वशिष्ठ जी का पूजन करके उसके बाद महाराज श्रीअवधेश जी का पूजन किया फिर उत्तम विस्तरों में बैठा करके ॥१९॥

श्रीरामचन्द्रस्य ततोंघ्रि युग्मं सरोजशोभं शुभ दर्शनस्य ॥
देयं नियोज्याथ सभार्य्यकेन प्रक्षालितं भाग्य सुशंस्य तेन ॥२०॥

इसके बाद महाराज चन्द्रमौली जी ने अपनी पत्नी के सहित अपने भाग्य की सराहना करते हुये सुन्दर दर्शन श्रीरामचन्द्र जी के कमल सदृश दोनों चरणों को धोकर देने योग्य पदार्थों को अर्पण करके ॥२०॥

रत्नांशुभि दृष्टि चमत्कृताग्रे दधन्दधन्नर्म्म पटेऽथ पादौ ॥
वाद्य प्रघोषे तु दिगन्त व्याप्ते विवेश रामोवर मण्डपंतत् ॥२१॥
तदोपनीतास्तु सुवासिनीभिर्दिव्याम्बरा दिव्य विभूषणाङ्गाः ॥
मुख्यैक मात्रा महराज कन्याः गानेन वाद्येन पिक स्वराभिः ॥२२॥

फिर दृष्टि को चकाचौंधी देने वाले रत्न रचित कोमल पावणा देते हुये और दिगन्त व्यापी बाजाओं के घोष पूर्वक मण्ड के भीतर श्रीरामजी को लिवा लाये दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषित अङ्ग वाली बहुत सी देश २ की राजकन्यायें स्वासनियों के बीच कोकिल कन्ठियों के गान वाद्य सहित राजमाता ने द्वार परीक्षण किया ॥२१-२२।

वेदान् गृणद्भि मुनिभि स्तदा च वाद्यैश्च गानैर्जय शब्द सोच्चैः ॥
समर्प्पिताः श्रीरघुनन्दनाय राज्ञात्मजारूप मनोहरावै ॥२३॥

इस प्रकार वर के मण्डप में आने पर मुनियों ने वेद ध्वनि की विविध प्रकार के बाजे बजे जय और स्तुति के शब्दों से उच्च स्वर पूर्वक महाराज चन्द्रमौली जी ने अपनी मनोहर रूपवती कन्याओं को श्रीरघुनन्दन जी के लिए अर्पण किया ॥२३॥

देयं सुदाये तु यदात्मजानां रत्नानि वस्त्राणि च वाहनानि ॥
निवेद्य सर्वं नृप राजराजं तुष्ठाव राजाति सुनम्र भावात् ॥२४॥

तथा रत्न वस्त्र वाहनादिक बहुत सा दहेज कन्याओं के निमित्त देकर फिर महाराज चन्द्रमौली जी ने बड़ो नम्रभाव से सुन्दर दमाद श्रीरामजी की तथा महाराज श्रीअवधेश जी की स्तुति किया ॥२४॥

राजोवाच—यत्प्रोञ्छनं ते पद पादुकायाः वस्त्रं शिरो वेष्टन कंस मे स्यात् ॥
सोहं कथं षोडशभिः प्रचारैः करोमिते पूजनमिच्छयापि ॥२५॥

महाराज चन्द्रमौली जी बोले कि मेरे मन में आप लोगोंको षोडषोपचार पूजा करनेकी अतिशय इच्छा होने पर भी कैसे कर सकता हूँ क्योंकि जो वस्त्र रत्न सम्पत्ति आप लोगों की चरणपादुका झाड़ने में लगती है वह मेरे शिर का पगड़ी है ॥२५॥

यद्वै भवास्ते गुण वैभवाश्च शंख्याति रेकात्परि वर्तमानाः ॥
तेन प्रशंसा वचन प्रवृत्तिर्न मेत्वयि प्रोत्सहते विशेषात् ॥२६॥

और जो आपका बाहरी वैभव तथा अन्दर के स्वाभाविक सद्गुण वैभव सो तो असंख्य है अब मैं अपने वचन प्रवृत्ति से यदि आपकी प्रशंसा करने लगूं तो यथार्थ भी नहीं कह सकता तब विशेष कैसे कह सकता हूँ ॥२६॥

नियोजितार्के च यथाहि दृष्टि र्निवर्तते रूप मलभ्य माना ॥
तथा गतिर्मे वचन प्रवृत्ति स्त्वाय प्रभा भानुशत प्रदीप्तौ ॥२७॥

जैसे कोई सूर्य के दर्शन के लिए दृष्टि फैलावे सूर्य का दर्शन न होकर किरणों से ही दृष्टि लौट आती है उसी प्रकार करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश करने वाले आपके प्रभाव के आगे मेरे बचनों की गति है ॥२७॥

त्वं चार्हणीयो र्हण योग्य कोहं रीत्या न शक्त्या नरराज राज ॥
तदं जली सम्पुट कं मदीयं कृपालु दृष्ट्या कुरु संचनीयम् ।२८॥

हे नर राज राजेश्वर आप तो सर्व लोक पूज्य है और मैं आपका पुजारी हूँ अतः हे कृपालो आप मेरी यह सम्पुट अंजली रूप पूजा को अपनी कृपा दृष्टि से स्वीकार कीजिये ॥२८॥

अर्च्यं समर्चंति जना अवश्यं धनायताः केपि धनेन हीनाः ॥
नाना सुरत्नैः फल पत्र पुष्पैर्कार्यैसतां सूचन भावकं तत् ॥२९॥

क्योंकि पुजारी लोग चाहे धनवान हों चाहे धन हीन हो पुज्य की पूजा तो करते ही हैं चाहे वह पूजा विविध प्रकारके रत्नों से हों अथवा पत्र पुष्पों से हो सत्पुरुषों को तो पुजारियों के भावना में ही दृष्टि होती है ॥२९॥

जनै र्दृश्यो निकटस्थकै र्यः सोहं कृतो दूर तरैः प्रदृश्यः ॥
शिलोच्चयानां शिखिराश्रितानि स्थलं तृणानीव त्वया कृपालो ॥३०॥

हे कृपालो जो आपका दर्शन समीप वासियोंको भी दुर्लभ है वह अपना दर्शन आपने दूर होने पर भी मेरे को दे दिया अतः यह आपकी कृपालुता जैसे पर्वत अपने आश्रित तृणों को अपने शिर पर रखते हैं इस तरह की मेरे ऊपर उदारता है ॥३०॥

इति सुरुचिर वाग्भिर्नम्रभावै र्स राजा रविकुल मणिमर्च्य प्राप्यतेन प्रशंसाम्॥
तदनुसकल विप्रान्पूजयित्वा प्रतिच्छा नपर जन समाजं चाद्दतुं ह्या जगाम ॥३१

इस प्रकार सुन्दर नम्र भाव से प्रिय वाणी द्वारा सूर्य कुल मणि महाराज अवधेशजी की पूजा किये और महाराज अवधेश जी ने भी आपकी प्रशंसा को उसके बाद आपने सब ब्राह्मणोंकी पूजा की फिर सभी प्रतीच्छित जनों की सब समाज की पूजा सत्कार के लिए आगे बढ़े ॥३१॥

ततश्च मण्डपाङ्गणे समस्त पौर योषिता–
नीराजनीय हस्तका नीराजितुं वधूवरौ ॥
समागताः सुहर्षिता मनोहरौ मनोहरा–
नीराजयान्तिसुस्मिताः प्रवार्ज्यवाज्य भूषणम् ॥३२॥

इसके बाद नगर की स्त्रियायें वर वधू की आरती के लिए आरती के योग्य सामग्रियों को लेकर अत्यन्त हर्षित मन होकर मण्डप के आगन में आई उन मनोहर स्त्रियों ने बहुत सा वस्त्र भूषण सम्पत्ती को मनोहर वर दुलहिनियों पर निछावर करके, अत्यन्त अनुराग पूर्वक मन्द मुसुकाती हुई आरती किये ॥३२॥

अनङ्ग रङ्ग वीक्षणै रनङ्ग कोटि सत्प्रभं-
विलोकयन्ति ता मुदा विमोहनं समागताः ॥
ततश्च तासु कापि या विचक्षणाति पण्डिता-
स्वभिज्ञतां परिक्षया च कार प्रष्ण मद्भुतम् ॥३३॥

इसके बाद कोटि कन्दर्प कमनीय अत्यन्त मन मोहन दिव्य प्रकाश विग्रह वाले श्रीराम जी को सुन्दर काम कला के कटाक्षों से आनन्दपूर्वक दर्शन करती हुई उन सब स्त्रियोंमें से कोई सूक्ष्म बुद्धि वाली पण्डिता ने श्रीरघुनाथ जी के पाण्डित्य की परीक्षा के लिए अद्भुत प्रश्न किया ॥३३॥

वनितावरं प्रत्युवाच-सशी च तस्यो परि सं तमोस्ति तस्योपरींदुः प्रचरेत्सचार्द्धः ॥
सनाल कञ्जेन ग्रहीत एव वद प्रवीण प्रति रूप मस्य ॥३४॥

हे प्रवीण आप यह तो बताइये कि एक चन्द्रमा है उसके ऊपर अन्धकार है और उस अन्धकार के ऊपर फिर चन्द्रमा है वह आधा ही है उस चन्द्रमा को नाल के सहित कमल ने पकड़ रक्खा है इसका वास्तविक रूप आप बताइये ॥३४॥

वदामि कञ्जस्य दलानि पञ्च विभाति तारा अपि पञ्च तत्र ॥
किं मुक्त मे तद्भवतीभि रूनं किं नोप दृष्टं कमलायताक्ष्यः ॥३५॥

इसके उत्तर में श्रीरामजी बोले कि मैं कहता हूँ सुनिये उस नाल के सहित कमल के पांच दल हैं उन दलों में पांच तारा भी प्रकाश कर रहे हैं हे कमल सदृश नेत्र वालियों आप लोगों ने यह छोटा सा क्या प्रश्न किया स्वयं क्यों उस कमल नेत्र वाले चन्द्रमा को नहीं देख लिया ॥३५॥

ज्ञातं प्रवीणोसि नरेन्द्रसूनो त्वयोद्वहन्त्यो नृपजा सुधन्याः ॥
विलोकयन्त्योपि वयं च धन्या गुणेन रूपेण यतोविभासि ॥३६॥

उन स्त्रियों ने कहा हे नरेन्द्रकुमार हमने समझ लिया आप बहुत चतुर हैं अतः आपके साथ विवाह होने से ये राजकुमारियां अत्यन्त धन्य है और आपके दर्शन करती हुई हम लोग भी धन्य हैं जो कि आप अपने दिव्य गुण और रूप से हम लोगों के सामने प्रकाशमान हो रहे हैं ॥३६॥

इत्थं हास्य विलाशैश्च पौरानार्य्यः समन्ततः ॥
नीराज्य भावतो रामं स्वात्मनो मन्दिरं गताः ॥३७॥

इस प्रकार हास्य और विलासों के द्वारा श्रीरामजी को घेरी हुई उन नागरिक स्त्रियों ने बड़े भाव से आरती स्वागत करके अपने २ मन्दिरों को चली गई ॥३७॥

राजापि चन्द्रमौले यो रामे संपाद्य ताः सुताः ॥
प्रत्यक्षांश्च दक्षिणाभिः कारया मास भोजनम् ॥३८॥

इसके बाद महाराज श्री चन्द्रमौली जी ने भी अपनी कन्याओं को श्रीराम के लिये अर्पण करके दक्षिणा सहित सब बरातियों को भोजन कराया ॥३८॥

वधूभिर्वर मादाय श्रीरामं सुमनोहरम् ॥
गान वाद्यै महोत्साहे र्जगाम् कौशलेश्वरः ॥३९॥

इसके बाद महाराज कौशलेश जी भी वधुओं के सहित मनोहर श्रीराम जी को लेकर गान वाद्य महान उत्सव पूर्वक जनवासे के लिये चल पड़े ॥३९॥

अमात्योऽवन्ति केशस्य नाम्ना सुरप्रभो महान् ॥
तेन तस्योत्तर दिने कन्याः सप्त मनोहराः ॥४०॥

दूसरे दिन अविन्तकापुरीके राजमन्त्री श्रीसुरप्रभ ने मनोहर अपनी सात कन्याओंका भी ॥४०

सुदायैः सर्व विधिना गान वाद्य महोत्सवैः ॥
दत्ताः श्रीरामचन्द्राय रूप, राशि सुखात्मने ॥४१॥

गान वाद्य महान उत्सव पूर्वक सब विधियों से रूप रासि सुखमय आत्मा सुन्दर दामाद श्री राम जी के लिए दिया ॥४१॥

तस्य चैवोत्तर दिने कौशलेशस्य सन्निधौ ॥
आस मुद्रात्क्षितीशानां शभा चाभूत्महत्तराः ॥४२॥

फिर उसके दूसरे दिन सम्पूर्ण पृथ्वी के राजा लोग महाराज श्रीकौसलेश जीके समीप में आये बहुत बड़ी सभा हुई ॥४२॥

उपायनै रत्न, माल्यै र्मिमिलुस्ते नराधिपाः ॥
सार्वभौमं कौशलेशं सम्बन्धेपि स्पृहावतः ॥४३॥

अनेक प्रकार को रत्न माल्यादिक उपायन भेंट देकर सार्वभौम कौसलेश जी से अपनी कन्यावों को देकर सम्बन्ध करने की इच्छा से मिले ॥४३॥

तत्र चैको महाराजो मैवार देश पलकः ॥
वध्वांजलिं सम्बभाषे श्रीमद्दशरथं प्रभुं ॥४४॥

उन सब राजाओंमें से मेवाड़ देशपती राजा हाथ जोड़कर महाराज श्री चक्रवर्ती दशरथ जी से बोले कि ॥४४॥

नशक्ताः किल राजेन्द्र त्वां निमंत्रयितुं वयम् ॥
तथापि विलशत्येव भूपानां हृदये परम् ॥४५॥

हे राज राजेन्द्र हम लोगों में आपको निमन्त्रण देनेकी शक्ति नहीं होने पर भी हम सब राजाओं के मन में आपको निमन्त्रण देने की परम अभिलाषा हो रही है ॥४५॥

अभिलाषो नु षङ्गेन सर्वेषां तद्धि स्वीकुरु ॥
पश्चात्याना मासमुद्रात्समुद्रं दृष्टु मिच्छया ॥४६॥

यह हम लोगों की अभिलाषा आनुसंगिक है अतः आप स्वीकार करें इस प्रकार उन पश्चिम देश के राजाओं की प्रार्थना को सुनकर तथा पच्छिम समुद्र को देखने की इच्छा से ॥४६॥

कथं न स्वीकरोम्ये तद्भवतां च हितैषिणाम् ॥
इत्युक्त्वा कौशलेन्द्रेण तेभ्यो हर्ष प्रयोजितः ॥४७॥

आप लोग मेरे हितैषी हैं क्यों नहीं आप लोगों की प्रार्थना स्वीकार करूंगा ऐसा कहक राज कौसलेश जी ने उन सब राजाओं को अत्यन्त हर्षित किया ॥४७॥

एवं ते कौशलेन्द्रस्य वचः श्रुत्वा मनोगमम् ॥
पुरोधाभिस्तु रामस्य विशाले कुंकुमेन वै ॥४८॥

उन सब राजाओं ने भी इस प्रकार मन रमणीय महाराज कौसलेश जी के बचन सुनकर अपने अपने उपरोहितों के द्वारा कुमकुम से श्रीराम जी के विशाल ॥४८॥

सुभाले साक्षते नैव पत्रं परम शोभनम् ॥
राजानः कारयामासुः कन्यानां दान हेतवे ॥४६॥

सुन्दर मस्तक में परम सोभायमान तिलक तथा उसी कुमकुम से कपोल पत्र बनाये इस प्रकार राजाओं ने अपनी कन्याओं के पाणिग्रहण हेतु यह विधि करके ॥४६॥

इत्थं मनोभिलाषं ते सं प्राप्य क्षितिपा यथा ॥
स्वां स्वां पुरीं गताः सर्वे शीघ्र मुत्साह हेतवे ॥५०॥

इस प्रकार अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण प्राप्त करके अपने २ नगरों को गये बड़ी शीघ्रता से विवाह का उत्साह इन्तजाम किये ॥५०॥

पश्चाच्छ्री कौशले शोपि क्रमेण नृप कन्यया ॥
गत्वा तूद्वाह्य श्रीरामं तद्देशाच्चन्यवर्त्तयत् ॥५१॥

पीछे से महाराज कौसलेश जी भी विवाह करके कन्या वर बरात को ले करके क्रमशः उन सब राजाओं के यहां गये राज कन्याओं से भी श्रीरामजी का विवाह करके उन सब देशों से निवृत्त होकर श्री अयोध्या जी में आये ॥५१॥

रहस्य स्थान समयैः स साहित्य समाजकैः ॥
वरेत्सुका राजपुत्री बोधिता योग मुद्रया ॥५२॥

श्रीसीताराम जो का गुप्त चरित्र रहस्य और रास रंग उत्सव के स्थान तथा समय सजावट समाज सब विषय को श्री योगमुद्रा ने विवाह की इच्छा वाली उन राजपुत्री श्रीसुकान्ती जी को सब समझाया ॥५२॥

राम रत्न विशेषात्त तस्या उक्ति हरेण वै ॥
संज्ञापितापि मञ्जूषे त्येवं लोकेपि दर्शितम् ॥५३॥

श्रीसीताराम रहस्य चरित्ररूपी महान् रत्न की विशेषता युक्त श्री योगमुद्रा के युक्तीयुक्त वाणी द्वारा प्रगट होने से ही इस ग्रन्थ का नाम भा भी सीताराम रत्नमञ्जूषा रक्खा गया है इसी नाम से यह ग्रन्थ लोक में प्रकाशित हुआ ॥५३॥

कदाचि द्याज्ञवल्क्येन कृतं संशय मानसः ॥
शिव शिष्येणात्म शिष्य स्तस्योक्त्या हि समाहितः॥५४॥

इ, कभी किसी समय श्रीशंकर जी के चेला श्री याज्ञवल्क्य जी ने अपने चेला श्रीभरद्वाज जी को महान उत्तम विषयक शंसय युक्त प्रश्न के उत्तरमें निश्चय रूप से समझाया था ।।५४।।

देवतानां समाजे हि कथिता शंकरेण सा ।।
रामायण त्वमित्याख्य मेवं लोके प्रकाशितम् ।।५५।।

तथा फिर कभी श्रीशङ्कर जी ने देवलोक में देवताओं की सभा में भी इस चरित्र को कह कर इस चरित्र का नाम अमर रामायण तुम है ऐसा कहा था । इस प्रकार यह लोकमें प्रकाशित हुआ ।।५५।।

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां श्रीरामस्य गौणोपयम वर्णनो नाम त्रिषष्टित्तमः सर्गः ।।६३।।

इति श्रीजानकीशरणेन वृत्तिस्थेन मधुकर मधुकर रूप रसा स्वादिना कृता टीकायां श्रीरामस्य गौणोपयम वर्णनो नाम त्रिषष्टित्तमः सर्गः ।।६३।।

धन्यभाग रसिकन चरित, भाव भावना रंग ।
लिखने को बड़भाग सों, मिल्यो सहज सतसंग ।।१।।
अमर कथा यह अमर कर, अमृत राम चरित्र ।
सन्त पूर्वजों का पिया, पीवत होत पवित्र ।।२।।
रमत सबन में राम जी, तौ भी धरि मर्याद ।
ब्याह रीति सब लोक में, धर्म सहज अह्लाद ।।३।।
सृष्टि सुधारी नीति सों, निज अंशन सुखदानि ।
रीति चलाई आप चलि, ग्रन्थ रचाये जानि ।।४।।
धर्म नीति मर्य्याद करि, लीला करैं स्वतन्त्र ।
जीव आपका अंश है, माया भ्रमि परतन्त्र ।।५।।
जैसी जिसकी भावना, तैसी दिष्टी लीक ।
यह विचारि जो भक्त है, अर्थ लगावै टीक ।।६।।
सतरज तमके भेद सों, बुद्धि भेद बहु होत ।
भक्ति सात्विकी पाय जो, समझत रसिकन सोत ।।७।।
रसिकाई सियराम के, नाम रूप सुखधाम ।
भाव भीतरी रंग में, रमते राम गुलाम ।।८।।

❀ समाप्त ❀

शुद्धाशुद्ध पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१०	विदाम्बर:	विदाम्बर
२	५	ब्रह्मलोक	ब्रह्म लोक
२	७	तत्त्	तत्त्
२	८	स्वैवै	ष्वैवै
३	४	संस्कारा:	संस्कारा
३	६	प्राणवल्लभे:	प्राणवल्लभे
३	७	क्रियामान्	क्रियावान्
३	७	सन्तुष्ट:	सन्तुष्ट
६	३	षोडसै:	षोडशै:
६	६	कृत्वां	कृत्वा
६	१३	युग्मश्चैतन्	युग्मञ्चैतन्
७	४	तत्रश्चाशने	तत्र चासने
७	५	धनुष् तथा	धनुल् तथा
८	१	हरहर्स्योमहा	हरहर्योमहा
८	१०	दत्त	दत्ते
८	११	धूप	धूपं
८	१५	सयुक्ता	संयुक्ता
८	१८	नियन्त्रिता	निमन्त्रिता
९	४	प्रत्यूवाच	प्रत्युवाच
९	६	स्वागता:	स्वागता
१०	३	आस्यनेवा	आस्यमेवा
१०	४	निंदिश	निंर्दिश
१०	७	नागा:	नाग:
११	४	ग्रम	ग्राम
११	८	प्रभशति	प्रभवति
१२	६	समूवाच	समुवाच
१२	७	चैकदशो	चैकादशो
१३	१	समाविसत्	समाविशत्
१३	४	र्भावि	र्भाव
१३	९	ध्याया: मत्यत्तै	ध्याया मत्यन्तै
१४	१०	जानासिति	जानासीति
१५	१४	राज्ये	राज्यं
१६	६	प्रभावे	प्रभावो
१७	५	नारायणणो	नारायणो
१७	७	लक्ष्मी	लक्ष्मी:
२१	१	हस्तेऽनस्त्रं	हस्तेऽजस्त्रं
२१	६	त्विष्णु	न्विष्णु
२४	११	जाष्तु	जायास्तु
२४	११	संष्कार	संस्कार
२४	१४	गृणभ्दिभ:	गृणद्भि:
२५	४	पाञ्जलिना	प्राञ्जलिना
२७	३	श्रीजित	श्रीर्जित
२७	४	वपु	वपु:
३०	१०	प्रवत्तामि	प्रवक्ष्यामि
३०	१०	ग्रास्माद्धि	ग्रस्माद्धि
३५	२	भावकरणम्	भावकारणम्
३५	१०	मुमुक्षु	मुमुक्षु:
३६	३	नत्यं	नृत्यं
४७	९	चतुदित्तु	चतुर्दिक्षु
६१	१४	तत्तासा	दत्ता सा
६१	१६	तश्मैश्सर्वं	तस्मैसर्वं
६४	१५	शोडशै:	षोडशै:
६८	१३	वाक्ता:	वक्ता:
७६	१३	चतश्रोपि	चतस्रोऽपि
९५	१४	पुष्या सर्वा	पुष्या: सर्वा:
१०४	८	सृणु	शृणु
१०६	७	चतश्रोपि	चतस्रोपि
१११	५	सत्नकै:	सहस्रकै:
११३	११	शितु न्वितं	शितु रन्वितं
११५	६	शन्तिक:	शान्तिक:
११६	१०	दानि.	दानीं
११६	१०	वणयाम्यहम्	वर्णयाम्यहम्
११६	१०	निमिवन्यो	निमि वंश्यो
१२१	५	अशित	अस्ति
१२२	८	तश्य	तस्य
१२२	१६	बायोश्ति	कायोस्ति

महान उत्त	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	शुद्ध	अशुद्ध
२५	६	श्नान	स्नान	२३४	१२	सौगम्धि	सौगन्धि
१२८	३	श्नान	स्नान	२३४	१३	सुगम्धैश्च	सुगन्धैश्च
१३१	१०	खंख्यया	संख्यया	२३६	३	मागिकाभिः	मारिकाभिः
१३२	४	सयुता	संयुता	२३६	१०	दशयित्या	दर्शयित्वा
१३३	१०	वर्ता	वार्ता	२३६	१३	त:का	तदैका
१४०	३	मशुकाम्वा	मशुकाम्वा	२३७	७	तदेकया	तदैकया
१५०	५	ताषां	तासां	२३८	५	छायं	छाया
१५५	६	सत्रुघ्नो	शत्रुघ्नो	२३८	५	तदो रतलम्वै	तरोस्तलम्वै
१६०	१०	यज्ञवल्क	याज्ञवल्क	२३८	५	मध्यन्ह के	मध्याह्न के
१६३	१५	पाताका	पताका	२३९	२	रंघिवा	रंधिवा
१६४	४	श्चत्र	श्छत्र	२३९	३	सुन्दरीणा	सुन्दरीणां
१६६	२	जन्त्रिका	यन्त्रिका	२४०	६	सरोजपणौ	सरोजपाणौ
१७०	३	सत्रुघ्नस्य	शत्रुघ्नस्य	२४०	६	सुपुष्पाञ्ति	सुपुष्पाञ्चित्
१७०	४	तास्मिन्	तस्मिम्	२४१	१	मभुराम्र	मधुराम्र
१७०	६	पादपै	पादपैः	२४१	१४	रवास्तरणं	स्वास्तरणं
१७७	४	सवासां	सर्वासां	२४३	२	द्विभ्रि	चतुभ्रि
१७८	२	लसन्चि	लसन्ति	२४२	१३	नानाद	ननाद
१८३	१४	स्तृतिये	स्तृतीये	२५४	२	जावक्याः	जानक्याः
१९२	६	शूणिवदानि	सूणिवदानीं	२५७	१२	तवानूकूलं	तवानुकूलं
१९३	२	प्रसादत्ताः	प्रसादतः	२५६	१	शंसिमुखी	शशिमुखी
१९३	४	ताषां	तासां	२६०	१४	वदना विन्दम्	वदनारविन्दम
२०१	५	गणै	गणैः	२६६	४	श्चुवना	श्चुम्वना
२०३	१५	पुष्कला	पुष्कला	२७२	११	हंशाना	हंसानां
२०८	१४	भिक्ति	भित्ति	२७६	६	विनीताना	विनीतानां
२१२	१३	षरिष्कृते	परिष्कृते	२८२	७	चतुविधैः	चतुर्विधैः
२१५	६	मनोहम	मनोहरम	२८६	१४	विधुत्पञ्च	विद्युत्पञ्ज
२२२	१०	तद्भतम्	तद्भूतम	२८८	४	स्तञ्चित	सञ्चित
२२५	५	शातजौ	शात्मजौ	२८६	६	रघुनम्दनः	रघुनन्दनः
२२७	३	चन्द्रला	चन्द्रकला	२९१	४	सखी नी	सखिभि र्नी
२२८	२	सूत्राञ्ति	सूत्राञ्चित	२९१	५	सखीभिः	सखिभिः
२३०	४	चातुर्य्यध।वं	चातुर्य्यभावं	२९१	१२	कातुहला	कौतूहला
२३१	३	कन्यायातु	कन्ययातु	२९४	६	त्वपि	त्वयि
२३३	८	न्यादाय	ण्यादाय	२९५	१	हर्म्यरथा	हर्म्यस्था
२३३	१०	रस	रसै	३०२	१	भूमो च	भूमौ च

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३०३	१३	लोके	लोके
३०७	६	पश्चातके	यज्ञातके
३०८	१	विशाम्पपे	विशाम्पते
३१५	८	मिन्नां	भिन्नां
३१८	१	स्वद्भक्ति	त्वद्भक्ति
३१८	१२	दीपापत्ति	दोषापत्ति
३२०	४	भवाब्धौ	भवाब्धौ
३२१	७	त्व	त्वं
३२५	१४	अस्या	अस्याः
३३०	१४	वंर्ता	वार्ता
३३२	१६	नुमुक्षवः	मुमुक्षवः
३३४	११	तिश्रः	तिस्रः
३३४	१२	जन्मातरे	जन्मान्तरे
३३४	१६	राजेम्द्र	राजेन्द्र
३३५	१	श्रीरामो	श्रीरामः
३३६	१	स्वात्मान	स्वात्मानं
३३७	११	तावत्तंञ्च	तावत्तञ्च
३४२	८	श्चक्रवर्त्ति	श्चक्रवर्ति
३४२	१५	नरेश्चर	नरेश्वर
३४४	६	राम	रामो
३४५	५	तस्मिन्लग्ने	तस्मिल्लग्ने
३४६	१	विलेपने:	विलेपनैः
३४६	४	मूर्त्ति	मूर्ति
३५०	११	समाहितः	समाहिताः
३५०	१४	समपितः	समर्पितः
३५१	२	पञ्चराात	पञ्चाशत्
३५१	५	राम	रामः
३५६	२	नीराजानम्	नीराजनम
३५६	२	कार्यामात्र	कार्यमात्र
३६०	६	पक्षिण	पक्षिणो
३६१	७	परै	परैः
३६४	१३	कुब्छु	कुब्ज
३६५	१	पनानि	यानानि
३६७	२	कैचित्तु	केचित्तु
३६७	७	पुन्डाश्च	पुन्ड्राश्च

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३६७	८	हरिस्पृद्दा	[illegible]
३६८	६	कश्मीर	[illegible]
३६८	६	मनोहरा	मनोहर
३७०	१४	तनुवाच	तमुवाच
३७१	१५	वेवता	देवता
३७२	८	रचिततैः	रचितैः
३७३	७	मागम्य	मागत्य
३७५	४	पादाङ्ग	पादांगु
३७५	६	कोटिप्रमे	कोटिप्रभे
३७५	६	श्रंगार	शृँगार
३७५	१२	गंजारूटे	गंजारूढे
३७६	१	महाशब्दैः	महच्छब्दैः
३७६	७	यर्वतान्	पर्वतान
३८४	४	व्रतिनः	व्रतिनः
३८५	७	पौत्र	पौत्र
३८६	१०	यवस्यान	वयस्यान
३८९	६	प्रशंसतु	प्रशंसतुः
३९३	६	गुरुभवान्	गुरुर्भवान
३९३	१२	लम्पते	लभ्यते
३९५	१०	राजातूनां	राजतूनां
३९६	६	चिक्यो	धिक्यो
३९७	२	सैम्यं	सौम्य
३९७	४	धैर्य्यधिकं	धैर्याधिकं
३९७	१०	मदर्वा	मार्दवा
३९८	८	लज्यया	लज्जया
३९८	८	लज्या	लज्जा
३९९	२	पुमाम्	पुमान्
३९९	८	गण्याक्रते	गण्यां क्रतु
४००	१५	नराधियः	नराधिपः
४०१	१	शृवन्ति	शृण्वन्ति
४०२	९	म्रअसम्र	अग्र सग्र
४०४	८	चक्री	चक्रीः
४०५	६	कस्थंः	कस्थः
४०६	२	कारणं	का नाम
४०६	५	शृन्वति	शृण्वन्ति

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	९	तथैवः	तथैव
	१२	श्चेव	श्चैव
४०७	१४	सर्वेः	सर्वैः
४०८	४	तिष्ठन्ति	तिष्ठन्ति
४०९	८	सुरपतिः	सुरपतिः
४११	१	वपुः	वपु
४१३	३	नृष	नृप
४१३	१०	गुरुपदिष्टः	गुरूपदिष्टः
४१३	१४	जनानषि	जनानपि
४१५	१०	शङ्का	शाङ्का
४१५	१४	मुणि	मुनिं
४२०	२	छान्दादय	छन्दादय
४२०	५	पुसो	पुंसो
४२२	५	अतर्क	अतर्कं
४२४	६	हर्हं ययौ	हर्षं ययौ
४२४	१५	वद्या	विद्या
४२६	३	प्रभ	प्रभो
४२६	१०	परञ्च च	प्ररञ्च
४२६	१२	तर्क	तर्कं
४२७	१६	माणिभिः	मणिभिः
४२८	१०	रञ्जितम्	रञ्जितम्
४३०	१	महात्मात्य	महामात्य
४३०	२	भाराड	भाण्ड
४३०	७	सन्सुखं	सन्मुखं
४३१	६	उर्द्धैक	उर्ध्वैक
४३८	६	सर्वै	सर्वैः
४३८	१५	पाद्यानां	वाद्यानां
४३९	२	क्षितिजैः	क्षितिजै
४३९	८	नत्यत्यो	नृत्यन्त्यो
४४२	१२	शिषरं	शिखरं
४४४	७	हेम्मस्तु	हेमस्तु
४४५	१	कज्जापत	कञ्जायत
४४५	१०	ददार्शा	ददर्शा
४४५	११	वासः	वाससः
४४५	१४	चचाल सः	चचाल स
४४६	१	पदाञ्जयो	पदाञ्जयोः
४४६	२	विवेश	विवेश
४४६	७	सर्वदा	सर्वदा
४४७	२	महेश्वरः	महेश्वरः
४४७	१२	नींति	नीतिं
४४९	११	कांश्प	कांश्य
४४९	१३	घण्टीच्च	घण्टो च्च
४५०	९	काञ्जायत	कञ्जायत
४५१	५	कन्दर्प्यं	कन्दर्पं
४५१	१०	लद्	लसद्
४५१	१४	काञ्चे	काञ्चने
४५२	१	पाश्यो	पार्श्यौ
४५२	६	प्रवीणः	प्रवीणाः
४५२	८	निपुणः	निपुणाः
४५४	३	सर्वथ	सर्वथा
४५५	८	भास	मास
४५७	१	जीराजनं	नीराजनं
४५७	४	वहुल	वहुलं
४५७	८	समांपं	समीपं
४५७	८	निर्णयो	निर्णयो
४५८	७	पत्राणां	पात्राणां
४५८	८	चित्रता	चित्रिता
४५८	११	पक्षिणापि	पक्षिणोपि
४५८	१३	भूपा	भूषा
४५९	८	दीपायने	दीपायनै
४५९	१३	सौवण	सौवर्ण
४६०	१६	सन्देह	सन्देहं
४६१	९	धर्म्म	धर्म्मं
४६१	१०	ग्घु	रघु
४६२	१०	५६	५७
४६३	९	विचक्षणे	वीक्षणे
४६३	१३	किचित्	किंचित्
४६४	६	मग्रतः	मागतः
४६५	८	नार्य्योः	यार्य्यः
४६५	६	युत	युतं
४६६	३	बृहद्दर्षावरे	बृहद्धर्म्म वरे

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४६९	१०	५६	५८
४७१	१०	शुभगे	शुभगै
४७१	१२	नेव	नैव
४७१	१४	मूषा	भूषा
४७१	१५	पक्ति	पंक्ति
४७१	१६	सन्द	मन्द
४७२	५	दौ	द्वौ
४७२	१३	वन्द	वद
४७३	४	थाहित	तथा हि
४७३	६	शांशिते	शंशिते
४७४	२	यथैच्छन	यथैच्छत
४७४	६	विहरन्नय	विहरञ्जय
४७४	७	न्सुवारिण	न्सुवारिणि
४७५	६	निदाघ	निदाघे
४७४	१०	आर्द्रां	आर्द्रां
४७५	१२	वर्पत्यापि	वर्षत्यपि
४७६	३	श्रावयें	श्रावये
४७६	८	परित	परितः
४७६	१०	वहु	वहुः
४७६	१०	रत्नै	रत्नैः
४७६	१२	प्युदग्र	प्युदग्र
४७७	१	पत्यलम	यत्यलम
४७७	६	वद्धतां	वर्द्धन्तां
४७७	११	चूर्णा ण	चूर्णीकरणं
४७७	१४	माश्रयम	माश्रयन
४७८	१	विशेष	विशेषं
४७८	४	निसर्ग	निस्सर्ग
४७८	८	निवायात	निधायाथ
४७८	८	केल्य	केल्ये
४७९	१०	दासीभी	दासीभिः
४७८	८	केवल्य	केवल्ये
४७९	१४	पूर्ण	पूर्णा
४८०	१	वत्तये	प्रवर्तये
४८०	११	सवंतो	सर्वतो
[illegible]	१	श्रष्ट	श्रेष्ठ
४८१	७	नत्युन्तरं	
४८१	८	समीपे	[illegible]
४८३	८	विद्वग्दिः	विद्वद्भि
४८३	८	मुख्येः	मुख्यैः
४८३	९	लंघयतः	लंघयन्तः
४८३	१०	वत्युरम्	वत्परम्
४८३	१३	सूययोः	सूर्ययोः
४८५	८	जनेः	जनैः
४८७	१४	प्रशंसने	प्रशंसनैः
४८८	१३	सुहादत्तः	सुहार्दतः
४९०	३	कार्ग्यिभिः	कार्ग्यिभिः
४९०	६	श्रीराभ	श्रीराम
४९१	१०	५९	६०
४९३	२	स्वमर्प	समर्प
४९३	७	न्तूसलञ्जयः	न्तुसलञ्जयः
४९३	९	परि	परि
४९३	९	वर्णौः	वर्णैः
४९४	२	मुच्चकैः	मुच्चकैः
४९४	३	विनयैं	विनयैः
४९४	३	सुवर्णौ	सुवर्णैः
४९४	१२	दिवस्पते	दिवस्पतेः
४९५	७	नृपाधि	नृपाधि
४९५	१०	नीलस्थलेभ	नीचस्थलेम्भ
४९५	१४	प्रत चान	प्रतीचान
४९६	१	विशिष्ठा	वशिष्ठा
४९६	६	महाह	महार्ह
४९६	११	तर्पणौ	तर्पणैः
४९७	१	सम्वत्रिन्ध	सम्बन्धि
४९७	८	दशनं	दर्शनं
४९७	१६	श्रत्वा	श्रुत्वा
४९८	२	नियाय	निनाय
४९८	६	संकाश्यं	सकाश्य
४९९	१	सुयोपि	सुयोपिद्
४९९	७	पौर	पौर
५०१	२	दीर्घ	दीर्घ

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	४	कुर्म्निका	कूर्म्मिका
…१	१०	वहिंप्र	वहि प्रं
५०१	१२	जनं	गर्जं
५०१	१३	दापानां	दीपानां
५०१	१३	च्वपित	च्वर्पित
५०२	२	तठ्क	तर्क
५०२	९	मङ्गलांगै	मंगलांगैः
५०२	९	कुम्भे	कुम्भैः
५०२	१०	उच्चैः	उच्चै
५०२	११	चनैश्च	जनैश्च
५०३	४	नाम	नामैक
५०३	६	सैन्यै	सैन्यैः
५०३	८	यान	यानै
५०३	९	वोहिते	वोहितैः
५०४	२	च्छुतं	च्छूतं
५०४	१५	सुजभ्यां	भुजाभ्याम्
५०५	३	द्रभाणां	द्रुमाणां
५०५	५	पर्य्यंक	पर्य्यंक
५०५	९	सन्पुटेन	सम्पुटेन
५०५	१०	मात्र	मात्रं
५०६	५	दशनम्	दशनम्
५०७	१०	प्राप्त	प्राप्तं
५०९	७	गोपंगृहे	गोपगृहे
५०९	८	स्त्रो	स्त्री

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५०६	११	पूव	पूर्व
५०६	१३	निवेदयम	निवेदयन्
५१०	१३	महाम्	महान्
५१२	८	तत्रव	तत्रैव
५१२	१०	सैन्यके	सैन्यकैः
५१२	१४	विगतां	विगता
५१३	३	मध्मसै	मध्यमैः
५१४	९	गन्धवस्य	गन्धर्वस्य
५१५	१	निर्दिस्य	निर्दिस्य
५१७	१०	प्रांप्य	प्राप्य
५१९	१३	यद्वे	यद्वै
५२०	१	तार्के	तार्कै
५२०	२	प्रदीप्तौ	प्रदीप्तौ
५२०	१४	वाज्य	वार्ज्य
५२१	१६	जगाम	जगाम
५२२	६	पलकः	पालकः
५२२	१०	जलि	जलि
५२३	३	पत्र	पत्रं
५२३	११	विशेपात्त	विशेषात्त
५२४	५	वृत्तिस्थेन मधुकर,	मधुकर वृत्तिस्थेन

अशुद्धियों की भरमार होने पर भी कुछ २ शोधा गया है। दुर्ल्लभ वस्तु सुलभ तो हुई। अतः सन्तजन क्षमा करके सोध लवें॥

